श्रीगणेशायनमः । श्रीगुरवेनमः । श्रीरामचन्द्रायनमः ।

मानस-भावप्रकाश ।

दोहा ।

प्रथम विनायक बिघनहर, बरदातापद बंद । पुनि सुभदान सरस्वतिहिं,
श्रीगुरनानक नमो नित, नारायण वपुजान । दसो रूप दस दिशा मम,
गौरीशंकर ज्ञान घन, बन्दौ सांत स्वरूप । आदिकविहिं नम रामजस,
महाबीर मतिधीर मम, मन की काटो पीर । नम तुहि तनैसमीर मुहिं,
सीता सीतल रूप प्रभु, रामबल्लभा जान । बंदों मो पर कृपा कर,
रमत राम सुषधाम मम, कुमत दाम कों काट । रामचरितरस प्रगट कर, कहौ
तुलसिदास तुलसी सरस, रामहिं प्रिय गंभीर । तिहि जब हुलसी दीन तब, मो म

श्रीरामचरित्रमानस कों श्रीशंकरजी ने परमपवित्र जानकर जीवों के कल्यान निमित्त
मों गिरजा कों स्नान कराया है । अरु सोई चरित्र लोगों के मनों से दोष निकासणे हेत
रीति सों ब्रह्माजी ने सतकोट बरनन किया है । अरु आज्ञा दे कै महामुनीश्वर बालमीकजी
कहाया है । सो मातलोक में इस कथा के मुख्य प्रवर्तक बालमीकजी हीं भये हैं । लख्य
बिंसत सहस्र ग्रंथ भी देवबाणी मों तिनो ने निरमान किये हैं । तिस कृपालु मुनिवर ने कलि के ज
मति अस्थूल अरु पाप मैं जानकर तिन के कृतारथ हित श्रीरामचंद्र का नामहीं महामंत्र मान
कें सुमिरणादिक करावन निमित्त गोस्वामीतुलसीदासजी का सरूप धारिया । अरु तिस
मानस कों भाषावाणी बिस्तारिया अरु देवबाणी कों परमपवित्र जानकर तिस के सनमान
आदि मों संस्कृत श्लोक राखे । अरु कलि के जीवों पर दया करकै सगरा ग्रन्थ भाषा मों विस्त
प्रमाण— कलिकुटिल जीव निस्तार हित बाल्मीक तुलसी भए । इत्यादि वाक्य भक्तमाल मों कहे
पुनः बालमीकस्तुलसीदासस्कलौदेवी भविष्यति । रामचंद्रकथासाधीवी भाषारूपां करष्यसी । इत्यादि
वाक्य बासिष्ठसंहिता मों बसिष्ठजी ने अरुन्धति प्रति कहे हैं । इस तें इस ग्रन्थ कों आरिख जान
गुरों से श्रवण अरु बारंबार मनन करकै अपणी बुद्धि अरु बाणी के सफल करबे हेत प्रभों के भरो
पर इस की पूजा मों प्रवितणे की इच्छा करी है । सो श्रीरामचंद्रस्वामी संतसिंघ को अपणादासानुदास
जान के इस ग्रन्थ की निरबिघिन समाप्ति अरु प्रचै गमनादिक करावेंगे । इस मानसरोवर मैं गोसांई
जी ने भगवंत के यस की आंयुकतां रूपी सीपां कहियां है । तिन की प्राप्ति निमित्त मैंनैं गोसांई जी
के प्रेरेहुये इस मानस मों त्रितखचत करणरूपी डुबकी लगाइ के युकतां अविलोकियां अरु तिन से

काहू से अधिक काहू से अलप प्रगट भए सो श्रीरामनवमी के दिन
इत्तर को इस उलेख का प्रारंभ किया है। जो प्रसंग चौपायांतुका
: काशी आदिक देशों से यथालब्ध शुद्ध प्रतां मंगवाइ कै तिन्हकै अनुसार
.र जो आपणी बुद्धि मैं पद असंग आख्येपक भासे हैं सो निकासे नहीं तहां
। इस रामचरित्र की भावप्रकाशनी टीका का विस्तार अरु बिचार श्रीरामोपा-
कर होवैगा परंतु जो मूल के अर्थों के ज्ञाता होवहिंगे इस टीका के पढने
.गा। अब गुसांई तुलसीदासजी सनातन मरजादा अरु ग्रन्थ की निरबिघिन
.तु वाणी बिनायकादिकों का नमस्कारात्मक मंगल करते हैं। श्रीरामोजयति।

ामर्थसंघानां रसानां छन्दसामपि।
ानां च कर्त्तारौ वंदे वाणीविनायकौ॥ १॥

.रस्वती अरु गणपतिजी कों प्रनाम कर्त्ता हौं। कैसे हैं गजानन अरु भारतीजी
से सक्ति लष्यणा व्यंजना कर बोधनीये जो अर्थ है तिन के भेद इस भांति कंबु
.व है घटपट से तिसी कों जाणिये येह जो ईश्वर कृत संकेत हैं सो कहिये सकति।
. तातपर्य के न बनने कर तिस के संबंधी को जणावै सो लष्यणा। तिस के तीन भेद
जो आपणे सर्व अर्थों कों त्याग देवै जैसे गंगायांघोषा। गंगा मों ग्राम बणता नहीं ताते
तीर को जणाया। दुतिया अजहत। जिस मों स्वारथ का अरु ततसंबंधी का भी ग्रहण होइ।
ाोधावती जैसे सोणपद का स्वारथ भया रकतबरण ततसंबंधी भया अरुण तुरंग तितिय अजहता-
तिस मों विरुद्ध अंस का त्याग अरु अविरुद्ध अंस का ग्रहण जैसे स्वयं देवदत्तः इस में देस
बस्था को त्याग कर केवल पींड मात्र ग्रहन करना व्यंजना कहिये व्यंग। जैसे कांता ने पति
: जहां तुम जावो तहां ही मेरा जन्म होइ। इस में व्यंग यह तुम बिना मैं मरिजांऊंगी। सो ऐसे
:थ समुदाई है तिन कों भी सिंगार आदिको रसों कों भी छंद को भी मंगलानांच कहिये कल्यानन
ो जो करनेवारे हैं तिन कों प्रनाम करने का भाव यह मेरो कविता मों वरण अर्थादिक सम
नीक होवै। ननु। वाणी अरु बिनायक कों एकत्र बंदना क्यों करी। उत्तर। गुसांईजी ने अपणे
। विषे सीतारामचन्द्र का महात्म बरणन करना है ताते प्रारंभविषे मंगल भी बाणी बिनायक का
ातपुरस रूप कर एकत्र किया। जाते यह सभ रूप को सीतारामचन्द्र रूप ही जाणते हैं। प्रमाण
ष्णुपुराणे। देवतिरयकमनुष्यादौपुनामिभगवानहरिः स्त्रीनाम्निलक्ष्मीरूप मैत्रेयनान्योर्विद्यते पर॥
ासरजी मैत्रेय प्रति कहा है। स्थावर जंगम सगल सृष्ट मैं जो पुरुष नाम हैं। सो विष्णुरूप हैं।
जो स्त्री नाम है सो लष्यमी है इन से भिन्न अरु विशेष कोऊ नहीं। ननु। सीतारामचन्द्र के दृष्टांत
निमित्त मंगल किसी ऐसे देवता का करना था जिन का आपस बिषै स्त्री पति भाव होता। उत्तर।
इस बात का दूषन नहीं समरथ वक्ता की इच्छा जिस पर होवै सो कहै। तिस पर न्याइकों का वाक्य
कहे। स्वतंत्रस्तस्मुनेनयोगपरयनयोगान हतुआत। अपनो बुद्धि के बल कर ग्रन्थ करणेवाले जो मुनी-

श्वर हैं । ऐसे करणा था ऐसे ना करना था तिनो प्रति कहना जोग
दिक भी प्रश्नों का रूप हुए तदपि गोसांई जी मुख्य श्रीरामचन्द्र के उप
चन्द्रजी काहीं मंगल करणा था । उत्तर । यह बात निश्चै है परंतु गणेश
महात्म जाणन करहीं भया है । ताते इनो ने प्रथम गणाधिपति को प्रण.
आज्ञा है सरब सुभकारजों के आदि गणपतिजी का पूजन सिमिरन करतब्य
ब्रह्माचशंकरश्चैव विष्णुश्चैवोचतुः स्वयं । वयोवयंयथापूज्यः तथायंप्रतिपू
जी ने कहा तीनो हम जैसे पूजणे योग्य हैं तैसे यह गणपति भी पूजणे य
प्राकृतः पूज्ययेवचः ॥ एतत् पूजनंकृत्वा पश्चातपूज्यावयंनरैः ॥ हम भी स्वरू
यह भी स्वरूप करहीं पूज्य है ॥ तिस पर भी प्रथम इस की पूजा करि करि पुनः
को करतव्य है । वयंचेतपूजतसर्वेनायं संपूजतोयदा । तदाचफलहानिस्यातनाः
हमारी पूजा करैंगे अरु आदि इस की न कर लेवेंगे तिन को यतन का फल
संदेह नहीं । शिवेनपूज्यतांपूर्वं विष्णुनांचप्रपूज्यतः । ब्राह्मणाचतथैवावपार्वत
जी ने विष्णुजी ने ब्रह्माजी ने पार्वतीजी ने बिनायक का भली प्रकार पूजन
स्वामी का रिदै लख करि भक्तों को भी भगवान में प्रथम विनायकजी का मंगलकरन
श्रीगुरग्रन्थे । जिसनो मंनेआप सोईमानिये । अरु देवी का सिमिरण भी अवश्य क.तव्य
काश मो कहा है । वचनसंदर्भविशेषरूपस्य ग्रन्थस्यप्रारिपस्यतत्वेन ॥ स्तोतमूचताया सेवमा.
गदेव्याः ॥ आसपदभूतांकवि भारतितदाभिन्नत्वेन ॥ अध्यवमतांप्रारियमित प्रतबंधकदूरितसांतये र
स्तौति ॥ वाक्य रचना विशेष रूप जो ग्रन्थ है तिस के प्रारंभ करणे मों जिस की इच्छा है तिस
करणे अरु सेवणे योग्य बागदेवी है । सरस्वती का इस्थान कवों की भारती है सो तदरूपही है य
जाणना । आरंभेया जो है ग्रन्थ तिस में बिघ्नकरणहारे जो हैं पाप तिनो की सांति निमित्त
कार देवीसरस्वती को अस्तुति करे ॥ १ ॥ अब उमा महेश्वर को प्रनाम करते हैं । टिप्पणी—
अर्थ शंका । लष्यणा का अर्थ लक्षणा प्रायः संस्कृत क्ष का ख होता है । यथा लक्ष्मी का लख..
अर्थ हृदय । मातलोक का अर्थ मृत्युलोक । गजानन का अर्थ गणेश । भारतो का अर्थ सरस्वती । श
का शुद्ध स्थूल प्रायः ऐसाही हिन्दीभाषा में होता है यथा स्तूति का अस्तुति । स्नान का अस्
स्थान का अस्थान आदि । मुन्शीरोशनलाल ने अपने टीका में यों लिखा है । "श्रीगोस्वामीतुलसी दा
ग्रन्थारंभ में सरस्वती और गणेश की बंदनारूपी मंगलाचरण करते हैं मंगलाचरण करने से ग्रंथ नि
समाप्त होता है और शिष्य को शिक्षा होती है और पढ़नेवालों को शुभ होता है । यथा—श्लोक
आदि मध्यवसानेषु यस्य ग्रन्थस्य मंगलं । तत्पठन् पठनाद्वापि दीर्घायु धार्मिको भवेत् ॥ वर्णों अ
अर्थ के समूहों और रसों और छंदों के और मंगलों के भी करनेवालों की मैं बंदना करता हूं सो कौन
है बाणी अर्थात् सरस्वती और बिनायक गणेश ।" इस का और विशेष अर्थ महात्मा हरिहरप्रसाद जी
के टीका और मानसशंकावली की समालोचना में देखो ।

भवानीशंकरौ वन्दे श्रद्धाविश्वासरूपिणौ ।

: न पश्यंति सिद्धाः स्वांतस्थमीश्वरं ॥२॥

ो अंतर इस्थित ईश्वर कों जिन से बिना नहीं देख सकते। ऐसे जो हैं ताको बंदता हौं ।।२।। इन को नमस्कार करण का भाव यह प्रभों के क्त का निश्चे मुझे भी देणा । टिप्पणी—इस्थित का शुद्ध शब्द स्थित है ।

ोधमयंनित्यं गुरुं शंकररूपिणं ।
ोहि वक्रोपि चन्द्रः सर्वत्र वन्द्यते ॥ ३ ॥

वक्रचन्द्रमा भी सर्ब देसो मों बंदने योग्य है । ऐसे ज्ञानस्वरूप अरु अबिनासी तिन को बंदता हौं । ननु । इहां प्रनाम गुरों कों करी वा शंभु कों । उत्तर । र जी कोहीं करी है । ननु । प्रथम भवानी शंकर को नमस्कार कर आए हैं पुनः आदि मों ईश्वर रूप अरु श्रीरामचरितमानस के मुख्य प्रवर्तक जाणकर भी नमस्कार करी । अरु गुसांई जी के कुलसंबंधी गुरु भी शंकरजी हैं । ताते गुरभाव ोहीं करी । अरु इस श्लोक का अर्थ गुरों के पच्छ मों भी बणता है । मैं गुरों कों बंदता हौं जिनो के आश्रित हुवे वक्र नर भी ससि सदृश ह्वैकर पूजीते हैं । भाव के आश्रित ह्वैकर मेरी वक्र कविता भी अर्थ यह सदोष कविता भी चन्द्रमा सदृश पूज्य ॥ अब मुनि जो श्रीबाल्मीकजी हैं अरु प्रथम भक्त हनुमंतजी हैं तिनको एकत्र निवासी एकत्र हीं प्रणाम करते हैं । टिप्पणी—न को प्रायः पंजाबीभाषा में ण होता है ।

सीतारामगुणग्रामपुण्यारण्यविहारिणौ ॥
वन्दे विशुद्धविज्ञानौ कवीश्वरकपीश्वरौ ॥ ४ ॥

श अरु मुनिस बनो मोंहीं रहते हैं सो इहां सीतारामचन्द्र के गुणसमूहहीं भये पवित्र बन तिनों में संचार करणा कर भया है जिनका बिशुद्ध विज्ञान ऐसे जो बालमीक अरु हनुमंतजी हैं तिन को दे इन को प्रणाम करणे का भाव यह रघुनाथजी के चरित्रों में संचार अरु प्रभों के स्वरूप का मुझे भी देणा ॥ ४ ॥ टिप्पणी—कीश का अर्थ बानर ।

उद्भवस्थितिसंहारकारिणीं क्लेशहारिणीं ।
सर्वश्रेयस्करीं सीतां नतोहं रामवल्लभां ॥ ५ ॥

सृष्टि के उत्पत्ति इस्थित संघार की करती अरु कलेशों की हरती अरु सर्व कल्यान की दाती जो श्रीरामचंद्र जी की बल्लभा सीता हैं। तिस को मैं नमस्कार करता हौं। सीता जी को बंदना का भाव यह मेरी मति स्वस्थ हूै के प्रभों के जस में प्रवर्तै ॥ ५ ॥ टिप्पणी—ह और घ परस्पर बदलते हैं ।

यन्मायावशवर्त्ति विश्वमखिलं ब्रह्मादिदेवासुरा ।
यत्सत्वादमृषैव भाति सकलं रज्जौ यथाहेर्भ्रमः ॥

यत्पादप्लवमेकमेवहि भवांभोधेस्तिती
वन्देहं तमशेषकारणपरं रामाख्यमीशं

जिस माया के बस ब्रह्मादिक देवता अरु असुरों से लेकर सकल स.
परमात्मा की सत्ता तें सत्य की न्यांई भासती है जैसे रज्जु विषे सर्प का
सागर तरणे की इच्छा है तिन के कुशल निमित्त जिस स्वामी दे
है ऐसा सर्व जगतों का कारण अरु सभों से परे ईश्वर पापों का हरता
चन्द्र स्वरूप धार करि प्रगटेया है तिन को प्रणाम है। ननु। वाणी विनायक से
का तदनंतर कवीश्वर कपीश्वर का तदोत्तर जानकी जी का मंगल कर कर राम
का किया इस का अभिप्राय क्या। उत्तर। जैसे राजाधिराज को किसी को मिलना
के जो मुख्य अधिकारी हैं अरु सेवक हैं तिन का पूजन प्रथम करीता है तब सरु
सुगम होता है। तिसी प्रकार श्री रामचन्द्र की प्रसन्नता निमित्त प्रथम इन का मंगल
प्रमाण। अनादृतसुतंगेही पुरसंनाभिनंदति। अनारधितिमदभक्तं भगवानाभिनंदति ॥ जो
घर जाता है सो प्रथम तिस के पुत्रों साथ सनेह न करै तब वह निकेती प्रसन्न नहीं। ऐ.
कोई प्रथम संतों का पूजन न करे। तिस पर भगवंत प्रसन्न नहीं होते। प्रमाण श्रीगुरुग्रन्थ
विगसे जासिखसुख पाई। किंवा इन का पूजन आदि अवश्य था जाते सदा शिवजी श्रीरामचन्द्र के
गुर हैं। अरु हनुमंतजी ग्रन्थकार के साख्यात गुर हैं जो इनहीं की कृपा कर श्रीरामचन्द्र का दर्शन
भया है। बाल्मीकजी आदिकवि हैं। अरु श्रीरामचन्द्रजी की कथा के मुख्य प्रवितक हैं। उन को वंदना
करनाही था। जानकीजी माता हैं अरु वेद की आज्ञा है। दंडी सन्यासी पिता को नमस्कार न करे
माता के चरनों पर अष्टांगदंडवत करे पुनः और श्रुति है। मातिदेवोभवापितो देवोभवाआचार्य देवो
इत्यादि युक्तो करि माता का पूजन प्रथम कर्तव्य है। अरु जैसे बालक क्रीडासक्त हुवा घि.
आवता है तब पिता से भयकर माता की शरण धारता है जो पिता से मेरा अपराध खिमा करावणा। तै
मैं भी अनेक जनमों में भ्रमता हुवा हे माता तुम्हारी शरण आन पड़ाहूं मेरे संपूर्ण दोष बिसिमत कर
श्रीरामचन्द्र के चरणों मैं मुझे प्राप्ति करावहु ॥६॥

नानापुराणनिगमागमसम्मतं यद्रामायणे निगदितं क्वचिदन्यतोपि ॥
स्वांतःसुखाय तुलसी रघुनाथगाथाभाषानिबंधमतिमंजुलमातनोति ॥७॥

आपने अंतस्करण के सुख निमित्त मैं तुलसीदास रघुनाथजी की अति उज्जलगाथा कों भाषा
निबन्ध कर बिस्तार करता हों। कैसी जुक्त से नानापुराणों शास्त्रों वेदों का मत ले कर जो बालमीकजी
ने रामायण मों कहा है। सो अरु कछु और भी। ननु। वेद शास्त्र पुराण सभ जो कहे तों और इन
से क्या भया। जो कहिये अपनी अनभव तब स्वअनभव निगमादिकों से इतर कहा से कोऊ
ल्याया है। जो कहिये पंचरात्रादिक ग्रन्थ रुद्रयामलादिक तंत्र तों यद्यपि नाम कर यह भिन्न है।

इह भी नहीं हो सकते। तातें इसका उत्तर ऐसे हैं। नानापुराण निगमाग
जी ने रामायण कहा है। तिस रामचरित्र का मत लेकर क्वचट अन्यत्
. श्रामें जो कईएक वाल्मीकजी ने नहीं लिखे अरु वह प्रसंग मेरे मन को
भान आदिकों की कथा है सो भी मैंने इस भाषा निबंध में लिख धरे हैं।
मान कर अरथ करिये तो भी प्रमाण। टिप्पणी—मुन्शीरोशनलाल ने अपने
'जो नाना पुराण और निगम अर्थात् वेद और आगम शास्त्रों का सम्मत है
कहीं अन्यत्र से भी अपने अन्तःकरण के सुख के निमित्त तुलसी रघुनाथ की
षानिबंध को अति कोमल विस्तार करता है—क्वचिदन्यतोपि इस के कहने से
ों कहीं अपने अनुभव से भी कहा है यथा—प्रौढ़ सुजन जन जानहिं जन की।
चि मन की॥ आरति बिनय दीनता मोरी। लघुता ललित सुबारि न थोरी॥" बाबा
नी शंकावली में यों लिखा है। "शंका। तुलसीरघुनाथगाथा। इस में ग्रन्थकार ने
है सो नाम लेना अपना उचित नहीं है। प्रमानस्मृति। आत्मनामगुरोर्नाम नामाति-
कामोनगृह्णीयात् ज्येष्ठापत्य कलत्रयोः। उत्तर। द्वादशेऽहनिपितानामकुर्यात् इस शास्त्र
. दिन में पिता ने पुत्र का नाम रक्खा है तिसका पूर्वोक्त स्मृति निषेध करे है औ द्वितीय
निषेध नहीं है। तुलसीदास ऐसा नाम पिता का रक्खा नहीं है किंतु गुरु का धरा है यातें
दोष नहीं है इसी वास्ते महाभाष्यकार ने भी अपना रूढिपतञ्जलिनाम छोड़करके दूसरा यौगिकनाम
गोनर्दीय ऐसा महाभाष्य में लिया है। अथवा कूपखानक न्याय करके जानना जैसे कूप खोदने में
अनेक जीवों की हिंसा होता है अरु खोदनेवाले को कीच अरु धूरि लगे है सो कूप के जल के पीने से
पक्षी ते आदि लेकर सभी को सुख होता है तिस पुन्य ते पाप दूरि हो जाता है और कीच भी तिसी
के जल से धोवा जाता है तैसे यहां नाम लेने से जो भया प्रायश्चित्त सो रामायण के पठनपाठन
.आ जो पुन्य तिन करके दूरि होता है। अथवा उच्चारण करने का निषेध है अरु लिखने का निषेध
हीं है इस वास्ते बहुत ग्रन्थकार अपना नाम लिखते हैं यातें दोष नहीं है।

सोरठा—जिहँ सुमिरत सिधि होइ, गननायक करिवरबदन।
करहु अनुग्रह सोइ, बुद्धिरासि सुभगुनसदन॥१॥

जिस गणेशजी के सुमिरणमात्र तेही सकल कार्यों की सिद्धी होती है अरु गणों के नाथ हैं।
गण कहिये मगण नगणादिक जो कविता में गुण दोष करनवाले हैं। किंवा रुद्रगण जो जगत में
मंगल अमंगल करते हैं सो सब जिन के वसवर्ती हैं। तातें अपने उपासकों से अमंगलदगणों को निवा-
रेंगे। करी सम जिनका श्रेष्ठ मुख है। भाव यह जब शंकरजी ने पार्वती करि प्रेरीयां इन को जिवायां
अरु गज का शीश इनों पर लगाया तबी सब से श्रेष्ठ होवन के वर दीने सो बुद्धि का पुंज अरु सुभ गुणों
के निकेत मोपर कृपा करें जो मेरी वाणी सकल गुणों संजुक्त होवे। कहूं जो सुमिरत सिद्धि होइ भी
पाठ है। परंत भगण आदि होता है। अरु अर्थ में कछु भेद नहीं। जो किसू को भावे सो भला॥१॥

टिप्पणी—बाबा स्वरूपदास ने अपनी शंकावली में महात्मा हरिहरप्र
सोरठे पर व्याख्या की है। वह यह है। "शंका। जो सुमिरित सिधि ह.
हैं। उत्तर। माड़वाड़ देश के नजीक सोरठ देस है तामें इस का नाम ।
मंगलाचरण सोरठे छन्द में क्यों किया। उत्तर। दूसरे छन्द में तो शंका ब
अथवा श्रीसीताराम जू के नाम को प्रथम अक्षर एहि में है यातें किलो
तेरह मात्रा फिर ग्यारह मात्रा अरु चौपाई में समानचरण सोरठा में पहिले
यातें सोरठा में ही मंगल किया॥ शंका। जैसे कि भागवत में अरु बाल्म
ग्रन्थ का भाव निकसता है तैसे यहां भी आदि सोरठा में सातोकांडों का भाव।.
प्रथम कांड का भाव सुनो। प्रथमकांड में राजा मनु का सुमिरन करना है। सुमि
औ नारदजी का। सुमिरतहरिहिश्रापगतिबाधी। औ श्रीशिवजी का सुमिरन वर्णन है
आवा। सो सर्व सुमिरत पद करि सूचन किया औ श्रीमनुमहाराजश्रीपार्वतीजू क
वर्ती महाराज विश्वामित्रजी के जग्य की सिद्धि औ शिवजू विदेह महाराज की प्र
है सो सिद्ध पद तें सूचन किया। अरु द्वितीयकांड में देवतन को अभिलाष कि र
को गमन होय जेहिं ते खरदूखन रावणादिक मरण होय एहि हेतु सरस्वती को श्री
पद करि सूचन किया औ श्रीराघव के नायक करिबे का विचार औ कैकेई को भ
वर मांगना औ पादुकाराज्याभिशेष वर्णन सो गननायक पद सों सूचन किया। अ तृत
सुनो। राक्षसन के बध को सिद्धि गणेश हैं भाव प्रारंभ हैं सो करिवरबदन करि सूचन।
चतुर्थकांड का भाव सुनो हनुमान सुग्रीव अंगदादि के ऊपर अनुग्रह करना है सोनुग्रह पद से सूच
किया औ श्रीहनुमान जी ने निज नाथहि चीन्हा कि सोई श्रीराघव हैं भाव सार्कतबिहारी सो स
पद करि सूचन किया। अब पंचमकांड का भाव सुनो हनुमान जी के औ जामवंत के औ विभीषण
बुद्धि का चातुर्य्य वर्णन है सो बुद्धिराशी पद करि सूचन किया। अथ षष्ठकांड का भाव सुनो देवग
की बंदी छूटने सो राक्षसों की गति होने औ विभीषण को राज्य पावने में शुभहोना वर्णन है सो शुभ
पद से सूचन किया औ रावणादि मरण मुनि देवता आदि को बहुत गुण भया सो गुन पद करि सूचन
कियो अब सप्तमकांड का भाव सुनो तिस में श्रीसीताराम लक्ष्मणजू का सदन आना औ बंदर का स
जाना औ पुरजन परिजन का अपने २ सदन सों विश्राम पाना औ इन्द्रादिकों को अपने २ घर में सु
पूर्वक बसाना वर्णन है सो सब सदन पद से सूचन किया इस प्रकार से सातोकांडों का भाव बुद्धिमा
निकारो अरु कोई महात्मा आदि के संस्कृत श्लोक में ते सातोकांडों का भाव निकारते हैं सो सुनो
ईश्वर स्वपर जातिभेद में रहित सो वर्णानां नाम क्षत्रिय जाति में राजकुमार भये इसी संबंध में विश्वा
मित्र का आगमन यज्ञरक्षा धनुषभंग करि बिवाहादिक आनन्दपूर्वक अवध में आए यह बालकांड
जानो॥१॥ अर्थ संघानां इस पद ते अर्थ संघ नाम समूह राज्य फिर बन गमन इत्यादि यहां अयोध्या
कांड॥२॥ रसानां ये पराक्रम खरदूषण त्रिसिरादि चौदह सहस्र राक्षसों का बध यहां आरण्यकांड जानो
॥३॥ छंदसां से शत्रु मारने को सेना सहित स्वतंत्र भये किष्किंधाकांड जानो।४॥ अपि निश्चय वाचक
है तेहि ते जानकीजी का हनुमान द्वारा लंका में रहना निश्चय जाना यहां सुंदरकांड जानो॥५॥

का नाम तातें जगत में मंगल भया यहां लंकाकांड ॥६॥ कत्तारौ मे
ही हकूमत करना यातें उत्तरकांड जानो। अरु श्री गुसांईजी की ऐसी
. हरिकीरति गाई। तेहिं मग चलत सुगम मोहि भाई॥ यातें उन्हों ने कोई
र लागै तो हमारी अल्पज्ञता है यह वार्ता बन्दनपाठक ने कहा है ॥१३॥

ोहिं बाचाल, पंगु चढै गिरिवर गहन ।
ा सु दयाल, द्रवौ सकलकलिमलदहन ॥२॥

र गूंगे परम वक्ता होते हैं। अरु पिंगुले अद्रो के शिखरों पर चढ़ते हैं। ऐसे सभों
दयालु जो विनायकजी हैं सो मुझ पर कृपा करें॥२॥ अब श्रीरामचन्द्र जू के शेष-
ते हैं। टिप्पणी—अद्रि या अद्र का अर्थ पहाड़ है। मानसप्रचारिका में इस सोरठा
। "यह सोरठा कोऊ भगवान् में लगावते हैं कोऊ सूर्य में सो नाम तो किसू का
ारे से जानाजाइ सो जो गुण क्रिया कहा है सो इनहूं में घटत है विष्णु में गीता
ा हैं परन्तु जो विष्णु में कहो तो आगे विष्णु को कहेंगे जो कही की इनऊ सोरठा
नो नहीं बनत काहे कि क्रिया हैहैं सो दयाल द्रवहु व करो सो मम उर धाम तो
साथ है क्रिया नहीं होतीं जो कहो की स्थान भेद करि एक रमावैकुण्ठ विष्णु को
ारशायी श्रीमन्नारायण को कहा तो यह भी नहीं बनत काहे की गणेश महेश के बीच में
विष्णु की बन्दना नहीं सुनी है कितो ब्रह्माशिव के बीच में के पंचदेवतन के बीच में सुनी है तातें यह
सोरठा पंचदेवता के मंगलाचरण करि सूर्य्य में लगत है काहे कि श्रीगोस्वामीजी श्रीअयोध्याबासिन के
ात में हैं अयोध्याबासी पंचदेवता का पूजन करि सीताराम को चाहते हैं प्रमाण अयोध्याकांडे चौपाई।
करिमज्जन पूजिहिं नर नारी। गणपति गौरि पुरारि तमारी॥ रमारमण पद बन्दि बहोरी। बिनवहिं अंज-
लि अंचल जोरी॥ राजाराम जानकी रानी। आनँद अवधि अवध रजधानी॥ इसी रीति से गोसांईजी
जो पंचदेवता के विनयकरि सीताराम यशगाइबो मांगत हैं सो दयाल सूर्य्य हमारे पर द्रवहु को दयाल
क होहिं बाचाल पंगु चढ़ैं गिरिवर गहन जासुकृपा सो देखिये तौ बालक महामूक व पंगु है सो जिन
की कृपा से दिन दिन बृद्धि होत है तब वही बालक जो एक मात्रा उच्चारण करिबे की समर्थ न रही
सो वेदवक्ता होत है व जो परगभरि चलने की समर्थ नहीं सो नदी पर्वत बन सब में चलाजात है सो
सूर्य अपने दिनन करि कै पोषते हैं फेरि कैसे हैं कलिमलदहन सो दयाल द्रवहु जाते रामयश गाइबे में
मैं जो मूकपंगु हौं सो समर्थ होउं व कलिमल जो रोग सो निवृत्त होइ तब रामयश गावों जो कोई कहै
कि एती समर्थ सूर्य्य में कहां कहा है तौ विष्णुपुराण व आदित्यहृदय में देखिलेव अथवा महात्मन से
अस सुना है कि सूर्य्यभगवान् गरुड़जी के पंखन को वेद पढ़ायो है सो पंखनियत मूक हैं व अरुण जो
हाथ पाउं दोनों के पंगु तिन को इतनी कृपा किये कि अपनो सारथी बनाये अपर पूर्ववत्।" और मुंशी
रोशनलाल ने अपने टीका में यों लिखा है। "मूक गूंगा-बाचाल-अत्यंत बोलनेवाला-गिरिवर-बड़ा पहाड़
गहन- दुरूह जिस पर न चढ़ा जाय मूक को बाचाल और पंगु को गिरबर पर चढ़ने की सामर्थ्य कहने

का यह आशय कि गोसांई जी ने अपने को रामचरित्र वर्णन में गूंगा
ताई को पंगु ठहराया कि अनेक शास्त्रों के सन्मुख मेरी काव्य को कौन
से वे दोनों दोष मिट जाते हैं सो संपूर्ण कलिमल के जलानेवाले सेरे ऊप
वाद है अर्थात् जिस का गुण वर्णन किया उस को प्रत्यक्ष नहीं कहा है इस का
परत्व में है कोई कहते हैं सूर्य्य परत्व में है इस का प्रमाण यह है कि जन्म
और पंगु होता है सूर्य्य अपने दिनों में दोनों दोषों को दूर करदेते हैं और विप्र
मूकं करोति बाचालं पंगुलंघयते गिरिं। यत्कृपाल महं बंदे परमानन्द माधवं॥ यह

नीलसरोरुह स्याम , तरुन अरुन वारिजनै
करो सु मम उर धाम, सदा छीरसागरस

इन्दीबर सम जिनका रुचिर रूप अरु रक्त कमलों सम दृग है। अरु क्षीरनिधि
है। सो मेरे रिदै विषे बसो तत्व यह अपणा विश्राम करके मेरे रिदै को भी पयनिधिवत उ
करो। ननु। स्यामरूप के चष्यु रकत होहिं तौ शोभा नहीं कही। उत्तर। अरुणोव्यक्तरागेस्यात् विस्व-
कोषे। अर्थ। अरुणपद अव्यक्तराग का वाचक है। अव्यक्तराग कहिये जो लाली प्रगट न होइ। ताते
सिद्ध भया प्रभों के नैन रक्त नहीं। कोगयो में कछुक रक्तवत डोरे हैं। अरु तरुण पद प्रभों के तन की
जुवा अवस्था का वाचक जाणना जातें गोसांईजी का धनुषधारी का ध्यान है॥३॥ अब साभिप्राय विशे-
षणो कर शंकरजी का मंगल करते हैं। टिप्पणी—इस पर स्वरूपदासजी ने महात्मा हरिहरप्रसादजी के
टीका बालकांड और पं० बंदनपाठकजी की शंकावली के अनुसार लिखा है यथा। "शंका। करो सो
मम उर धाम सदा छीरसागर सयन। यह पद श्रीगोसांईजी को देना उचित नहीं है क्योंकि श्रीगोसांईजी
तो द्विभुज रघुबर के उपासक थे यातें नारायण को उर में क्यों बसायो। उत्तर। राजसभा का अभेद
जानकर क्योंकि अंगअंगी को अभेद होत है। नारायण अंग है रामोपनिषद औ तापनी में लिखा है,
अथवा पीठ देवता जानि उर मों बसाये। प्रथम पीठ पीछे प्रधान पूजन सर्व संमत है पीठ देवता करि
श्रीवासुदेव भगवान को अर्थात् नारायण को अगस्त्यसंहिता वशिष्ठसंहिता रामतापनी उपनिषद सुंद-
रीतंत्र औ शारदातिलक मंत्रमहोदधि आदि में लिखा है कुछ संदेह नहीं है इस का भाव भी राजसभा
में निरूपण कियागया है सो सुनो। हृदयरूपी छीरसागर में जब भगवान सैन करेंगे तब काम क्रोधादि
गवांर उहां नहीं जाने पावैंगे लोकहू में चाल है कि राजा के सैन स्थान में बाहर के लोगों का कहा
कहना अपने लोग भी थोड़े जाने पाते हैं यहां बाहर के लोगों के ठांव में काम क्रोधादिक हैं औ अपने
लोगों में भी नहीं जाने पानेवाले रूखा ज्ञान वैराग्य है औ सदा पास रहनेवाली भक्ती है ऐसा सूचन
किया। अरु बन्दनपाठकजी यह कहते रहे। प्रथम तो ग्रन्थकार का सर्वमत रक्षक दृष्टि है इससे विरोध
नहीं है। अथवा यह ग्रन्थकार मांगते हैं कि जैसे आप स्वच्छ गंभीर स्थान में सयन करते हो तैसाही
उज्वल गंभीर मेरा उर भी करो जिस में रामचरित्र का अधिकारी मैं होऊं। अथवा जहां श्रीरामउपा-
सक श्रीसाकेतबिहारी को परात्पर मानते हैं तहां इस रीत तें लगाना कि श्रीमन्नारायण श्रीरघुनन्दन के

ों जथार्थ जानते हैं तातें हृदय बसाये कि इन्ह के बसाने से यह हम को
वेंगे तिसका प्रमान । चौपाई । जस कछु बुधि बिबेक बल मेरे । तस-
यहां हरि येही नारायण प्रेरक हैं अतएव बसाए । अथवा मम उरधामकरो
नाया कि मेरा उर अभी मैला है श्रीराम के बसने योग नहीं है ऐसा बिनय का
मल ग्रसित हृदय मों असमंजसहि जनावत । जेहिं सर काक कंक बक सूकर
॥ अतएव धाम श्रीअयोध्या बनाया जिस में जुगल सरकार बसैं जो कहो कि
र मांगा सो नहीं यह प्रमाण गीतावली ते भी दृढ़ है । माधुरी बिलास हास गावत
पा हृदय तोरि आस प्रेमसान की । अतएव ग्रन्थकार दूसरा रूप हृदय में कभी
रूपानन्य हैं सो प्रसंग बृन्दाबनजात्रा में प्रसिद्ध है । दोहा । तुलसी मस्तक जब
थ । फेर जथा सुतीक्ष्ण चतुर्भुज देखतेही बिकल होय गये अतएव धाम बनावना
नाम श्रीमद्रामायण सो मेरे उर में करो तातें सदा मानसी रहौं । अथवा सदाक्षीर
स का यह अर्थ है कि श्रीराघव कैसे हैं क्षीर नाम दुग्ध साग नाम शाक इत्यादि पदार्थ
नक्त लोगों के जो तिनके रसयन कहिए रस के लेनेवाले हो कृपा करके । अथवा अच्छी जो रसा नाम
अयोध्याभूमि तिसके रसयन नाम ग्रहणकरनेवारे हैं । प्रमाण श्रुतिवचन । देवानांपूरयोध्यातस्यां
हिरणमय: कोश: । अथवा सदा अक्षीरसागर सयन ऐसा छेदकरना अर्थ यह है कि मम उर में सदा धाम
करो । हे अक्षीरसागरसयन नाम क्षीरसागर में नहीं सोनेवाले किंतु द्विभुज अयोध्या बासिन ।"

कुंद इंदु सम देह, उमारमन करुनाअयन ।
जाहि दीन पर नेह, करौ कृपा मर्दनमयन ॥४॥

कुंद पुष्पसम कोमल शशिसम प्रकाशत अरु गौर जिन का तन है सो शंभु कृपाकरके मेरे हिदै के भी मृदु अरु उज्जल करें उमा के स्वामी कथन का तत्त्व यह ब्रह्मविद्या के पति हैं सो मुझ को भी बोध देवें । कृपालु अरु दीनदयाल हैं । तातें मुझ दीन पर भी कृपा करें । जो काम के मरदक हैं । सो मेरे हिदै से भी कामादिकों को निवारें ॥ ४ ॥ अब गुरु को प्रणाम करते हैं । टिप्पणी— मानसप्रचारिका में यों लिखा है । "अब चौथे सोरठा में शिव शक्ति का मंगलाचरण करते हैं ध्वनिकरि के अर्थ फलित है कि उमा उमारमण कृपाकरहु कैसे हैं उमा उमारमण कि कुन्दइन्दु समदेह पीतकुन्द के पुष्प सम कोमल सुगन्ध मकरन्दमय उमाजी को तनु है वो चन्द्रमा समश्वेत प्रकाश अमृतमय उमारमण को तनु है फेरि कैसे हैं युगल को करुणा के आयतन कही स्थान हैं फेरि कैसे हैं कि जिन को दीनही पर नेह है फेरि कैसे हैं मयन जो काम तिन के मर्दन हैं भला शिवजी तौ काम को जारि के मयनमर्दन भये पार्वतीजी कब मयनमर्दन भई सो सुनो शिव तो जराये तब मयनमर्दन भये वो पार्वतीजी बिना जराये ही मयन को मर्दन किये हैं कैसे जानी कि जब सप्तऋषि कहा कि । अब भा झूठ तुम्हार प्रन जारेव काम महेस । तब पार्वतीजी कहा कि । तुमरे जान काम अब जारा । वो । हमरे जान सदा शिव जोगी । अकाम अभोगी यह वचन से जाना कि उमा पहिले से मयन को मर्दन किया है ऐसा अर्थ पंचदेवता के पूरणार्थ उमारमण के शब्द से कहा ।"

बंदौं गुरपदकंज, कृपासिंधु नररूप
महामोह तमपुंज, जासु बचन रविकरनि

महामोहरूपी तिमिरसमुदाय के हरणे को जिन के बचन भानु की किरण, जो मेरे मन तन को सुमतिदाता सूकरखेतनिवासी भगवंतरूप गुरदेव हैं तिन्ह के अब गुरों को पदरजादिकों को नमस्कार करते हैं। टिप्पणी—नरहरि इन के गुरु

बंदौं गुरपदपदुमपरागा । सुरुचि सुबास सरस अनुरागा

जिस सो भली रुचि कहिये श्रद्धा अरु उत्तम वासना अरु श्रेष्ठ प्रेम रहते हैं तत्त रज के स्परश करत्यों को प्राप्तिहोती हैं। किंवा जहां भक्तों की सुष्टरुचरूपी सुबास भक्तों का प्रेमरूपी स्परस है। ऐसी जो सतगुरों के पदकमलों की रज है। तिस क

अमिय मूरिमय चूरनु चारू । समन सकलभवरुजपरिवारू

अज्ञानरूपी रोग के परवार सहित नास करणे को यह चरणरेणु अमृत मूरि कहिय . का सुन्दर चूरण है। तत्व यह पदरेणु के स्पर्श कर मन निर्मल औ विमल होता है। तब ज्ञान भए से भव रोग नास होता है ॥ २ ॥ टिप्पणी—निस का शुद्ध शब्द नस है।

सुकृत संभुतन विमल विभूती । मंजुल मंगल मोदप्रसूती ॥ ३ ॥

सुकृती साधुहीं शंकर का तन है तिन पर गुरो की चरणरज बिभूत सी सोभती है। मंजुल कहिए सुन्दर है मंगलाचारों के आनन्द के उपजावनेहारी है। किंवा सुकृती अरु विमलता अरु मनोहरता अरु मंगल मोद के उपजावन को यह चरणरज शंकर जी के तन को विभूति सम है ॥ ३ ॥

जनमन मंजुमुकुर मलहरनी । किये तिलकु गुनगनबसकरनी ॥ ४ ॥

जनहुं के मनरूपी जो मंजु कहिए मनोहर दरपण है। तिन की मल को हरणहारी है। यद्यपि मन सूक्षम है चरणरज स्थूल है परंतु तीरथोवत मन के शुद्ध करणे को चरणरज सो सक्त है। अरु माथे पर तिलक करी हुई गुणगण कहिये समदमादिक तिन को बस कर देती है। अर्थ यह निरयतन सिद्ध होते हैं। किंवा गुणगण कहिये गुणीउं पुरषों के समूह सो बस होते हैं। तात्पर्य यह जो गुरो के आगे नम्र होते हैं सो उत्तमों मे मान पावते हैं। टिप्पणी—मानसप्रचारिका में यों लिखा है। "फेरि वह धूरी कैसी है कि जन जो समस्त प्राणी तिनका मन सोई मंजु मुकुर कही दर्पण है तिन के मलहरणी है देखिये तो मंजु मुकुर भी कहा व मलहरणी कहा तो मंजुता में मल का है तहां अपने अपने वर्णाश्रम के धर्म में रत सोई मंजु है व भगवत् भागवत् धर्म से विमुख सो मल तिस मल के हरणेवाली धूरी है फेरि किये तिलक नाम तिस धूरी के धारण करने से समस्त गुण के गण बश होते हैं कौन गुण भगवतसंबंधी ज्ञान वैराग्य योग दया करुणा शांति संतोष शील इत्यादि व यही गुणन में चारिप्रयोग भी कहा है कहां कहा है सो सुनो अमियमूरिमय यह चौपाई में मारण प्रयोग व वैद्यक सिद्ध किया व सुकृत शंभुतनु यह चौपाई में मोहन प्रयोग सिद्ध किया व जनमनमंजु यह आधी चोपाई में उच्चाटन

.लक यह आधी चौपाई में वशीकरण प्रयोग सिद्धि किया ।"

नजोती । सुमिरत दिव्यदृष्टि हिय होती ॥ ५ ॥

.। जोति मणिउवंत है । जाते तिन के ध्यानकरणेकर दिव्यदृष्टि प्रकासती है ।

सो सुप्रकासू । बड़े भाग उर आवइ जासू ॥ ६ ॥

' के रिदै मों ध्यान करणे कर गुरो के चरण नखोंरूपी मणि वोहु का प्रकाश प्रग-
हरूपी तिमर नाश होता है । तिस तम के निहत्त भये सति ॥६॥ टिप्पणी—सोमु
बनाकर मानसप्रचारिका में यों अर्थ लिखा है । "बाहर दृष्टि को प्राकृत जानि
किये अब भीतर के नेत्र जो हैं ज्ञान वैराग्य तिनको मोहरूप तमकरि मुंदेजानि
रि कहते हैं कि श्रीगुरु पदनख कैसे हैं कि मोह तम दलिबे को सोमुनाम सूर्य हैं
- है काहे ते कि सर्वरस के शोषनेवाले सूर्य हैं ताते सोमु नाम है परन्तु जिन
भाग होहिं तिन के उर में आवत हैं ।"

उघरहिं बिमल बिलोचन ही के । मिटहिं दोष दुष भवरजनी के ॥ ७ ॥

निरमल जो रिदैं के बिवेकरूपी दृग है सो खुलते हैं । अर्थ यह बिवेक प्रबल होता है । तिस कर
अविद्यारूपी निशा कोआं जो दोषदुखरूपी उपाधां है सो अभाव होतियां है । तब तिसप्रकाश के बलकर ॥७॥

सूझहिं रामचरित मनिमानिक । गुप्त प्रगट जहं जो जेहिं षानिक ॥८॥

खाणी कहिये निगमागम पुराण तिनों में जो रामचरित्ररूपी मणिमाणक गुप्त कहिये संखेप से
प्रगट कहिये बिस्तार से है । सो सभी भासते हैं । वा गुप्तचरित्र कहिये सीता हरनादिक जो अनुज कों
भी न थे लखाये । अरु प्रगट चरित्र कहिये बनबासादिक सर्व जगत मों प्रसिद्ध सो भासे हैं । अथवा गुप्त
प्रगट खानी कहिये श्रीरामचन्द्र के अवतार जो हुये हैं अनेकबार तिन में प्रगट अवतार यह जो अब
सताईसवीं चोकड़ी युगों को मैं भया है। प्रमाण पद्मपुराणे । अदितीप्रतिविष्णुवाक्यं । सप्तविंसद के प्राप्ते
त्रेताख्येतुतथायुगे । रामोनामभविष्यामतवपुत्रःप्रतीव्रते ॥ हे प्रतिव्रते सताईसवीं चौकड़ी विषे जो त्रेता
नाम जुग है । तिस मो रामचन्द्र नाम होकर तेरे गृह विषे मैं पुत्र होवोंगा प्रभो के चरित्र देखणा पर
दृष्टांत कहते हैं ॥ ८ ॥ टिप्पणी—मुन्शीरोशनलाल ने यों लिखा है । " तब उस से क्या प्राप्ति हुई
कि रामचरित के जो मणि माणिक जो गुप्त वा प्रगट और जो जहां जिस रंग के थे सो सूझ पड़े गुप्त
चरित्र का लक्ष्य। मास दिवस का दिवस भा मरम न जाने कोइ । तथा—लछमनहूं यह भेद न जाना ।
जो कछु चरित कीन भगवाना ॥ तथा—छन में सभै मिले भगवाना । उमा मरम यह काहु न जाना ॥
इत्यादि और प्रगट चरित्र रामायण मात्र है । खानि से अर्थ उन अनेक रस के रंगों का है जिस में राम के
चरित्रों का वर्णन किया गया है जैसे शृंगार रस श्याम करुणा रस पीत बीर रस लाल शांत रस श्वेत इत्यादि ।"

दोहा—जथा सुअंजन अंजि दृग, साधक सिद्ध सुजान ।
कौतुक देषहिं सैल बन, भूतल भूरि निधान ॥ १ ॥

जैसे अंजन जो लोक अंजन है तिस को नैनों विषे डार कर साधक अरु सिद्ध प्रवीन हैं सो पर्वतो अरु बनों में कौतुक देखते हैं । अरु पृथ्वी के नीचे जो बड़ियां देखते हैं । तैसहीं गुरों की चरणरज रूपी अंजन अंजे से साधक जो जिज्ञासू हैं अरु कौतुक कहिये चरित्र जो श्रीरामचन्द्र बनों में अरु पर्वतो में पुनः भूतल कहिये अयोध्या मो किंबा राज मों करे हैं तिन की भूर निधान जानकर देखते हैं किंबा अर्थ ऐसे करणा गुरों कर साधक सिद्ध पदवी कों पावते हैं । अरु गिर वन पृथ्वी अरु बड़ियां निधि इन को जानकर देखते हैं । तत्व यह मिथ्या जानते हैं ।।१ ॥

गुरपदरज मृदु मंजुल अंजन । नयनअमिअ दृगदोषबिभं

एक अंजन स्वेत अरु सुख उत्पादक होते हैं परंतु नैन को कटु लागते हैं अरु नहीं तथापि स्याम रंग हैं तिन से चंचलता उपजती है अरु गुरों की रजरूपी अंजन मृदु है अरु दृगों के दोष दूर करणे मों नैनामृत नामे अंजन सम है ॥ १ ॥

तेहि करि बिमल बिबेक बिलोचन । बरनउं रामचरित भवमोचन ॥

तिस गुरु की चरणरज के प्रभाव कर बिबेक रूपी दृग निर्मल भये हैं ताते भवमोचन जो श्रीरामचंद्रजी का चरित्र है सो वर्णन करताहौं । जो बिलोकन पाठ होइ तिस कर कहिये मेरे गुरु जो हनुमंतजी हैं तिन्ह की चरणरज रूपी अंजन के प्रभाव कर बिमल बिबेक कहिये आवरण विषय से रहित हैं जिन का ज्ञान तिस श्रीरामचंद्रजी का अवलोकन कहिये दर्शन किया तिस दरसन के प्रभाव कर बरनौ रामचरित भवमोचन ॥ २ ॥

बंदौ प्रथम महीसुरचरना । मोहजनित संसय सब हरना ॥३॥

प्रथम ब्राह्मणों के चरण को बंदता हौं । अथवा प्रथम महीसुर कहिए मुख्य ब्राह्मण ब्रह्म के वेत्ता कैसे है वह मोह कहिये अविद्या तिस कर जो उपजते हैं जीव को अनेक संदेह सो ब्रह्मविद्या कर तिन को निवृत्त करते हैं ॥४॥ टिप्पणी—इस का अर्थ मानसप्रचारिका में यों लिखा है । अब श्रीगोसाईंजी महाराज ब्राह्मणन के चरण की बन्दना करते हैं कि प्रथम महीसुर जो ब्राह्मण तिन के चरणबन्दौं कैसे हैं ब्राह्मणन के चरण कि मोहजनित नाम मोह से उत्पत्ति संशय तिस के हरनेवाले हैं । शंका । अनेक बन्दना करि आये हैं अब प्रथम पद कैसे बने । उत्तर । यह बंदना के साथ प्रथम नहीं है ब्राह्मण के साथ है कि प्रथम पूजनीय जो ब्राह्मण तिन के चरण बन्दौं । शंका । प्रथम पूजनीय तौ गणेश हैं । उत्तर । सोऊ ब्राह्मणै के द्वारा गणेश पूजनीय हैं जब जन्म होता है तब प्रथम ब्राह्मणै नामकरण व नक्षत्र का फल गनिकै पुजावते हैं तब गणेशजी को पूजन होता है ताते ब्राह्मण सर्व कार्य में व सर्व स्थान में व सर्व से मुख्य है पहिले सर्वकर्म में ब्राह्मणै को अधिकार है ताते ब्राह्मण को प्रथम पूजनीय कहा है अथवा प्रथम प्रकरण के साथ है कि श्रीगोस्वामीजी वाणीविनायक से ले गुरुपद नखताईं बंदना करि सो द्वै प्रकरण समाप्त करे जब तीसरा प्रकरण उठाये तब प्रकरण के प्रथमही महीसुर बंदे ॥ इत्यर्थः ॥ ३ ॥

सकलगुनषानी। करौं प्रनाम सप्रेम सुबानी॥ ४॥

।ो निधि जो उत्तमो का समाज है तिन को मिष्टबाणी बोल कै अरु सप्रेम कहिये
। कर्ता हौं॥ ४॥

सुभ सरिस कपासू। निरस बिसद गुनमय फल जासू॥५॥

त्व सुभ है अरु कपास के सरिस कहिये सम है जैसे कपास नीरस है स्वेत है अरु
लो है तैसे संतजन बिषे रसों से रहित है शुद्ध है अरु तिन्ह की कृपा उपकार

गुष परछिद्र दुरावा। बंदनीय जेहिं जग जसु पावा॥ ६॥

...र कष्ट सहिकै लोगों को परदा होती है अरु सुंदर बस्त्रों करि लोग बंदना योग्य होते हैं
...भ लोग सराहते हैं तैसे संतजन अपने तन धनादिकों पर कष्ट सहार के लोग हूं पर
करते हैं अरु तिन्ह की संगति करि लोग पूजीते हैं ताते सर्व जगत में तिन्ह की शोभा है
... प्रयाग के रूपक कर संतसमाज कर महात्म कहिते हैं॥ ६॥

मुदमंगलमय संतसमाजू। जो जग जंगम तीरथराजू॥ ७॥

संतों का समाज अनंद मे है जाते सभों को आनन्ददाता है अरु संतजन जंगम तीरथपति हैं अर्थ यह आप लोगों के गृहों मों जाइकै पवित्र करते हैं जो कोऊ कहै सतसंग को जंगम तीरथ कहौ तो बनै तीरथराज तब होइ जो गंगा आदिकों का संगम होइ तव्राह॥ ७॥

रामभगति जहं सुरसरिधारा। सरसइ ब्रह्मबिचार प्रचारा॥ ८॥

इस प्रयाग मैं श्री रामचन्द्र जी की अनन्य भक्तिरूपी गंगा है अरु ब्रह्मविचाररूपी सरस्वती है॥८॥

बिधिनिषेधमय कलिमलहरनी। करमकथा रबिनंदिनि बरनी॥ ९॥

विधि करम कहिये वेद बिहित जगादिक सो हिंसारूप मल तिनो मैं भी है। अरु निषेध कहिये वेदबहिःकृत करम सो तो मल रूपी है। तिन निषेध करमों को विधकर नास करना अरु विरोधों की हिंसा आदिक मल निसकामताकर काटणी तिनो निसकाम करमहुं की जो कथा है सो रबितनुजा है भक्ति को गंगा सरस्वती को ब्रह्मविद्या जमुनाजी को करमरूप कथन में भाव इहां इनों मो गुणों की समता है सो प्रथम उत्पत्ति की समता कहते हैं। बिबुधनदी को भगवान के चरणों से उत्पत्ति है सो भक्ति भी प्रभों के पदारबिंदो के ध्यान से ही उपजती है सरस्वती ब्रह्माजी से उपजी है। आतम विद्या भी ब्रह्माजी सेहीं उत्पत्ति भई है। प्रमाणमुंडक श्रुति। ब्रह्मा देवानां प्रथम संबभूवा सब्रह्मविद्या प्रतिष्ठाय अथर्वाय ज्येष्ठ पुत्राय प्रवाह। ब्रह्माजी सर्वदेवत्यों के प्रथम होते भए तब सकल विद्या से मुख्य जो आत्मविद्या है सो अथर्वनामे बडे पुत्र प्रति कहतेभए। अरु जमुना सूर्य्य से उपजो हैं सो करमों का अधिक अधिकार भी सूर्योदैसेहीं उपजता है। प्रमाण तैत्तीश्रुति। अहांकेवुरसुसामेति अयेभागे देवे भ्यो

विद्युति। दिनों का केतु जो भानु है सो प्रातकाल के आगे उदै होता है । तब देवन की यज्ञ है। अब स्वरूप के समता कहते हैं जैसे देवापगा परम उज्ज्वलबरन अरु परम पवित्र हैं हैं अरु सर्व मलों के काटनेहारी हैं सरस्वती का श्वेत बरण है सो ज्ञान भी प्रकाशरूप का श्यामबरण है सो इहां करम तो निष्काम करे हैं तौ भी करमों में कुछक अहंकारादि होती है। अथवा संतों का समाज जिस निमित्त एकत्र होवै सो कहिए संतसमाज । भया यह ग्रंथ जैसे तिस प्रयाग में सुरसरि का प्रवाह अधिक है । तैसे इस निबंध में भ जैसे तहां सरस्वती का प्रवाह अति सूक्ष्म है । तैसे इहां ज्ञान का प्रसंग नाममात्र है का प्रवाह सरस्वती से बहुत है। तैसे निष्काम करम कहिये भक्ति के साधनरूप उत्तम विशेष है ॥ ९ ॥ टिप्पणी—देवापगा का अर्थ देवनदी गंगा है ।

हरिहरकथा बिराजति बेनी । सुनत सकलमुदमंगलदेनी ॥

आशंका । हरिहर कथा कहने से विष्णु अरु शिव दोनों कियां कथा सिद्धभयां । नाम तीन का है यह जुक्त कैसे बने । उत्तर । बि कहिये बिहंग तिस पर राजते कहिय सोभते ... हंसरूप पक्षी पर जो सोभै सो ब्रह्मा ताते सतसंग में भक्ति ज्ञान करम मिश्रित जो तीनों ईश्वरों की कथा है सो त्रिबेनी भई । किंवा इस ग्रंथरूपी प्रयाग बिषे त्रिबेणी इस भांति जानणी । हरि कहिये संत जाने भगवंत अरु संत अभेद हैं । प्रमाणगीता । ज्ञानीतात्वैवमेमतं । भगवान ने कहा है । ज्ञानी मेरा स्वरूप है सो प्रथम ज्ञानीउ का समाज यागवल्कि भरद्वाज का । दूतीयहर शिवजी का उपदेस गौरीप्रति। तृतीय बिराज कहिये बिहंगराज सो गरुड का नाम प्रगट है । किंवा भुसुंडजी का नाम भी बनता है। खगराज जिनके शिष्य भए सो राजाधिराज हुए इस भांति भक्ति ज्ञान करम कथा के वक्ता जो तीनों समाज हैं तिनकी जो इस ग्रंथ में एकत्रता है सोई इहां त्रिबेणी भई । वह तृबेणी स्नान कर्त्यों को पवित्र करती है। यह श्रीरामचंद्र की कथारूपी तृबेणी श्रोत्यो को भी परमानंद की प्राप्ति करती है। कईएक इहां पुनरुक्ति मानते हैं सो नहीं जाते प्रथम तीनों सरिता का वरणन है । पुनः संगम का है अरु कईएक बेणीपद बेणीमाधो का वाचक कहते हैं ।सो तो इहां पाठही त्रिबेनी है। अरु बेणीही होए तौभी जो किसू नेकिसू ग्रंथ में केवल बेनीपद बेनीमाधो का वाचक देखा होइ तौभी प्रमाण है ॥ १० ॥ टिप्पणी—महंथ रामचरण दासजी यों लिखते हैं। प्रयाग में गंगा सरस्वती यमुना तीनों मिलित हैं त्रिबेणी कहिये अरु संतसभा बिषे का बेनी है हरिहर कथा जो है सो बेनी है बेनी काको कहिये दुइ तीन चारि पांच छः सात इत्यादिक अपर मिलिजाइँ ताकी बेनी संज्ञा है अरु हरिभगवत् हर भागवत् की कथा अभेद है तेहि कथा में भक्तिज्ञान सुकर्म तीनों मिलिकै जहां एकता है तहां सिद्धान्त है कौन प्रयाग ते जानिये जहां मोह के बश सतीजू जानकीजू को स्वरूपधारण कीन है तब शिवजू सती बिषे जानकीरूप ग्रहण कीन्ह है सो बिधि भयो सती स्वरूप को त्यागकियो सो निषेधभयो सो बिधि निषेध में जो कर्म है सो यमुनास्थाने अरु जो बिचार कीन्ह सो बिचारकरिकै श्रीरामइच्छा को अपने अन्तष्करण में दृढकीन अन्तष्करण शांतिरस को प्राप्तभयो सो ज्ञान है अरु जो जानकीजू को स्वामिनी भाव कीन्ह सो भक्ति है

...ां तीनोंमिलित हैं ताते हरिहर कथा बिराजत बेनी त्रिबेणी सेवन करतसंते सकल ...रिहर कथा सुनत संते सकल मुदमंगल देत है।

अचल निज धरमा। तीरथराज समाज सुकरमा ॥ ११ ॥

...र अचल निश्चै होणा इहां अखैबट है। अरु दैवी संपदारूप जो सुभ करम है। तिनका ...ह तीरथराज का समाज है। आगे प्रयाग से संत संग विशेषता कहते हैं ॥ ११ ॥ टिप्पणी— ...रणादासजी ने यों लिखा है।—प्रयागबिषे बट है सो अचय है अरुप्रयाग तीर्थराज ...समाज जो प्रयाग है तामें बिश्वास जो है सो बट है बिश्वास काको कहिये यह जो ...है तेहिते मेरोरचा श्री मद्रामचन्द्र करहिंगे सब प्रकार ते यह अचल बिश्वास है तत्रप्रमाण ...। ज्ञानक्यासहृदेवेश रघुनाथोजगद्गुरुः। रचकःसर्वसिद्धांते वेदान्तेषुप्रगीयते १ बट तो निजधर्म कही साधु धर्म जो है सोई अचय है अचल है पुनि प्रयाग तो तीर्थराज है ...ज भर्गे कर जो स्वाभाविक सुकर्म जो शास्त्रन में कहेहैं संतन के कर्म सो समष्टि करिके ...एक संत में शुद्ध भगवत् कर्म है वाह्यांतर सोई भक्तराजपद है अथवा तीर्थराज में समाज जुटै है संतसभा में सुकर्म है ॥

सबहि सुलभ सब दिन सब देसा। सेवत सादर समन कलेसा ॥ १२ ॥

वह प्रयाग धनवानों का सुलभ है यह सभों को सुलभ है। उसके स्नान का महात्म एक मकर मास में विशेष है यह सब दिनहु में एकासा पवित्र करता है। वह एक देस मों है यह सर्व देसों में हैं उस के स्नानकर पाप नष्ट होते हैं। इसका जो सरुचि सेवते हैं तिन के पंचकलेस कहिये अविद्या असमतारागद्वेष अभिनिवश सभ नाम होते हैं ॥ १२ ॥

अकथ अलौकिक तीरथराऊ। देइ सद्य फल प्रगट प्रभाऊ ॥ १३ ॥

अकथ कहिये जिसकी महिमा कथी न जाइ। अलौकिक कहिए जिस केऐसा लोक विषे और न होवै सो उस के ऐसा देवप्रयाग है। पुनः रिषीकेस में त्रिबेनी हैं उस के मज्जन का प्रभाव प्रयाग से भी विशेष कहा है। प्रमाण स्कंदपुराणे। मायापुरी महात्मे सूर्य्यश्चापि तथेतयुक्तादद्दौ वरमनुत्तमं यमनाच महा भाग्य कलेयाचात्रसंस्थिति तस्या स्तुसंगमेपुण्ये प्रयागत् कोटि संख्यके ॥ जब गालवमुनि ने इहां त्रिबेणी के स्नान निमित्त सूर्य्य से बर मांगिआ तब भानु भी तथास्तु कहि के ऐसे वरदेता भया। हेमहा भाग्य यमुना अरु चकार से सरस्वती भी कलाकर इहां प्रगट हूै कर गंगाजी सों संगम करैगीआं। तिस संगम के स्नान का फल प्रयाग से भी कोटिगुण अधिक होएगा सो इस जैसे प्रयाग तौ और भी हुये अरु सतसंग जैसा पदार्थ जीव के कल्याण करणे को लोक विषे और कोउ नहीं। और तीरथों के स्नान का फल चिरकर प्राप्ति होता है। अरु सतसंग मो बैठकर गुरों के वाक्य श्रवण मात्र तेही सद्य कहिये ततछिन चित्त को बिश्राम होता है यह प्रगट प्रभाव है सोई कहते हैं ॥ १३ ॥

दोहा—सुनि समुझहि जन मुदितमन, मज्जहि अतिअ॰
लहहिं चारि फल अछततनु, साधुसमाज प्र॰

यह हरिजस रूपी जो तीरथपति हैं इसको श्रवण मनन कर जो प्रसन्न होणा॰ सहित मज्जन। उस प्रयाग के स्नान का फल अदृष्ट उपजता है अरु सतसंगरूपी ती॰ कर धर्म अर्थ काम मोच्छ इसी तन मो प्राप्ति होते हैं सोई देखावते हैं॥ २॥

मज्जनफलु पेषिअ ततकाला। काक होहिं पिक बकउ म॰

कागो समान जो जीव हैं सतसंग करि पिक सम होते हैं अर्थ यह मीठा बोलना सी॰ के सम जो दंभी हैं सो मरालों सम सत्य असत्यरूपी जल दूध के विवेक करने को। किंवा एकठा क्रम कहेणा प्रथम मिष्टवाक्य मीखते हैं पुनः वाह्य व्यवहार संतों का॰ पुनः अंतर से भी निर्मल हो जाते हैं॥ १॥

सुनि आचरज करै जनि कोई। सतसंगतिमहिमा नहिं गोई॥

नहीं गोइ कहिए छिपी होइ नहीं जाते॥ २॥

बालमीकि नारद घटजोनी। निज निज मुषनि कही निज होनी॥३॥

बालमीक बाट मारता था नारद पूर्वजन्म मो दासीसुत था अगस्त्य कुंभ मे उपज्या था तिनो अपणे मुखो कहा है जो सतसंग के प्रभाव कर हम ने महान पद पाये हैं अरु और भी॥ ३॥

टिप्पणी—महात्मा रामचरणदास जी ने यों लिखा है। बाल्मीकि नारद घटयोनि कही अगस्त्य जो सत्संग के प्रभावते जैसे महत्व को प्राप्त भये हैं ते अपने २ मुखन ते कहते भये श्रीबाल्मीकि श्रीमद्रामचंद्रजू सों कहते भये श्रीनारद श्रीवेदव्यास जू सों कहते भये श्रीअगस्त्यजू श्रीशिवजू सों कहते भये बाल्मीकिजू कब कहा जब श्रीरामचंद्र आश्रमहिं आये तब बाल्मीकि कहते हैं हे श्रीमद्रामचंद्रजू मैं प्रचेता को पुत्र हौं मोको पूर्वही किरात की संगति परिगई तेहि दुष्ट दशा में केवल तुम्हारी कृपा ते सप्तऋषिन की संगति भई अल्पकाल तेहि प्रभाव ते मोको हंसवत् विवेक भयो तुम्हारो गुण मुक्तारूप है तुम्हारो यश दुग्धरूप है सोतो ग्रहत भयों यह जगत् में मानादिक कंकरी संबुकरूप है देह जनित रागादि विषय सो जल रूप है सो समस्त त्याग भयो तेही सत्संग के प्रभाव ते आप मिले मोको हे श्रीरामचंद्र आप सब जानते हैं मैं ऐसे ते ऐसो भयों पुनि नारदजू कब कहा जब कोई काल में व्यासजू के कछू शांति हृदय में नहीं भई तब श्रीनारदजी ने कहा हे श्रीवेदव्यासजू पूर्वही मैं दासीपुत्र रह्यों जहां हम रहे तिस के इहां साधु बहुत आवें तिन की मैं सेवा करौं तिन को प्रसाद अन्न जल बस्त्र करिकै शरीरपालन करौं मेरी काकवृत्ति रहै जैसे कोई पनवारा में शेष छोड़िदेइ ताको काक बिनिबिनि खाइहैं तैसे मैं करौं तेई सत्संग के प्रभावते मैं भगवत्यशगान को अधिकारी भयों मेरी कोकिलावत् वाणी भई देखो तो सत्संग ते मैं ऐसे ते ऐसो भयों ताते हे श्री वेदव्यासजू तुम सत्संग करिकै केवल भगवत् यशगावहु हृदय में शांति ह्वै जायगी श्री अगस्त्यजू ने कब कहा एक समय में

..के आश्रम में आये शिवजू कहा श्रीरामचंद्रजू के चरित कहो तब अगस्त्यजू कहा हे ईश्वर हो तुमसन मैं का कहौं मैं तो घट ते उत्पन्न हौं पूर्वहीं कोई काल में सूर्य जो ने यज्ञ प्रारम्भ कीन्ह तहां देवता ऋषि मुनि सिद्ध अनेकन आये सब मिलिकै कलश- ..श में सूर्यवीर्य स्थापन कियो जेती सतसभा रही तिन ने कोई अपनो बल कोई वीर्य प्रताप कोई धृति कोई शांति कोई संतोष कोई क्षमा कोई ज्ञान कोई वैराग्य कोई भक्ति नुराग कोई प्रेम इत्यादिक ने योग ध्यान समाधि अपनी शक्ति तासो कलश में स्थापन स्त मुनि जो रहे महान् भागवत् घटस्पर्श करिकै आशीर्वाद देत भये घट ते बालक उत्पन्न ो तब मैं उत्पन्न भयों कोईकाल पाइकै समुद्र को पान करिगयों सो केवल श्रीरामप्रताप पा ते आप सब जानते हौ सतसंग प्रभाव से ऐसे ते ऐसो भयों अब जो आज्ञा होइ सो देवजू तब शिवजू कहा हे अगस्त्यजू श्रीरामचरित कहहु ताते प्रयागक्षेवते संतसभा ..है ।

..र थलचर नभचर नाना । जे जड चेतन जीव जहाना ॥ ४ ॥
..मति कीरति गति भूति भलाई । जब जेहिं जतन जहां जिहिं पाई ॥ ५ ॥
सो जानब सतसंगप्रभाऊ । लोकहुं बेद न आन उपाऊ ॥ ६ ॥

मति कहिये सुबुद्धि कीरति कहिये जस गति नाम मुक्त का भूत नाम विभूत का भलाई कहिये उपकार किंच भूत भलाई कहिये प्राणिउं पर उपकार करणा जब कहिए जिसकाल विषें जिहिं जतन कहिए जिस जपतप आदिकों उपावों कर जहां कहिये जिस देश मों जिहिं पाई कहिये जिस स्थावर जंगम को प्राप्ति हुई होइगी तों सतसंग सेंही हुई होइगी सो इस महात्म को जानत हैं । जो लोकवेद विषैं सतसंग बिना कल्यान का उपाव कोऊ नहीं। जो कोऊ कहै मोक्ष निमित्त विवेक चाहिता है तिसपर कहते हैं ॥६॥

टिप्पणी—मुंशी रोसनलाल ने इन चौपाइयों का ऐसा अर्थ किया है। ऊपर की ३ चौपाइयों का अर्थ यह कि सतसंग प्रभाव के विषय बाहुल्य साखी देते हैं कि जितने जगत में जीव हैं जड़ वा चैतन्य जिस ने जिस काल में और जिस जतनसे और जहां कहीं मति गति कीर्ति ऐश्वर्य भलाई पाई होगी उस को यह जानो की सतसंग के प्रभाव से है लोक और बेद में दूसरा उपाय नहीं है जलचर आदि पांच प्रकार के जीवों के साथ यह पांच वस्तु मति आदि यथा क्रम से बन्धी है क्योंकि जलचर के साथ मति का संबन्ध इस कथा से प्रगट है कि राघव मतस्य की मति में यह आया कि उस ने कौशिल्या को अपने में रख के और उसी से रावण का नाश समझ के कौशिल्या के पिता को सौंप दिया और कीर्त्ति थलचर में गजेंद्र की आज तक भागवत में गाई जाती है और नभचर की गति जटाई गीध से जो राम की सहायता कर के परम धाम को गया प्रसिद्ध है जड़ के साथ में अहिल्या है जो अपने पति की बिभूत को प्राप्त हुई और चैतन्य में से सुग्रीव हनुमान आदि बानरों को इतनी भलाई प्राप्त हुई कि राम ने उन की सहायता का यश मान के अपने को उन का ऋणी कहा यथा—सुनु सुततोहि उरिन मैं नाहीं । देख्यो करि बिचार मन माहीं ॥

बिनु सतसंग बिबेक न होई । रामकृपा बिनु सुलभ न सोई

मोक्ष्य का कारण जो बिबेक है सो सतसंग बिना नहीं होता । जो कोऊ कहै तो संग क्यों नहिं करते तिस पर कहते हैं श्रीरामचंद्रजी की कृपा बिना सतसंग नहीं मि. संतों के बचनों में रुचि अरु विस्वास नहीं होता ॥ ७ ॥

सतसंगति मुदमंगलमूला । सो फल सिधि सब साधन फूला ।

सो कहिये सतसंग तिस की सिद्धि कहिये प्राप्ति होणी यह जनम का फल है अरु जः साधन फूल हैं ॥ ८ ॥

सठ सुधरहिं सतसंगति पाई । पारस परसि कुधातु सुहाई

सठों का सुधरना कहिये परलोक मों तो तीनि की गति होती है । इस लोक मों भी श्रे जैसे पारस के परस भये लोहे का मोल तौल बढता है परंपु रूप भी सुंदर होता है ॥ ९ ॥ मानस प्रचारिका में यों लिखा है । शठ जो हैं सोउ सत्संग का पाय करि सुधरि जाते हैं कैसे के परसि ते कुधातु जो लोहा सो सुवर्ण होत है यह तद्गुणालंकार है ॥ लक्षण—तद्गुण निज करि संगति के गुण लेइ । नासामोतीअधर मिलि पद्मरागछबि देइ (इति तुलसीभूषणे) २१ ।

बिधिबस सुजन कुसंगति परहीं । फनिमनि सम निजगुन अनुसरहीं ।

दैवसंत से जो संत हूं को भी कुसंग मिलि जाइ तौ सर्प की मणि समान अपने गुणों को अनुसर करते हैं अर्थ यह जैसे मणि को विष नहीं पोहतो हाथ सें मणि विष को मिटावती है । तैसे संतहुंपर दुष्टों का बल नहीं पडता सतसंग कर दुष्टों की बुद्धि शुद्धि होती है ॥ १० ॥ टिप्पणी—मानसप्रचारिका में यों लिखा है। ऐसे संत जो कहूं बिधिबश नाम प्रारब्ध के जोग से कुसंगति में परि जाहिं तौ जैसे सर्प्प के विषे मणि अपना गुण अनुसरत है तैसे संत अपने गुण लगावें कुसंगति के गुण आप ग्रहण न करैं । यह अतद्गुणालंकार है। लक्षण—तहां अतद्गुणसंग को जब गुणलागतनाहिं । पियअनुरागी ना भयो बसिअनुरागिन माहिं । (इतितुलसी भूषणे) २२ ॥

बिधिहरिहरकबिकोबिदबानी । कहत साधुमहिमा सकुचानी ॥ ११ ॥
सो मो सन कहि जात न कैसें । साकबनिकमनिगन गुन जैसें ॥ १२ ॥

जिनो संत की महिमा कथन मों ब्रह्मादिकों की मति सकुचती है सो मुझ को तौ ऐसी अगम भासती है जैसे साग का बनजारा मनियों के समूहों कों मोल नहीं जाणता ॥ ११ ॥ टिप्पणी—मानस प्रचारिका में यों लिखा है। तो जो ये ईश्वर कोटी सो नहीं कहिसके तौ हम से नहीं कहिजातकैसजैसे साकबनिक जो कांच की पोति के बेचनेवाला मणि के गुणगण नहीं कहि सकत तैसे ॥२४॥

दोहा—बंदौं संत समानचित, हित अनहित नहिं कोइ ।
अंजुलिगत सुभ सुमन जिमि, सम सुगंध कर दोइ ॥

संत सरलचित जगतहित, जानि सुभाउ सनेहु।
बालबिनय सुनि कर कृपा, रामचरनरति देहु ॥ ३ ॥

हाथ कर माली पुष्प तोरता है सो कर सुमनों का शत्रु भया अरु बाम हस्त मों धरता फूलों का हितू भया परंतु प्रसून दोनों करहु कों सम सुगंध देते हैं तैसही संतजन मित्रता सो की नहीं विचारते सबको सुखही देते हैं। तैसिही संतजन जो निर्मल मन हैं अरु सभ के मेरा दीन सुभाव अरु भगवंत के जस मों प्रेम जानकर मुझ बालक की बिनै सुनकर मेरे परिकै श्रीरामचंद्रजी के चरनों की अविरल प्रीति देवै। अबदुष्टों को प्रणाम करते हैं ॥ ३ ॥

बहुरि बंदि खलगन सति भायें। जे बिनु काज दाहिनेहु बांयें ॥ १ ॥

दुष्टों को प्रनाम करता हौं परंतु सदभावकर अर्थ यह अदंभ ह्वै कै। कैसे हैं वह जो मारग होहिं अरु कोउ पुरुष उदासीन किसी कारज कों चले अरु वह समझै दाहिने मिले से कुछ बिगडता नहीं परंतु इस का काम सुधरेगा तो दाहिने से बाएं वोर आइजाते हैं ॥ १ ॥
—बाबा रामचरणदासजी ने यों लिखा है। बहुरि खलन के गण जे हैं तिन की बन्दना करत हौं कही यथार्थ गुण तिन के बर्णन करत हौं निन्दा ते नाहीं बर्णत हौं कैसे हैं खल दाहिन कही व हैं बिना कार्यहि बाम कहाँ टेढ़ ह्वै जाते हैं।

परहितहानि लाभ जिन्ह केरे। उजरे हरष बिषाद बसेरे ॥ २ ॥

लोगों के सुभ का नास होनाहो तिनको लाभ है अरु नगरों को वैरान देख सुखी होते हैं बसे देखकर दुखी होते हैं वा मनुजों के हिर्दे रूपी जो पुर है तिनको भगवंत से बिमुख देख कर प्रसन्न होते हैं अरु किसूको हरि परायण देखें सोक करते हैं ॥ २ ॥

हरिहरजसराकेस राहु से। परअकाज भट सहसबाहु से ॥ ३ ॥

विष्णुजी का अरु शिवजी का जसरूपी जो पूरणचंद्रमा है तिस को राहू इव ग्रासते हैं अरु लोगों के बुरा करणे को सहस्रबाहुं सम बल धारत हैं ॥ ३ ॥

जे परदोष लषहिं सहसाषी। परहित घृत जिन के मन माषी ॥ ४ ॥

पराये छिद्रों को हजार नेत्रों कर देखते हैं अरु लोगों के सुभकार्य रूपी घृत मों मक्खी सम परते हैं प्रयोजन यह अपना तन बिनसो परंतु और का कारज बिगरो ॥ ४ ॥

तेज कृसानु रोष महिषेसा। अघ अवगुनधनधनी धनेसा ॥ ५ ॥

तेज जिन का अगिन सम सभ को जलावनहारा है अरु क्रोध महिषासुर सम संतो अरु अमरों के विशेष दुखदायक है। पापहूं अरु अपकर्महूं के समूहों कर कुबेर ऐसे धनी हैं ॥ ५ ॥

उदय केतु सम हित सब ही के। कुंभकरन सम सोवत नीके ॥ ६ ॥

उदै होणा तिन का केतु कहिये सिखावंत तारा तिस के सम सभ के हितू हैं अर्थ यह कि सोवणा तिनका कुंभकरण सम सकल जगत को सुखदाय है सोवणा कहिये अस्तहोवे

परअकाज लगि तनु परिहरहीं। जिमि हिमउपल कृषी दलि

जैसे बरफ अरु उले खेतियों को मार कर आप भी गलिजाते हैं तैसेही दुष्ट अपना भी लोगों का बुरा करते हैं अब श्लेष पदोंकर खलों को श्रेष्ठों की समता देकर बंदते ॥ ७

बंदौ खल जस सेष सरोषा। सहसवदन बरनइ परदोषा॥

खलों को मैं प्रणाम करता हौं जिन के जस कहिये गुण शेषनाग के सरोखा कहिये जैसे फणिपति परिदोष कहिये भगवंत जो सबदोषहूं से परे हैं तिस के गुण सहसमुखों करता है तैसेहीं खल अनेको मुखों कर कहिये अनंत बेरी पराये दोष कहीते हैं ॥ ८ ॥

पुनि प्रनवौं पृथुराज समाना। पर अघ सुनइ सहसदस कान

बहुरि तिन को राजे पृथु सम जाणकर प्रणाम करता हौं पर अघ कहिये जो सर्व पा... परमेश्वर जैसे पृथुराजा तिस के जस को अयुतों करणों कर सुनता था तैसे वह पराय पापों ... करणहूं कर सुनत हैं अर्थ यह जहां कहां से सुनत हैं अरु थोरे कों बहुता बनावते हैं ॥ ९ ॥

बहुरि सक्र सम बिनवौं तेही। संतत सुरानीक हित जेही॥ १० ॥

पुनः तिन को वासव सम जानके बंदताहौं सुरानीक कहिए सुरसैना तिस सों जैसे इंद्र की निरंतर प्रीति है तैसेही सुरा कहिए मद्य तिस सों तिन की नीको रुचि होते ॥१०॥ टिप्पणी—मुन्शीरोशनलाल ने इस का निम्न लिखित अर्थ किया है। फिर उन को ... मानकर बिनती करता हूं और सुरानीक यह शब्द दुअर्थक है एक देवताओं की सेना अर्थात् जैसे देवताओं के सेनापति इंद्र हैं ऐसे बिषई के सेना पति खल हैं दूसरा अर्थ सुरा मद अर्थात् जिन को मद से नीक हित है और मद इंद्र के साथ राजमद है और इन के साथ बिकार मद है। बाबारामचरणदासजी ने निम्न लिखित व्याख्या की है। पुनि शक्र कही इन्द्रसम खल हैं इन्द्र को अमृत प्रिय है वा अपने देवताप्रिय हैं वा अपनो ऐश्वर्य प्रिय है तीनिहूं को एकही सुख है अरु सन्तत कही निरन्तर खलन को मदिरा प्रिय है वा जातिकुल कुटुम्ब मद प्रिय है अथवा ऐश्वर्य मद मोह प्रिय हैं।

बचन बज्र जेहि सदा पिआरा। सहसनयन परदोष निहारा॥ ११ ॥

जैसे इंद्र को बज्र पियारा है अरु हजारनैनों कर परदोष जो भगवान हैं तिन को देखता है तैसे दुष्टों को कठोर बोलना अतिप्रिय है अरु हजारोंदृगों कर पराये पापों को देखते हैं। तब यह कोई कहूं छीप कै करै उनोंसे अनुमानादिकों द्वारा लखिकै अनेक बनाई कर कहणे ॥ ११ ॥

दोहा—उदासीन अरि मीत हित, सुनत जरहिं खलरीति।
जानु पानिजुग जोरि जनु, बिनती करौं सप्रीति॥ ४ ॥

ीन कहिए जो निसप्रयोजन होहिं अरि कहिये जिन को दुख से सुख मित्र कहिये जिन की
सभों का हित देख कर जलना यह खलों की रीति है तिन को ऐसे जान के अरु है
नै करता हौं तिन को बंदन का भाषै यह मेरे ग्रंथ की निंदा ना करै अरु बंदना मो
की सद्दसता देवण का भाव यह जैसे कोऊ किसू निमित्त कुबस्तु को भक्षण करण
,ता जाइ मैं बरफी खात हौं मै अंगूर खाता हौं ॥ ४ ॥ टिप्पणी—मुन्शीरोशनलाल ने
वत अर्थ किया है। उदासीन अर्थात् मध्यस्थ और अरि अर्थात् शत्रु और मीत मित्र इन सब
को सुन कर जलते हैं यह खलों की रीति है सो यह मेरी जानी हुई है तभी दोनों हाथ जोर
ित बिनती करता हूं। एक अर्थ यह भी करते हैं कि उदासीन जो महादेव हैं तिन का अरि
मित्र विष्णु तिन का हित सन्तजन को सुन के जर जाते हैं यह अर्थ कूट से होता है
ी रीति रामायण में कहीं पाई नहीं जाती उदासीन का अर्थ मध्यस्थ होना इस चौपाई
। संत पुरान कहैं अस नीती। खल से कलह नहीं भल प्रीती ॥ उदासीन नित रही गुसाईं।
स्वान की नाईं ॥ महंथ बाबा रामचरणदासजी ने निम्नलिखित अर्थ किया है। खल कैसे
न सब ने रहते हैं अरु सब के अरि हैं पुनि जे उन के मित्र हैं तिनहूं को हितकार होत सुनहिं
जाते हैं यह खलन के रीतिही है ऐसे लक्षण जिन में होइं तेई खल हैं पुनि जे संसार तें
ीन हैं साधुजन तिन के तो अरि हैं पुनि उदासीन जे हैं मुनिजन तिन को अरि रावण है तिन के
मित्र जो शिव हैं शिव को हित श्रीरामचन्द्र हैं तिन को यश सुनतमात्र जरि जाते हैं यह खलन की
रीतिही है ताते जानु कही जाय पानि कही हाथ दोनों जोरि कै जैसे खल हैं तैसेही यथार्थ सप्रीति
समेत बिनती करत हौं जानु पानि क्यों कहा अति प्रीति ते अथवा हास्य रसते बिनय कोन किन्तु गोसांई
कहते हं हे मन खलन को अस जानु दोनों कर जोरि बन्दना करु।

मैं आपन दिसि कीन्ह निहोरा। तिन्ह निज ओर न लाउब भोरा ॥१॥

मैं आपनी उर से तौं तिनो आगे बिनै करी है परंतु वह मेरी बिनै को रंचक भर भी न समुझैंगे
तत्व यह निंदा करन का त्याग न करैंगे जैसे ॥ १ ॥ टिप्पणी—उर का अर्थ ओर जानना।

पायस पालिय अति अनुरागा। होहिं निरामिष कबहुं कि कागा ॥ २ ॥

पायस कहियै खीर भुंचाइ कर जो बाइस को पालिये तौं भी वह मांसादिक अहारों को नहीं
त्यागता ॥२॥ टिप्पणी—मुनशी रोशनलाल ने पायस पाठ लिखकर ऐसा अर्थ किया है। यद्यपि पायस
अर्थात् खीर से पाला गया जो काक है वह मांस को न छोड़ेगा पाठांतर वायस शुद्ध नहीं है क्योंकि वायस
काक को कहते हैं सो काक आगे लिखा है। महात्मा रामचरणदासजी ने यों लिखा है। जैसे वायस कही काग
अति अनुराग ते पालिये पर आमिष भक्षण न छोड़ैगो तैसे खल हैं इहां पुनरुक्ति न जानब। मानसप्रचारिका
में बायस पाठ लिखा है और निम्नलिखित अर्थ किया है। अब जो कोई कहै कि भला तुम तो बिनती करते
हो औ वे खलई से न चूकेंगे सो कैसे तहां सुनो जैसे बायस जो है कौवा तिसको अति प्रीति से पालौ
परंतु निरामिष नहीं होता काहे ते कागा उस का गया का वह तो काग को कागई है तैसे खल की
बंदना करे से खलन को को का गयो खल की खलई है मैं तौ अपनी साधुता ते बंदना कीन है।

बंदौं संत असज्जन चरना । दुखप्रद उभय बीच कछु

अब मैं संतों असंतों को एकट्ठी बंदना करता हौं जाते दोनों दुखदायक हैं परंतु कहिए भेद भी कुछ एक बरणन किया है तिस भेद का स्वरूप दिखावते हैं ॥ ३ ॥

बिछुरत एक प्रान हरि लेहीं । मिलत एक दुख दारुन दे

जो कोउ कहै संतों असंतों के कुलों का भेद होवै तौ गुणों का भेद भी चाहिये तातें दिखावते हैं ॥ ४ ॥

उपजे एकसंग जग माहीं । जलज जोंक जिमि गुन बिलग

उपजे तौ जगत में एक सी कुलों में है परंतु गुण भिन्न भिन्न है जैसे कमल अरु जोंव उपज के स्वभाव भिन्न गावते हैं । ५ ॥

सुधा सुरा सम साधु असाधू । जनक एक जग जलधि अगा'

जैसे पीऊष अरु वारुनी का पिता एक उदधिहीं है परंतु तिन के गुण भिन्न है तैसे संतों का असंतों का पिता संसार है अरु गुण पृथक है ॥ ६ ॥

भल अनभल निज निज करतूती । लहत सुजस अपलोक बिभूती ॥७॥

भले लोग अपनी करणी अनुसार जसु पावते हैं अरु दुष्ट अपणी अपक्रिया अनुसार लोक विषे अपविभूत कहिए अपजस पावते हैं ॥ ७ ॥

सुधा सुधाकर सुरसरि साधू । गरल अनल कलिमलसरि व्याधू ॥८॥

अमृ[illegible]सी अरु गंगारूप संत है किंबा सुधा समगिरा ससि सम सीतल दरशन गंगा सम पवित्र करता संत हैं तैसेही कालकूट अग्नि अरु कलिमलसरि कहिये करमनासा नदी सम व्याधू कहिये दुष्ट है जो कोउ कहै वह जो निसंक ह्वै के दोषों मों विचारते हैं तौ पापों पुन्यों के फल जो नरकादिक है तिन को न जानते होवेंगे तिस पर कहिते हैं ॥ ८ ॥ टिप्पणी—महंथ रामचरणदासजी ने निम्न लिखित व्याख्या की है । सुधा जो है सुधाकर जो है सुरसरी जो है साधु जो है ये चारि अपनी करतूति ते जगत में पूज्यमान हैं अरु गरल जो है अनल जो है अनल में केवल दाहक अवगुण लेब अपर गुण है तातें एक देश लैलिया कलिमलसरि कही कर्मनाशा जो है असाधु जो हैं ये ते चारि अपनी करतूति ते जगत् में अपूज्य हैं क्रम ते जानि लेब एक सुष्टुगुण मय है एक अवगुण मय है । मानसप्रचारिका में निम्न लिखित व्याख्या की है । जो कोई कहै की साधु को कैसी करणी है जाकरि सुयशपावते हैं वो खल की कैसी करणी है जाकरि अयश पावते हैं तापर कहते हैं सुधा सुधाकर सुरसरि साधू इहां बाचकधर्मलुप्ता उपमा है साधु की करणी कैसी है जैसे सुधा नाम अमृत अमृत में स्वाद तोष अमरत्व गुण है तैसे साधु की करणी में रामनाम राम रूपस्वाद है वो इसी स्वाद के पाइकरि सर्वसाधन में सन्तोष वो चारित्र मुक्ति प्राप्ति सो अमरत्व पुनः साधु की करणी सुधाकर जो चन्द्रमा ताकी नाईं शीतलप्रकाश अह्लाद-

...सरि जो गंगा ताकी नाईं पावन वो सब को प्राप्ति ऊंच नीच को अपना स्वरूप बनाय
...रि कै साधुयश को पावते हैं वो खल के गुण सुनो गरल नाम विष की नाईं कटु मृत्यु
...नल की नाईं तप्त पुनः कलिमलसरि जो कर्मनाशा ताको नाईं सर्व शुभ कर्म के
...गान ते खल अयश पावते हैं।

...गुन जानत सब कोई। जो जेहिं भाव नीक तेहिं सोई॥ ८॥

...दोषों को जानता तौ सभ कोऊ हैं तत्व यह दुष्कृतों को बुरा जानते हैं तौ दुराय कर करते हैं अरु
...चाहते हैं सुकृतों को भला जनते हैं तौ प्रगट करते हैं अरु करके प्रगटाया चाहते हैं तैसेही
...र्को स्वर्गादिक समझते हैं परंतु जिस ओर किसू की चित्तवृत लागी है उसको उही बात
...ू मे निवारण होणी कठिन है। अब खोट्यो खर्यों की पछाण पर दृष्टांत देखावते हैं॥८॥

...भलो भलाइहि पै लहै, लहै निचाइहि नीचु।
...ुधा सराहिअ अमरता, गरल सराहिअ मीचु॥ ५॥

भले पुरुष भले करमों कर लखीते हैं अरु नीच नर निंदत करमों कर जानीते हैं जैसे पियूष अंबसाहीं होता है परंतु जिस के पान करे अमर होईये तिसको अमृत लख कर सराहिता है अरु सोठीए हलदीए भी मोठ हरदी समझी होते हैं परंतु जिन के खाए कोई मर जाइ तिसको विष लखकर सराहीता है॥५॥

खलअघअगुन साधुगुनगाहा। उभय अपार उदधि अवगाहा॥ १॥

दुष्टजन औगुणों अरु पापों के संतजन गुणों अरु भगवंत को गाथा के अपार अरु अगाधि सिंधु है अर्थ यह जिन के विस्तार अरु गंभीरता का प्रमाण नहीं॥ १॥

तातें गुन कछु दोष बषाने। संग्रह त्याग न बिनु पहिचाने॥ २॥

संतहुं के गुण अरु दुष्टों के दोष सभी नहीं गिनेजाते ताते कुछ कुछ कहे हैं जाते लखणो कर लखे बिना तिनका ग्रहण त्याग करना उचित नहीं॥ २॥

भलेउ पोच सब बिधि उपजाये। गनि गुन दोष बेद बिलगाये॥ ३॥

उत्तम अरु नीच लोग विधाता ने बनाए अरु गुणों दोषों द्वारा वेद ने तिन के भेद दिखाए हैं॥ ३॥

कहहिं बेद इतिहास पुराना। बिधप्रपंचु गुन अवगुन साना॥ ४॥

श्रुतोंस्मितों ने एह बात कही है दैव रचित जगत गुण दोष मिश्रित है सोई निरूपण करते हैं॥४॥

दुष सुष पाप पुण्य दिन राती। साधु असाधु सुजाति कुजाती॥ ५॥

दानव देव ऊंच अरु नीचू। अमिअ सजीवनु माहुरु मीचू॥ ६॥

माया ब्रह्म जीव जगदीसा। लच्छि अलच्छि रंक अवनीसा॥ ७॥

दानव साथ देवता ऊंचों से नीच सुधा सो महुरा जीवण सों मृत्यु प्रकृत पुरुष जीव ईश्वर लक्ष्मी,

कुलछ्यमी रंक राजे इहां इंदों की संख्या निमित्त माया ब्रह्म भी गिने है अरु इस कर भी प्र बनती जाते जो कथन मां आवे सभ मायाही है ॥ ७ ॥ टिप्पणी—मानसप्रचारिका ... शंका। माया ब्रह्म जीव जगदीश बिधि के बनाये कैसे। उत्तर। सुनो इहां बनाइबे है गुण अवगुण मानने में तात्पर्य है यही बरे अपर दुइभूमिका कहे हैं भलपोच ६ गुण अवगुण मानने में सो माया ब्रह्म जीव जगदीश है ब्रह्म गुणमाया अवगुण जीव प्र अवगुण जगदीश जो त्रिदेव सो गुण ये मिले मिलाये ब्रह्मा की सृष्टि में हैं ताही ते इनक बनावना नहीं कहे प्रश्न दोहा में लिखते हैं कि। जड़ चेतन गुण दोषमय बिश्व कीन कर कैसे कहोगे उत्तर सुनो जो बिश्वकरतार कीन्ह है सो जड़ चेतन गुणदोष मय है वहां की साथ है।

कासी मग सुरसरि करमनासा। मरु मारव महिदेव गवास

वाराणसी अरु मघा देस जान्हवी अरु क्रमनास निमारु देस जहां बारु के थल मालव अत्यंत जल ब्राह्मणों अरु गावों के असन करता मलेच्छ ॥ ८ ॥

सरग नरक अनुराग बिरागा। निगम अगम गुनदोष बिभागा ॥ ९

नाक अरु निरै सनेह अरु त्याग वेद अरु आगम कहिए अभिचारादिक शास्त्रगुण अरु दोषादिक जो विभाग स्रुतों ने कहे हैं ॥ ९ ॥

दोहा—जड चेतन गुनदोषमय, बिश्व कीन्ह करतार।
संत हंस गुन गहहिं पय, परिहरि बारिबिकार ॥ ६ ॥

स्थावर जंगम अरु गुण दोष मिस्रत सृष्ट बिधाता ने रची है तिस से संतजन हंस की न्याईं गुणों रूपी दूध को अंगीकार कर लेते हैं अरु विकारों रूपी नीर को त्याग देते हैं इसी बात को अग्रमचरणों मों पुष्ट करते हैं ॥ ६ ॥

अस बिबेक जब देइ बिधाता। तब तजि दोष गुनहि मनुराता ॥१॥

ऐसा विवेक कहिए जैसे मराल की चूंच में शक्ति है जो उस के स्पर्स कर खीर नीर पृथक होए जाते हैं तैसे जिसकी बुद्धि मो सक्ति होवे गुणों दोषों के पछान की तब चाहिए दोषों को त्याग करै गुणही ग्रहण होहिं जो कोउ कहै इंदों की गणती करने कर गोसाईं जी ने यह सूच्या संत धरम मय है खल पाप मय है परंतु कहूं कहूं विभिचार भी देखीते हैं तों तिदै की दृढता अरु किरतम विभिचारादिक देखावते हुए कहते हैं ॥ १ ॥

कालसुभाउ करमबरिआई। भलेउ प्रकृतिबस चूक भलाई ॥ २ ॥

समय के सुभाउ कर कहिए जुगों के पलटनादिक काल में अरु करमों के बल कर अरु प्रकृत कहिये मायाके मद कर भले लोग भी बुराई करते हैं वा काल कहिये दुरभिख्य आदिको में सुभाव कही तमो-

...प्रम कहिये व्यवहार क्रिया मों किंबा सिंचत करमों बस बश्याई कहिये राजादिकों के ...हये कामादिकों के अधीन ह्वै के उत्तमलोग भी मलीन वृत्तधार लेते हैं ॥ २ ॥

हरि जन जस लेहीं । दलि दुषदोष बिमल जसु देहीं ॥३॥

...को हरिभगत सुधार लेते हैं तिन से प्राश्चित करवाइ के तिन की दुख पाप दूर कर के ...ल जो भगवंत का जस है सो देते हैं किंबा तिनो पुरषों का पुनः बिमल जस करावते हैं ...स श्रेष्ठ पुरुष से कोऊ अपकरम होइ परंतु रिदै का निश्चा द्रिढ रहै तो वह पापी नहीं ...ीं ॥ ३ ॥

...रहि भल पाइ सुसंगू । मिटइ न मलिन सुभाउ अभंगू ॥४॥

...व नर किसू भांति कोऊ भला आचरण भी करै तौं भी उन का दुष्ट सुभाव नहीं ...यह येऊ भलाई किए भलिओ को संग्रग में नहीं हो तो अब पतितहूं अरु भक्तहूं के सुबेष अरु ...दृष्ट न करणी इह हेतु उदाहरण दिखावते हैं ॥४॥ टिप्पणी—मानसप्रचारिका में यों लिखा है। कोई कहै कि चूक गये सो चूकै रहैं कि सुधरैं तापर कहते हैं सो सुधारि हरिजन लेहीं जिमि ...ा बाचक है सो आगे की चौपाई के साथ है भले जो कालकर्मादि के वश भलाई से चूकै सो भीतर भलाई बनी है ताही ते हरिजन जो सन्त सो जब कबहुं सन्तन का संग परा तब सन्त उस चूक को सुधारि कै विमलयश जो भगवत्यश सो देते हैं किमि जिमि । खलउ करहिं भलपाइ सुसंगू । जैसे खल ...जे हैं ते जो कहूं सुसंग में परे कालकर्मादि के बश ते भलाई करने लगते हैं परन्तु वह जो मलीनता स्वभाव सो अभंग है अभिप्राय कि भीतर मलीनता बनी है ताहीते जब फेरि अपने कुसंगिन में परे तब ...वे भलाई को मिटाइ कै निचाइ देते हैं तैसे यह पूर्व रूप गुणालंकार है पूर्वरूप लै संगगुण तजि फिरि अपनो लेइ ॥ ४ ॥

लषि सुबेष जगबंचक जेऊ । बेषप्रताप पूजिअहि तेऊ ॥ ५ ॥

जगत मों जिनो वंचकों कहिए ठगों के उत्तम भेष देखीते हैं तौ संतों के भेष के प्रभाव कर कोऊ काल तों जगत में तिनकी पूजा होती है ॥ ५ ॥

उघरहिं अंत न होइ निबाहू । कालनेमि जिमि रावन राहू ॥ ६ ॥

जैसे हनुवंत जी के छलणे हेतु कालनेमि रिषि बना अरु सीता के हरणे हेतु रावन जती बना अरु प्रभों के छलणे निमित्त राहु देवता बना परंतु तिन के कपट प्रगट ह्वैहीं गए ॥ ६ ॥

कियेहु कुबेषु साधुसनमानू । जिमि जग जामवंत हनुमानू ॥ ७ ॥

अरु उत्तम पुरुष कुबेष धारे फिरहि तौंभी सदा पूजीते हैं जैसे हनुमतादिक अब सभ का मार कहते हैं ॥ ७ ॥

हानि कुसंग सुसंगति लाहू । लोक हुं बेद बिदित सब काहू ॥ ८ ॥

कुसंग करे में सर्वभांति हानि है अरु सतसंग करे से सब भांति लाभ है यह बात ... प्रसिद्ध है तिस पर स्थावरो जंगमों के दृष्टांत कहते हैं ॥ ८ ॥

गगन चढ़इ रज पवनप्रसंगा। कीचहिं मिलइ नीचजल...

पवन उत्तम है तिस के संग कर धूर भी ऊंचे चढ़ती है अरु जल नीच पथगामी है ति कर कीच होती है ॥ ९ ॥

साधु असाधु सदन सुक सारी। सुमिरहिं राम देहिं गनि गा...

टिप्पणी—मानसप्रचारिका में यों लिखा है। यह जड़ का दृष्टांत को एकदेश हानि फेरि चेतन का दृष्टांत देते हैं देखिये तो साधु के सदन में शुक वो सारी जो मयना सो रा... करते हैं वोही शुक सारी असाधु के सदन में गनिगनि गारी देत हैं ॥ १० ॥

धूम कुसंगति कारिख होई। लिखिअ पुरान मंजु मसि सोई

धूम जब किसी घिह की भीत वा छात के कुसंग सों मिलता है तब वह कारिख मद्दा ... है। अरु उस धूम कारिख रूप भए कों जब सुसंग भया तब उस की सियाही बनाइ कर पुराण ... हैं तब वोह सुंदर अरु बंदने योग्य होता है ॥ ११ ॥

सोइ जलअनलअनिलसंघाता। होइ जलद जगजीवनदाता ॥ १२ ॥

सोई कहिये पूर्वोक्त धूम जल अग्नि वायु के संघात सों बादर होता है प्रमाण मेघदूते। धूमः ज्योतिः सलिलमरुतांसंनिपातः क्व मेघः। मेघ क्या है धूम अग्नि जल पवन इन का यकत्र होना। पाठांतर। सोइ अनल जु अनिल संघाता। जो अख्यर सोई पद अन्वै कारणा सोई जो धूम है अनल कहिये अगनी अनिल कहिये पवन संघाता कहिये इन के सतसंग से मेघ होकर सरब जगत को पालन करता है अरु सकल का लखा उतार देता है जो अनज पाठ होवे तो अग्नि से उपज्याहुवा है धूम सो पवन की संगत पाइ कर जलद पदवी को पाउता है अरु नीचों की संगत के बल कर उत्तमों ने नीच होणा अरु सतसंगके बल कर नीचों ने श्रेष्ठ होणा कहते हैं ॥ १२ ॥

दोहा—ग्रह भेषज जल पवन पट, पाइ कुजोग सुजोग।
होहिं कुबस्तु सुबस्तु जग, लषहिं सुलच्छन लोग ॥

ग्रहि कहिये नवग्रह तिन सों जैसे मंगल क्रूर ग्रह है तिस पर भी लग्न में वा दृती भवन में पड़े तब अति असुभ फल करता है परंतु चन्द्रमा सो मिलकर पड़े तब सुफल करता है तैसे ससी सौम्य ग्रह है तिस पर भी ब्रिषरास का अति सुफल करता है परंतु सनिश्चर से मिलकर पड़े तब वही विषम फल कर्त्ता है भेषज कहिये औसदो जैसे भली औसदी बनी हुई विष से मिलाइ दीजिये तब वही मृतु करणेवाली होती है अरु वही विष रूप संखिया उत्तमों औसदीउं सों मिलाइ कर सोधिए तब रोगहूं का नास करता है इसी रीति से जल पवन पट भी जैसे सों मिले तैसे सुभ असुभ हो जाते हैं इस बातों को बुद्धिवान लोग लखते हैं तत्व यह लख कर कुसंग नहीं करते। टिप्पणी—मानसप्रचारिका में यों

। अब समिष्टी दृष्टांत देत हैं कि जैसे ग्रह जो नव रवि १ सोम २ मंगल ३ बुद्ध ४ वृहस्पति ५ ७ राहु ८ केतु ९ सो ये ऊंच नीच स्थान पाइ करि सुखदाई दुखदाई होते हैं वो भेषज पवन पट जो वस्त्र ये पांचो कुयोग सुयोग को पाइ करि कुवस्तु सुवस्तु होते हैं परन्तु का सुदर लक्षणमान जो प्राणी हैं सो लखते हैं।

सम प्रकासतम पाष दुहुं, नाम भेद बिधि कीन्ह।
ससि पोषक सोषक निरखि, जग जस अपजस दीन्ह॥

ख में तम अरु प्रकास सम हैं जाते कृष्ण पक्ष्य को अमावस अरु शुक्ल की एकम मैं पूर्न शुक्ल पक्ष्य की दुतिया में प्रकाश तैता कृष्ण पक्ष्य चतुर्दसी मे जेता शुक्ल की त्रितिया में ी त्रयोदसी में इसी भांति तम अरु प्रकास सम है बिधाता ने नाम भेद किया है जौं कहो नाम बिषम क्यों किये हैं तौं गुण भेद भी है जाते सुक्ल पक्ष्य मों नित प्रत इंदु वढता है। क्ष्य मों दिनप्रति छीन होता है ताते सुक्ल पक्ष को सब लोक सराहते हैं अरु कृष्णपक्ष्य को ां ही चाहते हैं तैसे संत असंतहूं के खान पान जात कुल आदिक विवहार एक से हैं परंतु ाता ने सतसंग अरु कुसंग नाम भेद इस कर किया है जो सतसंग कर बिवेक पुष्ट होता है अरु कुसंग करि नष्ट होता है ताते सतसंग का जस है अरु कुसंग को निषेधते हैं। टिप्पणी—मानसप्रचारिका में यों लिखा है। पुन: जैसे एक मास में द्वै पाख हैं सो दोऊ पाख में प्रकाश वो तम समनाम बराबरि है कृष्णपक्ष की परिवा वो शुक्ल पक्ष की चतुर्दशी एक घरी तम वो रात्रिभरि प्रकाश परन्तु नाम का भेद जो विधि कीन है सो शशि को पोषक सोषक के संग समुझिकै यश अपयश दीन है शुक्लपक्ष शशि पोषक को संग वो कृष्ण पक्ष शशि सोषक का संग है यह कुसंग सुसंग का हानि लाभ पांच दृष्टान्त देइ करि दिखाये वो जो यह प्रकरण उठाये कि साधु असाधु दोउ दु:खप्रद हैं सो यहि में जो बीच रहा सो सब बिलगाइवो गुण दोष को गनि भेद समुझि दोउन को बन्दे यामें यह अभिप्राय है कि साधु जब मिले तब परमानन्द भया सीता रामजी का नामरूप लीला धाम में मन लगा सब शोकादि छूटे तब साधु के बंदे की आपु मिलेई रहो जाते यह आनन्द बनारहै वो जब खल मिले तब अनेक विषय बार्त्ता करि उस आनन्द को छुड़ाये जब खल बिछुरे तब फेरि श्रीरामजी की सुधि भई तब खलन को बंदे कि आप बिछुरेई रहो जाते भजन बने इति और यह प्रकरण में जो गुण दोष गनि साधु असाधु का पहिचान किया है सो यह अभिप्राय है कि रामयश गावने लगे वो गुण अवगुण साधु असाधु पहिचाना नहीं तो कहूं जो असाधु अवगुण का संग परिजाय तो रामयश गावने में विघ्न होइ वो साधु गुण का संग होइ तो रामयश गावने में उत्साह होइ यही बरे पहिचान कीन कि साधुगुण का संग करना वो खल अवगुण को छोड़ना यह बात अपने सहित जितने रामयश के गावने सुननेवाले हैं तिन सब को उपदेश हैं। संतसिंह ने निरखि पाठ लिखा है और मानसप्रचारिका में समुझि पाठ लिखा है।

जड चेतन जग जीव जत, सकल राममय जानि।
बंदौं सब के पदकमल, सदा जोरि जुग पानि॥

इहां सर्व स्थानों में मयट प्रत्यय तद्रूपता सो जानना ॥ ७ ॥ टिप्पणी—मान...
लिखा है । अब षष्ठप्रकरणजड़ चेतन यह दोहा से लेइ वो। यहि प्रकार बल मनहिं ...
तक जानब शंका इस का पहिचान क्या कि इहां से उहां पर्यंत एकै प्रकरण है समा...
ग्रन्थ में प्रथमपैंतिम दोहा तक बंदना सो जहां से बन्दना उठै अरु जहां ताईं फेरिबंदौं या प्रणवं
प्रणाम यह शब्द न मिले वहां ताईं जाने कि साभिप्राय एक ही प्रकरण है बीच २ में शंका ...
है कब कि जब बिशेषण अरु हेतुपूर्वक बन्दना करै तब शंका खड़ी भई उस का समाधान
शंका फेरि समाधान फेरि शंका फेरि समाधान यही तरह से जहांतक शंका समाधान समाप्ति
तक प्रकरण जब शंका समाधान पूरा भया तब दूसरी बन्दना उठी वोही प्रकरण है यह
शंका समाधान का उदाहरण यही प्रकरण में कहते हैं ॥ सकल जड़ कहो श्वासा रहित
श्वासा सहित सो सब कै राममय जानि कै सदा पदकमल बन्दौं दोउ हाथ जोरि कै इहां
को बन्दना जानना ॥ ७ ॥

देव दनुज नर नाग षग, प्रेत पितर गंधर्व ।
बंदौं किन्नर रजनिचर, कृपा करहु अब सर्व ॥ ७ ॥

टिप्पणी—मानसप्रचारिका में यों लिखा है। समिष्टि बन्दना करि अब व्यष्टी वंदना करते हैं कि देव जो बृहस्पति इन्द्रादि वो दनुज जो प्रह्लादादि वो नर जो स्वायंभुव मन्वादि नाग जो अनन्तादि खग जो गरुड़ भुसुण्डि जटायु आदि प्रेत जो प्रेतराज धर्म राजादि पितर जो अर्यमादि गन्धर्व जोतुमुरादि किन्नर जो शुकादि रजनीचर बिभीषणादि एते भगवत् विभूति सब को मैं बन्दत हौं सब मिलि हमारे ऊपर कृपा करहु ।

आकर चारि लाष चौरासी । जाति जीव नभजलथलबासी ॥ १ ॥
सीयराममय सब जग जानी । करौं प्रनाम जोरि जुग पानी ॥ २ ॥

टिप्पणी—मानसप्रचारिका में यों लिखा है । प्रश्न यह प्रसंग पुनरुक्ति सा जानि परत है काहे कि दोहा में कहा कि जड़ चेतन बन्दौं फेरि कहा कि चारि खानि कै जीव बन्दौं सो दोबार कहने का क्या हेतु। उत्तर सुनौ प्रथम दोहा में कहा कि सबको राम मय जानि बन्दौं तब यह जानि परा कि गोसाईंजी केवल रामउपासक हैं काहे कि जो जेहि कर उपासक होत है तेहिमय जगत् देखत हैं तौ यह ते केते लोग ऐसे हैं कि केवल रामजी को ब्रह्म मानते हैं सीता जी को जीव मानते हैं सो उन का मत सिद्ध भया वो गोसायूंजी का यही मत है ता निवारणार्थ कहते हैं कि चारिखानि वो चौरासी लाख जाति के जीव जितने जल थल नभ कही आकाश के बासी सब को सीताराममय जानि कै प्रणाम करत हौं यह कहने से जाना गया कि गोसाईं जी सीता रामयुगलोपासक हैं वो दोनों स्वरूप ब्रह्म हैं वो यह जगत् सीताराममय है ताते पुनरुक्ति नहीं ॥ २ ॥

जानि कृपा कर किंकर मोहू । सब मिलि करहु छाडि छल छोहू ॥३॥

हे कृपा को आकर मुझे आपना दास जानकर छाड छल कहिये रहित छल होणे की कृपा मेरे पर

ग्न निष्कपट होवै अथवा काहू छल कहिए मेरे विषै कोऊ छल दोष है सो त्याग देखा .ो ऊर तूमे नहीं देखणा अरु मेरे पर सभों ने कृपा दृष्टि करनी कईएक अर्थ इस ... ई तुम सभी निष्कपट हो कर मोपर कृपा करो जो कोऊ कहै एक एक के आगे तुम एतो करते हौ तिस पर कहते हैं ॥ ३ ॥ टिप्पणी ऊर का अर्थ ओर

ुधिबलभरोस मोहि नाहीं । तातें बिनय करौं सब पाहीं ॥४॥

हौं रघुपतिगुनगाहा । लघुमति मोरि चरित अवगाहा ॥५॥

का अवगाहन करने मों मेरी मति लघु है अर्थ यह असमर्थ है अरु ग्रंथ बनाया चाहता हौं ॥५॥

एकउ अंग उपाऊ । मन मति रंक मनोरथ राऊ ॥ ६ ॥

ोश्वरों जैसी एक अखर के उपजावणे की विधि मुझ कों नहीं आवती मन अरु बुद्धि रंकों . मनोरथ नृपो सम करताहौं ॥ ६ ॥

.। अति नीचि ऊंचि रुचि आछी । चहिअअमिअ जग जुरै न छाछी ॥७।

जैसे किसू के गृह में छाछ भी न होवै अरु इच्छा सुधा की करै तैसे धिष्णा मेरी अति क्षुद्र है अर्थ यह अल्प बिवहार समुझनेलायक भी नहीं अरु रुचि अति श्रेष्ठ भगवंत के यश का ग्रंथ बणावणे की है ताते ॥ ७ ॥

छमिहहिं सज्जन मोरि ढिठाई । सुनिहैं बालबचन मनलाई ॥ ८ ॥

उत्तम लोग अपनी श्रेष्ठता की ऊर देखि कै मेरी धृष्टता कों खिमा करैंगे अरु मुझे सिसुवत जानि कै मेरी गिरा मन दैकै सुनैंगे जो कोऊ कहै मूढों के वाक्य मन देके कोऊ कैसे सुनैगा तिस पर कहिते हैं ॥८॥

जौं बालक कहि तोतरि बाता । सुनहिं मुदितमन पितु अरु माता ॥९॥

जैसे माता पिता पुत्रों की तोतरि बातें सुनकर प्रसन्न होते हैं तैसे संतजन मेरे माता पिता हैं सो मेरी बाणी सुन कर प्रसन्न होवैंगे ॥ ९ ॥

हंसिहहिं कूर कुटिल कुबिचारी । जे परदूषनभूषनधारी ॥१०॥

जिन का सुभाव कूर हैं अरु मति कुटिल है अरु खोटा विचार है जिनोंने बिराने दूषन कथन को ही भूषणो वत धारया हुआ है सो रघुनाथजी के यश को न देखेंगे अरु मेरी स्थूलबाणी को हसैंगे जौं कोऊ कहै और लोग तुमारी कविता की न सराहेंगे तौ भी तुम तों श्रेष्ठ जानते हौं तिसपर कहते हैं ॥ १० ॥ टिप्पणी—मानसप्रचारिका में यों लिखा है। शंका कबि की प्रार्थना देवादि प्रति वो कहते हैं कि सज्जन हमारी ढिठाई चमिहहिं तो बिनय और प्रति करना चमा और से करावना इहां कहना रहा कि देवादि तुम सब हमारी ढिठाई चमा करो सो न कहा वो सज्जन ढिठाई चमहिंगे यह कहने में क्या हेतु । समाधान सुनो जब गोसाईंजी देवादि प्रति कहा कि हमारो मन मतिरंक है वो रघुपति गुणगाथा चाहत हौं सो तुम सब मिलि कृपाकरो तब यह प्रश्न भयो कि तुम तो साधुसमाज के हेतु रामगुण-

गावते हैं ॥ प्रमाण ॥ साधु समाज भनित सनमानू । तौ यह बड़ी भारी ढिठाई उन
तापै कहा कि उधर का तौ हमैं भरोस है कि वे हमारी ढिठाई चमहिंगे कैसे जैसे अयो॰
बशिष्ठादिक की सभा में कहा कि–दोहा । यद्यपि जन्म कुमातु ते, मैं सठ सदा सदोस ।
त्यागिहैं । मोहि रघुबीर भरोस ॥ चौपाई । तुम पै पांच मोर भल मानी । आयुस आशिष देहु
तैसे गोस्वामीजी कहा कि सज्जन का हमैं भरोस है तुम सब कृपा करो यह प्रश्नलुप्ता
इत्यर्थः अब श्री गोस्वामी जी कहते हैं कि जो हमारी ढिठाई को चमा करिबो हमारी बाल
बाणी सज्जन मुदित मन सुनहिंगे सो सुनकरि जो क्रूर कुटिल कुबिचारी हैं ते हँसिहहिं का
दूषण को भूषण किये हैं राति दिन पराई बाणी को दूषण देते रहते हैं ते हंसहिंगे ॥ १० ॥

निज कवित्त केहि लाग न नीका । सरसहोउ अथवा अति फी॰

टिप्पणी—मानसप्रचारिका में यों लिखा है । यह कहने से यह बात पाई गई कि उन क्रूर
कुबिचारिन को अपनी बाणी बड़ी प्रिय है तापर कहते हैं कि निज कबित नाम अपनी बाणी के
नहीं प्रिय होत नाम सब को प्रिय लागत है जो कोई कहै कि अपनी बाणी सब को प्रिय लागत है ।
अच्छी बाणी होगी तापर कहते हैं कि सो नहीं चाहै सरस नाम अच्छी होइ अथवा चाहै अति फीकी
होइ अपनी बाणी सब को प्रिय है ॥ ११ ॥

जे परभनित सुनत हरषाहीं । ते बर पुरुष बहुत जग नाहीं ॥१२॥

जौन से पराई बाणी सुन कर प्रसन्न होते हैं ते नरदुर्लभ हैं तिनो पर द्रिष्टांत कहिते हैं ॥ १२ ॥

जग बहु नर सर सरि सम भाई । जे निज बाढि बढहिं जल पाई॥१३॥

सज्जन सकृत सिंधु सम कोई । देषि पूर बिधु बाढै जोई ॥१४॥

जगत मो बहुते नर तड़ागों अरु नदीउँ सम हैं जो अपणे में जल को अधिकता हुए से उछलते हैं
अरु सिंधु के समान सकृत कहिए एक कोई बिरले सज्जन हैं जो औरों का उदयरूपी पूर्णेंदु देख
कर हर्षते हैं ॥ १४ ॥

दोहा—भाग छोट अभिलाष बड, करउँ एक बिस्वास ।
पैहहिं सुष सुनि सुजन मन, षल करिहहिं उपहास ॥ ८ ॥

भाग मेरा लघु है जाते कलू में जनम है अरु व्यासादिकों के कहि नहीं जनम्या परंतु श्रीरामचंद्र
के यश कथन की इच्छा बडी श्रेष्ठ है सो इसी पर भरोसा राखता हौं जो हरियश सो मिश्रित जान
कर मेरी गिरा सुन कै संत प्रसन्न होवैंगे अरु खलों ने हासी किया तौ क्या भया जो कोऊ कहै जगत
में संत बिरले हैं निंदक बहुते हैं सो तिनों ने ग्रन्थ कों निंद्या तौं प्रमाण कैसे होइगा तिस पर कहिते हैं ॥८॥

षल परिहास होइ हित मोरा । काक कहहिं कलकंठ कठोरा ॥१॥

खलों के उपहांस कर दोनों लोक में मेरा हित इस भांति होवैगा दुष्ट मेरी बाणी को निंदेंगे अरु

झूठा करैंगे अरु जगत में संतो का वाक्य प्रमाण है अरु परलोक मैं मेरा हित इस मेरी निंदा करैंगे सु मेरे पापों के भागी होवहिंगे अरु उन के कथन को लोग ऐसे ...ग कहै कोइल मलिन कठोर बोलती है ॥ १ ॥

बक गादुर चातकही । हसहिं मलिन षल बिमल बतकही॥२॥

हंस के आहार कों बक हंसैं अरु चातक के प्रीति को दादुर हंसैं तैसे संतहूं की निर्मल वचनहुं मते हैं ॥ २ ॥

रसिक न रामपद नेहू । तिन्ह कहँ सुषद हासरस एहू ॥३॥

...नता के रसिक हैं छंदों अनुप्रासों यमकों कों पढे खोजते हैं अरु भगवंत के गुणानुवादहुं मो करते तिन को हांस रसहीं प्यारा है जो कोऊ कहै कवीश्वरों का निषेध करण में तुम अपणी की श्लाघा करते हो तिस पर कहते हैं ॥ ३ ॥

षाभनित मोरि मति भोरी । हँसिबे जोग हंसे नहिं षोरी ॥४॥

मेरी वाणी भाषा है अरु अल्प मति करी रची है तातें हंमने योग है इस को हंसे ते दोष नहीं अब विमुखों की हरिकथा मों अरुचि अरु हरि भक्तों की रुचि षटचरणहूं मो कहिते हैं ॥ ४ ॥

प्रभुपदप्रीति न सामुझि नीकी । तिन्हहिं कथा सुनि लागिहि फीकी॥५॥

टिप्पणी—मानसप्रचारिका में यों लिखा है। जो कोई कहै कि तुम तो अपनी साधुता से अपनी भणित मे दूषण दे उन्हें निर्दोष कियो परंतु उस भणित में रामनाम रामयश जो है तौने करि दोष तो होवै करैगो तापर कहते हैं कि जिन को प्रभु श्रीरामजी तिन के पद में प्रीति नहीं औ अच्छी समुझि नहीं तिन को तो यह कथा फीकी लगिबै करैगी तो जिन्हैं फीकी लगी तेतो हँसिबै करैंगे यामें यह अभिप्राय है कि जैसे । हरिमायाबसजगतभ्रमाहीं । तिन्हैं कहत कछु अघटित नाहीं ॥ तैसे जिन के राम पद प्रीति नहीं व समुझि अच्छी नहीं ते तो आपै दोष के भागी हैं उन्हैं हँसते क्या दोष होगा।

हरिहरपदरति मति न कुतरकी । तिन्ह कहुँ मधुर कथा रघुबर की ॥६॥

टिप्पणी—मानसप्रचारिका में यों लिखा है। वो जिन के हरिहरपद में प्रीति है वो समुझि अच्छी है मति में कुतर्क नहीं है तिन को यह रघुबर की कथा मधुर नाम मिष्ट लगैगी आशय यह कि ये जो हँसै तो इन्हें दोष लगै काहे कि ये उस का स्वरूप जानते हैं सो तो काहे को हँसैंगे इन्हैं तो मिष्ट लगत है।

रामभगति भूषित जिअ जानी । सुनिहहिं सुजन सराहि सुबानी ॥७॥

मेरी वाणी कों श्रीरामचंद्र की भक्ति कहिये कीरति सों भूषित कहिए सुंदर जान कै संत सुनैंगे अरु सराहैंगे अब केवल अपणी नम्रताहीं कहते हैं ॥ ७ ॥

कबि न होउँ नहि बचनप्रबीनू । सकल कला सब बिद्याहीनू ॥८॥

आषर अरथ अलंकृत नाना । छंद प्रबंध अनेक बिधाना ॥ ९ ॥

टिप्पणी—मानसप्रचारिका में यों लिखा है। अब जो कहा कि जे काव्य को देश नहीं ज
हँसैंगे तौ यह कहने मे सूक्ष्म यह पायागया कि जे बड़े कवि हैं तापर अपनी कार्पण्यता कर
न तौ मैं कवि हौं न चतुराई में व्युत्पन्न हौं और चौंसठिकला वो चौदह विद्या तिन सब
आखर जो है अक्षरन की रचना वो तिन अक्षरन का अर्थ वा अलंकार नाना हैं वो छन्द छ
प्रबन्ध सो अनेक विधान का है ॥ ९ ॥

भावभेद रसभेद अपारा। कवितदोषगुन बिबिध प्रकारा ॥

भाव कहिए अभिप्राय तिन के जो भेद हैं रस कहिए सिंगारादिक नव तिन के जो अनेक
जो कविता में गुण अरु दोष कवीश्वरों ने अनेक भांति के कहे हैं सो ॥ १० ॥

कबित बिबेक एक नहि मोरे। सत्य कहौ लिषि कागद कोरे ॥

ननु। ग्रन्थ में शपथ करी कोरे कागद पर लिखने की जो मुझे कविता का विवेक एक भी .
आगे मानसर वरणन में कहा है। धुनि अवरेव कबित गुन जाती। मीन मनोहर ते बहु भांती। -
यथारथ पक्ष्य में तो गुसांई जी की अति नम्रता है अरु उन की प्रशंसा निमित्त अर्थ ऐसे भी बनत.
कवित कहिए मेरी केवल कविताही है स्वरूप की एकता का विवेक मुझ कों नहीं हुआ तत्व यह श्री
रामचंद्र के स्वरूप की प्राप्ति मुझ कों नहीं तिस प्राप्ति निमित्त रामचरित्र वरणन करता हौं यह बात
कोरे कागद पर लिखि कै साच कही है ॥ ११ ॥ टिप्पणी—मानसप्रचारिका में यों लिखा है। सो कला
आदि वो दोष गुण अन्त जा सब कहि आये हैं सो यह सब काव्य के अंग हैं सो कवित्त का विवेक
नाम अंग हमारे एकौ नहीं यह बात को हम सत्य कोरे कागद पर लिखि कहते हैं। शंका। गोसांई
जी कहते हैं कि कवित्त का विवेक एकौ नहीं यह बात सत्य कोरे कागद पर लिखि कहत हौं सो
झूठ सौगन्ध क्यों करते हैं इन की काव्य में तौ सब काव्य का अंग देखि परत है। समाधान।
श्रीगोस्वामी जी जो कहा कि कवित्त का विवेक हमारे एकौ नहीं सो यह कहा कि जैसे काव्य
करने में कवित्त के अंग का विचार होता है कि गण अगण समुझि कै तब अक्षर धरते हैं तैसन
हम को नहीं चाहै काव्यांग हमारे भणित में आवै चाहै न आवै यह बात सत्य कहत हौं कोरे
कागद पर लिखि मैं तौ श्रीसीतारामयश का गाथा करत हौं यह कहा है यह बात आगे दोहा में
स्पष्ट कहते हैं जो कहौ कि फेरि कैसे काव्यांग इन की काव्य में परा तौ सुनौ जहां रामयश
आया तहां सब आवाच्य है काहे कि कवित्त की छन्दप्रबन्ध कि सब की मालिक सरस्वती हैं वो तिन
कर मालिक श्रीरामचन्द्र जी हैं तो जहां रामयश होइगो तहां सरस्वती आपे जाइंगी तब उन के पीछे
सर्ब काव्यांग चले जाइँगे तब आपई सब आये। प्रमाण। सारददारुनारि सम स्वामी। राम सूत्रधर
अन्तर्यामी ॥ जेहिपरकृपाकरहिंजनजानी। कबि उर अजिर नचावहिं बानी ॥। पुनः इस का खुलासा।
भक्तिहेतु बिधि भवन बिहाई। सुमिरत सारद आवत धाई ॥ इस प्रसंग में स्पष्ट है।

दोहा—भनिति मोरि सब गुन रहित, बिस्वबिदित गुन एक।
सो बिचारि सुनिहहिं सुमति, जिन्ह के बिमल बिबेक ॥ ९ ॥

ी वाणी कविता के गुणों से रहित है परंतु संपूरण विश्व विषे जो प्रगट श्रीरामचंद्र जी का
ाके सहित है इस गुण को विचार कर उत्तम विवेकी इस को सुनैंगे इसी बात को विस्तार
॥ ९ ॥

मङ्ग रघुपतिनाम उदारा। अतिपावन पुरानश्रुतिसारा॥ १॥

ंद्र जी का नाम जो उदार कहिये सर्व सुखदायक अरु श्रुतों पुराणों का तत्व है सो इस ग्रन्थ
े कोऊ कहै राम नाम को स्रुतों का सार तुम ने किस भांति जाणया है तिस पर कहिते हैं॥१॥

ान अमंगलहारी। उमा सहित जेहि जपत पुरारी॥ २॥

ाण के कर्ता अरु कलेसों के हर्ता अरु तृपुर के संघारक जो शंकर जी हैं सो जिस नाम को
कथन से यह सिद्ध भया सर्व स्रुतों कर प्रतिपाद्य जो परब्रह्म हैं राम नाम तिसी का वाचक है
ंव जपते हैं अरु उमा जपती हैं इस कथन का भाव यह जो उमा गिरिजा रूप शिव जीके अंक
ाजती हैं वही अष्टभुजी अरु कालका रूप हूँ कर दैतों को मारती हैं यह देवी महात्म मों लिखा
ाते सिद्ध हुवा उमा तमोगुणी विवहार करती है अरु अनंत सक्तों को धारती भी है जिस नाम को
जपती हैं सो नाम सर्व स्रुतों का सार प्रमाण गुरग्रन्थ। बेद पुराण सिमृत सूधाखर। कीने राम नाम एक
आखर॥ वा उमा सहित कहिए उमा के सम हैं हित जिन का रामनाम विषे जैसे उमा को सदा हृदै साथ
लगाए रहते हैं तैसे राम नाम को निरंतर हृदै मों राखते हैं जदवा गिरिजा परम पवित्र सकल सुंदरियों
में शिरोमणि सर्व गुणायतन ईश्वरी परम प्यारी आज्ञाकारी तब चाहिये ऐसी प्रिया के सुख में और
सर्व रसबिसमृत होवे सो ऐसे उमा के सहित कहिये समीप होते भी शंकरजी राम नाम को एक निमिख
नहीं बिसारते ताते रामनाम स्रुतों का सारही है वा उमा नाम ब्रह्मविद्या का है इस भांति ऊ कहिए
उत्कृष्ट मा अव बोधने धातु है सो ज्ञान को वाचक है जो उत्कृष्ट ज्ञान है सो कहिये उमा प्रमाण
उमा सकल संसार ब्रिष्योच्छेदकत्वेनोतकृष्टा प्रमाब्रह्मविद्या मिताथः। संसार रूपी वृक्ष को जो मूल से
उखाड डारे सो उत्कृष्ट प्रमा तत्व यह ऐसी ब्रह्मविद्या रूपी उमा के सहित जो महादेव हैं जिन मों
द्वैत का अंस ही नहीं सो जिस रामनाम को जपै तो और की क्या बात है अब सभों ग्रंथों की सोभा
भगवंत के नाम कर है यह वरणन करते हैं॥ २

भनित विचित्र सुकबिकृत जोऊ। रामनाम बिनु सोह न सोऊ॥३॥

जो बाणी अनुप्रासो अलंकारों कर सुंदर है अरु किसू उत्तमकुल के विप्र की कही हुई भी है परंतु
रामनाम बिना है तो सोभा नहीं पावती जैसे॥ ३॥

बिधुबदनी सब भांति संवारी। सोह न बसन बिना बरनारी॥ ४॥

कोऊ इस्त्री चंद्रमुखी अरु सर्वभूषणों सो सवारी हुई होए परन्तु वस्त्रों बिना फिरती हुई चुडेल भासती
हैं अरु॥४॥ टिप्पणी—मानसप्रचारिका में यों लिखा है। जैसे चन्द्रबदनी श्रेष्ठ स्त्री सब भूषनकरि सँवारी
होइ वो एक वस्त्र न होइ तौ वह नारी शोभा न देइ तैसे सुकवि की भणित सर्व काव्यांगरूप भूषण से
भूषित होइ परन्तु राम नाम रूप वस्त्र बिनु नग्न नहीं शोभा देती॥ ४॥

सब गुनरहित कुकबि कृत बानी। रामनामजसअंकित जानी॥
सादर कहहिं सुनहिं बुध ताही। मधुकर सरिस संत गुन ग्राही॥

तैसे जो बाणी ध्वनि जाति आदि कविता के भेदों से रहित अरु किसू अंत्यजवर्ण की कही है परन्तु रामनाम सो पूरण है तौ संतजन प्रीति कर पढते सुनते हैं जाते मधुप सम गुण अर्थ यह भ्रमर फूलों के वरण को नहीं देखता गंध लेता है अब अपनी बाणी की बात कहिते हैं

जदपि कबित रस एकौ नाही। रामप्रताप प्रगट एहि माहीं॥
सोइ भरोस मोरें मन आवा। केहि न सुसंग बडप्पन पावा॥

यद्यपि मेरी बाणी मों भी कविता के छंद प्रबंधादिक गुण नहीं परंतु श्री रामचंद्रजी के महिमा जो प्रगट है ताते मुझ कों भी इस के उत्तम होवण का भरोसा आवता है जो सतसंग कर कौन बडाईवान नहीं भया तिस पर दृष्टांत ॥ ८ ॥

धूमौ तजै सहज करुआई। अगरुप्रसंग सुगंध बसाई॥ ९ ॥

जैसे अगर चंदन के प्रसंग कर धूम कटुकता त्याग के सुगंध होता है ॥ ९ ॥

भनित भदेस वस्तु भलि बरनी। रामकथा जगमंगलकरनी॥ १० ॥

तैसे बानी मेरी भदेस कहिये मोटी है परंतु मंगलकरणहारी भली वस्तु श्री रामचंद्रजी की कथा इस मो वरनन करी है सोई विस्तार कर कहते हैं ॥ १० ॥

छंद—मंगलकरनि कलिमलहरनि तुलसी कथा रघुनाथ की।
गति कूर कबिता सरित की ज्यौ सरित पावन पाथ की॥

गति कहिए गमन सो कूर प्रकार से होता है कविता रूपी सरिता का अर्थ यह जैसे सरिता अनेक व्यंगोकर चलती है तैसे कविता मों भी दोष अनेक अवश्य होते हैं परंतु सरिता को पाथ तो पावन है अर्थ यह नदी का जल तो सुभ है इहां की पद अनुप्रास हेतु है तैसे मेरी बाणी दोषवंत है तद्यपि इस में श्रीरामचंद्रजी का नाम तो पवित्र है किंवा पाथिकी नाम पथिकों का है। दोहरा। लहु गुर गुर लहु होत हैं वृत हेतु उचार। इस रीत काव्यो में है जैसे नदी पाथकियों को कहिए मारगचलनहारों को स्नान करे पवित्र करती हैं तैसे मेरी क्रूर कविता भी पठन सुननहारों को पावन करेगी सरित पद को पुनरुक्त नहीं समुझणो जाते अर्थ को सनबंध भिन्न भिन्न है एक पद का कविता साथ एक पद का पाथ साथ किंच सकार सरब का वाचक है रित पद षट रितो का वाचक है जैसे सरिता सर्व रितो मै पावन करती है तैसे मेरी बाणी रूपी गंगा सर्वकाल मों स्रोत्यो वक्तों को पवित्र करेगी ॥

प्रभु सुजस संगति भनिति भलि होइहि सुजनमनभावनी।
भवअंग भूति मसान की सुमिरत सुहावनि पावनी॥

मैं मसान की भस्म शिवजी के अंगहुं साथ मिली हुई पवित्र होती तैसे श्रीरामचंद्र के नाम में
... बाणी भी पूज्य होवैगी अरु स्रोतयो वक्तों को भी आनंद होवैगी और दृष्टांत ॥

दो—प्रिय लागिहि अति सबहि मम, भनित रामजससंग।
दारु बिचारु कि करइ कोउ, बंदिअ मलय प्रसंग ॥

... बावन चंदन सो मिल कर तरु चंदन होते हैं तब उन के पूरब सुभाव को कोऊ नहीं विचारता
... चंद्र के सुजस सों मिलिहुई मेरी बाणी का दोष कोऊ न बिचारेगा सब कोऊ प्रीति करेगा ॥

स्याम सुरभि पय बिसद अति, गुनद करहिं सब पान।
गिरा ग्राम्य सियरामजस, गावहि सुनहिं सुजान ॥१०॥

... हां ग्राम पद का कईलोक संबूह का वाचक कहिते हैं परंतु दृष्टांत द्राष्टांत की तुल्यता नहीं
... ताते अर्थ इस भांति करना स्यामगऊ हैं परंतु दुध स्वेत है अरु गुणदायक है अरु सभ लोक
पान करते हैं तैसे मेरी बाणी ग्राम्य कहे मोटी मलोन है परंतु श्रीरामचंद्रजी का यश जो सुन्दर है
ताते सभ संत इस को पढेंसुनेंगे अब बाणी के उपजण अरु शोभा पावण को दृष्टांत पूर्बक कहिते हैं ॥१०॥

मनि मानिक मुकुता छबि जैसी। अहिगिरिगजसिर सोह न तैसी ॥१॥
नृपकिरीट तरुनीतनु पाई। लहहि सकल सोभा अधिकाई ॥२॥
तैसेहि सुकबि कबित बुध कहहीं। उपजहिं अनत अनत छबि लहहीं ॥३॥

जैसे मणि अरु रतनहूं अरु मोतीअहुं की उतपत नागहूं अरु गिरहूं अरु मतंगहूं सो है परंतु तहां
अति रुचिरता नहीं बडो साभा राजयों के मुकुटों के रागिअहुं के तनो में पावते हैं तैसे बाणी सु कवों की
रसना से एकांत में उपजती हैं परंतु तहां ऐसी सुंदर नहीं लागती जैसी सोभा बुद्धिवान हूं के
समाजों में भाव अर्थादिकों के प्रगटे होती हैं अब कवों की रसना पर भारती का आगमन अरु सफल
करणादिक कहते हैं ॥ ३ ॥

भगति हेतु बिधिभवन बिहाई। सुमिरत सारद आवति धाई ॥ ४ ॥

जो सरस्वती की भक्ति करते हैं तिन की सुमरीहुई देवी उन की प्रीति निमित्त ब्रह्मलोक से
शीघ्र आवती है अथवा भगवती तिन भक्तों को सिमरतीहुइ बेगि से आवती है ॥ ४ ॥

रामचरित सर बिनु अन्हवायें। सो स्रम जाइ न कोटि उपायें ॥५॥

जैसे कोऊ दूर से आवे तो स्नान करवाए स्रम उस का दूर होता है तैसे ही श्रीरामचरित्र रूपी
सर विषे स्नान करवाए से देवी प्रसन्न होइ कर बरदेती हैं जो तुम कों भी श्री रामचंद्रजी की प्राप्ति
होइ अरु रामचंद्र के सुयश बिना देवी का श्रम नहीं मिटता ताते ॥ ५ ॥

कबि कोबिद अस हृदयँ बिचारी। गावहिं हरिजस कलिमलहारी ॥६॥

कीन्हे प्राकृतजनगुनगाना । सिर धुनि गिरा लगत पछिताना ।

जब कवि सरस्वती के प्रकास कर सामान जनों की उस्तुति करते हैं तब सीस हलाइ के पश्चाताप करती है जो मैं इन की जिह्वा पर क्यों आई अरु स्राप देती है जैसे तुम ने मु के कथन मों लगाया है तैसे तुम नीच गति पावो ॥ ७ ॥

हृदय सिंधु मति सीप समाना । स्वाती सारद कहहिं सुजाना ।

संतों कवीश्वरों के हृदयरूपी उदधि है अरु बुद्धिरूपी सीप है स्वाती नखत्र में जो मेघ सरस्वती का आगमन है ॥ ८ ॥

जौं बरषै बर बारि बिचारू । होहि कबित मुकुतामनि चारू

उहां श्रेष्ठजल बरसता है तौ उस के मोती बणते हैं इहां भगवती ने विचार दिया जो . से भगवंत के गुन वरणन करो सो बरष्या जल तिस कर जो बाणी उपजी सो भए मुक्ताफल ॥ ९ ॥

दोहा—जुगुति बेधि पुनि पोहिअहि, रामचरित बर ताग ।
पहिरहिं सज्जन बिमल उर, सोभा अति अनुराग ॥ ११ ॥

तिन बचनहुं मों श्रेष्ठ युक्तों का कथन है सो मोतिअहुं को बेधणा है जैसे सूख्म बेधकर मुक्ता का मोल महान होता है तैसे बरीक युक्तों कर बाणी का प्रभाव बिशेष होता है तिन को श्रीरामचंद्र के यशरूपी तागे मों परोइ कै उत्तम लोग उर मों पहिरते हैं तौं प्रेमरूपी सोभा उपजती है अब निम्रतारथ अतिअधमो मो अपणी गणती कहिते हैं ॥ ११ ॥ टिप्पणी—निम्रतारथ = नम्रतार्थ ।

जे जनमे कलिकाल कराला । करतब बायस बेष मराला ॥ १ ॥
चलत कुपंथ बेदमग छांडे । कपट कलेवर कलिमल भांडे ॥ २ ॥
बंचक भगत कहाइ राम के । किंकर कंचन कोह काम के ॥ ३ ॥

कोह काम के संबधारथ कंचन पद से लोभ समुझणा अपर स्पष्ट पाठांतर कोट काम के ॥ ३ ॥

तिन मह प्रथम रेष जग मोरी । धिक धरमध्वज धंधकधोरी ॥ ४ ॥

जौन से बंचकादिक कलि के कुटिल कहे हैं तिन मों प्रथम रेख मेरी है अर्थ यह सकल पतितों मे मुख्य मै हौं ताते धर्मध्वजी वणने को धिकार है औं धंधपहुं मौं धौरी कहिये बैल सम भया हौं जौ धिग पाठ होवे तौं धिग धारणे धातु है अर्थ यह धारी है मैने धरमध्वजा अरु धंधिअहुं का पसु हौं ॥४॥

जौं अपने अवगुन सब कहऊं । बाढै ग्रंथ पार नहि लहऊं ॥ ५ ॥
ताते मैं अति अलप बषाने । थोरे महुं जानिहहि सयाने ॥ ६ ॥
समुझि बिबिधि बिधि बिनती मोरी । कोउ न कथा सुनि देइहि षोरी ॥ ७ ॥

सी अति निम्रता को बहुत बिनय मेरी सुन कर इस कबिता पर दोष कोऊ न धरैगा जो कोऊ ने तौं अति दोनता करि परंतु निंदक तौं निंदा से न निवार होहिंगे तिस पर कहते हैं ॥ ७ ॥

करिहैंहि जे संका। मोहितें अधिक ते जडमति रंका ॥८॥

से दूषन पीछे मै ने अपणे बरणन करे है इन से भी अधिक जिन मों होंहिगे सो इस राम-निंदैंगे जाते ॥ ८ ॥

होउं नहि चतुर कहावौं। मतिअनुरूप रामगुन गावौं ॥ ९ ॥

ंडित का अभिमानी बणो तौ दोषग्य दूषण देवै सो तो मैं कवीश्वर नहीं चतुर नहीं जनम रवे हेतु मत अनुसार श्रीरामचंद्र के गुण कहिता हौं अरु जौ मैं कवि बणकर कहा चाहौं तौ ॥९॥

ुपति के चरित अपारा। कहँ मति मोरि निरत संसारा ॥ १० ॥

नरत कहिये आसक्त अवर सपष्ट ॥ १० ॥

जेहि मारुत गिरि मेरु उडाहीं। कहहु तूल केहि लेखे माहीं ॥ ११ ॥

जिस प्रभंजन से मेर उडै तौं तूल कहां तैसे जिस के प्रभाव कथन मों ब्रह्मादिक न पहुंचे तहां मैं क्या वस्तु जौं कोऊ कहै तुम एता मंगलाचरण करते जाते हो कथा प्रसंग क्यौं नहिं कहते तिस पर कहते हैं ॥ ११ ॥ टिप्पणी—प्रभंजन = वायु।

समुझत अमित राम प्रभुताई। करत कथा मन अति कदराई ॥ १२ ॥

मेरा चित चाहता है श्री रामचंद्रजी की कथा वरणन करने को परंतु अमित महिमा समझ के कथा के कथन मों कातुर हूं के पुनि संतों आगे बिनय करता हौं जों प्रभों की महिमा की अगाधता से भै करण की मेरी क्या बात हे ॥ १२ ॥

दोहा—सारद सेष महेस विधि, आगम निगम पुरान।
नेति नेति कहि जासु गुन, करहिँ निरंतर गान ॥१२॥

सारदा आदिक सभी प्रभों के गुणानुवादों को निरंतर गावते हैं परन्तु बिअंतु बिअंतु ही कहिते हैं जौं कोउ कहै अगाध जानते हो तौं केंव प्रवर्तते हो तिसपर कहते हैं ॥ टिप्पणी—केंव = क्यौं।

सब जानत विअंत प्रभु सोई। तदपि कहें बिनु रहा न कोई ॥ १ ॥

केवल मैं ही प्रभों के यश कथन मो प्रवित नहीं भया सभी रिषि मुनि प्रभों को बिअंत जानते हैं जौं कोउ कहै सभों के पवित्र होणे मों क्या हेतु तदाहः ॥ १ ॥ टिप्पणी—विअंत = अंतरहित।

तहां बेद अस कारन राषा। भजनप्रभाउ भांति बहु भाषा ॥ २ ॥

तिस मों वेद ने यह कारणा राख्या है जो भजन की महिमा महान है तत्व यह अंत न पाया जायगा तौं गुणकथन कर मुक्ति निश्चै होवैगा जो कहो निर्गुण के गुण कैसे कहि जाहिंगे तौं सुनो ॥ २ ॥

एक अनीह अरूप अनामा। अज सच्चिदानंद पर धामा॥
व्यापक बिश्वरूप भगवाना। तेहि धरि देह चरित कृत...

जौ अद्वितीय अरु इच्छा ते रहितअनूपम अरु नाम रूप ते परे अजन्मा सचिदानंद अरु स
कहिये तेजो ते किंबा स्थानों ते परे सर्वव्यापक सरब रूप भगवान है तिसी ने श्रीरामचंद्रादिक त
चरित्र करे हैं तत्व यह निरगुण मों गिरा नहीं प्रविसती तौं सगुण भी उही है तिस के गुण .
मुक्ति होवेगी जौं कोऊ कहैं तिस अनीह को चरित्र करण में क्या प्रयोजन था तिस पर व.

सो केवल भगतन हित लागी। परम कृपाल प्रनत अनुरागी

सो कृपा का मंदर अरु सरनागतों का प्रिय करनेहारे हैं ताते भक्तों पर कृपा कर के कीन्ह
जो कोऊ कहै भक्ति देखकर भक्तों पर दया करते हैं ता दोष देख कर कोप भी करते होहिंगे . .
कहते हैं॥ ५॥

जेहि जन पर ममता अति छोहू। तेहिं करुना करि कीन्ह न कोहू॥६॥

जिस दास को अपना करते हैं अरु कृपा करते हैं तिसपर अपराध देखकर भी कोप नहीं करते
पुनः कैसे हैं॥ ६॥

गई बहोर गरीबनिवाजू। सरल सबल साहिब रघुराजू॥ ७॥

जौं सेवकों से बात बिगरी होइ तौभी उसको बहोरते हैं कहिय सुधारते हैं अथवा तिस पुरुष की
आरजा व्यर्थ गई होइ अरु बृद्ध अवस्था सो वह भजन करे तो उस की पीछी के बीती भी सफल करत
हैं जैसे कूप सो पात्र बहाए बहुती जे बडो बीच चली जाती हैं जौं अल्प भी हाथ मों रहै तौं वह भी
निकस आवती हैं सरल कहिये जिन मो शुद्धता अरु प्रबल साहिब हैं सो श्रीरामचंद्र हैं॥ ७॥
टिप्पणी—मानसप्रचारिका में यों लिखा है। जो कोई कहै कि वह ईश्वर कस समर्थ हैं कवन कवन गुण
हैं तापर कहते हैं कि गई वस्तु के बहोरि हैं वो गरीबनिवाज हैं वा सरल हैं वो सबल हैं वो साहिब
हैं वो रघुराज हैं यह छः विशेषण का उदाहरण सातों काण्ड में देत हैं सो सुनो प्रथम बालकाण्ड मे
विश्वामित्र को यज्ञ गई वो अहल्या को पातीब्रत गई वा राजाजनक की प्रतिज्ञा गई सो सब को
बहोरि दिये वो अयोध्याकाण्ड में निषाद ऐसो गरीब वा सगुयामवासिनी गरीब वो श्रीचित्रकूटनिवासी
कोल भील ऐसे गरीबन को निवाजे हैं सरलता आरण्यकाण्ड में देखो कि। सकल मुनिन के आश्रमन
जाइजाइ सुखदीन। वो सरलता विराध खर दूषण त्रिशिरा कबन्ध बालि रावण कुम्भकरण इत्यादि को
कौन कहो मारे एते बड़े बली हैं वो साहिब कहो जो दूसरे की साहिबी सजै सो सुग्रीव विभीषण को
एती बड़ो साहिबी सजो कि जो इन्द्रादि को दुर्लभ है यह सबलता वो साहिबी चारिकाण्ड हैं
आरण्य किष्किन्धा सुन्दर लंका वो रघुराजत्व उत्तरकाण्ड श्रीराजलीला में देखि लेव॥ ७॥

बुध बरनहिं हरिजस अस जानी। करहिं पुनीत सफल निज बानी॥८॥

ते सभी बुद्धिवान हरिनाम की ऐसी महिमा जान के अपणी गिरा सफल अरु पावन करने
ृभों का यश कहते हैं ॥ ८ ॥

. रघुपतिगुनगाथा । कहिहउँ नाइ रामपद माथा ॥ ९ ॥

बल कहिये तिनो बुद्धीश्वरों की प्रवृत देख के प्रभों को प्रणाम कर के हरिकथा वरणन
कोऊ कहै तिन को देख के तौं तुम प्रवर्ते हो परंतु तिन की बुद्धि को कैसे पहूंचोगे तिस पर
९ ॥

ृथम हरिकीरति गाई । तेहि मग चलत सुगम मोहि भाई ॥१०॥

। मेरी मति अल्प है तथापि बालमीकादिकों मुनीश्वरों ने जो रघुनाथ जी का जस गाया है
ुा लेकर मुझ को गावणा सुगम होइगा जैसे ॥ १० ॥

ृहा—अति अपार जे सरितबर, जौ नृप सेतु कराहिँ ।

चढि पिपीलकउ परम लघु, बिनु श्रम पारहि जाहिँ ॥ १३ ॥

एहि प्रकार बल मनहि देषाई । करिहौं रघुपतिकथा सुहाई ॥ १ ॥

चीटी का सरिता से पार परनादिक बल मन को देखाइ के श्री रामचंद्रजी के चरित्र वरणन करोंगा
अब संस्कृत आदिकों मो हरि जस करता जो मुनि है तिन को प्रणाम करते हैं ॥ १ ॥

व्यास आदि कविपुंगव नाना । जिन्ह सादर हरिसुजस बषाना ॥२॥

पुंगव कहिये श्रेष्ठ अपर सपष्ट ॥ २ ॥

चरन कमल बंदौ तिन्ह केरे । पुरवहु सकल मनोरथ मेरे ॥ ३ ॥

कलि के कबिन्ह करौं परनामा । जिन्ह बरने रघुपतिगुनग्रामा ॥ ४ ॥

श्रीरामचंद्र के यश गाई के कालिदासादिक कलि के जो संस्कृत के कवि भये हैं तिन को नमस्कार
करता हौं ॥ ४ ॥

जे प्राकृत कबि परम सयाने । भाषा जिन्ह हरिचरित बषाने ॥ ५ ॥

सूरदासादिक जो भाषा मों निपुन हरिभक्त कवि भए हैं ॥ ५ ॥

भये जे अहहिँ जे होइहहिँ आगें । प्रनवौं सबहि कपट सब त्यागें ॥६॥

होहु प्रसन्न देहु बरदानू । साधुसमाज भनित सनमानू ॥ ७ ॥

तीनों कालो के जो उत्तम कवि हैं तिन सभों को प्रणाम कर के यह दान मागता हौं संत समाज मैं
मेरी बाणी का आदर होइ जौं कोउ कहै ग्रंथ के प्रस्तार निमित्त जो एती नम्रता करते हौं जौं किसू ने
प्रीत संजुत ना पढा सुना तौ क्या भया तिस पर कहिते हैं ॥ ७ ॥

जो प्रबंध बुध नहिँ आदरहीं । सो श्रम बादि बालकवि करहीं ॥

जिस ग्रंथ को बुधवान न सराहैं तिस के करणे का फल कष्टही है अरु करता भी मूढ़ है

कीरति भनित भूति भलि सोई । सुरसरि सम सबकहँ हित होई ॥

कीरति कहिये यश भणित कहिये बाणी भूति कहिए बिभूति भली उही हैं जो गंग सब को पवित्र करें तातपर्य यह जैनी अरु बामी भी अपणे मत की श्लाघा करते हैं परंतु है ताते प्रमान नहीं होता अरु विवेकियों का निरपक्ष्य मति है ताते सभों को प्रमान है अरु गुणो दोषों के विभागों की कै नारिअहुं के शृंगारहुं की हैं बिस्वागामी को ही सुखद है अरु कै अरु भगवंत के यश मिस्रित है सो सभों को आनंद देती है अरु जो कृपणो की बिभूति को हीं सुख देती है धरमात्मा की श्री है सो सभों को आनंद देती है जो कहो किसू जु अपणी बाणी की श्लाघा करते हो तिसपर कहिते हैं ॥ ९ ॥

राम सुकीरति भनित भदेसा । असमंजस अस मोहि अंदेसा ॥ १० ॥

श्री रामचंद्रजी की अति रमणीय कीरति अरु मेरी बाणी भदेश कहिये मोटी इस असमंजस का कहिए अणबणती बात का मुझे अंदेशा है जो ऐसी गवाँरी बाणी सो रामचरित्र बरणन करता हौं परंतु ॥ १० ॥

तुम्हरी कृपा सुलभ सोउ मोरे । सिअनि सुहावनि टाट पटोरे ॥ ११ ॥

तिस चिंता मे तुमारी कृपा से मुझे भी सुखेन होवेगा इहां काकोक्ति न्याय कर अर्थ करणा जैसे सियन कहिये सीते हुए सुहावन कहिये भले भावते हैं टाट कही सण की तंती सों पटोरे कहिये पटंबर तातपर्य यह सणी के साथ पटंबर सीये हुए नहिं सोभते परंतु पहिरनेवाला कृपा कर अंगीकार करे तब निर्बाह होता है तैसे मेरी बाणी श्री रामचंद्र के यश जोग नहीं परंतु तुम संत कृपा कर प्रमाण करोगे तब सुहावेगी अथवा सीयन कहिये सीत काल मों सुहावते हैं सण के बस्त्र अरु पटंबर भी तैसे बालमीकादिकों को संस्कृत बाणी पटंबरोवत अरु मेरी भाषा बाणी टाटवत है परंतु प्रीति रूपी सीत जिन को व्यापा है अरु संस्कृत मो गति नहीं तिन को यह भी प्यारी लगे ॥ ११ ॥

करहु अनुग्रह अस जिय जानी । बिमल जसहिं अनुहरैं सुबानी ॥ १२ ॥

ताते हे संतजनो मेरी मत को तुच्छ जान कै कृपा करो जो बाणी भगवंत के निर्मल जस को अनुहरै कहे वर्णन करे जो कोउ कहे और कवीश्वरों तो अपणी कठिन बणावण अरु अलंकारादिक रुचिरता राखण निमित्त यतन करते हैं तुम सूधी बाणी अरु यश मात्र कथन निमित्त एतें यतन क्यों करते हो तिसपर कहिते हैं ॥ १२ ॥

दोहा—सरलकवित कीरतिबिमल, सोइ आदरहिं सुजान ।

सहज बयर बिसराइ रिपु, जोसुनि करहि बखान ॥

जो कबिता सूधी हैं अर्थ यह छंद प्रबंध कर पूरण नहीं भी परंतु बिमल जो भगवंत हैं तिस की

मंजुत है तिस कों संतजन आदर देते हैं। अरु तिनों मनुष्यों के सदा बैर होहिं उन वचनों के
:र तिन के रिदे भी सरल होते हैं जो कोऊ कहै यह तुम अपणी बाणी को शोभा करते हौ
हिते हैं।

। होइ बिनु बिमल मति, मोहि मतिबल अतिथोर।
हु कृपा हरिजस कहउँ, पुनि पुनि करउं निहोर॥

बाणी तौं भाषा किंबा संस्कृत परम निर्मल मतिवानो की होती है अरु मेरी मत तौ अति अल्प
नों के आगे पुनः पुनः बिनय करता हौं जो कृपा कर मेरी गिरा में भी ऐसी शक्ति डारहु।

कोबिद रघुवरचरित, मानस मंजु मराल।
बालबिनय सुनि सुरुचि लषि, मो पर होहु कृपाल॥

रघुबर चरित मानस सम है अरु तिस में कवि अरु कोबिद कहिए पंडित सुन्दर मरालो सम हैं
तिन को तौं अवछिन्न प्रीति है परंतु मुझ बालक की गिरा सुनि अरु प्रोति देखि कै मुझपर भी कृपा करें॥

सोरठा—बंदौं मुनिपदकंजु, रामायन जेहि निरमयेउ।
सषर सुकोमल मंजु, दोष रहित दूषन सहित॥

पाठांतर भूषन सहित। तिस मुनीश्वरों के चरणारविंदों को नमस्कार करता हौं जिनो ने रामायण
रच्या है कैसे तिन के पद कमल हैं सखर सतिखणता सहित है जाते उपासकों के पाप नास करते हैं
सकोमल कोमलता सहित हैं जाते उपासकों के रिदे को द्रवीभूत करते हैं मंजु उजल है अहंता रूपी
मल को निवृत्त करते हैं दोष रहित तप तीरथ सतसंग कर आप निर्मल हुए हैं अरु दरसन करनहारो
को भी दोष रहित करते हैं दूषन सहित दूषण नाम पादुका का है जो द्वेष न होहिं सो कहिये खडावां
तिन के सहित है। आगे अर्थ रामायण के पख्य को तिस मुनीश्वर के पदारविंदों को नमस्कार करता
हौं जिनो ने श्री रामायण किया है कैसा वह बालमीक मुनि निर्मित रामायण है सखर जिस के बीच युद्ध
आदि तीखण प्रसंग है सकोमल पद रचना जिस विषे कोमल है मंजु कहिये मनोहर है जिस की
औं कथा दोष रहित कबिता का जिस बिषे दूषन कोऊ नहीं भूषण सहित अलंकार जिस बिषें अनेक हैं।
किंबा। कैसा है रामचरित सखर जिस में श्री रामचंद्रजी का सखारस वर्णन किया है सुग्रीव से गुह
निखाद से बिभीषण से कोमल मंजु दोष रहित तीनो विशेषण सखा भाव में लगावणे। कोमल सुग्रीव
का जब दुख सुना तब रिदा द्रविआ अपणा दुख भूल गया अरु उस को राज ले दिया। मनोहरता
गुह निखाद की मैत्री में जो उस को कुल समेत मनोहर कहिए पावन किया। दोष रहित दूषण
सहित यह दोनों पद विभीषण की मैत्री मों लगावणे। दूषण सहित जो था बिभीषण सत्रु के भ्राता कर
अरु राक्षस जनम कर भी जिन से सुभाव कही पाप पडे होते हैं सो दोष रहित किया। दुतीय पाठार्थ।
लंका के निष्कंटक राजरूपी भूषण सहित ताको किया। अथवा अनन्य भक्तिरूपी भूषण ताको पहिराया।

किंबा सखर दूषण सहित खर के जो वर्तमान होवै सो कहिए सखर। ऐसा तृमुंड सो खरदूषन व की कथा संजुत जो रामायण है अरु जिस मों दोष रहित कोमल अरु मनोहर वाक्य है सो जि है तिस मुनिवर के चरण बंदता हौं। रामायण के लख्यण केवल खरदूषण के बध सहित क यह ग्रंथकारों का नेम है ग्रंथ में कोई लख्यन लखाए जाते हैं जैसे भागवत का लख्यण कि के बध सहित किंवा विशेष कर इनहीं के नाम ले सो का प्रयोजन यह श्री रामचरित्र में मुख के मारने का है तिस की सेना में यह बडे बली थे अरु प्रथम बध भी लंका के युद्ध में इनही का

बन्दौं चारिउ बेद, भव बारिधि बोहित सरिस
जिन्हहि न सपनेहु षेद, बरनत रघुबर बिसद जस

जिनो वेदों को भगवंत का यश कहते स्वपन मो भी खेद नहीं होता। अर्थ यह निरंतर हैं तिन को प्रणाम करता हौं। किंबा जो सत पुरुस तिन के आश्रय श्री रामचंद्र का निर्मल जस ।. तिन को जिनहिं कहिए जीत नहीं सकते स्वपनेहुं कहे कदाचित भी खेद कहे आधि व्याधिक ॥

बंदौं बिधिपदरेनु, भवसागर जेहि कीन्ह जहँ ।
संत सुधा ससि धेनु, प्रगटे षल बिष बारुनो ॥

संसार सिंधु का करता जो बिरंचि हैं तिस को बंदता हौं। जिस ने संसार सागर में पीयूष मयंक सुरसरि भी सम संतजन अरु बिष मद्रा सम दुष्ट प्रगटाया है ॥

दोहा—बिबुधबिप्रबुधग्रहचरन, बंदि कहौं करजोरि ।
होइ प्रसन्न पुरवहु सकल, मंजु मनोरथ मोरि ॥ १४ ॥

बिबिध पाठ होइ तौ अनेक अरु बिबुध हीं होइ तौं देवता इतर स्पष्ट ॥ १४ ॥

पुनि बंदौं सारद सुरसरिता । जुगल पुनीत मनोहरचरिता ॥ १ ॥
मज्जन पान पाप हर एका । कहत सुनत एक हर अबिबेका ॥२ ॥

टिप्पणी—मानप्रचारिका में यों लिखा है। एक सुरसरिता जो हैं सो मज्जन पान ते पाप हरती हैं वा एक शारद सरिता कविताई जो है ते कहत सुनत अविवेक हरिलत है ॥ २ ॥

गुर पितु मातु महेस भवानी । प्रनवौं दीनबंधु दिनदानी ॥ ३ ॥

दीनो पर दया अरु मुझ को शुभ देणहारे गुरो अरु पितामाता सम जो शिवा शिव हैं तिन को बंदता हौं पुनः कैसे हैं ॥ ३ ॥

सेवक स्वामि सषा सियपी के । हित निरूपधि सब बिधि तुलसी के ॥४॥

वेद मों कहा है शंकरजी भगवान के सेवक हैं। विष्णुजी शिवजी के शिष्य हैं ताते सेवक स्वामी भए ॥ पुनः ॥ ब्रह्मा विष्णु शिव तीनो सम हैं। ताते सखा कहे अरु मेरे सर्व भांति के हितकारक अरु उपाध निवारक हैं। सर्व विधि कहिए जो प्रभों के शिष्य हैं । तो मेरे बड़े गुरुभाई हैं। जो उन के स्वामी

रे गुरों के गुरु हुए जौं शिव हैं तौ मुझ को भी अपणा शिष्य जान के दया करेंगे ॥ पुनः ॥ कैसे हैं ॥ ४ ॥ टिप्पणी—मानसप्रचारिका में यों लिखा है। पुनः कैसे हैं महेशभवानी कि सियपिय जो तिन्ह के सेवक हैं स्वामी हैं सखा हैं। लक्षसेवक का ॥ बारबार बरमांगों, हर्षि देहु श्रीरंग। इत्यादि ॥ लक्षस्वामी का ॥ लिंग थापि बिधिवत करि पूजा। लक्षसखा का ॥ शंकर प्रिय वद्रोही ममदास। ते नर करहिं कल्प भरि, घोर नर्क महँ बास। अथवा जब शिवजी के विवाह ने किया यह भी सखत्व पाया जात है वो तुलसी के तौ सबबिधि ते निरुपाधि हितकारी हैं ॥८॥

बलोकि जगहित हर गिरिजा। सावरमंत्रजाल जिन सिरिजा ॥५॥

न आषर अरथ न जापू। प्रगट प्रभाउ महेसप्रतापू ॥ ६ ॥

उमा महेश्वर ने कलू के लोगों में बेद मंत्र के साधन की शक्ति न देखी। किंबा। उन मंत्रहूं ल के सहारन की समर्थता न देखी ताते वह मंत्र कीलन करके साबर मंत्रों का पुंज रचेया सो कैसे मंत्र हैं जिन के अख्यर अर्थ पाठ की संगत नहीं मिलती। किंच जिन के वरण नहीं मिलते अरु अर्थ नहीं जानी ते परंतु महेश्वर के प्रताप कर कारज सिद्ध होते हैं तैसे मेरी कबिता भी अनमिल है परंतु ॥ ६ ॥

सोउ महेस मोहि पर अनुकूला। करिहि कथा मुदमंगलमूला ॥७॥

सो शंकरजी जो कृपा करहिंगे तौं अपणी अनमिल बाणी साथ सरब जगत कों मोद अरु मंगल देणहारी सुंदर कथा बणावेंगा ॥ ७ ॥

सुमिरि सिवा सिव पाइ पसाऊ। बरनउँ रामचरित चितचाऊ ॥८॥

उमा महेश्वर के ध्याइ कर अरु तिन की कृपा दृष्टि पाइ कर रिदें के उत्साह से श्रीरामचंद्रजी का चरित्र बरनन करता हौं ॥ ८ ॥

भनित मोरि सिवकृपा बिभाती। ससिसमाज मिलि मनहुं सुराती ॥९॥

शंभुजी की दयाकर मेरी कविता ऐसी बिभांतो कहिये शोभेगी जैसे मयंक के समाज सों बिभावरी शोभती है ॥ ९ ॥ टिप्पणी—बिभावरी = रात ॥

जे एहि कथहि सनेह समेता। कहिहहि सुनिहहि समुझि सचेता ॥१०॥

होइहहि रामचरनअनुरागी। कलिमल रहित सुमंगलभागी ॥ ११ ॥

जो पुरुष सचेता कहें चित सावधान करके प्रेम सो इस कथा का श्रवन कथन मनन करेंगे सो प्रभों की प्रीति पाइ के सुखों के भागी होवेंगे ॥ ११ ॥

दोहा—सपनेहु साचेहुं मोहि पर, जौं हरगौरिपसाउ।

तौ फुर होउ जो कहेउं सब, भाषा भनित प्रभाउ ॥ १५ ॥

यह बात सांच है जौं स्वप्न मों कहिए रंचक भर भी मुझ पर उमा महेश्वर की कृपा दृष्टि है तौ

मेरी भाषा बाणी का प्रभाउ सभ सांचा होवैगा । अर्थ यह सतपुरुसों मो पूज्य होवैगो अब
संजुत अयोध्यापुरी कों प्रणाम करते हैं ॥ १५ ॥

बंदौं अवधपुरी अतिपावनि । सरजू सरि कलिकलुषनसा

बसिष्ठादिकों के निवास अरु श्रीरामचंद्रजी के प्रकास कर अति पवित्र जो अयोध्या है
युग के पापों का नाशक जो सरयू हैं तिन कों प्रणाम करता हों ॥ १ ॥

प्रनवौं पुर नर नारि बहोरी । ममता जिन्ह पर प्रभुहि न

नगर के नरों नारियों को भी बंदताहौं जाते तिनो पर प्रभों की अति प्रीति है । जो को
पर ममता बिशेष किस प्रकार जानिये तिस पर कहिते हैं ॥ २ ॥

सियनिंदक अघबोघ नसाए । लोक बिसोक बनाइ बसा

रजकादिक जो सीताजी के निंदक थे तिन के भी सभ पाप नास किये । अरु सभी लोक सोक
कर के अवधपुरी मों बसाए । किंवा । बिसोक लोक कहिए बैकुंठ तहां सर्व प्रजा को बनाइ कह चतुर्भुज
स्वरूप बनाइ कर बसाया ताते अति ममता जाणी ॥ ३ ॥

बंदौ कौसल्या दिसि प्राची । कीरति जासु सकल जग माची ॥४॥

जिस की कीरतिसर्व बिस्व मों पसर रही है । तिस माता कौशल्या रूपी पूरब दिसा को बंदता हों
जैसे प्राची दिशा मे पूर्णेंदु उदय होता है । तैसेही ॥ ४ ॥

प्रगटे जहँ रघुपति ससि चारू । बिस्वसुषद पलकमल तुसारू ॥५॥

जहां से सृष्टि के सुखदायक अरु दुष्टोरूपी पंकजों के घायक श्रीरामचंद्र रूपी कलानिधि प्रगटे हैं
खलरूं कौ पंकजरूं की समता देणे का भाव यह जैसे तुषार कर सत पत्र शीघ्र जलजाते हैं । तैसे प्रभों
के पराक्रम कर तमीचर नीरज तन नाम होते हैं । किंवा जैसे कमल उपजे सीतल सलिल से हैं अरु
तत्तु विरोधी जो भानु है प्रीति तिस मों करते हैं तैसे निशाचर पुलस्तादिकों की कुल में उपज कर सा
द्रोहियों सो सनेह धरते हैं ॥ ५ ॥

दसरथ राउ सहित सब रानी । सुकृत सुमंगल मूरति मानी ॥ ६ ॥
करौं प्रनाम करम मन बानी । करहु कृपा सुत सेवक जानी ॥ ७ ॥

सर्व पुन्यरूं अरु मंगलरूं की मूरत जो संपूर्ण राणियों संजुक्त राजा दशरथ हैं तिसकों प्रणाम करता
हों । तुम ने मुझे अपने पुत्र का दास जानि कर कृपा करनी ॥ ७ ॥

जिनहिं बिरचि बड भयउ बिधाता । महिमाअवधि रामपितुमाता ॥८॥

जिस दसरथ को उपजाइ के बिरंचि बडाई पाई जाते दशरथ तौं बिधि के कुल सो हैं तिस के संबंध
कर परमेश्वर भी बिधाता की कुल मों उपजे ताते दशरथादिको की महिमा भी बेअंत हैं जाते श्री
रामचंद्र के पिता माता हैं । अब केवल नृप दशरथ का प्रणाम करते हैं ॥८॥ टिप्पणी—जाते=क्योंकि ।

सो०—बंदौं अवधभुआल, सत्य प्रेम जेहि रामपद ।
बिछुरत दीन दयाल, प्रिय तन तृन इव परिहरेउ ॥ १६ ॥

सांचा प्रेम रामचंद्रजी के पदारविंदों के साथ है ऐसे दशरथ को नमस्कार करताहौं सांचे ...यण यह सभों को सरब पदारथों मे अपना तनु प्यारा है। सो तनु जिस नृप ने रघुनाथजी ...थ त्रिनवत त्याग दिया। अवधभुआल पद कथन का भाव यह अवध मुक्तिदाती पुरी हैं तहां का ...इ सो बंदनीय है। किंबा अवधभुआल कहिए जो अवध पर्यंत राजा होवैं भाव यह जिस ने ...ो देखी होती है तिस की वृति भजन परायण सुगम होती है अरु सदा का राजा अवश्य उनमत्त ...पंक्तिरथ बाल्यावस्था मे हीं भूपति हैं किंच जो सरब राज्यों की अवध होवै जाते रघु का ...म का सुत हैं अरु जिस के रघुनाथजी पुत्र रूप भये किंच अवध कहिये आर्या तिस का राजा ...ए जिस ने अपनी आयु रघुनाथजी के सुमरण अरु दरसन कर सफल करी। किंवा प्रजावत आपु जिस ...का आज्ञा मो है जब चाह्या तब तनु त्याग दिया। ऐसे गुणों युक्त हूवै कर भी हरिपद रति है ताते प्रणाम योग्य हैं। अब राजा जनक को गूढ प्रेमी लखावते हुए प्रणाम करते हैं ॥ १६ ॥

प्रनवौं परिजन सहित बिदेहू । जाहि रामपद गूढ सनेहू ॥ १ ॥
जोग भोग महँ राषेउ गोई । राम बिलोकत प्रगटेउ सोई ॥ २ ॥

जनक ने गूढ प्रेम जोग अरु भोग में छपाइ राखा था जाते कई लोक विदेह को जोगी ज्ञानी जानते थे। कई लोग नृपहीं मानते थे । अरु राजा प्रेमी भक्त था सो इस प्रकार लखा जब श्रीरामचंद्र को मुनीश्वर साथ देखा तब भूपति ने कहा मेरा मन निर्विकलप सुख सों उलंघ कर इस सुंदर मूरत मो खचत हो रहा है ॥ २ ॥

प्रनवौं प्रथम भरत के चरना । जासु नेम ब्रत जाइ न बरना ॥ ३ ॥
रामचरनपंकज मन जासू । लुबुध मधुप इव तजै न पासू ॥ ४ ॥

प्रथम कहिए रघुनाथजी के भ्रातों मे आदि अरु भ्रातों बिषे मुख्य जो भरत हैं तिस को नमस्कार करता हौं भरत को मुख्य कथन का भाव यह लोकों मे प्रसिद्ध श्री रामचंद्रजी के संग लख्यमन पद है। अरु वास्तव बडे भरतजी हैं ॥ ४ ॥

बंदौं लछिमनपदजलजाता । सीतल सुभग भगतसुषदाता ॥ ५ ॥
रघुपतिकीरति बिमल पताका । दंड समान भयेउ जस जाका ॥ ६ ॥

पताका कहिए बस्त्र दंड कहिए बांस जब दोनों एकठो होवहिं तब ध्वजा बणती है तैसे श्रीरामचंद्र जी के साथ लछमणजी के चरित्र मिलहिं तबो रामायण होता है ॥ ६ ॥

सेष सहस्र सीस जग कारन । सो अवतरेउ भूमिभय टारन ॥ ७ ॥
सदा सो सानुकूल रह मो पर । कृपासिंधु सौमित्रि गुनाकर ॥ ८ ॥

जो शेषनाग जगत का कारक सहस्र मुंड के धारनद्वारा भूमि का भार उतारनार्थ सौमित्रि हूवै के प्रगट्या है सो गुननिधि कृपालु मेरे सदा सहाइए रहैं ॥ ८ ॥

रिपुसूदनपदकमल नमामी । सूर सुसील भरतअनुगामी ॥

जिसका नाम सत्रुसूदन है अरु महासूर भी है पुनः सौम्य सुभाव अरु भरत का भक्त प्रणाम है ॥ ९ ॥

महावीर बिनवौं हनुमाना । राम जासु जस आपु बषाना ॥

महासूर जो हनुमंतजी हैं तिन को रघुनाथजी कहा है । तेरे उपकार को संभार के मेरा ... नहीं हो सकता तिन को नमस्कार करता हौं ॥ १० ॥

सोरठा—प्रनवौं पवनकुमार, षलबनपावक ज्ञानघन ।
जासु हृदयआगार, बसहिं राम सरचापधर ॥ १७ ॥

तिस पवन आत्मज को प्रणाम करता हौं जो दुष्ट रूपी बन को अनल है जौं कहो केवल तमो गुणी है तौं ज्ञान का पुंज है जौ कहो केवल ज्ञानी है तौं परम भक्त हैं जाते उस के रिदै रूपी निकेत मों प्रभों के धनुषधारी रूप का ध्यान सदा बसता है तिन को द्वेबेर नमस्कार इस निमित्त करो गुरों को बारंबर प्रणाम करन का अधिक फल है अब सुग्रीवादिक अरु चराचर जे रघुनाथजी के उपासक हैं । तिन सभों का प्रणाम करते हैं ॥ १७ ॥

कपिपति रिछ निसाचरराजा । अंगदादि जे कीस समाजा ॥ १ ॥
बंदौं सब के चरन सुहाये । अधमसरीर राम जिन्ह पाये ॥ २ ॥
रघुपतिचरनउपासक जेते । षग मृग सुर नर असुर समेते ॥ ३ ॥
बंदौं पदसरोज सब केरे । जे बिनु दाम राम के चेरे ॥ ४ ॥

और सेवक मोल देकर लइते हैं अरु यह बिना मोल हीं चेरे भए हैं अथवा और सेवक दाम कहिए धन के लोभ कर स्वामी को सेवते हैं अरु यह निर्लोभी दास हैं किंवा बिन दाम कहिये मोह की फांसी से रहित हूवै के भगवंत के किंकर भए हैं ॥ ४ ॥

सुकसनकादि भगत मुनि नारद । जे मुनिबर बिज्ञानबिसारद ॥ ५ ॥

बिसारद कहिए चतुर इतर सुगम ॥ ५ ॥

प्रनवौं सबहि धरनि धरि सीसा । करहु कृपा जन जानि मुनीसा ॥६॥

धरा पर सीस धरना अति नम्रतार्थ इतर सुगम ॥ ६ ॥

जनकसुता जगजननि जानकी । अतिसय प्रिय करुनानिधान की ॥७॥

जनकसुता अरु जानकी पद जो पुनरुक्त है तिस के निवारनार्थ अर्थ और करते हैं जनकसुता जगत

री हैं जाते महामाया हैं । ज्ञान कहिये ज्ञान तिस को भी जननी हैं । जाते उपनिषद विद्या-अरु कृपानिधि जो श्रीरामचंद्र हैं तिन को अति प्यारी हैं ॥ ८ ॥

जुगपदकमल मनावौं । जासु कृपा निरमल मति पावौं ॥८॥

ोनों चरण पूजणे का अभिप्राय यह तुम्हारे सो दोनों सकर्ता है । ताते मेरे दोनों लोक संवारने ॥८॥

न वचन कर्म रघुनायक । चरनकमल बंदौं सब लायक ॥ ९ ॥

नयन धरें धनुसायक । भगतबिपतिभंजन सुषदायक ॥ १० ॥

ननैन धनुषधारी भक्तों के संकटहारी अरु सुखदाई जो रघुनाथजी हैं तिन के चरणारबिंदों नबच करम कर प्रणाम करता हौं अब सीता अरु रघुनाथजी कौं अभेद दृष्टांत दे प्रणाम ॥ १० ॥

दोहा—गिरा अरथ जल बीचि सम, कहिअत भिन्न न भिन्न ।

बंदौं सीतारामपद, जिन्हहिँ परम प्रिय खिन्न ॥१८॥

जैसे बाणी अरु अर्थ जल अरु बीचि कहिये लहर तिन का कथन मात्र भेद है वास्तव अभेद हैं । तैसे सीता अरु श्रीरामचंद्र भी कहने मात्र भिन्न वास्तव भिन्न नहीं तिन का नमस्कार करता हौं जिन को बिनैहो पयारी है खिन्न पाठ होवें तो जिन को दीन प्यारे हैं । चिन्न पाठ हाई तो परम प्रियताही जिन का चिन्न है जाते सर्व के आत्मा हैं । प्रमाण श्रुति । परमप्रेमास्पदत्वं आत्मत्वं । जो सर्व को प्यारा है सो सर्व का आत्मा है ॥ अब श्रीरामचंद्रजू के नाम को प्रणामकरण पूर्वक इहां से षष्ट चौपाईअहुं पर्यंत नाम महात्म्य कहिते हैं ॥ १८ ॥

बंदौं रामनाम रघुबर को । हेतु कृसानु भानु हिम कर को ॥१॥

नाम तो रघुवर के अनेक हैं अरु सबी पूज्यनीय हैं । परंतु मेरी उपासना रामनाम विषे है ताते नाम नामी को अभेद जानि के नमस्कार करता हौं । कैसे हैं राम कृसान कहिए अग्नि भानु कहिये रवि हिमकर कहिये ससि इन सभों का हेतु कहिए कारण है । प्रमाण श्रुति । चंद्रमा मन सो जात चक्षों सूर्यो अजाइत । जिस पुरुष के मन सो चंद्रमा उपज्या नेत्रों से भानु उपज्या अथवा राम तीन अख्यर है तिन मों रकार अग्नि बीज है । अकार भानु बीज है मकार चंद्रबीज है इस प्रकार भी रामनाम तीनों का कारन है अथवा हित हेतु यह प्रीत के वाचक है । कृसनाम खेती का है कृस के संबूह का नाम कृसान है । जैसे खेती को इन्दु रस पावता है अरु भानु परिपक्व करता है तैसे प्रीत रूपी खेती को रामनाम के दोनो अख्यर विचाररूपी रस देते हैं । अरु साक्षातकाररूपी प्रपक्वता भी करते हैं ॥ १ ॥

बिधिहरिहरमय बेदप्रान सो । अगुन अनूपम गुननिधान सो ॥२॥

सो रामनाम ब्रह्मा विष्णु शिव स्थान रूप प्रमाण के बल से जहां मीमांसा मे षट प्रमाण कहे हैं ।

श्रुति लिंग वाक्य प्रकरण स्थान सामाख्य तिन मों। स्थानरूप प्रमाण कहिये अर्थ क्रम । अ कहिए जहां होइ तीन चारि पद वा अच्छर हावें सो औरों का अर्थ कोषकर सिद्ध होवे अरु कुछ अर्थ अकांख्यत होइ अरु कोऊ पद अच्छर भी अधिक होइ तौ तिस अर्थ के ला तिस पद वा अच्छर कों बांछत अर्थ सो लगाइ लेणा। सो इहां अकार मकार तो हरिहरवाच प्रसिद्ध थे अरु मूलकार के अर्थ पूरण निमित्त विधि अर्थ की शंका थी सो रकार विधि वाचक राम तीनो देव में सिद्ध भया किंवा अकार विष्णु वाचक तों प्रसिद्ध हैं अरु मकार बिरंचि का प्रमाण अनेकार्थकोषे । भीरभये मों बिधोचंद्रोशिवेमर्रसमाम्बिया ॥ रकार अग्नि का बाचक है। कोषे। र: कामो बनि: सूर्य्योवितोअधि: । सो अनल रुद्र मों भेद नहीं प्रमाण श्रुति:। रुद्रो वागनि: । जो अग्नि है सोई रुद्र है ताते रकार अकार मकार त्रिदेव सरूप सिद्ध भए बेदप्रा. सो रामनाम बेदों का प्रमाण है जाते रामनाम अरु प्रणव एक रूप है। कारण कारज कर के प्रमाण रामनाम्न: समुत्पन्न: प्रणवो मोक्षदायक: । रूपंतत्वमसेश्चासौ वेदतत्वधिकारण: वेदतत्वाधिकारी के तत्वमसी का स्वरूप रामनाम है अरु मोख्यदायक जो प्रणव है सो रामनाम सो उत्पत्ति भया है र नाम से प्रणव की उत्पत्ति अरु अभेदता अरु तत्वमसी सो एकता ग्रंथ वृद्धि के त्रास सों नहीं लिखा। अथवा सर्व तनों में पंचप्रान कहे हैं सो वेदरूपी तन के पंचप्राण रामनाम के पंचवर्ण हैं। रकार तद् त्तर हैं अकार मकार तदुत्तर अकार। किंच विसर्ग अनुस्वार अरु स्वर इनो बिना वेद का कोऊ शब्द सिद्ध नहीं होता। ताते यह वद का प्राण भए इहां रेफ विसर्ग रूप है। अकार सब स्वरों में मुख्य है ताते सर्व स्वररूप है। मकार अनुस्वार रूप है। इस युक्त कर भी रामनाम बेदों का प्राण हैं। निर्गुण अरु अरूप भी सो नाम है। अरु सगुणनिधि भी सोई है। निर्गुण का वाचक नाम इस भांत है रमतीतिराम: । वा रमयतीतिराम: । सगुण का बाचक इस भांति राम है। दशरथात्मजराम: ॥ २ ॥

महामंत्र जोइ जपत महेसू । कासी मुकुति हेतु उपदेसू ॥ ३ ॥

जिस महामंत्र को शिवजी निरंतर जपते हैं अरु जीवो को मुक्ति करबे हेतु काशी मों भी राममंत्र ही उपदेश करते हैं यह रामतापनी मों कहा है ॥ ३ ॥

महिमा जासु जान गनराऊ । प्रथम पूजिअत नामप्रभाऊ ॥ ४ ॥

जिस नाम की महिमा को गनेशजी जानते हैं जाते सभों के प्रथम पूजा तिन की नाम के प्रभाव करहीं होती है। सो प्रसंग इस भांति है। एक समै रिषीश्वरों ने ब्रह्माजी से पूछा प्रथमपूज्य कौन है तौं यद्यपि पितामह जो सरवज्ञ थे तदपि सभों की मनोहार हेतु कहा भगवंत का तन वैराट है। इस की प्रदखिणा जो प्रथम करै सो पूज्य है। तब सब सुर धाए तदनंतर गजाननजी ने बिचारा मेरा शरीर बडा है। अरु बाहन मूसा है मैं कहां जावौं तब वाच्य वाचक को अभेद मान कर धरा पर राम नाम लिखा अरु उस के चौगिर्दे कार करी अरु मूसे पर चढि कै प्रदखिणा करते हुए धान डारते गए तब लो अमर भी प्रदखिना करि आए। अरु पूछा हे प्रभों हम से आगे कौन धान डारता आया है तब बिधि ने कहा गणेश आया है जाते इस ने नाम नामी कौ अभेद जान्या है। तब प्रथम पूज्य भया ॥ ४ ॥

आदिकबि नामप्रतापू । भए सुद्ध करि उलटा जापू ॥ ५ ॥

कवि जो बालमीकजी हैं ते नाम के प्रभाव को जानते हैं जाते उलटा जाप जपकर बिमल
ा प्रसंग इस भांति है । बालमीक मित्रावरुण मे उपजे अरु किसू संयोग कर बटवाओं के
हां बाट मारते को संत मिले उन के संभाषण कर मन द्रवी भूत भया तौ तिन की शरण परे
ने मरा मरा एह उलटा मंत्र उपदेश्या । सो तहां ही बैठि के सहस्र बर्ष जप्या तब नाम
ाइ गया अरु तहां बालमीक एकत्र भयी तिस मे निकासे तब नाम भी बालमीक भया
महाकवि हुए ॥ ५ ॥

रनाम सम सुनि सिवबानी । जपि जेंई पिय संग भवानी ॥ ६ ॥

ाम नाम सहस्र नाम के तुल्य है यह शिवजी की बानी मे सुनि कै जप कहिये राम नाम जपि कै
ई कहिए जेंविया भोजन शंकरजी के साथ भगवती ने । प्रमाण पद्मपुराणे । पार्वते हिमयामार्धंभोक्त-
भुवनबंदके । तमाह पार्बतीदेवी जपत्वानामसहस्रकं ॥ ततोभोक्षामहंदेव भुज्यताभवताप्रभो ततस्तां-
ती प्राहप्रहसन्यर्मेश्वरः ॥ हे भुवन बंदते पारवते आउ मेरे साथ भोजन करणे को तत्व शंकरजी
प्रति उमा कहत भई तुम भोजन जेंवौ मैं सहस्र नाम जप कर जेवौंगी । तब हंस कर प्रमेश्वर पार्बती
प्रति कहिते भए । धन्यासिकृतकृत्यासिविष्णुभक्तासिपार्बती । दुर्लभावैष्णवीभक्तीः भागधेयंबिनेश्वरी ॥
धन्य हो कृत कृत्य हो जाते विष्णु भक्ति हो हे ईश्वरी पूरब पुन्यो बिना विष्णु की भक्ति दुर्लभ है ।
रामरामेतिरामेतिरमेरामेमनोरमे । सहस्रनामततत्तुल्यं रामनामबरानने ॥ हे सुंदरे रामेरामेति अरु रामेति
यह है भेद मंत्र के हैं सो इस भांति राममंत्र को मैं जपता हौं हे बरानने मेरे कर कहा हुआ जो राममंत्र
है अरु तू सहस्रनाम जपती है सो दोनो तुल्य है । ये तदुक्ता महादेव भुंक्ष्वसार्धमयाधुना ततोरामेतिना-
मोक्तामः भुक्ताचपार्बती । तिसे सहस्रनाम तुल्य जो रामनाम हैं । तिस को जप कै मेरे संग भोजन जेंवौ ता
समै उमा ने रामनाम जप कै शंभु के साथ प्रसाद पाया ॥ ६ ॥

हरषे हेतु हेरि हर ही को । किये भूषनु जिय भूषन ती को ॥७॥

पद अन्वे कर अर्थ करना हर कहिये शिवजी के हेत कहिये सनेह हीके कहिये उमा के हृदे का
फलतारथ यह गिरजा की रामनाम विषे प्रीति अरु अपने बाकहुं पर प्रतीति देखिकर प्रसन्न भये तब
जिय भूषन कहिये आपने जीय का भूषण करी । जाते सदा अर्द्धंग में राखते हैं अरु भूषन तीको कहिये
सभी इस्त्रिवों सो भूषन करी । अर्थ यह सभी सो पूज्य करी अथवा हरषे कहिये हरष विषे हेतु
कहिये कारण हेर कहिये हेरा देखा हर के हीये का फलतारथ यह शिवजी का रिदां कि शंकर प्रसन्न
होता है सो रामनामहुं कर होता है प्रमाण । रकारादोनिनामानिच्छुण्वतोममपार्बती मनहिं प्रसन्नता
मेतिरामनामाभिसंकया । हे पार्बती जिनो नामो के आदि रकार अख्यर आवता है जब मैं तिन को
सुनता हौं तब वक्ता पर मेरा मन प्रसन्न होता है जो यह रामहीं कहणेलगा होइगा अरु जुबतियों के
जीय का जो कहिये कंठ का भूषण होता है सो भी पार्बती का शिवजी ने रामनामहीं बणाइ दिया ।
प्रमाण एक समै गिरजा ने कहा हे प्रभो मुझे कंठाभरण बनवाइ देवो तब शंकरजी बोले श्रीरामचंद्रस्य-

पुनातिनित्यंयंनाममध्येंदुमणिबिधाइ । श्रीचंद्रमक्तफल्योरमाया चकारकंठाभरणंगिरीशः ॥ अम।
छल रहित जो शंभु हैं तिनो कहा श्रीरामचंद्र यह नाम नित्य पवित्र है तिस मों मध्य ...र
तुम नीलमणी के स्थान करो अरु दो उर जो श्री अरु चंद्र पद है तिन को दोनो उर के मुक्ता
यह भूषण सदा नवीन रहैगा । पाठांतर । किय भूषन तिय भूषन तीको । अर्थ अन्वय तिय
जिस कामारि को स्त्री की भूख नहीं अर्थ यह उर्द्धरेता है तिनो ने तिय को कहिये उम
जोय का भूषण किया फलतार्थ यह शिव भगवान कामारथो नहीं और गोरी को जो कंठ सो
हैं सो तिस की प्रीति रामनाम विषे देख के प्रसन्न भये हैं ॥ ७ ॥

नामप्रभाउ जान सिव नीको । कालकूट फल दीन्ह अमी को ॥ ८

नाम के महात्म को शंकर जो भली भांति जानते हैं जाते विष अमृत सम सुखदायक भो र,
सो इस भांति से सुना है जब सुरों कर प्रेरे हुए शंकरजी बिषपान करने लगे हैं । तब रा अख्यर
कर बिष मुख मों डार लीनो पीछे मकार कहि करि मुख मूंद लिया सो राम नाम संपुटरूप हूवै के बिष
कंठ मो सोभा देनहारो अरु अमृत सम फल कारणोहारी कर रहा है ॥ ८ ॥

दोहा—बरषा रितु रघुपतिभगति, तुलसी सालि सुदास ।
रामनाम बर बरनजुग, सावन भादव मास ॥ १९ ॥

सालि कहिये धान । अपर स्पष्ट ॥ १९ ॥

आषर मधुर मनोहर दोऊ । बरन बिलोचन जन जिय जोऊ ॥ १ ॥

राम नाम के दोनों बरन मधुर हैं । जाते जिह्वा को रस देते हैं । अरु मनोहर कहिए मन को
यकाय करते हैं । अरु जिनो रिदे के दृगों कर भगवंत का स्वरूप भक्त देखते हैं । सो नेत्र मानो यह
दोनों अखर ही हैं ॥ १ ॥

सुमिरत सुलभ सुषद सब काहू । लोकलाहु परलोकनिवाहू ॥ २ ॥

केते मंत्र जाप मों कठिन होते हैं । यह अख्यर सिमिरण मो सुगम केते मंत्रों में अधिकार भेद होता
है यह सभों को सुखद है । केते मंत्र लोकसाधक होते हैं । यह दोनों लोक साधक हैं ॥ २ ॥

कहत सुनत सुमिरत सुठि नीके । रामलषन सम प्रिय तुलसी के ॥३॥

कई श्लोक बारता कथन मो सुंदर होते हैं अरु अर्थ सुंदर नहीं होता । कई काम कथा कर्णा मो
प्रिय होतिआं हैं । परंतु उत्तमो की सभा मों कथन जोग नहीं होतिआं । कई अभिचारादिकों के मंत्र
सुमिरन योग होते हैं । परंतु मन को मलीन करते हैं । फल भी नीच होता है अरु श्रीरामनाम कथन
श्रवन सुमिरनादिको सभों भांति मैं अति सुंदर है । तिस पर भी मुझ को तो यह दोनों अख्यर श्री राम
चंद्रजी अरु लछिमणजी सम प्यारे लागते हैं । जो कोउ कहै रामनाम की महिमा अरु तुम्हारी रुचि
सांची है परंतु हमारी श्रद्धा रकार मकार के फल भिन्न भिन्न श्रवण करने की है तिस पर कहिते हैं ॥३॥

बरनत बरन प्रीति बिलगाती । ब्रह्म जीव सम सहज संघाती ॥४॥

अक्षरों का फल भिन्न भिन्न कहे अपणी प्रीति मो भेद पड़ैगा। जाते कुछ न्यूनता अधिकता ..यगी ४ अरु यह भिन्न भिन्न होणेवाले नहीं ब्रह्मजीव इव सहज संगी है। ताते भी कथन उचित नहीं॥ ४॥

.यन सरिस सुभ्राता। जगपालक बिसेषि जनत्राता॥ ५॥

नारायण दोनों सदा एकत्र रहिते हैं। असुरों को मार कर जगत की रक्षा करते अरु ..रण हटाइ कर संतों की विशेष रक्षा करते हैं। तैसे रकार मकार सदा हीं एकत्र रहते कामादि असुरों से जिग्यासीवो की रख्या करते हैं। और संतों का विशेषि पालन करते हैं। जाते .न मुक्ति सुख देते हैं॥ ५॥

.सुतिय कल करनबिभूषन। जगहितहेतु बिमल बिधु पूषन॥६॥

..टा अथवा जो भक्ति रूपी युवती है तिस को सौभाग्य के चिन्हकरणफूलों सम रकार मकार हैं। ..। भक्ति इस्त्री करण पूरो मुनिरिंदव्रय:। पक्षतीर भूमि संसार सिंधौ। यह दूना वर्ण भक्ति रूपी करणफूल हैं। अरु मुनीश्वरों के मन रूपी बिहंग के दानों पख्य है। अरु संसार रूपी सिंधु ..नों किनारे हैं। जगत के सुखदेणे को दोनों अख्यर निर्मल शसि रवि सम हैं॥ ६॥

स्वाद तोष सम सुगति सुधा के। कमठ सेष सम धर बसुधा के॥७॥

तोष कहिए तृपति जैसे त्रिपित के संग हीं स्वाद रहता है। सुधाके पान के साथ हीं सुगति होती है। तैसे रकार मकार एकत्र रहते हैं। किंबा। पद अन्वै करके प्राप्ति का अध्याहार करना स्वाद कहिये रस तोष कहिये त्रिपित सुगति कहिये सुभगति इनों के देने को रकार मकार सुधा के सम है वा सुगति नाम सुष्ठ प्राप्ति का स्वाद अरु संतोष को श्रेष्ठ प्राप्ति करावणे को अमृत के तुल्य है। ननु। अक्षरार्थ ता बनता है परंतु प्रसंग को असंगत है जाते पीछे आगे दोनों अक्षरों के हैं हैं दृष्टांत है। अरु इहां क्रम टूट गया है। उत्तर। उस क्रम मे भी अर्थ बनता है। स्वाद तोष नाम स्वाद की तृप्ति रूप आनंद के देणे का इहां भी अध्याहार करणा। आनंद देने को रकार मकार सुधा अरु सुगति के सम है। दोनों अख्यर धरा के धारण को कुरमावतार अरु शेषनाग सम हैं॥ ७॥

जनमन मंजु कंज मधुकर से। जीह जसोमति हरि हलधर से॥८॥

मंज कहिए सुंदर अपर मपष्ट। जैसे जसोदा के अंङ्गन में श्री कृष्णबलभद्र बिराजते थे तब वह ग्रह सोभता था तैसे हीं देह रूपी ब्रज है जिह्वा रूपी जसुमति है मुख अंङ्गन इस्थान है। रकार मकार हरि हलधर रूप हैं। जो मुख में राम नाम होवै तो रसना सोभा पावती है॥ ८॥

दोहा—एकु छत्र एकु मुकुटमनि, सब बरननि पर जोउ।
तुलसी रघुबरनाम के, बरन बिराजत दोउ॥ २०॥

रकार छत्र के समान अख्यरों के ऊपर आवता है। अरु मकार भी अनुस्वार रूप होय कर मुकुट मनि के सम ऊपर हीं आवता है। राम नाम को छत्र मुकुट का दृष्टांत देणे मो भाव यह जैसे मानुष्य

सभ एक से हैं परंतु जिनो के सिरो पर छत्र मुकुट होवे सो महाराजा सभों कर पूजने योग होने तैसे ग्रंथ अरु मंत्र सभी हैं जिनो विषे रामनाम अधिक बरणन किया है सो सर्व कर अब नाम नामी का भेद अरु नाम रूप के फल का भेद कहिते हैं ॥ १९ ॥

समुझत सरिस नाम अरु नामी । प्रीति परसपर प्रभु अनुगामी।

राम हीं नाम अरु राम ही नामी इस प्रकार तो समुझने विषे सम हैं । अरु प्रीति । परस्पर स्वामी अरु प्रधान जैसी है । जैसे अमात्य विषे कई गुणों कर नृप की समता है । भी है तैसे हीं नाम मों दोनों गुण पाइते हैं ॥ १ ॥

नाम रूप दुइ ईसउपाधी । अकथ अनादि सुसामुझि साधी ॥२॥

नाम जपणा अरु रूप का ध्यान करणा यह दोनों करम ईश्वर के उप कहिए समीप अधि कहि प्राप्ति करावते हैं । सो दोनों की महिमा अकथ है अरु दोनों अनादि हैं । जाते उपासकों ईश्‍ नामों को नित्य मानते हैं । सो इस बात को साधलोक भली भांति जानते हैं । जो कोऊ पूछे विशेष है के रूप तिस पर कहे हैं ॥ २ ॥

को बड छोट कहत अपराधू । सुनि गुनभेद समुझिहहिं साधू ।

मैं नाम रूप को दीर्घ प्रगट नहीं कहि सकता जाते दोषभागी होता हों परंतु तिन के गुणों का भेद कहिताहौं तिस कर साधलोग लख लेवेंगे ॥ ३ ॥

देषिय रूप नामआधीना । रूपज्ञान नहिं नामबिहीना ॥ ४ ॥

किसू नर का रूप नहीं देख्या हुआ अरु वह बडे पुर में हैं परंतु उस का नाम जाणीता है तौं खोज लीता है । नाम की ज्ञात न होइ तौं नहिं मिलता ॥ ४ ॥

रूप बिसेष नामु बिनु जानें । करतलगत न परहिं पहिचानें ॥ ५ ॥

अरु जिस का रूप विशेष है अर्थ यह जैसे हाथ की तली पर धरा हुआ है रतन किंवा हस्त समीप बैठा हुआ मानव है परंतु नाम जाणे बिना उस की पछाण अरु सनमान नहीं करीता ॥ ५ ॥

सुमिरिअ नामु रूप बिनु देषें । आवत हृदय सनेह बिसेषें ॥ ६ ॥

जिस के नाम को सिमरिता हैं अरु दरसन नहीं करीता तौ भी उस को गुणो कर मिलणे हेतु प्रेम उपजता है । अब पूर्वोक्त को पुष्ट करते हैं ॥ ६ ॥ टिप्पणी—सिमरिता है = स्मरण करता है ।

नामरूपगति अकथ कहानी । समुझत सुषद न परति बषानी ॥७॥

नाम रूप की अकथ महिमा है सो समुझणे योग है कथन मो नहीं आवती ॥ ७ ॥

अगुन सगुन बिच नाम सुसाषी । उभयप्रबोधक चतुर दुभाषी ॥८॥

निर्गुण अरु सगुण मैं नामहीं साखी है साखी कहिये जिस की साख से बात सिद्ध होवै। सो निर-गुण अरु सगुण नाम द्वाराहीं जाणे जाते हैं अरु उभै कहिये अगुण सगुण तिन के प्रबोधक कहिये

...हारा नामही हैं ॥ अर्थ यह रामनामही सगुण उपासकों को दशरथात्मज का बोध करावता है
...सकों को भी रमतीतिरामः कहि कर सर्व व्यापक लखावता है याते दुभाषी है अर्थ यह
...क हैं किंवा उभय कहिये अगुण सगुण के उपासक सो तिन का आपस में विवाद
...ासक कहते हैं राम कृष्णादिक आत्मा के विवर्त है सगुणोपासक रामचंद्र कृष्ण देवको
मानते हैं निर्गुण ब्रह्म को प्रमाण नहीं करते प्रमाण बृंदाबन माहात्म्ये । अपिबृंदाबनेरम्ये
...कृति । नतुनिर्विषयंमोक्ष्यंकदाचिदपिसत्तमः । बृंदाबन में गीदर बनकर बिचरिये तौ भी परम
...ह सून पाथरवत शोबरण रूप जोज्ञानिवों की मुक्ति है सो किसू काम की नहीं तब यह दोनो का
...म चतुर दुभाषिए सम है अभेद वादिवों को इस भांत समुभावता है सर्वज्ञ जो सर्वात्मा हैं
...ई भक्तवतसलता कर रामचंद्र कृष्णादेव सरूप धार कर प्रगटेया है अरु तुम सरब जीवों कों परब्रह्म
...ने हो तौ अवतारो मो भी आतम भावही करो निषेध ना करो । अरु सगुणोपासकों को समुभावता
... तुम रामचन्द्र कृष्णादेव को प्रच्छिन मानोगे तौ हर्ष सोकादिक अनेक द्वंद तिनो विषे आवैंगे अरु
...खित होवोगे जो जिन का उपास्य जनमादिकों का भागी हुआ तौ उपासक दुखों से कैसे तरैंगे ।
तुम उपासना अपने इष्टकी ही करो परंतु तिन को सर्व व्यापक समष्ट जान कर पूजो जब दोनो
...ोध होता है तत्व यह विवाद अज्ञात में था जब नाम के बारंबार जपण कर मन शुद्ध भया तब
अगुणसगुण को अभेद जानकर विवाद मिटगया अब और युक्तकर रामनाम साखी सिद्ध करते हैं ॥ ८ ॥

दोहा—रामनाम मनिदीप धरु, जीह देहरी द्वार ।
तुलसी भीतर बाहरे, जो चाहसि उजियार ॥ २१ ॥

श्रीरामचंद्रजी का नाम रूप मणिमै दीपक है अर्थ यह स्वप्रकाश अरु विघ्न रहित है तिस को जिह्वा रूपी देहरी मैं धरे से अपणे रिदें को बिबेक रूपी प्रकाशहोइगा अरु स्रोता भी पवित्र होहिंगे किंच । बाहर भीतर कहिए व्यवहार परमार्थ तिन दोनों की यथार्थ ज्ञात होइगी । अब गोस्वामीजी गीता के अनुसार चार प्रकार के भक्त बरणन करते हैं । आर्तोजिज्ञासुरर्थार्थी ज्ञानी च भरतर्षभः ॥ इहां जिज्ञासू के स्थान योगी कहेंगे ॥ २१ ॥

नाम जीह जपि जागहिं जोगी । बिरति बिरंचिप्रपंच बियोगी ॥ १ ॥

बैराग के बल कर बिरंच का प्रपंच कहिये विषे सुख सो जिनो ने त्यागे हैं अरु स्वरूप मो जुड़ने की इच्छा करी है ते योगी नाम के जाप करहीं जागते हैं कहिये ज्ञातज्ञ होते हैं ॥ १ ॥

ब्रह्मसुखहिं अनुभवहिं अनूपा । अकथ अनामय नाम न रूपा ॥ २॥

अर्थ अरु अनामै आदिकों बिशेषणों संजुत जो ब्रह्मसुख है वह योगी तिस को पावते हैं ॥ २ ॥

जानी चहहिं गूढ गति जेऊ । नाम जीह जपि जानहिं तेऊ ॥ ३ ॥

गूढ गति कहिये जीवन मुक्ति तिस को जो जानी कहिये ज्ञानी चाहते हैं सो नाम जपणे के प्रसाद करहीं जानते कहिये पावते हैं ॥ ३ ॥

साधक नाम जपहिं लय लाए । होहिं सिद्ध अनिमादिक पा'

साधक कहिये अर्थार्थी वह भी नाम जप कर अणिमादिकों को पाय कर सिद्ध होते हैं

जपहिं नामु जन आरत भारी । मिटहिं कुसंकट होहिं सुखारी

आरत कहिए दुखी तिनो के बडे संकट भी नाम जपणा करहीं मिटते हैं ॥ ५ ॥

रामभगत जग चारि प्रकारा । सुकृती चारिउ अनघ उदारा

चहू चतुर कहुं नाम अधारा । ज्ञानी प्रभुहि बिसेषि पिआरा

श्रीरामचंद्र के भक्त सभी सुकृती अरु निष्पाप अरु उदार अरु चतुर है परंतु ज्ञानी परम प्यारा है । जाते सर्वात्मा द्रिष्ट भएहूं भजन मों प्रीति करता है । अब कलि मो नाम की बिशेषता कहते हैं॥७

चहुं जुग चहुं श्रुति नामप्रभाऊ । कलि बिसेषि नहिं आन उपाऊ ॥

सरबजुगो अरु सरब वेदों में नाम की महिमा है परंतु कलू में विशेषि है जातें जीवों से जोग ' दिक उपाव नहीं हो सकते ॥ ८ ॥

दोहा—सकल कामनाहीन जे, रामभगतिरसलीन ।

नाम सुप्रेमपीयूषहृद, तिन्हहुँ किए मन मीन ॥ २२ ॥

श्रीरामचंद्रजी की भक्ति का रस लिवै निमित्त जो पुरुष सरब कामना ते रहित भए हैं । तिनों ने नाम के प्रेमरूपी अमृत रस विषे अपणे मन मीनोवत निवसाए हैं अब निर्गुण सगुण से नाम की महिमा अधिक कहिते हैं ॥ २२ ॥

अगुन सगुन दोउ ब्रह्मसरूपा । अकथ अनादि अगाध अनूपा ॥ १ ॥

मोरें मत बड नामु दुहूं तें । किय जेहि जुग निजवस निजबूतें ॥२॥

परमात्मा के निर्गुण अरु सगुण जो है स्वरूप है सो दोनोहीं अकथ अरु अनादि अरु अनंत अरु अनूपम हैं तिस पर मैं तो दुहुं से नाम को श्रेष्ठ जानता हौं । जाते नाम के अभ्यास कर दोनो वस होते कहिये दोनों की प्राप्ति होती है । जो कोऊ कहै दोनो का स्वरूप क्या अरु दोनों से नाम की विशेषता किस भांति है तिस निमित्त संतों के रिदैं को अगाधता अरु सुमति अनुसार द्रष्टांत पूरबक अगुण सगुण का स्वरूप अरु दोनों से नाम की अधिकता दिखावते हैं ।॥ २ ॥

प्रौढ सुजन जन जानहिं जन की । कहउं प्रतीति प्रीति रुचि मन की ॥३॥

प्रौढ सुजन कहिये परम विवेकी संत जैसे निर्गुण सगुण का रूप तिनो निश्चै किया है । तिस को तो वही जानते हैं अरु जैसे मेरे मन मों प्रतीति कहिये निश्चै भया है अरु जैसी मुझ कों उनो विषे प्रीति है सो अपणी रुच उमगी अनुसार कहिता हौं ॥ ३

एकु दारुगत देखिअ एकू । पावक सम जुग ब्रह्मबिबेकू ॥ ४ ॥

जैसे एक अगनि काष्ट के बीच है अरु एक प्रगट है तैसे निर्गुण ब्रह्म सर्व व्यापक है सगुन प्रगट है ॥४॥

॰गम जुग सुगम नाम तें। कहेउ नामु बड ब्रह्म राम तें ॥५॥

॰ग दोनों की प्राप्ति असंभव है अरु नाम जप कर दोनों का पावन सुखेन होता है। इस ॰ाम बिशेष है दोनों ते अब नाम की महिमा षटहुं चरनहूं कर ब्रह्म से बडी कहते हैं॥५॥

॰ एकु ब्रह्म अबिनासी। सत चेतन घन आनंदरासी ॥ ६ ॥

॰भु हृदय अछत अबिकारी। सकल जीव जग दीन दुषारी ॥ ७ ॥

॰आदिक जिस के अनेक बिशेषण हैं ऐसे अविकारी प्रभु के रिदै मद्दं होते भी अनंत जीव दीन अरु दुखी हैं जाते उस स्वरूप को जान नहीं सकते तिन के दुख मिटावणे का उपाय कहते हैं ॥ ७ ॥

नाम निरूपन नाम जतन तें। सोउ प्रगटत जिमि मोल रतन तें ॥८॥

राम के कथन कर अरु नाम के अभ्यास कर सो अगुण आत्मा ऐसे प्रगट होता है जैसे मोल ॰तन तत्व य॰ रतन किसी गुह्य इस्थल में भी होइ परंतु जो कोउ मोल लेकर जावे तिस को प्रगट ॰ता है ॥ ८ ॥ टिप्पणी—इस्थल का शुद्ध शब्द स्थल है।

दोहा—निरगुन तें इहि भांति बड, नामप्रभाउ अपार।
कहउं नामु बड राम ते, निजबिचारअनुसार ॥ २३ ॥

नाम का जो अपार प्रभाव है सो निर्गुनब्रह्म से इस भांति बडा कहा है अब रामचंद्र के नाम को बिशेष कहता हों अपणी मति अनुसार तत्व यह जो निर्गुन है जो सगुन है जो नाम है सो सरब वेदों कर बरणन करिते हैं। किसी के कहे से छोटे बडे नहीं होते परंतु मुझ को नाम के जपण करहिं सरब सुखों की प्राप्ति भई है ताते मैं नाम को ही बडा कहता हों। अरु इसी मिस इन चौपाइयहुं मों ग्रंथ का सूचीपत्र कहता हों ॥ २३ ॥

राम भगत हित नर तनुधारी। सहि संकट किय साधु सुषारी ॥१॥
नामु सप्रेम जपत अनयासा। भगत होहिं मुदमंगलबासा ॥ २ ॥

रामचंद्रजी ने मानुष देहधारया अरु बाल अवस्था मो माता भो भैआदिक अरु युवा अवस्था मो बनवासादिक संकट सहारया तब संतों को सुखी किया अरु नाम ऐसे कष्टो बिना ही जापकों को सुखी करता है ॥ २ ॥

रिषि हित राम सुकेतुसुता की। सहित सेनसुत कीन्हि बिबाकी ॥३॥

सुकेत नामे जख्य की बेटी जो ताडिका है सुबाहु मारीच नामे पुत्र अरु सेना सहित बिश्वामित्रजी के प्रेम निमित्त श्रीरामचंद्रजी ने युद्ध करके तिन का नाश किया ॥ ३ ॥ टिप्पणी—जख्य=यक्ष।

सहित दोष दुष दास सुरासा। दलइ नाम जिमि रबि निसि नासा ॥४॥

दोष अरु दुख रूपी जाके सुत हैं ऐसी जो दुराशा रूपी ताडिका है दासहूं की रख्या निमित्त तिस को नाम ऐसे निरयत्न बिडारता है जैसे निशा को रबि की निवृत्त करैं ॥ ४ ॥

राम एक तापस तिय तारी । नाम कोटि षल कुमति सुधारि

तापस तिय कहिये अहिल्या । अपर सपष्ट ॥ ५ ॥

भंजेउ राम आपु भवचापू । भवभयभंजन नामप्रतापू

दंडक बन प्रभु कीन्ह सुहावन । जनमन अमित नाम किये पाव

निसिचरनिकर दले रघुनंदन । नामु सकलकलिकलुषनिकंदन

निश्चर निकर कहिये खरदूषन आदिक रघुनाथजी ने मारे तौ भी सर्बे राख्यस नास न भए जपे से भक्तों के सर्ब पाप नास होते हैं ॥ ८ ॥

दोहा—सबरी गीध सुसेवकनि, सुगति दीन्हि रघुनाथ ।
नाम उधारे अमित षल, बेदबिदित गुनगाथ ॥ २४ ॥

इहां सिबरी गीध का नाम आगे पीछे छंद हेत है ॥ २४ ॥

राम सुकंठ बिभीषन दोऊ । राषे सरन जान सब कोऊ ॥
नाम गरीब अनेक नेवाजे । लोक बेद बर बिरद बिराजे ॥ २ ॥
राम भालुकपिकटकु बटोरा । सेतु हेतु श्रम कीन्ह न थोरा ॥ ३ ॥
नाम लेत भवसिंधु सुषाहीं । करहु बिचार सुजन मन माहीं ॥ ४ ॥

श्री रामचंद्रजी सेत बांधण हेतु रिछों बानरों का कटक एकट्ठा कर के बडे यतन सो सिंध उतरे अरु नाम के जपणमात्र कर भवउदधि का अभाव ह्वै जाता है । तो हे संतजनो तुम अपने मन मों बिचारि देखो रामचंद्र ते नाम बिशेष है कै नहीं ॥ ४ ॥

राम सकुल रन रावनु मारा । सीय सहित निज पुर पगु धारा ॥ ५ ॥
राजा रामु अवध रजधानी । गावत गुन सुर मुनि बर बानी ॥ ६ ॥
सेवक सुमिरत नामु सप्रीती । बिनु श्रम प्रबल मोह दलु जीती ॥ ७ ॥
फिरत सनेहमगन सुष अपने । नाम प्रसाद सोच नहिं सपने ॥ ८ ॥

इहां रामचरित्र का संखेप समाप्ति हुआ ॥ ८ ॥

दोहा—ब्रह्म राम तें नामु बड, बरदायक बरदानि ।
रामचरित सत कोटि महँ, लिये महेस जिय जानि ॥ २५ ॥

ब्रह्म ते अरु रामचंद्र ते भी नाम की महिमा बडी है अरु श्रेष्ठ दान रूपी बरो को देनेहारा है किंवा जो बरदेते हैं तिन को भी बरों की शक्तिदाता नाम हीं है शंकरजी ने भी अपने जी सो रामनाम को श्रेष्ठ जान कर सतकोटि ग्रंथ से रामनाम ही लिया है । सो लेने का प्रकार इस भांति है ब्रह्माजी ने

यण बनाइ के परिख्या निमित्त शंकरजी के पास पठाया तब देवता दैत्य मानुष्य त्रिलोका-
ी के पास आए अरु कहा यह रामायण हम को देवो जाते। चरितंरघुनाथस्य सतकोटि
एकैकमक्षरंपुसांमहापातकनाशनं ॥ तब महादेवजी ने कहा यह ग्रंथ तुम तीनौं को बाट
व तामे तेतिस तेतिस कोटि ग्रंथ विभाग कर दिय। एक कोटि रहा ताको इसी भांति लाखों का
ग एक लख रहा तौ सहस्रो कां बितरेक किया तब एक सहस्र रहा तब तीन तीन सत
ग। तब एक सत रहा तब तेतिस तेतिस श्लोक बांटे एक श्लोक रहा सो छप्पन अख्यर का वसंत
द था अरु सं उस के सोगुरु लघु अख्यर थे तिस का स्वरूप यह। इत्युक्तवत्यथमुनोदिवसोजगाम।
के शंकर जी ने तोन बिभाग किए तब दोइ अख्यर बचे सो रामनाम तब महादेव ने कहा
दोइ है तुम तीन हो बिभाग पूरण नहीं होता अरु यह अख्यर भिन्न भिन्न होनेवाला नहीं अरु
बांटे तिस पहं भी कुछ रहा चाहिता है ताते यह दो अख्यर मैं लेता हों जो कोऊ कहै सतकोटि
बालमीकजी उक्त सुना है तुम बिधि क्रत कैसे कहते हो तिस पर प्रमाण। मात्ये बालमीक नांच-
क्तं रामोपाख्यानमुत्तमं। ब्रह्मणाचोदितंतच्च सतकोटिप्रबिस्तरं ॥ आहृतनारदेनैवबालमीकायनि-
॥१॥ जो रामचरित्र उत्तम बालमीकजी ने कहा सो रामचरित पूरब काल बिषे सतकोट श्लोक कर
आजी ने कहा था ब्रह्मलोक से ल्याइ कर नारदजी बालमीकजी ताईं देते भए ॥ २५ ॥

नामप्रसाद संभु अविनासी। साजु अमंगल मंगलरासी ॥ १ ॥

तिस नाम के प्रसाद शंकर जी बिष खाइकै भी अविनासी भए हैं अरु मुंडादिक अपावन वेष धार कै भी महा मंगल रूप हैं ॥ १ ॥

सुक सनकादि सिद्ध मुनि जोगी। नामप्रसाद ब्रह्मसुख भोगी ॥ २ ॥

नाम के अभ्यास कर मन विमल हुआ तब आतम अपरोख्य भया ताते सदा निर्विकल्प सुख मैं इस्थित रहते हैं ॥ २ ॥

नारद जानेउ नामप्रतापू। जगप्रिय हरि हर हरिप्रिय आपू ॥ ३ ॥

सर्व जगत के प्यारे विष्णु शिव हैं अरु नाम के प्रसाद कर तिनो के प्यारा नारद है ॥३ ॥

नाम जपत प्रभु कीन्ह प्रसादू। भगत सिरोमनि भे प्रहलादू ॥ ४ ॥

ध्रुव सगलानि जपेउ हरिनाऊं। पाएउ अचल अनूपम ठाऊं ॥ ५ ॥

सगिलानि कहिये माता के तृसकार दुखित हुआ जो ध्रुव है तिस ने नाम जप कर अचल अरु अनूपम पद पाइया ॥ ५ ॥

सुमिरि पवनसुत पावन नामू। अपने बस करि राखेउ रामू ॥ ६ ॥

अपरु अजामिल गजु गनिकाऊ। भये मुकुत हरिनामप्रभाऊ ॥ ७ ॥

कहउं कहां लगि नामबडाई। रामु न सकहि नामगुन गाई ॥ ८ ॥

औरों की क्या बात है नाम की महिमा श्रीरामचंद्र भी नहीं कहि सकते तत्व यह ना.. हैं अरु ब्रह्म विभंत हैं ताते नाम की महिमा कौन जानै ॥ ८ ॥

दोहा—नाम राम को कलपतरु, कलि कल्याननिवासु ।
जो सुमिरत भयो भांग ते, तुलसी तुलसो दासु ॥ २

कलि विषे कल्यान देने को नाम कल्पतरु सम है जिस को सुमिरि कर मैं भांग ते तुलसी तत्व यह भांग अरु तुलसी की मंजरी एक सी होती है । परंतु वह अपावन है अरु यह पावन है ते.. रूप तो मैरा संतो ही जैसा था परंतु करम मलीन थे अब रामनाम के प्रभाव कर निर्मल भयाहं। इस काल मो अरु केवल मैं ही नाम जप कर पवित्र नहीं भया ॥ २६ ॥

चहु युग तीनि काल तिहुं लोका । भये नाम जपि जीव बिसोका ॥१॥

तीन काल अरु चार जुग में पुनिरुक्ति नहीं जाननी जाते तीन काल अलप समे मो भी होता है . अपर सपष्ट ॥ १ ॥

बेद पुरान संत मत एहू । सकलसुकृतफल रामसनेहू ॥ २ ॥

अब कलजुग मों केवल नाम की मुख्यता कहते हैं ॥ २

ध्यानु प्रथम जुग मखविधि दूजे । द्वापर परितोषत प्रभु पूजे ॥३॥
कलि केवल मलमूल मलीना । पापपयोनिधि जनमन मीना ॥ ४ ॥

सतयुग मो ध्यान की मुख्यता थी परंतु तिस मों भी उग्रंसोहं नाम जपते थे त्रेते मों यज्ञों की मुख्यता थी तिस मों भी नृप ब्रह्मचर्य कर के नाम जपते रहते थे द्वापर में पूजा की प्रधानता थी तहां भी नाम सुमिरन करिता था कलयुग महा पापों का मूल है अरु सर्व जीवों को मलीन करनेहारा है अथवा कलि केवल मल रूप है अरु मूल इस का घोरतमोगुण है सो महा मलीन है इस में पापों के समुद्र हैं अरु जीवों के मन मीनो सम हो रहे हैं जो कबहुं विषयों से निकसते नहीं अरु योग यज्ञादिक करने कठिन है ताते ॥ ४ ॥

नाम कामतरु काल कराला । सुमिरत समन सकल जगजाला ॥५॥

जीवों के कल्यान निमित्त इस कराल समै में केवल नाम ही कल्पवृक्ष सम है जैसे वह सेवेया हुआ दरिद्र को दूर करता है तैसे नाम सुमरेया हुआ जनम मरन को नास करता है ॥ ५ ॥

रामनाम कलि अभिमतदाता । हित परलोक लोक पितु माता ॥६॥

अभिमत कहिये बांछत अपर सपष्ट ॥ ६ ॥

नहि कलि करम न भगतिबिबेकू । रामनामअवलंबन एकू ॥ ७ ॥

कलि मो यज्ञ के अंग होणे कठिन है ताते कर्म नही हो सकते अरु नवधा प्रेमापरा आदिक भगति के अनेक भेद हैं । सोपि बिधिवत नहीं होते अरु संमदमादिकों साधनो द्वारा साख्यात ज्ञान भी

.हीं हो सकता ताते केवल रामनाम का आश्रय है जो कोऊ कहै कलिनाम पर भी बिघ्न
(स पर कहते हैं ॥ ७ ॥

'नेमि कलि कपटनिधानू। नाम सुमति समरथ हनुमानू ॥८॥

युग कालनेम के सम महा छली है अरु नाम भली मतवाले बड़े बलवाले हनुमान सम हैं
?र उस के छलसो न आवै अरु बल कर ताकै तन को घावे ॥ ८ ॥

दोहा—राम नाम नरकेसरी, कनककसिपु कलिकाल।
जापक जनप्रह्लाद जिमि, राखहि दलि सुरसाल ॥२७॥

रामनाम नरसिंह सम हैं अरु कलयुग हिरणकस्यप सम महा बली है अरु प्रह्लाद की सहायता
निमित्त नरहरि ने सुरन के सालणहारे दितपुत्रों को मार्‍या था तैस हीं आपणे जापकों की रख्या
निमित्त संतों का दुखदायक जो कलि है महा मोह रूप तिस को रामनाम नास करता है। इहां नाम
महातम समाप्त भया। अबद्वै चरनों मो नाम जपण का सार रूप फल कहि के कथा प्रसंग कथन निमित्त
और बिनती करते हैं ॥ २७ ॥

भाय कुभाय अनष आलस हूं। नाम जपत मंगल दिसि दस हूं ॥१॥

सदभाव कर वा कामादिक भाव कर अथवा विरोध कर आलस कर भी नाम जपे से सभ उपद्रो
मिटते हैं ॥ १ ॥

सुमि[illegible] सो नाम रामगुनगाथा। करौं नाइ रघुनाथहिं माथा ॥ २ ॥

जिस का ऐसा प्रभाव है सो रामनाम जप के अरु नामी जो रघुनाथजी हैं तिन को प्रणाम कर कै
तिन के गुणानुवाद बरनन करता हों जो कोऊ कहै तुम मलीन मत साथ प्रभों के गुण कैसे बरनन
करेगा तिस पर कहते हैं ॥ २ ॥

मोरि सुधारहि सो सब भाँती। जासु कृपा नहि कृपा अघाँती ॥३॥

सो प्रभु मेरी बानी को सभ भांति सुधारेंगे जिस पर कृपा करते हैं तिस पर कृपा अघावती नहीं तत्व
यह सदा कृपा हाती रहती है ॥ ३

राम सुस्वामि कुसेवकु मोसो। निज दिसि देषि दयानिधि पोसो ॥४॥

रघुनाथजी उत्तम स्वामी हैं जिनो जैसा स्वामी और कोऊ नहीं अरु मैं कुसेवक हों अर्थ यह जिस
कों सेवा का भी श्रेष्ठ प्रकार नहीं आवता परंतु प्रभु अपने बिरद की अरु मेरी प्रीति ओर देख कै मुझे
पालेंगे जो कोऊ कहै रघुनाथजी तेरी प्रीति को किस भांति पछानेंगे तिस पर कहते हैं ॥ ४ ॥

लोकहुं बेद सुसाहिब रीती। बिनय सुनत पहिचानत प्रीती ॥ ५ ॥

लोक बेद में ऐसे कहा है उत्तमो स्वामियों की रीति है सभों लोको की बिनै सुनकर उन की प्रीत
को पछाणते हैं तिन लोगों के नाम कहते हैं ॥ ५ ॥

गनी गरीब ग्राम्य नर नागर । पंडित मूढ मलीन उजागर ॥
सुकबि कुकबि निजमतिअनुहारी । नृपहि सराहत सब नर न

गनी कहिये धनी गरीब कहिये रंक ग्राम्य कहिये स्थूलबुद्धि नागर कहिये चतुर इ सराहन की भांत कहते हैं ॥ ७ ॥

साधु सुजान सुसील नृपाला । ईसअंसभव परम कृपाला
सुनि सनमानहिँ सबहि सुबानी । भनित भगति मति गति पहिचानि

साधु सुजानादिक विशेषण सुनि के सनमान तो नृप सब का करता है परंतु भनित भगति जो बाणी चित की प्रीति से है अरु मेरी वोर से प्रसन्न हैं सो सांची कहते हैं अरु जो लोगों ... अभिप्राय लखणे तों मानुषी राज्यों से भी हो सकते हैं अरु रामचंद्र तौ ज्ञानियों के सिरोमनि हैं वा कपटी हैं कै मेरी वोर से दुखी हैं सो झूठ बोलते हैं ॥८॥ टिप्पणी—पाठांतर नति भी है। मानसप्रचारिका में निम्नलिखित अर्थ लिखा है । ए जो चारिगुण राजा में हैं सो यही गुणन से सब की बिनय सुनि कै अपनी सुष्टुबाणी से सब को सनमान करत हैं जो पूर्व दश कहि आये हैं सो उनहीं में किसू को भनितद्वार किसू की भक्ति द्वार किसू की मतिद्वार किसू की गतिद्वार हूं करि आपने में प्रीति पहिचान सन्मानत हैं किसको भनित किसको भक्ति किसकी मति किस को गति तहां सुनो सुकवि पंडित को भनित वो गनी नागर की भक्ति वो उजागर की मति वो गरीब वो गवांर मूर्ख मलीन कुकवि इन पांच की गति तहां सुकवि वो पंडित अच्छी कविताई श्लोक बनाइ राजा की सेवा करते हैं यह भनित है वो गनि जो धनवान् सो धनदेइ करि वो नरनागर जो चतुर सो चतुराई से राजा को देश कोश को कार्य करि सेवा करत है सो भक्ति वो उजागर जो कुलवान् क्रियावान सो राजा को उत्तम मति सिखाइ करि सेवा करत है यह मति वो गरीबादि पांच जो हैं सो अपनी गति जो दशा सो निवेदन करि राजा की सेवा करते हैं यह गति है तहां दश जो हैं सो चारि क्रिया से राजा की सेवा करते हैं वो राजा में जो चारिगुण हैं सो एक एक गुण से एक एक क्रिया को पालत है कौन गुण से कौन क्रिया को पालत है तहां सुनो सुजान गुण से भनित क्रिया को वा साधुगुण से भक्ति क्रिया वो शीलगुण से मति क्रिया वो कृपालु गुण से गति क्रिया ।

यह प्राकृतमहिपालसुभाऊ । जानि सिरोमनि कोसलराऊ ॥ १० ॥

इस प्रकार को रिदें की प्रीति कैसे न जानेंगे सोई स्पष्ट दिखावते हैं ॥ १० ॥ टिप्पणी—मानसप्रचारिका में निम्न लिखित अर्थ लिखा है । देखिये तो इतना स्वभाव प्राकृत महिपालन में है तो जान शिरोमणि कोशल राउ में न जाने कितना स्वभाव होइगो जो प्राकृत राजा प्राकृती के चारि गुण से गरीबादिका पालन पोषन करते हैं कछू जाननहीं है जान जिस को अपने स्वरूप का ज्ञान होइ सो बि... कहे सब के मन की जान लेत हैं तो कोशलराउ महाराज तो जान को कहे जान जो हैं ब्रह्मा शिवादि तिनहूं के शिरोमणि हैं तो हम सरीखे कुसेवकन का क्यों न पालन पोषण करेंगे जरूर करेंगे

कि श्रीरामचन्द्र महाराज के राज्य में गनी को है अष्टलोकपाल वो नागर सरस्वती गणेश वो
ति वो उजागर ब्रह्मा अपने दशों पुत्रन के सहित वो सुक सुकवि शुक्र व्यास बाल्मीक वो
गोस्वामी जी कहते हैं कि हम सरीखे जिन को कछु आवत नहीं केवल श्रीरामचन्द्र
गति है सो श्रीरामचन्द्र हमारा सब प्रकार से पालन पोषण करेंगे।

रामसनेह निसोतें। को जग मंद मलिन मति मो तें॥११॥

श्रीरामचंद्र निसोते सनेह कहिये निर्मल प्रेम पर प्रसन्न नहीं होते तो मेरे से मंद अरु मलीन
कौन था॥११॥

हा—सठ सेवक की प्रीति रुचि, रखिहहिं राम कृपालु।
उपल किये जलजान जेहिं, सचिव सुमति कपि भालु॥

मेरे जैसे सठों सेवकों की प्रीति अरु रुचि रघुनाथजी राखहिंगे किंवा रखते हैं जाते कृपालु हैं जिनों
ने पाखाणों को जहाज बनाया अरु कपों भालों को धी मति मंत्री किया तो पाखाणों को पूरब जनमहूं
की अरु कपों की इस जनम की भी प्रीतिही लीनी॥

हौंहु कहावत सबु कहत, राम सहत उपहास।
साहिब सीतानाथ सों, सेवक तुलसीदास॥२८॥

मैं श्रीरामचंद्रजी का भी सेवक कहावता हौं अरु लोक भी कहिते हैं सो लोक हांस पूर्बक कहिते हैं
जो ऐसे कुटिल भी रघुबीरजी के सेवक हैं परंतु सीतानाथ ऐसे कृपालु साहिब हैं लोकों का उपहांस
सहार कर भी मेरे पर कृपा करते हैं अब इसी कों विस्तार कर कहिते हैं॥२८॥

अतिबडि मोरि ढिठाई खोरी। सुनि अघ नरकहुँ नाक संकोरी॥१॥
समुझि सहम मोहि अपडर अपने। सो सुधि राम कीन्हि नहि सपने॥२॥

अति में बडे जो मेरे दोष अरु ढीठता है जिस को सुनि नरक ने भी मुझ सों गलानि करी तिस
अपने डर कहिये अपनी खोटी गति के त्रास को समुझि के निश्चै कर बडा भै भया परंतु जब मैं श्री
रामचंद्रजी की सरण आया तब पतित पावन ने मेरे दोषों की सुध स्वप्न में भी ना करी॥२॥

सुनि अवलोकि सुचित चष चाहि। भगति मोरि मति स्वामि सराही॥३॥

कईएक इस का अर्थ करते हैं यह बात सुनी है देखी है अरु चित के नेत्रों से भी चाही कहिये
देखी है अरु मेरी मति मों भी एही आवति है मेरी भक्ति को स्वामी सराहतेहैं परंतु यह वाक्य कहे
पुन्य नाश होते हैं अरु प्रभु भी जनों की अंतर प्रीति परही रीझते हैं अरु कई लोग इस भांतिभी अर्थ
करते हैं रघुनाथजी सुनि कर अरु देखि कर अरु चित के दृगों से चाह कर भी मेरी मति अरु भक्ति को
सराहिया है सो प्रथम अर्थ करे आत्म प्रसंसन अरु वदतोव्याघात आवता है अरु दुतीय अर्थ करे यह
दोष है रामचंद्र का तो निरावरण ज्ञान है तिनका एक बेर साधारण देखणा दुतीय बेर चित्त सो देखणा

कैसे बखे ताते इस का अर्थ गोसांई जो कर प्रेरे हुए जैसे मन मों आया सो कहते हैं यह बात सु॰
गुरों शास्त्रों से अरु विलोकी है धन्नें मीराबाई आदिकों की जो प्रभु सुचित चखचाही है अर्थ अ॰ १
जो चित्त के नेत्र हैं तिनके चाहणेहारे हैं तत्व यह प्रभु भक्तों की ध्यान परायणता को ग्रहण
अरु मेरी मति विषै भी ऐसेही आवता है स्वामी रिदे की प्रीतिवारे भक्तों को ही सराहते हैं
पाठ का अर्थ भक्ति कहिये जिन को अनन्य प्रीति है अरु भोरि मति कहिये संसार की उर से
भोली बुद्धि है तिन की प्रीति स्वामी ने सराही है ॥ ३ ॥

कहत नसाइ होइहि हियनीकी । रीझत राम जानि जन जी की

नसाइ कहि ऐसी बात वह संतजन कहिते नहीं जो हमको स्वामी सराहताहता है सो इस नि
नहीं कहते अपने सुख का रिदें विषें राखणाही नीका है इस में गंभीरता सिद्ध होती है अरु ति॰
के रिदें की अननता अरु गंभीरता जान कर तिन पर प्रभु प्रसन्न होते हैं अरु ॥ ४ ॥

रहति न प्रभुचित चूक किये की । करत सुरति सय बार हिए की ॥५॥

ऐसे भक्तों से जो कोऊ चूक भी हुवै जावै तौ स्वामी सिम्रित नहीं करते अरु आगे अनेक प्रकार कर
तिन की रिदें की सुरति राखते हैं जो बहुर कोई अवज्ञा इन से न होवै इस प्रमाण रूप कर सुग्रीव
अरु विभीषण की भक्ति अरु भोरि मति पर प्रभों की कृपा दिखावते हैं ॥५॥ टिप्पणी—सिम्रित = स्मरण ।

जेहि अघ बधेउ व्याध इव बाली । फिरिसु कंठ सोइ किन्हि कुचाली ॥६॥
सोइ करतूति बिभीषन केरी । सपनेहु सो न राम हिय हेरी ॥७॥
ते भरतहि भेंटत सनमानें । राजसभा रघुबीर बखानें ॥८॥

जिस अनुजबधूगमन के पाप को बिचार कर प्रभों ने बाली को मारा था तदनंतर सुग्रीव ने भी
अग्रजबधूरमन रूपी दोष किया अरु विभीषण ने भी किया परंतु तिन का अपराध रंचक भर भी
प्रभों ने ना विचारिया प्रत्युत भरत के कंठ तिन को मिलाइ कर राजसभा मों गुरो के सन्मुख
तिन का बडा सनमान किया जिस निमित्त तिन पर एती कृपा करी तिस भक्ति अरु भोली
मति का स्वरूप तिनो विषे यह जब रघुनाथजी ने सुग्रीव प्रति कहा तू बाली प्रति जुद्ध कर तब जो वह
लौकिक कर ध्यान धकरता तों जानता यह द्वै तपस्वी माता पिता के निकासे हुए अपनी इस्त्री के विरह
से रुदन करते हैं इनों ने मेरा कारज क्या संवारणा है जद्यपि सप्तताल भेदन कर बल की परिख्या
करी थी तथापि बाल सों संग्राम करि मैं मारया गया तो तिन की सहाइता कों कहां खोजोंगा इह व्यवहार
की द्रिष्टता करी ताते भोली बुद्धि कही ऐसे जाना यह श्रीरामचंद्र सर्व शक्ति परमेश्वर हैं जो यह कहैं
सोइ कर्तव्य है ताते रिदें की सांची प्रीति भई तैसेही विभीषण का जब दसकंठ ने तिरसकार करा तब
वोह जो विचारता रावण को इन्द्रादिक भित्योंवत सेवा करते हैं। अरु इस के प्रसाद ते मैं जन्म भरि
अह्लाद करता रहा हों ऐसे भ्रात का अब युद्ध समै में त्याग कर दासरथी को मिलों जिस के साथ
कपि कटक है तब मुझे कवन भला कहैगा अरु यह भी संदेह था जो रावण का भ्रात जाणकर मुझे

चंद्र राखैंगे की नहीं सो मिथ्यानय ना करी ताते भोरी मति कही अरु यह जाराया श्रीरामचंद्र कोटि ... के नायक हैं तिनकी सरण मोही मेरा कल्याण है यह सांची प्रीति भई अरु दोनों निर अभिमान ... मों तत्पर रहे तब स्वामी ने तिन की प्रीति सराही अरु कृपा करी और इस की पुष्टता ... ८॥

दो०— प्रभु तरुतर कपि डार पर, ते किये आपु समान ।
तुलसी कहूं न राम से, साहिब सीलनिधान ॥

प्रभु तरों के तले बैठते हैं अरु कपिडारों पर चढके बैठते हैं तो भी कृपालु कपों को दास जानि ... न कृत अपमान न मानते भए अथवा तरों में तर कहिये श्रेष्ठ सो बावन चंदन तिस सम रघुनाथ हैं अरु डार पर नाम आक का दरूगण मों कहते हैं तिस सम कपि थे तिन को अपने सम कर लिया ऐसा शीलनिधि स्वामी और कोउ नहीं ॥

राम निकाई रावरी, है सबही को नीक ।
जौं यह सांची है सदा, तौं नीको तुलसीक ॥

हे रामचंद्र रावरी निकाइ कहिये तुमारी भलाई कर अर्थ यह जो तुमारी कृपा कर सभ को भला होता है यह बात सांची है तो मैं भी कृतार्थ होवोंगा तत्व यह हमारे कर्म कृतार्थ करण योग्य नहीं तुमारे आसे सद्गति होवेगी।

एहि बिधि निज गुन दोष कहि, सबहि बहुरि सिर नाइ।
बरनउं रघुबर बिसद जसु, सुनि कलिकलुष नसाइ ॥२९॥

एहि विधि कहिए पूर्वोक्त आपणा मों श्री रामचंद्रजी की अनन्य सरणरूपी गुण अरु और सभ दोष कहे अरु सभों को एकठा प्रणाम करके श्रीरामचंद्रजी का निर्मल जस कहता हों जिस कर सरब पाप नाश होवे। अब श्रीरामचरित की उथानका बांधते हैं॥ २९॥

जागबलिक जो कथा सुहाई। भरद्वाज मुनिबरहिं सुनाई ॥१॥
कहिहौं सोइ संबाद बषानी। सुनहु सकल सज्जन सुषु मानी ॥२॥

जो कथा याज्ञवल्किजी ने भरद्वाज प्रति कही है सो मैं कहोंगा सकल संत सुनो जो कोउ कहै प्रथम कर्त्ता इस का याज्ञवल्कि ही हैं तिस निमित्त कहते हैं॥ २॥

संभु कीन्ह यह चरित सुहावा। बहुरि कृपा करि उमहि सुनावा ॥३॥
सोइ सिव कागभुसुंडिहि दीन्हा। रामभगत अधिकारी चीन्हा ॥४॥
तेहि सन जागबलिक पुनि पावा। तिन्ह पुनि भरद्वाज प्रति गावा॥५॥

प्रथम यह चरित्र शिवजी ने रच्या है अरु अपने मन हीं मो ही राख्या है पुनः पार्वती को संदिग्ध

जान कर दयाल हुये हैं तब तिस प्रति कहा है बहुरो अधिकारी जानकर भुसुंड प्रति कहा है [
याज्ञवल्किक ने पाया है तिनों ने भरद्वाज प्रति गाया है ॥ ५ ॥

ते श्रोता बकता समसीला । समदरसी जानहिं हरिलीला ॥
जानहिं तीनि काल निज ज्ञाना । करतलगति आमलक समाना ॥

ते श्रोता वक्ता समसील कहिये भगतिवैरागादिक गुणों संयुत अरु ज्ञानवान पुनः प्रभों के चरित्रों के ज्ञाता अरु तृकालज्ञ जिन को विश्व कर मों अमले सम भासती थी ॥ ७ ॥

औरौ जे हरिभगत सुजाना । कहहिँ सुनहिँ समझहिं बिधि नाना ॥

और भी जो हरिभक्त मुनीश्वर भए सो इस का पठन स्रवनादिक करते रहे ॥ ८ ॥

दोहा—मैं पुनि निज गुरु सन सुनी, कथा सो सूकरषेत ।
समुझि नहिँ तसि बालपन, तब अति रहेउ अचेत ॥

अयोध्या के समीप सरयू पर बाराहक्षेत्र है तहां मेरे गुरु रहते थे तिन से यही कथा में सुनी परंतु सिसुपने की अचेतता कर नहीं समुझी अरु ॥

स्रोता बकता ज्ञाननिधि, कथा राम की गूढ़ ।
किमि समुझौं मैं जीव जड, कलिमलग्रसित बिमूढ़ ॥ ३० ॥

गूढ़ हैं जाकी आसै ऐसी जो श्री रामचंद्रजी की कथा है तिस के समुझनेहारे पोंके स्रोता वक्ता ज्ञाननिधि भए हैं मैं कलि का जीव दीन अरु पापो रूपी मलकर जिस का मन मलीन है तिस पर भी अति मूढ़ उस गुण अभिप्राय को कैसे जान सकों ॥ ३० ॥

तदपि कही गुर बारहीं बारा । समुझि परी कछु मतिअनुसारा ॥१॥
भाषाबंध करबि मैं सोई । मोरे मन प्रबोध जेहि होई ॥ २ ॥

जैसे मेरा मन संतुष्ट होइगा तैसे भाषा मों कहोंगा अथवा जिस कथा के स्रवन कर मुझे प्रबोध हुआ है किंवा होता है सो कहिता हों ॥२॥ टिप्पणी—मानसप्रचारिका में यों लिखा है । जो हम अपने गुरु से सुना सो उस को भाषाबंध करेंगे जाते हमारे मनको प्रबोध होइ । शंका । भला गुरु के कहे में प्रबोध न भया जाते कहते हैं कि हम भाषाबंध करेंगे तब हम को प्रबोध होइ तो इन का भाषा करना गुरु के कहने से श्रेष्ठ भया सो यामें दूषन परत है सो क्या हेतु । समाधान । सुनों यामें दूषन नहीं काहे ते कि श्री गोसाईं जी अस नहीं कहा कि गुरुजी के कहने से नहिं समुझि परयउ हम भाषा करैं तब समुझि परै ये तो कहते हैं कि जो हम गुरुजी से सुना बारम्बार सो समुझि परा उस को हम भाषा करैं जाते गुरु की कही वस्तु भूलि न जाइ वो और कोऊ सुनै समुझै तब हमारे मन में प्रकर्ष करिके बोध होइ कि जो हमारे गुरुजी कहा सो हम को फलित भया हमारा कल्याण भया वो और का भी कल्याण होगा तब हमारे गुरुजी को परमानन्द होइगो काहे कि गुरु की कही जो शिष्य धारण करै तौ गुरु को विशेष आनन्द होत है याही हेतु कहे ॥

कछु बुधिबिबेकबल मेरे । तस कहिहौं हिय हरि के प्रेरे ॥ ३ ॥

टिप्पणी—मानसप्रचारिका में निम्नलिखित अर्थ लिखा है । अब जो कोई कहै कि भला जो मानस शिव ने कीन वो काकभुसुण्डिहि दीन्ह तिन्ह से याज्ञवल्क्य मुनि पाये ते भरद्वाज प्रति गाये वो मैं ने गुरु से सुन्यो सो मानस सब कहौगे तापर कहते हैं कि समस्त मानस कहने को किसू की बुद्धि नहीं जस कछु हमरे बुद्धि वो विवेक का बल है तस हिये के हरि की प्रेरणा से कहूंगा हिये के हरि अन्तर्यामी अथवा चीरशायी जिन को पूर्व हृदय में धाम कराया है सो अब श्रीरामयश के कहने में सहाय करेंगे अथवा हरि नाम हनुमान्जी गोस्वामीजी के इष्ट हैं सो इष्ट को सब कोई प्रधान राखत है सो उनहीं को कहा अथवा श्रीराम हरि को कहा काहे ते कि पूर्व ही कहि आये हैं हरि सुमारहिं सो सब भांती । तिनही को कहा ॥

निज संदेह मोह भ्रम हरनी । करौं कथा भवसरितातरनी ॥ ४ ॥

निज संदेह कहिये अपणा स्वरूप निश्चै न होणा मोह कहिये अज्ञान अहं न जानामि भ्रम कहिये अनातम में आतम प्रतीत इन को निवृत करै संसार सागर से तारवणहारी जो श्रीरामचंद्र की कथा है सो में कहता हौं ॥ ४ ॥

बुधिबिश्राम सकलजनरंजनि । रामकथा कलिकलुषबिभंजनि ॥ ५ ॥

बुद्धिवानों को बिश्राम देणेहारी सात्यो वक्तों को प्रसन्न करती अरु पापों की नाशक श्रीरामचंद्र की कथा है ॥ ५ ॥

रामकथा कलि पन्नग भरनी । पुनि बिबेकपावक कहुँ अरनी ॥ ६ ॥

भरनी कंडहिरे का कहते हैं सो सांपों का मारते हैं अरु जैपुर के देस में जिस से सर्प की बिष उतरे उस मंत्र को भरनी कहते हैं । सो कलिरूपी सर्प की बिष उतारने कों श्रीरामचंद्र की कथा भरनी सम है । बिवेकरूपी पावक कों प्रगटावण कों श्री रामचंद्र की कथा अरनीवत है अरनी कहिये जडी गरभत अस्वथ की डार वा केवल पीपल की लकडी सबकीयर्निर्निति सी सों निकासते हैं ॥ ६ ॥

टिप्पणी—मानसप्रचारिका में यों लिखा है। पुनः रामकथा कैसी है कलिरूप पन्नग नाम सर्प ताका भरणी नाम मयूरी है । प्रमाणं । भरणीमयूरी पत्नीस्यात् इति मेदनीकोशे । ६ पुनि बिवेक रूप पावक जो अग्नि तिस को उत्पत्ति करने को अरणी नाम लकड़ी है ॥

रामकथा कलि कामद गाई । सुजन सजीवनमूरि सुहाई ॥ ७ ॥

श्रीरामचंद्रजी की कथा कलि बिषे सरब कामना देणेहारी है अरु भक्तहुं की जीवनमूरि है ॥ ७

सोइ बसुधातल सुधातरंगिनि । भयभंजनि भ्रमभेक भुअंगिनि ॥ ८ ॥

सो कथा पृथ्वी बिषे अमृत की नदी है सकल भैभंजनी है अरु भ्रमरूपी दादुरों के भक्ष्यको नागिनि है ॥ ८ ॥

असुरसेन सम नरकनिकंदिनि । साधुबिबुधकुलहित गिरिनंदिनि ॥ ९ ॥

असुरसेना के सम जो नर्क का भै है ताको घालने को अरु संतरूपी जो सुरकुल हैं तिन के पालने को गिरजा सम हैं ॥ ९ ॥

संतसमाजपयोधि रमासी । बिस्वभार भर अचल छमासी ॥

जैसे खीरोदधि से रमा निकसी है तैसे संत समाज से यह कथा प्रगट होती है ❧ आधार पृथ्वी जैसी है ॥ १० ॥ टिप्पणी—मानसप्रचारिका मे यों लिखा है । पुनः सज्जन जो है सो पयोधि नाम क्षीरसमुद्र है तिस के आनन्द देवे को वो भगवान की प्राप्ति करानेहार नाम लक्ष्मी है जैसे लक्ष्मी को सम्बन्ध मानि कै भगवान् सदा क्षीरसागर मे निवास करते हैं तैसे कथा को सम्बन्ध मानि कै भगवान् सदा संतन के हृदय मे निवास करते हैं ; पुनः विश्व जो तिस का भार जो बोझा तिस के धरिबे को रामकथा अचल क्षमासी नाम पृथ्वीरूप है ॥

जमगन मुंह मसि जग जमुनासी । जीवन मुकुति हेतु जनु कासी ॥

यम गणों के मुख स्याम अरु लज्जित करणा को जगत विषे जमुना सारिखी है प्रमाण पद्मपुराणे कार्त्तिके शुक्लद्वितीयां यामयुनान्हैर्यैदाम् । स्नानं कृत्वाभानुजायंमलोके न पश्यति ॥ कार्तिक के मास शुक्ल पक्ष्य की दुतिया को जो दोपहर समै जमुना मे स्नान कर धर्मराज का पूजन करते हैं सो जमलोक का दरसन भी नहीं करते । सकल जीवों के मुक्ति करणे को आगरी रूप हैं ॥ ११ ॥

रामहि प्रिय पावनि तुलसी सी । तुलसीदास हित हिय हुलसी सी ॥१२॥

जैसे सालग्राम को तुलसी प्यारी है तैसे यह कथा श्री रामचंद्र को प्रिय है । हुलसी नाम जड़ाऊ चौकी का जो हिदै मों डारीती है तब धकधकी मिटि जाती है उस का पंजाब में हुलसी भी कहते हैं तिस सम मेरी हिदै को सुख देनेहारी है॥१२॥टिप्पणी—मानसप्रचारिका मे यों लिखा है । पुनः रामकथा कैसी है कि श्रीरामचंद्र को तुलसी की नाईं पावनि प्रिय है १८ पुनः श्री गोस्वामीजी कहते हैं कि हम का तो हित करिबे को हृदय हुल्लास रूपही है ॥

सिवप्रिय मकलसैलसुता सी । सकलसिद्धसुपसंपतिरासी ॥ १३ ॥

मेकलसुता नाम नरमदा का है जहां से नरमदेश्वरलिंग आवते हैं शिवजी को प्यारी यह कथा तिस सारिखी हैं ॥१३॥ टिप्पणी—पाठांतर कर मानसप्रचारिका में यों लिखा है । पुनः रामकथा कैसी है कि श्रीमहादेवजी को मेकलसुता जो नर्मदा तिन के बरोबरि प्रिय है २० । १० । सकल सिद्धिप्रद मंगलरासी । पुनः रामकथा कैसी है कि सकल सिद्धिप्रद नाम अणिमा आदि आठों सिद्धि की देने वाली हैं २१ वो मंगल की राशि है ॥

सदगुन सुरगन अंब अदिति सी । रघुबरभगति प्रेम परमिति सी ॥१४॥

दैवी संपदा के गुणरूपी जो अमरगण है तिन के उतपत्ति करणे को यह कथा माता अदिती जैसी है अरु रामचंद्रजी की प्रेमभक्ति की तौं परमित कहिय सीमा सम है प्रयोजन यह इस में परे प्रेम भक्ति का प्रतिपादक ग्रन्थ और नहीं ॥ १४ ॥

दोहा—रामकथा मंदाकिनी, चित्रकूट चित चारु ।
तुलसी सुभग सनेह बन, सिय रघुबीर बिहारु ॥ ३१ ॥

के समीप मंदाकिनी गंगा के तीर बन में रघुबीरजी ने निवास किया है इहां श्रीरामचंद्रजी ंदाकिनी है संतों का सुन्दर चित्त चित्रकूट है निर्मल प्रेमही बन है इस मों श्रीरामचंद्रजी ः हैं ॥ ३१ ॥

त चिंतामनि चारू। संतसमतितिअ सुभग सिंगारू ॥१॥

रामचंद्रजी के चरित्र चिंतामणि से भी सुंदर है सो नारियों के सिंगार है अरु यह संतहुं की रूपी युवती का सुंदर सिंगार है ॥ १ ॥

ंगल गुनग्राम राम के। दानिमुकुति धन धरमधाम के ॥२॥

ुनाथजी के गुणानुवाद सर्व जनों को मंगल करते हैं अरु धर्म अर्थ काम मोख्य के दाता हैं धाम ाम समुझणा॥ २ ॥

ुगुर ज्ञान बिराग जोग के। बिबुध बैद भव भीम रोग के ॥ ३ ॥

ज्ञान बैराग्यादिकों के उपजावन कों यह चरित्र सति गुरो सम हैं। अज्ञानरूपी भयानक रोग के नाम करणे कों यह अश्वनीकुमारो सम है ॥ ३ ॥

जननि जनक सियरामप्रेम के। बीज सकल ब्रत धरम नेम के ॥ ४ ॥

श्रीरामचंद्रजी के प्रेम रूपो सुत उतपादक अरु प्रतिपादक यह चरित्र माता पिता सम है अरु धरमादिकों खेती के उपजावणे को बीज सम है ॥ ४ ॥

समन पाप संताप सोक के। प्रिय पालक परलोक लोक के ॥ ५ ॥

सचिव सुभट भूपतिबिचार के। कुंभज लोभउदधि अपार के ॥ ६ ॥

मंत्रवेत्ता अरु योधा सचिव जिस नृपति के पास होते हैं तिस की हानि नहीं होती तैसे ही विवेक रूपी भूपति के यह चरित्र सुभट इस कर है जो पापों का नास करते हैं। अरु मंत्री इह भांति है जो श्रीराममंत्र की दृढता करावते हैं। लोभ रूपी समुद्र के सुकावणे मो रामचरित्र अगस्त सम हैं। ननु। जलधि कुंभज कर पान किया हुआ अब भी प्रगट है तैसे लोभ भी रामनाम करि निवृत हुआ फेर रहे तो अविद्या बणी रही। उत्तर। दृष्टांत का एक अंग ग्राह्य है। किंवा जैसे समुद्र दृष्टि आवता है परंतु पान करणे के काम का नहीं है तैसे विवेकियों में व्यवहार मात्र लोभ देखिये तो भी जनमांतरो का साधिक नहीं ॥ ६ ॥

काम कोह कलिमल करिगन के। केहरिसावक जनमनबन के ॥ ७ ॥

जनो के मन रूपी बनो मे काम क्रोधादिक करियों के काटणेको यह चरित्र सिंघसावक है अर्थ यह युवा पंचानन हैं ॥ ७ ॥

अतिथ पूज्य प्रियतम पुरारि के। कामदघनदारिद दवारि के ॥ ८ ॥

अतिथ कहिए संत तिनो कर येह चरित्र पूज्य है अरु शिवजी को प्यारे हैं अथवा अतिथों कर सेव्य जो शंकर हैं तिन कों यह अति प्यारे हैं। दरिद्र रूपी दावा अग्नि को सांत करने कों रामचरित्र बांछित अनुसार वर्षा करणहारे मेघ हैं ॥ ८ ॥

मंत्रमहामनि विषय व्याल के । मेटत कठिन कुअंक भाल के

बिषैरूपो नाग को विष उतारने कों महामणि कहिये सिरोमणि मंत्र है अथवा विषनास होते हैं एक मणि होती है सो पापरूपी सर्प को गरल बिडारन को यह मंत्ररूप हैं अरु मं है महा पद दोनों का विशेषण है। रामनाम रूपी जो सुअंक है सो लिलार के कुअंकों को मेटनेहारे

हरन मोहतम दिनकरकर से । सेवक सालि पाल जलधर से ॥

जैसे तम कों रवि किर्मा किरणा हरतियां हैं तैसे सतगुरो के मुख मे रामचरित्र प्रगट होकर मोह रूपी तम को नास करते हैं। भक्तोंरूपी धानो के पालक मेघसम हैं जैसे बरषा होती र खेत मों जल भरा रहै तब धान परपक होते हैं तैसे भक्तजन हरिजस को सुनत रहैं अरु सतसं मिलते रहैं तब कृत्य कृत्य होते हैं ॥ १० ॥ टिप्पणी—परपक = परिपक्व ।

अभिमतदानि देवतरुवर से । सेवत सुलभ सुषद हरि हर से ॥११॥

ए वांछितफल के दाता कल्पतरुसम हैं। जिस पदारथ की प्राप्ति सुगम होती है तिस का फल अलप होता है अरु रामचरित्र मैं यह विशेषता है सतसंग कर प्राप्ति इन की सुगम है अरु फलदाते शिव विष्णुसम हैं। तत्व यह ईश्वरों की सेवा का महाफल मुक्ति है सो इन के पठन श्रवण कर भी होती है ॥ ११ ॥

सुकबि सरदनभ मन उडगन से । राम भगत जन जीवन धन से ॥१२॥

जैसे सरद काल के अमल नभ मों उडगन सोभते हैं तैसे उत्तम कबहुं के निरमल मन मों राम चरित्र सोभते हैं अरु रामोपासकन कों तौ यह जीवन धन है ॥ १२ ॥ टिप्पणी—कबहुं = कवि ।

सकल सुकृतफल भूरि भोग से । जग हित निरुपधि साधु लोग से ॥१३॥

जैसे सुकृतहूं का फल भोगते हैं तैसे सरब पुन्यहुं का फल इस का श्रवण मनन है। जिनो ने सर्ब उपाधों को त्याग किया है जैसे उन संतों का होणा जग के कल्याण निमित्त है तैसे रामचरित्र का पठन विश्व को सुखदायक है इहां निरुपाध पद चाहिता था छंद की पूरणता निमित्त निरुपध पद राखा है। प्रमाण छंदो ग्रंथे। अपिमांसंमसंकुरयात छंदोभंगंनकारयेत। मास के अस्थान मस अरु मस्त के स्थान मास ऐसे पद करे परंतु अर्थ के निमित्त कवि छंदों भंग न करै॥ १३ ॥

सेवकमनमानसु मराल से । पावन गंग तरंगमाल से ॥ १४ ॥

जैसे मानसरोवर हंसहुंकर सोभते हैं तैसे संतहूं के मन रामचरित्रों करि सुन्दर होते हैं। जैसे गंगाजी के सभी तरंग पावन हैं तैसे रामचन्द्र के सभो चरित्र पवित्र हैं ॥ १४ ॥

दोहा—कुपथ कुतरक कुचालि कलि, कपट दंभ पाषंड ।
दहन राम गुनग्राम जिमि, इंधन अनल प्रचंड ॥

कुपथ कहिये कुसंगियों से मिल कुतर्क कहिये गुरु शास्त्र जो कहते हैं। परलोक सो किस ने देख्या

कहिये खोटे करमों विषे प्रवर्तना कल कहिये कलह कपट दंभ पाखंड का स्वरूप एकही है गोसांईजी ने जो तीन नाम धरे हैं ताते मन बचन करम मों होवणे कर तीन भेद समुझने इन कारोरूप बन कों श्रीरामचंद्र के गुणपुंज अनलसम दाहते हैं ।

रामचरित राकेसकर, सरिस सुषद सब काहु ॥
सज्जन कुमुद चकोर चित, हित बिसेषि बड लाहु ॥ ३२ ॥

राकेश कहिये पूरणवासी का चंद्रमा तिसकियां किरणा सम श्रीरामचंद्र किआं कथा सर्ब लोकों कों सुखदायक है परंतु कुमदों अरु चकोरां सम जो संतजन हैं तिन का जो मनमें अरु रघुनाथजी में हित है ताते तिन को लाभ अधिक है तत्व यह जैसे कुमुद इंदुकिआं किरणाकर प्रफुलित होते हैं ताते का हित विशेष है तैसे उपासकों के रिदे प्रभा को देखकरही प्रफुलित होते हैं तिन की प्रीति बडी है अरु चकोरों कों मयंक के ध्यान बलकर अनल का भोजन सुख होता है यह तिन को बडा लाभ है तैसे ज्ञानवानों कों माया अग्नि अंगीकृत भी नहीं पोहतो तिन कां यह महत लाभ है । पूरब प्रतिज्ञा जो शंकर जो द्वारा इस कथा का प्रथम प्रचार है अब तिस को निरूपण करते हुये कथा को अनंतता कहते हैं ॥ ३२ ॥

कीन्ह प्रश्न जेहि भांति भवानी । जेहि बिधि संकर कहा बषानी ॥१॥
सो सब हेतु कहब मैं गाई । कथाप्रबंध बिचित्र बनाई ॥ २ ॥
जेहि यह कथा सुनी नहिं होई । जनि आचरज करै सुनि सोई ॥ ३ ॥

जिस ने यह कथा आगे न सुनी होइ सो इस में औरां रामायणों से विलक्षण कथा जान के आश्चर्य न करे ताते ॥ ३ ॥

कथा अलौकिक सुनहिं जे ज्ञानी । नहिँ आचरज करहिं अस जानी ॥४॥
रामकथा कै मिति जग नाही । असि प्रतीति तिन्ह के मन माही ॥५॥

अलोकिककथा कहिये जो लोकविषे अथवा शास्त्रविषे प्रसिद्ध न होहिं जैसे प्रतापभान की अरु स्वयंभूमनु की कथा इस रामायण मो है अरु बर्तमान पुराणो मों नहीं पाइतीआं तो भी सुनि कर बुद्धिवान आश्चर्य नहीं करते जो अष्टादशपुराण और उपपुराण अरु रुद्रयामलादिक तंत्र अरु संघतादिक सभी ग्रंथ जिस ने सुणे पढे हैं अरु रामकथा व्यास समास कर सभा मों कही है ताते सभी प्रसंग प्रमाण है सोई कहते हैं ॥ ५ ॥

नाना भांति रामअवतारा । रामायन सत कोटि अपारा ॥ ६ ॥

नाना भांति कहिये अनेक कारण है रघुनाथजी के अवतारों विषे अरु रामायण सतकोटि से भी अपार है जो कोऊ कहै ग्रंथ अनेक भये परंतु रघुनाथजी तो एक हैं चरित्रों के भेद कैसे परे तिस पर कहते हैं ॥ ६ ॥

कलपभेद हरिचरित सुहाए । भांति अनेक मुनीसन्ह गाए
करिअ न संसय अस उर आनी । सुनिअ कथा सादर रति मानि

अनेकों कल्पों मों प्रभो ने अवतार धारे हैं तिन मों सीताहरणादिक जो अस्थूल चरित्र से हैं अरु सूक्षम चरित्रों के भेद भी होजाते हैं ताते मतिमान संसे त्याग के प्रीति संजुत प्रभु.. सुनते हैं ॥ ८ ॥

दोहा—राम अनंत अनंत गुन, अमित कथा विस्तार ।
सुनि आचरजु न मानिहहिं, जिन के बिमल बिचार ॥ ३३ ॥

श्रीरामचंद्रजी बिअंतु हैं अरु तिन मों ज्ञान वैरागादिक गुण अनंत हैं अरु तिनकिआं कथा अमित है ताते निरमल विवेकी जन सुणकर बिस्मै न होते अर्थ यह संदेह नहीं करते प्रभों को .. शक्ति जानते हैं ॥ ३३ ॥

येहि बिधि सब संसय करि दूरी । सिर धरि गुरपदपंकजधूरी ॥ १ ॥

यहि बिधि कहिये प्रभों की सर्व भांति की अनंतता जान कर मन के सभ संदेह निवृत किये जो श्रीरामचंद्र जामैं सरब भांति के चरित्र होणे संभवते हैं जाते परमेश्वर हैं अरु गुरां के चरणारज पर सीस नवाया जो तुम ने मेरी सहायता करणी तदनंतर ॥ १ ॥

पुनि सबही बिनवौं कर जोरी । करत कथा जेहि लाग न षोरी ॥२॥

सबहीं कहिये जिन को पीछे भिन्न भिन्न नमस्कार किआ है तिन को अब एकठा करते हैं जामें कथा मों कोऊ दोस न परै ॥ २ ॥

सादर सिवहि नाइ अब माथा । बरनौं बिसद रामगुनगाथा ॥ ३ ॥

शंकरजी मेरे संप्रदायकगुरु हैं अरु श्रीरामचंद्र के सेवक स्वामी सखा हैं अरु रामकथा के भी मुख्य प्रवर्तक हैं ताते अब तिन को अति प्रीतिसंजुत प्रणाम कर के रघुनाथजी किआं कथा कहता हों ॥ ३ ॥

संबत सोरह सै इकतीसा । करौं कथा हरिपद धरि सीसा ॥ ४ ॥
नौमी भौमबार मधुमासा । अवधपुरी यह चरित प्रकासा ॥ ५ ॥

आशंका । नौमी रिक्ता तिथ भौमवार क्रूर वार चैत्रमास विवाहादि को मंगला विषे अप्रमाण तिसे दिन रामायण के प्रारंभ करणे का क्या आशय । उत्तर । ग्रंथकार ने तीनहीं कहा है श्रीरामचंद्र के जनम को संभावना कर वह दिन परम पवित्र है । ननु । रघुनाथजी ने ऐसे तिथमास विषे अवतार किस निमित्त धार्या वह तो स्वछंद थे । उत्तर । भगवान ने विचार्या उत्तम तिथ्यादिकों विषे उपजने कर तों सभी श्रेष्ठ होते हैं हमारी यह अधिकता है क्रूर दिनो में अवतार धार कर सर्व से श्रेष्ठ होना जैसे गौर अरु लाल वरण सब का सुन्दर होता है अरु मेरा स्याम रूपही सभ से सुन्दर है । ननु । यद्यपि श्रीरामचंद्र अपणे ऐश्वर्य मों प्रसिद्ध हुए तथापि उस तिथ की रिक्तता अरु वार की क्रूरता अरु मास की कुनेतता जोतषियों ने प्रमाण

सिद्धांत नौमी दिन देवी की प्रसिद्ध है सो देवी जानकी का ही स्वरूप है ताते तिथप्रमाण भौमवार हनुमानजी का है सोई हमारे सर्वसु हैं ताते वार प्रमाण हुआ अरु चैत्र बसंतरितु है ज्यो की बात जोतिषी जानै हम को गीता में भगवान का बचन प्रमाण है ऋतूनांकुसमाकरः संतरितु मैं हौं इस प्रकार सभों को अपने हितु अरु उत्तम जान कर ग्रन्थका प्रारंभ किया ॥ ५॥

ह दिन रामजन्म श्रुतिगावहिं। तीरथ सकल तहां चलि आवहिं ॥६॥

स दिन सुतों ने श्रीरामचंद्रजो का अवतार होणा कहा है तिस रामनौमी के दिन सब तीरथ या में आवते हैं अरु ॥ ६ ॥

,र नाग षग नर मुनि देवा। आइ करहिँ रघुनायकसेवा ॥ ७ ॥

मन्होत्सव रचहिं सुजाना। करहिं रामकल कीरतिगाना ॥ ८ ॥

दोहा—मज्जहिंसज्जन बृंदबहु, पावन सरजू नीर।
जपहिं रामधरि ध्यानउर, सुंदर स्याम सरीर॥ ३४ ॥

अब सरयू अरु अवध की महिमा कथनपूर्वक रामचरित्रमानस का फल अरु नाम धरण का कारण कहते हैं ॥ ३४ ॥

दरस परस मज्जन अरु पाना। हरै पाप कह बेद पुराना ॥ १ ॥

नदी पुनीत अमित महिमाअति। कहि न सकैसारदा बिमलमति ॥२॥

राम धामदा पुरी सुहावनि। लोकसमस्त बिदित जगपावनि ॥ ३ ॥

टिप्पणी—मानसप्रचारिका में यों लिखा है। औ श्रीअयोध्याजी कैसी हैं सो कहते हैं कि सुहावनिपुरी जो अयोध्या सो श्रीरामधाम को देती हैं वो सर्बलोकन में बिदित हैं वो जगत् के पावन करनहारी हैं। शंका। रामधाम तो अयोध्ये जी हैं वह रामधाम कोन जिस को अयोध्या जी देती हैं। समाधान। सुनो अयोध्या जी के द्वै स्वरूप हैं एक नित्य एक लीला सो लीला स्वरूप प्रकृति मंडल में रहती हैं परन्तु उन को प्रकृति को बिकार नहीं लागत और को प्रकृति को बिकार हरि के अपने नित्य स्वरूप को देती हैं अथवा धाम नाम स्वरूप को सो श्रीरामस्वरूप को देती हैं।

चारि खानि जग जीव अपारा। अवध तजेतनु नहि संसारा ॥ ४ ॥

टिप्पणी—मानसप्रचारिका में यों लिखा है। जो कोऊ कहै कि उत्तमकर्म धर्म करनेहारे पुरुषन को रामधाम देती होहिंगी तापर कहते हैं कि श्रीअयोध्याजी कैसी हैं कि चारिखानि जो अण्डज पिंडज उष्मज उद्भिज तिस में जगत के बीच में अपार जीव परे हैं सो चारिखानि में को कोई जीव अवध में तनु तजै तो फेरि चारि खानि रूप संसार तिस में न परै उस से छूटिजाइ है तनुतजनमात्र साधन है।

सब बिधि पुरी मनोहर जानी। सकल सिद्धिप्रद मंगलखानी ॥ ५ ॥

सभ बिधि कहिये पुररचना अरु नदी की समीपता अरु रविबंसियों की राजधानी तिस कर मनोहर है अरु श्रीरामचंद्रजी के अवतार कर सभ मंगलों की खान भई ताते तहाँ ॥ ५ ॥

बिमल कथा कर कीन्ह अरंभा । सुनत नसाहिं काम मद दं
राम चरित मानस एहि नामा । सुनत श्रवन पाइअ बिश्र:

इस ग्रंथ का नाम रामचरित्रमानस है औरों मानसरों का देखणे कर हगों कों मोद इस के श्रवण कर मन को विश्राम होता है सोई विस्तार करकै कहिते हैं ॥ ७ ॥

मन करि विषय अनलबन जरई । होइ सुषी जौ येहिं सर परई

मनरूपी गज जगतरूपी बनविषै बिसियोंरूपी अग्नि मों जलते हुए जब रामकथारूपी परते हैं तों अविद्यारूपी तप्त मिटती है ॥ ८ ॥

रामचरित मानस मुनि भावन । बिरचेउ संभु सुहावन पावन ॥

रचना मों सुन्दर है अरु फल मों पवित्र है इतर सुगम ॥ ९ ॥

त्रिबिध दोष दुषदारिद दावन । कलिकुचालिकलिकलुषनसावन ॥१०॥

मन बचन काइ कर उपजे जो दोष हैं अरु तन के दुख दरिद्र हैं तिन के दावन कहिये दबावन-हारा है अरु कलू के जोवों क्रिआं जो कुरहिता है अरु भगतहूं की कुलों के जो कलंक है तिन का नासक है ॥ १० ॥

रचि महेस निज मानस राषा । पाइ सुसमउ सिवा सन भाषा ॥११॥

श्रीरामचंद्र के चरित्रों का ग्रंथ रच कर शंकरजी ने अपणे मनविषे हीं राखा अधिकारी की दुरल भता कर प्रगट नहीं किया जब उमा को जिज्ञासा भई तब सुभ अवसर मों तिस प्रति कहा है ॥ ११ ॥

ताते राम चरित मानस दर । धरेउ नाम हिअ हेरि हरषिहर ॥१२॥

प्रथम मन मो राखणे कर शंकरजी ने प्रसन्न होकर इस का नाम भी रामचरित्रमानस हीं राख्या ॥१२॥

कहौं कथा सोइ सुषद सुहाई । सादर सुनहु सुजन मनलाई ॥ १३ ॥

दोहा—जस मानस जेहिबिधि भयउ, जग प्रचार जेहिंहेतु ।
अब सोइ कहौं प्रसंग सब, सुमिरि उमा बृषकेतु ॥ ३५ ॥

जस मानस कहिये जैसा मानसरोवर है इतर सुगम ॥३५॥ टिप्पणी—मानसप्रचारिका में यों लिखा है। अब यहां से मानस प्रकरण आठ दोहा ताईं पैंतिस के दोहा से तेंतालिस दोहा ताईं जानो। जस मानस नाम जैसा मानस का स्वरूप है वो जेहि विधि भयो नाम जौने प्रकार से मानस भया है वो जौने हेतु जगत् में प्रचार भयो है सो सब प्रसंग अब कहत हौं उमा जो पार्वती व बृषकेतु जो महादेव तिन को सुमिरि कै।

संभुप्रसाद सुमति हिअहुलसी । रामचरित मानस कबितुलसी ॥ १ ॥
करइ मनोहर मति अनुहारी । सुजन सुचित सुनि लेहुं सुधारी ॥ २ ॥

को कृपा करि जिस की सुमति को हुलास भया है ऐसा जो तुलसीदास कवि हैं सो अपनी
मचरित्रमानस कौं सुंदर बणावैगा हेसंतजनों तुम ने चित्त दै कै सुणना, अरु मेरी भूल
अब रामचरितमानस कौं सावैवरूपकालंकार कर कहते हैं॥ २॥

सुमति भूमि थल हृदय अगाधू। बेद पुरान उदधि घन साधू॥ ३॥

सरोवर भी भूमि पर है अरु अगाध है तैसे ही ईश्वरों की जो सुष्ट मत है सोई है जिन की
अरु रिदें जिन के अगाध हैं ऐसे जो निगमागम हैं सो भये उदध तिन से मेघ जलग्रहण करते
वेदों पुराणों से हरजनरूपीघन सुयसरूपीजल लेते हैं अथवा श्रीरामचंद्रजी के यस की इच्छावाले
उत्तम मति है सो इस मानस की भूम भई अरु उस के धारनहारा जे श्रेष्ठ रिदा हैं इस तिस
की अगाधता कहिये बडा गरंत भया अरु वेद शास्त्ररूपी समुद्र है मेघरूपी संत जो मेरे गुरु
हैं तिनो से तिनो ने श्रीरामचंद्रजी के चरित्ररूपी जलपान किया॥ ३॥

बरषहिं राम सुजस बर बारी। मधुर मनोहर मंगलकारी॥ ४॥

जैसे समुद्र का खारी जल पयोदों के मुख से बरख्या हुआ मधुर मनोहार होता है तैसेही सुतहुं के
महा महा कठिन आसे संतहूं का रसनाद्वारि वो बरषे हुए मुझ को सुगम भए॥ ४॥

लीला सगुन जो कहहिं बखानी। सोइ स्वच्छता करै मलहानी॥ ५॥

प्रभों के अवतारों की जो लीला वरनन करी है सा इस जल की निरमलता बक्तहुं स्रोतहुं की मल
को नाश करती है॥ ५॥

प्रेम भगति जो बरनि न जाई। सोइ मधुरता सुसीतलताई॥ ६॥

जिस प्रेमभक्ति का महातम कहा नहीं जाता तिस का जो वरनन है सो इस जल में मिष्टता अरु
सीतलता है॥ ६॥

सो जल सुकृत सालि हित होई। राम भगत जन जीवन सोई॥ ७॥

सो पवित्र जल धानों को सुख देता है यह हरिभक्तों की जीवन है॥ ७॥

मेधा महिगत सो जल पावन। सिमटि श्रवन मग चलेउ सुहावन॥ ८॥

जैसे वर्षा का जल चला तब सरोवर के ऊपर की पृथ्वीद्वारा रंध्रहुं में होकर सरोवर पुरीता है तैसे
बुद्धिरूपी महि सो प्राप्ति होइ कै संतहूं के बचन करनहूंरूपी रंध्रहुंद्वारा मेरे मनरूपी सर मो आये
तातपर्य यह जब गुरु उपदेश करते हैं तब स्रोत्र इंद्री साथ मिलकर प्रथम बुद्धि वाकहुं कों ग्रहण करती
है तब पीछे कानोंद्वारा रिदें मों पैठते हैं अरु जिस को मेधा अंगीकार न करै सो अनेक बचन योंही
जाते हैं॥ ८॥

भरेउ सुमानस सुथल थिराना। सुखद सीत रुचि चारु चिराना॥ ९॥

सुमानस कहिये पूर्वोक्त सुमति जिस की भूम कही थी सुथल कहिये रिदेंरूपी सुष्ट थल विषे
थिराना कहियै इस्थीत भया भाव यह मेरे मन मो इस ग्रंथ का स्वरूप ज्यों का त्यों भया जो रामचरित्र
सभ को सुखद अरु सीतल अरु भावन अरु सुन्दर अरु अनादि है॥ ९॥

दोहा—सुठि सुंदर संबाद बर, बिरचे बुद्धि बिचारि ।
तेइ एहिं पावन सुभग सर, घाट मनोहर चारि ॥ ३६

याग्यवल्कि जी का भरद्वाज प्रति शंकर जी का उमा सो भुसुंडजी का गरुड़ साथ सूकरखेत मो मो प्रति यह चारो संबाद ही इस मानस के चारो घाट हैं ॥३६॥ टिप्पणी—मानसप्र यों लिखा है । अब श्री गोस्वामी जी को जैसो मानस का स्वरूप अपने हृदय में देखिपर्यो है स सावयवतुल्य रूपकालंकार करिकै कि जैसे उसमानस में चारिउ तरफ घाट बंध्यो है तैसे यह वो सुभग नाम सुन्दर रामचरित्र मानस में अपनी अपनी बुद्धि के बिचार से अति सुन्दर वो श्रेष्ठ चा जो बिरचे हैं सो मनोहर चारि घाट हैं चारि सम्बाद कौन प्रथम श्री गोसांई जी को वो सन्तन याज्ञवल्क्य वो भरद्वाज जी को तीसरो महादेव पार्वती जी को वो चौथो काकभुशुण्डि वो गरुड़ लक्ष सम्बाद प्रथम । मैं पुनि निज गुरुसन सुनी । कहिहौं सोइ सम्वाद बखानी । सुनहु सकल सज्जन सुख मानी ॥ दूसरो । कहौं युगुलमुनिवर्यकर मिलन सुभगसम्बाद। तीसरो। कहौं सुमति अनुहारि अब उमा शंभु सम्वाद। चौथो। कहा भुशुण्डि बखानि सुना बिहंग नायक गरुड़। सो सम्बाद उदार। अब कुछ वचनन की आशय लैकै वो कुछ प्रकरण को अभिप्राय लैकै जो अपनी अपनी बुद्धि के बिचार से चारिउ बक्ता बिरचे हैं सो रचना कहत हौं जहां चारि घाट कहा तहां घाटन में कुछ बिचित्रता होवै करैगी सो जो आशय श्री गोस्वामी जी की प्रेरणा से समुझि पर्यो सो कहत हौं सो सुनो कि जैसे लोक में प्रसिद्ध चारि घाट हैं सो एक राजघाट जहां उत्तमपुरुष नहाते हैं वो एक पंचाइती जहां सब कोई नहाते हैं वो एक पनिघट जहां स्त्रीगण नहाती हैं वो एक गौघाट जहां लूला लंगड़ा सब पहुंचते हैं तैसे लक्षणा करि कै उस मानस में जानों जो राजघाट है तिस में उत्तम देवता जो इंद्रादि सो स्नान पान करते हैं वो जो पंचाइती घाट हैं तिस में मध्यम देवता प्रथमगण स्नान करते हैं वो जो पनिघट झंझरीदार है सो तिस में देवांगना स्नान पान करती हैं वो जो गौघाट है तिस में अनेक देवबाहन वो लूले लंगड़े स्नान पान करते हैं तैसे यह रामचरित्रमानस में जो चारि संबादरूप चारि घाट हैं सो प्रथम गोसांईजी को संबाद जो है सो गौघाट है काहे ते कि दीनतापूर्वक संबाद है लक्ष दीनता को । करन चहौं रघुपति गुनगाहा । लघु मति मोरि चरित अवगाहा ॥ सूझ न एकौ अंग उपाऊ । मन मतिरंक मनोरथ राऊ ॥ मति अति नीचि ऊँचि रुचि आछी । चहिय अमिय जग जुरै न छाछी ॥ इत्यादि जहां जहां गोसांईंजी को बचन है तहां तहां दीन अधीन ते पूर्वक है सो अति सरल है जामें सब को निर्वाह है जे आचार बिचार से रहित हैं ते पशु हैं वो जे सर्व कर्म धर्म से गत हैं ते लूला लंगरा हैं तेऊ दीन अधीन घाट ह्वै कै रामचरित्रमानस में स्नान पान तुल्य श्रवण धारण करते हैं यह दीनतारूप गौघाट है वो दूसरो याज्ञवल्क्यसंबाद जो है सो पंचायतीघाट है काहे ते कर्मपूर्वक संबाद है कैसे जानो सो सुनो कर्मकाण्ड को येही स्वरूप है कि प्रथम गौरी गणेश महेश को मंगल करै सो याज्ञवल्क्य जी किये कब जब प्रथम कहा कि। तात सुनहु सादर मन लाई । कहौं राम की कथा सुहाई ॥ यह संकल्प करि फेरि कर्म पूर्वक कहने लगे तहां शिव-महत्व शक्तिमहत्व गणेशमहत्व कहि तब श्रीरामकथा कहे सूक्ष्म ते तीनिउं को लक्ष प्रथम शिवमहत्व

श जगदीसा । सुरनर मुनि सब नावहिं सीसा ॥ पुनः । सब सुर बिष्णु बिरंचि समेता । कृपानिकेता ॥ पृथक पृथक तिन्ह कीन्ह प्रशंसा । भये प्रसन्न चन्द्रअवतंसा ॥ इत्यादि नो। लक्ष शक्तिमहत्व को। मयना सत्य सुनहु मम बानी । जगदंबा तव सुता भवानी ॥ अजा अविनाशिनि । सदा शंभु अर्धंग निवासिनि ॥ जगसंभव पालनि लयकारिनि । निज इच्छा गरिनि ॥ इत्यादि बचन से जानो वो लक्ष गणेशमहत्व को। मुनि अनुशासन गणपतिहिं, भवानि । कोउ सुनि संशय करै जनि, सुर अनादि जिय जानि ॥ इत्यादि वचन से जानो। यह महत्व कहिबे में याज्ञवल्क्य जी को यह अभिप्राय है कि आपु तौ श्री सीताराम जू के परम हैं परि मुनि मननशील परम दयालु सो बिचारे को शैवोपासक शक्तिउपासक वो गणेशोपासक तिन्ह को रामचरितमानस में स्नान करावना चाहिये तातें कर्मपूर्वक तीनिउं को महत्व कहे जाते अपने अपने इष्ट को महत्व सुनि करि सब इस ग्रंथ में लगैंगे तब रामचरितमानस को प्राप्त होहिंगे अपने अपने इष्ट उपासना के सहित रामचरितमानस में स्नान पान तुल्य श्रवण धारण करते हैं यह कर्म पूर्वक रामचरितमानस को पंचायती घाट है वो तोसरो शिव जू को संवाद है सो राजघाट है काहे ते कि शिवजू को प्रथम बचन ज्ञानपूर्वक है लक्ष। झूठो सत्य जाहि बिनु जाने। जिमि भुजंग बिनु रजु पहिचाने ॥ जेहि जाने जग जाइ हेराई । जागे जथा स्वपन भ्रम जाई ॥ जासु सत्य तातें जड माया । भास सत्य इव मोह सहाया ॥ दोहा । रजतसीप महं भास जिमि, जथा भानु कर बारि । जदपि मृषा तिहुं काल सो, भ्रम न सकै कोउ टारि ॥ चौपाई । इहि बिधि जग हरि आश्रित रहई । जदपि असत्य देत दुख अहई ॥ ज्यों सपने सिर काटै कोई । बिनु जागे न दूरि दुख होई ॥ जासु कृपा अस भ्रम मिटि जाई । गिरिजा सो कृपालु रघुराई ॥ इत्यादि बचन ज्ञानमय यह जानो ज्ञान का यही स्वरूप है कि परमेश्वर सत्य वा जगत् का प्रपञ्च असत्य ज्ञान में घाट जामें उत्तम पुरुष तुल्य ज्ञानी सो अस्नान पान तुल्य श्रवण धारण करते हैं यह ज्ञानपूर्वक रामचरितमानस को राजघाट है वो चोथो काकभुशुण्डि जी को संवाद है सो पनिघट है काहे ते कि काकभुशुण्डि जी को प्रथम बचन उपासना में है लक्ष। प्रथमहिं अति अनुराग भवानी । राम चरित सर कहेसि बखानी। वो जब महिमा कहने लगे तबहूं प्रथम उपासना में कहे कि । राम कामशतकोटि सुभग तनु। इत्यादि बचन से जानो जो कहो कि उपासना को वो पनिघट की तुल्यता कैसे तौ सुनो जैसे पनिघट झंझरीदार परदा सहित बनता है तिस में स्त्रीगण स्नान करती हैं वो अपनी सखियन में बोलती बतलाती हैं अपर को नहीं देखती हैं स्पष्ट झंझरी के तनक देखती हैं अपने अपने पति से काम राखती हैं तैसे उपासना में बचन पनिघट है जहां श्रीसीताराम जी के स्वरूपानन्य उपासक जे अपने उपासकन में अपने स्वामी की वार्त्ता करते हैं अपर को जे राम चरित सुने तौ कहैं और किसू की वार्त्ता न कहैं जो कोई कहै तौ तनिक सुनिलेहिं ऐसी उपासनामय बचन काकभुशुण्डि को है कि जहां कोई मंगलाचरण भी नहीं केवल स्वामी की वार्त्ता कहे तातें पनिघट तुल्य है जिस द्वार हूं करि सब स्वरूपानन्य उपासक जो हैं सो स्त्रीतुल्य हैं काहे ते कि स्त्री की वो स्वरूपानन्य उपासक की एक क्रिया है सोई स्नान पान तुल्य श्रवणधारण करते हैं अब जो

कोई कहै कि एक मानसर महादेव कीन्ह तिसही को सब कहा है सो उस में ज्ञान उपासना कर्मदीनता कहां से आयो उहां तौ जो एक को सिद्धांत सो सब को चाहो तहां सुनो सब को सिद्धांत एक रामचरित्र-मानसै है वो चारिउ बक्ता श्री सीताराम जू के परम उपासक हैं परंतु रामचरित मानस में चारि भांति के घाट बंधे हैं काहे ते कि जो शिव जी मानस कीन्ह है सो अति दुर्गम है। प्रमाणं। यत्पूर्वंप्रभुनाकृतं सुकविना श्री शंभुनादुर्गमम्। सो सर्व जीवन के प्राप्त हेतु चारि घाट चारि तरह के बांधि दीन जाते ज्ञानी जे हैं ते ज्ञान घाट ह्वै करि रामयश जल को प्राप्त होहिं वो उपासक जो हैं सो उपासना घाट ह्वै करि रामयश जल को प्राप्त होहिं वो पंचाइतो भक्त जे हैं ते कर्म घाट ह्वै करि रामयश जल को प्राप्त होहिं व कर्म धर्म के पंगु जे हैं ते दीनघाट ह्वै करि रामयश जल को प्राप्त होहिं देखिये तौ एक श्रीरामचरितमानस के आश्रित ज्ञान उपासना कर्म दीनता सब है जो कहो कि इतनी व्याख्या कौन अक्षर से कियो है तौ सुनौ जो दोहा में लिखा है कि। सुठि सुन्दर संबादबर, बिरचेउ बुद्धि बिचारि॥ जो अपनी अपनी बुद्धि के बिचार से सम्बाद बिरचे हैं तौ उस में कछु वैलक्षणता है तब तौ चारिघाट कहे हैं नाहीं तौ घाट को कौन नेम है यह मैं अपनी मति के अनुरूप कह्यो है आगे जो सब सन्त कहैं सो सही॥

सप्तप्रबंध सुभग सोपाना। ज्ञान नयन निरखत मन माना॥ १॥

सप्तकांड इस सर की सप्त पोडिआं है जो विचाररूपी नेत्रों सो देखियें तब मन प्रसन्न होता है॥१॥

टिप्पणी—मानसप्रचारिका में यों लिखा है। अब सीढ़िन की रचना कहते हैं कि जैसे उस मानस में सोपान नाम सीढ़ी बंधी हैं तामें कछू जल के अभ्यंतर हैं कछू बाहर हैं तैसे इहां रामचरित्र मानस में सप्तप्रबन्ध नाम सात कांड जो हैं सोई सीढ़ी हैं सो सर के बाहर भीतर बांधि रही हैं वो सातो सीढ़िन में रामयश जल भरि रह्यो है परिपूर्ण वो इनहीं सीढ़िन पर ह्वै करि कवितारूप नदी चलेगी वो सीढ़ी नीचे से बंधत हैं तेहि में नीचे ऊपर बड़ी होती हैं बीच में छोटी तैसे इहां भी है बाल कांड से प्रारम्भ वो उत्तर समाप्त सो बाल अयोध्या ह्वै नीचे की बड़ी सीढ़ी हैं वो लंका उत्तर ह्वै ऊपर की बड़ी सीढ़ी हैं वो आरण्य किष्किंधा सुन्दर बीच की छोटी पैरखियां हैं आगे जो कोई कहै कि ये सीढ़ी कैसे बंधी हैं कि सब में जल परिपूर्ण है वो सीढ़ी देखि परती हैं तौ सुनौ ग्रन्थकार आपै लिखते हैं कि उन सीढ़िन के यह नेत्र से देखे मनमानत है वो यह सीढ़िन को जब ज्ञान के नेत्र से देखै तब जैसो सीढ़िन को स्वरूप है सो समुझि कै मनमानत है कछू यह नेत्रन से नहीं देखि परत है जैसे लोक में प्रसिद्ध है कि नीचे की सीढ़ी दाबि करि कै ऊपर की सीढ़ी बंधती है तैसे इहां कांडन में एक कांड का फल श्रुति वो दूसरे कांड का मंगलाचरण सो दाबनि है वो काण्डन का सम्बन्ध मिलावना सोई जोड़ है कि जैसे बालकाण्ड में कहा कि। आये राम ब्याहि घर जबतें। बसै अनन्द अवध सब तब ते॥ वो अयोध्याकांड में कहा कि। जबते राम ब्याहि घर आये। नित नव मंगल मोद बधाये। यह दूनो काण्ड का सम्बन्ध सोई जोड़ है बीच में जो कहा सो सीढ़िन को दाबनि है यही प्रकार से सब काण्डन में जानो अयोध्या में कहा कि। भरत चरित करि नेम, तुलसी जे सादर सुनहिं। वो आरण्य के आदि में कहा कि। पूरब भरत प्रीति मैं गाई। वो आरण्य के अन्त में कहा कि। शिरनाइ बारहि बार चरणन ब्रह्मपुर नारद

गये। वो किष्किंधा काण्ड के आदि में कहा कि। आगे चले बहुरि रघुराई। अन्त में कहा कि। कपि-सेन संग संहारि निश्चर राम सीतहि आनि हैं। त्रैलोक पावन सुयश सुर मुनि नारदादि बखानि हैं॥ वो सुन्दर के आदि में कहा कि। जामवन्त के बचन सुहाये। वो अन्त में कहा कि। निज भवन गवनेउ सिन्धु श्रीरघुबीर यह मत भायऊ। यह चरित कलिमलहरण जस मति दास तुलसी गायऊ॥ वो लंका के आदि में कहा कि सिन्धु बचन मुनि राम, सचिव बोलि प्रभु अस कहेउ। औ अन्त में कहा कि। प्रभु हनुमन्तहि कहा बुझाई। धरि द्विजरूप अवधपुर जाई॥ भरतहि कुशल हमारि सुनावहु। तासु कुशल लै तुम्ह चलिआवहु॥ तुरित पवन सुत गवनत भयऊ। तब प्रभु भरद्वाज पहं गयऊ॥ वो उत्तर के आदि में कहा कि। राम विरह सागर महं, भरत मगन मन होत। बिप्ररूप धरि पवन सुत, आइ गयो जनु पोत॥ अब इहां फल वो मंगलाचरण के उपरांत ये दोहा लंका के अंत का वो एक दोहा उत्तर के आदि का ये दो सीढ़ी के दावनि में हैं काहे कि उत्तर काण्ड ऊपर की सीढ़ी है सो बड़ो है ज्यादा दावनि चाहती है।

रघुबर महिमा अगुन अबाधा। बरनब सोइ बर बारि अगाधा॥ २॥

श्रीरामचंद्र के निर्गुण स्वरूप की जो आबाध महिमा है सो इस जल की अगाधता है॥२॥ टिप्पणी—रघुबर के स्थान पर रघुपति तथा बर नव पाठ लिख कर मानसप्रचारिका में यों अर्थ कियाहै। जैसे उस मानस को जल गम्भीर जो है सो अगाधता को सूचत है तैसे इहां अगुण कही गुणातीत वो अबाधा कही बाधा रहित वो बर नाम श्रेष्ठ वो नव नाम नवीन जो रघुपति की महिमा सो रामयश जल की अगाधता सूचे है महिमा का कहावै है महत्त्व तिस का लक्ष्य सुनो। नेति नेति जेहि वेद निरूपा। निजानन्द निरुपाधि अनूपा॥ शम्भु बिरंचि बिष्णु भगवाना। उपजहिं जासु अंश ते नाना॥ पुनः। देखे शिव बिधि विष्णु अनेका। अमित प्रभाव एक ते एका॥ बन्दत चरण करत प्रभु सेवा। पुनः। कीन्हे प्रभु विरोध तेहि देवक। शिव विरंचि हरि जाके सेवक॥ पुनः। तुमहि आदि खग मशक प्रयंता। नभ उड़ाहिं नहिं पावहिं अन्ता॥ तिमि रघुपति महिमा अवगाहा। तात कबहुं कोउ पावकि थाहा॥ राम काम शत कोटि सुभग तन। दुर्गा कोटि अमित अरिमर्दन॥ इहां से लेइ करि वो निरूप मन उपमा आन राम समान राम निगम कहैं। जिमि कोटिशत खद्योत रविसम कहत अति लघुता लहैं। इहां तक सब महिमा का वर्णन है सो महिमा रामयश जल की अगाधता है नाम रामयश बड़ो अगाध है कि जामें शेष महेश की बुद्धि को अवसान नहीं॥

रामसीअ जस सलिल सुधासम। उपमा बीचि बिलास मनोरम॥ ३॥

श्रीरामचंद्र अरु सीता के स्वरूप की जो सुन्दरता कही है सो इस जल की मिष्टता है अलंकारों कर उपमा जो बरनन करिआ है सो लहर तरंग है॥ ३॥ टिप्पणी—मानसप्रचारिका में यों लिखा है। जैसे उस मानस के जल में मधुर मनोहर मंगलकारी जो गुण है तिस में पुष्टीअह्लाद है तैसे इस मानस के रामयश जल में सगुण लीला मनोहर वो प्रेमलक्षणा मधुर मंगलकारी जो गुण हैं तिस में रामसीय युगल को मिलि के लीला पूर्वक यश सोइ सुधासम नाम पुष्ट अह्लाद कारक है इहां जो सुधासम को पुष्टी

अह्लाद को अर्थ किया है सो यह आशै लैकै कि जो मिष्ठता अर्थ करैं तौ मिष्ठता वर्णन होइ चुका है वो सुधा में पुष्ठता वो अह्लादसार है तातें ऐसो अर्थ कियो है अब रामसीय मिलित लीलायश को उदाहरण सुनौ । समै जानि गुरु आयसु पाई । लेन प्रसून चले दोउ भाई ॥ इहां से लेइ करि वो जानि गौरि अनुकूल । इहां प्रयंत युगलसरकार को फूलवाटिका में मिलाप विहार वो परस्पर चक्षु सम्भोग वो परस्पर कटाक्षण की तीरंदाजी सब सखिन को हासविलास मय दश दोहा यह प्रसंग श्रीसीताराम जू को लीलायश है सो यह प्रसंग इस ग्रन्थ का सार भूत है जिस में श्रीसीताराम उपासकन को पुष्टी अह्लाद है सोई सुधासम जानो । पुनः । दूसरा उदाहरण सूक्ष्म ते है आरण्य काण्ड मे फटिकशिला की लीला । चौ० । एकबार चुनि कुसुम सुहाये । निजकर भूषण राम बनाये ॥ सीतहिं पहिराये प्रभु सादर । बैठे फटिकशिला पर भाधर ॥ इहां राम की लीला है तातें गुप्तै कहा इत्यादि जो सीताराम जी को लीला पूर्वक यश है सोई रामयश जल को सुधा सम नामपुष्टी वो अह्लाद कारक है सब राम भक्तन को जो सीताराम दोउन को मिलायश न होइ तो पुष्ट अह्लाद न होइ इत्यर्थः अरु जैसे उस मानस मे अनेक छोटी बड़ी लहरी उठती है तैसे इस मानस मे जो छोटी बड़ी उपमा है सोई बीची नाम लहरि है उपमा का कहावै मुख जनु चन्द्र है नेत्रजनु कमल है नासिका जनु शुक है दन्त जनुदाड़िम है इत्यादि जहां जनु मनु जानो मानो मनहुं ऐसा परै सो उपमा है सो तो इस मानस में बहुत है पर सें दो तीनि उदाहरण के हेतु लिखत हों । चौ० । अगर धूप बहु जनु अंधियारी । उडै अबीर मनहु अरुणारी ॥ भवन बेद ध्वनि अति मृदुबानी । जनु खग मुखर समय सुखमानी ॥ मंदिर मणि समूह जनु तारा । नृप गृह कलस सो इन्दु उदारा ॥ इत्यादि ऐसो जनु मनु को बचन जहां सोई सो उपमा सोई दहतसो लहरि हैं ॥

पुरइनि सघन चारु चौपाई । जुगति मंजु मनि सीपसुहाई ॥ ४ ॥

चौपायी चौपलोमम है अरु जुक्ता जो उत्तम मति कियां है मा मुक्तावत मुक्ती है ॥ ४ ॥ टिप्पणी— मानसप्रचारिका में यों लिखा है । अब तीनि परिखा बांधते हैं एक नदतीन एक तटगत एक तदा श्रय सो पहिले जो मानस में लीन हैं तिन को रूपक कहते हैं लीन कहो जो क्षण भरि बाहिर न होइ उस में मिला रहै जैसे उस मानस में पुरइनि फैल रही है सीपो है उस में मोती है तैसे इस मानस में चारु नाम सुन्दरि दीप्तिमान चौपाई जो हैं सोई पुरइनि हैं परिसघन हैं पुरइनि वो चौपाई की तुल्यता इस देश लेकरि कहा कि जैसे पुरइनि के वोट मे जल ढँपा रहत है तैसे चौपाइन के वोट से राम यश जलनाहीं देखि परै है केते विमुख जीव चौपाई देखे वा सुने तब कहते हैं कि यह तो भाषा है इस को का कहना सुनना ई नहीं जानते कि इन्ह चौपाइन में जो रामयश भरा है सो श्लोकन में कहूं ढूंढ़े न मिलैगो औ जे रामयश जल के प्यासे हैं वो राम तत्त्व के जनैया हैं ते तो यही चौपाई के आवान्तर जो रामयश है तिस को पान करते हैं अरु युक्ति जो है सो मंजुमणि नाम मोती है युक्ति का कहावै है कि जो क्रिया से कर्म को छपाइ देइ । प्रमाणं भाषाभूषण अलंकारे अईं दोहा । यहै युक्ति कीन्हे क्रिया कर्म छपाये जाइँ ॥ इति । उदाहरण युक्ति को । बहुरि गौरि कर ध्यान करेहू ॥ भूप किशोर देखि किन लेहू ॥ । पुनः । राज्य देन कहि दीन्ह बन मोहि न शोक दुख लेश । तुम बिन भरतहिं भूपतिहिं

प्रजहिं प्रचण्ड कलेश ॥ पुनः । कोउ नृप होउ हमहिं का हानी । पुनः । मम अनुरूप पुरुष जगमाहीं । देखेउँ खोजि लोक तिहुं नाहीं ॥ ताते अब लगि रहेउं कुमारी । मनमाना कछु तुमहिं निहारी ॥ । पुनः । प्रभु प्रताप बड़वानल भारी । सोखेउ प्रथम पयोनिधिबारी ॥ तव रिपुनारिरुदन जलधारा । भरो पयोधि भयो तेहि खारा ॥ । पुनः । दशमुख देखि सभा भय पाई । बिहँसि बचन कह युक्ति बनाई ॥ शिरो गिरे सन्तत शुभ जाही । मुकुट खसे कस अशकुनताही ॥ इत्यादि बचन जहां होइ सो कहावै युक्ति सो इस मानस की मोती है युक्ति की वो मोती की कवन अंग से तुल्यता है कि जैसे मोती जल से होती है वो सारहीन होती है केवल पानी को बुल्ला है परि बड़े मोल की होतो है वो शोभायमान होती है तैसे युक्ति जो है सो उक्ति के होती है ताते सारहीन है परि सुनत नीक लागत है ताते सुन्दरि है वो जासे कहो सो प्रसन्न होत है ताते बड़े मोल की है सो सीपि सुहाई इहां सुहाई बुद्धि को जानना सो बुद्धि जो है सो युक्तिरूप मोती की सीपी है इहां पूर्व जो अष्ट प्रकार की बुद्धि कहा है सो उहां पोहा नाम बार बार कहना सुनना यह जो बुद्धि है तिसी में युक्ति रहती है ।

छंद सोरठा सुंदर दोहा । सोइ बहुरंग कमलकुल सोहा ॥ ५ ॥

छंद सोरठे अरु दोहे इह बहुरंग के कमल है ॥ ५ ॥ टिप्पणी—मानसप्रचारिका में यों लिखा है । जैसे उस मानस में बहुरंग के कमल फूले हैं तैसे इस मानस में सुन्दर छंद वो सुन्दर सोरठा वो सुन्दर दोहा जो हैं सोई बहुरंग के कमल कुल हैं शोभायमान अब जो बहुरंग कमल को तुल्य छंद सोरठा दोहा को करै तिस को रंग त्रिगुण मय जानो जो सतोगुण बाणी में छंदादि हैं सो श्वेतरंग के कमल हैं वो जो रजोगुण बाणी में हैं सो लालरंग के कमल हैं वो जो तमोगुण बाणी में हैं सो श्याम रंग के कमल हैं वो जितने छंद सोरठा दोहा हैं सो त्रिगुण बाणी में हैं देखिये तो ग्रन्थकार चारि वस्तु को इस ग्रंथ में नेमकरि दीनहै चौपाई छंद सोरठा दोहा आगे और पिंगल से कोऊ अन्य उक्ति युक्ति कहै तो कहा करै परंतु यहां तो चारि को नेम है को जानै कौन पिंगल से ॥

अरथ अनूप सुभाव सुभासा । सोइ पराग मकरंद सुबासा ॥ ६ ॥

तिन सो अर्थ जो है सो परागवत हैं अर्थन सो भाव जो हैं सो मकरंद है अरु तिस के सुभ बासे कहिये चमतकार जो हैं किंबा भली भाषा जो है सो सुगंध है । मकरंदः पुष्परजः परागः सुमनोरसइत्यमर ॥६॥ टिप्पणी—मानसप्रचारिका में यों लिखा है । जैसे उस मानस के कमल में अपने अपने रंग माफिक परागनाम रज है वो मकरंद नाम रस है वो बास नाम सुगन्ध है तैसे इस मानस में त्रिगुण वाणी में जो छंद सोरठा दोहारूप कमल है तामें अनूप अर्थ जो है सो पराग है जैसे पराग फूल में प्रकट रहत है तैसे अर्थ अच्छर में प्रकट रहत है वो सुन्दर भाव जो है सो मकरंद नाम रस है जैसे रस फूल के आवांतर रहत है तैसे भाव शब्द के भीतर रहत है वो सुन्दर भाषा जो है देश देश की सो सुगन्ध है जैसे सुगंध इधर उधर उड़त है तैसे भाषा देश देश की उड़ती है ॥

सुकृत पुंज मंजुल अलिमाला । ज्ञान बिराग बिचार मराला ॥ ७ ॥

इनो वचनों विषे जोपुन्य हैं सो सुन्दर भ्रमर हैं ज्ञान वैराग्य विचार का जो बरनन है सो मराल है ॥७॥ टिप्पणी—मानसप्रचारिका में यों लिखा है। जैसे उस मानस में कमलन पर भवंर रस लेइ रहे हैं वो हंस सुगन्ध लेइ रहे हैं तैसे इस मानस में सुकृत के पुंज नाम समूह सोइ मंजुल नाम निर्मल अलि नाम भवंरन की श्रेणी हैं सोई यह छंदादिरूप कमलन के सुन्दर भाव रूपरस को ग्रहण करे हैं यथा. सुकृत कही पुण्य को पुण्य काको कही सुनो। पुण्य एक जग में नहिं दूजा। मनक्रम बचन बिप्र पद पूजा॥ सो इस मानस ग्रन्थ में विप्रपूजन बहुत है ठौर ठौर तातें पुंज कहा वो ज्ञान वैराग्य का जो विचार सो हंस है गुणरूप दूध को ग्रहण करे है वो अवगुण जल को त्याग करे है यहां कमल के योग से भवंर वो हंस को तटलीन के साथ कहे हैं परंतु हैं ए तद्गत॥

धुनि अवरेव कबित गुन जाती। मीन मनोहर ते बहु भांती॥ ८॥

ध्वनि अवरेव गुण रीत जात यह उत्तम कविता मों होते हैं ताते इस में भो है सो इस सर मों अनेकों जातों के सुन्दर मीन हैं धुनि अरु अवरेव कहिये व्यंग स्वरूप इन दोनों को काव्य ग्रंथों मो यह कहा है जो अखरों में अर्थ भासै और अरु बीच में चमतकार और निकसै परंतु कईएक काव्यकार इन का भेद ऐसे भी कहते हैं अर्थ के चमतकार का नाम व्यंग है अरु तिस कर जो मनोरंजन होणा सो धुनि है अरु कईएक काव्यकार ध्वनि व्यंग का भेद ऐसे कहते हैं जिस अर्थ के चमतकार कथन कर स्रोता को वांछित सिध का आनंद होइ सो ध्वनी। उदाहरण रामचरित्रे। पुनि आउब एहि बेरिया काली। अस कहि मन बिहँसी एक आली॥ जब जनकपुरी को फुलवारी में रामचंद्र को देखि कर सीता आसक्त भई हैं तब सखी ने कहा इसी समें काल के दिन हम सभी फेर आवेंगीआ धुनि इस में इह है जानकी अब अति अवसर भया है श्री रामचंद्र के देखणे को जो तुझे उतकंठा है तिस निमित्त काल इसी समै मों हम तुझे साथ ले आवेंगी अरु एही बात रघुनाथ जी ने भी द्योतन कर दोनो जो तुम्हारा मन जानकी के रूप पर मोहित भया है। तुम ने भी काल इसी समै मो फूल लेणे को आवणा अरु तिस अर्थ के चमतकार कर स्रोता को अप्रसन्नता होइ अरु लज्जित होवै सो व्यंग उदाहरण। रामचरित्रे। मैं जानो तुम्हार प्रभुताई। सहसबाहु सन परी लराई। इस के अर्थ में तो रावण का महत्त है हे लंकेश तू महाबली है जो बीस बांहों कर सहसबाहु सो युद्ध किया अरु इस के चमतकार कर रावण का चित्त भंग हुआ है अरु अति लज्जित भया अथवा शब्द व्यंग इस को भी कहते हैं अक्षरों में स्पष्ट अर्थ जो भासे सो भासत होइ अरु जथार्थ अर्थ और होइ। उदाहरण। नामरूप दुइ ईस उपाधी। इस के अर्थ का भेद नाम महातम में देख लेणा अरु अवरेव नाम व्यंग का निसंदेह है जातें इसी ग्रंथ में कहा है। रामकथा अवरेव सुधारी। अरु गुन रीति जात का स्वरूप चंद्रालोक अरु काव्यप्रकाशादि को अनुसार भाषाग्रंथों मो ऐसे कहा है। दोहरा। तीन भांति गुण मधुरता ओज प्रसादहिं जान। सांतकरण शृंगाररस सुखद मधुरता मान॥ माधुर्ज यथा। द्रवेचित्त जाके सुनत अति आनंद प्रधान। अहै मधुरता रसन कर्म प्रथम सरसई मान॥ उदाहरण रामचरित्रे। कंकन किंकनि नूपुर धुनिसुनि। कहत लषनसन राम हृदय गुनि॥ मानहु मदन दुंदभी दीनी। मनसा बिश्वबिजै कहुं कीनी॥ ओज दोहरा। चित्त बढावें तेज कर ओज बीररस बास। बहुत रौद्र बीभत्सरसहिं ताको बरन निवास॥ संयोगी ट ठ ड ढ ण युत उद्धत रचना रूप। रेफ जोग

म ष बढे पद बरनौ ओज अनूप ॥२॥ उदाहरण रामचरित्रे छंद । कोदंड कठिन चढाइ सिर जटजूट बांधत मोह क्यों । जनु सैल मरकत लसत दामनि कोटि सोजुग भुजग ज्यों । प्रसाद गुन । दोहरा । सब रस सद रचनान में सब बरनन को भूप । अर्थ सुनतहीं पाइये यह प्रसाद को रूप ॥ उदाहरण रामचरित्रे । बिटप बिसाललता अरुझानी । बिबिधि बितान दिए जनुतानी ॥ कदलि तालबर ध्वजापताका । देखत मोह धीर मन जाका ॥ इति गुण । अथ रीतिः । दोहरा । गौडी बैदरिभी कहै पंचाली पुनि जान । लाटी औज प्रसाद पुन माधुरजहिं की खानि ॥ इन चारहुं रीति मैं उजप्रसाद माधुर्य तीन गुन उपजत हैं । अथ गोडी रीति लछन । दोहरा । टादि संजोगी बरन, जिहं होइ सुबडो समास । छंद बंद रचना करै, तहं गौडी को बास ॥२॥ अथ समास लछनं दोहरा । जो सो को कर लिये तेको औ मैं नहिं होइ । यह हैजाके अर्थ में लष समास है सोइ ॥ अथ गौडी में उजः उदाहरण रामचरित्रे । धर कुधर खंड प्रचंड मर्कट भालु गढ पर डारहीं । झपटहिं चरन गहि पटकि महिं भज चलत बहुर प्रचारहीं । अथ बैदरभी रीतलचणं । दो० । कम समास कि समास नहिं, अचरमानुस्वार । नहिं टबर्ग रष हूं मधुर बैदरभी सुउचार ॥ उदाहरण रामचरित्रे । उदित उदै गिरि मंच पर, रघुबर बाल पतंग । बिकसे संत सरोज सब, हरषे लोचन भृंग ॥ बैदरभी में माधुर्ज गुन होते हैं । अथ पंचाली लछनं । गौडी बैदरभी मिलै, पंचाली ह्वै रीति । उपजत तहां प्रमाण गुण, सुकबि लखै करि प्रीति ॥ ३ ॥ उदाहरण रामचरित्रे । दो० । लसत मंजु मुनि मंडली, मध्य सीय रघुचंद । ज्ञान सभा जनु तन धरे, भक्ति सच्चिदानंद ॥ इहां संजोगी सों गौरी सानुस्वार सो बैदरभी जानिये । अथ लाटी रीति लछनं । दोहरा । कोमल पद जहं रहत हैं, उपजत गुन जु प्रसाद । लाटी रीति तहां कहै लागत पढते स्वाद ॥ उदाहरण । चौ० कहहु नाथ सुन्दर द्वै बालक । मुनिकुलतिलक कि नृपकुलपालक ॥ ब्रह्म जो निगम नेति कहि गावा । उभै बेष धरि के सो आवा ॥ अथ जात लछन बरननं । दोहरा । प्रथम कौशकी भारती, भन आरभ टो भांति । कहिये सब सुभसात की, चतुर चतुर बिधि जाति ॥ कहिये केसवदास जहं करुणा हांस सिंगार । सरस उरन सुभ भाव जहं सो कौसकी बिचार ॥ बरनीय जामहं बीररस, भै अरु अद्भुत हास । कह केसव सुभ अर्थ जहं सो भारती प्रकास ॥ केसव जामहं रौद्ररस भैबिभतसक जान । आरभटी आरंभ यह पद पद यमक बखान ॥ ३ ॥ अदभुद रुद्र सुबीररस, समरस बरन समान । सुनतहिं समुझत भाव मन, सो सातुकी सुजान ॥ ४ ॥ इन जातो कों स्वरस्वती कंठाभरणवाले बृत भी कहते हैं सो इनो के उदाहरणा का प्रयतन प्रसंग बिस्तार के भै से नहीं कहा ॥ ९ ॥ टिप्पणी—मानसप्रचारिका में यों लिखा है । जैसे उस मानस में बहुभांति की मीन नाम मछरी हैं तैसे इस मानस में चारि भांति की कविता जो हैं ध्वनिकाव्य अवरेवकाव्य गुणकाव्य जातिकाव्य सोई बहु भांति की मनोहर मीन हैं ध्वनिकाव्य काको कही शब्दार्थं भिन्नो ध्वनिः ॥ शब्द के अर्थ से कुछ विलचण निकसे ताको ध्वनि कही पुनि वाही को व्यंग्य कहो ऐसे अभिप्राय कही । प्रमाणं तुलसीभूषणे दोहा । वर्ण अर्थ ते अधिक जहं, उपजावे कछु बात । ध्वन्यत तासों कहत है, जाको मति अवदात ॥ तिस को लक्ष्य । पुनि आउब यहि बेरिया काली । अस कहि मन बिहँसी यक आली ॥ पुनः । गौतमतिय गति सुरति करि, नहिं परसति पद पानि । मन बिहँसे रघुबंशमनि, प्रीति अलौकिक जानि ॥ पुनः । राम सप्रेम कहा

मुनि पाहीं । कहहु नाथ हम किहि मग जाहीं ॥ मुनिमन बिहँसि राम सन कहहीं । सुगम सकल मग तुम कहं अहहीं ॥ पुनः । उमा राम गुण गूढ़, पंडित मुनि पावहिं बिरति । पावहिं मोह बिमूढ़, जे हरि बिमुख न धर्म रति ॥ इत्यादि बचन जहां होइ । सो ध्वन्यात्मक काव्य जानो सो इस मानसर की बड़ी मीन हैं सौरी पढ़िना रोहू आदि जैसे जल के भीतर रहती हैं कोई भेदी जानै है तैसे ध्वनि शब्दन के भीतर रहती है कोई भेदी जानै है यह तुल्यता है पुनि अवरेवकाव्य काको कहो जाको अक्षर लवटि कै अर्थ सिद्धि होइ ताको लक्ष्य ॥ रामकथा कलि बिटप कुठारी । पुनः । राम कथा कलि पन्नग भरनी । पुनः । आगे चले बहुरि रघुराया । पुनः । इहां हरी निशचर बैदेही । बिप्र फिरहिं हम खोजत तेही ॥ इत्यादि बचन जहां होइ सो अवरेव काव्य जानो सो इस मानसर के बामी मीन हैं जो पुच्छ मुख मिलाइ कै चलती हैं पुनः । गुणकाव्य काको कही जो द्वै तीनि अक्षर को पद होइ वो पद पद में जमक अनुप्रास आवृत्त चलो जाइ तामें तीन भेद हैं ओज प्रसाद माधुर्य्य सो माधुर्य्य गुण उपनागरिका वाणी में होत है वो प्रसाद गुण कोमलवाणी में वो ओजगुण परुषावाणी में । प्रमाणं तुलसीभूषणे । दोहा । त्रिविध बृत्य माधुर्य्य गुण, उपनागरिका होइ । मिलि प्रसाद पुनि कोमला, परुषा ओज समोइ ॥ अब उपनागरिका माधुर्य्यगुण को लक्ष्य । दोहा । रामचन्द्र मुख चन्द्र छबि, लोचन चारु चकोर । करत पान सादर सकल, प्रेम प्रमोद न थोर ॥ पुनः । लक्ष्य कोमला प्रसाद गुण को । लागे बिटप मनोहर नाना । बरण बरण बर बेलि बिताना ॥ पुनः । भव भव बिभव पराभव कारिणी । पुनः लक्ष्य परुषा ओज गुण को । धिग धर्म ध्वजधंधक धोरी । पुनः । काई कुमति कैकयी केरी । पुनि । खग काककंक शृंगाल । कटकटहिं कठिन कराल ॥ पुनः । धरु धरु मारु मारु धरु मारू । इत्यादि ऐसे पद जहां होहिं ताको गुणकाव्य कहो सो इस मानसर के सिधरी मीन हैं जो छोटी छोटी दश बीस इकट्ठा मिलि कै चलती हैं तैसे गुण काव्य द्वै चारि पद मिलि कै चलत है ताते तुल्य है । पुनः । जातिकाव्य काको कही जाको आठ दश बारह चोदह अक्षर को पद होइ व पद को अर्थ स्पष्ट होइ व जैसो जाको रूप गुण होइ तैसो तिस में साज वर्णन करे । प्रमाणं तुलसीभूषणे । दोहा । जाको जैसो रूप गुण, कहिये तेहि की साज । तासों जात स्वभाव कहि, बरणत सब कविराज ॥ ताको लक्ष्य सुनो । मन जाहिंराचो मिलिहि सोइ बर सहज सुन्दर सांवरो । करुणानिधान सुजान शील सनेह जानत रावरो । पुनः । बिद्या बिनय निपुण गुणशीला । खेलहिं खेल सकल नृप लीला ॥ पुनः । राजकुमारि बिनय हम करहीं । तिय स्वभावकछु पूछत डरहीं ॥ स्वामिनि अबिनय छमौ हमारी । बिलगु न मानब जानि गंवारी ॥ कोटि मनोज लजावनि हारे । सुमुखि कहहु को अहहिं तुम्हारे ॥ पुनः । खायउँफल स्वहिं लागी भूखा । कपि स्वभाव ते तोरेउँ रूखा ॥ इत्यादि जहां ऐसा पद परै ताको जातिकाव्य कही सो इस मानसर की चेलहवा मीन है जो चमकत चलत है तैसे जातिकाव्य चमकत चलत है यह तुल्यता है इहां तक तटजोन कहे अब तट्गत कहते हैं जो भंवर हंस कहे हैं तिन्ह सहित ॥

अरथ धरम कामादिक चारी । कहब ज्ञान बिज्ञान बिचारी ॥ ९ ॥
नव रस जप तप जोग बिरागा । ते सब जलचर चारु तडागा ॥ १० ॥

पीछे ज्ञान वैरागादिक कहे थे इहां पुनः कहे सो पुनिरुक्ति नहीं जाते ग्रंथ में बरनन इन का बहुते इसथानो में हैं जहां विस्तार कर कहे तहां मरालहुं को समता दीनी जहां संकोच कर कहे हैं तहां जलचरों का रूप जाणना जाते जलचर गुप्त रहते हैं ॥१०॥ टिप्पणी—मानसप्रचारिका में यों लिखा है। इहां है चौपाई की एकही अन्वय जानब कि जैसे उस मानस में बहुत भांति के जलचर हैं जो कोई कहे क क्या मीन जलचर नहीं है जो मीन को जलचर से बिलग बर्णन करें सो सुनो मीन जो है सो सदा जल में लीन रहति है पल भरि बाहर न छोड़है ताते उस को तदलीन में कहे व अपर जलचर जो हैं सो जलमें रहते हैं जब खुशी भई तब घरी है घरी पहर भरि दिन भरि बाहर भी चलेजाते हैं ताते तद्‌गत हैं तैसे इस मानसर में अर्थ धर्म काम मोक्ष ज्ञान विज्ञान नवरस जप तप योग बिराग एते उन्नीस जो बिचारि के कहब साई इस चारु तड़ाग के जलचर हैं अब इन सब को बिलग बिलग स्वरूप कहते हैं मय उदाहरण के अर्थ कहीं द्रव्य राज काज हाथी घोड़ा भूषण वसन एते सब अर्थ कहावे हैं सा अर्थादि उन्नीस जो कहि आये हैं सो तो रामयश में स्वाभाविके है परन्तु जिज्ञासू के बोध अर्थ कछु उदाहरण कहत हौं काहेते कि स्वामीजी कहे कि अर्थादि उन्नीस बिचारि के कहब ताते ग्रन्थ में उदाहरण देते हैं सो सुनो अर्थ केहिको सिद्ध भयो है तहां सुग्रीव विभीषण का मुख्य और सब को दान में प्रमाणं। तेहि अवसर जो जेहि बिधि आवा। दीन्ह भूप जो जेहि मन भावा ॥ गजरथ तुरंग हेम गो हीरा। दीन्हे नृप नाना बिधि चीरा ॥ पुनः। राज दीन्ह सुग्रीव कहं अंगद कहँ युवराज। पुनः सब मिलि जाहु बिभीषण साथा। सारेहु तिलक कह्यउ रघुनाथा ॥ तुरत चले कपि सुनि प्रभु बचना। कीन्ही जाइ तिलक की रचना॥ सादर सिंहासन बैठारी। तिलक सारि स्तुति अनुसारी ॥ इत्यादि से जानो ॥ १ ॥ अब धर्म सुनो धर्म कही अपना अपनो वर्णाश्रम का कर्म दो स्त्री के पातिव्रत एते कहावें धर्म सो धर्म काको सिद्ध भयो है अहल्या जू का वो। राम राज्य में सर्व का लक्ष्य। यहि भांति सिधारी गौतमनारी बारबार हरि चरण परी। जो अति मनभावा सो बर पावा गई पतिलोक अनन्द भरी। पुनः। वर्णाश्रम निज निज धरम निरत वेद पथ लोग। चलहिं सदा पावहिं सुख नहिं भय शोक न रोग ॥ इत्यादि से जानो ॥ २॥ अब काम सुनो काम कही कामना किंतु काम कही स्त्री भोग सो दोनों काम केहि के सिद्ध भये हैं तहां बिश्वामित्र जनकमहाराज वो दंडकवासीमुनिन को कामना सिद्ध भयो है वो हर गिरिजा को भोग सिद्ध भयो। लक्ष्य। गाधिसुवन मनचिन्ता व्यापी। हरि बिन मरहिं न निश्चर पापी ॥ सो॥ मारि असुर द्विजनिर्भयकारी। अस्तुति करहिं देव मुनि भारी ॥ पुनः। जनक महाराज को। स्वहिं कृत कृत्य कीन्ह दोउ भाई। पुनः। जो सुख सुयश सुलभ मोहिं स्वामी। पुनः। दंडक मुनिन को। निश्चर हीन करौं महि, भुज उठाय प्रण कीन्ह। सकल मुनिन के आश्रमन, जाइ जाइ सुख दीन्ह। पुनः। हरगिरिजा बिहार नित नयऊ। यहि बिधि बिपुल काल चलि गयऊ ॥ इत्यादि प्रसंग से जानो ॥ ३॥ अब मोक्ष सुनो मोक्ष कही शरीरादि बंधन से छूटना ताको। लक्ष्य। अस कहि योग अगिनि तनु जारा। रामकृपा बैकुण्ठ सिधारा। पुनः। अबिरल भक्ति मांगि बर, गृद्ध गयउ हरिधाम। तेहि की क्रिया यथोचित, निज कर कीन्ही राम ॥ पुनः। निश्चर अधम मलायतनु, ताहि दीन निजधाम। गिरिजा ते नर मन्दमति, जे न भजहिं श्रीराम ॥ पुनः शबरी। तजियोग पावक देह हरि पद लीन भइ जहं नहिं फिरे। दोहा।

जातिहनी अघ जन्म महि मुक्त कीन्ह अस नारि । महामन्द मन सुख चहसि ऐसे प्रभुहि बिसारि ॥ इत्यादि से जानो ॥४॥ अब ज्ञान सुनो यहां ज्ञान कही स्व अनुभव ते सर्ब मान छोड़ि कै सब में ब्रह्मरूप देखे । लक्ष्य । ज्ञानमान जहँ एकौ नाहीं । देखत ब्रह्मरूप सब माहीं ॥ ५ ॥ अब बिज्ञान सुनो बिज्ञान कही विशेष ज्ञान जहां ब्रह्म जीव की एकता है । लक्ष्य । सोऽहमस्मि इति बृत्ति अखण्डा । दीप शिखा सोई परम प्रचण्डा ॥ पुनः । सो तैं ताहि तोहिं नहिं भेदा । बारि बीच इव गावहिं बेदा ॥ इत्यादि ॥६॥ अब नवरस कहते हैं तिन को नाम सुनो शृंगार १ हास्य २ करुणा ३ रौद्र ४ वैभत्स्य ५ भयानक ६ वीर ७ अद्भुत ८ शांत ९ । प्रमाणं भाषा भूषणे दोहा । बीर भयानक हास्ययुत अद्भुत करुणा चार ॥ शांतबिभत्स्य सुरौद्र हो रसपतिरसशृंगार ॥१॥ सो यह नवरस का उदाहरण एक श्लोक शृंगारमाला ग्रन्थ का देते हैं फेरि इस ग्रन्थ में देंगे । श्लोक । शृंगारोजनकगृहेरघुबराद्धास्यः कृतोहैनम्यात् कारुण्योनुजरोदनेखरबधेरौद्रोद्भुतः काककै ॥ वैभत्स्योहरिबन्धनेभयकरः सोतोरणेबीरहा शांतः श्रीभुवनेश्वरोभवहरौद्रामाद्रसोभून्नव १ । इति ॥ दोहा ॥ रतिशृंगारअरुहास्यरस करुणारौद्रसुबीर । भयबिभत्स्यअद्भुत बिशद शांतिकसुभग गँभीर ॥ इति जनकपुर में शृंगाररस को वर्णन । लक्ष्य । नारि बिलोकहिं हरषिहिय निजनिज रुचि अनुरूप ॥ जनु सोहति शृंगार धरि मूरति परम अनूप ॥१॥ यह प्रकरण में तो नवोरस बर्णन हैं परन्तु एक एक को उदाहरण सब काण्डन में देते हैं अयोध्याकाण्ड छोड़िकै काहे ते कि अयोध्याकाण्ड करुणामय है । अब हास्यरस शूर्पणखाप्रति लक्ष्य । मम अनुरूप पुरुष जगमाहीं । देखेउं खोजि लोकतिहुं नाहीं ॥ ताते अबलगिरहिउं कुमारी । मनमाना कछु तुमहिं निहारी ॥ सीतहि चितइ कही प्रभु बाता । अहैकुमार मोर लघुभ्राता । गइ लक्ष्मण रिपु भगिनी जानी । प्रभु बिलोकि बोले मृदुबानी ॥ सुन्दरि सुनु मैं उनकर दासा । पराधीन नहिं तोर सुपासा ॥ इत्यादि अब करुणारस सुनो करुणा कहो दूसरे को दुःख में दुःखित होइ सो जब लक्ष्मण जू को शक्ति लगी तहां रघुनाथ जू दिखाये । लक्ष्य । इहां राम लक्ष्मणहि निहारी । बोले बचन मनुज अनुहारी । पुनः । प्रभु प्रलाप सुनि कान बिकल भये बानर सकल । आइ गये हनुमान जनु करुणा महँ बीररस ॥ इत्यादि ॥३॥ अब रौद्र कहते हैं रौद्र कही क्रोध को सो खरदूषण के बध में । लक्ष्य । कोपेउ समर श्रीराम । चले बिशिष निशितनिकाम ॥ अवलोकि खरतर तीर । मुरि चले निशचर बीर ॥ भये क्रोध तीनिउं भाइ । जो भागि रण ते जाइ ॥ तेहि बधब निज हम पानि । फिरे मरन मनमहँ ठानि ॥ आयुध अनेकप्रकार । सन्मुख ते करहिं प्रहार ॥ रिपुपरम कोपेउ जानि । प्रभु धनुपशर संधानि ॥ इत्यादि ॥४॥ अब अद्भुतरस कहते हैं अद्भुत कही जो कबहुं न भया होइ सो काकभुशुण्डजी को श्रीरामजी दिखाये बाहर भीतर । लक्ष्य । सप्तावरण भेदिकरि जहँ लगि गति रहि मोरि । गयउँ तहां प्रभु भुज निरखि व्याकुल भयउँ बहोरि ॥ पुनः भीतर । उदरमांझ सुनुअण्डजराया । देखेउँ बहु ब्रह्माण्ड निकाया ॥ इत्यादि । यह प्रसंग भरि अद्भुतरस जानो ॥५॥ अब वैभत्स्यरस कहते हैं वैभत्स्य कही जहां रसाभास होइ सो जब रघुनाथजी नागबन्धन अंगीकार कीन्ह तब दिखाये । लक्ष्य । नागपाश बश भयउ खरारी । स्वबश अनन्त एक अधिकारी ॥ रण शोभा लगि आपु बंधायो । देखि दशा देवन भय पायो ॥ इत्यादि बचन से जानो ॥६॥ अब भयावन रस सुनो भयावन कही जो कछु देखि सुनि कै भय होइ सो सेतु बंधे पर रावण को भय

भई। लक्ष्य। सुनत श्रवण बारिधि बन्धाना। दशमुख बोलि उठा अकुलाना॥ बांध्योजलनिधि नीरनिधि उदधि सिन्धु बारीश। सत्यतोय निधि कम्पती जलधि पयोधि नदीश॥ व्याकुलता निज समुझि बहोरी। बिहँसि चला गृह करि मति भोरी॥ इत्यादि में जानो॥७॥ अब बीररस सुनो बीररस कही जो रण में उत्साह पूर्वक लरै सो राम रावण के युद्ध में है। लक्ष्य। सुनि दुर्बचन कालबशजाना। बिहँसि बचन कह कृपानिधाना॥ सत्य सत्य तव सब प्रभुताई। जनि जल्पसि दिखाउ मनुसाई। पुनः रावण। जोतिहूंत भट संयुग माहीं। सुनु तापस मैं तिन्ह समनाहीं॥ रावण नाम जगत यश जाना। लोकप जाके बंदीखाना॥ खरदूषण बिराध तुम मारा। बधेउ व्याध इव बालि बिचारा॥ निशिचर सुभट सकल संहारेहु। कुम्भकरण घननादहि मारेहु॥ आजु बैर सब लेउँ निबाही। जो रणभूमि भागि नहिं जाही॥ इत्यादि में जानो॥८॥ अब शांतरस सुनो शांत कही जामें मोक्ष का अधिकार होइ सो राम राज्य में सब मोक्षाधिकारी भए। लक्ष्य। रामराज्य नभगेश सुनु सचराचर जगमाहिं। कालकर्म स्वभाव गुणकृत दुखकाहुहिनाहिं॥ पुनः। रामभक्तिरत सब नरनारी। सकल परमपद के अधिकारी॥ इत्यादि में जाना॥९॥ इति नवरस॥ अब जप को लक्ष्य सुनो॥ अस कहि लगे जपन हरिनामा। पुनः। जपहिं सदा रघुनायक नामा। पुनः। ओहि नाम जपु लोचन नीरू। पुनः। रामराम रघुपति जपत स्रवत नयन जल जात। पुनः। जपौ मन्त्र शिव मन्दिर जाई॥ इत्यादि में जाना॥ अब तप को लक्ष्य सुनो॥ उरधरि उमा प्राणपति चरणा। जाइ बिपिन लागीं तप करणा। अति सुकुमारि न तनुतप योगू। पतिपद सुमिरि तज्यउ सब भोगू॥ सम्बत सहस मूलफल खाये। शाकखाइ शतबर्ष गंवाये॥ कछु दिन भोजन बारि बतासा। किये कठिन कछुदिन उपवासा॥ बेलपात महि परत सुखाई। तीनिसहस सम्बत सो खाई॥ पुनि परिहरयउसुखानेउ परना। उमहि नाम तब भयउ अपरना॥ देखि उमहिं तप खीन शरीरा। ब्रह्म गिरा भइ गगन गंभीरा। पुनः। पुनि हरिहेतु करन तप लागे। बारि अहार मूलफल त्यागे॥ पुनः। बिधि हरिहर तप देखि अपारा॥ इत्यादि प्रसंग में जानो॥ अब योग कहते हैं योग कही अष्टांग यम १ नियम २ आसन ३ प्राणायाम ४ प्रत्याहार ५ ध्यान ६ धारणा ७ समाधि ८ मुख्यसमाधि जामें आत्मा को परमात्मा विषै योजना जाना सो कहावै योग सो नारदजी कीन्ह। लक्ष्य। निरखि शैल सरि बिपिनि बिभागा। भयउ रमापतिपद अनुरागा॥ सुमीरत हरिहि शाप गति बाधी। सहज बिमल मन लागि समाधी॥ इत्यादि में जाना॥ अब बिराग कहते हैं बिराग कही बिगतरागः बिरागः तिस को उदाहरण सुना। जानिय तबहिं जीव जगजागा। जब सब विषय बिलास बिरागा। पुनः। कहिय तात सो परम बिरागी। तृणसम सिद्धि तीनि गुण त्यागी॥ इत्यादि में जानो अर्थादि को स्वरूप उदाहरण अपनीमति के माफिक कहा जो कोई और कछू कहै तौ सही।

सुकृति साधु नाम गुन गाना। ते बिचित्र जल बिहंग समाना॥ ११॥

सुकृती संत जो सुतीक्ष्णादिक हैं तिन को नामों अरु गुणों के गाइन के जो प्रसंग है सो सुन्दर जल खगो सम है॥ ११॥ टिप्पणी—मानसप्रचारिका में यों लिखा है। जैसे उस मानस में जलबिहंग हैं कुक्कुटादिक तैसे इस मानस में सुकृति गुणगान नाम साधुगुण गान जो हैं सोई कुक्कुटादि

जलबिहंग हैं विचित्र भांति भांति के अब उदाहरण सुनो । प्रथम सुकृति के । हम सब सकल सुकृत को रासी । भये जग जन्मि जनकपुरबासी ॥ जिन्ह जानकी राम छबि देखी । को सुकृती हम सरिस बिसेखी ॥ पुनः । किन्हि सुकृति किन्हि घरी बसाये । धन्य पुण्यमय परम सुहाये ॥ पुण्य पुञ्ज सगुनिकट निवासी । तिनहि सराहत सुरपुरबासी ॥ इत्यादि सुकृति गुणगण जाना । अब साधु गुणगान सुनो नारद प्रति श्रीरामजी कहा । पुनः । भरतजी प्रति श्रीरामजी कहा । पुनः । गरुड़प्रति भुसुण्डि जी कहा । सब का लक्ष्य । सुनि मुनि साधुन के गुण कहऊं । जिन्हि ते मैं उन के बश रहऊं ॥ इहां से लेइकरि औ सुनि मुनि साधुन के गुण जेते । कहि न सकहिं शारद श्रुति तेते ॥ इहां पर्यंत । पुनः । सन्तन के लक्षण सुनु भ्राता । अगणित श्रुति पुरान बिख्याता ॥ इहां से वो । सुनहु तात माया कृत, गुण अरु दोष अनेक । गुण यह उभयन देखिये, देखिय सो अबिबेक ॥ इहां पर्यंत । पुनः । परउपकार बचन मन काया । सन्त सहज स्वभाव खगराया ॥ इत्यादि प्रसंग साधु गुणगान जानो अब नाम गुणगान सुनो । ब्रह्म राम ते नाम बड़, बरदायक बरदानि । इहां तब दोहा नाम गुणगान है । पुनः । यद्यपि प्रभु के नाम अनेका । श्रुति कह अधिक एक ते एका ॥ राम सकल नामन ते अधिका । होउ नाथ अघ खग गण बधिका ॥ राका रजनी भक्ति तव, राम नाम सोइ सोम । अपर नाम उडुगन बिमल, बसहु भक्त उर ब्योम ॥ पुनः । तीरथ अमित कोटि शतपावन । नाम अखिल अघपुञ्जनशावन ॥ इत्यादि प्रसंग नाम गुणगान जानो एते सब यह मानसर के बिचित्र जलबिहंग हैं ॥

संत सभा चहुं दिसि अमराई । स्रद्धा रितु बसंत सम गाई ॥ १२ ॥

संतों के समागमों का जो बरनन है सो इस सर के समीप बाग हैं अथवा इस कथा के श्रवण निमित्त जो संतसभा का एकत्र होना है सो आमहूं के बाग हैं तिन को भगवंत के यश सुनने को जो सरधा है सो बसंतरितु सम है ॥ १२ ॥ टिप्पणी—मानप्रचारिका में यों लिखा है । इहां तक तड़ागत स्वरूप कहि अब तटाश्रय कहते हैं । जो तड़ाग के बाहर उस के आश्रय हैं इहां जैसे उस मानसर के चहुंओर अमराई लगी है तैसे इस मानसर के चहुंओर सन्त समाज जो जो हैं सोई अमराई हैं इस से । सन्त सभा चहुं दिशि अमराई । से ले अरु । ते यहि ताल चतुर रखवारे । तक ग्रन्थ में बाहिर की बात बर्णन है ताते ग्रन्थ को उदाहरण नहीं कहते कहूं २ प्रसंग पाइ के प्रमान देहिंगे जैसे उहां अमराई में बसन्तऋतु है तैसे इहां सन्तसभा अमराई में श्रद्धा जो है सोई बसन्तऋतु सम गाई है जैसे बसन्तऋतु करिके अमराई शोभित होत है तैसे श्रद्धा से सन्तसभा ॥

भगति निरूपन बिबिधि बिधाना । छमा दया द्रुम लता बिताना ॥ १३ ॥

भक्ति के जो नवधा प्रेमा परा आदिक अनेक भांत के निरूपण हैं अरु तत्संबंधी जो क्षमा दया दमादिक गुणों के बरनन है सो बेलों के निकुंज हैं ॥ १३ ॥ टिप्पणी—मानसप्रचारिका में यों लिखा है । जैसे उस अमराई में अनेक तरह के द्रुम नाम बृक्ष हैं आंब जामुन कटहर बड़हर खिरनी महुआ तिन्ह द्रुमन पर अनेक तरह की लता जो बेलि सो बितान इव चढ़ि के छाइ रही हैं तैसे सन्तसभा अमराई में अनेक तरह के उपासक जो हैं सोई अनेक तरह के द्रुम हैं वो बिबिधि बिधान की भक्ति निरूपण

जो है निरूपण कही अर्थ सो भजन सेवा धातु है भक्ति कही सेवा सो बहुत बिधि की है नवधा प्रेमा परा। नवधा में भेद। श्रवण १ कीर्त्तन २ स्मरण ३ पादसेवन ४ अर्चन ५ बंदन ६ दास्यपन ७ सख्यपन ८ आत्मसमर्प्पण ९। प्रमाणं भागवते श्लोक। श्रवणंकीर्त्तनंविष्णोः स्मरणंपादसेवनं। अर्चनंबंदनंदास्यं-सख्यमात्मनिवेदनं॥ १॥ पुनः। नवधा कही सन्तन को संग १ कथाप्रसंग में रत २ मान रहित गुरुपद सेवन ३ रामगुणगान ४ मन्त्रजाप ५ शमदमादि सन्तन के बहुकर्म ६ सब को राममय देखै वो सन्त को राम ते अधिक जानै ७ यथालाभ यथासंतोष न देखै परदोष ८ सब से सरल छलहीन राम भरोस दीनता हर्षनास्तो ९। प्रमाणं मानसरामायणे। प्रथम भक्ति सन्तन कर संगा। दूसरि रत मम कथा प्रसंगा॥ गुरु पद पंकज सेवा, तीसरि भक्ति अमान। चौथि भक्ति मम गुणगण, करै कपट तजि गान॥ मन्त्र जाप मम दृढ़ विश्वासा। पंचम भजन सो बेद प्रकासा॥ छठ दमशील बिरति बहु कर्म्मा। निरत निरन्तर सज्जन धर्म्मा॥ सप्तम शम मोहिं मय जग देखा। मो ते सन्त अधिक कर लेखा॥ अष्टम जथा लाभ संतोषा। सपनेहु नहिं देखै परदोषा॥ नवम सरल सब सन छल हीना। मम भरोस हिय हर्ष न दीना॥ इत्यादि भक्ति निरूपण जानो सो बिबिधबिधान को भक्ति निरूपण वो क्षमा क्षमा कही कोई अपराध करै ताको सहिजाइ वो दया जो मन बचन कर्म से पराये को दुःख न देना सो दया सो ये तीनउं भक्ति निरूपण वो क्षमा वो दया सन्तरूप अमराई में बितान नाम छाय रही है॥

संजम नियम फूल फल ज्ञाना। हरिपद रति रस बेद बषाना॥१४॥

संयम अरु नेमादिकों का जो बरनन है सो इहां फूल है ज्ञान का बरनन फलरूप है अरु भगवंत के पदारबिंदों की अबिरल भक्ति का बरनन तिस ज्ञानरूपी फल का रस है ऐसे बेद कहते हैं॥ १४॥

टिप्पणी—मानसप्रचारिका में यों लिखा है। जैसे उस अमराई में अनेक रंग के फूल फूले हैं तैसे सन्त सभा में संयम नियम दश दश जो हैं संयम कहि अहिंसा १ सत्य २ स्तेय ३ ब्रह्मचर्य्य ४ दया ५ क्षमा ६ नम्रता ७ धृति ८ अल्पभोजन ९ शौच १० पुनि नेम शौच १ होम २ तप ३ दान ४ विद्याध्ययन ५ इन्द्रियनिग्रह ६ व्रत चान्द्रायणादि ७ उपवास ८ मौनता ९ त्रिकालस्नान सन्ध्या १०। प्रमाण गायत्री भाष्यश्लोक। अहिंसासत्यमस्तेयंब्रह्मचर्यंदयार्जवं॥ क्षमाधृतिर्मिताहारः शुचिश्चसंयमादश॥१॥ शौचेज्याच तपोदानं स्वाध्यायोपस्थनिग्रहं॥ व्रतोपवासमौनानिस्नानंचनियमादश॥२॥ एतेसंयम नियम फूल हैं। पुनः। उस अमराई के फूलन में फल लगे हैं वो फल में रस हैं तैसे इस सन्तसभा अमराई के संयम नियम फूलन में ज्ञानफल है जैसे फूल में फल लगे तब फूल शोभित होइ है जो फल न लगा तो फूल वृथा है तैसे संयम नियम करने से जो ज्ञान होइ तो संयम नियम शोभित है जो संयम नियम बहुत किया वो ज्ञान न भया तो जानो संयम नियम वृथा है वो हरिपद में रतिनाम प्रीति सो ज्ञानरूप फल को रस जानो यह बेद कहा है कि जैसे फल लगा वो पक्करस न भया तो फल कैसो लागत है मिष्ठ नहीं तैसे ज्ञान भया वो हरिपद प्रीति न भई तो वह ज्ञान अशोभित है।

औरो कथा अनेक प्रसंगा। तेइ सुक पिक बहु बरन बिहंगा॥१५॥

टिप्पणी—मानसप्रचारिका में यों लिखा है। जैसे उस मानसर की अमराई में अनेक वर्ण के पक्षी

शुक पिकादि रहते हैं तैसे इस मानसर के आसरे जो सन्तसभा अमराई है तिस में जो और कथा पुराणादि के अनेक प्रसंग कहते सुनते हैं सोई अनेक रंग के पक्षी हैं इहां शुकपिकादि पक्षिन को वो औरो कथाप्रसंग को तुल्यता इस देश में है कि जैसे अन्यस्थान के पक्षी आइकरि मानसर में चोंच भरि जल पी करि तनक अमराई में बिलमि फेरि अपने स्थान को गये तैसे अनेकनकथा को प्रसंग जब रामचरित मानस होनेलगा तब कोई प्रसंग पायकरि दृष्टान्त हेतु वा कोई प्रमाण हेतु कहे जाते हैं सोई चोंच भरना है वो कुकवेर सन्तसभा अमराई मे बिलमि परस्पर कहत सुनत फेरि जिस ग्रन्थ में आये तहां को गये लक्ष्य और कथाप्रसंग का। सिवि दधीचि हरिचन्द कहानी पुनः। सिवि दधीचि बलि जो कछु भाषा। पुनः। परशुराम पितु आज्ञा राखी। मारी मातु लोक सब साखी। पुनः। तनयययातिहि यौवन दयऊ। इत्यादि प्रसंग जहां जहां चाई सो औरो कथा जानो।

दोहा—पुलक बाटिका बाग बन, सुप सुबिहंग बिहारु।
माली सुमन सनेह जल, सींचत लोचन चारु॥ ३७॥

भगवंत का यश सुनि पढ़ बार जो रोमांच [illegible] हैं यह पुहुपबाटिका है बाग कहिये बागो सो प्रेमकर गदगद होना [illegible] बन है बनों मे पंखो [illegible] हैं इहां [illegible] सुख उपजते है सोई बिहंग है [illegible] जो मन है सो माली है प्रमरूपी जल है जल के सीचने [illegible] इहां सुन्दर लोचन हैं॥३७॥ टिप्पणी—मानसप्रचारिका में यों लिखा है। जैसे उस अमराई मे तीनि परिखा हैं प्रथम बाटिका नाम फुलवारी जामे केवल फूलै फूलि है रस से सुगन्ध टार तामे भंवरा वा रायमुनिआं आदि छोटी छोटी पक्षी जो केवल फूलें का रस ग्रहण करत हैं दो दूसर परिखा बाग जामे आम जामुनि कटहर बड़हर तासे फल लगे हैं तिस फल को अनेक शुकादि पक्षी ग्रहण करते हैं सो तीसर परिखा बन है जामे अनेक तरह के वृक्ष है अनेक तरह के फल है तिन्ह फलन को बन के अनेक तरह के पक्षी ग्रहण करते हैं तैसे इस मानसर के संतसभा रूप अमराई मे तीनि भांति की पुलकावली जो है सोई बाटिका बाग बन है तीनि भांति की पुलकावली कहनि है तहा सुनो जैसे अमराई समष्टी एक है फेरि उसी में तीनि परिखा कहे बाटिका बाग बन तैसे सन्तसभा समष्टी एक है फेरि उस मे त्रिकाण्डी है भक्तिकाण्ड ज्ञानकाण्ड कर्मकाण्ड सो जो भक्तिकाण्ड को पुलकावली है सो बाटिकानाम फुलवारी है जैसे फुलवारी मे सब दिन जल को नहरि लगी रहे है तैसे भक्तिकाण्ड को पुलकावली मे बार बार अश्रुपात होत है ताही ते पुलक रूप बाटिका बारह मास फूले रहते है तिस पुलक रूप फूल मे श्रीसीताराम जू के गुण स्वरूप माधुर्य्य सोई रस हैं तामे जो अपने भावनानुकूल भयो सुख सोई रायमुनिआं आदिक बिहंग हैं सो बिहारपूर्वक माधुरी रस को ग्रहण करे हैं वो जो ज्ञानकाण्ड की पुलकावली है सो बाग है कि जैसे बाग मे छहमहीना वर्ष दिन मे कहूं एक दिन जल दिया जाता है तैसे ज्ञानकाण्ड मे पुलकावली थोरी है तामे जीवन् मुक्तफल है ब्रह्मानन्द रस है वो अपनी बुद्धि के अनुकूल जो भयो सुख सो शुकादि विहंग है सो ब्रह्मानन्द मे बिहरे हैं वो जो कर्मकाण्ड की पुलकावली है सो बन है कि जैसे बन कोऊ सींचत

नहीं दैव के भरोसे होत है तैसे कर्मकाण्ड की पुलकावली दैवाधीन है जामें अर्थ धर्म काम उत्तम मध्यम निकृष्ट फल लगे हैं वो अहंकार पूर्वक जो भयो सुख सोई उत्तम मध्यम निकृष्ट तीनि भांति के विहंग हैं फलन को भोगरूप रस ग्रहण करै हैं वो तीनिउँ के सुन्दर मन सोई माली है वो तीनिउँ के भावानुकूल जो सनेह सो जल है नेत्र घट है चारु नाम सुन्दर तेहि से लै लै नाम नेत्र भरि भरि पुलकरूप वाटिका बाग बन सींचते हैं।

जे गावहिँ यह चरित संभारे । तेइ येहि ताल चतुर रखवारे ॥ १ ॥

इस रामचरित्र मानस को जो संभार कर गावते कहिये छंदो चौपायो को यथोचित स्वर संजुत पढ़ते हैं अथवा आवश्यक प्रसंगो का निकास कर गुसाईंजीकीहीं वाणी को जो गावते हैं सो इस सरोवर के रक्ष्यक हैं ॥ १ ॥ टिप्पणी—मानसप्रचारिका में यों लिखा है। जैसे उस मानसर मे देवतन के प्रवीण रचक बैठे हैं चहूंफेर की जोनै कोऊ जल को बिगारै ना थूंकि खखारि कै तैसे इस मानस रामचरित को जे सँभारि कै गावते हैं तेई यह रामचरित मानस के चतुर रखवारे हैं इहां सम्भारब कही स्मरण को जे रातिउ दिन यही मे लगे रहते हैं बिचारत रहते हैं तेई पूर्वा पर सँभारे रहते हैं कि जामे कोई बिजाती एक चौपाई वा एक दोहा लेइकरि आन को आनै अर्थ करै सोई बिगारना तुल्य है सो तिस की वाणी को पूर्वा पर प्रसंग से खण्ड करि देना सोई रखवारी है।

सदा सुनहिं सादर नर नारी । तेइ सुरवर मानस अधिकारी ॥ २ ॥

इस रामचरित्रमानस को जो सदा आदर संजुक्त श्रवण करते हैं सो अधिकारी कहिये सदा तीरथ सेवी तिन सम हैं॥ २। टिप्पणी—मानसप्रचारिका मे यों लिखा है। इहां ताईं तटाश्रय कहि अब अधिकारी अनधिकारी मार्ग की कठिनाई कठिनता को निवारण सब कहते है कि जैसे उस मानसर में देवता स्नान पान करते हैं वोई अधिकारी हैं तैसे इस मानसर के जे नर नारि आदरपूर्वक सदा सुनते हैं तेई देव रूप अधिकारी हैं।

अति खल जे बिषई बक कागा । एहिं सर निकट न जाहिँ अभागा ॥३॥
संबुक भेक सेवार समाना । इहां न बिषय कथा रस नाना ॥ ४ ॥

संबुक नाम काली सीप का भेक कहिये दादुर सेवार नाम जल की मल का इतर सुगम ॥ ४ ॥

तेहि कारन आवत हिय हारे । कामी काक बलाक बिचारे ॥ ५ ॥

तेहि कारण कहिये अहार की अप्राप्ति जानकर चित्तभंग हुयेआवते हैं कामीनर जो वायसो बक से हैं ॥ ५ ॥ टिप्पणी—मानसप्रचारिका मे यों लिखा है। अब अनधिकारी कहते हैं कि जैसे उस मानस में कउवा बकुला नहीं जाते काहेते कि उनका आहार जो घोंघी सिवार मिढुका सो उहां नहीं है ताते हारि कै नहीं जाते इहां तीनिचौपाई की एकही अन्वयजानब तैसे इस मानस में जे अतिखल हैं अति खलकही कि जे पभ्रमुते हैं मानते नहीं अपनो हठकरते हैं ते अतिखल तेई काकहैं वो जे बिषयोहैं अत्यन्त विषय में आशक्त ते बकुलाहैं ते दोउखल व बिषयी अभागे काक बलाक यहि सर के निकट नहीं जाते

काहे कि घोंघी सिवार मेढुका के समान यहां नाना विषय रसकी कथा नहीं है ताते आवतमन्ते हृदय मे हारि जाते हैं काहे ते बिचारे हैं नाम उन का चारा यहां बिगत है नाम नहीं हैं ।

आवत एहि सर अति कठिनाई । रामकृपा बिनु आइ न जाई ॥ ६ ॥

जो कोउ कहै आवन में क्या प्रतिबंध है तौ मानसरोवर के मारगों वत इहां भी कठिनता कहते हैं ॥ ६ ॥ टिप्पणी—मानसप्रचारिका में यों लिखा है । अब कठिनता कहतेहैं कि जैसे उस मानस को जाना कठिन है इष्ट की कृपाबिना नहीं जाइ सकै तैसे इस मानस को आवत अति कठिनाई है बिना श्रीरामचन्द्र की कृपा नहीं आया जाइ है ।

कठिन कुसंग कुपंथ कराला । तिन्हके बचन बाघ हरि ब्याला ॥७ ॥

कठिन जो कुसंगी हैं सोई अति क्रूर मारग है अरु कुसंगियों के जो बचन सो बाघ अरु हरि प्रसिद्ध सिंह हरि कहिये बड़ी ग्रीवावान श्वेत सिंघ ब्याल कहिये नाग तिना सम है ॥७॥ टिप्पणी—मानसप्रचारिका में यों लिखा है । जैसे उस मानस के रास्ता कठिन है व मार्ग में व्याघ्र सिंह सर्प हैं ताते कराल हैं तैसे इस मानसर के जो कुसंगी स्वार्थी हैं तेई कठिन पन्थ हैं व तिन्हहीं कुसंगिन के बचन जो हैं सोई सिंह व्याघ्र सर्प हैं सोई कराल हैं जे अपने ते बड़े हैं ते डाटि के बन्दकिये तिन्ह का बचन सिंह है व जे अपने ते बरोबरि के हैं ते ईर्षा करिकै बन्द किये तिन्ह का बचन व्याघ्र है व जे अपने ते छोटे हैं ते अनेक तर्क कहि बन्द किये तिन्ह के बचन सर्प हैं ।

गृह कारज नाना जंजाला । तइ अति दुर्गम सैल बिसाला ॥ ८ ॥
बन बहु बिषय मोह मद माना । नदी कुतर्क भयंकर नाना ॥ ९ ॥

पुत्रादिकों का मोह अरु धन का मद अरु विद्या का मान यह घोर बन है अरु कामादिकों भोगों निमित्त कहणा परलोक किस ने देख्या है इत्यादिक कुतर्क कांही भयानक सरिता है ॥९॥ टिप्पणी—मानस प्रचारिका में यों लिखा है । जैसे उस मानस के रास्ता में बड़ेबड़ पहाड़ हैं ताते मार्ग अति कठिन ह्वै गयो न पहाड़ चुकै न रास्ताबराइ तैसे इस मानस के कुसंगीरूप रास्ता में जो नानागृह कार्य को जंजालहै सोइ बड़ेबड़े पर्बतहैं दुर्गम जो दुःखोंकर के गम्य नहीं सो न गृहकार्य चुकै न कुसंगिन से छुट्टी मिलै । जैसे उस मार्ग में बिषम बन हैं तैसे कुसंगिन में मोह मद मान सोई बिषम बन हैं कि गृहकार्य में चाहे खालिउ मिलै पर मोह मद मान ये बड़े कठिन हैं व जैसे उस रास्ता में भयंकर नदी है तैसे इस मार्ग में जो नाना कुतर्क हैं सोइ भयंकर नदी है कुतर्क कही भाषा क्या सुनना । पुनः । शूद्र के मुख से क्या सुनना । पुनः । वक्ता अभिमानी है । पुनः । हम को कोऊ मान देइ कि नहीं इत्यादि कुतर्क ।

दोहा—जे श्रद्धा संबल रहित, नहि संतन्ह कर साथ ।
तिन कहुँ मानस अगम अति, जिनहिं न प्रिय रघुनाथ ॥ ३८ ॥

गुरों शास्त्रों के बचनों पर सत्य प्रतीतिरूपी तोसा जिन के पास नहीं अरु जिनो पुरुषों से यह धन प्राप्ति होता है तिनो संतो का संग भी जिन को नहीं अरु रघुनाथजी भी जिन को प्यारे नहीं तिन को

यह मानसरोवर का स्नान अति दुर्लभ है ॥ ३८ ॥ टिप्पणी—मानसप्रचारिका में यों लिखा है। जैसे उस मानस के जाइबे में रास्ता कठिन बिशाल पहाड़ कराल सिंह व्याघ्र सर्प। पुनः। नदी बन विषम है परन्तु तीन बस्तु जो होइ तौ ठेलिपेलि जाइ सकै तीन बस्तु कौन कि पास खर्च होइ अथवा कोई बड़े आदमी को संग होइ अथवा उस सर के अभिमानी देवता से प्रीति होइ जो यहि तीन में एकौ न भयो तौ मानस को जाना अगम है तैसे इस मानस के आइबे में कुसंगी व तिन के कठिन बचन व गृहकार्य्य को नाना जंजाल व मोह मद मान कुतर्क एते विषम हैं परन्तु जो श्रधारूप खर्च अथवा सज्जनन को संग अथवा इस मानस के अभिमानी जो रघुनाथ तिन से प्रीति होइ तौ इस मानस में आइ सकै जो श्रधा न भई व सज्जनों को संग न भयो व रघुनाथ प्यारे नहीं हैं तिन्हगरीबन को इस मानस का आना अति अगम है।

जौ करि कष्ट जाइ पुनि कोई। जातहिं नींद जुड़ाइ होई ॥ १ ॥
जड़ता जाड विषम उर लागा। गएहु न मज्जन पाव अभागा ॥ २ ॥

विमुख नर कदाचित श्रीराम जस के समागमरूपी सर मों आवहिं भी तौ उन को निंद्रारूप ज्वर व्यापता है अरु जो लेता न आई तो जडतारूपी जाडा लागता है जडता कहिये नेत्र भी खुले होहिं अरु बुद्धि चक्रत होइ जाइ संतो का एक बचन भी समझ न सकै ॥ २ ॥ टिप्पणी—मानसप्रचारिका में यों लिखा है। जैसे उहां सर्व सहाइ होन आए करिकै जो जाइ तौ जातही जूड़ी ताप होइ तैसे इहां सर्व सहाय हीन जो इर्षा रूप कष्ट करि कै आये तो आवतै नींद रूप जुड़ाई होई जुड़ाई कही जूड़ी ताप। जैसे तहां जूड़ी के मारे जाड लगा गएहु पर मज्जन न पाया तैसे इहां नींद के मारे विषम कही तीक्षण जड़ता आई गई सो आवतेहु पर श्रवण नाम सुना नहीं।

करि न जाइ सर मज्जन पाना। फिरि आवै समेत अभिमाना ॥ ३ ॥

मज्जन कहिये कथा को संपूरण प्रसंग बृत्तांत के सुनाना अरु पान कहिये किसी एक बचन मो प्रवृत्त होणो सो भी नहीं भयो अरु हंकार सहित फिर आए जो हम तीरथ कर आए हैं हम सतसंग कर आए हैं ॥ ३ ॥ टिप्पणी मानसप्रचारिका में यों लिखा है। जैसे उहां जाड़ के मारे स्नान पान नहीं करि गयो मैल के सहित प्यासा फिरि आया तैसे इहा जड़ता के मारे श्रवण धारण तौ भयो नहीं अभिमान रूप मैल के सहित आशारूपी पियासा फिरि आयो।

जौं बहोरि कोउ पूछन आवा। सर निंदा करि ताहि सुनावा ॥ ४ ॥

तीसर अघ यह भया जब लोक मिलें वो बृत्तांत पूछा कि कैसा स्नान किया संतो के मुखों से कैसे बचन सुणे तब दाघ से सरनिंदा कहिये तीरथबासिवो की निंदा करी जो तीरथ पर महाकामी लोभी जीव बसते हैं संतों की निंदा करी जो राम सुजस पढकर लोकमान के अर्थ लोकों को उपदेश करते हैं आप नहीं कमावनें इत्यादिक अनेक विघ्न है परंतु ॥ ४ ॥ टिप्पणी—मानसप्रचारिका में सुनावा की स्थान परबुझावा पाठ है और निम्न लिखित अर्थ लिखा है। जो कोई उन से बहोरिकै पूंछने आया कि मानस

का हाल कही तौ वे अभागे दोनों सर के जानेवाले दोनों सर की निन्दा करि कै समुझाय दिये एक ने कहा कि उतै मानस में क्या है जाड़न मरना है व पुरइनि बहुत से है वो जल तो जैसो इहां तैसो उहां वो इतै मानस में क्या है नींदन मरना है वो चोपाई तौ है वो रामकथा तो हम घरही में कहिलेते हैं व्यास तौ लोभ के मारे कथा बांचते हैं यह सुनिकरि जिस को जाने आवने को मन रह्यो सो भी मिटि गयो।

सकल बिघ्न ब्यापहि नहि तेही । राम सुकृपा बिलोकहि जेही ॥ ५ ॥

टिप्पणी—मानस प्रचारिका में यों लिखा है। एते रास्ता आदि वो जाड़ अंत पर्यंत जो बिघ्न सो तेहि प्राणी को नहीं ब्यापते हैं जेहि के श्रीराम सुष्टु कृपा दृष्टि से देवें ।

सोइ सादर सर मज्जनु करई । महाघोर त्रयताप न जरई ॥ ६ ॥

टिप्पणी—मानसप्रचारिका में यों लिखा है। सोई प्राणी सादर कही आदर संयुक्त रामचरितमानस में मज्जन नाम सुनते हैं ते महाघोर जो त्रैताप दैहिक दैविक भौतिक तिस में नहीं जरते हैं मानस के प्रताप ते सदा शीतल रहते हैं॥

ते नर यह सर तजहिं न काऊ । जिन्ह के राम चरन भल भाऊ ॥ ७ ॥

टिप्पणी—मानसप्रचारिका में यों लिखा है ते प्राणी यह मानसर को कबहूं नहीं तजते कि जिन्ह के श्री सीताराम पद कमल में भलो भाव नाम प्रीति है।

जो नहाइ चह एहिं सर भाई । सो सतसंग करौ मन लाई ॥ ८ ॥

टिप्पणी—मानसप्रचारिका में यों लिखा है। अब श्री गोस्वामी जी महाराज मानस के प्राप्ति के मुख्य उपाय कहते हैं कि जो कोई यहि मानस में हे भाई नहावा चाहै तो मन लगाइ कै सत्संग करै।

अस मानस मानस चष चाही । भइ कबि बुद्धि बिमल अवगाही ॥ ९ ॥

ऐसा जो मानसरोवर है सो मानसी नेत्रों से देख्या तब कवि की निर्मल मति ने इस रामचरितमानस को अवगाहन किया अर्थ यह रिदै में बारंबार परामरश किया तदनंतर ॥ ९ ॥ टिप्पणी—मानस प्रचारिका में यों लिखा है। यहां ताईं जैसो मानस का स्वरूप है सो कहि वा अधिकारी अनधिकारी कहि साधन बताये अब जौने हेतु नाम कारण कै जगत् में प्रचार भयो है सो कहते हैं कि अस मानस कस मानस जस ऊपर कहि आये हैं सम्बादरूप घाट से लेइ वो सँभारि कै गावनेवाले चतुर रखवार ताईं से ऐसे मानस को जब मानस नाम हृदय के ज्ञान बिराग रूप चष जो नेत्र तिन्ह से चाहो नाम देखा तब जो संभु के प्रसाद से कबि की बुद्धि हुलसी रही सो अवगाहन करति भई नाम गोता लगावति भई तब बिमल नाम स्वच्छ भई जो पूर्व कहा कि मति अति नीच सो शम्भु प्रसाद से ऊंची भई जब मानस को देखा वो गोता लगाया तब बिमल ह्वै गई॥

भयेउ हृदयं आनंद उछाहू । उमगेउ प्रेम प्रमोद प्रवाहू ॥ १० ॥

बारंबार बिचारन कर जो हृदय को आनंद का उछाह भया तब प्रेम अरु प्रमोदरूपी प्रवाह उमग्या अर्थ यह बैखरी बाणी द्वारा ग्रन्थकरन की इच्छा भई। ननु। तुम ने कहा बैखरी द्वारा ग्रंथ का बाख्यान

गोस्वामीजी ने अब करणा चाह्या अरु पीछे मानसरोवर की बरनन में जो कईपद वैषरी के सूचक भासते हैं। उतर। सुमति भूमितल हृदै अगाधू। इस उपक्रम से। अस मानस मानस चषचाही। इत्यादि उपसंहार पर्यंत जो मानस बरनन है सो आंतरहीं जाणना अरु अवांतर जो विशेषण बाहर मुखी दृष्टि आवै तिन को यथा कथंचित अंतरहीं लगावणा नहीं तो। चली सुभग कविता सरिता सों। इत्यादि बरनन सो अति विरोध होइगा अलं॥१०॥ टिप्पणी—मानसप्रचारिका में यों लिखा है। वो जब गोता लगाया बुद्धि निर्मल भई तब हृदय में आनन्द को उत्साह भयो वो जब उत्साह भयो तब वह जो भरो भयो मानस सो प्रेम प्रमोद रूप प्रवाह उमंगेउ जगत में प्रचार होने को हेतु यही है कि जब ऐसे मानस को मानस के नेत्रन से देखि स्नान करि बुद्धि निर्मल भई तब मारे उत्साह के न रहा गया प्रेम प्रमोद रूप प्रवाह उमंगेउ सो प्रवाह कविता रूप नदी ह्वै करि चली तब जगत् में प्रचार भयो। इत्यर्थः। शंका। पूर्व गोस्वामी जी कहा कि जो मानस महादेवजू पूर्वही कीन फेरि काकभुसुण्डिहि दीन्ह तिन्ह से याज्ञवल्क्य मुनि पाये ते भरद्वाज प्रति गाये सो कहूं से हमारे गुरू जी पाये तिन्ह से हम सुने सो भाषा प्रबद्ध करते हैं वो अब कहते हैं कि बेद पुराण समुद्र से लेकरि साधू मेघ बर्षे तब मानस हृदय भरा सो उमंगि करि कवितारूप नदी चली तो जो गुरू से सुना सो कहां गयो यह तौ पूर्व बचन में विरोध भासत है। समाधान सुनो। यह जो श्री गोस्वामीजी सावयव मानस को रूपक कहे हैं सो उस में चित्तदेउ कि जैसे पूर्व मानस में जल पूर्ण निर्मल भरो है उसी में मेघ को जलप्राप्ति भयो तब वह जो जल भरहा सो उमंगेउ उमंगि के नदी चली तैसे जो अपने गुरूजी से महादेव कृत मानस सुने रहे सो हृदय स्थल में भरा रहा जब ऊपर से साधुन के मुख से जहां तहां सुने सो जोने क्रम से अपने गुरू से सुने रहे तौने से वितिक्रम सुने सोई मलिन ह्वै गयो जब मनन किये तब टेके देखि पर्यो तब अच्छी तरह से वह जो गुरू की कहनी रही सो उस में सावयव मानस को रूप देखि पर्यो तब आनन्द ह्वै वही जो गुरू की कहनी सो उमँगेउ तब कविता रूप नदी चली॥

चली सुभग कबिता सरिता सो। रामबिमलजस जलभरिता सो॥११॥
सरजू नाम सुमंगल मूला। लोकबेदमत मंजुल कूला॥१२॥

तहां से श्रीरामचंद्र जी के निर्मल जसरूपी जल सो पूरण सुंदर कवितारूपी सरिता निकसी। उस सरिता का नाम सरयू है यह सर्व मंगलों का मूल नाम की कीरति मय कविता है लोकमति कहिये व्यवहारक रीत बेदमत कहिये भगवंत को प्रीति इन का जो बरनन है सो इस नदी के दोनो कांठे हैं॥ १२॥ टिप्पणी—मानसप्रचारिका में यों लिखा है। अब यहां से सावयव साचात् सरयू वो कविता सरयू को अभेद तद्रूपकालंकार करि कै कहते हैं यहां है चौपाई को एकही अन्वय जानब कि जैसे वह मानस उमँगेउ तब नदी चली सो नदी को नाम श्रीसरयूजी वो सरयूजी को है करार है तैसे श्रीगोस्वामी जी महाराज कहते हैं कि जब आनन्द के उत्साह से प्रेम प्रमोद यह मानस उमंगेउ तब कवितारूप नदी बढ़ि चली सो कविता को नाम सरयू पर्यो सो कविता सरयू रामजू के विमल यशरूप जल से भरिता नाम परिपूर्ण भरि कै चली है वो दोनों सरयू मंगल को मूल है वो लोकमत वो बेदमत जो कविता में

कहे जाहिंगे सोई कविता सरयू के दोनों करार हैं जैसे दोनों करार के बीच में सरयू को प्रवाह चलो जात है तैसे लोकमत वो वेदमत दोनों के बीच में कविता सरयू चलैगो वो जैसे सरयू एक करारे लगि के चलती हैं तहां जल गहिरा रहत है वो दूसरे करारे उथल रहत है तैसे कविता सरयू जो हैं सो वेदमत किनारे लगि के चलती हैं तहां रामयश जल गहिरा रहत है वो लोकमत किनारे उथलरहत है। लक्ष्य। लोकमत को। नांदी मुख श्राद्ध करि जातकर्म सब कीन्ह। पुनः। धरिय नाम जो मुनिगुनि राखा। पुनः। बन मृगया नित खेलहिं जाई। पुनः। कौतुक विनोद प्रमोद प्रेमन जाइ कहि जानहिं अली। पुनः। लोक रीति जननी करहिं बरदुलहिनि सकुचाहिं॥ इत्यादि जहां लौकिक प्रसंग परै तहां लोकमत जानो। लक्ष्य। वेद मत। बार बार शिशु चरणन परहीं। पुनः। जो आनन्द सिंधु सुख रासी। सो करते त्रैलोक्य सुपासी॥ सो सुखधाम राम असनामा। अखिल लो[illegible] विश्रामा। पुनः। जे मृग राम बाण के मारे। ते तनु तजि सुरलोक सिधारे। पुनः। सुरलखे राम सुजान पूजे मानसिक आसन दये। शंका। यह वेदमत कैसे। उत्तर। अन्तर्यामित्वगुण से इत्यादि प्रसंग वेदमत जानो सो यह द्वै बात बोध हेतु लिखे नतु यह कविताई ग्रन्थ भरि लोक वेदमत के भीतर है।

नदी पुनीत सुमानस नंदिनि। कलिमलतृनतरुमूलनिकंदिनि॥१३॥

पावन जो सरयू नदी है सो मानसरोवर की बेटी है अरु तृण तरों के मूल उखाडती है यह नाम की कविता मन में उपजी है अरु पापों के मूल उखाडती है कीरति का नदी की सदृश्यता का भाव यह जैसे नदियों के प्रवाह चिरकाल से चले आवते हैं तैसे हरियश की बाणी भी सदैवही उच्चारण होती आवती है वा जैसे सरिता का प्रवाह दूर से एक रस देखिता है अरु निकट नवीन से नवीन जलों के कलोल देखिते हैं तैसो प्रकार बानो का समुदाय भी दूर से एक रस ग्रंथ देखिता है अरु बिचार किए अर्थ भाव अलंकार अपूरब भासते हैं नदी अगाध जल से उपजती है अरु समुद्र में पड़ती है यह संतों के रिदै से उपजती है अरु ईश्वर में प्राप्ति होती है। प्रमाण। बालमीकगिरि संभूता राससागर गामिनी पुनाति भुवनंपुंन्यारामायण महानदी॥१३॥ टिप्पणी--मानसप्रचारिका में यों लिखा है। कविता सरयू वो साक्षात् सरयू दोनों पुनीत नदी हैं काहे ते कि सुकृती सुष्टुमानस नंदिनि हैं वो कलिमल जो पाप सो है तरु तृण तिस को मूल सहित निकंदिनि नाम नाश करनेहारी हैं दोनों सरयू।

दोहा—श्रोताविविधसमाजपुर, ग्राम नगर दुहु कूल। संतसभा अनुपम अवध, सकलसुमंगलमूल॥३९॥

सरयू की दोनो तटो पर ग्राम पुर अरु नगर हैं तैसे भगवंत के यश निकट तीन भांति के श्रोता होते हैं कनिष्ट सो जो धन के प्राप्ति निमित्त सुनते हैं मध्यम सो जो मान की बृधता निमित्त आवते हैं उत्तम वे हैं जो प्रीति कर सुणते हैं। सरयू पर अयोध्या भी है इहां संतसभा कहिए जीवनमुक्त लोक जो इस को श्रवन पठन करते हैं सो अवध है॥३९॥ टिप्पणी—मानसप्रचारिका में यों लिखा है। जैसे सरयू के दोनों किनारे पर पुर गांव नगर बसते हैं पुर कहें। जो दश बीस घर के जो साल साल बसत

उजरत रहत है वो गांव कही जो द्वै चारि सौ घरहोईं सो कछूकाल में बसत उजरत रहत है वो नगर कही हज़ार घर से लेइ अनगनतिन होइ सो बहुकाल रहत है कछु बड़ो विघ्न पाइकरि उजरत है वो श्रीसरयू के किनारे पर श्रीअयोध्याजी है सो एकै है वो कोई काल में उजरै नहीं तैसे कविता सरयू के किनारे पर पुरग्राम नगर का है तहां सुनौ जो श्रोतन की समाज है सो त्रिधा है एक आरत श्रोता है जे अपने आरति के निवृत्यर्थ कथा सुनते हैं सो पुर है जो द्वै चारि दिन सुनैफेरि द्वै चारि दिन छोड़ दिये तामें द्वै भेद एक लोकआरत एक परलोकआरत सो जो लोकआरत हैं सो लोकमत के किनारे पर बसे हैं वो जो परलोकआरत हैं सो वेद मत के किनारे पर बसे हैं वो दूसर अर्थार्थी श्रोता हैं जे अर्थ के हेतु कथा सुनते हैं ते ग्राम हैं जो कछु काल सुनते हैं फेरि कछु काल दूसरे साधन में लगि जाते हैं तामें द्वै भेद एक लोकार्थी हैं अन्न वस्त्र के सो लो[illegible] .रे पर बसते हैं वो एक परलोक स्वर्गादिक के अर्थी हैं सो वेदमत किनारे पर बसे हैं वो तीसरे जिज्ञासू श्रोता हैं जो वस्तु जानने के हेतु कथा सुनते हैं सो नगर हैं जो सर्वकाल सुनते हैं कोई बड़ो विघ्न आइ जाइ तबै छूटें तामें द्वै भेद एक लोक की चतुराई सीखबे हेतु सुनते हैं ते लोकमत किनारे पर बसे हैं वो एक रामतत्त्व जानिबे के हेतु सुनते हैं ते वेद-मत किनारे पर बसे हैं इति ॥ त्रिविधा श्रोता वा ज्ञानी सन्तन को सभा जो है सो कैसे ज्ञानी सन्त हैं कि जिन्ह को कोई पदार्थ की चाहना नहीं केवल रामयश सुनते हैं सोई अनूपम श्रीअयोध्याजी हैं सो सर्वकाल बने रहते हैं कैसो विघ्न आवै तौ वे नहीं छोड़ते । प्रमाण । कोटि विघ्न जिमिसन्त कहं तदपि नीति नहिं त्याग ॥ सो सन्त वेदमत किनारे पर सकल मंगल को मूल श्रीअयोध्या विषे बसे हैं इस में यह भाव है कि जैसे श्रीसरयूजी अयोध्ये के हेतु आई हैं वो जितना महात्म्य अयोध्या में है तितना अनते नहीं वो श्रीसरयू करि के श्रीअयोध्यै की शोभा है परस्पर मिलि रहे हैं अयोध्या में सरयू वो सरयू-तट अवध तैसे कविता साधुसमाज के हेतु बनी है । प्रमाण । साधुसमाज भणित सनमानू । वा साधु इस समाज में शोभा देत हैं वो जैसी शोभा महत्व साधुसमाज में है तैसी अनत नहीं वा एहोकरि के साधु समाज भी शोभित है ऐसे परस्पर मिले हैं रामकथा वो साधु समाज ।

रामभगति सुरसरितहि जाई । मिली सुकीरति सरजु सुहाई ॥ १ ॥

जैसे सरयू का गंगा सो संगम है तैसे इस कीरति में कविता भक्ति सो जो संबंध भया सो गंगा मिली ॥ १ ॥ टिप्पणी—मानसप्रचारि[illegible]ा में यों लिखा है । जैसे सरयू मानस ते चली वो कुछ दूरि चलि सुरसरिता जो गंगाजी तिन में जाइ मिली तैसे कीर्त्ति सरयू रामभक्ति सुरसरी में जाइ मिली अब इहां पर यह बात समझने को अपेक्षा भई कि रामयश जल का क्या स्वरूप है वो वही यश को कीर्त्ति रूप नदी चली तिस का क्या स्वरूप है तहां कैलास के चार दोहा में रामयश को स्वरूप कहा है। अगु-णहिं सगुणहिं नहिं कछु भेदा ॥ यहि चौपाई से लेइकरि वो । सुनि शिव के भ्रमभंजन बचना । यहां पर्यंत आगे यही के भीतर जो कछु तलाव के प्रकरण जे कहि आये हैं सो सब साहित्व जानो वो यही रामयश उमंगि कीर्त्तिरूप प्रवाह चली सो कहां से ॥ सुनुगिरिजा हरिचरित सुहाये । विपुलविशद निग-मागम गाये ॥ इहां से चली वो रामभक्ति सुरसरी में मिली कि जब स्वायम्भुवमनु महाराज सब के भक्ति

को निराकरण करि एक श्रीराम भक्ति को दृढ़ कीन्ह। प्रमाण। बिधि हरिहर तप देखि अपारा । मनु समीप आये बहु बारा ॥ मांगहु बर बहुभांति लुभाये । परमधीर नहिं चलहिं चलाये ॥ ऐसी अखण्ड वृत्ती श्रीराम भक्ति में लगी रहै कि यह सब के बचन महाराज को सुनै न परै यह रामभक्ति रूप सुरसरि में कीर्त्ति सरयू जाय मिली अब जो कोई कहै कि तुम तौ। सुनु गिरिजा हरिचरित सुहावा ॥ यहां से कीर्त्ति सरयू कहते हो तौ वर्णानां इहां से लेइ करि वो। अस निज हृदय विचारि। इतनी कविताई कहां डारोगे तहां सुनो यह तौ हम पहिले ही कछु तड़ाग के प्रकरण में कहि आये कछू यही कीर्त्ति सरयू के रूपक में कहैंगे ताते यहि बात को अच्छी तरह से समझो ॥

सानुजरामसमरजसु पावन। मिलेउ महानदु सोन सुहावन॥ २॥

रामचंद्रजी के अरु लछमनजी के जो असुरों से युद्ध है यह आगे सोन नदी मिला॥२॥ टिप्पणी—मानसप्रचारिका में यों लिखा है। पुनः। जैसे सरयू गंगा मिलि चली आगे आइ करि महानद शोणभद्र बड़ो सुहावन सो मिलो तैसे अनुज जो श्रीलक्ष्मणजू तिन्ह के सहित श्रीरामजी को समरयश जो पावन सोइ सुहावन महानद शोण आइ मिलो। शंका। समरयश वो पावन कैसे। समाधान। श्रीसमयश ता सबै पावन है परन्तु समरयश पावन इस से कहो कि जामें सर्व धर्म का निर्वाह भयो त्रैलोक्य आनन्द भयो देवता सुबास बसे ऋषि सब निष्कंटक भये ताते पावन। पुनः शंका। कौन अंग लेइ करि शोण कियो समरयश को एकता है। समाधान। जैसे शोण को धारा बड़ो तीव्र है वो जब बहत है तब भयावन लगत है परन्तु मगह ऐसी धरती अपावनी को पावन किया तैसे समर देखत में सुनत में बड़ा तीव्र भयावन है परन्तु बड़े बड़े पापी राक्षस मोक्ष भये हैं यह अंग ते तुल्यता भई॥

जुग बिच भगति देवधुनिधारा। सोहति सहित सुबिरति बिचारा॥ ३॥

सरयू अरु सोन के बीच जैसे भागीरथी चलती हैं तैसहीं जहां कवि रचना है अरु जहां युद्धों का कथन है तिन दोनों में भक्ति मिली जाती है सो कैसी भक्ति है जा वैराग विवेक सहित है॥३॥ टिप्पणी—मानस प्रचारिका में यों लिखा है जैसे सरयू शोण के बीच में गंगाजी शोभित हैं तैसे सुन्दर वैराग्य वो बिचार के सहित भक्तिरूप देवध्वनि कीर्त्ति रूप सरयू वो समर यशरूप शोण के बीच में शोभा देती हैं जो कही भक्ति में विरति बिचार क्या है तहां सुनो जब श्रीमहाराज स्वायम्भुवमनु बिचार कीन्ह कि। होइ न बिषय बिराग, भवन बसत भा चौथपन। हृदय बहुत दुख लाग, जन्म गयो हरिभक्ति बिनु॥ यह जो ठीक कीन्ह सो बिचार वो बिचार करि के तब। बरबस राज सुतहि नृप दीन्हा। नारि समेत गवन बन कीन्हा॥ यह वैराग्य है सो बिचार विराग के सहित जो भक्ति सो कीर्त्ति यश के मध्य में शोभा देती चली।

त्रिबिधतापत्रासक तम हानी। रामसरूप सिंधु समुहानी॥ ४॥

तम कहिये तमोगुणरूपी तप्त तिस को नदी दूर करती है जो तिमुहानी पाठ होवै तौ भक्ति वैराग बिबेकरूपी तिनो मुखोंवाली यह नदी तिनों पापों को नासक है वहु सिंधु के सन्मुख चलती है यह श्री रामचंद्रजी के सन्मुख है॥४॥ टिप्पणी--मानसप्रचारिका में त्रिमुहानी पाठ लिख कर ऐसा अर्थ कियाहै। पुनः।

जैसे मानस ते सरयू चली गंगा में मिलि फेरि शोण मिलें तब त्रिमुहानी भई सो त्रिमुहानी कैसी है कि त्रैताप की नासकरनेवाली सो तीनिउं मिलि कै समुद्र के सन्मुख चली समुद्र को मिली फेरि मिलि कै कुछ दूरि धार चली गई तैसे कैलास प्रकरण चारि दोहा मानस ते कीर्त्ति सरयू चली वो जो स्वायंभुवमनु विषे अखण्ड श्रीराम भक्ति तहां मिलि फेरि अनुज के सहित रामजी के ताड़का मारीच सुबाहु कै समर कै यश पावन शोण सो मिल्यो तब त्रिमुहानी भई सो त्रिमुहानी तीनिउँ ताप को नाश करत श्रीरामचंद्र को राजसिंहासन पर विराजमान स्वरूप सन्मुख चली सो मिलि फेरि जो पीछे नित्य चरित वर्णन है कौन की । प्रथम तिलक बसिष्ठ मुनि कीन्हा । इहां से लेइ करि देव स्तुति वेदस्तुति शिवस्तुति कपिन को बिदा इहां पर्यन्त राज्याभिषेक है आगे नगर का वर्णन पुरवासिन का वर्णन उपबन का जाना पुरबासिन को समुझावना बशिष्ठ जी को एकांत में आवना शीतल अमराई को जाना यह सब नित्य चरित्र को वर्णन सो समुद्र में मिली कुछ दूरि धार निकल जाना है ।

मानस मूल मिली सुरसरिहीं । सुनत सुजनमन पावन करहीं ॥ ५ ॥

सरयू का मानसरोवर मूल है अरु गंगा सो मिलि कर स्नान करणहारों को पवित्र करती है तैसे कविता का मूल संतों का मन है अरु भक्ति सों मिल कर श्रवण करणहारों को कृतारथ करती है ॥ ५ ॥ टिप्पणी—मानसप्रचारिका में यों लिखा है । अब कछु दानों त्रिमुहानी को फल कहते हैं कि जैसे मानस मूल जो सरयू जिन्ह को मानस है मूल सो कहावै मानस मूल सो सुरसरि हिं मिली सो स्नान पान करने से जन मन पावन करती हैं तैसे राम यश मानस है मूल जिस को ऐसी कीर्त्ति सरयू राम भक्ति सुरसरि में मिली सो सुनत सन्त सुजनन के मन को पावन करि हि निश्चय करि कै ।

बिच बिच कथा बिचित्र बिभागा । जनु सरि तीर तीर बनु बागा ॥ ६ ॥

बिच बिच विचित्र कथा कहिय कामादिकों का शंकरजी के निकट जाणा इत्यादिक प्रसंग इस सरिता के तीर तीर बनबाग हैं ॥ ६ ॥ टिप्पणी—मानस प्रचारि का में यों लिखा है । अब यहां ते श्री गोस्वामी जो महाराज सिंहावलोकन करि कीर्त्ति सरयू वो साक्षात् सरयू को रूपक कहते हैं कि जैसे सरयू के तीर तीर बनबाग है कछु जल को स्पर्श किये तैसे कीर्त्ति सरयू के तीर तीर नाम लोकवेद मत दूनों तीर पर बीच बीच में विचित्र भागाविभाग की कथा सोई जल को स्पर्श किये बनबाग तुल्य है जैसे बनबाग करिकै नदी की शोभा होती है तैसे बीच बीच में विचित्र विभाग कथा से कीर्त्ति शोभित होती है छोटा प्रसंग बाग बड़ा प्रसंग बन जानो । लक्ष्य । बिच बिच कथा प्रसंग को जब मानस ते कीर्त्ति सरि चली तब बीच में जलन्धर की कथा का प्रसंग परा सो छोटा है सो बाग फेरि नारद के मोह का प्रसंग वो बड़ा बाग है । पुनः । भानु प्रताप का प्रसंग बन है । पुनः । रावण को जन्म दृढ़ बिजय । पुनः । देवतन का बिचार यह बेद मत तीर के बनबाग हैं । पुनः । महादेव के बिबाह के उपरान्त जेंवनार वो दायज वो बिदा समय में रोवना यह सब लोकमत तीर के बनबाग हैं यही रीति से जहां लौकिक प्रसंग परे तहां लोकमत तीर के बनवाग वो जहां वैदिक प्रसंग परे तहां बेदमत तीर के जानो । पुनः । शिव पार्वती के विहार से लेइकरि षट्मुख जन्म कर्म एते प्रसंग कीर्त्ति सरयू के तीर के बनबाग हैं यही

रीति से सातोकाण्ड में जानो जहां प्रसंग छोड़ि दूसरी कथा कहने लगे उस को पूरा करि फेरि प्रसंग मिला कहि चले जैसे अयोध्याकाण्ड में कहा कि। तस मगु भयउ न राम कहँ, जस भा भरतहिं जात। यहां से प्रसंग छोड़ि कुछ मगुवासिन की कहि फिरि देव दरबार की कहि प्रसंग मिलाये कि। यहि विधि भरत चले मगुजाहीं ॥ ५७ ॥

उमामहेसविवाह बराती। ते जलचर अगनित बहुभांती ॥ ७ ॥
रघुबरजनम अनंद बधाई। भँवर तरंग मनोहरताई ॥ ८ ॥

रघुनाथजी का जनम अरु तिस कर लोगों के अनंद अरु परस्पर बधायां देणीयां सो नदी के आवर्त अरु तरंग अरु सुन्दरता है भवँर की समता जनम को दई जाति तिस में एक मास भानु ना निकससका अरु शिवजी ने कहा मैं अरु भुशुंड प्रेम कर वीथियों में भूले फिरहिं आनंद के तरंगों की समता बराती है जाति आनंद कर रिदा उमगता है अरु बधाई को सुंदरता को समता योगही है जो बधाई की रुचरता प्रसिद्ध है ॥ ८ ॥ टिप्पणी—मानसप्रचारिका में यों लिखा है। जैसे सरयूजी में अनेक भांति जलचर हैं तैसे कीर्त्ति सरयू में महादेव पार्वती के विवाह के बराती जो हैं सो अनेक भांति के अगणित जलचर हैं जैसे जलचर में कोई देखने में सुन्दर है कोई भयावन है तैसे उमा महेश के विवाह के बराती ब्रह्मा विष्णु इन्द्रादि देवता सो तो देखने में सुन्दर हैं वो महादेव की समाज भयावन है। जैसे सरयू जी में भवँर वो तरंग हैं तैसे रघुबर जो श्रीराम तीनिउँ भाइन के सहित तिन के जन्म की आनन्द वो बधाई जो बजती हैं सोई मनोहर भवँर वो तरंग हैं आनंद जो है सो भवँर है काहे ते कि जैसे भवँर में परे से निकसि नाहीं सकत डूबिजात है तैसे रघुबर जन्म के आनन्द में सब मग्न होइ गये इहां तक मग्न हैं कि। मासदिवसकर दिवस भा, मर्म न जानै कोइ। रथ समेतरविथाकेउ, निसाकवनविधिहोइ। यह भवँर तुल्य है वो अनेक प्रकार की बधाई बजती हैं सोई तरंग हैं जैसे तरंग में शब्द होत है तैसे बधाई में शब्द है अब आनन्द बधाई को लक्ष्य सुनो। अवधपुरी रघुकुलमणिराऊ। से लेइकरि वो। अनुपम बालक देखि न जाई। रूपराशि गुण कहि न सिराई ॥ पर्यंत जानो।

दोहा—बालचरित चहुं बंधु के, बनज बिपुल बहुरंग।
नृप रानी परिजन सुकृत, मधुकर वारिबिहंग ॥ ४० ॥

चारो कुमारों की बाल क्रीडां सो अनेक जातों के सतपत्र है। अरु भूपति आदिकों के जे पुन्य हैं जिनो कर ते चरित्र देखे हैं सो तिन पर भ्रमरादिक हैं। नृप के अरु रानिउं के सुकृतहुं कों अलि अरु संबंधीअहुं के पुन्य को खग कथन का आशय यह जैसे भ्रमर कंजहूं का रस विशेष लेते हैं तैसे पिता माता ने प्रभों के बालविनोद अधिक देखे हैं। अरु खगों को रस अल्प होता है तैसे संबंधिअहुं ने जननी जनक से थोरे कौतुक देखे हैं ॥ ४० ॥ मानसप्रचारिका में यों लिखा है। जैसे सरयू में बहुत रंग के कमल फूले हैं तिन कमलन पर मधुकर बैठि रस लेते हैं वो अनेक प्रकार के बिहंग सुगन्ध लेते हैं तैसे कीर्त्ति सरयू में चारिउ भाइन को बालचरित्र जो अनेक तरह का कबहुं आंगन में खेलत सन्ते खम्भन में परि-

झांकीं देखते कबहुं घर घर जाइ यांखिमुंदवलि खेलते हैं कबहुं गलिन में गुल्ली डंडा खेलते हैं कबहुं शिकार को जाते हैं इत्यादि जो हैं सोई बहुरंग के कमल फूले हैं तिन्ह पर नृप जो श्री चक्रवर्त्ती महाराज दशरथजी वो श्रीमहारानी श्रीकौशल्या आदि सब रानी तिन्ह का सुकृत जो है सो मधुकर है। जो लालन पालन चुम्बन आलिंगन आदि सो रस लेना है वो परिजन जो परिवार के जन वो समस्त पुरवासिन के सुकृत जलबिहंग तुल्य हैं जो अनेक तरह के चरित्र देखते हैं सोई सुगन्ध लेना है अब बालचरित्र का लक्षण सुनो। मुनिजन धन सर्बस शिव प्राना। बालकेलि रस त्यहि सुख माना॥ इहां से ले करि वो। व्यापक अकल अनीह अज, निर्गुण नाम न रूप। भक्त हेतु नाना बिधि, करत चरित्र अनूप॥ इहां पर्यन्त जानो। इहां जो बहुरंग कहा है सो तीनि रस में जानो दास्य सख्य वात्सल्य दास्य धूमरो रंग है सख्य पीतरंग वात्सल्य चित्र रंग तिस का लक्ष्य एक एक चौपाई सुनो। बन्धु सखा सब लेहिं बुलाई। बन मृगया नित खेलहिं जाई॥ यह सख्य रस पीत रंग है। बालचरित हरि बहु बिधि कीन्हा। अति अनन्द दासन कहँ दीन्हा॥ यह दास्य रस धूम रंग है। भोजन करत बोलु जब राजा। नहिं आवहित जि बाल समाजा॥ यह वात्सल्य रस चित्र रंग है॥

सीयस्वयंबर कथा सुहाई। सरित सुहावनि सो छबिछाई॥ १॥

टिप्पणी—मानसप्रचारिका में यों लिखा है। जैसे सरयू में छबि है जाते सुहावनि है तैसे कीर्त्ति सरयू में श्रीजानकीजी के स्वयम्बर की सुहाई कथा जो है सोई सुहावनि छबि छाइ रही है। स्वयम्बर कथा का लक्ष्य।। तब मुनि सादर कहा बुझाई। इहां से लेइ करि। गौतमतिय गति सुरति करि, नहिं परसति पद पानि। इहां पर्यंत जानो बीच में दश दोहा फुलवारी की कथा तड़ाग के प्रकरण में। राम-सीय यश सलिल सुधासम। के साथ है वो किंचित् किंचित् जल गुण के साथ कहेंगे सो गुण तो जल के साथे रहत है सो जानो।

नदी नाव पटु प्रश्न अनेका। केवट कुसल उतर सबिबेका॥ २॥

पटु कहिये चतुर नारियां जिनो ने मीथिलापुर के झरोख्यो में बैठि के रघुनाथजी का बृत्तांत पूछा है तिन के प्रश्न इस नदी में नौका रूप है अरु उत्तर देने में कुसल जो युवतियां हैं जिनों ने विवेक संजुत मुनिवधूउधारनादिक प्रभाव सुनाइ के निरसंदेह कीनी हैं तिन के उत्तर केवटरूप है॥ २॥ टिप्पणी—मानसप्रचारिका में यों लिखा है। जैसे सरयू में नाव है उस के खेवनेवाले केवट हैं तैसे कीर्त्ति नदी में अनेक प्रश्न जो सुन्दर सुन्दर हैं सोई नाव हैं वो तिन्ह प्रश्नन के बिवेक पूर्वक उत्तर जो हैं सोई कुशल नाम चतुर केवट खेवैया हैं लक्ष्य प्रश्नोत्तर के। कहहु नाथ सुन्दर दोउ बालक। मुनिकुलतिलक कि नृपकुलपालक। कह मुनि बिहंसि कह्यो नृप नीका। बचन तुम्हार न होइ अलीका। पुनः। निषाद को प्रश्न लक्ष्मणजी को उत्तर। पुनः। ग्रामबासिन्ह को प्रश्न श्रीजानकीजी को उत्तर। पुनः। श्रीराम जीको प्रश्न वाल्मीकिजू को उत्तर। पुनः। लक्ष्मणजू को प्रश्न रघुनाथजू को उत्तर। पुनः। नारदजू को प्रश्न रघुनाथजी को उत्तर। पुनः। सुबेलपर श्रीरघुनाथजी को प्रश्न सब बानरन को उत्तर इत्यादि जहां जहां प्रश्नोत्तर हैं सो सब नाव केवट जानो।

सुनि अनुकथन परस्पर होई। पथिकसमाज सोह सरि सोई॥ ३॥

औरों लोगों ने जो इह प्रसंग सुनके पद कथन कहिये परस्पर कहते सो पथिकों का समाज है मुनिअनुकथन पाठ होवै तौ बिश्वामित्रजी का राजाजनक सो वा रामचंद्र सो कथन॥ ३॥ टिप्पणी—मानसप्रचारिका में यों लिखा है। जैसे उस नाव पर चढ़े पथिकन के समाज शोभा देते हैं पर वह समाज नदी के बाहर की है तैसे जो अनेक प्रकार के प्रश्नोत्तर तिन्ह को सुनि कै जो परस्पर अनुकथन करते हैं कहते हैं कि क्या प्रश्न का उत्तर निबहा है सोई पथिकन की समाज कीर्त्ति सर में शोभा देते हैं पूर्व जो श्रोतन की समाज त्रिबिध कहिआये हैं तिन्हहीं में दो कोटि किये कि एक सुनते भरिहैं ते पुर ग्राम नगर में हैं वो एक सुनि करि अनु कही पीछे परस्पर कथन करते हैं।

घोरधार भृगुनाथ रिसानी। घाट सुबंध राम बरबानी॥ ४॥

जामदग्नि की रिसरूपी घोरधार है गडो के गिरावनहारी अरु तिस को निरोधण कों श्रीरामचंद्रजी के धीरज में वाक्यरूपी घाट है॥ ४॥ टिप्पणी—मानसप्रचारिका में सुबंधु करके ऐसा अर्थ किया है। जैसे सरयू में तीव्रधार है तैसे कीर्त्ति सरयू में भृगुनाथ जो परशुराम तिन को क्रोध जो है सोई घोर भयावन तीव्र धार जो क्रोध देखिकै श्रीजनकजी ऐसे धीर गंभीर डरिगये और को क्या चली। लक्ष्य। बोलत लष नहिं है जनक डराहीं। पुनः। अति डर उतर देत नृप नाहीं। इत्यादि वा जैसे सरयू मे तीव्रधार को रोकि कै सुन्दरघाट बँधे हैं तैसे बधु जो श्रीलक्ष्मणजू तिनके सहित श्रीरामचन्द्र की वरबानी जो है सोई सुन्दर घाट बँधि रह्यो है जैसे धार को रोकि कै जब घाट बांधनेलगै तब पहिले गच्च को तीव्रधार तोरि देति है जब बड़ा पुरुषत्व करै कि धार को रोकने का गच्चपर गच्च गच्च देते जाय तब बँधि कै तय्यार होत है तैसे जब प्रथम भृगुनाथ बोले। अतिरिस बोले बचन कठोरा। कहु जड़ जनक धनुषकेइँ तोरा॥ यह घोरधार देखि श्रीरघुनाथ जी प्रथम गोला गलाये। नाथ संभु धनु भंजनहारा। होईहि इक कोउ दास तुम्हारा॥ सो धारा के मारे गोला न थँभा जब कहे कि। सेवक सो जो करै सेवकाई। अरि करनी करि करै लराई॥ सो सुनि श्रीलषणलाल बिचारे कि सरकार की बात इनने उड़ाया तब आप लागे गोला गलावने वो धारा तोरनेलगे दश पांच बेर में धार शिथिल ह्वैगई तब पीछे से श्रीरामजी संवारि कै घाट तय्यार करि दियो।

सानुजरामबिबाहउछाहू। सो सुभ उमग सुषद सब काहू॥ ५॥

तीनहूं भ्रातहूं सहित रामचंद्र के विवाह का जो मंगल है सो सभों को सुखदायक इस सरिता का सुंदर उछलणा है॥ ५॥ टिप्पणी—मानसप्रचारिका में यों लिखा है। जैसे सरयूजी में उमंग होत है सो सब को सुखदाई होत है काहे ते कि सरयू को उमंग शुभ है ताते तैसे कीर्त्ति सरयू मे तीनिउँ भाइन के सहित श्रीरामचन्द्र के बिवाह का उत्साह जो है सोई उमंग सब को शुभ नाम मंगल वो सुख देनेवाला है। लक्ष्य बिवाह उत्साह को दोहा। रामचन्द्र मुख चन्द्र छबि लोचन चारु चकोर। करतपान सादर सकल प्रेमप्रमोद न थोर। इहां से लेइ करि वो। सिय रघुबीर बिवाह जे सप्रेम गावहिं सुनहिं। तिन्ह कहुँ सदा उछाह मंगलायतनु रामजस। इहां तक जानो।

कहत सुनत हरषहिं पुलकाहीं। ते सुकृती मनमुदित नहाहीं॥ ६॥

रघुनाथजी के बिबाहादिकों की सोभा को जो प्रसन्न हो के कहते सुनते हैं सो मानो धर्मात्मा लोग स्नान करनहारे हैं॥ ६॥ टिप्पणी—मानसप्रचारिका में यों लिखा है। जैसे सरयूजी में सुकृती प्राणी स्नान करत हैं तैसे कीर्त्ति सरयू को जे कहत व सुनत हर्षत पुलकत हैं नाम कहत हर्षहिं व सुनत पुलकहिं तेई सुकृती मनमुदित ह्वैकै नहाते हैं।

रामतिलक हित मंगल साजा। परब जोग जनु जुरे समाजा॥ ७॥

रघुनाथजी के तिलक हित मंगल द्रव्य अरु जनो के समुदाइ एकत्र होगे यह मानो परब का समाज है जब तोरथ मों मल आदिक दुष्ट आवै तब देसो मों उपद्रौ होते हैं सो॥ ७॥ टिप्पणी—मानसप्रचारिका में यों लिखा है। जैसे सरयूजी में पर्वयोग परत है जामें बहुत से लोग बटुरते हैं तैसे कीर्त्ति सरयू में श्रीरामराज्यतिलक के हेतु सर्व मंगल के साज साजे गये सोई मानो पर्वयोग है। लक्ष्य रामतिलक को। आपु अछतयुबराज पद रामहिं देहिं नरेस। इहां से लेइ करि व। नाम मंथरा मंदमति। ताईं आगे मंथरा केकयी सम्बाद केकयी के कुमति के भीतर जानो।

काई कुमति केकई केरी। परी जासु फल बिपति घनेरी॥ ८॥

कैकेई की कुमतिरूपी इहां काई कहिये मल है जिस का फल एती आपदा पडी जब उत्पात होता है तब तिन की सांत निमित जप जग्य करीते हैं॥ ८॥ टिप्पणी—मानसप्रचारिका में यों लिखा है। जैसे सरयू में पर्वयोग लगेपर कहूं काई परिगई जल बिगरिगया तिसका फल दुःख होता है तैसे कीर्त्ति सरयू में केकयीजू को कुमति जो है सो काई तुल्य है जामें पर्वयोग तौ गवैकीन पर ताको फल घनेरी बिपत्ति परी जितने रामतिलकरूप पर्वयोग में आनन्द रहैं तिनके ऊपर बड़ी बिपत्ति परी। लक्ष्य केकयी के कुमति व घनेरी बिपत्ति को। नाम मंथरा मंदमति। से। सजि बन साज समाज। ताईं इधर व जबसुमन्त जी लवटि आये तहां से व। पितुहितभरत कीन्ह जस करणी। ताईं।

दोहा—समन अमित उतपात सब, भरतचरित जपजाग।
कलिअघ खलअवगुन कथन, ते जलमल बककाग॥ ४१॥

तिस केकई की कुमतिरूपो काई ते उपजे जो कष्टादिक उतपात है तिन को समनकरणेहारे भरत चरित्ररूपी जपजग्य है कलि के अघ अरु खलों के अवगुण कथन इहां वहुसिणे जो भरत ने माता कौशल्या के तोषण निमित्त सपथ करियां है किंबा उत्तरकांड मैं जो खलों के अघ अरु दोषहूं का कथन है सो बकों कागोंवत है सरयू का रूपक इहां तक बणता था सो इहां राखा। ननु। रिदें मों मानस का स्वरूप था प्यारा तदनंतर जो कविताारूपी सरिता का रूपक किया तौं तिस मों सातों कांडों की कथा सूचीपत्र करणा था इहां समाप्त क्यों करी॥ उत्तर। सप्तकांडो की कथाहीं कहिया है सो सुनों स्रोता त्रिबिधि समाज ग्रन्थ मो प्रश्नों के यश के तीनि भांति के अधिकारी जो कहे हैं सोइ पुरग्राम अरु नगर है अरु संतसभा का जो बरणन है अर्थ यह रिखीं मुनों के जो मिलाप हैं बन किसकिंदा मो सो अवध सम है। रामभक्ति

सुरसरि तहं जाई। जहां सर्वकांडों में श्रीरामचंद्र के भक्ति का वरणन है सो गंगाजी का संगम है सानुज राम जहं सर्वकांडों में श्रीरामचंद्रजी के जुद्धों का वरणन है सो सोणनद है जुगबिच काव्य रचना में अरु जुद्धों में विराग बिचार सहित भक्तिरूपी गंग सोभतो है बिचबिच कथा विचित्र अवतार कथा कहिये शंकरजी के अरु कर्पों के मिलापादिक जो प्रसंग सातोकांडों में है सो बनबाग हैं इस में आगे छ कांडो का वरणन क्रम पूर्वक है अरु कलि अघखलअगुण कथन यह उत्तरकांड की समाप्ति भई जौं कोउ कहै इस भांत मिश्रित कथन किया सभ कछु क्रम पूर्वक क्यौं न कहा तौं स्वत्तंत्र इकसि मुनेनियोगं पर यन योगानरतवात। अपणी मति अनुसार तौं इस आसंका का इसी भांति निर्वाह भया है जो किसी की बुद्धि मों और विशेष भासै तौं सोभी प्रमाण है। अब षटरितों के मिस सगरे ग्रन्थ का कछुक सूचीपत्र कहिते हैं॥४१॥ टिप्पणी—मानसप्रचारिका में यों लिखा है। जैसे सरयूजी में काई लगने से जल बिगर्यो तब अच्छे लोग जप पुरश्चरण वो यज्ञ करिकै विघ्न को शांति करते हैं तैसे कीर्त्ति सरयू में जो कैकयी की कुमतिरूप काई लगने से जो उत्पात भयो सो श्रीभरतजू को चरित जो है सब उत्पात के शमन नाम नाश करिबे को जपयज्ञ रूप है जो श्रीरामचन्द्र की पांवरी सिंहासन पर बैठारी सब के प्राण को अवलंब दीन भरतचरित अयोध्याकांड में एक सौ छिहत्तर दोहा के ऊपर से समाप्ति ताईं जानो परन्तु बीच बीच में भरतजी को स्वभाव बर्णन है जो जल गुण के साथ शीतलता बर्णन है वो सरयूजी के एक देश में देशभूमि के योग से घोंघो सिवार रूप मल रहत है तिस के साफ करिबे को काक बक रहते हैं तैसे कीर्त्ति सरयू में कविताई के योग से कहूं एक देश में प्राकृत दृष्टांतादिक जो हैं सो मल हैं घोंघी सिवार तिन के साफ करिबे को कलि को अघ कथन जो है उत्तरकांड में सो बकुला है वो खलन को अवगुण कथन जो उत्तरकांड फूलबाटिका महँ भरतजी ते श्रीरामचन्द्र कहा है सो काक है ये दोनों कथन रूप बकुला काक प्राकृत दृष्टांतादि मल साफ करते हैं कि सामान्य पुरुष जो सो प्राकृत दृष्टांतादि जब सुने तब सब छोड़ि उसी में चित्त देते हैं वह कहते हैं कि रामायण में लिखा है यह नहीं जानते कि यह तो काव्य का अंग है तिन के कलिअघकथन वो खलअवगुणकथन सुनि कछु ग्लानि भई सोई सफाई है।

कीरति सरित छहूं ऋतु रूरी। समय सुहावनि पावनि भूरी॥१॥

और नदियां किसू रितु अरु किसी काल मो सुंदर अरु पवित्र होतिया है यह कीरतिरूपी सरिता सर्वदा सुंदर अरु सर्बदेसहूं कालो में पवित्र है॥१॥ टिप्पणी—मानसप्रचारिका में यों लिखा है। नदी को रूपक कहनेलगे सो नदी में जितनी सहायत्व रही सो अयोध्याकाण्ड भरि में होगई किंचित् उत्तर काण्ड में पाया आगे आरण्य किष्किन्धा सुन्दर लंका यह न मिले ताते ऋतु प्रकरण उठाय कि जैसे सरयू छवों ऋतु में रूरी नाम सुन्दरि है पर समय समय अति सुहावनि पावनि है कार्त्तिक रामनौमी आदि तैसे कीर्त्ति सरित जो है सो छवों ऋतु में सुन्दरि है पर समय समय यह भी सुहावनि पावनि है भूरी कहो बहुत।

हिम हिमसैलसुता सिवब्याहू। सिसिर सुषद प्रभुजनमउछाहू॥२॥

हिमाचल की कन्या का जो शंकर जू सो बिवाहादिक प्रसंग है सो हिमरितु है। ननु। प्रथमहि शरित कथन का क्या भाव। उत्तर। हिमसैल के संबंध कर बर्णमैत्री निमित्त हिमरितु कही किंवा जैसे हिमरितु सीतल अरु सुषद होति है तैसे पार्बती साथ शिवजी के बिवाह का फलतारक का बध है सो महा सीतल है अरु सर्ब को सुखदायक है किंवा इहां रितों के मिसकर रामायण का संक्षेप कहणा है जो प्रथम हिमरितु ना कहते तब ग्रीषमरितु बनगवन अरु बरषारितु जुद्दन थे बणते। सभों के सुखदायक जो प्रभों के जनम का उत्साह है सो सिसिररति है इस कथन का भाव यह जैसे सिसिर मो सर्वथा सीतनिवृत्ति नहीं होता परंतु दिनो को धीरज आवता है तैसे रघुनाथ जी के उपजनम मात्र ते रावण नहीं मुआ परंतु सुरो मुनो को तोष भया है जो अब हमारो अपदा मिटैगी। टिप्पणी—मानसप्रचारिका में यों लिखा हैं। अब जो कहा कि कीर्त्ति सरि छवों ऋतु में रूरी है वो समय समय अधिक सुहावनि पावनि है सो अब कीर्त्ति सरि में ऋतु दिखावते हैं धर्म लैके कि जैसे सरयू में हिम ऋतु आयो तब जाड़ होत है परन्तु भोजन को पचाइ डारत है ताते बड़े लोग खुशी रहते हैं तैसे कीर्त्ति सरयू में हिमशैल सुता जो पार्बती वो शिवजी के बिवाह की कथा सो हिमऋतु है कि जामें प्रथम मयना आदि को दुःख सो जाड़ तुल्य है वो फेरि पाछे सब देवता अपनो स्थान पाइ खुशी भये सोई भोजन पचावना है वो जैसे सरयू में शिशिरऋतु जब आयो तब होरी होती है तामें रंगन को बाहुल्यता होती है वो सब लोग आनन्द पूर्वक गान बाजा बजावते हैं तैसे कीर्त्ति सरयू में श्रीरामजन्म को उत्साह जो है सोई शिशिरऋतु है जामें अनेक रंग के गान बाजा नृत्य होते हैं वो गली गली अरगजा कुंकुम कीच ह्वै रही है अब दूनों को लक्ष्य। कञ्चनथार सोह बर पानी। परिछन चलीं हरहिं हरषानी। इहां से लेइकरि वो। हर गिरिजा कर भयउ बिवाहू। सकल भुवन भरि रहा उछाहू॥ इहां तक जानो हिमऋतु वो लक्ष्य प्रभु जन्म उत्सव को। नांदी मुख श्राद्ध करि जात कर्म सब कीन्ह। इहां से लेइकरि वो। धरउ नाम गुरु हृदय बिचारी। इहां पर्यंत जानो शिशिरऋतु।

बरनब राम बिवाह समाजू। सो मुद मंगल मय रितुराजू॥३॥

तदनंतर रघुनाथजी के बिवाहादिक जो प्रसंग है सो बसंत है॥३॥ टिप्पणी—मानसप्रचारिका में यों लिखा है। श्रीरामचन्द्र के बिवाह की समाज को जो वर्णन है सा मुदमंगलमय ऋतुराज बसन्त है जैसे बसन्त ऋतु में सर्व वृक्ष पल्लव फूल से नाना रंग के शोभित होते हैं तैसे श्रीरामबिवाह को समाज है मयमण्डप की रचना वा बरात का बनाव जो हाथिन पर झूल अम्बारी घोड़न पर जीनपोश रथन पर चँदवा नाना रंग के लगे हैं वो पेदलन में नाना रंग को भूषण बसन पहिरे हैं सोई बसन्त की शोभा बनि रही है वो जैसे बसन्त ऋतुराज है तैसे सब लीला को राम बिवाह समाज राजा है। लक्ष्य राम बिवाह को। हाटबाट मन्दिर सुर बासा। नगर सँवारहु चारिहु पासा॥ इहां से लेइकरि वो। बामदेव आदिक ऋषय पूजत सकल महीश। इहां पर्यंत जानो।

ग्रीषम दुसह राम बनगमनू। पंथ कथा खर आतप पवनू॥४॥

रघुबीरजी के बनगवन के जो दुसह वाक्य है सो ग्रीषमरितु है तदुत्तर मारग के जो कष्ट हैं सो

तीक्ष्ण घाम अरु बात है ॥ ४ ॥ टिप्पणी—मानसप्रचारिका में यों लिखा है । जैसे सरयू में ग्रीष्मऋतु परत है सो है तो गरम पर सरयू में शीतल है वो सुखद बर्षा को आगम है जितना ग्रीष्म तपै तितनो बर्षा होइ तैसे कीर्त्ति सरयू में श्रीराम बनगवन की कथा जो है सो ग्रीष्मऋतु है ग्रीष्मऋतु में घाम पवन तीक्ष्ण होत हैं रामबनगमन में पन्थकथा जो है सो पर नाम तीक्ष्ण घाम पवन है । लक्ष्य राम बनगवन वो पन्थ-कथा को । सजिबन साज समाज सब, बनिता बन्धु समेत । बन्दि बिप्र गुरु चरण प्रभु, चले करि सबहिं अचेत ॥ इहां से लेइकरि वो । बैठि बिटप तर दिवस गँवावै । इतना अयोध्याकांड । वो । जहँ जहँ जाहिं देव रघुराया । करहिं मेघनभ तहँ तहँ छाया ॥ इतना आरण्यकांड में जानो सो बनगवन की कथा है तो बिरहरूपतापदेनेवाली परन्तु श्रीराम कीर्त्ति सरयू के साथ त्रिताप हरिलेत है ताते शीतल है वो रावन के युद्धरूप बर्षा को आगम है जाते सब को सुख होइगो ।

बरषा घोर निसाचररारी । सुरकुल सालि सुमंगलकारी ॥ ५ ॥

देवत्यो के कुलोरूपी धानो को मंगल देनेहारी राक्ष्यसों साथ लराईरूपी बर्षारितु है ॥५॥ टिप्पणी—मानसप्रचारिका में यों लिखा है । अब बर्षाऋतु कहते हैं कि निशाचरन से जो घोर रारी भई है सोई बर्षाऋतु है जैसे बर्षाऋतु में धान के आनंद मंगल होत है तैसे निशाचरन की रारी में देवकुल जो शालि नाम धान हैं तिन को मंगलकारी भयो । लक्ष निशाचरन की रारि को । मिला असुर बिराध मग जाता । आवतही रघुबीर निपाता ॥ यह प्रथम पुरवइया चली मेघ आये । पुनः । तेहि बूझा सब कहसि बुझाई । यातुधान सुनि सेन बनाई ॥ इहां से लेइकरि । धुआं देखि खरदूषण केरा । इहां पर्यंत बड़ा भारी दवंगरा है वो । कतहुं होइ निश्चर सन भेटा । प्राण लेहिं इकएक चपेटा । पुनः । कछु मारे कछु जाइ पुकारे । वो लंका जराइ के ॥ पूछ बुझाइ खोइ श्रम । पर्यंत यह एक दवंगरा है फिरि जब कुम्भकरण मेघनाद रावण को रारी सो घोर बर्षा है काहे ते कि जामें घोर बर्षा को रूपक भारी है । लक्ष । थहि के बीच निशाचर अनी । कससमाति आई अति घनी ॥ देखि चले सन्मुख कपि भट्टा । प्रलय काल के जनु घनघट्टा ॥ व इहां से लेइकरि वो । बहु भट बहे चढ़े पग जाहीं । जनु नावरि खलहिं सरिमाहीं ॥ इहां पर्यंत घोर रारि आगे रावण के युद्ध भरि कुवारी बर्षा है ॥

रामराज सुर बिनय बड़ाई । बिस्वसुषद सोइ सरद सुहाई ॥ ६ ॥

रघुनाथजी के राज का अरु अमरोकृत बिनै अरु बडाई का जो वरणन है सो सिष्टको सुखद अरु बिसद सुपट पाठ होवै तो उज्जल अरु सुख देनेहारी सरदरितु है ॥६॥ टिप्पणी—मानसप्रचारिका में सुर के स्थान पर सुप तथा बिस्व के स्थान पर बिसद पाठ लिखकर यों अर्थ किया है । श्रीरामचंद्र के राज्य को सुख वो विनय वा बड़ाई सो कीर्त्ति सरि में शरद ऋतुपरयो है सो कैसो है कि विशदनाम उज्जल वो सुखदाता वो स्वच्छ शोभायमान राम राज्य में इहां तक ब्रह्मांड भरि सातौ दीप उज्ज्वल भये कि श्रीमन्नारायण क्षीर समुद्र ढूंढ़ते हैं वो महादेव कैलाश ढूंढ़ते हैं वो इन्द्र ऐरावत हाथी ढूंढ़ते हैं वो राहु चंद्रमा ढूंढ़ते हैं वो ब्रह्मा हंस ढूंढ़ते हैं । प्रमाणं । हनुमन्नाटके । श्लोक । महाराज श्रीमन्जगतियशसातेधवलिते । पयः पारावारःपरमपुरुषोयंमृगयते ॥ कपर्दीकैलाशंकुलिश भृन्नौमंकरिवरं । कलानाथंराहुः कमलभवनोहंसमधुना इति ॥ लक्ष । राम राज्य सुख

बिनय बड़ाई । वो । राम राज्य बैठे त्रैलोका । इहां से वो । राम राज्य नभगेश सुनु, सचराचर जगमाहिं । काल कर्म स्वभावगुण, कृत दुख काहुहि नाहिं ॥ यहां पर्यन्त जानो ॥

सतीसिरोमनि सियगुनगाथा । सोइ गुनअमल अनूपम पाथा ॥७॥

सतियों की सिरोमणि जो जानकी हैं तिस के गुणों कि यां जो कथा है सो रघुनाथजी के गुणो रूपी अनूप जल की निर्मलता है अब नीर साथ रघुनाथजी के गुणो की समता अरु विशेषता भी कहेंगे ॥ ७ ॥ टिप्पणी—मानसप्रचारिका में यों लिखा है। अब इहां से गुण कहते हैं कि सतिन की शिरोमणि श्रीजानकी जी तिन के गुण गाथ जो हैं सो यह अनूपम रामयश जल को निर्मलतागुण है जो कहौ कि एक बेर निर्मलतागुण सगुण लीला कहे हैं तौ सुनो उहां प्रथम तौ साधुरूप मेघ के मुख ते जब कूप्यो है तब कहे फिरि जब बुद्धिरूप भूमि में पर्यो तब वहीगुन कछू बुद्धि के गुण लिये कहे फेरि जब कवितारूप नदी में आयो तब कछू कबिता के गुण लिये कहे वो जो अच्छे विचारो तौ सगुण लीला वो सियगुण गाथा एकै देखि परत है काहे ते कि जहां श्रीजानकीजू को स्वरूप कहा है तहां श्रीरघुनाथ जानकी को एक कहा है वो जब अवतार दशा में लीला कहे तब जानकी जू को सेवक में कहा सो यही रामयश को निर्मल करै है जो कदाचित् श्रीजानकी जी ऐसा लीला प्रकरण में न करतीं तौ शोभा न होती ताते विचारिलेउ अब सियगुण गाथा को। लच्छ । पति अनुकूल सदा रह सीता । शोभा खानि सुशील बिनीता ॥ जानति कृपासिंधु प्रभुताई । सेवति चरन कमल मन लाई ॥ यद्यपि गृह सेवक सेवकीनी । बिपुल सकल सेवा बिधि लीनी ॥ निजकर गृहपरिचर्या करहीं । रामचंद्र आयसु अनुसरहीं ॥ जेहि बिधि कृपासिन्धु सुख मानहिं । स्वइकरि सिय सेवा बिधि जानहिं ॥ कौशल्यादि सासु गृह माहीं । सेवहिं सबहिं मानमद नाहीं ॥ उमा रमा ब्रह्मानि बन्दिता । जगदम्बा सन्तत मनिन्दिता ॥ जासु कृपा कटाच्छ सुर, चाहत चितवनि सोइ । राम पदारबिन्द रति, रहति स्वभावहि खोइ ॥

भरतसुभाउ सुसीतलताई । सदा एकरस बरनि न जाई ॥८॥

भरत का एक रस सुभाव जो बरनन से परे हैं सो इस जलकी सीतलता है ॥ ८ ॥ टिप्पणी—मानसप्रचारिका में यों लिखा है । श्रीभरतजी को सुन्दर भाव जो है सोई श्रीरामयश जल जो कवित्तरूप नदी में भरो है तिस का शीतलगुण है पर सदा एक रस सो भरतजी को सुन्दर भाव बर्णा नहीं जाइ है जो कहो बर्णा नहीं जाइ है तो कहते हो क्या तहां भाव नहीं कहा है भाव की दशा कही है जो दशा देखि के भाव अकथ ह्वै गयो है । लच्छ ।भावदशा कि अयोध्या की सभा में । सानो सरल रस मातु बाणी सुनि भरत ब्याकुल भये । लोचन सरोरुह स्रवत सींचत बिरह उर अंकुर नये। सो दशा देखत समय तेहि बिसरी सबहि सुधि देह की ॥ पुनः । राससखा सुनि स्यन्दन त्यागा। चले उतरि उमगत अनुरागा ॥ पुनः । मांगउं भीष त्यागि निज धर्मू। आरत काह न करै कुकर्मू ॥ अस जिय जानि सुजान सुदानी । सुफल करी जग याचक बानी ॥ दोहा । अर्थ न धर्म न काम रुचि, पद न चहौं निर्बान । जन्म जन्म रति राम पद यह बरदान न आन ॥ जानहिं राम कुटिल करि मोही । लोग कहैं गुरु साहिब द्रोही ॥ सीतारामचरणरति मोरे । अनुदिन बढ़ै अनुग्रह तोरे ॥ प्रसंग भरि । पुनः । करत प्रणाम चले दोउ

भाई । कहत प्रीति शारद सकुचाई ॥ इत्यादि चित्रकूट की सभा भरि में ठौर ठौर है वो जब फिरि श्री अयोध्याजी में नन्दीग्राम में बैठे तब इत्यादि प्रसंग सुन्दर भावदशा के जानो ।

दोहा—अवलोकनि बोलनि मिलनि, प्रीति परसपरहास ।
भायप भलि चहुं बंधु की, जल माधुरी सुबास ॥ ४२ ॥

सुबास कहिये निवास । इतर सुगम ॥ ४२ ॥ टिप्पणी—मानसप्रचारिका में यों लिखा है । चारिउ भाइन की आपुस में परस्पर अवलोकनि जो है वो बोलनि जो है वो मिलनि जो है वो प्रीति जो है वो हास्य जो है सो यह जल को माधुरी नाम मिष्टगुण है वो चारिउ भाइन को भायप जो है सो यह जल की सुगन्धता गुण है अब क्रमही ते सब को लक्ष सुनो । अनुरूप बर दुलहिनि परस्पर लखि सकुचि हिय हर्षहीं । यामें ध्वनि करि कै अवलोकनि वो हास्य दोऊ मिलि होत हैं वो । जिन बीथिन्ह बिहरहिं सब भाई । पुनः । अनुज सखा सब संग बुलाई । बनमृगया नित खेलहिं जाई ॥ यहि पद सें ध्वनि करि कै बोलनि मिलि होति है वो । बरबस लिये उठाय उर, लाये कृपानिधान । भरत राम की मिलनि लखि, बिसरेउ सबहि अपान ॥ मिलि सप्रेम रिपुसूदनहिं, केवट भेंटेउ राम । भूरि भाग्य भेंटे भरत, लक्ष्मण करत प्रणाम ॥ भेंटेउ लषण ललकि लघु भाई । इत्यादि वो उत्तरकाण्ड में मिलाप चारिउ भाइन को है अब प्रीति सुनो । सेवहिं सानुकूल सब भाई । रामचरन रति अति अधिकाई । अरु निशि-बिधिहि मनावत रहहीं । कबहुं कृपालु हमहुं कछु कहहीं ॥ राम करहिं भ्रातन पर प्रीति । इत्यादि परस्पर प्रीति जानो सो यह बोलनि आदि वो हास्य अन्त पांच जो है सो यह जल की माधुरी नाम मिष्ठगुण है अब भायप सुनो । जनमें एक संग सब भाई । भोजन शयन केलि लरिकाई ॥ कर्णबेध उपबीत बिवाहू । संग संग सब भयउ उछाहू ॥ बिमल वंश यह अनुचित एका । बन्धु बिहाय बड़ेहि अभिषेका ॥ यह राघव को वो अब भरत की ओर सुनो । बिनु रघुबीर बिलोकि अबासू । रहे प्राण सहि जग उपहासू ॥ राम पुनीत बिषय रस रूखे । लोलुप भूमि भोग के भूखे ॥ कहँ लगि कहौं हृदय कठिनाई । निदरि कुलिश जेही लही बड़ाई ॥ यह भायप कि भरत बिना श्रीरामचन्द्र पिता की दई राज्य अंगीकार न करे वो सोई भरतजी गुरु माता पिता स्वामी सब की दई राज्य श्रीराम बिनु न करें श्रीरामपांवरी को राज्यसिंहासन पर बैठारि आपु राज्य के कामकाज देखते रहे वो लक्ष्मणजी श्रीरामचन्द्र में शामिल वो शत्रुघ्नजी श्रीभरतजी में शामिल हैं यह भायपजल को सुवास गुण है ॥

आरति बिनय दीनता मोरी । लघुता ललित सुबारि न थोरी ॥ १ ॥

मेरी जो आरतादिक चारि भांति को तुच्छता है सो इस जल पर सिवार है लघुता की रुचिरता अति नम्रता है अरु सिवार का सौंदर्ज नीर के वर्ण सम जल पर होवगा है ॥ १ ॥ टिप्पणी—मानसप्रचारिका में यों लिखा है । अब जल को हलुकई गुण श्रीगोस्वामीजी महाराज कहते हैं कि हमारी आर्त्ति वो बिनय वो दीनता जो इस ग्रन्थ में ठौर ठौर है सो लघुता है पर थोरी नहीं बहुत है लघुता सुवारि में लालित्य है कुछ अशोभित नहीं काहे कि जो सायत जल में सब गुण होइ एक हलुकई न होइ तौ वह

जल बादो होता है ताते लघुता लालित्य है जो गोस्वामीजी इतनी लघुता अपनी न कहते बिनय न करते तो अभिमानी सूचित होते तब ऐसो निर्पंच एक अंगीयन्थ चलनो अशक्य रह्यो सोई बादी तुल्य भयो जब स्वामीजू की आर्त्ति बिनय दीनता सुनी तब सब कोऊ सराहि कै धारण किये ताते हलुकई लालित्य है। लक्ष्य। मंगलाचरण में बहुत है बर्णानां से लेइवो ३५ दोहा ताईं बीच में और प्रसंग भी है।

अदभुत सलिल सुनत गुनकारी । आस पिआस तोषमलहारी ॥२॥

वह अंबुपान किया गुण करता है इह प्रभो का यस स्रवण मात्र कर आसारूपी त्रिषा अरु राग द्वषरूपी मल को मिटावता है ॥२॥ टिप्पणी—मानसप्रचारिका में तोष के स्थान पर मनो पाठ लिखकर यों अर्थ किया है। ऐसो अद्भुत नाम आश्चर्य जल को सुनत मात्रगुणकारी है कौन गुणकारी कि आशा रूप पियास वो मन को मल जो पाप तिस को हरिलेत है॥

राम सुप्रेमहि पोषत पानी । हरत सकलकलिकलुषगिलानी॥३॥

वह जल अंकुर को पुष्ट करता है यह रघुनाथजी के प्रेम को बधावता है अरु पापरूपी गिलान को नास करता है॥ टिप्पणी—मानसप्रचारिका में यों लिखा है। पुनः। यह जल कैसा है कि रामचन्द्र विषे जो प्रेम तिस को पोषनेवाला है नाम प्रेम को बढ़ावत है वो सकल कलि को कलुष जो पाप वो ग्लानि तिस को हरि लेत है॥

भौ स्रम सोषक तोषक तोषा । समन दुरित दुष दारिद दोषा॥४॥

जनमों के स्रमो को सोखता है संतोष को बृद्ध करता है महापापहुं को अरु दुखहुं को अरु दरिद्रों को नास करता है॥ ४॥ टिप्पणी—मानसप्रचारिका में यों लिखा है। पुनः। यह कैसा है कि भवश्रम जो जन्म मरण तिस को सोखक नाम मिटावनेवाला है। पुनः संतोषऊ को संतोष करनेवाला है वो दुरित जो दुस्कृत करणी वो दुःख वो दारिद्र वो दोष इन सब को नाश करनेवाला है॥

काम क्रोध मद मोह नसावन । बिमल बिबेक बिराग बढावन॥५॥

टिप्पणी—मानसप्रचारिका में यों लिखा है। काम क्रोध मद मोह इन सब के नशावनेवाला है वो बिमल बिबेक वो बिमल बैराग्य तिस को बढ़ावनिहारो है॥

सादर मज्जन पान किए ते । मिटहि पाप परिताप हिए ते॥६॥

परिताप कहिये पश्चाताप इतर सपष्ट॥ ६॥ टिप्पणी—मानसप्रचारिका में यो लिखा है। ऐसे रामयशरूप जल में सादर कही आदरपूर्वक मज्जन तुल्य श्रवण वो पान तुल्य धारण किये ते पाप तथा परिताप हृदय ते मिटि जाते हैं॥

जिन्ह येहि बारि न मानस धोए । ते कायर कलिकाल बिगोए॥७॥

जीनो पुरसों ने भगवंत के गुणानुबादोंरूपी जल साथ अपणे मन नहीं पवित्र करे सो कायर है जाते इंद्रियों को जीत नहीं सकते अरु कलिकालरूपी शत्रु ने मारे हैं॥ ७॥ टिप्पणी—मानसप्रचारिका में यों लिखा है। अब श्रीगोस्वामी जी महाराज कहते हैं कि जिन्ह प्राणिन यह रामयशरूप बारि में

अपनो मानस न धोयो नाम इस मानस को धारण करि अपने मन को न शुद्ध कियो ते कायर नाम कपटी हैं तिन को कलिकाल बिगोये नाम ठगिलियो है।

त्रिषित निरखि रबिकर भववारी। फिरिहैं मृग जिमिजीव दुखारी ॥ ८ ॥

जैसे मृगतिसना की नदी देखकर त्रिषित कुरंग परे भटकते हैं ते बहु मूढ़ जीव संसार को सुख रूप देखकर पड़े जतन करते हैं अरु सुख की सिद्ध नहीं होती ॥ ८ ॥ टिप्पणी—मानसप्रचारिका में यों लिखा है। ते प्राणी तृषित मृगा की नाईं व्याकुल धावते फिरते हैं दुःखित ह्वैकै कुछ हाथ नहीं आवत।

दोहा—मतिअनुहारि सुबारि बर, गुनगन मन अन्हवाइ।
सुमिरि भवानी संकरहि, कह कबि कथा सुहाइ ॥

रघुनाथजी के गुणानबादरूपी जल के गुण मति अनुसार कहि के अरु तिनो मों मनइकाय करणरूपी अस्नान कर के तदोत्तर भवानी शंकर का सुमिरण करके सुंदर कथा प्रसंग कहत हों ।।४३।। टिप्पणी—मानसप्रचारिका में पाठांतर कर अर्थ लिखा है। मति अनुहारि सुबारिगुण, गण गनि मन सुख धाम। सुमिरि भवानी शंकरहि, कह कबि यश श्रीराम ॥ अब श्रीगोस्वामीजी महाराज कहते हैं कि अपनी मति के अनुहारि सुवारि जो श्रीरामयश तेहि को गुणगण कहो समूह तिन को गनि कहो बिचारि कै मन अन्हवाइ कहि मन को उसी में प्रवेश करि श्रीभवानी शंकर को सुमिरि कै तब कबि जो मैं तुलसीदास सो श्रीरामचन्द्र की सुहाई कथा जोहै सो कहत हों देखिये तो जो मन मति को पूर्वक कहा रहा सो शम्भु के प्रसाद ते मति हुलसी हुलसिकै रामयश मानस को अवलोकनि करि उसी में गोता लगाइ बिमल भई तब रामयश मानस को गुणगण विचारने लगी सो विचारि मन का प्रवेश करि दोनों विमल भये तब कबि रामकथा कहने को उद्यत भये ॥ और मुनशी रोशनलाल ने निम्नलिखित अर्थ किया है। मति के अनुहारि सुंदर जल है उस के गुणों के समूहों का वर्णनकरिकै और अपना मन जो रोगी था और अब गुरुचरण धूरि चारुचूरण से आरोग्य हो गया उसे इस कविता सरजू के जल में अन्हवाय और भवानी शंकर को सुमिरि कवि इस शोभित कथा को कहते हैं मानससर के इन नव दोहों को गौरी शंकर के नाम से सम्पुट कर दिया है अर्थात् प्रथम दोहे में भी भवानी शंकर का स्मरण किया है और अंत में भी इसलिये कि नव दोहे रामायण के बीज हैं शंकर पार्वती की रक्षा में रहैं।

अब रघुपति पद पंकरुह, हिय धरी पाइ प्रसाद।
कहौं जुगल मुनिवर्ज कर, मिलन सुभग संबाद ॥ ४३ ॥

श्रीरामचंद्र के चरणरूपी कमलों को हिए में धारकर अरु आनन्द पाइ कर रामायण कर उत्थानका बांधवे निमित्त अब भरद्वाज अरु याज्ञवलक का मिलाप अरु सुन्दर रीति से प्रश्नोत्तर कहताहों ॥

भरद्वाज मुनि बसहिं प्रयागा। तिनही रामपद अति अनुरागा ॥१॥
तापस समदमदयानिधाना। परमारथपथ परम सुजाना ॥२॥

सो भरद्वाज जी पंचअग्नि तपनादि को कर तापसो है अरु सम दमादि को कर मन को जेता है दया का पूंज है अरु उपनिषद विद्या मों निपुनता कर परमारथ मों प्रम प्रवीन है ॥ २ ॥

माघ मकर गत रवि जब होई । तीरथपतिहिं आव सब कोई ॥३॥

माघ कहणे से हीं मकर गत रवि का बोध होता था परंतु मास द्वै प्रकार के हैं एक चंद्रमास हैं एक रविमास हैं सो इहां आदितमास प्रगट न किया ताते द्वै पद दिए ॥ ३ ॥

देव दनुज किन्नर नर श्रेनी । सादर मज्जहिँ सकल त्रिबेनी ॥४॥
पूजहिँ माधव पदजलजाता । परसि अच्छैबट हरषित गाता ॥५॥

माधव ठाकुर जो उहां का अधिष्टाता है तिस के पद पंकज पूजते हैं अरु अखैबट को स्परस कर प्रसन्न होते हैं तदनंतर ॥ ५ ॥

भरद्वाजआश्रम अतिपावन । परमरम्य मुनिवर मनभावन ॥६॥
तहां होइ मुनिरिषैसमाजा । जाहिँ जे मंजहि तीरथराजा ॥७॥
मज्जहिं प्रात समेत उछाहा । कहै परस्पर हरिगुन गाहा ॥८॥

तीरथपति का प्रभाव जानि कै लोग उत्साह सो प्रातस्नान करते हैं तदनंतर भगवंत के गुणोंकियां कथा भरद्वाज आश्रम पर बैठ के कहते हैं प्रातपद कथन का भाव यह स्नान तीनकाल भी होता है अरु कथा का समाज चतुर्थ जाम मैं अनेक स्थानी होता है परंतु उहां यह रीति थी प्रातस्नान कर के हीं समाज होता जाते माघ मास मैं प्रातस्नान का विशेष फल है प्रमाण माघमासंरटंत्यापः किंचिद-भ्युदतेरवो । ब्रह्मघ्नं वासुरापंशाकंपततंपुनीमहे । माघ मास मैं जल पुकार के कहते हैं सूर्योदय होते जो हम को स्पर्स करै तिस के ब्रह्महत्यादिक महापापों को हम नास करते हैं । अब तिन की व्याख्या का सरूप कहते हैं ॥ ८ ॥

दोहा—ब्रह्मनिरूपन धर्म बिधि, बरनहिं तत्व बिभाग ।
कहहि भक्ति भगवंत कै, संजुत ग्यान बिराग ॥४४॥

ब्रह्मनिरूपण कहिये ततपद ईश त्वंपद जीव असपद ब्रह्म तिस का स्वरूप विधिनिषेद कर लखावणा धर्म विधि कहिए वरणाश्रमों के धर्मादिक प्रकार अरु तिनो करमों के फल तत्व विभाग कहिये सांख्य का मत जहां चौबीस ततुकर पचीसवां साखी कहा है अथवा पुराणों में भो तीन ततो से लेकर पैतीस तत्तो प्रर्यंत भेद कहे है तिन को निरणै करते हैं भक्ति भगवंत की कहिये जैसे पंचरात्रादिकों ग्रन्थो में पूजा के विधान कहे हैं अथवा नौधा प्रेमा परा इस भांति भक्ति के स्वरूप बरणते हैं ग्यान कहिये स्रवन मनन निदाध्यासन साख्यातकार तिन का स्वरूप कहते हैं राग कहिये चार प्रकार यतमान विवेक एक इंद्रैं बसीकार सारासार का विचारकरणा सो यतमान अपणे चितगत जो दोष है तिन मों इतने निवृत भए हैं अरु इततने मिटावणे हैं सो विवेक विषै वासना को होते भी मन इंद्रिय को नियह करणा वह

यक इंद्रै है लोक परलोक कि विषयों के त्याग की इच्छा करनी यह बसीकार मंद तीव्र तीव्रतर इस के भेद हैं ॥ ४४ ॥

एहि प्रकार भरि माघ नहाहीं। पुनि सब निज निज आश्रम जाहीं ॥१॥
प्रतिसंबत अस होइ अनंदा। मकर मज्जि गवनहिं मुनिबृन्दा ॥२॥

यह तो सदा की रीति कही अब प्रसंग कहते हैं ॥ २ ॥ टिप्पणी—रौशनलाल ने माघ के स्थान पर मकर पाठ लिखा है। मकर एक राशि का नाम है। माघ का अर्थ मत पापकर मा निषेध अघ पाप। मघानक्षत्र पूर्णवासी को होता है अतएव माघ नाम पड़ा कोई कोई कहते हैं कि माघ पुष्प अर्थात् कुंद पुष्प इस मास में फूलता है अतएव माघ नाम पड़ा। कोई कोई हठ करते हैं कि माघ पाठ नहीं किंतु मकर ही पाठ ठीक है। इस का कारण यह है। इहिं प्रकार भर मकर नहांही। प्रति संबत अस होइ अनंदा। मकर मंजि गवनहिं मुनिबृंदा॥ एकबार भरि मकर नहाये। सब मुनीस आश्रमनि सिधाये। पुनः पहिले लिख आए। माघ मकर गत रवि जब होई। तीरथपतिहिं आव सब कोई॥

एकबार भरि मकर नहाए। सब मुनीस आश्रमन्हि सिधाए ॥३॥

टिप्पणी—सिधाये चले गये।

जागबलिक मुनि परम बिबेकी। भरद्वाज राषे पदटेकी ॥४॥

मुनि कहिये मननसील साधन सम्पन्न परम बिबेकी कहिये भानु के मुखों मे जिनो को ज्ञान प्राप्ति भया है तिस याज्ञबलक को भरद्वाज ने पदटेकी कहिये पगों पर मस्तक लगाइ कर राख्या सर्व रिषों के गमन पीछे याज्ञबलक के राखणे का आसय यह भरद्वाजजी के मन में संदेह था तिस के निव्रितार्थ याज्ञबलकजी कोही निश्चै किया अरु गुह्य प्रश्न था ताते सभों के पीछे इकांत राखे ॥ ४ ॥

सादर चरनसरोज पषारे। अति पुनित आसन बैठारे ॥५॥
करि पूजा मुनि सुजस बषानी। बोले अति पुनित मृदुबानी ॥६॥

भगवंत के यश की सूचक ताते अति पुनीत अरु नाथादिक विशेषणों कर कही हुई ताते मृदु इतर सुगम ॥ ६ ॥ टिप्पणी—सुजस बखानी अस्तुति की।

नाथ एक संसउ बड मोरे। करगत बेदतत्त्व सब तोरे ॥७॥

एक संसै इस निमित्त मुनीश्वरों के बहुते प्रश्नों का संदेह न होवै अरु बडा इसकर कहा उपख्यान करै किंबा एक कहिये अदुतीय अरु बड कहिये ब्रह्म सो तिस ब्रह्म परमात्मा श्रीरामचंद्र विषे मुझ को संदेह है अरु तुम्हारे से इस निमित्त पूछता हौं जाते। चारो वेदों का सार जो है सो तुम को करामलक सम है जो याज्ञबलकजी कहैं तुम संदेह का सरूप क्यौ नहिं कहते तिस पर कहते हैं ॥७॥ टिप्पणी—संशय वस्तु का ज्ञान न होना।

कहत सो मोहि लागभयलाजा। जौ न कहौं बड होइ अकाजा ॥८॥

भै इस कर होता है कदाचित तुम कोप करो जो जान बूझकर हम सो हांसी करता है अरु जौं मै अपनी अज्ञातहीं कहौं तौं लज्या यह लागती है तुम कहोगे तूं एती बात भी नहीं जानता कदाचित कहो ऐसे भय संका है तो मत पूछो तिस पर कहते हैं। अकाज यह होवे अविद्या बनी रहै अरु तिन धरम का भी नास है जाते ॥८॥ टिप्पणी—तब के स्थान में बड पाठ मुन्शी रोशनलाल ने लिखा है और निम्न लिखित अर्थ किया है। भय इस हेतु से कि यह जानैं कि हमारी परीक्षा लेते हैं लाज यह कि बूढे हो के इतना भी नहीं जानते।

दोहा—संत कहहिं अस नीति प्रभु, श्रुति पुरान मुनि गाव।
होइ न बिमल बिबेक उर, गुर सन किये दुराव ॥४५॥

अस बिचारि प्रगटौं निज मोहू। हरहु नाथ करि जन पर छोहू ॥१॥

प्रगट्या जो निज मोह कहिये अपणे मन मों संदेह है किंवा निज कहिये अपणे स्वामी श्रीरामचंद्र जी तिन बिषे संदेह सो तुम कृपा करि निवारौं कृपा कथन का भाव यह हैं मैं प्रत्युपकार की सामर्थं नहीं राखता अब संदेह का स्वरूप कहते हैं ॥ १ ॥

राम नाम कर अमित प्रभावा। संत पुरान उपनिषद गावा ॥ २ ॥

टिप्पणी—अमित गिन्ती रहित उपनिषद बेद का शिरोभाग पुराणबेद का हृदय गावा कहा ॥

संतत जपत संभु अबिनासी। सिव भगवान ज्ञानगुनरासी ॥३॥

जो शिव भगवान ज्ञानकर पूरण हैं अरु सर्ब गुणों के निधि है अरु जिन को काल का भै नहीं सो भी जिस के नाम को निरंतर जपते हैं ॥ ३ ॥ टिप्पणी—संतत निरंतर शिव कल्याण स्वरूप हैं भगवान छः एश्वर्य युक्त। तुलसीशब्दार्थ में लिखा है। दोहा। श्री ऐश्वर्य बिराग अरु, मोक्ष धर्म यश ज्ञान। ए षड भग की खान जो, तिहि कहिये भगवान ॥ निरंतर का प्रमाण पार्वती वाक्य। तुम पुनि रामनाम दिन राती। सादर जपहु अनंग अराती ॥

आकर चारि जीव जग अहहीं। कासी मरत परम पद लहहीं ॥४॥

सोपि राम महिमा मुनिराया। सिव उपदेस करत करि दाया ॥४॥

हे मुनीश्वर चारो खानो के सरब जीव जो काशी मों मर कर मुक्ति पावते हैं सो भी रामनाम का महातम हैं जाते रामतापनी मों कहा है जीवो पर दया कर कै रामषडाक्षर मंत्र अंत मों शंकरजी उपदेश करते हैं ॥ ४ ॥

रामु कवन प्रभु पूछौं तोही। कहिय बुझाइ कृपानिधि मोही ॥६॥

सो राम कौन सा है हे प्रभों मुझ को समुझाइ कै कहो जो याज्ञवलिकजी कहैं तुम रामचंद्र को भी नहीं जानते तिस पर कहते हैं ॥ ६ ॥

एक राम अवधेसकुमारा। तिन्ह कर चरित बिदित संसारा ॥७॥

नारिबिरह दुष लहेउ आपारा। भएउ रोषु रन रावनु मारा ॥८॥

हे प्रभो एक तो दशरथनन्दन रामचंद्र हैं जैसे नारि के बियोग कर तिस ने रुदनादिक करे हैं अरु तिसो निमित्त क्रोध कर दशकंठ को मारा है तिस बात को सभ जगत जानता है तत्व यह ईश्वरों में सोकादि नहीं बनते अरु उस में तो परतख्य भये हैं ॥ ८ ॥

दोहा—प्रभु सोइ रामु कि अपर कोउ, जाहि जपत त्रिपुरारि।
सत्य धाम सर्बज्ञ तुम्ह, कहहु बिबेक बिचारि ॥४६॥

हे प्रभो सो राम एही हैं वा त्रिपुरारि का उपास्य कोउ और हैं इहां त्रिपुरारि विशेषण का भाव यह त्रिपुर दैत्य के तीन किले थे तिन के बीच अमृत था तिस कर वह मरता नहीं था जब महेश्वर ने श्रीरामचंद्रजी को ध्याया अरु प्रभो ने वत्सरूप धार के सुधा सुकाया तब भव ने उस को घाया तत्व यह जिनकी सहाइता कर त्रिपुर सारखे को मारा है सो रामचंद्र एही हैं। तुम सत्य वाक्य का मंदिर हो अरु सर्ब बात के ज्ञाता हो विवेक कहिये बुद्धि तिस सों विचार कर कहो जो सत्य धर्म पाठ होवे तो सत्य कहिये जिस सों सत्य का निर्णे है उत्तरमिमांसा जिस सूत्र का सूत्र है अथातो ब्रह्मजिज्ञासा धर्म कहिये पूरबमिमांसा जिस का मूल सूत्र है अथातोधर्म जिज्ञासा तिन के तुम संपूरण ज्ञाता हो सत्य अरु धर्म का कर्म भंग कंद हेतु है किंवा इन में ज्ञान की मुख्यता है ताते प्रथम सत्य पद कहा ॥ ४६ ॥

टिप्पणी—त्रिपुरारि त्रिपुरदैत्य के शत्रु त्रिपुर को जीतनेवाले शंकर काम क्रोध के वशवर्ती अर्थात् कामी क्रोधी को क्यों भजते अर्थात् सेवते हैं ॥

जैसे मिटै मोर भ्रम भारी। कहहु सो कथा नाथ बिस्तारी ॥ १ ॥

मेरे भ्रमनिवारणार्थ कथा बिस्तार कर कहो इस कथन का भाव यह मैंने जो कहा है तुम सत्य धाम के पूरणज्ञाता हो ताते कदाचित पूरबमिमांसा के मत सों कहो यग करो अंतस्करण निर्मलहोवैगा तौ संसय मिट जायगा वा उत्तरमिमांसा के मत सो कहो सम दमादि साधना कर आतम साक्ष्यातकार करो तब भ्रममिटैगा सो हे प्रभो ऐसे नहीं करना रामचंद्र के कथा सोंहीं मेरा भ्रमनिवारणा ॥ १ ॥

जागबलिक बोले मुसुकाई। तुम्हहि बिदित रघुपति प्रभुताई ॥ २ ॥

मुसुकान का भाव यह हम को सरवज्ञ कहिकर पुनः जो प्रश्न करा है सो यह जनवाया है मुझ को प्रभो के सरूप में अज्ञात नहीं परंतु सतसंग अरु हरिकथा का स्रवणकाल को सफलता के लोक संग्रह निमित्त उत्तमों को योग है सोई कहते हैं ॥ २ ॥

रामभगत तुम क्रम मन बानी। चतुराई तुम्हारि मैं जानी ॥ ३ ॥
चाहहु सुने रामगुन गूढा। कीन्हिहु प्रश्न मनहु अतिमूढा ॥ ४ ॥

तुम श्रीरामचंद्र के परपक्क भक्त हो अरु प्रश्न में तुम्हारी चतुरता मैं ने जानी है जो कोऊ बादधार के पूछे तिस को गुरु गूढ बासै नहीं सुनावते ताते तुम ने अज्ञातवत होकर पूछा है सो ॥ ४ ॥

तात सुनहु सादर मनु लाई। कहउँ राम के कथा सुहाई ॥ ५ ॥
महामोह महिषेसु बिसाला। रामकथा कालिका कराला ॥ ६ ॥

महामोह महिषासुर सो भी बडा है अरु श्रीरामचंद्रजी की कथा कालिका से भी कराल है विशाल अरु कराल पद का भाव यह महिषासुर देवत्यो को दुखदाई था महामोह सभों को दुखदेता है वा महिषासुर एक जन्म मों मारता था यह जन्मातरों मों मारता आया है अरु कालिका ने महिषासुर को मार कर जिन का दुख दूर किया था तिन का जन्म मरन नहीं था दूर हुआ अरु श्रीरामचंद्रजी की कथा जीवों का अज्ञान दूर करती है ॥ ६ ॥ टिप्पणी—कालिका के स्थान पर कलिकाल पाठ भों कई टिका कारों ने लिखा है पर रोशनलाल ने भी कालिका पाठ लिख कर अर्थ किया है। रघुनाथ में मानसी भ्रम मोह है सो बड़ा महिषासुर उस के नाश के लिये रामकथा कालिका सी कराल है।

रामकथा ससिकिरन समाना। संत चकोर करहिं जेहि पाना ॥ ७ ॥

जैसे इंदु की रसमा सभों को सुखद है परंतु तिन का सुधा चकोर बड़ो प्रीति से पीवते हैं तैसे श्रीरामचंद्र की कथा सो सरब जीवो से संत अधिक रुचि रखते हैं ॥७॥ टिप्पणी--रसमा = रश्मि = किरण।

ऐसेइ संसय कीन्ह भवानी। महादेव तब कहा बषानी ॥ ८ ॥

हे भरद्वाज ऐसे कहिये तुम्हारी न्याईंही भवानी ने भी शंकरजी से पूछा था तिस को महादेव ने नृसंदेह किया था संसे में भवानी पद इस हेतु दिया भवंभनतो भवानी भव कहिये संसार अनू प्राणने रखणे धातु है संसार की जो रख्या करै सो कहिये भवानी सो संसार संसे स्वरूप है तिस संबंध कर भवानी में भी संसे इहां बणाता है सिद्धांत मैं महादेव पद इस निमित्त दिया देव नाम प्रकास का है सो संसयरूपी तम को जो हरै सो महादेव ॥ ८ ॥

दोहा—कहौं सो मतिअनुहारि अब, उमासंभुसंबाद।
भयउ समय जेहि हेतु जस, सुनु मुनि मिटिहिं बिषाद ॥४७॥

उमा संभु का संबाद मति अनुसार मैं कहता हौं जिस में बिषै अरु जिस निमित्त जिस प्रकार भया है तिस के स्रवन से हे भरद्वाज तेरा खेद भी मिटैगा ॥ ४७ ॥

एकबार त्रेता जुग माहीं। संभु गये कुंभजरिषि पाहीं ॥ १ ॥
संग सती जगजननि भवानी। पूजे रिषि अषिलेस्वर जानी ॥ २ ॥

जगजननि कहो आदिसक्ति भवानी कहो शिवजी की अरधंगी इतर सुगम ॥ २ ॥

रामकथा मुनीबर्ज बषानी। सुनी महेस परम सुषु मानी ॥ ३ ॥
रिषि पूछी हरिभगति सुहाई। कही संभु अधिकारी पाई ॥ ४॥

नवधा प्रेमा पराभक्ति आदिक के भेद हैं परंतु अगस्तजी को उत्तम अधिकारी जान कै परा का स्वरूप बिस्तार कै कहा ॥ ४ ॥

कहत सुनत रघुपति गुनगाथा । कछु दिन तहाँ रहे गिरिनाथा ॥ ५ ॥

मुनि सन बिदा माँगि त्रिपुरारी । चले भवन संग दच्छकुमारी ॥ ६ ॥

पीछे अगस्तजी के आश्रम जाना था उहां प्रसंग भी अरु उस का मन भी निर्मल था इस कर भवानी कही थी अरु इहां उस को श्रीरामजी विषे संदेह उपजणा है इस कर दच्छकुमारी कही जो पिता भी ईश्वरों पर संदेह करणेवाला था बेटी ने किया तो क्या आश्चर्ज है ॥ ६ ॥

तेहि अवसर भंजन महिभारा । हरि रघुबंस लीन्ह अवतारा ॥ ७ ॥

इहां तिह अवसर दिर्घकाल का वाचक है इतर सुगम ॥ ७ ॥

पिता बचन तजि राजु उदासी । दंडकबन बिचरत अविनासी ॥ ८ ॥

दोहा—हृदय बिचारत जात हर, केहि बिधि दरसनु होइ ।
गुप्तरूप अवतरेउ प्रभु, गए जान सबु कोइ ॥

रिदै मो शिवजी बिचार करते हैं भगवान ने अब तक आपणा आपु गुप्त राखेया है जाते सोकादिक पडे करते हैं अरु मेरे समीप गए ते सब कोऊ इनो को ईश्वर जाणेगा ताते भय आवता है अरु दरसन करणा अवश्य है सो इस उभै प्रतबंध का ।

सोरठा—संकर उर अतिछोभु, सतीन जानहिंमरमु सोइ ।
तुलसी दरसनलोभु, मन डरु लोचन लालची ॥४८॥

शंभु जी के रिदे मों छोभ है जाते चित्त अरु नेत्र तों दरसन के लोभी है अरु मन मों प्रभों की अप्रगटता का डर है परंतु सती इस मरम को नहीं जानती जो काउ कहै प्रभों ने अपणा आप प्रगट क्यों नहीं किया तिस पर कहते हैं ॥ ४८ ॥

रावन मरनु मनुजकर जांचा । प्रभु बिधिबचन कीन्ह चह सांचा ॥ १ ॥

रावण ने तप कर कै बिरंचि से अमर होवणा मांगेया था तब बिधि ने कहा जिन के नाम तूं कहता जायगा तिनो से अमर बर मैं तुझे देता जावेंगा तब नेति बमते रावण को नरों अरु कपों का नाम भूल गया ता समै तथास्तु कहि के पितामैं ने कहा तुझे मानव से त्रास होइगा तब रावन ने कहा मैं मनुजों से नहीं डरता इस भांत का वर विचारकर ब्रह्मा का वाक्य सत्य करणे प्रभों ने नररूप हीं किया है जो कोऊ कहै अप्रगटता की शंका है तों अब दरसन ना करो तिस पर कहते हैं। टिप्पणी—पितामैं = पितामह।

जौ नहि जाउं रहै पछितावा । करत बिचारु न बनत बनावा ॥ २ ॥

ऐसी समीपता में दरसन ना करिये तो पश्चाताप रहेगा ऐसियां जुगता बिचारते हैं परंतु कोऊ बात नहीं बणती ।

एहि बिधि भये सोचबस ईसा । ताहीं समय जाइ दससीसा ॥ ३ ॥

लीन्ह नीच मारीचहि संगा। भयउ तुरत सोइ कपट कुरंगा॥ ४॥

जब शंकरजी इस चितवनी पर हुये ता समै दसग्रीस नीच ने मारीचमुनि को संग लिया किंबा रावण ने मारीच नीच को संग लिया मारीच को नीच कथन के भाव यह राक्षस जात था अरु कर्मों कर भी नीच था जाते श्रीरामचंद्रजी ने उस को प्राणों से बचाया था अरु उस नीच ने सीता को छलवाया जो कोऊ कहै वह रावण कर प्रेर्या हुवा था तौ यह बात सांच परंतु जो आप भला होता तो ऐसी बात करता जिस कर प्रेरक प्रसन्न रहता अरु प्रभौं को वियोग न होता सो उस ने जो सीता को भमाइ हिं दिया ताते नीच था वा जो भला पुरुष किसी सो बुराई भी करणलागे तौ भी कछु देर करता है अरु वह जो तुरंत हीं कुरंग बणा ताते नीच था किंबा जद्यपि उस का अपणा भी बैर था अरु उस दुष्ट की भी संगत भई थी तथापि श्रीरामचंद्र सो छलकरणा न जोग था योषता शरीर को छलकर हरणा अति नीचों का धरम है सोई कहते हैं॥ ४॥ टिप्पणी—योषता = योषिता = स्त्री।

करि छलु मूढ़ हरी बैदेही। प्रभुप्रभाउ तस बिदित न तेही॥ ५॥

इहां विदित कहिये निसंदेह प्रभों के प्रभाव को तिस को ज्ञात न थी ताते सीताहरी अरु जो प्रभाव को कुछ जानता था तौ भी मूढ़ था जो सरण न परा॥ ५॥

मृगबधि बंधु सहित हरि आए। आश्रमु देखि नयन जलु छाए॥ ६॥

जब मृग को मार कर हरि आए तब जानकी से रहित आश्रम देखि कर अति शोक से अश्रुपात हुए वा आश्रम कहिये गृहस्थाश्रम तिस को उर देखि कर सोक हुआ जो गिरहस्ती का व्यवहार अरु अग्निहोत्रादिक धर्म भी इस्त्री बिना सिद्ध नहीं होते किंबा हम भी अरु जानकी भी बडी कुल में उपजे हैं तिस कर संबंधियों में लज्या लागैगी इस संकोच कर नयन जल छाए॥ ६॥

बिरहबिकल नर इव रघुराई। पोजत बिपिन फिरत दोउ भाई॥ ७॥
कबहूं जोग बियोग न जाके। देषा प्रगट बिरहदुषु ताके॥ ८॥

जिस सो संजोग वियोग कदाचित नहीं बणता जाते सर्बव्यापक है तिस सो प्रगट दुखदृष्टाया इस कथन का तत्व भी एही वास्तव दुख नहीं दृष्टिमात्र है सोई कहते हैं॥ ८॥

दोहा—अतिबिचित्र रघुपतिचरित, जानहिं परम सुजान।
जे मतिमंद बिमोहबस, हृदय धरहिं कछु आन॥ ४९॥

जौन से महामति है सो प्रभों के कौतुक जानते हैं अरु मंदमति प्रभों विषे वास्तव हरष सोक मानते हैं॥ ४९॥ टिप्पणी—मुनशी रोशनलाल ने निम्न लिखित अर्थ लिखा है। बिचित्र अर्थात् अनेक रंगों के सहित सो अनेक रंग क्या है जो तपस्वी वेष शांतरस उज्जल है और धन्वा बाण धरे बीर रस लाल है और प्रिया संग लिये शृंगार रस श्याम है और मारीच बध रौद्र रस सो काला और जानकी का बिरह करुणारस पीला है और बिरह से बिकल होना बिभत्स रस खाकी रंग परम सुजान शंकर और बिमोह विशेष मोह हृदय में कुछ और धरते हैं इशारह सती की ओर है।

संभु समय तेहि रामहिं देषा। उर उपजा अतिहरषु बिसेषा ॥ १ ॥

श्रीरामचंद्र को देखकर शिवजी को अतिहर्ष होणे का हेतु यह शंकरजी चितवनी पडे करते थे दरसन अकस्मात् हुआ किंवा जैसे स्वामी का पूरण स्वांग देखिकर परिरूयकर मित्र को अतिहर्ष होता है तैसे भगवान के मानुरूप स्वांग मैं सोकादिक रचना को पूरणता देखिकर शंकरजी प्रसन्न भए किंवा रावण को हम ने बर दिए हैं अरु वह दुष्ट रिषहुं देवतियहुं को दुखदेता है ते सभी हम को उपालंभ करते हैं सो उस ने सीता चोराई है अब उस को प्रभु मारैंगे तिस कर हरष ॥ १ ॥

भरि लोचन छबिसिंधु निहारी। कुसमय जानि न कीन्हि चिन्हारी ॥२॥

कुसमों कहिये सोक का समा जानकर चिनारि कहिये पछाण सो ना कराई अर्थात् मिलाप न हुआ ॥ २ ॥ टिप्पणी—मुन्शी रोशनलाल ने निम्नलिखित अर्थ किया है। छबि के समुद्र को देखा समुद्र इसलिये कहा कि जिस को देख के सती की मति डूब गई कुसमय कहने का प्रयोजन यह कि रघुनाथ शिकारी हैं और खरदूषण त्रिशिरा रावणादिक मृग बान के सन्मुख आन पड़े हैं शिव कहते हैं कि इस कुसमय में हमारी चिन्हारी करने से भाग न जांय।

जय सच्चिदानंद जगपावन। अस कहि चलेउ मनोजनसावन ॥३॥

नमो सचिदानन्द क्यों न कहा जेपद कहणे में आसा क्या है। उत्तर। प्रभों ने रावन के मारण निमित्त यह ठाट किया है ताते आसिर्बाद दिया जिस कार्य्य निमित्त तुमारा उद्योग है तिस मों तुमारा जै होवे सो यह आसिषा सेवक स्वामी सखा सब भावों में बणती है अरु शिवजी के भी श्रीरामचंद्र विशेष सब भाव हैं ॥ ३ ॥ टिप्पणी—मुन्शी रोशनलाल ने निम्नलिखित अर्थ किया है। जय अर्थात् जो मनोरथ किये हो सो सिद्ध हो सच्चिदानंद कहने से वह शंका जो पार्वतीजी का हुई है दूर होजाती इसी से उन को तुलसीदास ने परम सुजान कहा सत समीचीन एक रस रहनेवाला और चित प्रकाशक और अनंदरूप और जगपावन अर्थात् यह चरित्र जग के पवित्र करने के हेतु करते हो मनोज कामनाशवन नाश करनेवाले शंकर।

चले जात सिव सती समेता। पुनि पुनि पुलकत कृपानिकेता ॥ ४ ॥

शिवजी को बारंबार रोमांच होणे दरसन के कथन कर किंवा कृपानिकेत हैं ताते रावण पर कृपालु होकर हरषे वह मुक्ति होवैगा ॥ ४ ॥

सती सो दसा संभु कै देषी। उर उपजा संदेहु बिसेषी ॥ ५ ॥

रामचंद्र को सोकवंत देखि कै सती को समान संसै भया था जो लोक इन को ईश्वर कैसे कहते हैं अरु महादेव को प्रेमपूर्बक प्रणाम करतिआं देखकर विशष संसैं भया अरु विचार करती भई ॥ ५ ॥

संकरु जगतबंद्य जगदीसा। सुर नर मुनि सब नावत सीसा ॥ ६ ॥

तिन्ह नृपसुत कहँ कीन्ह परनामा। कहि सच्चिदानंद परधामा ॥ ७ ॥

भए मगन छबि तासु बिलोकी। अजहुं प्रीति उर रहति न रोकी ॥ ८ ॥

शंकरजी जगन्नाथ अरु शिष्टपूज्य सुरो मुनों कर नमसकृत तिनों ने राज्यकुमारो को नमस्कार किया तिस पर भी सतचिदानंद कहिकर तथापि छबि देखिकर मगनहू गए हैं तिस पर भी प्रीति को रोक नहीं सकते जाते पुनः पुनः रोमांचादिक होते हैं जौं कोऊ कहै शंकरजी ने सच्चिदानन्द कहा है तौं ब्रह्महीं होवैंगे तिस पर कहते हैं ॥ ८ ॥

दोहा—ब्रह्म जो व्यापक बिरज अज, अकल अनीह अभेद।
सो कि देह धरि होइ नर, जाहि न जानत बेद ॥ ५० ॥

जो कोउ कहै ब्रह्म रूप रेख से परे हैं परंतु बिष्णुजी अवतार धारते हैं तिस पर कहते हैं ॥ ५० ॥
टिप्पणी—मुन्शी रौशनलाल ने निम्नलिखित अर्थ किया है। ब्रह्म जो ब्रह्मांड व्यापक और बिरज अर्थात् संसार रोग रहित और अज अर्थात् जन्म और मायारहित और कला से रहित अर्थात् जो घटता बढ़ता नहीं और अनीह उद्यम से रहित अभेद भेद रहित है सो कैसे देह धरि मनुष्य होगा जिस को वेद भी नहीं जानता।

बिष्णु जो सुरहित नरतनु धारी। सोउ सर्बज्ञ जथा त्रिपुरारी ॥ १ ॥
खोजै सो कि अज्ञ इव नारी। ज्ञानधाम श्रीपति असुरारी ॥ २ ॥

देवत्यों के सहाय निमित्त बिष्णुजी देह धारते हैं परंतु वह महादेववत सर्बज्ञ हैं अर्थ यह तिनो को सर्ब पदार्थों का ज्ञान है तिन को सोता की सुधि कैसे न होइ तिस पर भी ज्ञानधाम हैं अर्थ यह तिन को द्वैत नहीं फुरती तो सोक कैसे करैंगे जो बिवहार मों वियोग कहिये तौ श्री के नाथ हैं जाते वह नारी कहूं जावणावाली नहीं अरु जो कहिये असुरों ने हरी है तो उन के संकल्प से दुष्ट नास होते हैं जो कोऊ कहै शंकरजी ने ही भूलिकर प्रणाम किया होएगा तौं पति भगति कर अरु ईश्वर मों भी दूषण न सहारती हुई कहती है ॥ २ ॥

संभुगिरा पुनि मृषा न होई। सिव सर्बज्ञ जान सबु कोई ॥ ३ ॥

टिप्पणी—शिव के स्थान पर हर पाठ रौशनलाल ने लिखा है।

अस संसय मन भयउ अपारा। होइ न हृदय प्रबोधप्रचारा ॥ ४ ॥

अपनी बुद्धि के युक्ति कर खंडनमंडन किया है परंतु रिदें मों प्रबोध का संस्कार नहीं होता है।

जद्यपि प्रगट न कहेउ भवानी। हर अंतरजामी सब जानी ॥ ५ ॥

तब कहते भए।

सुनहु सती तव नारि सुभाऊ। संसय अस न धरिय मन काऊ ॥ ६ ॥

नारिसुभाउ कहिये स्त्रिवों में संसै आदिक दोस सुभाविकही होते हैं परंतु तुम ने परमेश्वरहू विषे संदेह कदाचित नहीं करना जाते।

जासु कथा कुंभजरिषि गाई। भगति जासु मैं मुनिहि सुनाई ॥ ७ ॥

सोइ मम इष्ट देव रघुबीरा । सेवत जाहि सदा मुनि धीरा ॥ ८ ॥

छंद—मुनि धीर जोगी सिद्ध संतत बिमल मन जेहि ध्यावहीं ।
कहि नेति निगम पुरान आगम जासु कीरति गावहीं ॥
सोइ राम व्यापक ब्रह्म भुवन निकाय पति माया धनी ।
अवतरेउ अपने भगत हित निजतंत्र नित रघुकुलमनी ॥

सो व्यापक ब्रह्म ब्रह्मांडहूं के पुंजहुं अरु माया का स्वामी स्वतंत्र नित अपने भक्तहुं के निमित्त श्रीरामचंद्ररूप हूं कर रघुबंसियों का सिरोमणि बणा है ।

सोरठा—लाग न उर उपदेसु, जदपि कहेउ सिव बार बहु ।
बोले बिहंसि महेसु, हरिमायाबलु जानि जिय ॥ ५१ ॥

जब शंकरजी के बहुते उपदेश कर भी सती का रिदां सरल न भया तब तिस पर प्रभु की महामाया का बहुत बल जान के तिस की उपेख्या करते हुए मुसकाइ के बोले ।

जौ तुम्हरे मन अतिसंदेहू । तौ किन जाइ परीछा लेहू ॥ १ ॥

जौं सती कहे तुम मग में चले जाते हो में परिख्या लेने कैसे जावो तिस पर कहते हैं ।

तब लगि बैठ रहौं बट छाहीं । जब लगि तुम ऐहहु मोहि पाहीं ॥२॥
जैसे जाइ मोह भ्रम भारी । करेहु सो जतनु हृदय बिचारी ॥३॥

जैसे मोह अरु भ्रम मिटै तैसे विचार कर कोऊ यतन करणा तत्व यह कोऊ अयुक्त बात न करणी । टिप्पणी—रोशनलाल ने पाठांतर कर अर्थ किया है । करेहु सो जतन बिबेक बिचारी । बिचार के बिबेक सहित यत्न करो ।

चली सती सिव आयसु पाई । करहि बिचारु करौं का भाई ॥४॥

इहां भाई संबोधन मन प्रति है तब सती के गमनांतर ॥ ४ ॥

इहां संभु अस मन अनुमाना । दच्छसुता कहुं नहि कल्याना ॥ ५ ॥
मोरेहु कहें न संसय जाहीं । बिधि बिपरीत भलाई नाहीं ॥ ६ ॥

मेरे उपदेश कर भूं इस का संदेह नहीं निवृत होता तातें इस पर दैव की गति विपर्य्यै भासती है जो कोउ कहै आप तो सर्वज्ञ हो इस की भविष्य बतावो तिस पर कहते हैं ॥ ६ ॥

होइहि सोइ जो राम रचि राखा । को करि तर्क बढावइ साखा ॥७॥

जो भगवंत की गेत है सो होणी है तर्का कर साखा कहिये तरक मे तरक ऐसे होइगा ऐसे न होइगा सो इस भविष्यत को कौन पडा खोजे ॥ ७ ॥

अस कहि लगे जपन हरिनामा । गई सती जहं प्रभु सुखधामा ॥८॥

सुखधामा विशेषण का भाव यह प्रभों विषे सोकादिक सोक दृष्ट मो है वास्तव नहीं जाते एही बात आगे कहणी है ॥ ८ ॥

दोहा—पुनि पुनि हृदय बिचारु करि, धरि सीता कर रूप ।
आगे होइ चलि पंथ तेहि, जेहि आवत नरभूप ॥ ५२ ॥

श्रीरामचंद्रजी के मोहन के कारणों को बारंबार रिदे में विचारया तब इही निश्चै भया यह सीता को खोजते हैं मैं सीता का रूप धारोंगी तब मुझे देखकर प्रसन्न हूं जाहिंगे सोई कर के जिस मारग प्रभु आवते थे तिन के आगे हूं चली ॥ ५२ ॥ टिप्पणी—नरभूप के स्थान पर सुरभूप पाठ रोशनलाल ने लिखा है ।

लछिमन दीख उमा कृत बेषा । चकित भए भ्रम हृदय बिसेषा ॥ १ ॥

जब सती का छल लखमण ने जान्या तब विशेष भ्रम कर चित्त चक्रत हुआ । आसंका । लछिमण प्रट किस निमित्त दिया अरु तिन को विशेष भ्रम क्या भया अरु रघुनाथजी आगे थे सोमित्र जी पीछे जाते थे तिनो ने प्रथम देख्या देवी को सो क्या कारण । प्रथम उत्तर मन की लखे सो कहिये लख्यमण सो सती के मन का अभिप्राय लखा जो श्रीरामचंद्र के छलवे निमित्त वेष किया है दुतीय उत्तर यह शिवजी की अर्धंगी ईश्वरी है इस को इह रूप करणा न था बणता अरु जो किया है तों क्या जाणिए इस का कोई सुखम अभिप्राय हम ने न जाणा होइ तिस को विचारते हैं अरु रिदे में नहीं आवता इस विशेष भ्रम कर चक्रत भए तृतीय उत्तर सोमित्रजी श्रीरामचंद्रजी की सेवकी अर्थ बनवास जानकर चारो दिसा देखते थे तिस कर देख्या इनी को प्रथम देखा ॥ १ ॥

कहि न सकत कछु अतिगंभीरा । प्रभुप्रभाउ जानत मतिधीरा ॥ २ ॥

सती का कपट देख कर लख्यमणजी ने कछु बचन न कहा जाते अति गंभीर हैं गंभीर सो जो अपराधी प्रति विचार के बचन कहै अतिगंभीर सो जो अपराध देखकर भी कुछ न कहै अरु मतिधीर है ताते प्रभों का प्रभाव जानते हैं जो इन को कोण छल सकता है इस ते रघुनाथजी को भी कुछ न कहा ॥ २ ॥

सतीकपटु जानेउ सुरस्वामी । समदरसी सबअंतरजामी ॥ ३ ॥
सुमिरत जाहि मिटै अज्ञाना । सोइ सर्बज्ञ रामु भगवाना ॥ ४ ॥

श्रीरामचंद्र सुरों के स्वामी हैं सुरपति इस कर हैं जाते भगवान हैं भगवान इस कर हैं जाते सर्वज्ञ हैं सरवज्ञ किस ते हैं जाते अंतरजामी हैं रिदे के ज्ञात इस कर हैं जाते समदरसी है समदरसी इस कर हैं जिन सुमिरण कर अज्ञान मिट जाता है तिनो ने भी सती का छल लख्या इहां आगे पीछे की ज्ञात बिवहार दृिष्ट मों जाननी ॥ ४ ॥

सती कीन्ह चह तहहुँ दुराऊ । देषहु नारिसुभावप्रभाऊ ॥ ५ ॥

रघुबीरजी ने तिस को पछाणया अरु उस ने भी समझेया जो मुझ को पछाणलिया है तो भी नारि सुभाव कर दुरावहीं किया चाहती है नारिसुभाव कथन का आसे यह कोऊ कैसे महत्त को पावै जात सुभाव नहीं जाता ॥ ५ ॥

निज मायाबलु हृदय बषानी । बोले बिहसि राम मृदुबानी ॥ ६ ॥

अपनी माया का बल तिस पर रिदें मों कहा तत्व यह गंभीरता कर तिसका प्रगट अपमान न करा प्रत्युत मुसकाइ कर कोमल गिरा बोले । आसंका । प्रथम जुवती पुनः गुरो को तिस के सन्मुख रघुनाथ जी बन मों हँसि कर बोलणा का आसा क्या । उत्तर । इस निमित्त हमें देखो इस की बुद्धि हमारे सो छलणे निमित्त आई है अरु अपणी भविष्यत नहीं विचारती जो इस का फल मुझे क्या लागणा है ॥ ६ ॥

जोरि पानि प्रभु कीन्ह प्रनामू । पिता समेत लीन्ह निज नामू ॥ ७ ॥

नृपदसरथ का अरु अपाना नाम लैकर प्रणाम करा करजोर कर नमस्कार करणो उचित है ताते दोनो कर जोरे किंवा अरु लछमण की ओर से दोऊ करजोरे वा उमा जान कर पुनः जात सुभाव जान कर दोनों करजोरे जो तुम धन्य हो ऐसे पद को पाइकर भी जात सुभाव न त्यागा ॥ ७ ॥ टिप्पणी—निज नामू का तात्पर्य यह है कि मै दाशरथी राम हों । ओर दक्षिण देश में अब भी पिता समेत अपना नाम कहते हैं अथवा उस समय पिता समेत नाम कहने को रीति रही । यथा । पितु समेत कहि कहि निज नामू । लगे करन सब दंड प्रनामू ॥ पुनः । मारुतसुत मै कपि हनुमाना । नाम मोर सुनु कृपा निधाना ॥ और निजनामू के स्थान पर हरिनामू पाठ है। उस का तात्पर्य्य ह दच्छाणी आप का नमस्कार है।

कहेउ बहोरि कहां बृषकेतू । बिपिन अकेलि फिरहु केहि हेतू ॥ ८॥

टिप्पणी—रोशनलाल ने निम्न लिखित अर्थ किया है पर यह कोई विचित्रता नहीं आगे कुछ घटाबढ़कर टीके में ज्ञानी संतसिंह ने लिखा है । बहोरि अर्थात् फिर कहा कि वृषकेतु कहां है तुम अकेली बन में क्यों फिरतीहो श्रीमहाराज ने यह बचन सती के निकट गूढ़ कहा कि श्री शंकर का वृषकेतु अर्थात् बैल पर सवार होने से पागल समझ त्याग दिया अथवा वृषकेतु अर्थात् धर्म की पताका पति को छाड़ अकेली बन मे फिरतीहो इस का हेतु क्या है अथवा जो तुम पति देवता धरम की पताका लिये रहीं सो कहां है क्योंकि पतिव्रता स्त्री को पति का संग छाड़ घर में अकेली न रहनी चाहिये और तुम बन में फिरती हो आगे रसिकजन जाने ॥ ८ ॥

दोहा—रामबचन मृदु गूढ़ सुनि, उपजा अतिसंकोचु ।
सती सभीत महेस पहिँ, चली हृदय बड सोचु ॥५३॥

मृदु गूढ़ कहिये कथन सो कोमल होहिं अरु अभिप्राय जिन का गूढ होइ सो यह जो तुम परम पतीव्रता घर शंकर जी को छाड़ कर बन में अकेले फिरती हो सो कौण कारण है इस के अखर कोमल हैं अरु अर्थ गूढ हैं जाते इस कथन कर उस के कपट प्रगटावन पूर्वक अपणा ऐश्वर्य लखाइ दिया तब अपणी तुच्छता प्रगटण कर लज्जित हुई सती त्रास अरु चिंता करती शिवजी को ओर चली त्रास यह जो अब कामारि मुझ पर कोप करेंगे चिंता इस ते जो उस कोप छिमावणे का उपाव रिदें महुं कोई नहीं आवता सोई कहते हैं । ५३ ॥

मैं संकर कर कहा न माना । निज अग्यानु राम पर आना ॥ १ ॥

शंकर जी का वचन अरु मुझ दासी ने न मानिया तिसपर अपणे रिदें की मूढ़ता को रघुनाथ जी पर अरोप्या जाते । १ ॥

…इ उतरु अब दैहौं काहा । उर उपजा अतिदारुन दाहा ॥२॥
जाना राम सती दुषु पावा । निज प्रभाउ कछु प्रगटि जनावा ॥३॥

जब प्रभो ने जाणया सती दुखित भई है तब तिस को विमुख जान कर ईश्वरां पर संदेह का फल देणे निमित्त अपणा कछुक प्रभाव प्रगटाया अर्थ यह प्रभों के सुभाव असंख हैं परंत अपनी अनेक रूपता रूपी एक सक्ति इस को भी दिखाई ॥ ३ ॥

सती दीष कौतुकु मग जाता । आगे रामु सहित श्री भ्राता ॥ ४ ॥
फिरि चितवा पाछें प्रभु देषा । सहित बंधु सिय सुंदर बेषा ॥ ५ ॥

मारग चलती सती ने कौतुक कहिये विचित्रता देखी जो मैं रघुबीर जी को पीछे छोडि आई थी आगे सीता सहित दोनों हैं तब बिस्मै भई जो पीछे से आगे अरु द्वै से तीन किस भांति भए जब पीछे देखा तहां भी तीनों हैं अरु सुंदर सिंगार है तदनंतर ॥ ५ ॥

जहँ चितवति तहँ प्रभु आसीना । सेवहि सिद्ध मुनीस प्रबीना ॥ ६ ॥

टिप्पणी—जहां सती देखती हैं वहां प्रभु आसीन अर्थात् बैठे हैं और प्रवीन मुनीश और सिद्ध सेवा करत हैं ॥ ६ ॥

देषे सिव बिधि बिष्णु अनेका । अमितप्रभाउ एक तें एका ॥ ७ ॥
बंदत चरन करत प्रभुसेवा । बिबिध बेष देषे सब देवा ॥ ८ ॥

एक से अधिक एक प्रभाव वान जो विधि हरादिक हैं तिन के भी अनेक रूप देखे जो सभ श्री रामचंद्रजी की पाद सेवनादिक परिचर्य्या मों तत्पर हैं ऐसे अनेकों वेषां संजुक्त और देवता भी देखे तातपर्य यह कहूं ब्रह्मादिकों का एही रूप जो पुराणोक्त हैं अरु कहूं विष्णु का गौररूप शिव का स्यामरूप इसी प्रकार सर्ब देवत्यो कों स्वरूपो कों अरु वस्त्रों के भी अनेक देखे ॥ ८ ॥

दोहा—सती बिधात्री इंदिरा, देषी अमित अनूप ।
जेहि जेहि बेष अजादि सुर, तेहि तेहि तन अनुरूप ॥ ५४॥

सुंदर जो सती ब्रह्माणी लक्ष्मी आदिक देवीआं हैं सो भी ब्रह्मादिकों के अनरूप देखियां अर्थ यह जैसे ब्रह्मादिकों के रूप भिन्न तैसे देवियां के भी भिन्न भिन्न । ५४ ॥

देषे जहँ तहँ रघुपति जेते । सक्तिन्ह सहित सकल सुर तेते ॥ १ ॥

रघुबीरजी के जेते स्वरूप देखे सो सीता सहित अरु तिन के निकट देवता भी सभी देवियां सहित ॥१॥

जीव चराचर जो संसारा । देषे सकल अनेक प्रकारा ॥ २ ॥

पूजहिं प्रभुहि देव बहु बेषा। रामरूप दूसर नहि देषा ॥ ३ ॥

श्रीरामचंद्रजी सो यह अधिकता देखो जो ब्रह्मादिकों के रूप अनेक प्रकार के अरु श्रीरामचंद्र का एकही स्वरूप ॥ ३ ॥

अवलोके रघुपति बहुतेरे। सीता सहित न बेष घनेरे ॥ ४ ॥

सोइ रघुबर सोइ लछिमनु सीता। देषि सती अति भई सभीता ॥ ५ ॥

सती सभीत इस कर भई यह का है मैं अब क्या करो ॥५॥ टिप्पणी—रोशनलाल ने निम्नलिखित अर्थ किया है। श्रीगोसाईं महाराज ने प्रथम राम को एक रूपवान कहा फिर सीता सहित कहा फिर लक्ष्मण सहित कहा इस का भाव यह कि वेद के तीन मत—अद्वैत—द्वैत—विशिष्टाद्वैत सो तीनों को रामायण के अनुकूल राखा कि प्रथम राम नित्य—फिर माया सीता सहित नित्य फिर जीव लक्ष्मण सहित नित्य—और डराने का भाव यह कि रघुनाथ का अनित्य ज्ञान के परीक्षा को वे नित्य दीख पड़े आगे रसिकजन जाने।

हृदय कंप तन सुधि कछु नाहीं। नयन मूदि बैठीं मग माहीं ॥ ६ ॥

बहुरि बिलोकेउ नयन उघारी। कछु न दीष तहँ दच्छकुमारी ॥ ७ ॥

नेत्र मुंदनादिको कर जाणीता है महामाया ने अति बल पाइ कर तिस को आछादन कर लिया। दच्छकुमारी कथन का भाव यह जैसे महादेव कर प्रभाव देख सुन कर भी दच्छ को प्रतीति न थी आई तैसे शंकरजी का बचन सत्य जानकर भी इस को प्रतीति न आवणी जो इस ने झूठ बोलणा है ॥ ७ ॥

पुनि पुनि नाइ रामपद सीसा। चलीं तहां जहँ रहे गिरीसा ॥ ८ ॥

आसंका। श्रीरामचन्द्रजी के चरणों को सिरनवाइ के चलो को बिघन कैसे हुआ। उत्तर। सीस मात्र ही नवाया की मुंनिंदित कर्म बस ते रिदा नम्र न भया पुनः पुनः कथन का भी आसे एही है यतन किया परंतु रिदा शुद्ध न हुआ जाते रिदा शुद्ध होता तो महादेव ढिग जाइ के झूठ न बोलती तथापि प्रभों को प्रणाम करने के फल कर त्याग से पीछे पुनः संयोग होवेगा ॥ ८ ॥

दोहा—गई समीप महेस तब, हँसि पूछी कुसलात।
लीन्हि परीछा कवन बिधि, कहहु सत्य सब बात ॥ ५५ ॥

सती समीप पहुंची तब ईश्वर ने हंस कर कुसल प्रश्न करा अरु कहा सत्य कहु किस भांति परीक्षा करी है सो हांस तिस के निरादरार्थ है जो हांस प्रसन्नता कर होता तो उस का दूर से देखते बालावर्ते कुसल सो आई कथन का आसै यह हमारे कहे पर तैने प्रतीत न थी करी परंतु कोऊ उपद्रव तो नहीं करि आई सत बात कहु ऐसी दृढता से कथन का आसै यह इसने झूठ बोलणा है अरु हम ने इस का त्याग करना है। अब साधारण पूछिए तो कहेगी तुम ने मुझ को निरणे से नहीं पूछिया ॥ ५५ ॥

सती समुझि रघुबीरप्रभाऊ। भयबस सिव सन कीन्ह दुराऊ ॥ १ ॥

सती ने प्रभाव जानियां जो रघुनाथजी परमेश्वर हैं तब प्रभों पर कुतर्क करणे के किंवा शंकरजी की आज्ञा न माणन के वास कर अपणो कृपा का छिपाउ किया अरु कहती भई ॥ १ ॥

कछु न परीक्षा लीन्हि गोसाईं । कीन्ह प्रनामु तुम्हारिहिँ नाईं ॥ २ ॥
जो तुम कहा सो मृषा न होई । मोरें मन प्रतीत अति सोई ॥ ३ ॥
तब संकर देखउ धरि ध्याना । सती जो कीन्ह चरित सबु जाना ॥ ४ ॥
बहुरि राममायहि सिरु नावा । प्रेरि सतिहि जेहि झूँठ कहावा ॥ ५ ॥

जब शिवजी ने सती की वोर चित देके देख्या तब उस का छल सभ समझिया अरु श्री रामचन्द्रजी को माया को प्रणाम किया जिस कर प्रेरी सती ने मेरे निकट दृढता से पूछे हूं मिथ्या लाप कीना ॥५॥

हरिइच्छा भावी बलवाना । हृदय बिचारत संभु सुजाना ॥ ६ ॥

हरि को इच्छा कर रचित जो भावी है सो प्रबल है ई बात को शिवजी हृदय मों विचारते हैं जाते सुजान हैं तत्व यह सती क[illegible] [illegible]आग हम सो असंभव था परंतु अब बरबस होता है अब सती के दोष विचारण पूर्वक शंकरजी की चितवनी कहते हैं ॥ ६ ॥

सती कीन्ह सीता कर बेषा । सिवउर भयउ बिषाद बिसेषा ॥ ७ ॥

सती का मिथ्यालाप सुनि कर तो विषाद हुआ था परंतु सीता को शंकरजी माता जानते हैं तिस का रूप बनाया जान कर महा विषाद भया अरु कहते भए ॥ ७ ॥

जौं अब करौं सती सन प्रीती । मिटै भगतिपथु होइ अनीती ॥ ८ ॥

जो मैं सती से दंपती प्रेम करों तो लोगों से सुप्रसिद्ध भाव भक्ति निवृति ह्वै जायगी अरु अनीत प्रसंगी लोक गुरतल्पगो कूं जारिंग जानें मर्यादा ईश्वरों के अधीन हैं जो कोउ कहे त्याग देवो तिस पर उसे प्रतिबंध की चिंता जरूरी हैं ॥ ८ ॥

दोहा—परम पुनीत न जाइ तजि, किए प्रेम बड पापु ।
प्रगटि न कहत महेसु कछु, हृदय अधिक संतापु ॥ ५६ ॥

यह परम पावन है जाते हमारो सहज मशक्ति है ताते त्यागणे योग्य नहीं अरु हमारी माता का भेष धारकर हमारे गुरों का छलणे गई ताते महाअपराधनी है अंगीकार करणे जोग नहीं इस संताप सो रिदां तपता है अरु प्रगट नहीं कहते प्रगट न कथन का भाव गंभीरता अरु और कोऊ स्रोता भी ढिग नहीं ॥ ५६ ॥

तब संकर प्रभुपद सिरु नावा । सुमिरत रामु हृदय अस आवा ॥ १ ॥

जिस समैं शंकरजी को दुचती भई तब श्रीरामचंद्र का ध्यानकर बिनती करी हे सर्वज्ञ जो कछु मुझ को करतव्य है सो मेरा रिदां उस प्रकार प्रेरहु तत समैं हृदय मों स्फुरतो हुई। १ ॥

एहितन सतिहि भेट मोहि नाहीं। सिव संकल्पु कीन्ह मन माहीं॥ २॥

सदा का त्याग तो नहीं होता जाते मेत मों मेरी शक्ति एही है परन्तु इस के इस शरीर को स्पर्श न करौंगा यह निश्चै मन मों धारा॥ २॥

अस बिचारि संकरु मतिधीरा। चले भवन सुमिरत रघुबीरा॥ ३॥

मतिधीर जो शंभु हैं सो यह पूर्वोक्त विचारकरके श्रीरामचंद्रजी का नाम सुमरते हुए कैलास को चले मतिधीर विशेषण इस हेतु दिया जो नीकी जुक्ति स्फुरती भई किंवा सती सी युवती के त्याग मो शंका ना करी अरु श्रीरामचंद्रजी का सुमरण तो उपासकों को करतव्य है वा यह बिचार कर सुमरण किया जो तुम्हारी अपराध जानके मैंने त्यागी है अरु यह प्रजापति की बेटी है इस की सहाइता निमित्त कोई अवार्य पूर्व प्राण प्राप्ति होइ तो सर्व प्रकार तुम ने सहाइता करनी॥ ३॥

चलत गगन भै गिरा सुहाई। जय महेस भलि भगति दृढाई॥ ४॥

जै महेस पद देणे मो नभगिरा का आसै यह कपरदी जू ने बिनती करी थी अपनी सहाइतार्थ ताते कहा तुमारी जै होवेगी जाते तुम ने भक्ति का भला मारग बाध्या है अरु॥ ४॥ टिप्पणी—कपर्दी = शिव

अस पन तुम्ह बिनु करै को आना। रामभगत समरथ भगवाना॥ ५॥

सुनि नभगिरा सती उर सोचा। पूछा सिवहि समेत सकोचा॥ ६॥

चिंता सती को इस ते भई जो यह नभबानी कि मुझे अनिष्ट की द्योतक प्रतीत होती है जाते अपराध मुझ से हीं भया है तिस पर अब कोऊ और निसंक बाक कहि देवो अरु भूते सभी कोई अबी कोप का बाक कहि बैठे ताते संकोच से पूछा॥ ६॥

कीन्ह कवन पन कहहु कृपाला। सत्यधाम प्रभु दीनदयाला॥ ७॥

हे कृपाल तुम ने क्या प्रण किया है मुझे सुनावो जो महेस के मन मों आवै यथा कथंचित बात इस को कहि दीजिये ताते कहा तुम सत्य के धाम हौ अर्थ यह जो प्रण किया है सो कहणा जो हर कहते होहिं प्रण किया सो अब फिरता नहीं ताते कहा तुम प्रभु हौ मेरा अपराध क्षमाकर प्रणत्याग देवो जौं शिवजी कहे प्रणत्यागने मों क्या सिद्ध है तिस पर कहा तुम दीनदयाल हो मुझे दीन जान कर दया करौ॥ ७॥

जदपि सती पूछा बहु भांती। तदपि न कहेउ त्रिपुरआराती॥ ८॥

सती ने जो बहुत बिनती करके पूछा तौं चाहीताथा नम्र शरणागत पर दया करणी परंतु कुछ न बोले जाते त्रिपुरारि हैं अर्थ यह त्रिपुर कहिये तीन लोक तिस के जो नासक होवै तिन को किसू पर क्या कृपा होनी॥८॥ टिप्पणी—रोशनलाल ने निम्न लिखित अर्थ किया है। त्रिपुर आराती शिव त्रिपुर सुर के शत्रु त्रिपुर आराती का भाव यह कि सती के त्याग से काम और लोभ का जीतना और उन पर क्रोध न करना क्रोध का जीतना।

दोहा—सती हृदय अनुमानकिय, सबु जानेउ सर्बग्य।
कीन्ह कपटु मै संभु सन, नारि सहज जड अग्य॥

तब सती ने विचार किया अनुमान कर कै जिस के सहजही जड मति है ऐसी जो जुबती हौं तिस के सर्व चरित्रों को शंकरजी ने जान्या है जाते सर्वज्ञ हैं॥ अब ग्रंथकार नीति कहते हैं।

सोरठा—जलु पय सरिस बिकाइ, देषहु प्रीति कि रीति भलि।
बिलग होइ रसु जाइ, कपट षटाई परत ही॥ ५७॥

जैसे दूध जल को रूप मै अरु मोल मैं अपने सम कर लेताहै परंतु कांजी परे से अंबु भिन्न हो जाता है तैसेहीं भले लोक प्रीति कर साधारणो पुरषों को अपणे सम कर लेते हैं परंतु तिन मों जब कपट परा तब बिरस हो जाते हैं अब सती के अनुमान अरु संग चलनादिक कथा कहते हैं॥५७॥ टिप्पणी—रौशनलाल ने निम्न लिखित अर्थ किया है। याग्यवल्क भरद्वाज से कहते हैं कि जल दूध में मिल के दूध के भाव बिकता है परंतु खटाई के पड़ने से दूध अलग और पानी अलग हो जाता है सो प्रीति की रीति कैसे भली है और कपट खटाई के पड़तेही रस जाता रहता है॥

हृदय सोचु समुझत निज करनी। चिंता अमित जाइ नहिं बरनी॥१॥

शिवजी ने मेरा त्याग किया है इस बात का रिदें मों सोच है अर्थात् बात अपणे से बिगड़ी हुई है इस कर अति चिंता है जो कही न जाइ जौं कोऊ कहै महेश्वर ने तो कछु नहीं कहा तूं क्यौं चिंतातुर है तिस पर कहते हैं॥ १॥

कृपासिंधु सिव परम अगाधा। प्रगट न कहेउ मोर अपराधा॥ २॥

शंकरजी कृपासिंधु हैं ताते नहीं कहते जो यह अबी बिरलापादिक ना करैं अरु परम गंभीर है ताते भी मुझ क्षुद्रमतिनी का अपराध प्रगट कर नहीं कहते॥२॥ टिप्पणी—अबी = अभी बिरलाप = बिलाप।

संकररुष अवलोकि भवानी। प्रभु मोहि तजेउ हृदय अकुलानी॥३॥

सती ने हर का रूप देखकर जाणेयां मदनारि ने मुझ को त्यागेया है रूप देखण कहिये जो मुख से बात ना कहे अरु उस के आचरणों द्वारे लखिये सो आचरण यह बामभाग मों न बैठाई बैल की पृष्ट पर चढाई सो इस भांति लखीती है तिस पर अप्रसन्न थे ताते सनमुख अरु दाहने ना बैठाई अबला अरु दीन जाण कै पगो भी ना चलाई अरु मारग मों प्रश्नोत्तर भी किए हैं ताते पीठ पीछेहीं चढाई हुई है॥३॥

निज अघ समुझि न कछु कहि जाई। तपै अवा इव उर अधिकाई॥४॥

अपणे मों दोस समुझकर शंकरजी को कछु नहिं कहि सकती आवे की अग्नि सम रिदै मोहीं परितपती है॥ ४॥

सतिहि ससोच जानि वृषकेतू। कही कथा सुंदर सुष हेतू॥ ५॥

अपणी दासी जो सती है तिस को चिंतातुर जाणकर उस के सुख निमित्त कोउ कथा कही॥५॥

बरनत पंथ बिबिध इतिहासा। बिस्वनाथ पहुंचे कैलासा॥ ६॥

जिस में उमा को अपणे अपमान के कारण पूछने का अवसर न होइ ऐसे इतिहास को बरनते हुए विश्वनाथ कैलास पहूंचे विश्वनाथ विशेषण का भाव यह सती को अपणी विश्व मो मानकर उस का मान राखेया॥ ६॥

तहँ पुनि संभु समुझि पन आपन। बैठे बटतर करि कमलासन॥७॥
संकर सहज सरूपु सँभारा। लागि समाधि अषंड अपारा॥८॥

अपणा प्रण समुझेया जो पति व्रियवत संभाषणादिक इस मो नहीं करणा ताते बटतरे पद्मासन कर कै अपणे सहज सरूप कहिये निर्विकल्प स्वरूप विखे वृत्ति दीनी तब दृढ समाध लागी तत्व यह उस संग वारता न करणी पडे॥ ८॥

दोहा—सती बसहि कैलास तब, अधिक सोच मन माँहिँ।
मरमु न कोऊ जान कछु, जुग सम दिवस सिराहिँ॥५८॥

सती महात्मा है इस ते अपणा दुख किसी को नहीं कहती अरु इस मरम का वेत्तागण भी कोऊ नहीं इसी ते भी किसू से बात नहीं करती तिस ते जुगों सम दिन बीतते हैं॥ ५८॥

नित नव सोचु सतीउर भारा। कब जैहौं दुषसागरपारा॥ १॥
मैं जो कीन्ह रघुपतिअपमाना। पुनि पतिबचन मृषा करि जाना॥२॥

श्रीरामचंद्रजी का अपमान यह निर्गुण ब्रह्म नहीं अरु बिष्णु भी नहीं अरु शिवजी ने जो कहा था एह सच्चिदानंद हैं तिन के कहे पर भी प्रतीत ना करी ताते॥ २॥

सो फलु मोहि बिधाता दीन्हा। जो कछु उचित रहा सोइ कीन्हा॥ ३॥

तिस का फल बिधाता ने मुझे यह दिया जो स्वामी ने हृदय से मुझ को त्यागया सो एही योग्य होएगा तौं क्या है परंतु॥ ३॥

अब बिधि अस बूझिअ नहि तोही। संकरबिमुष जिआवसि मोही॥ ४॥

हे विधाता अब तुझ को ऐसी समुझ नहीं आवती जो शिवजी मो बिमुख कर मेरे प्राण राखे है॥४॥

कहिन जाइ कछु हृदय गलानी। मन महुं रामहि सुमिर सयानी॥ ५॥

अपणी अपराध बिचार कर अपणे तन पर गलान करती है ताते कछु कहि नहिं सकती अरु मन में श्रीरामचंद्रजी को सुमरती है जाते सयानी है तत्व यह सयाने लोग रोग का निदान समुझते हैं तैसे इस ने जाणया रघुनाथजी की अवज्ञा कर मैं दुखी भइहौं उन की शरण में ही सुभ होवेगा सोई साभिप्राय विशेषणो कर कहिती हैं॥ ५॥

जो प्रभु दीनदयालु कहावा। आरतिहरन बेद जसु गावा॥ ६॥

तौ मै बिनय करौं कर जोरी। छूटौ बेगि देह यह मोरी ॥ ७ ॥

प्रभों की दीनदयालता मो संसै का वाचक पद जो राखा है सो अति आरत कर है इतर सुगम अब प्रतीवृता भाव केवल पर प्रण करती है ॥ ७ ॥

जौ मोरें सिवचरन सनेहू। मन क्रम बचन सत्य ब्रतु एहू ॥ ८ ॥

दोहा—तौं समदरसी सुनिय प्रभु, करौ सो बेगि उपाइ।
छोइ मरन जेहि बिनहि श्रम, दुसह बिपत्ति बिहाइ ॥ ५६ ॥

जौं मुझ को शिवजी के पदारबिंदों मो सत्य ब्रतरूपी प्रेम है तौं समदरसी प्रभों मेरे धर्म की सहाइता निमित्त सो उपाव शीघ्र करो जैसे निर्दुख मेरा देह छुटै अरु वियोगरूपी कठिन आपदा नासें समदरसी पद का भाव यद्यपि शिवजी तुमारे प्रेम पियारे हैं परंतु तू समदृष्टी हो उन की दासी जानि कै मुझ पर भी कृपा करौ अरु प्रभु हो ताते मेरे इस तन का शीघ्र त्याग करावो॥ ५६ ॥

एहि बिधि दुषित प्रजेसकुमारी। अकथनीय दारुन दुषु भारी ॥ १ ॥

बेटी प्रजापत की अरधंगी शंकर की फेर ऐसा दारुण कहिये भयानक दुख जो भरता ने परित्याग किया अरु भारी कहिये इस जनम में मिटणेवाला नहीं अरु अकथनीय इस कर जो अवज्ञा आप करी है कहे किस कों ॥ १ ॥

बीते संबत सहस सतासी। तजी समाधि संभु अबिनासी ॥ २ ॥
राम नाम सिव सुमिरन लागे। जानेउ सती जगतपति जागे ॥ ३ ॥

जब शंकरजी ने ऊंचे राम नाम सुमरेया तद सती ने जगतपति के समाध का उथान जाणेया जगतपति कथन का भाव यह अंगीकृत नहीं ताते मोर पति नाकहे ॥ ३ ॥

जाइ संभुपद बंदनु कीन्हा। सनमुष संकर आसनु दीन्हा ॥ ४ ॥

सन्मुख आसन माता का है सो सीता की संभावना कर सती को सन्मुख बैठाया ॥ ४ ॥

लगे कहन हरिकथा रसाला। दच्छ प्रजेस भये तेहि काला ॥ ५ ॥

हरि कथा इस निमित्त कहणे लगे जो रोख का कारण न पूछे ता समै दक्ष को प्रजापालकता प्राप्ति भई जातें ॥ ५ ॥

देषा बिधि बिचारि सब लायक। दच्छहि कीन्ह प्रजापतिनायक ॥ ६ ॥

ब्रह्माजी ने विचार कर सर्व बिवहारों के साधन योग्य दक्ष्य को देख्या तब सर्व प्रजापतों का नायक किया वा शिवजी साथ विरोध करना अरु दंड सहणा अरु उस के संबंध कर औरों रिखिश्वरों ने दुखसहणा इत्यादिक बातों के लायक भी देख्या जाते ब्रह्माजी सर्वज्ञ हैं सोई कहते हैं ॥ ६ ॥

बड अधिकार दच्छ जब पावा। अतिअभिमानु हृदय तब आवा ॥ ७ ॥

नहिं कोउ अस जनमा जग माहीं । प्रभुता पाइ जाहि मद नाहीं ॥ ८

प्रभुता पाइ कर मद रहित कोऊ नहीं होता इस कथन में ग्रंथकर्त्ता का आसै यह है दक्ष जैसे को ऐसा मद हुआ तो और का क्या कहणा अरु कईएक महानभाव मद रहित होते हैं ताते दुरलभत में तातपर्य समझणा अथवा अर्थ पद अन्वै करि इस भांति करणा जिस को प्रभुता पाइ कर मद ना प्राप्ति होवै ऐसा जो कोई दुरलभ पुरुष हैं पुनः जनम को प्राप्त नहीं होता ॥ ८ ॥

दोहा—दच्छ लिए मुनि बोलि सब, करन लगे बड जाग ।
नेवते सादर सकल सुर, जे पावत मष भाग ॥ ६० ॥

किन्नर नाग सिद्ध गंधर्बा । बधुन्ह समेत चले सुर सर्बा ॥ १ ॥

किन्नर नागादिक सुर चले युबतियों सहित कथन का आसै यह कैते समाजों मैं नारियां नहीं जातियां अरु यहां जुबतियां है ताते सती को विशेष उतकंठा भई ॥ १ ॥

बिष्णु बिरंचि महेसु बिहाई । चले सकल सुरजान बनाई ॥ २ ॥

विधि हरि हर विना और सभ सुर गण विष्णुजी अरु ब्रह्माजी के न जाणे का अभिप्राय यह जो इस यज्ञ में नंदीश्वर के अपमान कर विघ्न होना है अरु बिहाई पद का अर्थ ऐसे भी है जो देवता लोभ परायण हूवे कर विष्णु महेश बिरंचि को छोड कर चलेगए ताते दंड जोग होहिंगे ॥ २ ॥

सती बिलोके गगन बिमाना । जात चले सुंदर विधि नाना ॥ ३ ॥

टिप्पणी—गगन के स्थान पर व्योम पाठ शुद्ध खास प्रति में लिखा है ।

सुरसुंदरी करहिं कल गाना । सुनत श्रवन छूटहिं मुनिध्याना ॥ ४ ॥

पूछेउ तब सिव कहेउ बषानी । पिताजग्य सुनि कछु हरषानी ॥ ५ ॥

स्वामी का कोप समझ कर तो पूरणसोक था पिता के घर जाणे के संबंध से कुछ प्रसन्नता भई जाते पिता के गृह का सुख स्वामी के गृह सदृस्य नहीं वा यह बात जाणी जो पिनाकी से मेरा पिता विरोध राखता है क्या जाणिये गमन की आज्ञा देवेंगे को नहीं इस कर अल्प हर्ष तब यह बिचार करती हैं ॥५॥

जौं महेसु मोहि आयसु देहीं । कछु दिन जाइ रहौं मिस एहीं ॥ ६ ॥

कछु दिन कथन का आसै यह जो उहां गई को भी मुझे शिवजी ने अंगीकार ना किया तो इस तन को त्यागोंगी परंतु कुछ दिन और भी देखलेवो ॥ ६ ॥

पतिपरित्याग हृदयदुष भारी । कहै न निज अपराध बिचारी ॥ ७ ॥

बोली सती मनोहर बानी । सभयसकोचप्रेम रससानी ॥ ८ ॥

पदों की लावन्यता कर बानी सुंदर भै संकोच अरु प्रेम का स्वरूप दोहे में दिखावते हैं ॥ ८ ॥

दोहा—पिताभवन उत्सव परम, जौ प्रभु आयसु होइ ।
तौ मै जाउं कृपायतन, सादर देषन सोइ ॥ ६१ ॥

मेरे पिता के निकेत मैं परम उत्साह है यह सुनकर महेश कहैं वोही पिता जिस ने तुझे बोलाइ न पठाया ताते संकोच जौं प्रभों की आज्ञा होवे तौं मैं जावो यह बचन भे का है कृपा के मंदिर मैं आदर पूर्वक जावो अर्थ यह तुम मुझे न समानित कर पठावो यह वाक प्रेम मय ॥ ६१ ॥

कहेहु नीक मोरेंहु मन भावा । यह अनुचित नहि नेवत पठावा ॥ १ ॥

बचन तो तैने भला कहा है मेरे मन को भी भाया है परंतु यह अयोगता है उस ने हम को वा तुम को बोलाइ नहीं भेजा । ननु । शिवजी ने प्रथम कहा तेरा वाक हम को प्यारा लागा है पुन: कहा अयोग है ईश्वरों की दाणी मो पूर्वा पर विरोध कैसे होइ । उत्तर । सती का वियोग शिवजी को भावता था ताते प्रथम वाक्य कहा अरु ईश्वर हैं इने रिझकर भी किसी का अनुचित नहीं कारणा ताते उस के हित को बात कही ॥ १ ॥

दच्छ सकल निज सुता बोलाई । हमरें बयर तुम्हहु बिसराई ॥ २ ॥

दख्य उस का नाम है किंवा चतुर का वाचक भी है सो तिस ने चातुरता यह किया हमारे विरोध हेतु तुम को ना बोलाया जो कहे तुम सो उस का क्या बैर है तौं सुन ॥ २ ॥

ब्रह्मसभा हम सन दुष माना । तेहि तें अजहुं करहि अपमाना ॥ ३ ॥

दुखमाना कथन का भाव यह हम ने जान कर उस की अवज्ञा न थी करी उस ने मूढता कर मान लीनी सो उस समै भी दुरवचन बाल्या अरु अबलग भी कुबैन कहिता है तत्व यह मख भी हमारे निरादरार्थ ही किया है ॥ ३ ॥

जौ बिनु बोलें जाहु भवानी । रहै न सीलु सनेहु न कानी ॥ ४ ॥

सील कहिये सुभाव सो तेरा उतम न रहेगा जाते उहां जाइ कर क्रोध करैगो अरु प्रेम तेरा किसू सो न रहेगा कान कहिये मान तेरा भगिनवों में न होइगा जौं सती कहे प्रभों जो दुख तुम ने कहे हैं सो बिन बोलाए और के गृह जाने मों है मे ने पिता के घर जाणा है तिस पर कहते हैं ॥ ४ ॥

जदपि मित्रप्रभुपितुगुरगेहा । जाइअ बिनु बोलेहु न संदेहा ॥ ५ ॥
तदपि बिरोध मानजहँ कोई । तहाँ गये कल्यान न होई ॥ ६ ॥

हे सती यद्यपि मित्रादिकों चारो के गृह बिना बोला ये भी जाणा योग है परंतु तहां का अधिकारी कोऊ बिरोधी न होई अरु तुझ ते तो पिता कीहीं शत्रुता है इत्यादि ॥ ५ ॥

भांति अनेक संभु समुझावा । भावीबस न ग्यानु उर आवा ॥ ७ ॥

तब सती का हठ देखकर ।

कह प्रभु जाहु जो बिनहिं बुलायें। नहिं भलि बात हमारें भायें ॥ ८ ॥

दोहा—कहि देषा हर जतन बहु, रहै न दच्छकुमारि।
दिए मुष्य गन संग तब, बिदा कीन्ह त्रिपुरारि ॥ ६२ ॥

महेश्वर कै बहुत कहेहूं ना रही जाते दछ्य की बेटी है अर्थ यह पिता की वत क्रूर सुभाव है तब श्रेष्ट गण संग देकै शंभु ने बिदा कीनी। ननु। जौ शंभु का कोप था कोऊ सामानगण क्यौं न साथ कर दिए। उत्तर। रिदें से यद्यपि कोप था तौं भी लोको में उस का मान राखणे निमित्त मुख्यगन शंकर दिये वा यह बात जाणी उहां युद्धादिक कृया होणी है ऐसा न होई हमारे गण सभी उहां मारे जावैं इस कर मुख्य गन संग दिये जाते त्रिपुरारि हैं अर्थ यह युद्ध कृया कै भली भांत ग्याता हैं ॥ ६२ ॥

पिताभवन जब गईं भवानी। दच्छत्रास काहु न सनमानी ॥ १ ॥
सादर भलेहि मिली एक माता। भगिनी मिली बहुत मुसुकाता ॥ २ ॥

सती को प्रीति संयुक्त एक माता मिली जाते माता को बेटी प्यारी होती है अथवा माता स्वयंभूमनु अरु सतरूपा की बेटी है ताते सुसीला है अरु ईश्वरों विषे भक्ति है ताते भी सती सो सनेह किया अरु भगिनयां आपणयों स्वामिवों संयुक्त आदर पूर्बक आईआंथीआं सती को अकेली अरु बिनु बोलाई आई जानकर मूढता कर हांस करतियां भया ॥ २ ॥

दच्छ न कछु पूछी कुसलाता। सतिहि बिलोकि जरे सब गाता ॥ ३ ॥

इहां गात पद से अंग समुझने सती को देखकर दछ्य कै सकल अंगदग्धवत भए किंवा सती को देखकर औरों दुष्टों के गात कहिये तन जरे तब सती ने बिचार्या मेरा तो इनो ने अपमान किया है परंतु जो महादेव का सनमान किया होइ तौं भी कुशल है तिस हेतु ॥ ३ ॥

सती जाय देषेउ तब जागा। कतहु न दीष संभु कर भागा ॥ ४ ॥
तब चित चढेउ जो संकर कहेऊ। प्रभुअपमानु समुझि उर दहेऊ ॥ ५ ॥

तब चित मों वह वाक्य चढ्यो कहिये दृढ भया जो बृत्तांत शंकरजी ने कहा था जो तेरे पिता ने यज्ञ हमारे अपमान निमित्त ही किया है तब उस बचन को सत्य मान कर सती का रिदां जलेआ ॥ ५ ॥

पाछिल दुषु न हृदय अस ब्यापा। जस यह भएउ महापरितापा ॥ ६ ॥

पाछिल दुख कहिये अपणा अपमान पिता से हुआ था तिस का दुख ऐसा न था भया जैसा यह शिवजी का यज्ञ भाग मों निरादर देख कै महासंताप हुआ जाते पतिब्रता हैं अथवा कपर्दी ने जो सती का त्याग किया था तिस कर ऐसी दुखित न थी भई रिदैं मों यह धीरज था पिता के गृह मों जाइ रहोगी सो अब महापरिताप भया जो दोनों अस्थान गए अब नीति कहती है ॥ ६ ॥

जद्यपि जग दारुन दुष नाना। सब तें कठिन जातिअपमाना ॥ ७ ॥

समुझि सो सतिहि भएउ अतिक्रोधा । बहु विधि जननी कीन्ह प्रबोधा ॥८॥

सती को क्रोध देखकर माता ने बहुत समुझाया जो पिता पर कोप करना योग्य नहीं परंतु ॥ ८ ॥

दोहा—सिवअपमानु न जाइ सहि, हृदय न होइ प्रबोध ।
सकल सभहि हठि हटकि तव, बोलीं बचन सक्रोध ॥ ६३ ॥

शिव का अपमान देखकर माता के उपदेस का रिदै को बोध न भया तब सभा के लोक जो उहां शिवजी की निंदा पड़े करते थे तिन को झिझकार कर मौन करावती हुई सकोप वचन बोली ॥ ६३ ॥

सुनहु सभासद सकल मुनिंदा । कही सुनी जिन्ह संकरनिंदा ॥ १ ॥
सो फलु तुरत लहब सब काहू । भली भांति पछिताब पिताहू ॥ २ ॥

हे सभासदो अरु मुनिंदो जिनो ने शंकरजी का निंदा कही है अरु सुनी है तिस के फल को शीघ्र पावोगे अरु हे तात तूं भी बहुत पछतावैगा। ननु । निंदकों कों सभासद अरु मुनिदां उतकर्ष के वाक किस निमित्त कहे । उत्तर । उतकृष्ट बचन नहीं कहे जाते इन का अर्थ निषेध परक्ष मों भी बणता है सभा विषे जो असट होवे सो कहिए सभासद मुनो रिषि जो निंदत होवे सो कहिये मुनिंदा जो वह कहे शिव के निंदणे कर हम को निषेधती है तों तू पिता की निंदा क्यों करती है तिस निमित्त नीति कहती हैं ॥२॥

संतसंभुश्रीपतिअपबादा । सुनिअ जहां तहँ असि मरजादा ॥३॥
काटिअ तासु जीभ जो बसाई । श्रवन मूंदि न त चलिअ पराई ॥ ४ ॥

जो वह कहे महादेव सो हमारा विरोध है तब हम निंदते हैं तिस पर कहती हैं ॥ ४ ॥

जगदातमा महेस पुरारी । जगतजनक सब के हितकारी ॥ ५ ॥

शंकरजी सब के आत्मा हैं तों उन से विरोध कैसे बने अरु साधारण देवत्यो की निंदा का बडा दोस है वह तो महेश्वर हैं जों तूं बल का गर्व करे तों त्रिपुर के घातक हैं तिन के आगे तूं क्या तुच्छ है अरु सर्व जगत के जनक है ताते पुत्रों को पिता की निंदा करणी अयोग्य है तिस पर भी सर्व के हितूं हैं भक्ति वैरागादिक कृया लोकों के कल्याण निमित्त गावते हैं ॥ ५ ॥

पिता मंदमति निंदत तेही । दच्छसुक्रसंभव यह देही ॥ ६ ॥

हे मंदमति पिता तूं तिनों ईश्वरों की निंदा करता है ताते तेरे रेत से उपजी हुई मेरी देह भी महाअपवित्र हैं ॥ ६ ॥

तजिहौं तुरत देह तेहि हेतू । उरधरि चंद्रमौलि बृषकेतू ॥ ७ ॥

तेरा संबंध त्यागणे निमित्त चन्द्रमौलि अरु वृषकेतु का ध्यान धार कर तनु त्यागोंगी तत्व यह परम सुंदर अरु परम धर्मात्मा जो महादेव हैं जन्मातरों में तिन को प्राप्ति होवेगी कई लोग इहां चंद्रमौल अरु वृषकेतु विशेषणो का अभिप्राय आत्मघातादिक दोष मिटावणे मों लगावते हैं सो शंका किसू ने ना

करणो जाते जोग अग्नि मों तन त्यागेया है सोई कहते हैं ॥७॥ टिप्पणी—रोशनलाल ने निम्नलिखित अर्थ किया है। पिता मति मंद तिन की निंदा करता है और दक्ष के बीज से उत्पन्न यह देह है सो हम उसी हेतु से चंद्रमौलि अर्थात् जो माथे में अमृत सहित चंद्रमा बैठे हैं और बृषकेतु अर्थात् जो धर्म की पताका हैं उन को हृदय में धारण करके शरीर को छोड़ देंगी चंद्रमौलि कहने का हेतु यह कि हमें फिर जिला लेंगे बृषकेतु कहने का हेतु यह कि हमारे अपराध का क्षमा करेंगे ॥ ७ ॥

अस कहि जोगअगिन तनु जारा । भएउ सकलमष हाहाकारा ॥ ८ ॥

सभों ने हाहाकार इस निमित्त किया दिख्यत भूप को कन्या त्रिपुरारि की अरधंगी अरु सभों से विसकार पाइकर जली इस कर इस का फल अति मंद होइगा ॥ ८ ॥

दोहा—सतीमरनु सुनि संभुगन, लगे करन मष षीस ।
जग्यविधंस बिलोकि भृगु, रच्छा कीन्ह मुनीस ॥ ६४ ॥

मख खीस कहिए जज्ञ का नाम अपर स्पष्ट भृगु मुनीश्वरों ने होमकुंड सो देवता उपजाय तिनो ने रुद्रगण भगाए अरु मखराखा ॥ ६४ ॥

समाचार संकर जब पाए । बीरभद्र करि कोपु पठाए ॥ १ ॥
मखबिधंस जाइ तिन्ह कीन्हा । सकल सुरन्ह बिधिवत फलु दीन्हा ॥ २ ॥

भृगु ने दाढी हलाइ कर निंदा करी थी तिस की दाढी उखार डारी पूषा दांत निकास कर हस्या था तिस के दसन तोरे भगदेवता आखों की सैन कर निंदा करावता था तिस के नैन निकासे इसी भांति सुरों को यथा योग दंड किया ॥ २ ॥

भै जगबिदित दच्छगति सोई । जसि कछु संभुबिमुष कै होई ॥ ३ ॥

दख्य को ईश्वरों का महा बिरोधी जानि के ताकी यह दुरदसा करी जा शस्त्र न मास्या मर्या जानुवों सो ताके अंग तोरे अरु मुंड ताका सरीर से भिन्न कर दिया ॥ ३ ॥

यह इतिहास सकल जग जानी । ताते मैं संच्छेप बषानी ॥ ४ ॥

यह प्रसंग भागवत मों विस्तार कर कहा है ताते मैं ने नहीं विस्तास्या ॥ ४ ॥

सती मरत हरि सन बरु मागा । जन्म जन्म सिवपद अनुरागा ॥ ५ ॥

अंतकाल मों सती ने रघुनाथजी से यह वर मांग्या जो तुमारी अवज्ञा करण कर मेरा शंकर जू सों बियोग भया है परंतु यह कृपा करो जहां मेरा जन्म होइ तहां शंभु के चरणारविंदों की दासी होवों ॥५॥

तेहि कारन हिमगिरिगृह जाई । जनमी पारबती तनु पाई ॥ ६ ॥

तिस प्रश्नों के ध्यावणा अरु अंतकाल संकल्प के बल कर हिंमाचल के गृह जनमी हिमवान शंकर का सेवक है अरु तिस की कैलास सो समीपता है किंवा दख्य मेरा पिता तुच्छ मतीथा जाते शंकरजी का

विरोधी भया था तौ उस के संबंध कर मेरो बुद्धि भो भ्रमी थी ताते गिरि कों गौरवतावान जान कर तिस पर भी हिमाचल को अति सीतल रूप समुझ के तिस के गृह जनम लिया जो मैं भी उत्तम गुनवंतो होवौं ॥ ६ ॥ टिप्पणी—रौशनलाल ने निम्नलिखित अर्थ लिखा है । तेहि कारण कहने का आशय यह योगाग्नि में जो जलता है सो नहीं जन्म पाता सती ने वर मांगा था इस से जन्म पाया और एक आशय यह कि योगाग्नि की जली है शीतलता को प्राप्त होने के निमित्त हिमगिरि की पुत्री भई ।

जब तें उमा सैलगृह जाई । सकल सिद्धि संपति तहँ छाई ॥ ७ ॥
जहँ तहँ मुनिन्ह सुआश्रम कीन्हे । उचित बास हिमभूधर दीन्हे ॥ ८ ॥

योगी बैरागी आदिक जैसे जैसे मुनीश्वर थे तिन के लाइक स्थान हिमाचल ने दिए ॥ ८ ॥

दोहा—सदा सुमन फल सहित सब, द्रुम नव नाना जाति ।
प्रगटीं सुंदर सैल पर, मनिआकर बहु भाति ॥ ६५ ॥

नाना जाति के जो अनेक नवीन पादिप हैं सो सदा फूलों फलों सहित रहते हैं अरु गिरि शिखरों पर मणिआंकी यां खाणा प्रगट भया है ॥ ६५ ॥ टिप्पणी—पादिप = पेड़ ।

सरिता सब पुनीत जलु बहहीं । खग मृग मधुप सुखी सब रहहीं ॥ १ ॥
सहज बयरु सब जीवन त्यागा । गिरि पर सकल करहि अनुरागा ॥ २ ॥

सकल नदिआं के पवित्र जल कहिये इहां सुंदर नीर चलते हैं अरु खग मृग सभ सुखी हैं जाते उमा के प्रभाव कर सर्पों मोरों आदिकों ने बैर त्याग दिए ॥ २ ॥

सोह सैल गिरिजा गृह आए । जिमि जनु रामभगति के पाए ॥ ३ ॥
नित नूतन मंगल गृह तासू । ब्रह्मादिक गावहि जसु जासू ॥ ४ ॥

जिस देवी का जस ब्रह्मादिक गावते हैं सो हिमवान के गृह मों प्रगटी है ताते नितनवीन मंगल होते हैं ॥ ४ ॥

नारद समाचार सब पाए । कौतुकहीं गिरिगेह सिधाए ॥ ५ ॥

देवरिषी ने गिरि की रम्यता का सभ प्रसंग सुना तब कोतुक कहिये सुभाविकही हिमाचल सो गए जाते इन को तुषार में जाणे का कुछ यतन नहीं ॥ ५ ॥

सैलराज बड आदर कीन्हा । पद पखारि बर आसनु दीन्हा ॥ ६ ॥
नारि सहित मुनिपद सिरु नावा । चरनसलिल सबु भवनु सिचावा ॥ ७ ॥
निज सौभाग्य बहुत गिरि बरना । सुता बोलि मेली मुनिचरना ॥ ८ ॥

दोहा—त्रिकालग्य सर्बग्य तुम्ह, गति सर्बत्र तुम्हारि ।
कहहु सुता के दोष गुन, मुनिबर हृदय बिचारि ॥ ६६ ॥

त्रिकालज्ञ अरु सरवज्ञ है संबोधन इस हेतु है त्रिकालज्ञता अपणी तीनो अवस्था के ज्ञान का भी नाम है अरु सर्वज्ञता सर्व जगत की गति जाणने का हीं नाम हैं वा त्रिकाल ज्ञान अल्पकाल की ज्ञाता का भी नाम है जो एक द जनम की बातें जानै अरु सर्वज्ञता सृष्टि के आदि अंत जानणे का नाम है किंवा तुम को त्रिकालज्ञता कहिये जगत के बिवहारों का ज्ञान है अरु सर्व रूप कहिये ब्रह्म तिस के भी ज्ञाता हो अरु सर्व स्थानों में तुमारो गति कहिये प्राप्ति है ताते जहां कोऊ गुणवान होइगा सो तुम ने देखा होइगा किंवा सर्व शास्त्रों में तुमारी गति है ताते सामुद्रिक अनुसार इस के लछण विचारि अरु जहां इस के योग पति होइ सो समुझ कै कहो ॥ ६६ ॥

कह मुनि बिहँसि गूढ मृदु बानी । सुता तुम्हारि सकल गुनखानी ॥ १ ॥

मुनीश्वर ने मुसुकाइ कै मृदुबानी से गूढ अभिप्राय के बचन कहे जो इस का पति सदा अचल होइगा इत्यादिक वा इस चरन के पदों का अन्वैकर अर्थ करणा गूढ बिहंसि मुनि कही मृदुबानी परम सुंदरी गुणनिधि कुमारी को देखकर मुनीश्वर को प्रगट हंसणा योग्य नहीं ताते रिदे मों आनंद हो कर मृदुबानी कही वा गूढ मुनि बिहंसि कही मृदुबानी गूढ कहिये पूर्व जनम उमा की क्रिया सो समुझ कर मुनीश्वर हंसिआ हास का भाव यह मुनीश्वर ने जाणया प्रयोजन क्या वस्तु है संतो को मिल कर पूछा चाहिये आतमा का निरणै सो बात हीं रही इनो एही पूछा है हमारी सुता के गुण दोष कहा किंच जैसे किसू गई हुई वस्तु कों कोई ज्ञाता देखता है तों प्रसन्न होता है तैसे नारदजी ने पछाणो यह सती है दछ्य के सख सो तन त्यागकर इहां उपजो है किंवा जैसे किसी को कोऊ पदार्थ दिखावै अरु वह रतन महा अमोलक होइ तों वह महामती तिस कों देखता ही प्रसन्न होई जाता है तैसे हिमवंत उमा के गुणों से अज्ञात था ताते गुण दोष बिचारण हेतु कुमारी दिखाई थी अरु इनो ने तिस मों अनेक गुण हीं देखे ताते प्रसन्नता पूर्वक हंसे अरु कहते भए तुमारो बेटी तो सर्व गुणों की निधि है और ॥ १ ॥ टिप्पणी—रोशनलाल ने निम्नलिखित अर्थ लिखा है । मुनि ने हंसि के गूढ़ और मृदु अर्थात कोमल बानी कही हंसि के कहने में व्यंग है अर्थात् एक अर्थ यह कि मुनि पूछते हैं जो सकल गुण खानि है अर्थात् रजोगुण तमोगुण सतोगुण जिस से ब्रह्मा विष्णु शिव की उत्पत्ति है सो तुम्हारी पुत्री है यही गूढ़ बानी है और हंसने का कारण भी यही है और दूसरा अर्थ यह कि तुम्हारी सुता उन सब गुणों से जो स्त्रियों को चाहिये भरी है इन दोनों अर्थों से गूढ़ और मृदुबानी दोनों सिद्ध होती हैं ।

सुंदर सहज सुसील सयानी । नाम उमा अंबिका भवानी ॥ २ ॥

सहज सुंदर कहिये जिस को रुचिरता सिंगारों लग नहीं अरु उत्तम जिस का सुभाव है बिवहार परमारथ सो सियानी है उमा अंबिका भवानी आदिक जिस के अनेक नाम हैं ॥ २ ॥

सबलच्छनसंपन्न कुमारी । होइहि संतत पिअहि पिआरी ॥ ३ ॥

सदा अचल एहि कर अहिवाता । इहि तें जसु पैहहि पितु माता ॥ ४ ॥

अहिवात कहिये पति इतर सुगम ॥ ४ ॥

होइहि पूज्य सकल जग माहीं । एहि सेवत कछु दुर्लभ नाहीं ॥ ५ ॥

एहि के सेवने ते पुरुष सकल जगत में पूज्य होवैंगे यह बात कछु दुर्लभ नहीं अथवा पूज्य भी होवैंगे अरु और भी कुछ वस्तु तिन को दुष्प्राप्य न होवैंगी ॥ ५ ॥ टिप्पणी—दुर्हुं = दुः ।

एहिकर नामु सुमिरि संसारा । त्रिय चढ़िहहि पतिव्रत असिधारा ॥६॥

इस के नाम जपन के प्रभाव कर युवतियां पतिव्रत रूपी खडग धार पर चढ़ैंगीआं तात्व यह पतिव्रत धर्म तिन को सुगम प्राप्ति होएगा ॥ ६ ॥

सैल सुलच्छन सुता तुम्हारी । सुनहु जे अब अवगुन दुइ चारी ॥ ७॥

ननु । प्रथम कहा सुता तुमारी सकल गुणनिधि है पुनः कहा तिस के दुइ चार अवगुण सुना इस का भाव क्या । उत्तर । इहां भी प्रथमवाक को ही पुष्ट किया है जाते उहां सकल गुण उमा के सरीर मैं कहे इहां अगुण भरता क देह मो कहे । ननु । स्वामी के दोष संबंध कर भी योषता दूषितहोती है तिस कर भी उमा मो दोष बना अरु नारदजी को शंकर जी मों दोष कहणे कब बनते हैं । दोनों का उत्तर दोष नहीं कहे पूरब कहिआए हैं मुनीश्वर गूढ बचन बोले सो गूढ बचन यह लोगों को निंदा भासे अरु इनो ने गुण वर्णन किए हैं सो निंदा पत्थ्य के अर्थ विषे है सो इस का रख्यक कहिये स्वामी अब तिस क गुण दुइचार कहिये अल्प सो सुना तातपर्य यह उस के सभ गुण मेरे से कहे नहीं जाते ॥ ७ ॥

अगुन अमान मातुपितुहीना । उदासीन सबसंसयछीना ॥ ८ ॥

अगुण कहिये गुणातीत अमान कहिये निरहंकार मात पितु हीन याते जो सर्व के जनक हैं तौं उस का माय बाप कौन होवे । उदासीनता से उदारता अरु निरलेपता सिद्ध होती है वा उतआसीन पद का उदासीन पद बणता है अर्थ यह जो सर्व से उदकृष्ट इस्थित होवे सो कहिये उदासीन संसय छीन कहिये बिवहार परमार्थ सो निसंदेह ॥ ८ ॥

दोहा—जोगी जटिल अकाम मन, नगन अमंगलभेष ।
अस स्वामी इहि कह मिलिहि, परी हस्त असि रेष ॥ ६७ ॥

युज समाधो धातु है तिस का जो पद सिद्ध होता है सो जोगी कहिये ध्यान पर जटिल कहिये सुंदर है जटा जिसकियां अर्थ यह तपो स्वरूप मे सामर्थ क्रिया जट संघाते हैं संघात कहिये समुदाइ लिंग ले के अर्थ विषे है जगतों के समुदायो को जो ले करै सो जटिल अकाम मन कहिए निर्वास मन नगन कहिये दिगंबर प्रयोजन यह ऐसे महताकार हैं जिन के दसोदिसा बस्त्र है वा नग आदरसने हैं तिस का नग प्रयोग बणता है तिस का अर्थ नासवान सिद्ध होता है आगे नकार निषेध अर्थ विषे है ताते नगन पद का अर्थ अबिनासी सिद्ध भया अकार विष्णु का वाचक है तिस को जो मंगल करै सो कहिये अमंगल वेष अथवा विष्णु रूप भी हैं जाते त्रिमूर्त्ति अभेद हैं अरु मंगल रूप भी हैं ऐसा स्वामी इस को मिलैगा इस हस्त के रेखा अनुसार । अब निषेध पद के अर्थानुसार प्रसंग कहते हैं ॥६७॥ टिप्पणी—रौशनलाल ने निम्न लिखित अर्थ लिखा है । योगी कहिये अपने रूप को निरंतर जोग में मिलाय करनेवाले जटिल

कहिये अनादि काली बढ़ी है जटा जिन की और कामना रहित है मन जिन का और नगम अर्थात् नहीं है गन समूहता जिन के निकट अर्थात् अकेले रहनेवाले अमंगल अर्थात् अतिशय है मंगल वेष जिन का यहां अखिल लोक व्यापक जो मंगल सोई रूप बना लिया है अकार का अतिशय अर्थ किष्किंधाकाण्ड में स्पष्ट है। चौपाई। बूंद अघात सहत गिरि कैसे। खल के बचन संत सह जैसे॥ यहां अघात का अतिशय घात करना प्रयोजन है क्योंकि खल बचन में चोट का संग है जो श्रीशंकर के निकट वर्णन किया सोई ब्रह्मरूप है। आगे रसिकजन जानें। अस स्वामी इहि कहं मिलिहिं इस के कहने से उमा की प्रधानता है क्योंकि कहते हैं कि स्वामी आय के मिलेगा। हस्तरेखाविचार सामुद्रिक के विषय मुनि प्रवीण हैं।

सुनि मुनिगिरा सत्य जिय जानी। दुखु दंपतिहि उमा हरषानी॥ १॥
नारद हूं यह भेद न जाना। दसा एक समुझब बिलगाना॥ २॥

मुनीश्वर के बाणी रिदें मो सत्य मानकर दंपति तो अप्रसन्न भए जो वर विरूप सुना अरु उमा को इस तें हरष भया जो मेरा वर था सोई नारदजी ने कहा है अरु नारद ने इन के हरष सोक का भेद न जाण्या एक दसा कहिये उमा के बर के लक्षण की वोरहीं ध्यान रहा किंवा गिरिजा के आनंदमय कारण यह नारद ने भी यह भेद न जान्या जो इस का स्वामी शिव है एक दसा कहिये दोषों की वोरही दृष्टि कर कर भिन्न होइगए हैं जाते जान्या होता तौ शंकरजी का नाम सुनाइ कर मेरे माता पिता का दुख क्यों नहीं खोवता नारद की अज्ञात से प्रसन्नता का तत्व यह अपणा प्रयोजन निरणे हुवा अरु बात भी किसी ने नाहीं लखी सोई कहते हैं॥ २॥

सकल सखी गिरिजा गिरि मैना। पुलक सरीर भरे जल नैना॥ ३॥
होइ न मृषा देवरिषि भाषा। उमा सो बचनु हृदय धरि राखा॥ ४॥
उपजेउ सिवपदकमल सनेहू। मिलन कठिन मन भा संदेहू॥ ५॥

शंकरजी के पदारबिन्दों मो उमा का प्रेम तो बडा उपज्या परंतु ईश्वरों का मिलणा कठिन जाण के मन संदिग्ध भया जो क्या जाणिये कब मिलाप होवैगा॥ ५॥

जानि कुअवसरु प्रीति दुराई। सखि उछंग बैठि पुनि जाई॥ ६॥

कुअवसर कथन का तत्व यह अबी पिता माता अरु मुनि का वृत्तान्त समझिए तिस के उपरांत जो करतव्य होइगा सो करांगी किंवा कुऔसर कहिये कन्या भाव का लज्या सो प्रीति को दुराइ कर सखी की उछंग कहिये गोद मों जाइ बैठी जो अब मेरा प्रगट बोलना उचित नहीं॥ ६॥

झूठि न होइ देवरिषिबानी। सोचहि दंपति सखी सयानी॥ ७॥

नारद ने कहा है इस का वरविकराल अरु उस की गिरा अन्यथा नहिं होती ताते राजा रानी अरु सखियां सभ चिंतातुर हैं तदनंतर॥ ७॥

उर धरि धीर कहै गिरिराऊ। कहहु नाथ का करिय उपाऊ॥ ८॥

हिमांचल ने धीरज कीना याते गिरिराउ है अर्थ यह अद्र सुभाव कही धैरजो हैं तिस कर भी गङ्गा मों गुण विशेष चाहिये ताते नारदजी को पूछा इस के श्रेष्ट पति प्राप्त निमित्त कोऊ उपाव भी है॥ ८॥

दोहा—कह मुनीस हिमवंत सुनु, जो बिधि लिषा लिलार।
देव दनुज नर नाग मुनि, कोउ न मेटनिहार॥ ६८॥

तदपि एक मैं कहौं उपाई। होइ करै जौ दैउ सहाई॥ १॥

यद्यपि लेख मेटण को समर्थ कोऊ नहीं तथापि एक उपाउ मैं कहताहौं जौं मेत अनुसार हुआ तौं सुफल होइगा॥ १॥

जस बरु मै बरनेंउ तुम्ह पाहीं। मिलिहि उमहि तस संसय नाहीं॥२॥
जे जे बर के दोष बषाने। ते सब सिव पहि मैं अनुमाने॥ ३॥

बर के तन में मैं ने जौन से दोख कहे हैं सो मैं बिचार कर देखे हैं शंभु में सभी हैं जौं कोउ कहै दोख किसू मैं होहिं सो त्याज्य होता है तिस पर कहते हैं।। ३॥

जौ बिबाहु संकर सन होई। दोषौ गुन सम कह सबु कोई॥ ४॥

ईश्वर में जो दोष भासे तौ भी गुणों सम होते हैं इस बात को दृष्टांत कर सिद्ध करते हैं॥ ४॥

जौ अहिसेज सयन हरि करहीं। बुध कछु तिन्ह कर दोषु न धरहीं॥ ५॥
भानु कृसानु सर्ब रस षाहीं। तिन्ह कह मंद कहत कोउ नाहीं॥६॥
सुभ अरु असुभ सलिल सब बहही। सुरसरि कोउ अपुनीत न कहही॥ ७॥
समरथ कहु नहि दोषु गोसाईं। रवि पावक सुरसरि की नाईं॥ ८॥

गुसांई संबोधन अथवा गुसांई विशेषण विष्णुजी का जाते पीछे दृष्टांत मैं चार कहे हैं अरु आगे रविपावकादिक तीन कहे हैं॥ ८॥

दोहा—जौ अस हिसिषा करहिँ नर, जडबिबेक अभिमान।
परहिँ कलप भरि नरक महु, जीव कि ईस समान॥ ६९॥

जौं मलीन मती नर विवेक के अभिमानी बन कर ईश्वरों को हसिषा कहिये हांसी करते हैं जो वास्तव जीव ईश्वर एक ब्रह्म तौं तुम ईश्वरो की कृपा मो निर्लेप मानेगे तौ हम को भी कृया का लेप नहीं सो नर कल्प प्रजंत नर्क मों पड़ैंगे जाते जीव से ईश्वर की समता कब होती है मुनि गजाआकास को कीटांगाई रोस अब इसी को दृष्टांत कर कहते हैं॥ ६९॥ टिप्पणी—हसिखा के स्थान हिसिखा और इरषा पाठ भी कई पुस्तकों में लिखा है। हिसिषा का अर्थ बराबरी है।

सुरसरिजलकृत बारुनि जाना। कबहु न संत करहिं तेहि पाना॥ १॥
सुरसरि मिलें सो पावन जैसे। ईस अनीसहि अंतरु तैसे॥ २॥

जैसे गंगा जी के अल्प जल साथ संबंध कृत जो मदरा है सो उत्तमो के पानकरणे योग नहीं होता अर्थ यह गंगा का अल्प जल मदिरा के साथ मिलेया अपवित्र होजाता है अरु जो सुरा के अनेक घट सुरसरी के बडे प्रवाह में परै तब पवित्र होजाते हैं तिसी प्रकार अल्पज्ञ जो जीव हैं सो एक पाप से भी पापी होजाता है अरु सर्वज्ञ जो ईश्वर हैं तिस मों अनेक अनुचित कर्म होहिं तो भी मलीन नहीं कर सकते हाथ से आप पवित्र होते हैं जैसे अनेक गोपीआं पर नारिआं श्रीकृष्णदेव को कलंकी ना कर सकियां उन के संग कर आप कृतारथ होइआं अरु कई एक अर्थ इस भांति करते हैं जानवी के जलकर बणेयां मद अपावन है अरु मद के अनेक घट भागीरथी मों मिल कर पावन होते हैं तैसे अविद्या संग मिल कर जीव मलीन भया है अरु ईश्वर मों अभेद हूं कर शुद्ध होता है सो इस मो द्वै दोष आवते हैं एक तो जीव की अभेदता ब्रह्म सों है ईश्वर सो नहीं दुतीय मूल मै लिखा है जीव ईश्वर का भेद इस भांति है अरु अर्थ में जीव की पावनता अपावनता कहि ईश्वर की अवस्था कछु भी कथन में न आई ताते असंगत होती है तैसे ही॥ २॥

संभु सहज समरथ भगवाना। एहि बिबाह सब बिधि कल्याना॥ ३॥

शंकरजी सहज समरथ हैं अर्थ यह तिनो सो कृतम सामर्थ नहीं अरु भगवान कहिये सर्वगुण संपन्न है तिन सो बिवाह सर्व भांति कल्यान करता है जो वह पूछे तिन की प्राप्ति कैसे होइ तौ प्राप्ति निमित्त कठिनता अरु सुगमता कहते हैं॥ ३॥

दुराराध्य पै अहहिं महेसू। आसुतोष पुनि किए कलेसू॥ ४॥

शिवजी का आराधना जद्यपि कठिन है तथापि मन इंद्री का जीत कर तप किए से आसुतोष कहिये शीघ्र भी प्रसन्न होते हैं जौ हिमांचल कहे तुम ने तौं कन्या के चीन्हो अनुसार बर के लछ्यण कहे हैं सो अपनी बुद्धि कर अरु हमारा हित विचार कर उनो लखणों कौं शंकर के रूप में घटाया है परंतु क्या जाणिये इस के भाग में इनो लछ्यणोंवाली कौनसी व्यक्त प्रगटी है तिस पर कहते हैं॥ ४॥

जौ तपु करै कुमारि तुम्हारी। भाविउ मेटि सकहिं त्रिपुरारी॥ ५॥

जो तुमारी कन्या तप कर उन को रिझावै तौं शिवजी अनहोणी को भी होणी कर सकते हैं अब निरसंदेह करने हैं॥ ५॥

जद्यपि बर अनेक जग माहीं। एहि कहँ सिव तजि दूसर नाहीं॥ ६॥

सो कैसे हैं शिवजी॥ ६॥

बरदायक प्रनतारतिभंजन। कृपासिंधु सेवकमनरंजन॥ ७॥

हरजी सर्व के बरदाता हैं सरनागत के दुखनाशक हैं कृपानिधि हैं दासों को हरष करता हैं॥ ७॥

छित फल बिनु सिव अवराधे । लहिअ न कोटि जोग जप साधे ॥ ८ ॥

दोहा—अस कहि नारद सुमिर हरि, गिरिजहि दीन्हि असीस ।
होइहि यह कल्यान अब, संसय तजहु गिरीस ॥ ७० ॥

हरि को सिमिर कर आसिर्बाद देणे का भाव यह जिस कारज माँ भगवत का सिमरण करिये सो सफल होता है जौं हर पद अंकृत होवै तो शंभु के आगे बेनती करी जो मेरे कहे को तुम ने सोभा देणी अरु हिमवंत को कहा तुम निरसंदेह होवो अब इस का सुभ होवेगा ॥ ७० ॥

कहि अस ब्रह्मभवन मुनि गएऊ । आगिल चरित सुनहु जस भएऊ ॥ १ ॥

जाज्ञवल्क जी भरद्वाज प्रति कहते हैं हे मुनीश्वर ऐसे कहि के देवरिषि ब्रह्मलोक में गए तदनंतर यह चरित्र भया ॥ १ ॥

पतिहि एकांत पाइ कह मैना । नाथ न मै समुझे मुनिबैना ॥ २ ॥

पति समीप एकांत बैठि के मैना रानी कहती भई हे कंत मैंने मुनीश्वर की गिरा नहीं समझी तत्व यह समुझ में तो वारता आई थी परंतु मन मैं न थी आई अब पति का आसा समुझण निमित्त पूछती हैं जो इस को आई है की नहीं जौं हिमवंत कहैं रेखाअनुसार देवरिषि गिरजा के बर का स्वरूप बताइ गया है तिस पर कहती हैं ॥ २ ॥

जौं घरु बरु कुलु होइ अनूपा । करिअ बिबाहु सुताअनुरूपा ॥ ३ ॥

जौं घर अरु कुल अनूप होइ अर्थ यह हमारे सदृस के विशेष होइ अरु वर भी कन्या के अनुरूप होइ अर्थ यह सुंदर होइ तौं बिवाह करिये किंवा घर वर कुल अनूपम होइ तौं भी सुता अनुरूप करिये अर्थ यह बडे द्रव्यादिक लगाइए ॥ ६ ॥ टिप्पणी—"दोहा—रूपहिं दंपति मातु धन, पिता नाम बिख्यात। उत्तम कुल बांधव चहैं, भोजन लोग बरात" ॥१॥ मुनशी रौशनलाल ने निम्न लिखित अर्थ लिखा है। कन्यादान में पहले कुल का विचार पिता की इच्छानुकूल फिर घर का विचार माता की इच्छानुकूल वर का बिचार कन्या की इच्छानुकूल होता है इस के विपरीत यहां मैना का कहना अपनी इच्छानुकूल है इसी से प्रथम घर का बर्णन किया ।

न त कन्या बरु रहउ कुआरी । कंत उमा मम प्रानपिआरी ॥ ४ ॥

जौ यथोचित संजोग ना बनै तौं कन्याकुमारी रहै जाते मुझ को प्रानो से प्यारी है तत्व यह कुरूप भर्त्ता को ना देणी अरु ॥ ४ ॥

जौ न मिलिहि बरु गिरिजहि जोगू । गिरि जड सहज कहिहि सबु लोगू ॥ ५ ॥

जौं कुरूप भर्त्ता सो हम ने सुता का बिवाह कर दिया तौं कन्या दुखित होयगी अरु लोगों मो हमारी मूढता भी प्रगट होएगी ताते ॥ ५ ॥

सोइ बिचारि पति करेहु बिबाहू । जेहि न बहोरि होइ उर दाहू ॥ ६ ॥

अस कहि परी चरन धरि सीसा। बोले सहित सनेह गिरीसा॥ ७॥

पगों पर सीस धरन का भाव यह है स्वामी तुम भी प्रण करो जो कुरूप पति सो उमा का बिवाह ना करना यह दसा देखि कै तिस को सनमान पूर्वक हिमांचल बोल्या॥ ७॥

बरु पावक प्रगटै ससि माही। नारदबचनु अन्यथा नाही॥ ८॥

हे सुभगे जो चंद्रमा से अग्नि स्रवे तौं भी नारद का बचन अन्यथा नहीं होता तत्व यह इनो का कथन भावी देख कर हैं ताते॥ ८॥ टिप्पणी—अन्यथा = झूठ।

दोहा—प्रिया सोचु परिहरहु सबु, सुमिरहु श्रीभगवान।
पारबतिहि निरमएउ जेहि, सोइ करिहि कल्यान॥ ७१॥

श्री सहित भगवान का सिमरन कहणे मों हिमवंत का भाव यह तिन का सिमरण करे से तेरी सुता भी तिनो सा पद पावैगी॥ ७१॥

अब जौ तुम्हहि सुता पर नेहू। तौ असि जाइ सिषावनु देहू॥ १॥
करै सो तपु जेहि मिलहि महेसू। आन उपाय न मिटिहिं कलेसू॥ २॥

जौं कन्या से तेरा सनेह है तौं अबी जाइ कै उस को सिख्या देहु ऐसा तप करे जिस कर शंकरजी मिले उन की प्राप्ति बिना इस का कलेस नहीं मिटता अबी कथन का भाव यह काल उत्तम है किंबा पीछे कोऊ तेरा कै उस का मत फेर देवै ताते अबी उपदेश कर जौ मैना कहे नारद के उपदेश पर कुरूप अरु कुबेखो भर्त्ता की प्राप्ति निमित्त मैं उमा को तप का उपदेश करौं तिस पर कहते हैं॥ २॥

नारदबचन सगर्भ सहेतू। सुंदर सबगुननिधि बृषकेतू॥ ३॥

सगर्भ कहिये जिन का आसा श्रेष्ट है जाते नगन अमंगलादिक पद सभी उस्तुति मों लगाइ आये हैं अरु सहेतु कहिये हमारे हितु के सूचक हैं आसा यह शिवजी से संबंध होणे का हमारा बडा प्रताप होवैगा अरु यह भी भवानी होकर पूजि जाएगी अरु शिव भगवान परम सुंदर अरु सगल गुण सिंधु हैं॥ ३॥

अस बिचारि तुम्ह तजहु असंका। सबहि भाँति संकरु अकलंका॥ ४॥

रूपकुल सर्वज्ञतादिक सर्व प्रकारों कर शिवजी निरदूषण हैं तुम संका ना करो॥ ४॥

सुनि पतिबचन हरषि मन माही। गई तुरत उठि गिरिजा पांही॥ ५॥

नारद के बचन सुनिकर जो चिंता भई थी सो निवृति भई तब हरषित ह्वै कै सुता निकट गई अरु॥ ५॥

उमहि बिलोकि नयन भरि बारी। सहित सनेह गोद बैठारी॥ ६॥
बारहि बार लेति उर लाई। गदगद कंठ न कछु कहि जाई॥ ७॥

उमा के कोमल तनादिक गुण देख कै माता को सनेह कर असूपात भए तासे कंठ मो लगावती हैं अरु तप की आज्ञा नहीं दे सकती तब॥ ७॥ टिप्पणी—असूपात = अश्रुपात।

१४० जगतमातु सर्बग्य भवानी। मातुसुषद बोली मृदुबानी॥ ८॥

कन्या को माता के सन्मुख अपने बिवाह की बात करणी नहीं बनती अरु उमा ने इस कर कहीं जाते एही जगत जननी है माता पिता का जो तप करणे के उपदेश में अभिप्राय था सो सभ जाण लिया जाते सर्वज्ञ है शंभु की प्राप्ति निमित्त उदम रच्या जाते भवानी है सो माता प्रति सुखदायक गिरा बोली॥ ८॥ टिप्पणी—सुखद = सुख देनेवाली।

दोहा—सुनहु मातु मैं दीष अस, सपन सुनावौं तोहि।
सुंदर गौर सुबिप्रबर, अस उपदेसेउ मोहि॥ ७२॥

सुंदर रूप अरु गौर बदन सो विप्र बर कहिये जौन सा द्विज तुह्मारे पास आया था अथवा बिप्रवरों बिषे जो स्रेष्ट कोई एक द्विज है तिस ने स्वपने में मुझे यह उपदेश किया है॥ ७२॥

करहि जाइ तपु सैलकुमारी। नारद कहा सो सत्य बिचारी॥ १॥

जौं कोउ कहे माता पिता की आज्ञा बिना आपणे पति की प्राप्ति निमित्त मैं तप कैसे करौं तिसपर कहत भया॥ १॥

मातुपितहि पुनि यह मत भावा। तपु सुषप्रद दुष दोष नसावा॥ २॥

प्रथम तो तेरे माता पिता को यह बात न थी भाई परंतु पुनः कहिये शंकरजी का प्रभाव सुण कर अब प्रसन्न भए हैं अरु यह जागया है तप कर सभ सुख उपजते हैं अरु दुख बिनसते हैं जाते॥ २॥

तपबल रचै प्रपंचु बिधाता। तपबल बिष्णु सकलजगत्राता॥ ३॥
तपबल संभु करहि संहारा। तपबल सेषु धरै महिभारा॥ ४॥
तपअधार सब सृष्टि भवानी। करहु जाइ तपु असजिय जानी॥ ५॥
सुनत बचन बिसमितमहतारी। सपन सुनाएउ गिरिहि हँकारी॥ ६॥

यह वचन सुनि कर माता बिस्मै भई जो बात मैंने कहणी थी सो इस ने प्रथम ही कहि दीनी है क्या इस को अंतरयामता है तब पति को हंकार कहिये बोलाइ कर सुता का सुपन सुनाया॥ ६॥

मातुपितहि बहु बिधि समुझाई। चली उमा तप हित हरषाई॥ ७॥

माता पिता को बहुत भांति समुझाया जो स्वप्न में देवता ने आज्ञा दीनी है अरु तुमारा मत भी एही है अरु मेरी भी इसी तरां इच्छा है ताते तुम ने चिंता ना करणी मैं तप निमित्त जाती हौं अब उमा का वियोग जान के॥ ७॥

प्रिय परिवार पिता अरु माता। भए बिकल सुष आव न बाता॥ ८॥

दोहा—बेदसिरा मुनि आइ तब, सबहि कहा समुझाइ।
पारबतीमहिमा सुनत, रहे प्रबोधहि पाइ॥ ७३॥

बेद सिरा नामें मुनीश्वरने आइकै पारवतीका प्रभाव पूर्वक जन्मादिक सभोंको सुनाया तब सब संतुष्ट ।

उर धरि उमा प्रानपतिचरना । जाइ बिपिनि लागी तपु करना ॥ १॥

उर मों शंकरजी के चरनहीं इस निमित्त धारे जहां चरण हुए तहां सर्व सरीर हुआ वा संपूरण देह में पादो के पूजा मुख्य है किंवा जौ कोऊ किसू से अपना अपराध खिमा किया चाहता है तब उस के चरणहीं पकरता है किंवा चरण कहिये आचरण शंकर जी के रिदें मों धार कर तप करने लागी ॥ १ ॥

अतिसुकुमार न तनु तपजोगू । पतिपद सुमिरितजेउ सबु भोगू ॥ २ ॥

देवी तप करणे के लायक नहीं जाते तन सुंदरता कर अरु अवस्था कर भी अति कोमल हैं परंतु स्वामी के चरनारविंदों का सुख रिदें मो धार कर भोगों के सुख त्याग दिये किंवा पतिपद सिमिर कहिये स्वामी की पदवी को सिमरन कर जो स्वामी तप के निध हैं ताते मैं भी तपस्वनी होवौं तब उन की समीपता को पावौ ।। २ ॥

नित नव चरन उपज अनुरागा । बिसरी देह तपहि मनु लागा ॥ ३ ॥

संबत सहस मूल फल षाए । सागु षाइ सत बरष गँवाए ॥ ४ ॥

कछु दिन भोजनु बारि बतासा । किए कठिन कछु दिन उपबासा ॥ ५ ॥

कछु दिन जलपान किया केते दिन वात भख्यण करी कठिण उपवास सो करे जिनो मों पौन का भी त्याग करा ॥ ५ ॥ टिप्पणी—बारि = जल । बतासा = पवन ।

बेलपात महि परै सुषाई । तीनि सहस संबत सोइ षाई ॥ ६ ॥

टिप्पणी—मुन्शी रोशनलाल ने लिखा है । "यह चौपाई क्षेपक जान पड़ती है इसलिये कि ऊपर संपूर्ण तप का क्रम लिख आये अब फिर यह लिखना कि सूखो बेल की पत्ती खाई और उसे छोड़ दी इस से व्यतिक्रम होता है ॥"

पुनि परिहरे सुषानेउ परना । उमहि नामु तब भएउ अपरना ॥ ७॥

इस कर देवी का नाम अपरना भया जाते सूखे पत्रों का अहार त्यागेया ॥ ७ ॥

देषि उमहि तप षीनसरीरा । ब्रह्मगिरा भै गगन गँभीरा ॥ ८ ॥

तप के बल कर जब गिरजा का देह अति क्षश देख्या तब गंभीर जो नभ बाणी है सो भई गंभीर कहिये जिस की स्वर सुखदायक अरु सभों के सनमान सैं वाक्य अरु अर्थ सो दिखावते हैं ॥ ८ ॥

दोहा—भएउ मनोरथ सुफल तव, सुनु गिरिराजकुमारि ।
परिहरु दुसह कलेस सब, अब मिलिहहि त्रिपुरारि ॥ ७४ ॥

ईश्वरी होणे का जो तेरे मन में मनोरथ था सो सफल हुआ तत्व यह तेरा अब मान दिन दिन वृद्ध होइगा अरु तेरा पिता भी गिरो में राज पदवी को पावैगा अरु रिषों मुनों से जो दुसह कष्ट तैने करे है तिन को त्याग त्रिपुरारि कहिये सर्व शक्ति शंभु कहिये कल्यान के मंदिर सो तुझे मिलेंगे ॥ ७४ ॥

१४ अस तपु काहु न कीन्ह भवानी। भए अनेक धीर मुनि ग्यानी ॥ १ ॥

ऐसा तप किसू मुनिवर ने नहीं किया इस कथन का तातपर्ज देवी की सलाघा मों है किंवा नभ बाणी ने सांच कहा है जाति और तपीवों से इहां यह अधिकता है प्रथम अबला सरीर पुनः परम सुंदरी बहुरो कुमारी अरु राजपुत्री भी इन गुणहुं संयुक्त होइ कर एता चिर ऐसा तप किसू ने नहीं किया किंवा और कामना धारके रिषि ने तप बडे किए हैं शिवजी को भरता करणे निमित्त ऐसा तप किसी ने न किया ॥ १ ॥ टिप्पणी—सलाघा = श्लाघा का अपभ्रंस है।

अब उर धरहु ब्रह्म बर बानी। सत्य सदा संतत सुचि जानी ॥ २ ॥

कैसी ब्रह्मबाणी है जो सदा सांची है अरु निरंतर पवित्र है तिस को रिदें मो धारो अब तुम को यह करतव्य है ॥ २ ॥ टिप्पणी—निरंतर शुचि अर्थात् निरासत्य।

आवै पिता बुलावन जबही। हठ परिहरि घरजाएहु तबही ॥ ३ ॥

आगे तुझे पिता बोलावने आया था तौं तैंने उस का कहा न था माना अब हठ न करना तिस के संग गृह जाना अरु हमारे कथन पर जो संदेह करती होहि तौं ॥ ३ ॥ टिप्पणी—हठ = तप।

मिलहि तुम्हहिं जब सप्तरिषीसा। जानेहु तब प्रमान बागीसा ॥ ४ ॥

प्रथमें शंभुजी के पठाए हुए सप्त रिषि तुझे मिलेंगे अरु तेरी परिख्या निमित्त बातैं करेंगे तब सर्व बाणिवो को ईश्वरी जो ब्रह्मबाणी है तिस को सत्य जानना ॥४॥ टिप्पणी—बागीशा = ब्रह्मबाणी।

सुनत गिरा बिधि गगन बषानी। पुलकगात गिरिजा हरषानी ॥ ५ ॥

बांछतदात्री गिरा कों सुनि कर गिर्जा प्रसन्न भई तदनंतर जाग्यवलकजी भरद्वाज प्रति कहते हैं॥५॥

उमाचरित सुंदर मैं गावा। सुनहु संभु कर चरित सुहावा ॥ ६ ॥

जब तें सती जाइ तनु त्यागा। तब तें सिवमन भएउ बिरागा ॥ ७ ॥

टिप्पणी—मुन्शी रोशनलाल ने निम्न लिखित अर्थ लिखा है। विराग नाम विशेष प्रीति इसलिये कही कि प्रीति सब दिन रही है प्रमाण। दोहा—परम प्रेम तजि जाय नहिं, किये प्रेम बड पाप ॥ ७ ॥

जपहिं सदा रघुनायकनामा। जहँ तहँ सुनहि रामगुनग्रामा ॥ ८ ॥

जो कोऊ कहै मदनारी नारी के वियोग कर क्या खीन भए तिस पर कहते हैं ॥ ८ ॥

दोहा—चिदानंद सुषधाम सिव, बिगतमोहमदकाम।
बिचरहिं महि धरि हृदय हरि, सकललोकआराम ॥ ७५ ॥

महेश्वर सच्चिदानंद सुखों के निकेत मंगल रूप मोहादिक से परे हैं सो नारी के वियोग कर खिन्न नहीं भए श्री रामचंद्र का ध्यान अरु नाम हृदे मों धारते अरु जपते जो बिचरते हैं सो लोगहूं के कृतार्थ निमित्त। अब तिन के बिचरणा का प्रकार कहते हैं ॥ ७५ ॥

कतहुं मुनिन्ह उपदेसहि ग्याना । कतहुं रामगुन करहि बषाना ॥ १ ॥
जदपि अकाम तदपि भगवाना । भगतबिरहदुषदुषित सुजाना ॥ २ ॥

जो कोउ तत्व का अधिकारी मिलता है तौ आत्मज्ञान उपदेश करते हैं जहां कोउ उपासिक मिलता है तिस प्रति श्री रामचंद्र के गुणानवाद कहिते हैं महादेव जद्यपि निःकाम हैं परंतु भगवान हैं भक्तो के दुख देख कर दुखी होते हैं तव यह सती को भी भक्त जाणकर उस के वियोग कृत खेद मानते भए हैं ॥२॥

एहि बिधि गएउ कालु बहु बीती । नित नै होइ रामपद प्रीती ॥ ३ ॥
नेमु प्रेमु संकर कर देषा । अबिचल हृदय भगति कै रेषा ॥ ४ ॥

नेम सती के त्याग का प्रेम संतो को मिलकर भगवंत के गुणानवाद कथन स्रवन का भक्ति को अचल रेख यह श्री रामचंद्रजी की आज्ञा बिना सती को अंगीकार न करना शिवजी को ऐसी दृढता जान कर ॥ ४ ॥

प्रगटे रामु कृतग्य कृपाला । रूपसीलनिधि तेज बिसाला ॥ ५ ॥

रूप के निधि अर्थ यह मन के मोहक सीलनिधि कहिये जिन ने सब कारज कोमलता पूर्वक करणे अरु महातेजस्वी अर्थ यह जिन की आज्ञा दुरनिवार है ऐसे जो श्रीरामचंद्रजी है सो प्रगट भए जाते कृतज्ञ हैं अर्थ यह शिवजी के भक्ति को जानते हैं किंवा सती ने जो इन को सुमरकर देह त्यागया था तिस के कारणे का जानते हैं अति कृपाल हैं ताते सती की अवज्ञा को सुमिरण न किया प्रत्युत तिस को दीन जान कर शंकरजी सों मिलावणा चाह्या है प्रमाण अजोध्याकांडे नस्मरत्यं पकारागां मतमप्यात्मवत्वया । कथंचिदुपकारे न कृतो नै को तुस्यति ॥ भगवंत का यह सुभाव है जो कोउ अनेक अपराध करे तब उन को याद नहीं रावते अरु जो एक बार भजन वा मंत से सेवा करे तिस पर प्रसन्न होते हैं ॥५॥

बहु प्रकार संकरहि सराहा । तुम्ह बिनु अस ब्रतु को निरबाहा ॥ ६ ॥

रघुनाथजी के शंकरजो विषे स्वामी सेवकादिक सबो भाव है ताते तिन की बहु भांति प्रसंशा करी अरु कहा स्वामी भक्त हेतु अपणी शक्ति त्यागणी अरु हमारे कहे बिना अंगीकार न करणी ऐसे ब्रत तुम बिना कौन पूरण करसकता है ॥ ६ ॥

बहु बिधि राम सिवहि समुझावा । पारबती कर जन्मु सुनावा ॥ ७ ॥

जौं अपणे सेवकों सो अपराध होइ तौं भी उन पर खिमा करनी इत्यादिक वारता शंकरजी को समुझाया अरु तुम जो कहो उस के इस तन का स्परस हम ने नहीं करणा तौं अब वह दक्ष्याइणी तन त्याग कर हिमांचल के गृह जनमी हैं जौं शिवजी पूछते होहिं अब वह किस भांति सो है तिस हेतु ॥७॥

अतिपुनीत गिरिजा कै करनी । बिस्तर सहित कृपानिधि बरनी ॥ ८ ॥

रुचि पूर्बक तप अरु सरलता आदिक जो अति पवित्र गिरजा कियां करणिया है सो बिस्तार कर शंभु को सुनाया जाते कृपानिधि हैं सो शिव सक्ति के मिलाप की कृपा दोनों पर तिस हेतु ॥ ८ ॥

दोहा—अब बिनती मम सुनहु सिव, जौ मो पर निजु नेहु ।
जाइ बिबाहहु सैलजहि, यह मोहि मागें देहु ॥ ७६ ॥

हे शंकरजी जौं मो पर तुमारा अति प्रेम हैं तौं मेरी बिनै सुनि कै यह दान देवो गिरिजा को जाइ कै बिवाहो अतिनम्रता कर कथन का भाव यह अति प्यारिवो से हठ कडावन कि येही रीति हैं जाइ बिवाहो कथन का भाव यह जो तुम कहो हम को तुमार वाक प्रमाण परंतु गौरी इहां आइ मिलै सो ना करणी हमारे कथन निमित्त सकल सुरों संजुत जाइ के उस को मानपूर्वक ल्यावना जाते ईश्वरी हैं यह सुनि कर ॥ ७६ ॥

कह सिव जदपि उचित अस नाहीं । नाथबचन पुनि मेटि न जाहीं ॥ १ ॥

तब कपरदी ने कहा त्याग कर पुनः अंगीकार करणी बहुरो जगैत बना तब नाइकर जाना यह बात यद्यपि हम अवधूतों कों उचित नहीं परंतु आप की आज्ञा नहीं मेटनी जाते ॥ १ ॥

सिर धरि आएसु करिअ तुम्हारा । परम धरमु यह नाथ हमारा ॥ २ ॥

तुमारो आज्ञा प्रमाण करणी यह सेवको का सर्ब धर्म का सिरोमणि धर्म है । ननु । सेवकी मैं हमारा पद बहुबचन कैसे दिया । उत्तर । इहां बहुबचन सर्ब संतो मो है । ननु । तो सब संत कथने थे । उत्तर । शिवजी भक्तराज है ताते अपना नाम लिया प्रमाण ब्रह्मांडपुराणे शिववाक्यं यथा । सरिद्दागगंगावैस्नवानामहं यथा । देवानांच यथा विष्णुः वेदानांप्रणवो तथा । जैसे सरिता मो गंगा मुख्य है बिष्णु भक्तो मे जैसे मैं श्रेष्ट हौं देवत्यों मैं भगवान विशेष है तैसे वेदो में प्रणव हैं वा हम कहिये अहंता आरा कहिये तिस कें काटणेहारा अर्थ यह सेवकी धर्म अभिमानरूपी तरु के नास करणेहारा हैं ॥ २ ॥

मातु पिता गुर प्रभु कै बानी । बिनहि बिचार करिअ सुभ जानी ॥ ३ ॥
तुम्ह सब भाँति परम हितकारी । अज्ञा सिर पर नाथ तुम्हारी ॥ ४ ॥

सर्ब भांति हितकारी कहिये माता पिता गुरु स्वामी सर्वस हमरे तुमहीं हो ताते आज्ञा सिरपर ॥ ४ ॥

प्रभु तोषेउ सुनि संकरबचना । भक्ति बिबेक धर्मजुत रचना ॥ ५ ॥

तीनो की बिवस्था कहते हैं इहां छंद की पूरणता निमित्त क्रमभंग भया है कह शिव जदपि यह हेतु का भक्ति मैं सिरधरिआं यह हेतुकां धर्म मे मात पिता गुरु यह चारतुकां विवेक मय इहां औरों विचारों का जो त्याग है सोई विवेक है ॥ ५ ॥

कह प्रभु हर तुम्हार पन रहेऊ । अब उर राखेहु जो हम कहेऊ ॥ ६ ॥

रघुनाथजी ने कहा हे महादेव उस तन से जो उमा अंगीकार ना करी ताते तुमारा प्रण भी सांच भया अरु दोष उस का हमारे कहे से खिमा करो ॥ ६ ॥

अंतरधान भए अस भाषी । संकर सोइ मूरति उर राखी ॥ ७ ॥
तबहिं सप्तरिषि सिव पहिं आए । बोले प्रभु अति बचन सुहाए ॥ ८ ॥

दोह—पारबती पहि जाहु तुम्ह, प्रेमपरीच्छा लेहु।
गिरिहि प्रेरि पठयेहु भवन, दूरि करेहु संदेहु ॥ ७७ ॥

हे रिषो गिरिजा के समीप जाइ कर अपणी बुद्धि द्वारा उस के प्रेम की परिख्या करणी जो पूर्व जन्म कृत अपराध अपणे मों मान कर अब सरल भई होइ तौं उस को हमारी प्राप्ति की निरदेहता करावणी अरु हिमवंत को भी निरसंदेह करके प्रेरणा अरु तिस द्वारा गिरजा को गृह मों पठावणा ॥ ७७ ॥

तब रिषि तुरत उमा पहँ गए। देषि दसा मन बिस्मै भए ॥ १ ॥
ऋषिन गौरि देषो तहँ कैसी। मूरतिवंत तपस्या जैसी ॥ २ ॥

ता समै शिवजी के प्रेरे हुए रिषि देवी ढिग गए परंतु तिस की तपों मैं मूरति देखि के विस्मत हुए अरु ॥ २॥
टिप्पणी—तब रिषि तुरतउमा पहँ गए। देषि दसा मन बिस्मै भए ॥ यह चौपाई शुद्ध खास प्रति में तथा मानसरामायण के प्रसिद्ध टीकाकार महात्मा हरिहरप्रसाद जी को टीका में और रौशनलाल की टीका में तथ शुकदेवलाल की टीका में नहीं है परंतु महात्मा रामचरणदास जी और पं० लक्ष्मीदत्त ने इस के बदले निम्न लिखित पद लिखे हैं। सुनि सिव बचन परम सुखमानी। चले हर्षि जहँ रहीं भवानी ॥

बोले मुनि सुनु सैलकुमारी। करहु कवन कारन तप भारी ॥ ३ ॥
केहि अवराधहु का तुम चहहू। हम सन सत्य मरमु किन कहहू ॥ ४ ॥
सुनत रिषिन के वचन भवानी। बोली गूढ मनोहर बानी ॥ ५ ॥

उन के मुखादि कों लख्यण द्वारा अरु बचन सुनि कर उमा ने जान्या इनो ने जो मुझे सैलकुमारी कहा है सो इनो ने जड की पुत्री सूच्या है ताते जानीता है मेरी परिख्या अर्थ आए हैं सो मैं इन के वचन को मान पूर्वक अपनी दृढता के वचन कहो ताते मनोहर बानी कर गूढ बाक बोली गूढ कहिये जिनो वचनो कर मुनीश्वर हमारी मूढता समुझैं अरु यथार्थ कहैं ॥ ५ ॥

कहत बचन मनु अति सकुचाई। हँसिहहु सुनि हमारी जडताई ॥ ६ ॥

अति संकोच देवी को इस हेतु है जो जान कर महत पुरसों सों हांसी करणी योग नहीं परंतु जैसे सो तैसा बर्तना विवहार की रीति है तथापि अपनी लघुता पूर्वक बचन कहती हैं। जडताई इस कर मैं युवती जात हों तिस पर भी गिर पुत्री हों जौं वह कहै हम तुझ को सीख्या देणे आए हैं तिस पर कहती हैं ॥ ५ ॥

मनु हठ परा न सुनै सिषावा। चहत बारि पर भीति उठावा ॥ ७ ॥

जौं वह कहै तेरा मन क्या चाहता है तिस पर कहती हैं। जैसे जल के प्रवाह पर भीत की संभावना कठिन है तौं उमारणी कहा तैसहीं उरध रेता परम विरक्त कपरदी तिन बिषे पति युवती संबंध की इच्छा करती हों जौं कहे किस के कहे कर तौं सुनो ॥ ६ ॥

नारद कहा सत्य सोइ जाना। बिनु पंषन हम चहहिं उडाना ॥ ८ ॥

महाकौतुकी जो नारद हैं तिस के वचनो पर प्रतिति कर कै मैं पंखो बिना उडा चाहती हों अर्थ यह ईश्वरों की प्राप्ति योग्य साधन मुझ मों नहीं अरु तिन को मिला चाहती हो ॥ ७ ॥

देषहु मुनि अबिबेक हमारा । चाहिय सिवहि सदा भरतारा ॥ ७ ॥

निंदा पक्ष्य का अर्थ तौं सुगम है अरु उस्तुति पक्ष्य मों अर्थ यह भांति करणा अविवेक कहिये अति विवेक किंबा नहीं है विवेक जिस से परे अर्थ यह उतकृष्ट बिबेक हमारा देखो सदा शिवजी को भरता चाहती हौं ॥ ७ ॥

दोहा—सुनत बचन बिहंसे ऋषय, गिरिसंभव तव देह ।
नारद कर उपदेस सुनि, कहहु बसेउ केहि गेह ॥ ७८ ॥

रिषिश्वरों को कहना गिरजा के निरादरार्थ है जो तू पखान की बेटी है तुझे चेतन बुद्धि कैसे होनी है अरु जो तुझे गुर मिला है नारद तिस के उपदेश से किसी का घं ह कभी बसाहो नहीं तातपर्य यह सभ स्थानों में कलह डार देता है अरु उस्तुति पक्ष्य मों अर्थ इस भांति मुसकान रिषों का भवानो की प्रति प्रसन्नता कर हैं अरु देवी को गिरसंभव इस कर कहा है जैसे गिर पर उपकारी अरु गंभोर है तैसे तू भी परम पवित्र है अरु वस्यो केहि घं ह जो कहा सो घं ह नाम इस देह का है देवरिषि के उपदेश से किसी का देह अभिमान कब रहता है इसी पर मूलकार पुराणों का उदाहरण देते हैं । ७८ ॥

दच्छसुतन्ह उपदेसिन्हि जाई । तिन फिरि भवनु न देषा आई ॥ १ ॥

एक अर्थ प्रगट है सो नहीं लिखा दुतीय अर्थ कहते हैं भवन अरु भ्रमन का अर्थ देश भाषा कर एक है सो नारदजी के उपदेश कर दक्ष्यसुतों को बहुरो संसार विषे भ्रमना ना हुआ किंबा भवन कहिये गृह सो देह अर्थ यह नारदजी के उपदेश कर पुनः जन्म न धारया ॥ १ ॥

चित्रकेतु कर घर उन घाला । कनककसिपु कर पुनि अस हाला ॥ २ ॥

घर कहिये संसाराभिमान घाला कहिये नास किया अर्थ यह चित्रकेतु का अज्ञान भो इनो ही मिटाया । इहां अस पदकांखी है तिस के संग आश्चर्य पद का अध्याहारकरणा हिरणयकस्यप को ऐसी आश्चर्य अवस्था करो जो उस की रानी को इंद्र सो छुडाया अरु उस के पुत्र कों तत्व का उपदेश किया जिस के प्रताप सो कनककस्यप भी नरसिंघजी के दरसन से कृतारथ भया ॥ २ ॥

नारदसिष जे सुनहिँ नर नारी । अवसि होहि तजि भवन भिषारी ॥ ३ ॥

भिख्युक नाम सन्यासी का है सो नारदजी के शिष्य सभी मिथ्या संपदा को त्याग कर सम दम संपन्न संत होते हैं ॥ ३ ॥

मनि कपटी तन सज्जन चीन्हा । आप सरिस सबही चह कीन्हा ॥ ४ ॥

जो मनि कपटी पाठ होवै तौं अर्थ यह जो सिरोमणि कपटी है सो तन कहिये तनक सिखेहीं देवरिषि की संमत से सज्जन चीनते हैं अरु मन कपटी पाठ होवै तो पंचनददेश की भाषा मै मन ताक

कहिता है जो तरन जाने मनाषा कहोता है जिस को दृष्ट न आवै तैसहीं मन कपटी कहिये जो निह-
कपट होवै सो नारदजी रिदै से भी सरल है अरु तन से भी संत हो देखीते हैं तातपर्य यह अंतर
बाहर एक रंग है । वह एही चाहते हैं जो हमारी न्याई सभी लोक सरल चित हीं होवै ॥ ४ ॥
टिप्पणी—मनकपटी और तन के ऊपर सज्जनों का चिन्ह अर्थात् तिलक माला धारण किया है ।

तेहि के बचन मानि बिस्वासा । तुम चाहहु पति सहज उदासा ॥ ५ ॥

यह रिषों ने आज्ञा दई ताके वचनहुं पर निसचा करि कै तुम चाहहु पति कहिए तुम आसा करो शंकर रूप पति की सहज जो शिवतत् सहिज स्वरूप है उदासा उकार ब्रह्मा का वाचक है सो बिरंच भी जिस महादेव का दास हैं जो विध को दास कथन पर कोऊ आशंकत होइ तौं यह बात आगे विस्तार कर कहणी हैं जहां सकल सुरों ने शंकर पास आवना है नारद विषे जो बचन बिरुद्ध के थे सो विधपख सो बणे इसी प्रकार महादेव कों भी रिषीश्वरों निंदा के वाक नहीं कहणे तातें उन का भी सुगम अर्थ आप कर लैणा अरु गूढ अर्थ लिखते हैं ॥ ५ ॥ टिप्पणी—तुम ऐसा पति जो जन्म के उदासी हैं।

निर्गुन निलज कुबेष कपाली । अकुल अगेह दिगंबर ब्याली ॥ ६ ॥

निर्गुण तृगुणातीत निलज जिन की दृष्ट मां जगत नहीं तब लज्या काकी होवै कु कहिये धरती तिस का वेष कहिये धरा के मसान है जिनो विषे खिमा आदिक गुण कपाल नाम दसम द्वार का है तिस विषे रहै जिन की समाध सो कपाली किंबा क ब्रह्मा का वाचक हैं जो पालन करै कपाली जदवा क ब्रह्मा पाल पद से सिद्ध हुआ पालन कारणेवाला विष्णु सो विध हरि जिस के होवै जिस के कहिये जिस की कृपा के पात्र होवै सो कपाली अकुल कहिये स्वतः सिद्ध अगेह अरु दिगंबर इनो पदों से महत्तता सिद्ध भई ख्याली ख नाम अकास का है तिस विषे जिन का आला कहिये घर है तातपर्य यह चिदाकास मों जिन की स्थित है किंबा ख कहिय आकाश आकाश कहिये असमंतादी आकासादिक पंच भूत सर्व उर से जिस विष लीन होवै सो ख्याली ॥ ६ ॥

कहहु कवन सुषु अस बरु पाए । भल भूलिहु ठग के बौराए ॥ ७ ॥

तुमहीं कहो ऐसे बर को प्राप्ति हुए इस में विशेष सुख कौन है । भू नाम धरा का है लहि नाम प्राप्ति होने का सो भली इस्थित लही है तुम ने ठग के बौराए ठग नाम ठगनहारे का है जिनो ने मन इंद्रिअहुं को ठग्या है अपणे वस किए हैं सो कहिये संत नारदजी बौराए कहिये तिन के प्रसाद कर तन धनस तुमारी बुद्धि बावरी हुई है जाते इंद्रियों का सुख त्याग दिया है अरु शंकरजी विषे मन इस्थित किया है तातें तुम धन हो संतहूं को ठग कथन पर प्रमाण श्रीगुरग्रंथे । राज माल रूप जात जो बन पंजे ठगहूमी ठगी जग ठगिआ कि तन रखी लज एना ठगन ठग से जे गुर को पैरी पाहिं अथवा ठकार शंकर का वाचक है गकार प्रीति का वाचक है शंकर विषे जिस की प्रीति होवै सो ठग नारद प्रमाण ठो महेश्वर आख्यात इतेकाक्षरनिरघंटे गः प्रीतौ इति सौं भरि क्वतिएकाक्षर मात्रका कोशे ॥ ७ ॥

पंच कहें सिव सती बिबाही । पुनि अवडेरि मराइनि ताही ॥ ८ ॥

पंच कहिये श्रेष्ठ लोग सो कहते हैं प्रथम शिवजी ने सती को अर्द्धंगी किया था अवडेर कहिए जब वह बावरी भई जो श्रीरामचंद्र विषे संदेह किया अरु त्रिपुरारि का कहा न माना तब ताको मरवाया अर्थ यह तन छूटा तातपर्य यह निरअपराधी पर कोप नहीं करते ॥ ८ ॥ ॥ टिप्पणी—पंच के कहे से शिव ने सती का बिवाह किया था फिर अवडेरि अर्थात् त्याग के मराइव—मरवा डाला ताही तिस को।

दोहा—अब सुष सोवत सोचु नहिं, भीष माँगि भव षाँहिं।
सहज एकाकिन के भवन, कबहुं कि नारि षटांहि ॥ ७९ ॥

अब रख्यने धातु है सो सर्व का रख्यक जो भगवंत है तिस सुख विषे सोवते कहिये सदा इस्थित हैं सोच नहीं कहिये चिंता ते रहित हैं भीख मांग कहिये जो कोऊ उन के द्वारे पर भिखुक बने भव कहिये शंभु खाहिं कहिये त्रिपित अर्थ यह तिस याचक को त्रिपित करते हैं किंवा जो तिन से भीख मांगे कहिये बर मांगे तिस का भाव कहिये जनम मरण तिस को खाहि कहिये भक्षन करते हैं। सहज एकाकी कहिये निरद्वंदसरूपी तिन के भवन विषे कबहूं की कहिये किसी बड भागवस ते नारि खटांहं कहिये नारी को संजोग होइ है तत्व यह तुम वड भागिनि हो जिन का ऐसे महान भावो साथ संयोग होवैगा यह गूढ आसा रिषो ने प्रथमहीं इस निमित्त राखा जो आगे इनो ने कहणा है तुम माया हो शिव भगवान हैं तब भवानी कहे अभी तुम निंदा करते थे अब भगवान कहते हो तिस पर कहेंगें हमने तौं शिव जी की अस्तुति करी थी तुम उनहूं पदहुं का अर्थ बिचार देखो अब प्रसंग अनुसार कहते हैं ॥ ७९ ॥

अजहूं मानहु कहा हमारा। हम तुम कहुं बर नीक बिचारा ॥ १ ॥

पीछे बीती सो बीती जौं अब भी हमारा कहा मानो तौं हम ने तुमारे निमित्त श्रेष्ट बर बिचारा है जौं तुम पूछो कौन सा बर हैं तिस के विशेषण सुनु ॥ १ ॥

अतिसुंदर सुचि सुषद सुसीला। गाँवहिं बेद जासु जस लीला ॥ २ ॥

महासुंदर हैं जाते तिस मो पंचसिरादिक रूपता नहीं सुचि हैं जाते तिस मो मसानो की भस्मादि अपावनता नहीं सुखद हैं जाते प्रलै करता नहीं पालन करता हैं सुसील हैं जिस ने भृगु के पग का प्रहार सहकर भी तिस का पूजनहीं किया तिस के कृष्णादिक अवतार धारणकीयां लीला के यस को आम नाइ गावते हैं तत्व यह भूतराट ने क्या रस भोगणे हैं ॥ २ ॥

दूषन रहित सकलगुनरासी। श्रीपति पुर बैकुंठ निवासी ॥ ३ ॥

क्रोधादिकों दोषो से रहित अरु दैवी संपदा रूपी गुणों के धारक हैं जाते तमोगुणी नहीं श्री कहिये शोभा तिस के स्वामी हैं अर्थ यह सिंगारों कर परम सोभनीक हैं जाते गजों अरु व्याघ्रो के चरमधारक नहीं अरु बैकुंठबासी हैं तत्व यह कैलास गिरि के बट तरे आसन नहीं यद्यपि श्रीपति लखमी का नाथ वाचक प्रसिद्ध है परंतु इहां रुचि वर्धण हेतु कथन है अरु इस अर्थ किए सपत्नी दाह द्योतक रुचि घातक वाक्य होता है ॥ ३ ॥

अस बर तुमहि मिलाउब आनी। सुनत बिहँसि कह बचन भवानी ॥ ४ ॥

अमंगल वर के हेतु तैंने येते कष्ट साधे हैं अरु वह अब लो मिला भी नहीं अरु ऐसा परम मंगल रूप कंत तुझे हम्हां अबी ल्याइ मिलावते हैं जब यह वाक्य सुने तब हांस सो तिन का निरादर करती हुइ गिरजा बोली ॥ ४ ॥

सत्य कहहु गिरिभव तनु एहा। हठ न छूट छूटै बरु देहा॥ ५ ॥

हे रिषी तुम ने सांच कहा तेरा तन अद्र से उपज्या है सो मैं भी पाखानवत हठ न छोडोंगी जो रिषि कहैं तू पाथर तो नहीं तिस से उपजी है अरु परम सुंदरी है तूं हठ त्याग देहिं तिस पर कहती हैं ॥५॥

कनकौ पुनि पषान ते होई। जारेहु सहजु न परिहर सोई॥ ६ ॥

हे रिषों कारण के अनुसारही कार्य होता है जैसे पाहण से स्वर्ण उतपति होता है यद्यपि सुंदर है तद्यपि अनेक बार जलाया हुआ भी कठिनता को नहीं त्यागता उनो जो कहा था नारद का उपदेश में किसू का घर नहीं बसा तिस का उत्तर देती हैं ॥ ६ ॥

नारदबचन न मैं परिहरऊँ। बसौ भवन उजरौ नहिँ डरऊँ॥ ७ ॥

गुरु के वचन प्रतीति न जेही। सपनेहु सुगम न सुष सिधि तेही॥८॥

उनो जो महादेव सों दोस कहे थे तिस का उत्तर कहिती है ॥ ८ ॥

दोहा—महादेव अवगुनभवन, बिष्णु सकलगुनधाम।
जेहि करमनु रम जाहि सन, तेहि तेही सन काम॥ ८० ॥

हे रिषो तुम जो कहते हो महादेव सों दोष है अरु विष्णु सो सब गुण है सो तुमारी तुम जाणो हमारा मन तो शंकरजी विषे लागा है हम को तो सर्वगुण उन सों भासते हैं किंवा अव रह्यणो महादेव मरव के रह्य अरु गुण के मंदिर हैं किंवा अव प्राप्तो हैं महादेव भी गुण के संबूह की प्राप्ति करावणहारे हैं अरु विष्णुजी भी सकल गुणहुं की खान हैं परंतु जिस को प्रीति जिस सो है तिस को वही श्रेष्ट है जो रिषि कहै एक के कहे दोषहूं वाला स्वामी तैंने प्रमाण किया अरु हमारे सातो के कहे गुणनिधि स्वामी को नहीं अंगीकार करती तिस कर कहती हैं ॥ ८० ॥

जो तुम मिलतेउ प्रथम मुनीसा। सुनतिउ सिष तुम्हारि धरि सीसा॥१॥

अब मैं जन्म संभु हित हारा। को गुन दूषन करै बिचारा॥ २ ॥

जैसे कोऊ वस्तु जुए मो हारि देता है पुनः वह पदार्थ अपणा नहीं रहता है तैसे हम ने सनेहरूपी द्युत सो जनम अपणा शिवजी के हाथ हार दिया है अवगुन दूषन को न बिचारे जो रिषी कहे हम प्रतिज्ञा कर आए हैं जो किसू अति सुंदरी कन्या सो विष्णुजी का विवाह करावणा ताते तुझे हठ कर कहते हैं तिस पर कहती हैं ॥ २ ॥ टिप्पणी—हित = निमित्त = के लिये।

जौ तुम्हरें हठ हृदय बिसेषी। रहि न जाइ बिनु किए बरेषी॥ ३ ॥

तौ कौतुकिअन्ह आलसु नाही । बर कन्या अनेक जग माही ॥ ४ ॥

हे रिषीश्वरो जौं विष्णुजी की बरेषी कहिये सगाई कराए बिना तुम ते रहा नहीं जाता तौं तुम कौतुकी हो ताते तुम को जगत मों फिरने का आलस नहीं अरु बर कहिये श्रेष्ठ कन्या भी संसार मों अनेक है औरों सों कराइ देवो यह सुनि जो खुभीत हुए रिषीश्वर कहैं तूं हमारा निरादर करती है परंतु मनमथारि तुझे न वरेंगे तौं क्या करैगी तिस पर कहती है ॥ ४ ॥

जन्म कोटि लगि रगर हमारी । बरौं संभु नत रहौं कुमारी ॥ ५ ॥

जौं रिषीश्वर कहें शिवजी की बात तै जाणा हमारा नारद मो विरोध है तूं उस की सिष्य न बन तिस पर कहती है ॥ ५ ॥

तजौं न नारद कर उपदेसू । आपु कहहि सतबार महेसू ॥ ६ ॥

अब नम्रता पूर्वक तिन की उपेख्या करती है ॥ ६ ॥

मैं पा परौं कहै जगदंबा । तुम गृह गवनहु भयउ बिलंबा ॥ ७ ॥

जगदंबा कथन का भाव यह रिषो के बचन अपणो असंमत सुन कर कोप करणा था परंतु जगत जननी हैं तिन को पुत्र जान कर कोप न किया रीति सो विसर्ज्जन करा तब ॥ ७ ॥

देषि प्रेमु बोले मुनि ग्यानी । जय जय जगदंबिके भवानी ॥ ८ ॥

दोहा—तुम माया भगवान सिव, सकल जगतपितुमातु ।
नाइ चरन सिर मुनि चले, पुनि पुनि हरषित गातु ॥ ८१ ॥

गात पद यहां मन को उपलख्यक है किंवा रोमाचादिकों कर तन का हरष भी बणाता है इतर स्पष्ट ॥ ८१ ॥

जाइ मुनिन्ह हिमवंत पठाये । करि बिनती गिरिजहिं गृह ल्याये ॥ १ ॥

आगे हिमाचल सनेह कर कई बेर चाहता था परंतु उमा तप का त्याग न थी करती जब रिषो ने जाइ सुनाया हम गिरजा को संतुष्ट करि आए हैं तुम जाइ कर ल्यावो तब रिषों को उहां छोड के हिमवंत गया अरु रिषो के संदेस द्वारा बिनै करी तब पारबती गृह आई जब उमा को गृह आइ देखा ॥ १ ॥

बहुरि सप्तरिषि सिव पहि जाई । कथा उमा कै सकल सुनाई ॥ २ ॥

भये मगन सिव सुनत सनेहा । हरषि सप्तरिषि गवने गेहा ॥ ३ ॥

शिवजी उमा के सनेह मैं मगन भए अरु दोनो ओर की रुचि उमगि देखि कै प्रसन्नता पूर्वक रिषि बिधि लोक को गए ॥ ३ ॥

मनु थिर करि तब संभु सुजाना । लगे करन रघुनायक ध्याना ॥ ४ ॥

तब चित वृत को निरोध कर के शंकरजी समाधस्थित भए जाते सुजान है अर्थ यह जिस समै जो किया चाहिए तिस सों चूकते नहीं ध्यान पर होवणा का भाव यह बहुत बात सुनने सुनावणे कर संमित

भया है ताते एकाग्र किया वा बडो की रीति है किसी बात का बडा हरष होवे तब भगवंत के ध्यान परायण होना जाते हर्ष के अंत सोक का भै है किंवा जैसे सीत उष्ण में बड़े लोग गुप्त मंदिरों में बैठ कर सुख भोगते हैं तैसे हरष सोक के समै संतजन भगवंत के ध्यान रूपी गुह्य भवन में इस्थित होते हैं ॥ ४ ॥

तारकु असुर भयेउ तेहि काला। भुजप्रताप बल तेज बिसाला॥ ५॥

तारक असुर की भुजा के बल अरु प्रताप कहिये जिस पर शत्रु का तेज न परै तेज कहिये अपणा नाम सबों पर पड़ें यह सब गुन तिस में अधिक ॥ ५ ॥

तेइ सब लोक लोकपति जीते। भये देव सुष संपति रीते॥ ६॥

रीते कहिये खाली अपर सुगम ॥ ६ ॥ टिप्पणी—पाठांतर सुष के स्थान सब पाठ।

अजर अमर सो जीति न जाई। हारे सुर करि बिबिध लराई॥ ७॥

तिस ने सुधा पान किया था ताते अजर अमर भया देवत्यो ने अनेक भांत के संग्राम किए परंतु जीता न जाय ॥ ७ ॥ टिप्पणी—बिविध लड़ाई अर्थात् साम दाम दंड भेद।

तब बिरंचि सन जाइ पुकारे। देषे बिधि सब देव दुषारे॥ ८॥

दोहा—सब सन कहा सुनाइ बिधि, दनुजनिधन तब होइ।
संभुसुक्रसंभूत सुत, एहि जीतै रन सोइ॥ ८२॥

ब्रह्माजी कहा इस दनुज के नास हेतु शंभु के बिर्ज से उपजेगा स्यामकारतक तौं यह मरेगा जौं सुर कहें शंकरजी की नारी जलमुई है अब वह समाधीस्थित हैं पुत्र कैसे उपजेगा तिस पर पितामा जी कहत हैं ॥८२॥

मोर कहा सुनि करहु उपाई। होइहि ईस्वर करिहि सहाई॥ १॥

मेरे कहे अनुसार तुम उद्योग करो देव की सहाइता कर कारज होवेगा जौं कहो क्या उपाउ तौं सुनो ॥ १॥

सती जो तजी दच्छमष देहा। जनमी जाइ हिमाचलगेहा॥ २॥
तेइ तप कीन्ह संभु पति लागी। सिव समाधि बैठे सब त्यागी॥ ३॥
जदपि अहै असमंजस भारी। तदपि बात एक सुनहु हमारी॥ ४॥

जद्यपि यह बात अति अणबनती भासती है जो महादेव ने नारी त्याग का प्रन कर के समाध करी है तिन की समाधि खुलावनी अरु तिन का बिवाह करावना परंतु इन दोनों बातों की सुगमता में तुमै कहता हौं ॥ ४ ॥

पठवहु काम जाइ सिव पांही। करै छोभ संकर मन मांही॥ ५॥
तब हम जाइ सिवहि सिर नाई। करवाउब बिबाह बरिआई॥ ६॥

तुम मदन को पठावो वह शंकरजी को उथान करावैगा तब हम जाइ के जिस किस भांति बिवाह करावैंगे ॥ ६ ॥ टिप्पणी—छोभ = चोभ अर्थात् चलायमान।

इहि विधि भले देवहित होई। मत अतिनीक कहै सब कोई॥ ७॥

इस भांति अमरों का अतिसुभ होइगा अरु इस मत को भी लोक सराहेंगे जौं किसू ने भली रीति बिचारी है॥ ७॥

अस्तुति सुरन कीन्ह अस हेतू। प्रगटे बिषम बानझषकेतू॥ ८॥

इस निमित्त जब बिबुधो ने प्रशंसा करी तब विषमवान कहिये जो सभी के मन को विषमता करनवाला है वा कठिन होहिं जिस के बान ऐसा मीनकेत है को सो प्रगट भया॥ ८॥

दोहा—सुरन कही निज बिपति तब, सुनि मन कीन्ह बिचार।
संभु बिरोध न कुसल मोहि, बिहँसि कहेउ अस मार॥८३॥

सुरों की आपदा सुनिकर मदन ने प्रमारथक यह विचार किया जो इन्हों का दुख मिटावन का उपाव मुझ से होवे तौं सुभ है परंतु शंभु कहिये जो सभो के कल्यान करता हैं तिस के विरोध कर मुझे कुशल न होइगा इह बात हंस कर कही हांस का भाव यह काम आनन्द स्वरूप ही हैं वा आपणी सूरता के गर्व से हंसा जो इहकेता एक कारज है किंबा सुरन की स्वारथ परायणता को हंसा सरब स्वारथ पर लोको न वेद परयातना सभ लोक स्वप्रयोजन परायण हैं पर पीडा को नहीं जानते किंच जौं मेरी मृत्यु होवेगी तौं तुम भी भोगोंगे के सुख को न प्राप्ति होवोगे इस कर बिहंसा किंच देखो बिबुधन की बात आप पीछे रहे हैं शंकरजी को उरधरेता अरु मो को उस परव्य से प्रतिकूल जान कर मुझे ही सभों ने प्रेर्या है अथवा मैं भी तौ मन में किसों को अपणे सदृस नहीं था गिनता परंतु मुझे भी इनो ने ऐसे स्थान में सन्मुख किया है जहां ते जीवता बचो तद भी भला है। ननु। इस ते सोक चाहीता था। उत्तर। जोधा है इन को प्रतिभट देख देख कर हर्ष होता है प्रमाणगीता हतोवाप्राप्स्यसिस्वर्गं जित्वा वा मोक्ष से मही। सूरो को इस कर हरष होता है मुए तौ स्वर्ग भोगेंगे जीत भए तब राज करेंगे अब उन को धैर्य देता है॥ ८३॥

तदपि करब मैं काज तुम्हारा। श्रुति कह परम धरम उपकारा॥ १॥

यद्यपि मुझ को असुभ होइगा तो भी तुमारा काम करोंगा जाते सुतो ने पर उपकार की बडी महिमा कही है॥ १॥

परहित लागि तजै जे देही। संतत संत प्रसंसहि तेही॥ २॥

पर उपकार निमित्त जिस का देह छूटा है सो निरंतर संत हूं कर अस्तुति जोग होता है॥ २॥

अस कहि चलेउ सबहि सिर नाई। सुमनधनुष कर सहित सहाई॥ ३॥

सभों को सिर इस कर नवाया जुद्ध को मैं चला हौं क्या जानिये जीवते आवना है की नहीं वा सभों ने कृपा कर मेरी सहायता करनी किंबा अर्थ और करनी सभनो का सिर नवाइ कर क्या सभ के लज्जित कर चला जो तुम से तो बात रही है मैं जाता हौं वा यह अर्थ नर हूं की उर लगावना सभों

का सिर नवावना यह सर्व लोगों के जपों तपों का गरबखंडन कर दिया सो आगे कहना है ।। ३ ॥
टिप्पणी—रौशनलाल ने निम्न लिखित अर्थ लिखा है। सुमन फूल का धनुष हाथ में लेकर फूल का धनुष इसलिये ये कहा है कि वही उस का शस्त्र है पाठांतर करके स्थान शर है।

चलत मार अस हृदय बिचारा। सिवबिरोध ध्रुव मरन हमारा ॥ ४ ॥

शिवजी के विरोध कर ध्रुव कहिये निश्चै मरणा इस निमित्त विचारणा मेरा है तामसी राजसी स्वरूप अरु शिव हैं परम शांत स्वरूप सो सात्वकीवो की अवज्ञा कर तामसीवों का विनास होता है प्रमाण। साधसज्जन संतापात्किमाश्चर्यं कुल क्षयः संतो को संताप देने से कुल का खै होणा आश्चर्य नहीं पुन. प्रमाण। श्री गुर ग्रंथे जो जो करे अवज्ञा जन की होइ गइ आतत क्षार ॥ ४ ॥

तब आपन प्रभाव बिस्तारा। निजबस कीन सकल संसारा ॥ ५ ॥
कोपेउ जबहि बारिचरकेतू। छन महु मिटे सकल श्रुतिसेतू ॥ ६ ॥

आसंका। बारचर केतु पद से तौ अर्थ सिद्धि भया मकरध्वज सो मीन को मनोज ने केतु में किस निमित्त राख्या है। उत्तर। जैसा कोई होता है तैसे सो संबंध करता है। सो मनसिज चंचल अरु पताका भी चपल ताते मीन को भी चंचल जानके तहां राख्या है। ननु। मीन के और नाम है अरु काम के भी और नाम है इहां बारचर केतु हीं किस अर्थ कहा। उत्तर। स्रुतिसेतु मिटावने के संबंध कर कहा जाते जल अधः पथगामी है तिस संबंधी मीन भी नीच पथगामी भए सो नीच मीन जिम पतित राजा संकेत मै इस्थित करे प्रयोजन यह जहां अधमां का ऐसा उदै होइ तहां स्रुतिसेतु का अस्तहोना क्या आश्चर्ज है किंवा और जलजंतु जल से बिना भी रहते हैं अरु मीन जल से भिन्न नहीं रहता सो जब मत्स केतु में भया तौ जलध्वजा प्रयंत चाहिये जहां एता जल चढा तब सेतु मिटी दाष्टांत यह जहां अत्यंत काम का वेग भया तहां मर्यादा सभी उलंघी जाती है सोई देखावते हैं ॥ ६ ॥

ब्रह्मचर्य्य ब्रत संजम नाना। धीरज धर्म ज्ञान बिज्ञाना ॥ ७ ॥

टिप्पणी—दोहा—सर्व त्याग संकल्प रति, तन्मय गुप्त बिचार। कीर्त्तन सुमिरन देखिबो, मैथुन अष्ट प्रकार॥ ब्रह्मचर्य बृति अर्थात् आठ प्रकार के मैथुनों से रहित होना। दर्शनं स्पर्शनं केलिः रहस्यं गुह्य भाषणं ॥ संकल्पोऽध्यवसायश्च क्रिया निर्वृत्ति रेवच। एतन्मैथुन मष्टांगं प्रवदंति मनीषिणः। संयम इन्द्रियों का रोकना धीरज शांत ज्ञान जो शास्त्रों में लिखा है विज्ञान अनुभव ॥

सदाचार जप जोग बिरागा। सभय बिबेक कटक सब भागा ॥ ८ ॥
छंद—भागेउ बिबेक सहाइ सहित सो सुभट संजुगमहि मुरे।

सैना सहित विवेक भाग्या अरु सत संतोषादिक जो श्रेष्ट सुभट थे सो भी संजुग महि कहिये संग्राम मही से मुड़े प्रयोजन यह मिथ्या अरु लोभादिकों ने ऐसा बल पाया दैवी संपदा को सभों के रिदे से निकास दिया।

सदग्रंथ पर्बत कंदरन्हि महु जाइ तेहि अवसर दुरे ॥

श्रेष्ट जो ग्रंथ हैं सो भी परबतहुं की कंदरा महं जाइ रूपे प्रयोजन वह इन की पुस्तक रूप तो है परंतु देहधारी भी हैं सो रूप गए अथवा बिबेक के जो सुभट भागे सो देवे रूपीपरवतों कीयां रिचा रूपी कंदरा विषे जाइ लीन भए तत्व यह बिवेक की बात पुस्तकों में लिखी रहगई प्रगट कही नहीं रहा।

होनिहार का करतार को रषवार जग षरभर परा।
दुइ माथ केहि रतिनाथ कह जेहि कोपि कर धनु सर धरा ॥

जगत में खरभर कहिये बडा सोर परा अरु लोक कहते हैं हे देव अब क्या होवैगा हमारा कौन रक्षक है अरु एक सिर वाला तों सबहीं इस ने बस किए हुए है अब जो धनुष बान पकर कर रिस सहित चढा है सो युगल सिरहूं वाला कौन है जिस को बस किया चाहता है ॥

दोहा—जे सजीव जग चर अचर, नारि पुरुष अस नाम ।
ते निज निज मरजाद तजि, भये सकल बसकाम ॥८४॥

जौन से सजीव कहिये कृपा सहित जीव जगत मों अस्थावर जंगम है जिन का नाम नारी पुरुष हैं सोअपणी अपणी मरयादा त्याग कर काम के बस भए कृपा सहित जीव कहिए वृक्ष लता तलाव तलावडियां आदिक अस्थावरों मो है अरु इन की कुछ कृपा जंगमों सम भी होती है सोई कहते हैं ॥८४॥

सब के हृदय मदन अभिलाषा। लता निहारि नवहि तरुसाषा ॥ १ ॥
नदी उमगि अंबुधि कहु धाई। संगम करहि तलाव तलाई ॥ २ ॥
जहँ असि दसा जडन की बरनी। को कहि सकै सचेतन करनी ॥ ३॥
पसु पच्छी नभजलथलचारी। भये कामबस समय बिसारी ॥ ४ ॥

खगमृगादिक बिना रित काल त्रिया गमन नहीं करते अरु उनकियां गर्भवती नारीयां भी गर्भपात के भय से नरहुं संग नहीं करतीयां सो उन को भी समै संकेत किसू को स्मृत ना रहे ॥ ४ ॥

मदनअंधव्याकुल सबलोका। निसि दिन नहि अवलोकहि कोका ॥५॥

मदन के बस कर लोक व्याकुल अरु अंधे ऐसे भए जो चक्रवाकों को भी रात्रि दिन का विवेक न रहा। ननु। मदन का बेग तो दो दंड भर रहा रात्रि दिन का बिचार चक्रवाकों को कैसे बने। उत्तर। वह दो घरी रात्री की होवैगी किंबा भानु को गति कर किसी पुरी में प्रात होता है अरु किसी मे सायंकाल किसी में मध्यान कहूं निस थी ऐसे भागवत मों कहा है तिस करभी जहां रात्रीथी तहां यह बात बनी॥५॥

देव दनुज नर किन्नर व्याला। प्रेत पिसाच भूत बेताला ॥ ६ ॥
इन्ह कै दसा न कहेउ बषानी। सदा काम के चेरे जानी ॥ ७ ॥
सदा बिरक्त महा मुनि जोगी। तेपि कामबस भये बियोगी ॥ ८ ॥

वियोगी कहिये विगत योग अपर स्पष्ट ॥ ८ ॥

छंद—भये कामबस जोगीस तापस पामरन की को कहै ।
देषहिं चराचर नारिमय जे ब्रह्ममय देषत रहै ॥
अबला बिलोकहिं पुरुषमय जग पुरुषसब अबलामयं ।
दुइ दंड भरि ब्रह्मांड भीतर काम कृत कौतुक अयं ॥

पावर कहिये अधम । दंड कहिये घटिका अयं कहिये यह अपर स्पष्ट ।

सोरठा—धरी न काहू धीर, सब के मन मनसिज हरे ।
जेहि राषे रघुबीर, ते उबरे तेहि काल महँ ॥ ८५ ॥

तुलसीदासजी वालमीकजी के अवतार हैं तातें इन को दिव्यदृष्टि है सभी चरित्र देखकर कहते हैं अरु इस प्रसंग में यह बात प्ररमपरा कर सुनी है जब यह प्रथमचरण सोरठे का उचारन किया तबपरम असमर्थ मान कर कंठ गदगद भया नेत्रों में जल चलनेलागा अरु तुमनी भए ताही समैं इन को अपणे दास जान कर दुतीयचरण हनुमानजी ने लिख दिया । महाबीरजी के इस लिखणे का भाव यह भासत नहीं जिन को श्रीरामचंद्र राखे सो बचते हैं किंवा इहां कहा काम ने किसी का गरब न छोडा अरु इनों पर मनसिज का बल नहीं पडता जो इनो के रक्षक श्रीरामचंद्र हैं इस कर कहा जो राखे रघुबीर अथवा हनुमंतजी शिवजी का अवतार हैं अरु काम का उद्योग भी शंभुजी की उर था तातें कहा ते उबरे तेहि काल महं अर्थ यह शंभुजी निरविकार रहे ॥८५॥ टिप्पणी—रोशनलाल ने हरे के स्थान में हये पाठ लिखकर निम्नलिखित अर्थ किया है । इस प्रसंग में ज्ञान और कर्म और उपासना का वर्णन है जिन तीनों को बेद में प्रधानता है सो इन तीनों में से बिबेक अर्थात ज्ञानसहाय सहित पहलेभागा और सुभट अर्थात् कर्म कांड समरभूमि में ठहर के शत्रु से जुटकर वह भी मुरगया सो कहते हैं काहू ने धीर न धरी और सब के मन को मनसिज अर्थात् कामने हये अर्थात् बधकर डाला तिस समय उपासना बची जिस को रघुबीर ने राख लिया ।

उभय घरी अस कौतुक भयऊ । जब लगि काम संभु पहँ गयऊ ॥ १ ॥
सिवहिं बिलोकि ससंकेउ मारू । भये जथाथिति सब संसारू ॥ २ ॥

शिवजी को देख कर काम भेवान भया तब पीछे के लोकों को पूर्ववत विश्राम भया जैसे कोऊ उग्र राजा देसो को लूटता लंघता है अरु जब किसी दुरगम गढ के साथ जाइ अटकता है तब मारग के लोगों को आराम होता है तैसेहीं ॥ २ ॥ टिप्पणी—संसकेउ = डरा और मारू = काम ।

भये तुरत जग जीव सुषारे । जनु मद उतरि गये मतवारे ॥ ३ ॥

मानो मद की मस्ती उतर गई है अरु मतवारे कहिये लोग बुद्धिवान भए ॥ ३ ॥

रुद्रहि देषि मदन भय माना । दुराधर्ष दुर्गम भगवाना ॥ ४ ॥

रुद्र को देख कर काम भैभीत भया कैसे हैं भगवान दुराधर्ष कहिये कठिन है जिन के बल का धारना अरु जिन के कोप का संहारना अरु दुरगम कहिये जिन की समाध का चलावना कठिन है जो कहो शिवजी को दुराधर्ष अरु दुरगम जानकर काम हटजाइ तिस पर कहते हैं ।। ४ ।।

फिरत लाज कछु कहि नहि जाई । मरन ठानि मन रचेसि उपाई ॥ ५ ॥

जो मुख मोडें तो लज्जा लागती है जाते बडा सूर है आगे प्रतिभट पर कछु बल नहीं चलता ताते अपणो मृत्यु निश्चै करि कै समाध खुलावणे का उपाव किया ॥ ५ ॥

प्रगटेसि तुरत रुचिर ऋतुराजा । कुसुमित नवतरु जानबिराजा ॥ ६ ॥

तब बसंत प्रगटकिया जिस कर सर्व वृच्छ प्रफुलित अरु सुंदर भए अरु तिस बन के बीच जान कही विमान शोभा पावते भए अथवा जान नाम हिंडोल्यो का है सो वृच्छो साथ बांधे हुए सोभते हैं तिन पर चढ कै अपसरा झूलतीआं हैं ॥ ६ ॥ टिप्पणी—जान के स्थान सषा पाठ है ।

बन उपबन बापिका तडागा । परम सुभग सब दिसाबिभागा ॥ ७ ॥

जँहँ तँहँ जनु उमगत अनुरागा । देषि मुएहु मन मनसिज जागा ॥ ८ ॥

छंद—जागेउ मनोभव मुयेहु मन बन सुभगता न परै कही ।
सीतल सुगंध सुमंद मारुत मदन अनल सिषा सही ॥

मृतको के मनो मैं जागा जो कहा है सो काम प्रभाव कथन निमित्त अतिस्योक्ति है वा जिनो ने समदमादिको कर मन इंद्रियों को मृतक सम कर छोड्या था तिन के मन विषे भी मनमथ जागा ऐसी बन की सुंदरता भई जो कथन मों नहीं आवती तृविधि समीर चलती है सो मानहुं काम रूपी अग्नि की सिखा है प्रयोजन यह काम को विशेष जगावनेवाली है सषा पाठ अर्थ मनोजरूपी बन्हिका मित्र है साचा जाते संग्राम काल मों संगहोता है ॥ टिप्पणी—मनमथ = काम ।

बिकसे सरन्ह बहु कंज गुंजत पुंज मंजुल मधुकरा ।
कलहंस पिक सुक सरस रव करि गान नाचहि अपछरा ॥

सरों मो कमल बिगसे हैं अरु तिनों पर सुंदर भमर गुंजारते हैं सुंदर जो हंस कोकिला है सो रसीले शब्द करते हैं अरु अपसरा नाचतिआं गावतिआं हैं ॥

दोहा—सकल कला करि कोटि बिधि, हारेउ सेन समेत ।
चलो न अचल समाधि सिव, कोपेउ हृदयनिकेत ॥ ८६ ॥

सकलकला कहिये अप्सरा ने बोजन कर सुगंधजलबरषावने इत्यादिक जो कामकिया असंख सक्ता है सो करके मदनहारया जाते स्थाणू की समाध न खुली तब हृदय निकेत कहिये मनसिज सो कोप्या ॥८६॥

देषि बिसाल बिटपबरसाषा । तेहि पर चढेउ मदन मन माषा ॥ १ ॥

शिवजो के बटके समीप आम्र का वृक्ष था तिसकिआं सुंदर साखा देख कर मन मों कोप कर तिस पर मदन चढा जाते उंचे अस्थल के प्रहार कर शस्त्र घाव अधिक करता है ऐसे भी जान्या जब शिवजी जागेंगे तब इसो वृक्ष में छप भी जावोंगा ॥ १ ॥

सुमनचाप निज सर संधानै। अतिरिसि ताकि श्रवन लगि तानै ॥ २ ॥

पुष्पों के धनुष बिषे पांचो सायक साधे अरु शंभुजी का रिदा ताक कर अति कोप सो कान प्रजंत खैचे बान। अरविंदमशोकं च चूत्त्व नवमल्लिका। नीलोत्पलं च पञ्चैते पञ्चबाणस्य सायकाः॥ रक्त कमल असोक पुषप आंब मौर चबेली सुमन इंदी बर यह पांचो पुष्प काम के बान है सो ॥ २ ॥ टिप्पणी—दोहा—बसीकरण मोहन कहत, आकर्षण कवि लोग। उच्चाटन मारन समुझि, पंचबाण ये योग ॥१॥ पुनः। करना कैतकि केवरा, कदन आम को बौर। ए पांचौसर काम के, केशवदास न और ॥ २ ॥

छाडेउ बिषम बिसिष उर लागे। छूटि समाधि संभु तब जागे ॥ ३ ॥

भयउ ईसमन छोभ बिसेषी। नयन उघारि सकल दिसि देषी ॥ ४ ॥

सौरभपल्लव मदन बिलोका। भयउ कोप कंपेउ त्रयलोका ॥ ५ ॥

सौरभ नाम आम्र का प्रमाण अमरे। आम्रश्चूतो रसालोसौमहकारोतिसौरभः। तिस के पत्र के बीच छपा हुआ मदन देख्या तब ऐसा कोप किया जिस कर ब्रह्मांड कांप गया ॥ ५ ॥

तब सिव तीसर नयन उघारा। चितवत काम भयेउ जरि छारा ॥ ६ ॥

दृष्टि से मारणा का भाव यह महादेव ने बिचारा इस तुछ पर शस्त्र क्या प्रहारणा है अथवा यह अमरों का पठायाहुआ है अरु आयुद्ध चलने से लोकों में सुरों सो युद्ध की प्रतीतिहोवेगी अरु मारणा इसको चाहीता है जाते अपराधी है सो महादेव का एक नैन सूर्य्य एक चंद्रमा एक अग्नि तिस को अग्नि रूपी नैन सो छार किया अथवा एक नेत्र उतपति एक इस्थिति एक संघार सो संघार रूपी नेत्र सों जलाया॥६॥ टिप्पणी—भाल के नेत्र से मारा। कवितावली में लिखा है। निठुर निहारिये उघार दीठ भाल की। वा काम तीसरा है अतएव तीसरा नैन खोला। यथा अर्थ धर्म काम।

हाहाकार भएउ जग भारी। डरपे सुर भये असुर सुषारी ॥ ७ ॥

सुरों के डरने का भाव यह हमारा भेज्या हुआ काम भवने जलाइ दिया है हमारे पर क्या होइगा अरु इसी कर असुर सुखी हुए जो देवत्यो ने हमारे निमित्त कुमंत्र ठाटेआ था सो उन हीं के घर पडा अथवा सुरासुर के सोक हरख मे काम का जलनाहीं कारण है जाते मदन के जलने से स्वामिकारतक के जन्म का अभाव सिद्ध हुआ तब दैत प्रसन्न हुए जो हमको किस मारणा है अरु देवता भैवान हुए जो हमारी रख्या किस करनी है ॥ ७ ॥

समुझि कामसुष सोचहि भोगी। भये अकंटक साधक जोगी ॥ ८ ॥

छंद—जोगी अकंटक भये पतिगति सुनति रति मूरछित भई।

रोदति बदति बहु भांति करुना करति संकर पहिँ गई ॥
अतिप्रेम करि बिनती बिबिध बिधि जोरि कर सनमुष रही ।
प्रभु आसुतोष कृपाल सिव अबला निरषि बोले सही ॥

प्रभु कहिये समरथ वर स्राप सभ कछु दे सकते हैं आसुतोष जो शिघ्र प्रसन्न होवै जाते क्रोधवंतों के चार भेद हैं जिन को कोप उपजै शीघ्र अरु मिटे बहुत चिर पीछे सो अतिकनिष्ठ है जिन को उपजै बहुत काल कर अरु बिनसै भी अतिदेर कर सो कनिष्ठ है जाके शीघ्र होवै पुनः तातकाल ही लै हो जावै सो मध्यम है जिन के उपजे अत्यंत अवज्ञा कर अरु दीनता देख कर निवृत ततख्यण हो जावै ते उत्तम सो ऐसे परम श्रेष्ठ सदा शिवजी जिन की मनोज ने अवज्ञा अत्यंत करी अरु रति कौं दुखी देख कर तुरतहीं प्रसन्न भए कृपाल इस कर मनमथ कौं श्रीकृष्णजी के पुत्र होने का बर दिया शिव कहि कहिये मंगल रूप जिनो ने सकल जगत में काम के राखणे कर मंगल किया जाते मनसिज होए तो संतान को उतपतादिक आनंद जगत में होहिं सो अबला को देखकर सत्यवाक्य बोले अबला नाम इहां इस कर कहा नारी जातहीं निरबल हैं तिस पर विधवा फेर अपने शत्रु की स्त्री रुदन करती अरु जिनो सावीत्री आदिकों ने तप के बल कर सूर्योदै नहीं होवणादिया तिन सम प्रत्युपकार करणे को भी समर्थ नहीं इत्यादिक प्रकारों सो अतिदीन देखी तब कृपाल होकर बर दिया ॥

दोहा—अब ते रति तव नाथ कर, होइहि नाम अनंग ।
बिनु बपु ब्यापिहि सबहि पुनि, सुनु निज मिलन प्रसंग ॥ ८७ ॥

हे रति मेरे कोप कर जले जो तव नाथ के अंग हैं सो तो नहीं उपजते परंतु आज से इस का नाम अनंग होवैगा अरु अंगो से बिनाहीं सकल विश्व का बिवहार पूर्ववत साधेगा जौं वह कहै तुमारी प्रसन्नता का मुझे क्या लाभ भया तिस पर कहते हैं तू अपने संजोग का प्रकार भी सुन ॥ ८७ ॥

जब जदुबंस कृष्णअवतारा । होइहि हरन महा महिभारा ॥ १ ॥
कृष्णतनय होइहि पति तोरा । बचन अन्यथा होइ न मोरा ॥ २ ॥

टिप्पणी—कृष्णतनय प्रद्युम्न जो काम के अवतार हैं ।

रति गवनी सुनि संकरबानी । कथा अपर अब कहौं बषानी ॥ ३ ॥

शंकरजी के वचनो पर प्रतीत करके रति तौ निज गेह कौं गई है हे भरद्वाज अब दुतीयबार का प्रसंग सुनो ॥ ३ ॥

देवन समाचार जब पाये । ब्रह्मादिक बैकुंठ सिधाये ॥ ४ ॥
सब सुर बिष्णु बिरंचि समेता । गए जहाँ सिव कृपानिकेता ॥ ५ ॥

कृपानिकेत विशेषण का भाव यह पूर्व रति पर कृपा करी है अब ब्रह्मादिको पर करनी है ॥ ५ ॥

पृथक् पृथक् तिन्ह कीन्ह प्रसंसा । भए . प्रसन्य चंद्रअवतंसा ॥ ६ ॥

सभों सुरों कृत भिन्न भिन्न प्रशंसा सुनि कै चंद्रम्रवतंसा कहिये चंद्रमा जिन के सिर का भूषण है भाव यह मनोरथों की अप्राप्त रूपी तपकर तपेहुए जो जीव हैं तिन को संतुष्टकरणेहारा हैं सो प्रसन्न भए ॥ ६ ॥

बोले कृपासिंधु वृषकेतू। कहहु अमर आये केहि हेतू॥ ७ ॥

कृपासिंधु जो वृषकेतु हैं सो कहत भए हे अमरो किस निमित्त आए हो कृपासिंधु कथन का भाव यह विबुधो पर अतिदया करी वृषकेतु कथन का भाव यह धर्म रूपी बैल जाकी ध्वजा मों है तत्व यह धर्म के पालक है सो देवत्यों का धर्म राखण निमित्त बोले। ननु। विष्णुजी सभ का परा अरु शंकरजी का ध्येय तिन के आए शिवजी ने उत्थानादिक आदर न किया अरु सभों को साधारण अमर पद दे के पूछा अरु ग्रन्थकार ने भी महादेव की विशेषता राखी जो कृपासिंधु अरु वृषकेतु है विशेषण दिए इस का आसै क्या। उत्तर। इहां ग्रंथकार का आसै ऐसे प्रतीत होता है शंकरजी ने इस ग्रंथ मों रघुबीरजी को सभ का परा परमतत्व स्वरूप कर कहा है। पुरुष प्रसिद्ध प्रकासनिधि प्रगट परापरनाथ। इत्यादिक अरु पुराणों के वचनो कर भी एही निश्चै होता है जहां पार्वती ने शिवजी कों कहा है मैं विष्णुसहस्रनाम नित नेम सो जपकर भोजन पावती हौं तौं शंभु ने कहा। श्लोक। रामरामेतिरामेतिरमेरामेमनोरमे। सहस्रनामतत्तुल्यंरामनामवरानने॥ पुराणांतर वाक्यरकारादीन नामानि मृन्वतोममपार्वती। मनः प्रसन्नतामेति रामनामाभिसंकया। रामतापनीउपनिषद् भी कहा है प्राणिवो के अंत समय वारनसी विषे शिवजी रामषडाक्षर तारक मंत्र उपदेश करते हैं इत्यादि प्रमाणो कर सिद्ध भया शिवजी की उपासना श्रीरामचंद्र विषेही हैं। ननु। उपास्य रूप नहीं थे तौं सम जाण कर भी आदर करना था। उत्तर। समता का कथन भी इहां नहीं बनता जाते शंकरजी से विष्णु अरु विरंचि की उतपत्ति माननी है ताते विशेष आदर न किया जौं कोऊ कहै भागवत में रुद्र की उतपत्ति ब्रह्मा से कही हैं तौं शिव परमेश्वर हैं अरु रुद्र उन का अंस है सो अपने अंसो कर शिवजी कई स्थानो में अवतार करते हैं एक ब्रह्माजी के भी किया इस में क्या हान हैं जौं कोऊ कहै विष्णुजी को अरु ब्रह्माजी की उतपत्ति शिवजी से इस पर कौन प्रमाण है तौ नीलकंठभाष्य विषे लिखा है। सदाशिवशब्दमूर्तिःस्पर्श मूर्तिरथेश्वरः। रुद्रस्तेजोमयः साक्षात्रस मूर्तिर्जनार्दनः॥ गंधमूर्तिश्चतुर्वक्त्रः इत्येतः पंचमूर्तयः। परमेश्वर में सदा शिवात्मक आकास भया सदा शिवात्मक आकास ते ईश्वरात्मक वायु भया ईश्वरात्मक वायु से रुद्रात्मक तेज भया रुद्रात्मक तेज से विश्वात्मक रस भया विष्णात्मक जल से ब्रह्मा स्वरूप पृथ्वी भई इस प्रकार सदा शिवजी से ब्रह्मा विष्णुजी की उतपत्ति अरु रुद्र की अंस भूतता कही पुनः। लिंग पुराणे। युवांप्रसूतौगाबाभ्याममपूर्वमहाबलं। अयंमेदक्षणेपारस्वे ब्रह्मालोकपितामहः॥ वामपारस्वेचमेविष्णुः बिस्वात्मारिदयोद्भवः एक समै विष्णुजी का अरु ब्रह्माजी का विवाद भया तब शिवजी ने यह वाक्य कहे तुम दोनों जो महाबली हौ तुम को प्रथम मैंहीं अपने अंगो सो उपजावता भया हौं जो ब्रह्मलोक पितामा मेरे दख्यण अंग से हुआ है अरु विस्वात्मा जो विष्णु हैं सो मेरे बाम अंग रिदे से भया है पुनः। पद्मपुराण विषे शिव सहस्र नाम है तहां भी इसी क्रम से ब्रह्मा विष्णुजी की उतपत्ति कही है इत्यादिक प्रमाणो कर ब्रह्मा

अरु विष्णुजी के सनमान न करणे मो दोष नहीं अरु यह समाधान इहां ग्रंथकार का आसा लख कर इस निमित्त किया है जो अपणी समुझ मै इस आसंका का और प्रकार उद्धार नहीं था होता कै विष्णुजी तौं हमारे ध्येय हैं अरु हम को तीनो देवो मो अभेदता है अरु इस में विशेष उत्तर किसू की मत मों आवै तौं भी प्रमाण हैं अब ॥ ७ ॥

कह बिधि तुम्ह प्रभु अंतरजामी । तदपि भक्त बस बिनवौं स्वामी ॥ ८ ॥

हे प्रभु जद्यपि तुम अंतरयामी हो तद्यपि भक्तों के अधीन हो ताते हम बेनती करते हैं अरु भागवत वाली आसंका इहां अति निवृत भई जो बिरंचि ने शंभु विषे प्रभु पद दिया अरु आप को बिनै करता भक्त मानिआ अरु आगे नाथ संबोधन दे के कहते हैं ॥ ८ ॥

दोहा—सकल सुरन्ह के हृदय अस, संकर परम उछाहु ॥
निज नयनन्हि देषा चहहिँ, नाथ तुम्हार बिबाहु ॥ ८८ ॥

जौं शंभु कहै औरों सुरों का वाछिंत है हमारे बिवाह देखण का कै तुमारा भी है तिस पर कहते हैं॥८८॥

यह उत्सव देषिअ भरि लोचन । सो कछु करहु मदनमदमोचन ॥ १ ॥

हे मदन के मदमोचक जिस भांति तुमारे बिवाह का उत्साह हम भी दृगों से देखें सो उपाव तुम करो। ननु। प्रार्थना करी शिवजी के आगे बिवाह निमित्त तहां काम का उदै कहणा बनता था अरु विशेषण दिया मदनमदमोचन इस का भाव क्या। उत्तर। बिवाह मदनमदमोचन हैं जाते कामरूपी अग्नि के निवारने का उपाव है अरु मदन का मद यह है सुकीय प्ररकीय इस्त्री में संका ना करनी अरु जब संजमजुत एक नारी ब्रत हुआ तब मदन का मद निवृत हुआ। ननु। इत्यादिक धर्म ईश्वरों मो नहीं बनते। उत्तर। इस का अर्थ पदछेद कर और भी है मदन कहियै जिस को मद न होइ किसी गुण का मो गुणातीत सदाशिव अरु और जो तिन की सरणी आवै तिन के मद मोचक है वा सलेखानुसार एक उकार अधिक मानकर अछरों का विवेक इस प्रकार करना मदनु मकार माता का वाचक है अर्थ यह माता है जिन की दनु ऐसे जो दानव हैं तुम तिन के मद मोचक हो ताते तारक का भी मद नास करो किंवा मकार ममता का वाचक है अरु दनु जद्यपि दानवो की माता का नाम है तद्यपि संबंधकर पुत्र का नाम भी बन जाता है जैसे पिता का नाम भृगु है अरु शुक्र का नाम भी भृगु है सो तुम ममतारूपी दानौ के मद कौं मोचनहारे हो ताते तारक का मद निवारन केती इक बात है जौं शंभु कहै हम ने तौं काम को हीं जलाइ दिया है तिस पर कहते हैं ॥ १ ॥

काम जारि रति कहु बर दीन्हा । कृपासिंधु यह अतिभल कीन्हा ॥२॥

काम का जलवना तो उचित था जो अपराधी था हे कृपासिंधु रति को बर देने मों अति भला किआ तत्व यह सृष्टि को उत्पति बनी रही अरु ॥ २ ॥

सासति करि पुनि करहि पसाऊ । नाथ प्रभुन्ह कर सहज सुभाऊ ॥ ३ ॥

मूढहूं को ताडना करनी पुनः सरनागत देखकर कृपा करनी यह बडो का नेम है ॥ ३ ॥

पारबती तप कीन्ह अपारा। करहु तासु अब अंगीकारा॥ ४॥

पारबती पर भी ताडना बहुत भई है अब कृपाकर तिस कों अंगीकार करो॥ ४॥

सुनि विध.बिनै समुझि प्रभु बानी। ऐसेइ होउ कहा सुष मानी॥ ५॥

इहां बिधि पद से सभी सुर समुझने ब्रह्मादिकों की बिनय सुनिकर अरु प्रभु कहिये श्रीरामचंद्र तिनो ने जो पूर्व पारबती का वरना प्रमान कराया है तिस बारता को भी समुझि कहिये सिमरणकर कै सुख सिंधु ने कहा तथास्तु इस कथन कर पूर्वोक्त की अनिपुष्टता भई जो बिधि के मुख में शंभु प्रति बिनै कही अरु रामचंद्र मैं प्रभु पद दिया॥ ५॥

तब देवन दुंदुभी बजाई। बरषि सुमन जय जय सुरसांई॥ ६॥

तब देवत्यो ने आनंद के शब्द बजाए अरु पुष्प बरषाए॥ ६॥

औसर जानि सप्तऋषि आए। तुरत हि बिधि गिरिभवन पठाए॥ ७॥

अवसर जानने में रिखों का भाव यह आगे एक बार शंकरजी के प्रेरे हुए हम उमा अरु हिमवंत पास हो आए हैं ताते इस अवसर मों भी हमारा हीं जाणा बणता है जो गिरिजा को आनंद की खबर देवैंगे॥ ७॥ टिप्पणी—बिधि गिरि के स्थान हिमगिरि पाठ है।

प्रथम गए जहँ रही भवानी। बोले मधुर बचन छल सानी॥ ८॥

जहां उमा थी तहां प्रथम गए दरसन निमित्त अरु परिख्या निमित्त भी तब मधुर छल बचन सो मिश्रित बोले मधुर छल कहिये वास्तव छल नहीं उस की परिख्या दृढता निमित्त है॥ ८॥

दोहा—कहा हमार न सुनेहु तब, नारद कर उपदेस।
अब भा झूठ तुम्हार पन, जारेउ काम महेस॥ ८९॥

सुनि बोली मुसुकाइ भवानी। उचित कहेउ मुनिवर बिग्यानी॥ १॥

भवानी के मुसकावन का भाव यह रिषों का मरम लखेआ जो वह पूर्ववत् तहां शंकर कहते हैं वा गिरिजा के हास रिषों के निरादर मो है हेमुनीश्वरो तुम भले ज्ञानी हो तुम को ऐसे कहणा उचित है जौं कहो हम ने काम के दग्ध होणे मों झूठ क्या कहा है तौं सुनो॥ १॥

तुम्हरे जान काम अब जारा। अब लगि संभु रहे सबिकारा॥ २॥

हमरे जान सदा सिव जोगी। अज अनबद्य अकाम अभोगी॥ ३॥

अज कही अजन्मा अनबद्य कहिये शुद्ध अपरस्पष्टं॥ ३॥

जौं मैं सिव सेयेउं अस जानी। प्रीति समेत करम मन बानी॥ ४॥

तौं हमार पन सुनहु मुनीसा। करिहैं सत्य कृपानिधि ईसा॥ ५॥

जौं मैं शिवजी कों अज अनवद्यादिक विशेषणो संजुक्त जान के सेवेआ है तत्व यह केवल कामांध

नहीं सेवैया तो कृपाल ईश्वर हमारा प्रण सत्य करेंगे अर्थ यह मुझे अपनी दासी करेंगे पीछे जो उनो ने हंसकर बचन कहा था काम के जलने कर अब तेरा प्रन मिथ्या भया है तिस के उत्तर निमित्त उन की मूढ़ता को प्रगटावतीहुई कहती है ॥ ५ ॥

तुम्ह जो कहेहु हर जारेउ मारा। सो अतिबड अबिबेक तुम्हारा ॥ ६ ॥

अबिबेक यह है तुम ने काम का जलावन शंभु विषे आरोप्या है जौं वह कहै शिव बिना मदन को किस ने जलाया है तों ॥ ६ ॥

तात अनल कर सहज सुभाऊ। हिम तेहि निकट जाइ नहि काऊ ॥ ७॥
गए समीप सो अवसि नसाई। अस मनमथ महेस कै नांई ॥ ८ ॥

हे तात अग्नि का सहज सुभाव है उस के निकट तुषार ने न जाना अरु जाइ तौ सुभावक ही नष्ट होती है तैसही मनोज कपरदी के निकट नांइ कहिये नहीं आवता तत्व यह शंकरजी ने क्यों मारना था वह आपहीं अवज्ञा कर दग्ध भया है पीछे जो उन को अबिबेकी कहा था तिन के मान निमित्त इहां तात संबोधन दिआ ॥ ८ ॥

दोहा—हिअ हरषे मुनि बचन सुनि, देषि प्रीति बिस्वास।
चले भवानीहि नाइ सिर, गये हिमांचल पास ॥ ९० ॥

सिर नवाया भवानी जान कर किंवा उस की प्रीति देख कर ॥ ९० ॥

सब प्रसंग गिरिपतिहि सुनावा। मदनदहन सुनि अतिदुषपावा ॥ १ ॥

जब हिमांचल ने काम दग्ध होना सुना तौं अति चिंतातुर भए पारवती को संतान की अप्राप्ति जानकर ॥ १॥

बहुरि कहेउ रति कर बरदाना। सुनि हिमवंत बहुत हरषाना ॥ २ ॥

अति हर्ष का भाव यह उमा की संतान की आनन्द हम देखेंगे किंवा शंभु की समर्थ देख कर हरख्या जो हरण भरणादिक सकता सहित स्वामी गिरजा को मिला है सोई कहते हैं ॥ २ ॥

हृदय बिचारि संभु प्रभुताई। सादर मुनिवर लिये बोलाई ॥ ३ ॥

शंकरजी का सर्ब सक्ति प्रभाव सुनि मन मों बिचार कर मान पूर्वक जोतिसबिद्या के जाननेवाले मुनि जो अपने देस मों रहते थे तिन को बोलाया ॥ ३ ॥

सुदिन सुनषत सुघरी सुधाई। बेगि बेदबिधि लगन धराई ॥ ४ ॥
पत्री सप्तऋषिन सो दीन्ही। गहि पद बिनय हिमांचल कीन्ही ॥ ५ ॥

तिथ वारादिक सोधि कै अरु लगन धराई कहिये बिवाह का निरणै करकै रिषों को पत्री दई अरु तिन के चरण पकर कै बिनती कीनी किंवा तिन को कहा मेरी वोर सो ब्रह्माजी के शिवजी इस भांति चरण गहि कर बेनती करनी ॥ ५ ॥

जाइ बिधिहि दीन्ही सो पाती। बांचत प्रीति न हृदय समाती ॥ ६ ॥

लगन बाँचि अज सबहिँ सुनाई । हरषे मुनिवर सुरसमुदाई ॥७॥

पाती पठन कर बिरंचि के बहुत प्रसन्न होने में एक भाव यह पद रचना अति ललित दुतीय बिवाह का लग्न समीप लिखिय यह प्रथमपाती मेरे पास आई है तौं सभ बिवहार भी मेरे हाराहीं होवैगा । ननु । पूर्व ब्रह्माजी को पुत्र कहा है अरु बिवाह का बिवहार बडे साधते हैं इहां यह पद्य कैसे बने । उत्तर । यह ईश्वरों की बात है इस में आसंका नहीं बनती वह तीनो एक रूपहीं हैं जहां जैसा प्रसंग देखा तैसहीं कहा ॥ ६ ॥ लगन बांच कहिये बिवाह का समाचार इतर स्पष्ट ॥ ७ ॥

सुमनबृष्टि नभ बाजहिं बाजे । मंगल सकल दसहुं दिसि साजे ॥८॥

पुष्प बरषाइ के दसो दिसों के लोकपालादिकों ने मंगलद्यौतक साज किए ॥ ८ ॥

दोहा—लगे संवारन सकल सुर, बाहन बिबिधि बिमान ।
होंहि सगुन मंगलसुभग, करहि अपछरा गान ॥ ९१ ॥

सिवहि संभुगन करहिं सिँगारा । जटामुकुट अहिमौर सँवारा ॥१॥

अहिमौर कहिये सरप को सुंदर फन कलगी के इस्थान धरी इतर सुगम ॥ १ ॥

कुंडल कंकन पहिरे ब्याला । तन बिभूति पट केहरिछाला ॥२॥
ससिललाट सुंदर सिर गंगा । नयन तीनि उपबीत भुजंगा ॥३॥
गरलकंठ उर नरसिरमाला । असिव बेष सिवधाम कृपाला ॥४॥
कर त्रिसूल अरु डमरु बिराजा । चले बसह चढि बाजहि बाजा ॥५॥

उपबीत जनेऊ अपर स्पष्ट ॥ ३ ॥ देखणे मों बेष अमंगल है जाते मानवो के मुंडादिक धारे हुए हैं अरु वास्तव ते सर्व मंगलहु के अरु कृपा के मंदिर है ॥ ४ ॥ बसह कहिये बेल इतर सुगम ॥ ५ ॥

देषि सिवहि सुरत्रिय मुसुकाहीं । बर लायक दुलहिनि जग नाहीं ॥६॥
बिष्णु बिरंचि आदि सुरब्राता । चढि चढि बाहन चले बराता ॥७॥

सुरनारियों का मुसकाना हांस निमित्त है ऐसे बर की पत्नी तौं वह होइ जो ऐसे नागहूं धारणे-हारी होइ अथवा हांस आनन्द सों अर्थ यत्त इस बर जोग दुवती पारबती से इतर काऊ नहीं इतर पद का अध्याहार करणा ॥ ६ ॥ ब्राता कहिये संबूह इतर स्पष्ट ॥ ७ ॥

सुरसमाज सब भांति अनूपा । नहिं बरात दूलहअनुरूपा ॥८॥

सुरों सो दूलह का अघटत प्रकार देख कर ॥ ८ ॥

दोहा—बिष्णु कहा असबिहँसि तब, बोलि सकल दिसिराज ।
बिलग बिलग होइ चलहु सब, निज निज सहित समाज ॥९२॥

इन्द्रादिक जो लोकपाल हैं तिन को मुसुकाइकै विष्णुजी ने कहा तुम सभी अपनी अपनी सैना जुथ भिन्न भिन्न चलावो जाते ॥ ६२ ॥

बर अनुहारि बरात न भाई । हंसी करैहहु परपुर जाई ॥१॥
बिष्णुबचन सुनि सुर मुसुकाने । निज निज सेन सहित बिलगाने ॥२॥

शंकरजी विषे हांससूचक जो विष्णुजी के वाक्य है तिन को सुन कर अमर हंसे अरु अपनी अपनी सैना सहित भिन्न भिन्न चले ॥ २ ॥

मनहीं मन महेस मुसुकांही । हरि के व्यंग बचन नहि जांही ॥३॥

व्यंग काव्यों में चमतकारार्थ को कहते हैं सो चमतकार इहां यह भया कहणा था बरात के अनुसार वर नहीं अरु कहा बर के अनुसार बरात नहीं अरु कहा तुम को पराये पुरों मों हांसी होवैगी अरु तातपर्य यह है बर को हांसी होएगी यह समुझ कर मन मों मुसकाइ कर शंभू ने कहा हरि के जो व्यंग संयुत बचन हैं सो नहीं जाहीं कहिये व्यर्थ न जावे तत्व यह हरि हमारे प्यारे हैं अरु उनो की इच्छा हम को हांस करावन की भई है तौं भी हम को प्रमाण है । वह प्रसन्न रहैं इस मों महेश्वर की गंभीरता सूचन भई अरु कई एक अर्थ इस भांति करते हैं हरि हम सो व्यंग कहिये कुटिलता नहीं छोडते सो अर्थ नहीं बनता जाते प्रसन्नता का सूचक है अरु इहां कहना है अतिप्रियबचन सुने सोइ कहते हैं ॥ ३ ॥

अतिप्रिय बचन सुनत प्रिय केरे । भृंगीहि प्रेरि सकल गन टेरे ॥४॥

प्यारे जो विष्णुजी हैं तिन के अतिप्रिय जो चमतकारी वाक्य है सो जब महादेव ने सुने तव भृंगीगन को प्रेरकर अपनी सभ सैना एकत्र करी ॥ ४ ॥ टिप्पणी—कोऊ कहते हैं कि भृंगी तूमो को बजाय कै ।

सिवअनुसान सुनि सब धाये । प्रभुपदजलज सीस तिन्ह नाये ॥५॥
नाना बाहन नाना बेषा । बिँहसे सिव समाज निज देषा ॥६॥

आपने समाज को पृथक देखि कै शिवजी हंसे जाते ॥ ६ ॥

कोउ मुषहीन बिपुल मुष काहू । बिनु कर पद कोउ बहु पद बांहू ॥७॥
बिपुलनयन कोउ नैन बिहीना । रिष्ट पुष्ट कोउ अति तनषीना ॥८॥

केते मुख रहित कहिये वक्ष्यस्थलादि को विखे मुख केतेवो को बहुते मुख इतर स्पष्ट ॥ ८ ॥

छंद—तनषीन कोउ अतिपीन पावन कोउ अपावन गति धरे ।
भूषन कराल कपाल कर सब सद्य सोनित तन भरे ॥

केतेवो के तन दुर्बल हैं अरु केते अतिपुष्ट हैं कई पवित्र कई अपवित्र सुभाव धारते हैं भयानक भूषण कहिये मातंगों अरु तुरंगों के मुंड कंठादि को मों पहिरे हुए अरु नरों के कपाल हाथ मो है सद्यसोनित कहिये तातकाल हीं मारे हैं जीव तिन के रुधिर सो तन पूरे हुए हैं ॥

षरसुअरस्वानशृगालमुषघन बेष अगनित को गनै।
बहु जिनिस प्रेत पिसाच जुगनि जमातिबरनत नहि बनै॥
घन्यौ के खर सूकरादिक अनेको भांतो के मुख्य हैं अरु अनेक प्रकारों के वेस कहिये वस्त्रादिक हैं ऐसे]जोगनी आदिकों को जमात कथन मों कठिन है।

सोरठा—नाचहिँ गावहिँ गीत, परम तरंगी भूत सब।
देषत अति बिपरीत, बोलत बचन बिचित्र बिधि॥९३॥
परम तरंगो कहिये महाकौतुकी हैं देवर्ण मों तो अति विपरीति हैं परंतु बाणी मुंदर बोलते हैं ॥९३॥

जस दूलह तस बनी बराता। कौतुक बिबिध होत मग जाता॥१॥
अब हिमवंत के वोर का प्रसंग कहते हैं॥१॥

इहां हिमांचल रचेउ बिताना। अति बिचित्र नहि जाइ बषाना॥२॥
सैल सकल जँहँ लगि जग मांहीं। लघु बिसाल नहिं बरनि सिराहीं॥३॥
बडे छोव्यों पर्वत जो संख्या मों नहीं आइ सकें॥३॥

बन सागर सर नदी तलावा। हिमगिरि सब कँहं नेवत पठावा॥४॥
सर कहिये जिन मे सरिता प्रगटै तलाव सो जो मेघहूं के जलों कर होइ इतर सुगम॥४॥

काम रूप सुंदर तनु धारी। सहित समाज सहित बर नारी॥५॥
तरु गिर कामरूप कहिये इच्छा चारी जो है सो युवत्यादिकों सहित सुंदर तन धारकर॥५॥

गए सकल तुहिनांचल गेहा। गावहि मंगल सहित सनेहा॥६॥
प्रथम हि गिरि बहु गृह सँवराये। जथाजोग जँहँ तँहँ सब छाये॥७॥
प्रथम जो हिमाचल ने गृह बनाए थे तिनों मों गिरि सिंध्यादिक आदर पूर्बक बैठाए॥७॥

पुरसोभा अवलोकि सुहाई। लागै लघु बिरंचि निपुनाई॥८॥
छंद—लघु लागि बिधि की निपुनता अवलोकि पुरसोभा सही।
बन बाग कूप तडाग सरिता सुभग सब सक को कही॥
मंगल बिपुल तोरन पताका केतु गृह गृह सोहही।
बनिता पुरुष सुंदर चतुर छबि देषि मुनि मन मोहही॥
इहां अतिस्योकति है। तोरन कहिये द्वार पुहु पर लाट पताका कहिये लघु दीर्घ ध्वजा सो मंगलाचार निमित्त बहुत बनाया है। ऐसी सबिध के अत्युतकर्ष मो हेतु कहते हैं॥

दोहा—जगदंबा जहँ अवतरी, सो पुर बरनि कि जाइ ।
रिद्धि सिद्धि संपति सकल सुष, नित नूतन अधिकाइ ॥ ६४ ॥

नगर निकट बरात सुनि आई । पुर षरभर सोभा अधिकाई ॥ १ ॥

बडी सोभा संयुत जो पुर है तहां खरभर कहिये बडा कोलाहल हुआ चलने का अथवा खरभर कहिये बडी सोभा हुई ॥ १ ॥

करि बनाव सजि बाहन नाना । चले लेन सादर अगवाना ॥ २ ॥

अपणे तनो पर भूषणादिक वस्त्रो के बनाव करके अरु बाहनो को शृंगार कर के श्रेष्ठ लोग आगे गए ॥ २ ॥

हिअ हरषे सुरसेन निहारी । हरिहि देषि अति भये सुषारी ॥ ३ ॥
सिवसमाज जब देषन लागे । विडरि चले बाहन सब भागे ॥ ४ ॥
धरि धीरज तहँ रहे सयाने । बालक सब लै जीव पराने ॥ ५ ॥

जो अवस्था मे अरु अस्त्रादिको की विद्या में सयाने थे सो बाहनो को थंभकर अरु चित को धीरज देकर रहे अरु अधीर बालक सभ जीव लै कै भाग गए ॥ ५ ॥

गए भवन पूछहिं पितु माता । कहहि बचन भय कंपित गाता ॥ ६ ॥
कहिय कहा कहि जात न बाता । जम कर धार किधौं बरिआता ॥ ७ ॥

हम से बात कही नहीं जाती जमों की धार है को बरात है जों वह पूछें बरात तौं ऐसी भई वर कैसा है तिस पर कहते हैं ॥ ७ ॥

बर बौराह बरद असवारा । ब्याल कपाल बिभूषन छारा ॥ ८ ॥

छंद—तन छार ब्याल कपाल भूषन नगन जटिल भयंकरा ।
संग भूत प्रेत पिचास जोगिनि बिकटमुष रजनीचरा ॥
जो जिअत बचें बरात देषत पुन्य बड तिन्ह कर सही ।
देषिहि सो उमाबिबाहु घर घर बात अस लरिकन कही ॥

दोहा—समुझि महेससमाज सब, जननि जनक मुसुकाहि ।
बाल बुझाये बिबिध बिधि, निडर होउ डर नाहि ॥ ६५ ॥

तिन की बालबुद्धि को पिता मातादिक हंसें अरु तिन को समुझाया जो शिवजी के समाज का स्वरूप तौ ऐसा है वास्तव सो कृपाल हैं तुम भै न करो ॥ ६५ ॥

लै अगवान बरातहि आए । दिये सबहिं जनवांस सुहाए ॥ १ ॥

मैना सुभ आरती सँवारी । संग सुमंगल गावहिं नारी ॥ २ ॥
कंचनथार सोह बरपानी । परिछन चली हरहिं हरषानी ॥ ३ ॥
बिकटबेष रुद्रहिं जब देषा । अबलनि उर भयभयेउ बिसेषा ॥४॥
भागि भवन पैठी अतित्रासा । गये महेस जहां जनवांसा ॥ ५ ॥

परिछन कहिये पूजन अपर स्पष्ट ॥३॥ जब नारियों ने कपरदी का विकराल वेष अरु मैना का समाज देख्या तब महात्रसित ह्वै कै भाग कर घरों में जाइ छिपियां तदनंतर महादेव अपने डेरे जाइ उतरे ॥५॥

मयना हृदय भयउ दुष भारी । लीन्ही बोलि गिरीसकुमारी ॥ ६ ॥

तब दुखित ह्वै कै मैना ने गिरजा को बोलाया गिरिकुमारी विशेषण का भाव यह उमा ने धीरज कै वाक कहणे हैं ॥ ६ ॥

अधिक सनेह गोद बैठारी । स्यामसरोजनयन भरि बारी ॥ ७ ॥
जेहि बिधि तुम्हहि रूप अस दीन्हा । तेहि जड बरबाउर कस कीन्हा ॥ ८ ॥

पारबती का रूप बुधि धीरजादिक गुण जो बिधिवत दिए तिस कर विधि पद दिया अरु बर की सोभा बिलक्ष्यण समझ कर उसी बिधि को जड पद दिया जातें मैना जीव बुद्धि हैं ताणे स्रष्टा ताणे तुष्टा ॥८॥

छंद—कस कीन्ह बर बौराह विधि जेहि तुमहिँ सुंदरता दई ।
जो फल चहिअ सुरतरुहि सो बरबस बबूरहिं लागई ॥

जिस दैव ने तुम को ऐसी सुंदरता दी थी तिस ने तेरा बर बावरा क्यों किआं तातें जानिता है जो फल कल्पतरों पर चाहिये सो बबूलो कों अरु जो बबूलों को चाहिये सो कल्पवृक्ष को जल कर दैव लगावता है दृष्टांत जो सुंदर अरु गुनमान इस्त्रीआं होवहिं तिन को कुरूप अरु गुनहीन भरते मिलने अरु जो पती श्रेष्ठ होहिं तौं तिन कों नारिआं नीच मिलनीआं यद्यपि विधि गति ऐसे भी हैं तोभी मैं नहीं देख सकती तातें ।

तुम सहित गिरि ते गिरौं पावक जरौं जलनिधि महँ परौं ।

जौं कोऊ कहै तूं एता हठ करती है तो वह ईश्वर है तेंतिस कोट देवता संग हे तिस पर कहती हैं।

घर जाउ अपजस होउ जगजीवत बिवाह न हौं करौं ॥

जौं हमारा घर लूट लेवैगे तौं प्रमान अरु जो उन का हमने भगाइ दिया तौं लोग कहेंगे यह बडे नीच है जनेत बुलाइ के दुह किया परंतु यह निंदा सहारनी भी उचित है बिवाह नहीं करणा ।

दोहा—भई बिकल अबला सकल, दुषित देषि गिरिनारि ।
करि कलाप रोदति वदति, सुतासनेह संभारि ॥ ९६ ॥

कलाप कहिए समाज अपर सुगम ॥९६॥

नारद कर मैं काह बिगारा । भवन मोर जिन बसत उजारा ॥१॥

जौं कोउ कहै नारद ने तुमारा घर किस भांति उजारा है तिस पर कहती है ॥ १ ॥

अस उपदेस उमहिं जिन दीन्हा । बौरे बरहि लागि तप कीन्हा ॥२॥

हमारे असुभ हेत उमा को बावरे वर के प्राप्त निमित्त उपदेश कर कै तप करवाया तब यह कन्या दुखित भई तौ भी हम दुखी जौं जामाता असुभ करैगा तौं लोकों के उपालभादिकों का भी हम कों दुख ॥ २ ॥

साँचेहु उन्ह के मोह न माया । उदासीन धन धाम न जाया ॥३॥

परघरघालक लाज न भीरा । बांझ कि जान प्रसव की पीरा ॥४॥

नारदजी सांचे हैं उन को परवार का मोह नहीं संपदा नहीं उदासीन हैं धन नहीं घर नहीं इस्त्री नहीं सुत सुता नहीं लोकों के घरों का नाम करते हैं लज्या नहीं लागती किसी का भै नहीं जैसे प्रसूत के दुख कों बंध्या नहीं जानती तैसेही लोकों का दुख यह नहीं जानते प्रयोजन यह अपने घर बेटी होइ अरु उस को बावरा वर मिलै तब यह ओरों की कन्या के दुख को भी जानैं ॥ ४ ॥

जननिहिं बिकल बिलोकि भवानी । बोली जुत बिबेक मृदुबानी ॥ ५ ॥

सर्व सखियों इस्तियों कों तिस पर माता बिकल भई को भी देखा अरु यह कुमारी भी थी तब चाहीता था विशेष बिहबल होती सो न भई जाते भवानी है अर्थ यह शंभु के प्रभाव का जानती है अरु यह भी जानती है मैं ने शंकरजी को प्राप्ति होना है ताते विवेक संजुत कोमलगिरा बोली ॥ ५ ॥

अस बिचारि सोचहि मति माता । सो न टरै जो रचै बिधाता ॥ ६ ॥

अरु तूं जो देवरिष पर उपदेस करण का दोस धरती है सो ॥ ६ ॥

करम लिषा जौं बाउर नाहू । तौं कत दोष लगावहु काहू ॥७॥

जों मेरे लेख विषे बावरकंत लिखा था तौं नारदादिकों का क्या दोष है अरु तू जो डूब मरनादिक कहती है तो ॥ ७ ॥ टिप्पणी—नाहू = पति । नाथ शब्द से नाह बना । थ का ह होता है ।

तुम्ह सन मिटिहि कि बिधि कर अंका । मातु ब्यर्थ जिनि लेहु कलंका ॥८॥

विधाता के अखर तुझ से कब मिटते हैं तब यह जलने लगेगी तौं जल्या न जाइगा तौं व्यर्थ कलंक भागनी क्यों बनती है ॥ ८ ॥ टिप्पणी—जिनि के स्थान पर जनि तथा मति पाठ भी है ।

छंद—जिनि लेहु मातु कलंक करुना परिहरहु अवसर नहीं ।

हे माता कलंक ना लेवो अरु कातरता त्यागो जाते यह रोवणे का समै नहीं जौं मैना कहे हे पुत्री मैं तो तेरे सुख को हान जानकर चिंतातुर हौं तिस पर कहती हैं ।

दुष सुष जो लिषा लिलार हमरे जाव जहँ पाउब तहीं ॥

हेमाता मेरे लेख में जो दुख सुख पावना लिखा है सो जहांजावोगी तहां वह संजोग अवश्य होइगा ।

सुनि उमाबचन विनीत कोमल सकल अबला सोचहीं ।
बहु भांति बिधिहि लगाइ दूषन नयन बारि बिमोचहीं ॥

नीत धर्म्म सो मिले हुए अरु मृदुबानी कर कहे हुए जो उमा के वाक्य हैं सो सुनकर नारियां यह चिंता करतिआ है जो कैसो सुंदर अरु बुद्धिवान कन्या को कंत कैसा मिला है । तब बिधाता पै दोस धर के रुदन करतीआं है ।

दोहा—तेहि अवसर नारद सहित, अरु ऋषिसप्त समेत ।
समाचार सुनि तुहिनगिरि, गवने तुरित निकेत ॥ ९७ ॥

मंदिर मो सोक का समाचार सुन कर नारदादि रिषों सहित हिमवंत अपने गृह मों आया ॥ ९७ ॥

तब नारद सबही समुझावा । पूरबकथाप्रसंग सुनावा ॥ १ ॥

सप्तरिषों के संग हातिआ केवल नारद ने उपदेश इस निमित्त किया जो उन का रोष नारदहीं पर था ताते प्रथम करम गति समझाई तब उन के चित्त का तोष न देखा तब पूर्व जन्म का प्रसंग सुनावने लागे ॥ १ ॥

मयना सत्य सुनहु मम बानी । जगदंबा तव सुता भवानी ॥ २ ॥
अजा अनादि सक्ति अबिनासिनि । सदा संभुअरधंगनिबासिनि ॥ ३ ॥

हे मैना जिस को तूं बेटी जानती है सा सर्व जगत की माता अरु रक्षक है अरु अजन्मा है अनादि जो परमेश्वर हैं तिस की यह माया रूपी सक्ति है अरु बिनास ते रहित है पारबती रूप हूं कर सदा शंकर जी के अर्द्ध अंगमों बसती है ॥ ३ ॥

जगसंभवपालनलयकारिनि । निज लीला सुभावबपुधारिनि ॥ ४ ॥

अपनी क्रीडा के सुभाव कर जगत उतपत्ति स्थित संघार निमित्त ब्रह्मादिकों के स्वरूप भी एही धारती है ॥ ४ ॥ टिप्पणी—सुभाव के स्थान पर इच्छा भी पाठ है ।

जनमी प्रथम दच्छगृह जाई । नाम सती सुंदर तन पाई ॥ ५ ॥
तहँउ सती संकरहि बिबाही । कथाप्रसिद्ध सकल जग मांही ॥ ६ ॥

जों कहो इस का शिवजी सों वियोग कैसे भया तों सुना ॥ ६ ॥

एक बार आवति सिव संगा । देषेउ रघुकुलकमलपतंगा ॥ ७ ॥

पतंग कहिये भानु इतर सुगम ॥ ७ ॥

भयेउ मोह सिव कहा न कीन्हो । भ्रमबस बेष सीय कर लीन्हो ॥ ८ ॥

मन में जो मूढता भई अरु बुद्धि भ्रमी ताते शिवजी के कहे पर प्रतीति न करी अरु प्रभों के छलबे हेतु सीता का रूप करा ॥ ८ ॥

छंद—सियबेष सती जो कीन्ह तेहि अपराध संकर परिहरी ।
हरबिरह जाइ बहोरि पितु के जग्य जोगानलजरी ।
अब जनमि तुम्हरे भवन निजपति लागि दारुन तप किया ।
अस जानि संसय तजहु गिरजा सर्बदा संकर प्रिया ॥

दोहा—सुनि नारद के बचन तब, सबकर मिटा बिषाद ।
छन मह ब्यापेउ सकल पुर, घर घर यह संबाद ॥९८॥

तब मयना हिमवंत अनंदे । पुनि पुनि पारबतीपद बंदे ॥ १ ॥

तिसका वास्तव स्वरूप अरु पूर्वजन्म का प्रसंग सुनि कर पिता माता बारंबार भवानी के पगों लागे अरु ॥१॥

नारि पुरुष सिसु जुबा सयाने । नगर लोग सब अति हरषाने ॥ २ ॥
लगे होन पुर मंगल गाना । सजे सबही हाटकघट नाना ॥ ३ ॥

हाटकघट कहिये स्वर्न के कलस अपर सपष्ट ॥ ३ ॥

भाँति अनेक भई जेवनारा । सूपसास्त्र जस कछु ब्यवहारा ॥ ४ ॥

सूपसास्त्र कहिये जिस में भोजन बनावने के प्रकार लिखे हैं तिस के अनुसार अनेक भांति की रसोंई भई तत्व यह भोजन मों रस अत्यंत अरु बहुत खाए अजीर्नादिक न होइ ॥ ४ ॥

सो जेवनार कि जाइ बषानो । बसहिभवनजेहिमातुभवानी ॥ ५ ॥
सादर बोलेउ सकल बराती । बिष्णु बिरंचि देव सब जाती ॥ ६ ॥
बिबिध पांति बैठी जेवनारा । लगे परोसन निपुन सुआरा ॥ ७ ॥

तिस के जेवनार पर अनेक पंकतां अमरोंकिंआं बैठिआ अरु सुआर कहिये परोसक जो निपुन कहिए परोसन की विधान मों चतुर हैं सो भोजन को परोसन लागे ॥ ७ ॥

नारिबृंद सुर जेवत जानो । लगो देन गारी मृदुबानो ॥ ८ ॥

छंद—गारी मधुर सुर देहि सुंदरि ब्यंग बचन सुनावहीं ।
भोजन करहिं सुर अति बिलंब बिनोद सुनि सचु पावहीं ॥

व्यंग वाक्य कहिये मुंदावनी आदिक सचु कहिये सुख अपर सुगम वा व्यंग वाक्य जो नारियों के विषे देवबधुआं हैं सो सुनायकर सुख देतिआं हैं ।

जेवत जो बढ्यौ अनंद सो मुष कोटि हू न परै कह्यो ।
अँचवाइ दीन्हे पान गवने बास जहँ जाको रह्यो ॥

भोजनांत आचमन कराए अरु तांबूल खवाए पुनः जनवांसे को पठाए ।

दोहा—बहुरि मुनिन्ह हिमवंत को, लगन सुनायो आइ ।
समय विलोकि बिवाह कर, पठये देव बुलाइ ॥ ९९ ॥

बोलि सकल सुर सादर लीन्हे । सबहिं जथोचित आसन दीन्हे ॥ १ ॥
बेदी बेदबिधान संवारी । सुभग सुमंगल गावहिं नारी ॥ २ ॥
सिंहासन अतिदिव्य सुहावा । जाइ न बरनि बिरंचि बनावा ॥ ३ ॥

इहां गम्य उतप्रेक्षा है वह सिंघासन मानो ब्रह्मा ने बनाया है किंवा जो कोऊ ब्रह्मा का बनाया हुआ है तिस सो वह सिंघासन की सोभा कही नहीं जाती ॥ ३ ॥

बैठे सिवं बिप्रन्ह सिर नाई । हृदय सुमिरि निज प्रभु रघुराई ॥ ४ ॥

श्रीरामचन्द्र को इष्टदेव जानकर तिन का रिदे मों ध्यान किआ अरु ब्राह्मण जो सन्मुख बैठे थे तिन को प्रणाम कर के शंभु आसन पर बैठे ॥ ४ ॥

बहुरि मुनीसन उमा बोलाई । करि सिंगार सषी लै आई ॥ ५ ॥
देषत रूप सकल सुर मोहे । बरनै छवि अस जग कबि को है ॥ ६ ॥
जगदंबिका जानि भवबामा । सुरन मनहि मन कीन्ह प्रनामा ॥ ७ ॥

दुलो दुलहिनी विवाह मे लख्यमीनारायण रूप जाणने कहे हैं तिस पर यह तों शंकरजी की सक्ति है ताते जगत माता जानि कै अमरो ने नमस्कार किनीआं मन मों प्रणाम करण का भाव यह मन के नम्र होने का फल अधिक है किंबा मनहीं मोहित भए थे ताते तिनहीं को प्रणाम कराए किंबा पानिग्रहण का समा निकट आया है जो हम सभी उठकर पगों पर प्रणाम करै तो बडी देर लगती है ताते मन में नमस्कार करी ॥ ७ ॥

सुंदरतामरजाद भवानी । जाइ न कोटिहुं बदन बषानी ॥ ८ ॥

छंद—कोटिहु बदन नहिं बनै बरनत जगजननिसोभा महा ॥

असंखहुं मुख कर वरनन नहीं कर सकते जाते अपार सोभा है अरु माता की सुंदरता पुत्र को कथन योग नहीं सो यह जगदंबा हैं ।

सकुचहिँ कहत श्रुति सेष सारद मंदमति तुलसी कहा ॥
छबिषानि मातु भवानि गवनी मध्य मंडप सिव जँहां ॥
अवलोकि सकहिँ न सकुचि पतिपदकमल मनमधुकर तँहां ॥

मन तो स्वामी के चरणकमलो मों दृढ है अरु देखने मो संकोच दुलहिनीवों को उस समे होताही है वा सरब देवत्यों को निकट बैठने का संकोच अथवा पूर्ब जन्म की अवज्ञा सिमरणकर संकोच ।

दोहा—मुनिअनुसासन गनिपतिहिं, पूजेउ संभु भवानि ।

कोउ सुनि संसय करै जनि, सुर अनादि जिअ जानि ॥ १०० ॥

जस बिबाह कै बिधि श्रुतिगाई । महामुनिन्ह सो सब करवाई ॥ १ ॥
गहि गिरीस कुस कन्या पानी । भवहिँ समर्पीं जानि भवानी ॥ २ ॥

हिमवंत ने कुशा अरु उमा के हाथ लेकर शिवजी को समर्पण किया भवानी जानकर भवानी कथन का भाव यह हिमांचल ने विचार्या यह ईश्वरी है अरु सदा को इन की अरधंगी है हमारे कृतारथ करणे निमित्त कोई दिन हमारे गृह मों बसीं थी पुनः उन कोहीं प्राप्ति भई में कौन हौं जो दान अभिमानी बनौं ॥ २ ॥

पानिग्रहन जब कीन्ह महेसा । हिअ हरषे तब सकल सुरेसा ॥ ३ ॥

सतीजी की अवज्ञा अरु शंकरजी का वैराग विचार कर जो इन के संजोग मों संदेह था सो पाणि ग्रहण देख कर मिट गया अरु तारक बध निमित्त जो आपणा प्रयत्न था सो सफल जान्या ताते सुर हरखे ॥ ३ ॥

बेदमंत्र मुनिबर उच्चरहीं । जय जय जय संकर सुर करहीं ॥ ४ ॥

तीन बार जै जै कथन का भाव यह त्रिसत्यादि देवा इतिश्रुतः तीनपद देवता कहते हैं किंवा मन बच क्रम कर तीन बार कहा वा तीनो लोकों विषे तुमारो जै होवे वा तीनो अवस्था से जय रूप सो तुम्ह तुरिआ स्वरूप हौ वा प्रथम काम से जै पाई दुतीय उमा से जै जाई जो अपनी प्रतज्ञा पूरण करी त्रितोय स्यामकारतक रूप होकर तारक से जै पावोगे ॥ ४ ॥

बाजहिं बाजन बिबिध बिधाना । सुमनबृष्टिनभभइ बिधिनाना ॥ ५ ॥
हर गिरिजा कर भयउ बिबाहू । सकल भुवन भरि रहा उछाहू ॥ ६ ॥

तारक के मरणे से सभ सृष्टि को आनंद होना है सो तिस के बध मा यह बिवाह मुख्य कारण जान कर सभ को प्रसन्नता हुई किंवा महेश्वर सम स्वरूप हैं सर्व ब्रह्म को अपने पिंड मों धारते हैं तब उन के आनंद सों सभ को हरख चाहिए ॥ ६ ॥

दासी दास तुरग रथ नागा । धेनु बसन मनि बस्तु बिभागा ॥ ७ ॥
अन्न कनकभाजन भरि जाना । दाइज दीन्ह न जाइ बखाना ॥ ८ ॥

छंद—दाइज दियो बहु भांति पुनि करजोरि हिमभूधर कह्यो ।
का देउँ पूरनकाम संकर चरनपंकज गहि रह्यो ॥

पूरन काम कहिये नित त्रिपित हौ किंवा सरबकोआं कामना पूरण करता हौ मैं तुमे क्या देवों ऐसे कहि के चरणारबिंद गहे ।

सिवकृपासागर ससुर कर संतोष सबभांतिहि कियो ।
पुनि गहे पदपाथोज मयना प्रेमपरिपूरन हियो ॥

कृपासिंधु जो शंभु हैं तिनो ने हिमांचल का सरब प्रकार संतोषकिआ सरब भांति कहिये पदारथ सब सादर लिए अरु मान भी बहुत किआ किंबा गिरिराज जान कै अपना ससुर जान कै इत्यादिक भांतो कर भी तिस को महामान दिआ तदनंतर प्रेम सो पूरण जो मैना है तिस ने शंभु के चरणारविंद गहि कै बिनै करि।

दोहा—नाथ उमा समप्रान सम, गृहकिंकरी करेहु।
छमिहु सकल अपराध अब, ह्वै प्रसन्य बर देहु॥ १००॥

हे महादेव गिरजा मुझ को प्राणोमम प्यारी थी तुम ने आपनी दासी जाननी अरु इस के अपराध छ्यमा करने अब छ्येमा करण का भाव यह जैसे सती के जन्म में इस को अवज्ञा बिचारी थी तैसे अब ना बिचारणी॥ १००॥

बहु बिधि संभु सासु समुझाई। गवनोभवन चरनसिर नाई॥ १॥
जननि उमा बोलि तब लीन्हो। लै उछंग सुंदर सिष दीन्हो॥ २॥

उछंग कहिये गोद इतर सुगम॥ २॥

करेहु सदा संकरपदपूजा। नारिधरम पतिदेव न दूजा॥ ३॥

नारियो का एही धरम है पति को देवता जानना दूजा भाव न करणा वा जो नारी पतिब्रत धर्म मो दृढ है तिस को दूजा कहिये और धरम कर सदगति की इच्छा नहीं करती॥ ३॥

बचनकहति भरि लोचनबारी। बहुरि लाइ उर लीन्हि कुमारी॥ ४॥

पुनः पुनः सुता को कंठ साथ लगाइ कै अरु दृग भर कै यह बचन कहत भई॥ ५॥

कत बिधि सृजीनारिजगमांहीं। पराधीन सपनेहुं सुष नाहीं॥ ५॥
भय अतिप्रेम बिकल महतारी। धीरज कीन्ह कुसमै बिचारी॥ ६॥

जब उमा के प्रेम मो माता अति मगन भई तब जान्या अब गिरिजा को महेश्वर के संग जाण का अवसर है ताते सोक करणा करावना उचित नहीं इस कर धीर्य कीना॥ ६॥

पुनिपुनिमिलतिपरतिगहिचरना। परम प्रेम कछु जाइ न बरना॥ ७॥

माता जो पुनः पुनः पारबती के चरणो लागती है सो प्रेमकर ब्याकुल भई है अथवा उस में ईश्वरी भाव करती है॥ ७॥

सब नारिन मिलि भेटि भवानी। जाइ जननिउरपुनिलपटानी॥ ८॥

छंद—जननि बहुरि मिलि चलहिँ उचित असीससब काहूदई।
फिरि फिरि बिलोकति मातुतन तबसषी लै सिव पहँगई॥

जब माता से बिदा भई अरु सभो से असीस पाइकर सखियो के संग चली तब फिर फिर कर माता

की वोर देखती जाती सो सखिश्रां शंकरजी के समीप लै पहुंचिश्रां फिर फिर देखणे का भाव यह दुल-हिनीवों की रीति है माता सो सनेह अधिक करणा वा इस से मेरा देह उपजीआ है अरु इस ने मेरो पालन कीआ तब मैं शिवजी के प्राप्ति योग्य भई इस कृतज्ञा में वारंवार देखती है वा उमा ईश्वरी हैं ताते इह विचारती भई शिवजी के यथार्थ रूप विषै मेरी माता को संदेह था जिस निमित्त पीछे कछुक बचन कहे थे अब मैं इस पर ऐसी कृपा दृष्टि करों जो फेर इस को भ्रम न पडे वा देवी ने विचारिश्रा नारदादि को रिषीस्वरों के मुख से इनो ने मेरा महातम सुना है अरु अब मेरा प्रस्थान देखकर कदाचित इन के चित में आवे हमारे सदन से भवानी चली गई पीछे गृह सून हो जाइगा ताते देखणे कर यह लखाया तुम ने मुझ को सुखदिश्रा है तुमारे गृह में लखमी सदा नेवास करेगी मेरे होवनेकर तो वेद-सिरा आदिक मुनीश्वर अनेक इन के घर में आवते थे अरु अब मैं इन पर कृपा दृष्टि करों जो सदा संतों का निवास इन के पास होवे जाते इन के दोनों लोक सुधरे सो उसी कृपादृष्टि के बलकर नरनारायणजी अवतार अरु उधवादिको संतो का निवास तुखारद्र में भया ।

जाचक सकल संतोषि संकरु उमा सहित भवन चले ।
सब अमर हरषे सुमन बरषि निसान नभ बाजे भले ॥
दोहा—चले संग हिमवंतु तब, पहुंचावन अतिहेतु ।
बिबिध भांति परितोषकरि, बिदा कीन्ह वृषकेतु ॥ १०१ ॥
तुरत भवन आए गिरिराई । सकल सैल सर लिये बोलाई ॥ १ ॥
आदर दान बिनय बहु माना । सबकर बिदा कीन्ह हिमवाना ॥ २ ॥
जिनो की कन्या अपने घर है तिनो का आदरही किश्रा अरु जो विप्रादिक पूज्य हैं तिन को दान दिश्रा जो महामुनि थे तिन का बिनैकरी इस भांति बहुत मान सभों कों दैकै हिमवंत ने बिदा कीने ॥ २ ॥
जबहिँ संभु कैलासहिँ आए । सुर सब निज निज धामसिधाए ॥ ३ ॥
जौं कोऊ कहे उमा महेश्वर का कछु विलास बरनन करो तिस पर कहते हैं ॥ ३ ॥
जगत मातुपितु संभु भवानी । तेहि सिंगारु न कहउं बषानी ॥ ४ ॥
करहिंबिबिध बिधि भोगबिलासा । गनन्हसमेतबसहिँ कैलासा ॥ ५ ॥
हरगिरिजाबिहार नित नएउ । इहिबिधिबिपुलकालचलिगएउ ॥ ६ ॥
शंभु का अरु उमा का नय बिहार कहिये नित नवीन सनेह वधत्याज बहुत समा बीत्या ॥ ६ ॥
तब जनमेउं षटबदनकुमारा । तारकु असुर समर जिन मारा ॥ ७ ॥
जो कोऊ कहे षटमुख का जन्म अरु तारक का बध विस्तार कर हो तिस पर कहते हैं ॥ ७ ॥
आगम निगम प्रसिद्ध पुराना । षटमुषजन्मु सकल जगु जाना ॥ ८ ॥
छंद—जगु जान षटमुषजन्मु कर्मु प्रताप पुरुषारथु महा ।

तेहि हेतु मैं वृषकेतुसुतकर चरित संछेपहि कहा ॥

ग्रंथ वृद्ध के भै से अरु महाभारतादिकों विषे यह कथा बिस्तार सो बरनीयां है तिसकर मैंने यह चरित्रसंछेप से कहा अब इस प्रसंग की पठन स्रवन का फल कहते हैं।

यह उमासंभुबिबाहु जे नर नारि सुनहिं जे गावहीं।
कल्यान काज बिबाह मंगल सर्बदा सुखु पावहीं ॥

जो कोऊ कहै शिवजी का चरित्र तुम बडे बिस्तार कर कहा तिस पर कहते हैं।

दोहा—चरितसिंधु गिरिजारमन, बेद न पावहिं पारु।
बरनैं तुलसीदासु किमि, अति मतिमंद गंवारु ॥ १०३ ॥

संभुचरित सुनि सरस सुहावा। भरद्वाज मुनि अतिसुखु पावा ॥ १ ॥

जिस की रचना सुंदर अरु अर्थ सरस है ऐसा शंकरजी का चरित्र सुनकर भरद्वाज बहुत प्रसन्न भया अति सुख का भाव यह भगवंत को अरु शंकरजी की कथा से संतों को बडा आनंद होता है अथवा अपूर्व कथा के सुननेकर प्रसन्न भये वा याज्ञवल्क्यजी के कथन करने की जो सुंदर रीति देखी है ताते अति सुख भया अरु ॥ १ ॥

बहु लालसा कथा पर बाढी। नयन नीरु रोमावलि ठाढी ॥ २ ॥
प्रेमबिबस मुख आव न बानी। दसा देखि हरषे मुनिग्यानी ॥ ३ ॥

प्रेम सों तिस के अस्रुपातादिक देखकर ज्ञानी मुनि जो याज्ञवल्कजी हैं सो प्रसन्न हुए ज्ञानी पद कहिकर हरष कहणे में भाव यह याज्ञवल्कजी ने विचारया हम ने रामकथा के संबंधकर भरद्वाज को स्वरूप का साक्ष्यातकार करावण देना है अरु साधना बिना ज्ञान होना कठिन है सो तिनो साधना विषे प्रेम मुख्य साधन है प्रमाण योग शास्त्रे। ईश्वरो प्रणिधानात। ईश्वर विषेइकाग्रता करिय प्रेम करणा एही मोख्य साधन है सो भरद्वाज सों देखकर प्रसन्न भए जो हमारे स्वल्प जतनकर इस को स्वरूप में इस्थित होवेगी तब कहत भये ॥ ३ ॥

अहो धन्य तव जन्मु मुनीसा। तुम्हहिप्रानसम प्रिय गौरीसा ॥ ४ ॥

इहां यहा पद आनंद में है हेमुनीश्वर तुमारा धन्य जन्म है जिन कों गौरीश सों ऐसी भक्ति है गौरीश कहणे का भाव यह पारबती के विवाहादिक व्यवहार हम ने तुम कों इसी निमित्त सुनाये थे जौं केवल विरक्त होवैंगे तो इन चरित्रों मैं रति न होवैगी सो तुम धन्य हो जाते तुम को ईश्वरों की संकल कृपा प्यारी है किंवा जिन को विष्णु अरु शिव विषे भेद दृष्टि है सो तत्व के अधिकारी नहीं होते तुम धन्य हौ तुम को विष्णुजी विषे तो भक्ति थी परंतु शंकरजी विषे भी परम भक्ति है सोई कहते हैं ॥ ४ ॥

सिवपदकमल जिन्हहिरतिनाहीं। रामहि ते सुपनेहुं न सुहाहीं ॥ ५ ॥

बिनु छल बिस्वनाथपद नेहू । रामभगत कर लच्छन येहू ॥ ६ ॥

विश्वनाथ के चरणारबिंदों विषे निस्कपट भक्ति होणी एही श्रीरामचंद्र विषे भक्ति होवन का लख्यण है जातें ॥ ६ ॥

सिव सम को रघुपतिब्रतधारी । बिनुअघतजीसतीअसि नारी ॥ ७ ॥

श्रीरामचंद्र विषे प्रीतिरूपी ब्रत धारणहारा शंकरजी सा कौन है जिनो ने बिना पाप के सती जैसी नारी त्यागी परंतु पाप बिना सती के त्याग कथनकर शंभु विषे अकरुणा दोष अरु मरजादा भंग दोषभी आवेगा। अरु ग्रंथ मों पूरबोत्तर बिरोध आवेगा जातें पूरब प्रसंग में कहि आये हैं सती ने शंकरजी का कहा न माना अरु सोता रूप बनकर रामचंद्र की परिख्या करी अरु शंकरजी के ढिग आइ के मिथ्या-लाप किया तौ वह निष्पाप कैसे भई तातें इसका अर्थ इस भांति है बिन अघ कहिये पाप रहित ब्रत-धारणहारे महादेव तत्व यह और लोकब्रत नेमादि लोभ निमित्त करते हैं अरु शंकरजी ने सती का त्यागरूपी ब्रत केवल श्रीरामचंद्र की भक्ति निमित्त धारया ॥ ७ ॥

पनु करि रघुपतिभगति दिषाई । कोसिवसम रामहिप्रिय भाई ॥८॥

सती के त्याग का प्रन कर के स्वामी भक्ति का प्रभाव प्रगटाया प्रयोजन यह जो कोऊ भगवंत से बेमुख होइ तिस की प्रीति न करणी तातें शिवजो सम रघुनाथजी को प्यारा कौन है ॥ ८ ॥

दोहा—प्रथमहिं कहि मै सिवचरित, बूझा मरमु तुम्हार ।
सुचिसेवक तुम राम के, रहित समस्त बिकार ॥ १०४ ॥

श्रीरामचंद्र सों तुमारी सांची प्रीति देखण निमित्त मै ने शंभु का चरित्र तुम को सुनाया था सो जान्या तुम रघुनाथजी के शुचिसेवक हो अर्थ यह निस्काम भक्त हो अरु रहित विकार कहिये निरदंभ हो जो सकामी अरु दंभी होते हैं सो एकांत में गुरों के आगे प्रश्न कर के तिन कों उत्तर देने मों साव-धान करते हैं अरु सुखम आसा यह होता है यह बडे प्रमाणिक वक्ता हैं हमारे पास इन के होणेकर हमारी महिमा प्रसिद्ध होवैगी सो इत्यादिक बासनाकृत विकार तुमारे विषे नहीं पाईते तातें ॥ १०४ ॥

मै जाना तुम्हार गुन सीला । कहौं सुनहु अब रघुबरलीला ॥ १ ॥

सरलता आदिक तुमारे गुण अरु नम्र सुभाव का मैं ज्ञाता भया हौं तातें अधिकारी जान के प्रभों का चरित्र कहता हौं तुम सुनो ॥ १ ॥

सुनु मुनि आजुसमागम तोरे । कहि न जाइ जस सुषु मन मोरे ॥२॥

हे मुनीश्वर तुझे जैसे पूरण अधिकारी के मिलने कर मेरे मनकों अकह सुख भया है अति आनंद का भाव यह तेरे बोधकरणे मो मुझे यतन अलप होयगा अरु यश बडा आवेगा अब अपनो नम्रता हेतु प्रभों के गुण कथनमों परंपरा रीति कहते हैं ॥ २ ॥

रामचरित अति अमित मुनीसा । कहि न सकहि सतकोटि अहीसा ॥३॥

तदपि जथाश्रुत कहौं बषानी। सुमिरि गिरापति प्रभु धनुपानी ॥४॥

हे भरद्वाज श्री रामचंद्रजी के चरित्रो को अनेक शेषनाग नहीं कहि सकते अरु मैंने जो गुरो से स्रवन किआहै सो यथामति कथन की इच्छा करता हौं जौं कोऊ कहै रघुनाथजी के यस का कथन अति कठिन है अरु बिघन अनेक हैं तिस निमित्त कहा प्रभु जो बानी के पति अरु धनुषधारो हैं तिनको सिमरौंगा तौ मेरी रसना पर सरस्वती को स्थित करैंगे अरु सकल बिघनो कौं निवारैंगे सोई विस्तार कर कहते हैं ॥ ३ ॥ टिप्पणी—यथाश्रुति—जैसा सुना है तदपि मैं अपने सुनने के अनुसार कहता हूं गिरा पति ब्रह्मा तिन के प्रभु राम जो हाथ में धनुष बाण लिये हैं उन को सुमिर के।

सारद दारुनारि सम स्वामी। रामु सूत्रधर अंतरजामी ॥ ५ ॥
जेहि पर कृपा करहि जनु जानी। कबिउरअजिर नचावहि बानी ॥६॥

सरस्वती काष्ट की पूतली सम हैं अरु अंतरजामी श्री रामचंद्र स्वामी तंतुधार हैं सूत्रधार जोम कर पूतली को नचावता है भगवान कृपाकर निज दासों के रिदै रूपी अंगन मों बानो को बिलास करावत हैं अब जाग्यबलकजी रघुनाथजी का नमस्कारात्मक मंगलकरन पूर्वक कथा की उत्थानका बांधवे निमित्त हर गिरजा की प्रनालका राखते हुये सात्विकी इस्थान अरु शंकरजी का ध्यान अरु गिरजा के प्रश्नों का प्रकार पुनः संपूर्ण प्रश्नो का क्रम बरनन करते हैं ॥ ६ ॥

प्रनवौं सोइ कृपाल रघुनाथा। बरनौं बिसद तासु गुनगाथा ॥ ७ ॥
परमरम्य गिरिवरु कैलासू। सदा जहां सिवउमानिवासू ॥ ८ ॥

टिप्पणी—एक तो परमरमणीक गिरिवर कैलाश पर्वत है दूसरे महादेव पार्वती का सदा बास है इस से स्थान और स्थानी दोनों प्रधान हुए।

दोहा—सिद्ध तपोधन जोगि जन, सुर किन्नर मुनिबृंद।
बसहिं तहाँ सुकृती सकल, सेवहिं सिव सुषकंद ॥ १०५ ॥

टिप्पणी—सिद्ध और तपोधनी तपसी और योगीजन वा सुर और किन्नर और मुनि के समूह जो सिद्ध और तपोधनी और योगिजन हैं सो यह सब अपने सुकृत के फल से वहां बसते हैं। सुखकंद कहो सुख के जल बरसनेवाले बादर कं कहो जल को दकहो देनेवाले अर्थात् शिव को सेइ रहे हैं कि कभी राम यश जल को बरसेंगे।

हरिहरबिमुष धर्मरत नाहीं। तेनर तहँ सपनेहुंनहिं जाहीं ॥ १ ॥
तेहिगिरिपर बटबिटप बिसाला। नित नूतन सुंदर सब काला ॥ २ ॥

नित नूतन कहिये जिसके पत्र सदा नवीन रहैं अरु सरबकाल में सोभा यह हिमरितु मै सीत का ग्रीषम मैं घाम का पावस में बरषा का भै न होइ ॥ २ ॥

त्रिबिध समीर सुसीतल छाया। सिवबिश्रामबिटप श्रुति गाया ॥ ३ ॥

टिप्पणी—त्रिविध समीर—दोहाई । शीतलमंद सुगंध ए त्रिविध समीर बखान । अर्थात् पवन शीतलमंद सुगंध है और सुशीतल छाया है और शिवविश्राम विटप उस का नाम श्रुति ने गाया है ।

एक बार तेहि तर प्रभु गयऊ । तरुबिलोकि उरअतिसुखभयउ ॥ ४ ॥

बैठते तो शिवजी उहां अनेकवार हैं परंतु जब पारबती का संदेह निवृत्त करना था तिसबारी तहां गये वा एक कहिये एक संसे पारबती को वा एक कहिये अद्वितीय श्रीरामचंद्र तिस विषे संसे बार कहिये तिस के निवारने अर्थ तहां गये तिस वृक्ष के तले जाने का प्रयोजन एकांत इस्थान जानकर किंवा पादिप पर उपकारी हैं अरु महेश्वर भी उपकार करणलागे हैं तिसकर तरु की समीपता करी अरु तरु की रम्यता देखकर अति प्रसन्न भए ॥ ८ ॥

निज कर डासि नागरिपुछाला । बैठे सहजहि संभु कृपाला ॥ ५ ॥

अपणे हाथो बाघंबर विछाय कर शंभु जो कृपालु हैं सो प्रसन्न ह्वैके बैठे अपणे हाथो छाला इस निमित्त बिछाई उपदेश उमा को अति एकांत मों करणा है किंवा ईश्वर मरयादा पुरुसोत्तम है जेती भोजन अरु आसन अरु जप माला की पवित्रता होइ तेती मन मैं निरमलता रहती है अरु उमा के संसे रूपी नागों को जो खंडन मंडन करना है ताते छाला भी तले नागरिपु की बिछाई ॥ ५ ॥

कुंदइंदुदरगौरसरीरा । भुज प्रलंब परिधन मुनिचीरा ॥६॥
तरुन अरुन अंबुज सम चरना । नषदुति भगतहृदयतमहरना ॥७॥

कुंद कहिये स्वेत पुष्प विशेष इंदु कहिये चंद्रमा दर नाम शंख का ऐसा अतिकांतमान गौर जिनका शरीर है आजान बाहु हैं बाघंबर मृगचरम जिन के वस्त्र हैं अरु अरुण कमलवत जिन के चरण हैं नखिनों की दुति सम नखों का प्रकाश भक्तों के रिदे के तिमरनाशक हैं ॥ २ ॥

भुजगभूतिभूषन त्रिपुरारी । आननु सरदचंदछबिहारी ॥८॥

भुजंग अरु विभूत जिन के भूषन हैं किंवा भुजंग अरु भूत जिनके संगकर भूषित होते हैं बदनजाका सरतकाल के ससि की छबि को भी लज्जित करता है ॥ ८ ॥

दोहा—जटामुकुट सुरसरित सिर, लोचननलिन बिसाल ।
नीलकंठ लावन्यनिधि, सोह बाल बिधु भाल ॥ १०६ ॥

नलिन कहिये कमल लावन्य नाम सोभा का अपर सुगम ॥ १०६ ॥ टिप्पणी—जटान के मुकुट में श्रीगंगा बिराजती हैं और सुन्दर कमल से अति विशाल नैत्र हैं नील जिन का कराठ लावण्य निधि है और बालचन्द्रमा जिन के ललाट पर बिराजता है । शंकर को लावण्य निधि अर्थात् शोभा का समुद्र कहा और समुद्र में अनेक रत्न होते हैं सो शंकर की जटा में गंगा कंठ में बिष और ललाट में चंद्रमा चंद्रमा में अमृत और कमल समान लोचन हैं और जैसे समुद्र में शेष लक्ष्मी हैं वैसाही शंकर में बिभूति और भुजंग हैं । जटामुकुट का यह भाव कि वक्ता बाहर भीतर से निर्विरक्त स्वरूप करि तब उपदेश करे माथे पर गंगा का भाव सत्य वक्ता हैं बिष का भाव यद्यपि जराता है पर त्यागते नहीं और बालचंद्र का भाव टेढ़ा को भी अपनावत है ।

बैठे सोह कामअरि कैसे। धरे सरीरु सांत रसु जैसे ॥ १ ॥

अनेक विषयों का उतपादक जो काम है तिस के निवारक तहां कैसे सोभते हैं जैसे सांतरस तन-धारकर बैठे ॥ १ ॥ टिप्पणी—पाठांतर कामअरि के स्थान पर काम रिपु पाठ है। कामरिपु शंकर कैसे बैठे शोभते हैं मानो शांतरस रूप धरकर के बैठा है अर्थात् शांत बैठे हैं।

पारबती भलि अवसरु जानी। गई संभु पहिं मातु भवानी ॥ २ ॥

भल अवसर कहिये एकांत अरु शिवजी प्रसन्न अरु अपना चित्त भी स्वस्थ अरु वह समा भी पवित्र जाना तब उमा शंकरजी के निकट गई ॥ २ ॥

जानि प्रिया आदरु अति कीना। बाम भाग आसनु हर दीना ॥ ३ ॥

टिप्पणी—शिवजी ने अपनी प्रिया जानकर बड़े सन्मान से स्वागत किया और अपने बाम भाग में उन के बैठने को आसन दिया। कोई टीकाकर आसन हर दीन्हा का दो अर्थ करते हैं। हर शब्द श्लेष अर्थात् शंकर और हरना धातु को विधिक्रिया। शिवजी ने जो आसन हर लिया था सो दिया वा शिवजी ने दिया।

बैठीं सिव समीप हरषाई। पूरुबजन्म कथा चित आई ॥ ४ ॥

जब शंकरजी ने प्यारी जान कै मान पूरबक बाम ओर बैठाई तब यथोचित आसन पाइकै प्रसन्न भई अरु पूरब जन्मकृत अपराध की विशेष आसंका निवारण निमित्त ॥ ४ ॥

पतिहियहेतु अधिक मनमानी। बिहँसि उमा बोलीं मृदुबानी ॥ ५ ॥

स्वामी के हिदे का अपने पर अति सनेह देखकर सरब जगत की कल्यान करती कथा की जो पृष्टा पारबती है सो प्रसन्नतापूरबक कोमलबाणी बोली तिस बाणी का सार ग्रंथकार कहते हैं ॥ ५ ॥

कथा जो सकललोकहितकारी। सोइ पूछन चह सैलकुमारी ॥ ६ ॥

सरब लोकों की हितकारी जो कथा है सो पूछा चाहती है जाते सैलसुता है अर्थ यह जैसे गिर पर उपकार हेतु अपणे मो औषदी आदिक धारते हैं तैसे पर उपकार निमित्त यह भी साभिप्राय विशेषण देकै पूछती है ॥ ६ ॥

बिस्वनाथ ममनाथ पुरारी। त्रिभुवनमहिमाबिदिततुम्हारी ॥ ७ ॥

तुम विश्वनाथ हो भाव यह सरब सृष्टि के संदेह मिटावन योग्य हो तिसपर मेरे नाथ कहिये गुर हो ताते मेरा भ्रम मिटावो पुरारी हो भाव यह तुम ने त्रिपुर को मार्‍या है संदेहों का मिटावना तुमारे आगे केतीबात है यह तुमारी महिमा त्रिलोकी मो प्रगट है तो ॥ ७ ॥

चर अरु अचर नाग नर देवा। सकल करहिं पदपंकजसेवा ॥ ८ ॥

दोहा—प्रभु समरथ सर्वज्ञ सिव, सकल कलागुनधाम।
जोगज्ञानवैराग्यनिधि, प्रनतकलपतरुनाम ॥ १०७ ॥

इहां प्रभु कहिये सरब के स्वामी हो अरु सरब व्यवहार साधन को समरथ हो अरु सरब बात के

ज्ञाता हौ अरु मंगल रूप हौ चौसठकला के अरु सरब गुणो के धाम हौ जोग ज्ञान वैराग्य के निधि हौ अर्थ यह सरब भांति की आसंका तुमारे मों प्रगट हैं तिसपर शरणागतपालन कों तौ तुमारा नाम देव-तरु सम है ॥ १०७ ॥

जौं मो पर प्रसन्न सुखरासी । जानिय मोहि सत्य निज दासी ॥ १ ॥

हे सुखों के संवूह प्रभो जौं मुझपर तुम पूरण प्रसन्न हौ अरु निश्चै मुझ को अपणो दासी जानते हौ तत्व यह जौं मेरे पूरब जनमकीआं अवज्ञा तुमने सभी बिसार दीनीआं है ॥ १ ॥

तौ प्रभु हरहु मोर अज्ञाना । कहि रघुनाथकथाबिधिनाना ॥ २ ॥

जौं कहो भ्रम निवारण मो अपी क्यौं शीघ्रता करती है तिसपर कहती है ॥ २ ॥

जासु भवनु मैं सुरतरु होई । सहि कि दरिद्रजनितदुखु सोई ॥ ३ ॥

टिप्पणी—पाठांतर सुरतरुतर जिसकाघर सुरतरु कल्पवृक्षके नीचेहो वहदरिद्र से उत्पन्नदुःख कैसेसहे ।

ससिभूषन अस हृदय बिचारी । हरहु नाथ मम मतिभ्रम भारी ॥४॥

हेनाथ हेचंद्रमौलि ऐसी मेरी दीनता विचार कर मेरी मति का भ्रम निवारो ससिभूषन संबोधन का भाव यह जैसे तुम ने अल्प कलावंत अरु वक्रचंद्रमा को मस्तक पर धारा हुआ है तैसे मैं भी अल्प गुणयुक्त अरु संस्यात्मक हौं तथापि तुमकर अंगीकृत हों किंवा जैसे चंद्रमा औषदिओं को रस देताहै अरु तिमर भी हरताहै तैसे तुम मेरी बुद्धि बिषें भक्ति रूपी रस देवो अरु मेरी मति का भ्रम भी निवारो जौं प्रभु पूछैं तेरा क्या संदेह है तिस पर कहती है ॥ ४ ॥

प्रभु जे मुनि परमारथबादी । कहहिं राम कहु ब्रह्म अनादी ॥५॥

टिप्पणी—हे प्रभु नाथ जो मुनि परमार्थ परम अर्थ अर्थात् जो पदार्थ सब से परे हैं उस के कहने वाले हैं सो कहते हैं कि राम अनादि ब्रह्म हैं अर्थात् इन से परे कोई ब्रह्म नहीं है ।

सेस सारदा बेद पुराना । सकल करहिं रघुपतिगुनगाना ॥६॥

टिप्पणी—शेष सरस्वति वेद और पुराण सकल रघुपति के गुणगान करते हैं । ऊपर की चौपाई में राम शब्द से कई राम का बोध होता है जैसे परसुराम बलिराम आदि इस लिये निश्चय करने के हेतु गोस्वामीजी ने इस चौपाई में रघुपति कहा है । गोस्वामीजी ने पहिले भी लिखा है । हृदय सुमिरि निज प्रभु रघुराई । वहां भी रघुराई शब्द इसलिये लिखा कि राम शब्द का अनेक अर्थ होताहै अर्थात् पर-शुराम बलिभद्रआदि का बोध न हो शंकर के इष्ट केवल दशरथ के पुत्र रामचंद्र हैं उन्हीं का स्मरण किया ।

तुम पुनि राम राम दिन राती । सादर जपहु अनंगआराती ॥७॥

प्रथम तुम ईश्वर पुनः काम के अरि महा सामर्थ किंवा और सकाम जपते हैं तुम निःकाम तिसपर आदरपूरवक जपते हो तत्व यह सीता के वियोग काल में रघुनाथजी को अति सोकातुर देख के भी तुमारी श्रद्धा न्यून नहीं भई ॥ ७ ॥ टिप्पणी—पाठांतर—रामराम के स्थन राम नाम ।

रामु सो अवधनृपतिसुत सोई। कै अज अगुन अलषगतिकोई ॥८॥

तुमारे कर ध्येय जो रामचंद्र हैं सो एही हैं दसरथ का पुत्र है कै अजन्मा निर्गुण अलख गति परमात्मा रामचंद्र कोई और हैं जौं कहो एहो है तिस पर सुनो ॥ ८ ॥

दोहा—जौ नृपतनय त ब्रह्म किमि, नारिबिरह मति भोरि।
देषि चरित महिमा सुनत, भ्रमति बुद्धि अति मोरि ॥१०८॥

जो ब्रह्म परमात्मा है सो पंच भूतात्मा होकर कैसे जनम्या जौं कहो भक्तवत्सलता कर औतार धार्या तौ तिस सरवज्ञ की बुद्धि इस्त्री की बियोग कर कैसे मोहित भई जाते रुदनादिक उस कै मैंने अपने आंखों देखे हैं अरु महिमा तुमारि मुख से सुनी है सो भी निश्चै है इसी कर मेरी बुद्धि पडी भ्रमती है जो दोनो बातों में निरसंदेह कौनसी है ॥ १०८ ॥

जौ अनीह व्यापक बिभु कोऊ। कहहु बुझाइ नाथ मोहि सोऊ ॥ १ ॥

इच्छा से रहित व्यापक अरु सब से बडा जो दसरथनंदन से इतर कोऊ रामचंद्र हैं तौ वोही समुझाइ कै कहो ॥ १ ॥

अज्ञ जानि रिस उर जनि धरहू। जेहि बिधि मिटै मोह सोइ करहू ॥ २ ॥

मुझ को मूढा जान कर मेरे कथन पर कोप न करना मेरी अज्ञात मिटावन का उपाव करना जौं शिव कहैं तुझ को श्रीरामचंद्र के प्रभाव की कुछ ज्ञात नहीं तिसपर कहती है ॥ २ ॥

मै बन दीषि रामप्रभुताई। अतिभयबिकल न तुमहि सुनाई ॥३॥
तदपि मलिन मन बोधु न आवा। सो फलु भली भांति मै पावा ॥ ४ ॥

मैंने तुमारे पठाया बन में प्रभों की अनंत रूपादिक प्रभुता देखी अरु भै कर तुम कों ना कही सो गोप्य राखणे कर तुम ने मग में मेरा अपमान कीआ परंतु तौभी मेरे कपटी मन कों समुझ न आई तौ उसका फल उस जनम में अरु इस की पूरब अवस्था मो भी बडे कष्ट मै देखे जौं कहो बीति बात को अब क्यों सिमरण करती है तो ॥ ३ ॥ ४ ॥

अजहूं कछु संसउ मन मोरें। करहु कृपा बिनवौं कर जोरें ॥ ५ ॥

कुछक संदेह अब भी रहता है सो कृपा कर कहो तौ हाथ जोर कर बिनै करों जौं हर कहैं मन में भ्रम हुआ तौ पूछणा का क्या दोस है तिसपर कहती है ॥ ५ ॥

प्रभु तब मोहि बहुभाति प्रबोधा। नाथ सो समुझि करहु जनि क्रोधा ॥६॥

जौं हर कहैं तब प्रभाव प्रगट देखन कर अरु हम से भी उपदेस बहुत सुन कर तेरा भ्रम न था मिटा तौ अब कैसे मिटैगा तिसपर कहती है ॥ ६ ॥

तब कर अस बिमोह अब नाहीं। रामकथा पर रुचि मन मांही ॥ ७ ॥

हे प्रभो तब जैसा मोह अब नहीं तुमारे मुख से श्रीरामचंद्रकीआं कथा सुनने की विशेष रुचि है ताते ॥७॥

कहहु पुनीत रामगुनगाथा । भुजगनाथ भूषन सुरनाथा ॥ ८ ॥

हे भुजंगनाथ को भूषणधारणहारे अरु हे अमरों के नाथ इस कथन का भाव यह जिनो ने भजन निष्ट जानकर सरप कों कंठ मो धारा है तो तिन की भगति को क्या महिमा कहिये अरु सकल गुणनिध देवता जिनके दास हैं तिनके गुणो को कौन गनै ऐसे तुम हो सो मुझे श्रीरामचंद्रजी की पवित्र गाथा सुनावो ॥ ८ ॥

दोहा—बंदौं पद धरि धरनि सिर, बिनय करौं कर जोरि ।
बरनहु रघुबर बिसद जसु, श्रुतिसिद्धांत निचोरि ॥ १०९ ॥

पृथवी पर सिर धर कै परम बिनै संजुत कहती हौं जो श्री रामचंद्रजी का यस स्रुतों के सिद्धांतों का भो तत्व है सो मुझे कहो जौं शंकरजी कहैं स्रुति सिद्धांत का अधिकार नारियों को नहीं तिसपर कहती है॥ १०९ ॥

जदपि जोषिता नहिं अधिकारी । दासी मन क्रम बचन तुम्हारी ॥१॥

इस्त्रीयों विषे साहस अनृत चपलतादिक दोष सुभाविक हैं अरु श्रुति कहती है स्त्री सूद्रौ वेदमधी यातां इस्त्री अरु सूद्रों कों वेद का अध्येन न करावे इत्यादिक युक्तों कर नारियों कों अधिकार नहीं भी तथापि मैं मन वच क्रम तुमारी दासी हौं अरु ॥ १ ॥

गूढौ तत्व न साधु दुरावहिं । आरत अधिकारी जंहँ पावहिं ॥२॥

आरत कहिये जिस कों जन्मादिकों सो संका उपजी है अरु निस्कपट होए कर सतगुरों की सरण आया है तिस से संतजन गुह्य आसा भी नहीं छिपावते तिनो विषे भो ॥ २ ॥

अतिआरति पूछौं सुरराया । रघुपति कथा कहहु करिदाया ॥ ३ ॥

मैं अति आरत हों जाते अबला हों अरु पूरब जनम के अपराध की मुझे संका है इस जनम बिषे भी व्यवहार परमारथ तुमारे ही अधीन हैं ताते तुम से पूछती हौं कृपाकर रघुनाथजी की कथा सुनावो जौं शंकरजी कहैं श्रीरामचंद्रजी के अनेक चरित्र हैं तूं कौन से सुना चाहती है तिसपर कहती है ॥ ३ ॥

प्रथम सो कारन कहहु बिचारी । निर्गुन ब्रह्म सगुन बपु धारी ॥ ४ ॥

टिप्पणी—प्रथम तो आप सो कारण बिचार कर कहिये कि निर्गुण ब्रह्म ने सगुण शरीर को कैसे धारण किया । इस प्रश्न का उत्तर—दो० । निज लोकहिं बिरंचि गये, देवन इहै सिखाइ । बानर तनु धरि धरनि महं, हरिपद सेवहु जाइ ॥

पुनि प्रभु कहहु रामअवतारा । बालचरित पुनि कहहु उदारा ॥ ५ ॥

हे प्रभो निरगुण परमात्मा ने सगुण रूप किस निमित्तकिया अरु श्रीरामचंद्रजी का अवतार दशरथ के घर किस भांति भया अरु हे उदारवाल क्रीडा प्रभौं ने किस भांति करीयां भाव यह मेरे प्रश्ण बहुत जानने उत्तर देने मों उदारता करणी किंवा उदार जो बालचरित्र है जिन से भुसुंडादिकों को वर लब्ध

भये हैं सो भी कहो॥ ५ ॥ टिप्पणी—इस प्रश्न का उत्तर। दो०। बिप्र धेनु सुर संतहित, लीन्ह मनुज अवतार। निज इच्छा निर्मित तनु, माया गुनगोपार॥ इहांतक है। बाल चरित्र पुनि कहहु उदारा। इस प्रश्न का उत्तर—चौ०। यह सब चरित कहा मैं गाई। इहां तक।

कहहु जथा जानकी बिबाही। राज तजा सो दूषन काही॥ ६॥

टिप्पणी—दो०। सिय रघुबीर बिबाह, जे सप्रेम गावहिं सुनहिं। तिन कहं सदा उछाह, मंगलायतन राम जस। तक। राज तजा सो दूषन काही। का उत्तर। बिमल बंस यह अनुचित एकू। बंधु बिहाय बडेहि अभिषेकू॥

बन बसि कीन्हे चरित अपारा। कहहु नाथ जिमि रावन मारा॥ ७॥

टिप्पणी—बन में बास करके जो अनेक चरित्र किये सो कहिये। अपार कहने का कारन जिस चरित्र को देखकर भ्रम हुआ उस को अपार कहा। इस प्रश्न का उत्तर। अब प्रभु चरित सुनहु अति पावन। करत जे बन सुरनर मुनि भावन। रावण मारा। लंकाकांड।

राज बैठि कीन्ही बहु लीला। सकल कहहु संकर सुभसीला॥ ८॥

हे प्रभों तुमारा सुभाव सभों को सुखदायक है ताते सभ प्रश्न सुनावों सुखदायक शील का सुभाव यह तुम उपदेश करोगे तो मैं परम प्रसन्न होवोंगी॥८॥ टिप्पणी—राज्य पर बैठिकर जो अनेक लीला करी सो हे शंकर शुभशीला मेरे से कहो। सुभशीला अर्थात् सुंदर है भावना जिस को यह लीला और शंकर का विशेषण है।

दोहा—बहुरि कहहु करुनायतन, कीन्ह जो अचरज राम।
प्रजा सहित रघुबंसमनि, किमि गवने निज धाम॥ ११०॥

हे कृपा के मंदिर बहुरो यहभी कहो रघुनाथजी ने आश्चर्य कौतुक कौन कौन किए अरु प्रजा सहित बैकुंठ को किस प्रकार गये यह दोहरे विषे यह आसंका अनेको कों पडती है जो ग्रंथकार ने प्रश्न किआ अरु उत्तर कहूं न दिआ तिसपर कितेक मुग्धों ने उत्तरकांड में बैकुंठ जाने की कथा ही बनायकर लिख धरी है सो तो उन को बातही अप्रमाण है जाते प्रमाणिक पुस्तकों मे नहीं अरु कई एक भले पुरुष कहते हैं जौन सा शिवजी ने ग्रंथकिआ है तुलसीदासजी की कृत से भिन्न तिस मे बैकुंठ जाना कहा है परंतु एभी उत्तर सिथिल है जो प्रश्न किआ किसी ग्रंथमै अरु उत्तर किसी और ग्रंथमे दिआ जैसे बीज बोइए हरिद्वार अरु फल लागे कुरुखेत्र में अरु कई एक साधु वैष्णव जन कहते हैं यद्यपि गुसांईजी ने संबंधकर प्रश्न लिखा ही था तद्यपि इन का चित्त कोमल था अंत को उपराम की बात कही न गई सो यह उत्तर भी सिथिल है जाते बनबासादिक महाखेद निरूपन करे अरु यह परम सुख रूप बैकुंठ गमन कहा न गया सो इसी प्रकार किआं आसंका अपने मन में भी रहतीआं थीआं तिस निमित्त गोसांईजी का आराधन किआ तब उनोंने जो इस का उत्तर मेरे रिदे में बसाया सो जथा बुद्धि इहां लिखेआ है जौं संतजन कृपा कर प्रमाण करैं इस दोहे अर्थ के ३ भेद हैं तिनों मे प्रथम अर्थ कहते हैं

बहुरो यह कहो हेकृपा के मंदिर श्रीरामचंद्रजी ने जो आश्चर्य किए हैं इहां आश्चर्यदायक इत्यादिक प्रसंग समुझने जैसे उत्तरकांड मों कहा है गजरथ तुरंग मगवाए देख कर सराहे अरु जथा योग्य लोगन कों दए तब श्रीरघुनाथजी कों स्रम भया सो कोटि ब्रह्मांडों के नायक अरु एती बात मैं खेद माने आगे प्रजाधर संतान का वाचक प्रसिद्ध है सो संतान रूप इहां कहे सनकादिक जाते ब्रह्माजी के पुत्र हैं अरु हंस अवतार के सिष्य हैं प्रजासहित कहिये तिनो पुत्रों के साथ हितकर निजधाम किस प्रकार गमने तत्व यह बैकुंठ का नाम तो बीच नहीं लिखा अरु उत्तरकांडे इस प्रसंग के अंत मों कहाहै। पुनि रघुपति निज मंदिर गए। अरु रघुबंसमणि विशेषण का भाव यह जो रघुबंसी ऐसे गुणवान हैं उत्तमो पुत्रों प्रति एता आदर करतेहैं अब द्वितीयअर्थ हेकृपा के समुद्र यह बात भी मुझ को कहो जो प्रभो नें आश्चर्य किया सो अद्भुत यह श्रीरामचंद्र प्रजा के सहित निजधाम कों कैसे गमनें तातपरज यह नगर के सभलोक मुक्ति कैसे भये जाते आदि नेति है गुर उपदेश बिना ज्ञान न होना अरु ज्ञानबिना मुक्ति न होनो प्रमाण असंडिसुक्ति। तद विज्ञानारथं सगुरु मेवाभिगच्छेति। पूरब जो बरनन किया है ब्रह्म का स्वरूप तिस के जानने निमित्त मुमुच्छू गुरों केही समीप जाय। आचारयाधेवविद्याविदधातासाधिष्टं प्राप्यति। इति छांदोगश्रुति। गुरों से जाणी जो है आत्मविद्या सोई ब्रह्म को प्राप्ति करावतीहै अर्थ यह मुक्ति देती है अरु मुक्ति के द्वैभेद हैं ज्ञानवानों के मत कर स्वरूप मैं अभेदता का नाम मुक्ति है उपासकों के मतकर सारूप सामीपादिक बैकुंठ को प्राप्ति मोख्य सो अज्ञान का अभाव दोनो पक्ष्यों मैं प्रमाण है इहां इस कहणे का प्रयोजन यह गुरु उपदेश अरु साधन संपन्नता सरब लोगों कों कैसे भई सो इस का उत्तर ग्रंथकार ने उत्तरकांडे प्रसंग की समाप्ती में दिया है जब भगवंत और व्यवहार सभ कर रहे तब विचार्या सरब लोग मैंने मुक्ति करने हैं अरु जद्यपि बंध्य मोख्य सभ हमारी इच्छा मा है जो साधनो बिना इन कों मुक्ति किया चाहिये तो भी हम पर कोई प्रतबंधक नहीं तथापि हमारा मरजादा पुरुषोत्तम अवतार है ताते गुरउपदेश कर साधनोद्वारा ज्ञानहोवे तिस कर अविद्या नास होवै अविद्या का नाम सोई मुक्ति का स्वरूप एही रीति करने हेतु रघुनाथजी ने सरबलोगन कों एकत्र बुलवाया अरु आपुही गुरुरूप होयकर श्रीमुख से सभों कों उपदेश दिया जिस मै कहा है। बहुत कहों का कथा बढाई। एहि आचरनबस्य मैं भाई॥ बैर न बिग्रह आस न त्रासा। सुखमै ताहि सदा सब आसा॥ अनारंभ अनिकेत अमानी। अनघ अरोषदच्छ बिज्ञानी॥ प्रीति सदा सज्जन संसर्गा। तृन सम बिषे स्वर्ग अपवर्गा॥भक्तिपच्छ हठ नहि सठताई। दुष्टतर्क सब दूर बिहाई॥ इत्यादिक बाक्योंकरभक्ति वैराग्य ज्ञान योग सब लोगन कों दृढ कराए जातें पूरण संतों मैं चारोही हैं आगे अपने अपने गुरों के मारग से कहीं भक्ति की मुख्यता है कहीं ज्ञान को है इस कर भगवंत के उपदेश द्वारा सबी लोक मोख्य के अधिकारी भए। निज निज गृह गे आयसु पाई। बरनत प्रभु बतकही सुहाई॥ प्रभों की आज्ञा यह जब रघुनाथजी ने कहा सरजू मो स्नान करके बैकुंठ कों चलो तब प्रभों के सुंदर उपदेश कों बरनते कहिये बिचारते हुए निज कहिये अपना अरु निज कहिये नित्य जो निकेत है तिस मों प्राप्त भए प्रमाण मेदनी। निजं *नित्यं च स्वीये च। तत्व यह जब इस्व ईश्वर इच्छा कर सभों के तन एकत्र छूटे तब प्रभों के संगही बैकुंठ*

कों गए इसी की पुष्टता दोहे मों कही है । उमा अवधबासी नर नारि कृतारथ रूप । ब्रह्म सच्चिदानन्द घन रघुनायक जहं भूप ॥ जो सतगुरों ने मति दीनी है सो लिखदिया है आगे जो इस से विशेष किसी की बुद्धि मों आवै सो भी प्रमाण इसी संबंध मे एक और भी प्रश्नास्मृति भया है उमा महेश्वर का गरुड भुसुंडि का संवाद इस में कहा है तौ इन को समाप्त भी क्रम पूरबक करी है अरु भरद्वाज जागवलिक का प्रसंग सभ ते प्रथम उपक्रम किया तिस का उपसंहार कहीं नहीं लिखा। उत्तर। इस मै ग्रंथकार का आसा ऐसे प्रतीत होता है जब जागवलिकजी भरद्वाज प्रति कथन करनलागे हैं तब उनो कहा है जौनसी आसंका तुम ने मुझ से पूछी है एही गिरजा ने गिरीश से पूछी थी जैसे शंकरजी ने गौरी प्रतिं कहाहै सो मैं तुम प्रति कहताहौं तो इस कर जाना जो मुनीश्वरों का संवाद भवानी के बीच हो मिला जहां उनो ने समाप्ती करी तहां हीं जाज्ञवलकजी की समुझ लेनी जैसे जमनाजी का प्रवाह प्रथम भिन्न चलता है जब गंगाजी से संगम भया तब यद्यपि किसी स्थान विषे चलतीआं जल भिन्न भी प्रतीत होता है परंतु सागर संगम में जान्हवी नाम कर हो प्रवेश करतीहै उहां रविजा का नाम काऊ भिन्न नहीं कहता अरु कईएक ऐसे भी कहते हैं शिवजी के प्रसंग की समाप्ती कर जो कहा है । यह शुभ संभु उमा संबादा । इत्यादिक चौपाई में जाज्ञवलक जी ने समाप्त करी है परंतु इस उत्तर दिये तुलसीदासजी के मुखों समाप्ती कहूं नहीं देखीती ताते वही प्रमाण है अब प्रसंग कहते हैं ॥ १०१ ॥

पुनि प्रभु कहहु सो तत्व बषानी । जेहि बिज्ञान मगन मुनिज्ञानी ॥१॥

टिप्पणी—फिरि हे प्रभु सो तत्व सो बर्णन करि के कहो जेहि विज्ञान जिस अनुभव में मुनि ज्ञानी मगन रहते हैं ।

भगति ज्ञान बिज्ञान बिरागा । पुनि सब बरनहु सहित बिभागा ॥२॥

टिप्पण—भक्ति ज्ञान विज्ञान बिराग बैराग्य सब बासना का छूट जाना । संपूर्ण विभाग करि के कहो ।

औरौ रामरहस्य अनेका । कहहु नाथ अतिबिमल बिबेका ॥३॥

रहस्य कहिये गुह्यचरित्र श्रीरामचंद्र के सो भी कहो जातें तुमारा निरमल विवेक है प्रयोजन यह वह चरित्र औरों लोकों से गुप्त है तुमारे से तौ रामचंद्र का कुछ अंतर नहीं ॥३॥ टिप्पणा—और भी रामरहस्य अर्थात् गुप्तलीला जिसे राम जानते हैं वा जिस को वे जनावें वह जाने जिस को न जनावें न जाने । कौतुक देषि पतंग भुलाना । एकमास तेहि जात न जाना ॥ दो० । मास दिवस का दिवस भा मरम न जानै कोइ । रथ समेत रबि थाकिउ, निसा कवन बिधि होइ ॥ चौ० । यह रहस्य काहू नहिं जाना । दिनमनि चले करत गुनगाना ॥ देषि महोत्सव सुर मुनि नागा । चले भवन बरनत निज भागा ॥ औरों एक कहौं निज चोरी । सुनु गिरिजा अति दृढ मति तोरी ॥ काकभुसुंडि संग हम दोऊ । मनुज रूप जानै नहिं कोऊ ॥ परमानंद प्रेम सुषफूले । बीथिन फिरहिं मगन मन भूले ॥ यह सब चरित्र जान पै सोई । कृपा राम की जा पर होई ॥ सोई जानै जेहि देहु जनाई ॥ जानत तुम्है तुम्है होई जाई ॥ लछिमनहूं यह भेद न जाना । जो कुछ चरित कीन्ह भगवाना । और—मुनि समूह महं बैठे सन्मुष सब की ओर । और । छनमहं सभहि मिले भगवाना । उमा मरम यह काहु न जाना ॥

और—बानर कटक उमा मैं देषा । सो मूरष जो करन चह लेषा ॥ आय रामपद नावहिं माथा ॥ निरषिबदन सब होहिं सनाथा ॥ अस कपि एक न सेना माहीं । रामकुसल जिहिं पूछी नाहीं ॥ यह कछु नहिं प्रभु की अधिकाई । बिश्वरूप ब्यापक रघुराई ॥ इत्यादि रहस्य ।

जो प्रभु मै पूछा नहि होई । सोउ दयाल राषहु जनि गोई ॥४॥

कदाचित शंकरजी कहैं जो बात हमारे से रहि जायगी सो किसी और से पूछ लेनी तिस पर कहती है ॥ ४ ॥

तुम्ह त्रिभुवन गुर बेद बषाना । आन जीव पावर का जाना ॥ ५ ॥

तुम त्रिलोकी के गुरु हो सरवज्ञ हो औरों अलप मतियों जीवों कों प्रभों के चरित्रों की क्या ज्ञात है ।

प्रश्न उमा के सहज सुहाए । छलबिहीन सुनि सिवमन भाए ॥६॥

देवी के प्रश्न पद रचना कर सुंदर है किंवा श्रीरामचंद्र के गुणानवादों कर मिश्रित हैं ताते सहज सुंदर हैं अरु सरल चित्त कर कहे हुये हैं ताते शंकरजी कों प्यारे लगे प्रश्न के चार भेद हैं एक अपनी बुद्धि दिखावन हेतु द्वितीय वक्ता की बुद्धि की परिख्या निमित्त तृतीय विवादार्थ चतुर्थ संदेह निवृत्यर्थ सो उमा के प्रश्न चतुर्थ जाने तब ॥ ६ ॥

हरहिय रामचरित सब आए । प्रेम पुलक लोचन जल छाए ॥७॥

शिवजी के रिदै मों रामचंद्र के चरित्रों का आवना हुआ इस भांति जैसे जवाहीरी के गृह मो अनेक रत्न धरे होते हैं परंतु जिस का खरीदार कोई आवता है उस रत्न का स्वरूप इस्थान मोल तौल सभ जवाहिरी के रिदै मों प्रगट हुई आवता है तेसे सर्ब निगमों के आसे शिवजो की बुद्धि बृत्तो मे थे जब रामचरित्रों का प्रश्न भवानी ने किआ तब उन का स्वरूप हृदय मों प्रगट भास आया तब प्रेमकर रोमांच हुये अरु नेत्रों में जल छाया ॥ ७ ॥

श्रीरघुनाथरूप उर आवा । परमानंद अमित सुष पावा ॥ ८ ॥

रघुनाथजी के स्वरूप के ध्यानकर परमानंद हुआ ॥ ८ ॥

दोहा—मगन ध्यानरस दंड जुग, पुनि मन बाहर कीन्ह ।
रघुपतिचरित महेस तब, हरषति बरनै लीन्ह ॥ १११ ॥

महूरत भर ध्यान रस में मगन हूकै श्रीरामचंद्रजी के चरित्र बरनन करबे निमित्ति बृत्य का उत्थान किआ ध्यान करण का भाव यह ध्यान से पीछे बचन सनिग्ध हूकर निकसते हैं अरु अल्पकाल ध्यान इस ते किआ जो उमा उतकंठावंत है तिस को उत्तर शीघ्र देना है चरित्रों के बरनन समै हर्ष होना इष्ट के बरनन निमित्त किंबा चिरकाल का जो उमा को संदेह है तिस के निवृत्त निमित्त वा इस कथा के श्रवनादि को कर अनेक लोग कृतार्थ होवैंगे इस उपकार को बिचार कर अब शंकरजी ग्रंथ का पीठका बांधबे निमित्त सगुण अगुण की अभेदता रूप बस्तु निरदेस अरु प्रणामात्मक मंगल करते हैं ॥ १११ ॥

झूठो सत्य जाहि बिनु जानें। जिमि भुजंग बिनु रजु पहिचानें॥ १॥
जेहि जाने जग जाइ हेराई। जागे जथा सपनभ्रम जाई॥ २॥

जिम सच्चिदानंद स्वरूप ना जानने कर यह मिथ्या प्रपंच सत्यवत भासता है जैसे रज्जू की अरु सुक्तका के अज्ञान कर सरप अरु रजत भै लोभादिकों का उतपादक सत्यवत होता है अरु जिम के स्वरूप ज्ञान के बल कर जगत भ्रम ऐसे मिटता है जैसे जागृत भये स्वप्न स्रिष्टि भासती हुई भी मिथ्या लागती है॥ १॥ २॥

बंदौ बालरूप सोइ रामू। सब सिधि सुलभ जपत जिहि नामू॥३॥

श्रीरामचंद्रजी के बालक रूप कों प्रणाम करणा का भाव यह शिवजी की इसी रूप विषे उपासना है। ननु। प्रथम आत्मा का स्वरूप वरनन किया पुनः श्रीरामचंद्र की देह की एक अवस्था बरनी। उत्तर। श्रीरामचंद्र काचिद वपुहै प्रथम स्वरूप लख्यणाकार कहा है पुनः तटस्थ लख्यनकार कहा है स्वरूप लख्यन कहिए जैसे पृथवी विषे पृथवीतजात है अरु तटस्थ लख्यन कहिये गंधमती धरा तैसे स्वरूप लख्यन कहिये परमात्मा का निज सरूप अरु तटस्थ लख्यन कहिये तिस का गुणरूप वर्णन किया जाते इसी रूप के चरित कहणे हैं॥ ३॥

मंगलभवन अमंगलहारी। द्रवौ सो दसरथ अजिरबिहारी॥ ४॥

दसरथ के गृह मो क्रीडा करनेहारा जो मंगलों का मंदिर अरु दुखों का नासक श्री रामचंद्र है सा मुझपर कृपा करो॥ ४॥

करि प्रनाम रामहि त्रिपुरारी। हरषि सुधासम गिरा उचारी॥ ५॥

नमस्कार के साथ त्रिपुरारि विशेषण का भाव यह तीन कोटहु के खंडन कर शिवजी का नाम त्रिपुरार भया है सो इहां भी उमा के मन बच क्रम के संशय रूप तीन गड खंडन करने हैं॥ ५॥

धन्य धन्य गिरिराजकुमारी। तुम समान नहिं कोउ उपकारी॥६॥
पूंछेहु रघुपतिकथाप्रसंगा। सकल लोक जन पावन गंगा॥ ७॥

हे हेमवती तूं धन्य है जाते तुमारे कुल का सुभाव ही परउपकारी है जैसे अद्र अपने औसदीआ आदिक द्रव्य लोकों के सुख निमित्त धारते हैं तैसे तुम ने श्रीरामचंद्रजी की कथा का जो मुझ से प्रश्न किया है सो मानो जगत पर गंगा ल्यावन सम उपकार करा है जौं गिरजा कहै हे प्रभों मैंने तो अपना संदेह निवारणार्थ प्रश्न करे हैं तिस पर तिस कों वर देत्योंवत कहिते हैं॥ ७॥

तुम्ह रघुबीरचरनअनुरागी। कीन्हिहु प्रश्न जगतहित लागी॥ ८॥

दोहा—रामकृपा तें पारबति, सपनेहु तव मन माहिँ।
सोक मोह संदेह भ्रम, मम बिचार कछु नाहिँ॥ ११२॥

तदपि असंका कीन्हिहु सोई। कहत सुनत सब करहित होई ॥१॥

यद्यपि तुझे तो भ्रम नहीं तथापि प्रश्न तैंने ऐसे करे हैं जिनके स्रोते वक्ते सब कृतार्थ होविंगे जाते ॥१॥

जिन्ह हरिकथा सुनी नहिं काना। श्रवनरंध्र अहिभवन समाना ॥ २ ॥

नैनन्ह संतदरस नहिं देषा। लोचन मोरपंष कर लेषा ॥ ३ ॥

तिन नेत्रो की सुंदरता मोर पंखोवत व्यर्थ लखीनी है ॥ ३ ॥

ते सिर कटुतुमरि समतूला। जे न नवहिं हरिगुरुपदमूला ॥ ४ ॥

वहि शीश कौडे तूंबे के समान हैं किंवा ते शिर तूंबरी सम कटु है अरु तूल सम तुच्छ है जो गुरों के पदमूलमो नम नही ॥ ४ ॥

जिन्ह हरिभगति हृदय नहिं आनी। जीवत सव समान तेइ प्रानी ॥ ५ ॥

जो नहिं करै रामगुनगाना। जीह सो दादुरजीह समाना ॥ ६ ॥

कुलिसकठोर निठुर सोइ छाती। सुनि हरिचरित न जो हरषाती ॥७॥

निठुर कहिये अति निरदय इतर सुगम ॥ ७ ॥

गिरिजा सुनहु राम कै लीला। सुरहित दनुजबिमोहन सीला ॥८॥

जिस श्रीरामचंद्र की लीला में सुरों का हित अरु दुष्टों का विमोहन कहिये मृत्यु मूरछादिक कहा है सो सुनो किंवा सुरोंसम संत तिनों को सुख देनहारी असुरोंवत अधम तिन का विमोहन करनहारी है अर्थ यह प्रभों के चरित्र सुनकर अधम लोग इस्वरों पर कुतरका करते हैं ॥ ८ ॥

दोहा—रामकथा सुरधेनु सम, सेवत सबसुषदानि।
संतसभा सुरलोक सब, को न सुनै अस जानि ॥ ११३ ॥

जैसे कामधेनु अपने दूध कर देवत्यों को जरा रहित करती है अरु वांछित फल भी देती है ताते सब देवता तिसकों सेवते हैं तैसे श्रीरामचंद्र की कथा भक्तों को जरा मृत्यु से रहित करती है अरु चार पदारथ देती है ताते सबी संत इस का सेवते हैं ॥ ११३ ॥

रामकथा सुंदर करतारी। संसयबिहँग उडावनिहारी ॥ १ ॥

जैसे हाथ की तारी के शब्द से पंखी उडजाते हैं तैसे श्रीरामचंद्र की कथा के श्रवन से संसे रूपी विहंग उड़ते हैं श्रीरामचंद्र की कथा कों करतारी सम कथने का भाव यह बाम हस्त सम भवानी आदिक शिष्य दक्षिण हाथवत शंकर आदिक गुरु जब तिन के प्रश्नोत्तर रूपी शब्द होता है तब संसे नाश होते हैं ॥ ८ ॥

रामकथा कलिबिटपकुठारी। सादर सुनु गिरिराजकुमारी ॥ २ ॥

कलि विटप कहिये अज्ञान रूपी वृक्ष तिस के काटने को राम कथा कुठारी सम है तिस को तूं प्रीत पूरबक सुनैगी तौ तेरी भी अज्ञान मिटैगी ॥ २ ॥

रामनामगुनचरित सुहाए । जनम करम अगनित श्रुति गाए ॥३॥
जथा अनंत राम भगवाना । तथा कथा कीरति गुन नाना ॥४॥

श्रीरामचंद्रजी के जो नाम हैं अरु भक्तों पर कृपालतादिक गुण है अरु जुद्धादिक चरित्र हैं बाराहादिक जन्म हैं राज पालनादिक करम अनेकही सुतों ने कहे हैं सो जैसे प्रभु अनंत हैं तैसे उन के चरित्र भी बेअंत हैं तत्व यह सभी तो किसू से कहे नहीं जाते ॥ ३ ॥ ४ ॥

तदपि जथाश्रुति जस मति मोरी । कहिहौं देषि प्रीति अति तोरी ॥५॥

जथा सुति कहिये जैसे बेदो ने बरन्या है अथवा जैसे संतों के मुख सों मैंने सुनेया है अरु जैसे मेरी समुझ में आवता है तैसे तेरी प्रीति निमित्त कहोंगा इसमो अपनी नम्रता लखाई वा मरजादा निमित्त कहा जाते गुरमुख बात प्रमाण होती है अब उमा की बानी को प्रसंसकर इस्वरों पर आसंकर्तों के पाप गिरजा कौं भी देने निमित्त कहते हैं ॥ ५ ॥

उमा प्रश्न तव सहज सुहाए । सुषद संतसंमत मोहि भाए ॥ ६ ॥

हे उमा तेरे प्रश्न सहज सोहाए हैं जाते पद सुंदर हैं अर्थ गंभीर हैं नम्रता सहित है जज्ञासिओं को सुखदायक है अरु संतों कर प्रमानिक है ताते मुझ को भी प्यारे लागे है परंतु ॥ ६ ॥

एक बात नहिं मोहि सोहानी । जदपि मोहबस कहेहु भवानी ॥७॥

जौं कहै वह कोन बात है तौ सुन ॥ ७ ॥

तुम्ह जो कहा राम कोउ आना । जेहि श्रुतिगावधरहिं मुनिध्याना ॥८॥

दोहा—कहहिं सुनहिं अस अधम नर, ग्रसे जे मोहपिसाच ।
पाषंडी हरिपदबिमुष, जानहि झूठ न साँच ॥ ११४॥

जो झूठ सांच के दोष गुण कों कुछ समझतेही नहीं अथवा झूठ बोल जानते हैं सांच को नहीं जानते तिनों अधमों को ऐसा कथन योग्य है पुनः वह कैसे हैं ॥ ११४ ॥

अज्ञ अकोबिद अंध अभागी । काई बिषय मुकुरमन लागी ॥ १ ॥

अज्ञ हैं जिन को स्वरूप की ज्ञान नहीं अकोबिद हैं जिन को शास्त्रीय ज्ञान भी नहीं अंध हैं जिन के गुरों संतो के पछानने के नेत्र नहीं अभागी कहिये पूरबजनमों के करम जिन के खोटे हैं अरु बिषे रूपी चिकनाई करमन रूपी मुकुर जिन का मलिन हुआ है ॥ १ ॥

लंपट कपटी कुटिल बिसेषी । सपनेहु संतसभा नहिं देषी ॥२॥

पर तन परधन मो लंपट हैं रिदै और बाह्य और हैं ताते कपटी हैं विशेष कर कुटिल कहिये जिन की सरब ब्योहार में कुटिलता है अरु संत सभा जो सरल चित्त हैं तिन का कबी दरसन नहीं किया ॥२॥

कहहि ते बेद असंमत बानी । जिनहि न सूझ लाभ नहि हानी ॥३॥

मुकुर मलिन अरु नयनबिहीना। रामरूप देषहिं किमि दीना॥ ४॥

मुकुर अस्थान मन सो जिन का मलिन है अरु नेत्र कहिये स्रुति स्मृति तिनो के विचार से भी रहित हैं स्रुति स्मृति उभै नेत्र विप्राणां परिकोर्तिते एके न विकलः काणाः ह्याभ्यामंधा प्रकीर्तिता। किंवा दरपण रूप गुरु सो पूरण नहीं मिले अरु नेत्ररूप कहिये मन बुद्धि सो भी सुद्ध नहीं तौ रामचंद्र के स्वरूप को कैसे देखहिं॥ ४॥

जिन के अगुन न सगुन बिवेका। जल्पहिं कल्पित बचन अनेका॥ ५॥

जिन को निरगुण सगुण के अर्थ मात्र का ज्ञान भी नहीं अरु अनेक जो मन कलपित जुगतां हैं तिन को जल्पते कहिये प्रलाप करते हैं जौं कोऊ कहै पापदायक जो कपोलकल्पित वार्ता हैं सो क्यौं करते हैं तिस पर कहते हैं॥ ५॥

हरिमायाबस जगत भ्रमाहीं। तिन्हहिं कहत कछु अघटित नाहीं॥६॥

महामाया के बलकर जो जगत भ्रमा है अरु बुद्धि विपरजै है ते जो कुछ कहंहि तिन को बनताही है तिस पर दृष्टांत॥ ६॥

बातल भूत बिबस मतवारे। ते नहि बोलहि बचन बिचारे॥७॥
जिन्ह कृत महामोहमदपाना। तिन्ह कर कहा करिअ नहिं काना॥८॥

जैसे विरुग्रस्त अरु भूतावेशवाले अरु मद्यमत्त व्यर्थ वाद करते हैं तिन के कहे पर प्रतीति नहीं चाहीती तैसे जिनो ने महामोहरूपी मद पीआ है तिन के बचन मों सरधा कबी न ल्यावनी॥ ८॥

सोरठ—अस निज हृदय बिचारि, तजु संसय भजु रामपद।
सुनु गिरिराजकुमारि, भ्रमतम रबिकर बचन मम॥ ११५॥

हे गिरजे तिनो हरिबिमुखों की ऐसी दुरगति अपने रिदै मों विचारकर तूं भ्रम त्याग के श्रीरामचंद्र को सिमर जो भ्रम निसेष नहीं होता तौ संसैरूपी तम निवारणकों भानुकिरणसम मेरेवाक्य सुनु॥ ११५॥

सगुनहि निगुनहि नहि कछु भेदा। गावहि मुनि पुरान बुध बेदा॥ १॥
अगुन अरूप अलष अज जोई। भगतप्रेमबस सगुन सो होई॥ २॥
जो गुन रहित सगुन सोइ कैसे। जलु हिम उपल बिलग नहिं जैसे॥३॥

हे प्रभो त्रिगुणातीत आतमा कों गुणो सहित कैसे कहते हो अरु जो गुणोरूपी उपाधि सहित है सो निरमल कैसे होइ तो इस आसंका कों दृष्टांत कर खंडते हैं जैसे हिम कहिये बरफ उपल कहिये ओले तिन का जल सों भेद नहीं अरु वह जब भिन्न दृष्टि आवते हैं तासमे भी उनों में जल बिना और सत्ता नहीं। तैसेहीं जब सगुण को कृया भी दृष्टि आवती है तब भी असति भांति प्रिय इतर कृया की सत्ता रंचक मात्र नहीं ताते निरगुण सगुण अभेदही हैं॥ ३॥

जासु नाम भ्रमतिमिर पतंगा। तेहि किमि कहिअ बिमोहप्रसंगा॥४॥

जिस रामचंद्र का नाम भ्रमरूपी तिमर को भानुवत नष्ट करता है तिस के निरमल स्वरूप विषे मोह का प्रसंगही कहणा योग्य नहीं ॥ ४ ॥

राम सच्चिदानंद दिनेसा। नहिं तहं मोहनिसालवलेसा॥५॥

रामचंद्र सच्चिदानंद स्वरूप हंस हैं तिन विषे मोहरूपी निशा का कथनही नहीं बनता कई लोग कहते हैं सूर्य्य रात्रि का शत्रु है सो बात असंभव है जाते भानु ने रात्री कबी देखीही नहीं तब उस का नाशक कैसे कहिये तैसे रामचंद्र आत्मा विषे अविद्या कदाचित फुरतही नहीं तो उस को अभाव कथा कैसे कही जाय जौं कोऊ कहै श्रीरामचंद्र विषे अज्ञान नहीं परंतु ज्ञान तो है तिस पर कहते हैं ॥ ५ ॥

सहज प्रकासरूप भगवाना। नहिं तहं पुनि बिज्ञानविहाना॥६॥

हे गिरजे श्रीरामचंद्र प्रभु सहज प्रकाश रूप हैं अर्थ यह तिन का प्रकाश उपजया बिनसनवाला नहीं ताते तिन में ज्ञान का होना ऐसे कहीता है जैसे कहिये सूर्य्य बिषै दिन है तौ असंभव है तत्व यह जिनो निशा देखी है ते दिन कों भी जानते हैं जिस भानु मों रात्रि कबी हुई नहीं तिस मों दिन किस कों कहिए तैसे जिनो जीवों को वुद्धि मों अविद्या है सो अविद्या की निवृत्यावस्था कों ज्ञान कहते हैं अरु जिस सच्चिदानंद आत्मा विषे अज्ञात कछू फुरीही नहीं तहां ज्ञान किसकों होइ अरु किसका होइ॥

हरष विषाद ज्ञान अज्ञाना। जीव धर्म अहमिति अभिमाना॥७॥

हरष सोक ज्ञान अज्ञान अरु अहं इति यह जो अभिमान है यह आसुरी संपदा है अरु दैवी संपदा भी जीव मों वरते हैं अरु ॥ ७ ॥

राम ब्रह्म व्यापक जग जाना। परमानंद परेस पुराना॥८॥

श्रीरामचंद्र सभों से बडे हैं अरु सरब व्यापक हैं सरब जगत के ज्ञाता हैं परमानंद रूप हैं सरब पुरा के ईश्वर हैं सनातन हैं ॥ ८ ॥

दोहा—पुरुष प्रसिद्ध प्रकासनिधि, प्रगट परावरनाथ।
रघुकुलमनि मम स्वामि सोइ, कहि सिव नायउ माथ॥११६॥

राम पद सों लेकर परावरनाथ परजंतु द्वादश विशेषणो सो निरगुण स्वरूप कहा अरु रघुकुलमणि यह एक विशेषण सगुण रूप कहिकर अपनी अभेद उपासना श्रीरामचंद्रजू के स्वरूप मैं लखायकर शंकर जी ने ग्रंथ के प्रारंभ समय सो निरविघ्न परि समाप्ति हेतु इष्टदेव कों प्रणाम किया अब पुनः पूर्वोक्त जो मूढहु की ईश्वरों पर आसंकारूपी जडता है तिस कों पुष्ट करते हैं ॥ ११६ ॥

निज भ्रम नहिं समुझहि अज्ञानी। प्रभु पर मोह धरहि जड प्रानी॥१॥

जिनहुं मूढ प्रानिअहुं की बुद्धि भ्रमी हुई है ते सीता के वियोगादिक व्यवहार देख कै श्रीरामचंद्र आत्मा विषे ऐसे मोह मानते हैं ॥ १ ॥

जथा गगन घनपटल निहारी । ढाप्यौ भानु कहहि कुबिचारी ॥२॥

जैसे गगन मों मेघ का पटल कहिये पुंज अथवा परदा देखकर मूरख कहते हैं सूर्य्य कों इनों ने ढांप लिया है सो कहां सूर्य्य कहां मेघ तातपरज यह बादल का परदा उना के नेत्रां के आगे आया है अरु उनो ने भानु के आगे ठहराया है सो दृष्टांत ॥ २ ॥ टिप्पणी—ढाप्यौ पाठांतर झांपेउ ।

चितव जु लोचन अंगुलि लाए । प्रगट जुगल ससि तेहि के भाए ॥३॥

जो अपने नेत्र के नीचे अंगुल धरे तिस को दोए चंद्रमें दृष्टि आवते हैं सो चंद्रमा एकही है उन की दृष्टि मों दोष हैं ॥ ३ ॥

उमा रामबिषइक अस मोहा । नभ तम धूम धूरि जिमि सोहा ॥४॥

हे उमा रामचंद्र बिषे मोह की कल्पना ऐसे है जैसे आकाश विषे तम धूर धूमादिक कहीते हैं सो यह सभी मेह कों सपरस नहीं कर सकते तैसे तीनो गुण रामचंद्र के स्वरूप कों छूहते नहीं अब सो स्वरूप लखावते हैं ॥ ४ ॥

बिषय करन सुर जीव समेता । सकल एक तें एक सचेता ॥ ५ ॥
सब कर परम प्रकासक जोई । राम अनादि अवधपति सोई ॥ ६ ॥

बिषे कहिये शब्द स्परसादिक करण नाम इंद्रीअहं का सुर कहिये इंद्रियहं के देवता एह सभीजीव सहित एक का एक प्रकाश पावते हैं जीव से देवता देवता से इंद्रिआं इंद्रिआं से बिषे अरु इनों सभों का जो प्रकासक परमस्वरूप जो शुद्ध चैतन्य सो रामचंद्र अवधपति हैं सोई कहते हैं ॥ ५ ॥ ६ ॥

जगत प्रकास्य प्रकासक रामू । मायाधीस ज्ञानगुनधामू ॥ ७ ॥

जगत जो है सो प्रकास्य कहिये अध्यस्त है अरु तिसका प्रकाशक कहिये अधिष्टान सो रामचंद्र हैं माया के स्वामी हैं ज्ञान अरु सरब गुणो के धाम हैं ॥ ७ ॥

जासु सत्य तातें जड माया । भास सत्य इव मोहसहाया ॥ ८ ॥

जिस परमात्मा की सत्ता के आस्रित जड माया आप सत्य की न्याई भासती है मोह कहिये अधिष्टान का अज्ञान तिसका सहायता कर इस कों दृष्टांतों कर पुष्ट करते हैं ॥ ८ ॥

दोहा—रजत सीप महुं भास जिमि, जथा भानुकर बारि ।
जदपि मृषा तिहुं काल सोइ, भ्रम न सकै कोउ टारि ॥ ११७ ॥

जैसे सीपी बिषे रूपा द्रिष्टि आवता है सीप के अज्ञान कर जैसे भानु की किरण विषै मृग तृष्णा का जल द्रिष्टि आवता है रेत के अज्ञान कर जदपि वह कल्पित पदारथ तीनो काल मिथ्या है परंतु भ्रम सभे मिथ्या नहीं भासते ॥ ११७ ॥

एहि बिधि जग हरिआस्रितरहई । जदपि असत्य देत दुख अहई ॥ १ ॥

एहि बिधि कहिए सुक्तिका आदिकों मों रजतादिकों वत जगत प्रभों के आस्रित है सो जदपि मिथ्या है परंतु दुख सांचा देता है जों कोऊ कहे असत्त वस्तु सांचा दुख कैसे देवै तिसपर दृष्टांत ॥ १ ॥

ज्यौं सपने सिर काटै कोई । बिनु जागे न दूरि दुख होई ॥ २ ॥

जैसे स्वप्ने मै किसी शत्रु ने जो किसी का शिर काटाहै सो तौ मिथ्या है परंतु रुदन करता हुआ जो उठता है सो नेत्रों मैं असुपात तौ सांचे दृष्टि आवते हैं अरु सस्त्र घात का खेद जागे बिना नहीं मिटता तैसे मिथ्या प्रपंच मो जन्म मरण रूपी सांचा खेद भास्या है सो जागृत बिना नहीं मिटता ॥२॥

जासु कृपा अस भ्रम मिटि जाई । गिरिजा सोइ कृपाल रघुराई॥ ३ ॥

जिस परमेश्वर की कृपा कर गुरु मिलते हैं तौ सब भ्रम मिटता है सो कृपालु श्रीरामचंद्रजो हैं कृपालु पद का भाव यह अब तुझ पर कृपा करके तेरा भ्रम भी मिटावेंगे ॥ ३ ॥

आदि अंत कोउ जासु न पावा । मतिअनुमानु निगम अस गावा ॥४॥

जिस के आदि अंत को कोऊ जान नहीं सकता अरु वेद भी अपनो मति अनुसार जिसकों बख्यमान रीति कर गावते हैं ॥ ४ ॥

बिनुपद चलै सुनै बिनु काना । कर बिनु करम करै बिधिनाना ॥५॥

आनन रहित सकलरस भोगी । बिनु बानी बकता बड जोगी ॥६॥

तन बिनु परस नयन बिनु देषा । गहै घ्रान बिनु बास असेषा ॥७॥

सबहीं भांति अलौकिक करनी । महिमा जासु जाइ नहिं बरनी ॥८॥

इनों वचनो कर आत्मा की सरब शक्तता कही जो अपनी सत्ता कर सरब व्योहारों कों करता हुआ भी सदा अकरता है प्रमाण कठवल्लीश्रुति । अपानपादाजवनोगृहीतापस्यत्वचक्षुः ससृणात्यकरणः सएव वेत्तिन च तस्यास्तिवेता तमाहुरग्यं पुरसं पुराणं । हाथों से बिना ग्रहण करता है पावों से बिना चलता है नेत्रहु से बिना देखता है करणों से बिना सुनता है सो सभ का वेत्ता है तिस का ज्ञाता कोऊ नहीं हो सकता तिसको सभ की आदि अरु पुराणपुरुष कहते हैं ॥ ५ ॥

दोहा—जेहि इमि गावहि बेद बुध, जाहि धरहि मुनि ध्यान ।
सोइ दसरथसुत भगत हित, कोसलपति भगवान ॥ ११८ ॥

इस भांति जिस को वेद गावते हैं अरु जिस के परास्वरूप कों मुनीश्वर ध्यावते हैं सो प्रभु भक्ति के बस हुआ दसरथ का पुत्र अरु अजोध्या का राजा आइ बना है जो गिरजा कहै हे प्रभो तुम रघुनाथजी को महिमा कहते हो परंतु तुम से बिशेष कोऊ कैसे होसकै जो कासी मो सरबजीवों को मोख्य देते हो तिसपर कहते हैं ॥ ११८ ॥

कासी मरत जंतु अवलोकी । जासु नामबल करौं बिसोकी ॥ १ ॥

हे गिरजे कासीबिषे मृत्यु होते जंतों की गति तैंने देखी है जिस रामतारक मंत्र के बल कर तिन कों असोकधाम की प्राप्ति करावताहौं जंतु पद कहणे से सर्व जीवों का बोध होता है प्रमाण काशीखंडे । ससकामसकाबकामुकाकलबिंका मृगाश्च जंबुका खराउरगा बानरानरा गिरजे काशी मृताधेपरामृतं ॥ १॥

सोइ प्रभु मोर चराचरस्वामी । रघुबर सब उर अंतरजामी ॥ २ ॥

तिस चराचरों के स्वामी अंतरजामी श्रीरामचंद्रजी की मैं उपासना करता हौं ॥ २ ॥

बिबसहुं जासु नाम नर कहहीं । जनम अनेक संचित अघ दहहीं ॥ ३ ॥

विवस कहिए परबस होएकर अर्थ यह अवहुं के बस पर के मूरछा आदिकों में भी जिसका नाम जपेआहुआ अनंत जनमों के पापों का नास करता है ॥ ३ ॥

सादर सुमिरन जे नर करहीं । भवबारिधि गोपद इव तरहीं ॥ ४ ॥

टिप्पणी—जो मनुष्य आदरपूर्बक सुमिरणकरते हैं सो संसार समुद्र को गाय के खुर के समान तर जाते हैं ॥ ४ ॥

राम सो परमातमा भवानी । तहंभ्रम अतिअबिहित तव बानी ॥ ५ ॥

तिस परमात्मा प्रभु विषे भ्रम का बाक कहणा यह तेरी बानी अति अनुचित है जाते ॥ ५ ॥

अस संसय आनत उर माहीं । ज्ञान बिराग सकल गुन जाहीं ॥ ६ ॥

जो मूढ ज्ञान के मान कर रामचंद्र बिषे ऐसे संशै करकै तिनकों जीव मानते हैं तिनमों योग ज्ञान वैराग्यादिक कोऊ गुण होवें सो भी नाम हो जाते हैं ॥ ६ ॥

सुनि सिव के भ्रमभंजन बचना । मिटि गय सब कुतरक कै रचना ॥ ७ ॥

भ्रम भंजन बचन कहिये जिनो मों श्रीरामचंद्र का महातम लखाया है अथवा जिनो मो राम नाम का महातम पर अप्रतीति का दोस दिखाया है प्रमाण ब्रह्मसंहिता मों । भगवत वाक्यं । मन्नाम कीरतन-फलं विविधं निसम्य सदधाति मनुते चउतारथवादं । जे मानुष सतसिंह पापचयेष्वपामि संसार घोर विवि-धार तिनिपीडतागं । मेरा नाम कीरतन फल सुन कर जो सद्धा नहीं करता अरु नाम संकीरतन फल कों अर्थ वाद मानता है तिसकों मैं पापों के संबूह मे डारता हौं पुनः संसार घोर बिषे अतिपीडित करता हौं यह सुन कर सभ कुतरकां मिटियां अरु ॥ ७ ॥ टिप्पणी—कुतर्क रचना यह । जो नृप तनय तौ ब्रह्म किमि, नारि बिरह मति भोरि । इत्यादि ।

भइ रघुपतिपद प्रीति प्रतीती । दारुन असंभावना बीती ॥ ८ ॥

श्रीरामचंद्र के पदारबिंदों विषे प्रीति अरु तिन के गुणो विषे प्रतीति भई अरु बहुत काल से जो प्रभों के स्वरूप की अज्ञात थी सो निवृत्त भई तब ॥ ८ ॥

दोहा—पुनि पुनि प्रभुपदकमल गहि, जोरि पंकरुहपानि ।
बोली गिरिजा बचन बर, मनहुं प्रेमरससानि ॥ ११९ ॥

इहां मानो पद निश्चै मो लगावना जो गिरजा के वाक्य प्रेम रस सों सनिग्धहो है बारंबार पद गहन का भाव यह है प्रभो जो संस्यात्मकों को सापरूप नीत मयवाक तुम ने कहे हैं सो मुझ पर न होवें मैं दासी हौं अरु ॥ ११९ ॥

ससिकर सम सुनि गिरा तुम्हारी । मिटा मोह सरदातप भारी ॥ १ ॥

सरित रित को धाम सम इहां उत्तम जनम में अविद्यारूपी ताप जो था सो तुमारे मुखरूपी इंदु से बचनारूपी सीतल कोमल अनंत जो किरणा हैं तिनोकर अब निवृत्त भया ॥ १ ॥

तुम्ह कृपाल सब संसय हरेऊ । रामस्वरूप जानि मोहि परेऊ ॥ २ ॥

इहां कृपालु पद इस निमित्त दिया जो मेरी पूरब जनम को अवज्ञा अरु इस जनम में भी तुमारे से अभावत प्रश्न करणा सो अपराध खिमाकर पुनः मुझ कों श्रीरामचंद्रजी का वास्तव स्वरूप लखाया ॥ २॥

नाथकृपा अब गयेउ बिषादा । सुखी भई प्रभुचरनप्रसादा ॥ ३ ॥

नाथ पद का भाव यह पूरष के मन सो संदेह उपजता है तो जहां कहां से निवृत्त करलेता है अरु मेरा तो इस्त्री तन था और से पूछणे को भी संका थी परंतु मेरे बडे भाग हुये जो स्वामी की कृपा से संदेह निवृत्त भया ॥ ३ ॥

अब मोहि आपनि किंकरि जानी । जदपि सहज जड नारि अयानी ॥४॥

जदपि मैं जुबती तिनो में भी अयानी कहिए मूरख तिस पर भी सहज जड हों जाते पारबती हों जदपि अद तुम ने अपनी दासी जाननी तत्व यह मेरी जडता जानकर पूरबवत त्याग न करणा अरु मेरे संसै हरन निमित्त ॥ ४ ॥

प्रथम जो मै पूछा सोइ कहहू । जौं मो पर प्रसन्नप्रभु अहहू ॥ ५ ॥

प्रथम जो मै नें प्रश्न करे हैं तिन का उत्तर कहोगे तब मैं जानोंगी मेरे पर प्रसन्न हैं जौं कहो वह प्रश्न फिर सुनावहु तो सुनो ॥ ५ ॥ टिप्पणी—प्रथमप्रश्न जो पार्वतीजी ने यह किया था उस का उत्तर पूछती हैं। प्रथम सो कारन कहहु बिचारी । निर्गुन ब्रह्म सगुन बपुधारी ॥ इत्यादि ।

राम ब्रह्म चिनमय अबिनासी । सर्बरहित सबउरपुरबासी ॥ ६ ॥
नाथ धरेउ नरतनु केहि हेतू । मोहि समुझाइ कहहु बृषकेतू ॥७॥

हे प्रभो तुमारी कृपाकर यह तो मै ने जान्या है श्रीरामचंद्र ब्रह्म चेतन अविनासी सरब से परे सरब के अंतर इस्थित हैं परंतु तिनो नें मानुष देह किस निमित्त धार्या तिन का सभ चरित्र मुझे समुझाइकर कहो अब ग्रंथकार कहते हैं ॥ ७ ॥

उमाबचन सुनि परम बिनीता । रामकथा पर प्रीति पुनीता ॥ ८ ॥

गिरजा के वाक्य अति नम्रता संयुत सुने जिस कर जान्या अब इस के मन में कुतर्क का अंस नहीं श्रीरामचंद्र की कथा स्रवण में रुचि है ताते ॥ ८ ॥

दोहा—हिय हरषे कामारि तब, संकर सहज सुजान ।
बहु बिधि उमहि प्रसंसि तब, बोले कृपानिधान ॥

गिरिजा सो श्रीरामचंद्रजी के स्वरूप की ज्ञात अरु कथा स्रवन में प्रीति देखकर शंकरजी प्रसन्न भये

अरु उमा की प्रसंसा कर बोले कामारि पद का भाव यह तिस के रूपादिकों पर रीझ के अस्तुति नहीं करी श्रीरामचंद्र पर प्रतीति देख के प्रसंसी है किंवा काम पदकर समुझनीयां कुतर्करूपी वासना गिरजा कियां सो जो निवारीयाहै ताते कामारि कहे सहज सुजान कहिये सरवज्ञ कृपानिधान कहिये जिनों सरब प्रकार रामचं कों कृतारथ करणा।

सोरठा—सुनु सुभ कथा भवानि, रामचरित मानस बिमल।
कहा भुसुंडि बषानि, सुना बिहँगनायक गरुड़॥

हे भवानी यह रामचरित मानस रूपी जो शुभ कथा भुसुंड ने गरुड़ प्रति कहीहै सो अब सुण जो उमा पूछै भुसुंड ने गरुड कों किस बिध सुनाई है तिसपर कहते हैं।

सो संबाद उदार, जेहि बिधि भा आगे कहब।
सुनहु रामअवतार, चरित परम सुंदर अनघ॥

सो संबाद जो उदार कहिए महान प्रसंग है प्रमाण मेदनी। उदारोदात्त महतो: दक्षेणाव्यभये यता। अथवा उदार पुरुष जो भुसुंड अरु गरुडजी हैं तिन का जो संवाद है सो जिस भांति भया है सो आगे उत्तरकांड मै कहैंगे जाते इहां कहे से ग्रंथ का आदि अति वृद्ध हो जाता है अब रामचंद्र के अवतार की जो परम पवित्र कथा है सो सुनहु।

हरिगुन नाम अपार, कथारूप अगनित अमित।
मैं निज मति अनुहार, कहौं उमा सादर सुनहु॥ १२०॥

प्रभों के गुण अरु नाम अपार है कथा अगनित हैं अरु रूप अमित हैं अमित कहिये जिन के बुद्धि बलादिकों का प्रमान नहीं करा जाता तिनको मैं अपनी मति अनुसार कहूंगा तुमभी प्रीतिकर सुनना ॥१२०॥

सुनु गिरिजा हरिचरित सुहाए। बिपुल बिसद निगमागम गाए॥१॥

हे गिरजे श्री रामचंद्रजी के निरमल जो अनंत चरित्र हैं सो स्रुतों शास्त्रों सभों ने गाए हैं परंतु ॥ १॥

हरिअवतार हेतु जेहि होई। इदमित्थं कहि जाइ न सोई॥ २॥

हरि के अवतार का कारण इदमिथं कहिए यह बात ऐसे ही हैं तत्र यह एक कारण नहीं कहा जाता अनेक प्रयोजन अवतार कर सिद्ध होते हैं सोई कहते हैं। टिप्पणी—मुन्शी रोशनलाल ने निम्न लिखित अर्थ लिखा है। हरि के अवतार वा हरएक अवतार जिस हेतु होता है उसके विषय कहना कि यह इसीलिये होता है नहीं हो सकता है।

राम अतर्क्य बुद्धि मन बानी। मत हमार अस सुनहि सयानी॥३॥

हे बुद्धिमती हमारा मत यह है श्रीरामचंद्र को मनबानी का परा जानना प्रमाण स्रुति। यतो वाचोनिवर्त्ततेअप्राप्य मनसा सह। जहां से वानी हट आवती है मन के सहित जिस को पहुंच नहीं सकती ॥३॥

तदपि संत मुनि बेद पुराना। जस कछु कहहि स्वमतिअनुमाना॥४॥

तस मैं सुमुषि सुनावों तोही। समुझि परै जस कारन मोही ॥ ५ ॥

हे सुमुखि जद्यपि ब्रह्म अनंत है तदपि जैसे संत शास्त्र अपनी मति के अनुसार कहते हैं अरु जैसा अवतारों का मूल कारण मुझे समुझ परता है तैसे मैं भी तुझे कहता हौं ॥ ५ ॥

जब जब होइ धरम कै हानी। बाढहिं असुर अधम अभिमानी ॥६॥
करहिं अनीति जाइ नहिं बरनी। सीदहिं बिप्र धेनु सुर धरनी ॥ ७ ॥

सीदन नाम पीडा करन का अपर स्पष्ट ॥ ७ ॥

तब तब प्रभु धरि बिबिध सरीरा। हरहिं कृपानिधि सज्जनपीरा ॥८॥

तब तब बाराह नरसिंहादिक अनेक तन धारते हैं जाते प्रभु हैं अरु दासों के दुख दूर करते हैं जाते कृपासिंधु हैं ॥ ८ ॥

दोहा—असुर मारि थापहिं सुरन्ह, राषहिं निज श्रुतिसेतु।
जग बिस्तारहिं बिसद जस, रामजन्म कर हेतु ॥ १२१ ॥

रामपद इहां सरब अवतारों का उपलक्ष्यक है ॥ १२१ ॥ टिप्पणी—श्रुति बेद की मर्याद राम के जन्म का यही कारन है। बालमीकिजी ने भी कहा है। तुम पालक संतत श्रुतिसेतू॥ श्रुतिसेतु पालक राम तुम।

सो जस गाइ भगत भव तरहीं। कृपासिंधु जनहित तनु धरहीं ॥१॥
रामजनम के हेतु अनेका। परम बिचित्र एक तें एका ॥ २ ॥

श्रीरामचंद्रजी के अवतार के कारण अनेक अरु परम सुंदर अरु अदभुत रूप हैं तिनो मैं।

जनम एक दुइ कहौं बषानी। सावधान सुनु सुमति भवानी ॥३॥

जनम के हेतु चार कहे हैं एक जै विजै के निमित्त एक जलंधर के निमित्त एक रुद्रगणो के निमित्त एक प्रतापभान अरिमरदन के निमित्त अरु इहां एक दुइ पद दिआ है ताते अलप समुझणो अथवा अर्थ इस भांति लगावना एक कहिये श्रीरामचंद्र अद्वितीय परमात्मा दुइ कहिये द्वैतसहित रावण अरु कुंभकरण तिनके जनमो के हेतु सो बख्यान कहिये विस्तार कर कहता हौं ॥ ३ ॥

द्वारपाल हरि के प्रिय दोऊ। जय अरु बिजय जान सब कोऊ ॥४॥
बिप्रस्राप तें दूनौ भाई। तामस असुरदेह तिन पाई ॥ ५ ॥

टिप्पणी—तामस तमोगुणी असुरदेह असुरयोनि।

कनककसिपु अरु हाटकलोचन। जगतबिदित सुरपतिमदमोचन ॥ ६ ॥
बिजई समर बीर बिष्याता। धरि बराहबपु एक निपाता ॥ ७ ॥

हिरन्याच नामा जुद्ध मो सुरेंद्रों के जीतनहारा प्रगट बीर सो बाराह रूप ह्वै कर मारा ॥ ७ ॥

होइ नरहरि दूसर पुनि मारा। जन प्रहलाद सुजस बिस्तारा॥ ८॥

दोहा—भए निसाचर जाइ तेइ, महाबीर बलवान।
कुंभकरन रावन सुभट, सुरबिजई जग जान॥ १२२॥

मुकुत न भए हते भगवाना। तीनि जनम द्विजबचन प्रमाना॥ १॥

प्रभों के करों मर कर मुक्त इस हेतु ना भए जो सनकादिको नें कहा था जुद्ध कर तीन जनमों मैं पुनः बेकुंठ पावोगे।

एक बार तिन्ह के हित लागी। धरेउ सरीर भगतअनुरागी॥ २॥
कस्यप अदिति तहां पितु माता। दसरथ कौसल्या बिष्याता॥ ३॥

टिप्पणी—कश्यपु दशरथ हुए अदिति कौशल्या हुईं।

एक कलप एहि बिधि अवतारा। चरित पवित्र किए संसारा॥ ४॥

यह द्वै चरण आक्षेपक भासते हैं जाते अर्थ पुनरुक्ति है अरु चरण चतुर्दश हैं॥४॥ टिप्पणी—सुखदेव लाल ने भी इस चौपाई को अपनी टीका में नहीं लिखा है। पर महात्मा सीतारामीय हरिहरप्रसादजी रौशनलालजी, महात्मा रामचरणदासजी ने अपनी टीका में इस चौपाई को लिखा है।

एक कलप सुर देषि दुषारे। समर जलंधर सन सब हारे॥ ५॥
संभु कीन्ह संग्राम अपारा। दनुज महाबल मरै न मारा॥ ६॥

महा काल के करों दैत ना मरणे का हेतु कहते हैं॥ ६॥

परम सती असुराधिपनारी। तेहिबल ताहि न जितहि पुरारी॥७॥

जलंधर की नारी वृंदा नाम परम पतिब्रता थी तिस के प्रभाव कर तिस पर शिवजी का बल ना परै ताते पतिब्रता का पति अजीत अरु अमरादिक गुणों संयुत होता है प्रमाण पद्मपुराणे। स्कंदपुराणे। यस्य पत्नीभवेत्साध्वी पतिब्रत्यपरायणा। सजई सर्वलोकेषु ससुखी सधनीपुमान्॥ जिस पुरुष के गृह स्रेष्ट जुवती पतिब्रता धरम परायण है सो सरब लोकों विषे विजय पावता है सुखी रहता है संपदा युक्त होता है। कंपते सर्व तेजांसि दृष्टवा पातिब्रतं महः भर्त्ता सदा सुखं भुक्तेरममाणा पतिब्रतां। पतिब्रता के तेज आगे रवि आदिकों सभों के तेज कांपते हैं अरु तिसका रमण सदा सुखी रहताहै अर्थ यह नारी के जीवतिआं मरता नहीं। धन्यासा जननीलोके धन्योसौ जनकः पुनः धन्यः सचपति श्रीमान ये षांगेहे पतिब्रता। स्पष्ट॥ ७॥ टिप्पणी—शिव की स्त्री सती यह परम सती अतएव न जीते।

दोहा—छल करि टारेउ तासु ब्रत, प्रभु सुरकारज कीन्ह।
जब तेहि जानेउ मरम तब, श्राप कोप करि दीन्ह॥ १२३॥

जब जलंधर साथ महादेव का युद्ध भया अरु जलंधर मरे नहीं तब शंकरजी कर प्रार्थे हुये भगवंत

ने वीचाख्या नारद के शापकर लछमी नें हयग्रीवंदानव के घर विंदा रूप धारिश्रा था सो जलंधर की नारी भई है तिस के पतिब्रत के प्रभाव कर यह मरता नहीं ताते उस का सतभंग करिये तब तपस्वी बनकर भगवान उहां गये अरु अपणी आंगिकां लोकों कों दिखाया तदनंतर बृंदा ने भी उन कों पूछा मेरा भरता रुद्रसाथ जुद्ध करता है सो कब जीतैगा तब उस ने कहा तेरापति हतभया है सुनकर बृंदा ने कहा पतीब्रता के जीवतीत्र्प्रां भरता मरता नहीं तुमारा कहणा मिथ्या है तब उस ने नभ की ओर दृष्टि करी तहां से दे बानर आए अरु तिनो ने मायारचित जलंधर के अंग कटेहुये भिन्न भिन्न उहां देखाये तब रानी ने निश्चैजानिश्रा अरु रिषीश्वर के आगे प्रार्थनाकरी जो इस को जीवाओ तब उस ने बृंदा से अलख्यत अपणाप्रवेश उस के शरीर मों किश्रा उस समै रानो प्रसन्नभई पुनः पति के साथ संभोग किश्रा तब क्रीडासमै तिस कों विघ्नजाणिश्रा अरु स्रापदिश्रा जैसे तुम ने जलंधर की इस्त्री कों छलिश्रा है तैसे जन्मांतर मैं जलंधर भी राखसरूप ह्वैकर तुमारी इस्त्रीसाथ छल करेगा अरु कपीं को जो तुम ने अपने सहायक अब किश्रा है ताते तब भी तुमारे कपिही संगीहोहिंगे ॥ १२३ ॥

तासुश्राप हरि कीन प्रमाना । कौतुकनिधि क्रपाल भगवाना ॥ १॥

तिस का स्राप प्रभों ने प्रमानकीना जाते परम कौतुको हैं अर्थ यह तिस का कौतुकदेख्या पुनः रावण का कौतुक भी देखैंगे अरु क्रपालु हैं जो तिस कों असुरदेह सें छुडाइकर लख्यमीरूप किश्रा अरु रावण को भी अधमदेह से छुडावैंगे अरु भगवान हैं किसूभांति कर भी दूषित नहीं होते ॥ १ ॥

तहां जलंधर रावन भएऊ । रनहति राम परमपद दएऊ ॥ २ ॥

तहां कहिये तिसकाल मों जलंधर का अवतार रावनभया तिसको मारकर मुक्ति किश्रा तत्व यह इहां कुंभकरण का अवतार संग न भया एककाल दसकंठही भया सो कल्पांतर के भेद मों समकुछ बनता है ॥ २ ॥

एकजनम कर कारन एहा । जेहिलगि राम धरोनरदेहा ॥ ३ ॥
प्रतिअवतार कथा प्रभुकेरी । सुनु मुनि बरनी कविनघनेरी ॥ ४ ॥
नारद श्रापदीन्ह एकबारा । कलप एक तेहिलगि अवतारा ॥ ५ ॥
गिरिजा चकित भई सुनि बानी । नारदविष्णुभगत मुनि ज्ञानि ॥ ६ ॥

देवरिष परम भागवत ताते स्वामीप्रति स्रापदेना उचित नहीं अरु ज्ञानवान हैं ताते भी रागद्वैष नहींबनता सो ॥ ६ ॥

कारन कवन श्राप मुनि दीन्हा । का अपराध रमापति कीन्हा ॥ ७ ॥

रमापति विशेषण का भाव यह सरब उपाधां लख्यमी उठावती है सो जिनकी दासी भई तौ तिन को अपराधी कौन करै ॥ ७ ॥

यह प्रसंग मोहि कहहु पुरारी । मुनिमन मोह आचरज भारी ॥ ८ ॥

ऐसे मुनीश्वर के मन मो मोह होणा यह बडा आश्चर्य है ॥ ८ ॥

दोहा—बोले बिहसि महेस तब, ग्यानी मूढ न कोइ ।
जेहि जस रघुपति करहिं जब, सो तस तेहिछन होइ ॥

गिरजा के बचन सुनि कर महेश्वर हांस कर बोले हे पारबते न कोई ग्यानी होसकता है न मूढ होता है जिस को जैसा जिसकाल मों रामचंद्र करते हैं सो तिसकाल मों तैसाही होता है हंसकर बोलन का भाव यह तैने नारद के आपही की बात सुनी है उस के साथ तो बडे कौतुक भए हैं सो आगे कहेंगे वा अपने उपदेष्टता की बात सुन कर तूं चकृतभई है परंतु तूं भी तौ भक्ति ग्यानवंत है अपनी बात तुझ को स्मृत है कि नहीं तुम को कैसा मोह भया था प्रयोजन यह भगवंत की इच्छा प्रबल है ।

सोरठा—कहौं रामगुनगाथ, भरद्वाज सादर सुनहु ।
भवभंजन रघुनाथ, भजु तुलसी तजि मान मद ॥ १२४ ॥

जाज्ञवल्कजी कहते हैं हे भरद्वाज जो शंकरजो ने उमाप्रति सुनाई है सो श्रीरामचंद्र के गुणानवादों की प्रतिपादक नारदजी की कथा तुमसों कहता हौं तुम ने श्रीरामचंद्र कों भयभंजन जान कर मानमद त्याग कै भजनकरना ग्रंथकार के मुखों मानमद त्याग कहणे का भाव यह नारदजी देवरिषि पुनः काम क्रोध कों जीतनहारे तिनो की मानमद ने यह दसाकरी तौ स्मदादिकों की क्या बात है ॥१२४॥

हिमगिरिगुहा एक अतिपावनि । बह समीप सुरसरी सुहावनि ॥ १ ॥
आश्रम परमपुनीत सुहावा । देषि देवऋषि मनअतिभावा ॥ २ ॥

परमपावन कहिये जहां के तप का फल बडा अरु सुहावा कहिये जहां चित्त रमै अपर सुगम ॥२॥

निरषि सैल सरि बिपिनबिभागा । भएउ रमापति पदअनुरागा ॥ ३ ॥

गिर सरिता बन को सुंदरता देख कै श्रीपति के भजन की ओर चित्तलागा तत्व यह रम्यस्थान देखिकर बिखयारामोंजों को काम मैं रुचि होती है हरि भक्तों को श्रीरामचंद्र के नाम मैं प्रीति होती है ॥३॥

सुमिरत हरिहि श्रापगति बाधी । सहजबिमलमनलागिसमाधी ॥४॥

दख्यप्रजापति ने नारदजी कों स्रापदिआहुआ था जो दोघडी प्रजंत तुम कहूं ठहरोगे नहीं सो भगवान के भजन के प्रभाव से तिस स्राप की गति कों रोक्या अरु जिन का सुभाव कहीं निरमल मन है जाते मानसी सृष्टि मों उपजे हैं ताते अजत नहीं समाधि लगाई ॥ ४ ॥

मुनितप देषि सुरेस डेराना । कामहि बोलि कीन्ह सनमाना ॥५॥

नारदजो के तप कों देख कै शक्र को त्रास भया सो जद्यपि नारदजी का मन तौ निहकाम था परंतु पीछे जो कहा है लख्यमीनारायण के पदारबिंदों मों प्रीति करी इसी ते इंद्र कोप्या जो कदाचित मेरी श्री कोंहीं चाहता होय तब मदन कों कारज करता जान कै सनमान पूरबक बोलाइ कै कहत भया ॥ ५ ॥

सहित सहाय जाहु मम हेतू । चलेउ हरषि हिय जलचरकेतू ॥६॥

बसंतादिकों सहायों को संगलेकर जाहु तब जलचरध्वज प्रसन्नहुकर चला प्रसन्नहु चलना स्वामी का कारज जानकर किंबा रिषों का तपनासन शील है ताते हरष्या जलचरकेतु विशेषण कथन से काम की अतिचंचलता अरु मन कों द्रवावना लखाया ॥ ६ ॥

सुनासीर मनमहु अति त्रासा। चहत देवऋषि ममपुर बासा॥ ७॥

सुनासीर नाम इंद्र का इतर जों कोउ कहै नारद की बृत्ति तो भगवतपरायण थी इंद्र कों अकारण भय क्यों हुआ तिसपर कहते हैं ॥ ७ ॥

जे कामी लोलुप जग माहीं। कुटिलकाकइवसबहिं डेराहीं॥ ८॥

जैसे काग सभों से डरता है तैसे कामी कुटिल विषियारामी जो कृपिन हैं ते संतहुं से भी संका करते हैं ॥ ८ ॥

दोहा—सूष हाड लै भाग सठ, स्वान निरषि मृगराज।
छीनि लेइ जनिजानि जड, तिमि सुरपतिहि न लाज॥१२५॥

जैसे सूखेहाड कों उठाइ कै सिंघ से त्रास कर स्वान भागता है तैसे संतों की दृष्टि मै सुष्क अस्थिवत जो स्वरगादिक हैं तिन कों इंद्र संतों से दुराया चाहता है निरलज्ज कथन का भाव यह संतों कों निस्काम देखकर कईबेर लज्जितभया है परंतु पुनः भी बिघ्न करताही है॥ १२५ ॥

तेहि आश्रमहिमदनजब गएऊ। निज माया बसंत निरमएऊ॥ १॥
कुसुमित बिबिध बिटप बहुरंगा। कूजहिं कोकिल गुंजहिं भृंगा॥ २॥

अनेकों जातों अरु अनेकों रंगों के तरु प्रफुल्लित भये हैं तिनो पर कोकिला बोलतीआं हैं अरु मधुप गुंजारते हैं ॥ २ ॥

चली सुहावनि त्रिबिध बयारी। कामकृसानु बढावनिहारी॥ ३॥

कामरूपी अनल कों बढावनहारी जो सीतलमंद सुगंध समीर है सो तिस आश्रम मो चली ॥ ३ ॥

रंभादिक सुरनारि नबीना। सकल असमसरकलाप्रबिना॥ ४॥
करहिंगान बहुतान तरंगा। बहुबिध क्रीडहि पानिपतंगा॥ ५॥

असमसर कहिये विषम हैं जिन कै बान तिस काम की कला विषे प्रवीन जो रंभादिक हैं सो तानों के तरंगो कर गावतीआं हैं अरु पतंग कहिये गेंदु तिन संग क्रीडा करतीआं बिचरतीआं हैं ॥ ४ ॥ ५ ॥

देषिसहाय मदन हरषाना। कीन्हेसिपुनिप्रपंचबिधिनाना॥ ६॥

सैना का कौतुक देखकर मदन प्रसन्न भया परंतु नारद पर बल न पडा देखकर मन कों खोभ्यादिक जो अपने प्रपंच थे सोपि कीने तथापि ॥ ६ ॥ टिप्पणी—खोभ्यादि = छोभादि।

कामकला कछु मुनिहि न व्यापी। निज भय डरेउ मनोभव पापी ॥७॥

मनोभव कहिये काम इतर जो कोउ कहै मनमथ का बल नारद पर क्यौं न परा तिस पर कहते हैं ॥ ७ ॥

सीम कि चांपि सकै कोउ तासू। बड रखवार रमापति जासू ॥८॥

सीम कहिये तिस की हद दृष्टांत में हद कहिये बुद्धि का निश्चा तिन का कौन मिटाय सकता है जिनों का सेष्ट रखवाला विष्णुदेव हैं ॥ ८ ॥

दोहा—सहितसहाय सभीत अति, मानिहारि मनमैन।
गहेसि जाइ मुनिचरन गहि, सुन्दर आरतबैन ॥ १२६ ॥

सेनासहित मन मो हार मानि के अतिसभीत जो मैन है सो मुनीश्वर के पग गहि कर सुंदर कहिये मृदु अरु आरत कहिये अपनी पराधीनता के सूचक वचन कहतभया ॥ १२६ ॥ टिप्पणी—सुंदर आरत बैन। पाठांतर कहि सुठि आरति बैन। सुठि आरत अत्यंत दुखी।

भएउ न नारदमन कछु रोषा। कहि प्रियबचन काम परितोषा ॥१॥

तिन को अपराधी जानकर कोपकरना उचित था परंतु देवरिषि ने ख्यमाजुक्त ह्वैकै प्रत्युत काम कों कोमलालाप करकै संतुष्ट किआ तदनंतर ॥ १ ॥

नाइ चरनसिरु आयसु पाई। गएउ मदन तब सहितसहाई ॥२॥
मुनि सुसीलता आपनि करनी। सुरपतिसभा जाइ सब बरनी ॥३॥

काम क्रोधादि कों के बस करन रूपी जो नारदजी की सुशीलता है अरु अपना सरब भांति का बल लगावन रूपी जो करनी है सो इंद्र की सभा मों जाइकै बरनन करी तब ॥ ३ ॥

सुनिसब के मन अचरजुआवा। मुनिहि प्रसंसि हरिहि सिरुनावा ॥४॥

काम क्रोध का जीतना आचरज मान कर सुरों ने मुनीश्वर के धीरजकी उस्तुति करी अरु भगवान को नमस्कार किआ तत्व यह धन्य भगवंत हैं जो अपने भक्तों की ऐसी सहायता करते हैं ॥ ४ ॥

तब नारद गवने सिव पाहीं। जिता काम अहमिति मनमाहीं ॥५॥

काम क्रोध जीतने का हंकार मन मो आया तिसकर नारद शिवजी के पास चला भाव यह जिसको अपूरब वस्तु प्राप्त होती है सो किसी महत पुरुष अपने मित्र को दिखाया सुनाया चाहता है किंवा जिस विद्या में कोई निपुन होता है उस विद्या के आचारज के पास अपने गुण कों प्रगटकरण जाता है सो काम के जीतवे में संभु कों मुख्य जान के तिन के समीप अपने बल को लखावने गये ॥ ५ ॥

मारचरित संकरहि सुनाए। अतिप्रिय जानि महेस सिषाए ॥६॥

प्रथम तो संत पुनः ब्रह्माजी के पूत्र बहुरो काम क्रोध के जीतनहारे तिसकै अति प्रिय जाने अरु तिन के मन मे महामान देखकर महेशजी ने सिख्या दीनी सो कहते हैं ॥ ६ ॥

बार बार बिनवौं मुनि तोही। जिमि यहकथा सुनाई मोही॥ ७॥
तिमि जनिहरिहिसुनावहुकबहूं। चलेहु प्रसंग दुराएहु तबहूं॥८॥

हे मुनिवर मैं तुझे बार बार प्रनाम करता हौं जाते तैं ने बड़ापुरुषारथ करा है परंतु जैसे अहंता सहित मुझे यह बात सुनाई है तैसे विश्नजी के निकट ना कहनी अरु जौं कोउ और वहां यह प्रसंग चलावै तौभी तुम नें तूस्नीहोना तत्व यह प्रभु गरबप्रहारी हैं॥ ८॥

दोहा—संभुदीन्ह उपदेस हित, नहिं नारदहिं सुहान।
भरद्वाज कौतुक सुनहु, हरिइच्छा बलवान॥ १२७॥

हरिइच्छा करकै संभुजी कों नारदजी ने इरषावंत समुझिया ताते तिन के बचन मो रुचि ना करी सोई बिस्तार करकै कहते हैं॥ १२७॥

राम कीन्ह चाहहिं सोइ होई। करै अन्यथा अस नहिं कोई॥ १॥
संभुबचन मुनिमनहि न भाये। तब बिरंचि के धाम सिधाये॥ २॥
एकबार करतल करबीना। गावत हरिगुन गानप्रबीना॥ ३॥

गान विद्याविषे प्रवीन जो नारद हैं सो हाथ मो बीना लैकै प्रभों के गुण गावताहुआ एकबेरी॥३॥

क्षीरसिंधु गवने मुनिनाथा। जहँ बस श्रीनिवासश्रुतिमाथा॥ ४॥

मुनिवर चीरनिधि कों गया जहां लक्ष्मी का आसै अरु स्रुतों का सिद्धांत प्रभु विश्नुजी हैं॥ ४॥

हरषि मिले उठि कृपानिकेता। बैठे आसन ऋषिहि समेता॥ ५॥

जिसकों आयुथान करणा होवै तिसको हरष संयुक्तहो मिलीता है किंबा जो कामादिकों को जीतैं तिसपर भगवान प्रसन्न होते हैं सो इस ने काम क्रोध कों जीता है इसकर हर्षित ह्वै मिले किंबा प्रभों ने यह विचारा मेरे हरषसहित उत्थान सें इस कों मान अति अधिक होवेगा तब शंकर का उपदेश इस को विशेष भूलजायगा अरु हम इसका कौतुक देखैंगे तिस निमित्त॥ ५॥

बोले बिहँसि चराचरराया। बहुते दिन कीन्ही मुनि दाया॥ ६॥

यहां बिहंसना इस की मूढता कों देखकर है जो शंकरजी कर निवारण किआहुआ भी हम कों वोही बात सुनावन आया है तब॥६॥ टिप्पणी—चराचर के राया राजा विष्णु बिहंसि के बोले कि बहुत दिन पर मुनि ने दया की अर्थात् आये। बिहंसि के बोलने का आशय यह कि नारद अभिमान युक्त हैं अथवा हंसि के बोलना विष्णु का स्वभाव है।

कामचरित नारद सब भाषे। जद्यपि प्रथम बरजि सिव राषे॥ ७॥

जौं कोउ कहै शंकरजी कर निवारन करे अरु भगवान कों भी गरबप्रहारी जानतेहुए देवरिष हंकार संयुक्त क्यों बोले तिसपर ग्रंथकार कहते हैं॥ ७॥

अतिप्रचंड रघुपति कै माया । जेहि न मोह अस को जगजाया ॥ ८ ॥

प्रभों की माया अति प्रबल है सो सभों को मोहती है मो नारद को मोहत देख कर ॥ ८ ॥

दोहा—रूष बदन करि बचनमृदु, बोले श्रीभगवान ।
तुम्हरे सुमिरन तें मिटहि, मोह मार मद मान ॥ १२८ ॥

मुख रुखाकर के महाराज मृदुगिरा बोले उस को उनमत्त जानकर तौ मुख रुखा किया अरु प्रभों के क्रोधादिक अधीन हैं ताते कोमलबचन कहे किंबा उस को गरबित जानकर मुख कुपत किया था परंतु बिचाख्या प्रथम एता सनमान कर कै सीधृही अपमान करदेना यह रीति बडिवों को नहीं ताते मृदुबानी बोले किंच मुख रुखा इस निमित्त किया जो इस का गरब निवारिए अरु सुंदरगिरा इस हेतु बोले जो अबी कौतुक देखणा है तत्व यह शंकरजी हमारे परम प्यारे हैं इस ने उन के हितसूचक बचन नहीं माने ताते इस कों काम क्रोध सेहीं लज्जित करवाइये श्रीभगवान विशेषण का भाव भी येही जो कछु चाहें सो कर सकते हैं अरु जो करें तिन पर किसी की तरक नहीं अरु बचन यह बोले हे नारदजी तुमारे सिमरण करणहारिवों के मोह मारादिक मिट जाते हैं तौ तुमारे आगे क्या वस्तु हैं इस कथनकर उस को मान दिया अरु वास्तव ते अपमान किया जो जिस कारज कों सेवक कर आवे वही स्वामी आप जायकर करै तौ तिस की क्या बडाई है किंबा पद अन्वै करणा मोह मार मद मान तुमारे सिमरण कर मिटहिंगे अर्थ यह जब नम्रता संजुक्त भगवंत का सुमिरण करोगे तब मन निरमल होवेगा अथवा सिमरण सिंमृत एक वस्तु के नाम हैं सो तुम को अब अविद्या की विख्येपता कर आतमा का विसमरन भया है जब स्वरूप की सिंमृत होयगी तब तुमारी अहंता मिटेगी यह अर्थ भगवान के भावी आसै का है ॥१२८॥

सुनु मुनि मोह होइ मन ता कें । ग्यान बिराग हृदय नहिं जा कें ॥ १ ॥
ब्रह्मचरजब्रतरत मतिधीरा । तुम्हहिं कि करै मनोभव पीरा ॥ २ ॥
नारद कहेउ सहित अभिमाना । कृपा तुम्हारि सकल भगवाना ॥३ ॥

प्रभों की गिरा सुन कर हंकार संजुत नारद बोल्या हे महाराज तुमारी ही कृपा कर सभ कुछ हुआ है तब ॥ ३ ॥

करुनानिधि मनदीष बिचारी । उर अंकुरेउ गर्बतरु भारी ॥ ४ ॥

कृपानिध ने बिचाख्या इस ने उपेख्या कर कहा है जो तुमारी कृपा कर सभ कुछ है ताते इस के रिदे मों बडा हंकार रूपी वृच्छ हुआ है करुणानिधि विशेषण का भाव यह थोरे महुं हीं इस का हंकार निवृत्त होइ जाई सोई करते हैं ॥ ४ ॥

बेगि सो मैं डारिहौं उपारी । प्रन हमार सेबकहितकारी ॥ ५ ॥

यद्यपि मान का फल जनम मृत्यु है परंतु हमारा बिरद दास रख्यक है ताते तिस गरब कों ऐसी रीति से उखाडोंगा जैसे ॥ ५ ॥

मुनिकर हित ममकौतुक होई । अवसि उपाय करबि मैं सोई ॥ ६ ॥

मुझ को तो इस में कछु जतन नहीं अरु मुनीश्वर का कल्यान होवैगा जाते मान नाश होवैगा ताते मुझ को यह उपाउ अवस्य करतव्य है ॥ ६ ॥

तब नारद हरिपद सिर नाई। चलेहृदयअहमितिअधिकाई ॥ ७ ॥

आसंका। नारद तो भगवान को नमसकार कर चला था उस को विघिन क्यों भया। उत्तर। रीत ऐसि थी प्रदछ्यना कर अष्टांग दंडवत करनी सो प्रकार न किया उपेछ्या कर शिरमात्र ही निवाइ दिया तिस उपेछ्या का फल तौ बिघ्न भया अरु प्रभों के दरसन अरु नमस्कार करणे के फल पुनः रछ्याहोएगी ॥७॥

श्रीपति निज माया तब प्रेरी। सुनहु कठिन करनीतेहिकेरी ॥ ८ ॥

निज माया इस कर कही जो औरों देवत्यों की माया इस पर नहीं पडती सो तिस माया की विचित्रता सुनो ॥ ८ ॥

दोहा—बिरचेउमगुमहुं नगर तिहि, सतजोजन बिस्तार।
श्रीनिवासपुर तें अधिक, रचना बिबिध प्रकार ॥ १२९ ॥

बैकुंठपुर ते अधिक रचना कहनी अतिस्योक्ति है अथवा माया सो कुछ आश्चर्य नहीं अब प्रजा संजुत तिस नगर के भूप का बरनन करते हैं ॥ १२९ ॥

बसहिं नगर सुंदर नर नारी। जनु बहुमनसिजरतितनुधारी ॥ १ ॥

तेहि पुर बसै सैलनिधि राजा। अगनित हय गज सेनसमाजा ॥२॥

सत सुरससम बिभव बिलासा। रूप तेज बल नीति नेवासा ॥ ३ ॥

सौ इंद्र के समान जिस कों संपदा का आनंद है अरु रूप तेज बल नीतादिकों का मंदिर है ॥ ३ ॥

बिस्वमोहनी तासु कुमारी। श्री बिमोह जेहि रूपनिहारी ॥ ४ ॥

इहां भी अतिस्योक्ति है अथवा माया सों सब कछु बनता है ॥ ४ ॥

सोइ हरिमाया सबगुनखानी। सोभा तासु कि जाइ बखानी ॥ ५ ॥

टिप्पणी—सो हरि की माया सब गुन खानी। रज सत तम गुणों की खानि ॥ ५ ॥

करै स्वयंबर सो नृपबाला। आए तहँअगनित महिपाला ॥ ६ ॥

नृपबाला कहिये राजपुत्री किंबा सरब बाला की नृप कहिये सिरोमनि सो स्वयंबर कहिये अपनी इच्छा पूरवक वर देखलैना करती है इस निमित्त ॥ ६ ॥

मुनि कौतुकी नगर तेहि गएऊ। पुरबासिन्ह सब पूछत भएऊ ॥ ७ ॥

मुनीश्वरों को नगरों में जाना अरु तमासे देखण मे क्या काम है परंतु नारदजी गान विद्या में जो संपन्य हैं ताते कौतुकी हैं तिस निमित्त पुर मे प्रवेस करकै लोगों से वृतांत सुना ॥ ७ ॥

सुनि सब चरित भूपगृह आए। करिपूजा नृप मुनि बैठाए ॥ ८ ॥

दोहा—आनि देषाई नारदहिं, भूपति राजकुमारि।
कहहु नाथ गुन दोष सब, एहि के हृदय बिचारि॥१३०॥

देषि रूप मुनि बिरति बिसारी। बडी बार लगि रहे निहारी॥१॥

उस कुमारी का रूप देखते ही मुनीश्वर कों बैराग विस्मृत होइ गया जाते चिर प्रजंत उस के मुख की वोर देखताही रहा॥१॥

लच्छन तासु बिलोकिभुलानें। हृदय हरष नहिं प्रगट बषानें॥२॥

जब लख्यन तिस के संपूरण देखे तब मुनि कों लोभ भया जो किसी प्रकार मुझ कों यह प्राप्ति होवै परंतु अपना हरष प्रगट न कहा जो भूप कहेगा मैनें रिष जान कर लक्षणो के विचार निमित्त इस कों कन्या देखाई है अरु यह आपही इच्छा करने लागा है सो लख्यन कहते हैं॥२॥ टिप्पणी—उस के सुलक्षण देखकर भूलगये हृदय में हर्ष होगया पर प्रत्यक्ष राजा से नहीं कहे। मुनि की भूल यही है कि मति विपरीति भई यह जानना चाहिये था कि जो अजर और अमर है और जिसको चराचर में कोई नहीं जीत सकता उस की पत्नी है परंतु उन्हों ने ऐसा समझा कि जिस की यह स्त्री होगी वह ऐसा होजायगा।

जो एहि बरै अमर सो होई। समरभूमि तेहि जीत न कोई॥३॥
सेवहिं सकल चराचर ताही। बरै सीलनिधि कन्या जाही॥४॥

जो इस को बरैगा सो अमर अजीत अरु सभों कर पूज्य होवैगा जिस कों यह राज सुता बरैगी इहां बरै की पुनरुक्त कथन का हेतु काम की व्याकुलता है॥४॥

लच्छनसब बिचारि उर राषे। कछुक बनाइ भूपसन भाषे॥५॥

सरब लख्यन नृप को न सुनाए अरु कछु इक बनाइ कहिए अपने प्रयोग के साधक मिलाय कर भूप को सुनाये जाते राजा इस के सरब लख्यन सुनेगा तब ईश्वर को समर्पण करेगा मुझकों अतीत जान कर न देवेगा अरु सब लख्यन कहतिआं भी देरलगेगी अरु यह और किसू से सुन कर मुझकों मिथ्या-वादी भी ना जानै ताते॥५॥

सुता सुलच्छन कहि नृप पाहीं। नारद चले सोच मनमाहीं॥६॥

यह कहा हे राजन तेरी कन्या शुभ लख्यनी हैं अरु चिंतातुर उहां से चला॥६॥

करौं जाइ सोइ जतन बिचारी। जेहि प्रकार मोहि बरैकुमारी॥७॥

जौं कोउ कहै तप के बल कर अपना रूप सुंदर कर लेवो तिस पर कहते हैं॥७॥

जपतप कछु न होइएहिकाला। हे बिधिमिलैकवनबिधिबाला॥८॥

ननु। नारदजी ने नवीन तप की असंभवता विचारी अरु पूरब जो बिशाल तप किए हुये थे तिन के बल से अपना सुंदर रूप क्यों न बनाइ लिआ। उत्तर। मुख्य बात तो यह है जैसि भगवंत की भेति होती है

तैसाही संकल्प मन में आवता है किंवा मुनीश्वरों के रिदे निरमल हैं जद्यपि कामातुर भी भये तथापि निस्काम तपों का फल भलो नव्यवहार मो लगावना ना चाह्या नवीनतप की बात बिचारी जो कोऊ कहै तुम मुनीश्वर हो नृप से मांगलेवो तिसपर कहते हैं॥ ८॥

दोहा—एहि अवसर चाहिअ परम, सोभा रूप बिसाल।
जो बिलोकि रीझै कुअंरि, तब मेलइ जय माल॥ १३१॥

यह परम रूपवती स्वयंबराकुमारी राजा रिषों कों कब देते हैं अरु हम को भी मांगकर लेने मो स्वरस नहीं इस के बरने हेतु तो रूप को महासोभा होवै तो देव के यह जे माला पहिरावै ताते॥१३१॥

हरि सन मागौं सुंदरताई। होइहि जात गहरु अति भाई॥ १॥

हरि से रूप मांगकर यह समा पूरण करों परंतु खीरसिंधु में जाते गहर कहिये बडा चिर लागता है जौं कोऊ कहै किसू और देवता से रूप माग ल्यावो तिसपर कहते हैं॥ १॥

मोरें हित हरि सम नहि कोऊ। एहि अवसर सहाय सोइ होऊ॥२॥

विष्णुजी सम रूप किसू का नहीं अरु मेरा हितू भी ऐसा और कोऊ नहीं ताते ऐसे समै वोही सहाय होवैंगे इस भांति अनन्य होइ कर॥ २॥

बहु बिधि बिनय कीन्हि तेहि काला। प्रगटेउ प्रभु कौतुकी कृपाला॥३॥

कौतुकी कहिये जिनो ने नारद का कौतक देखना है कृपाल कहिये अपणा बिरद बिचार कर सहायता करणी है प्रभु कहिये समर्थ जिनों की दोनो बातों कर कोऊ अजोहता नहीं कहि सकता सो प्रगट भये॥३॥ टिप्पणी—मुन्शीरोशनलाल ने निम्न लिखित अर्थ लिखा है। कौतुकी अर्थात् राजरूप हो के प्रगट हुए क्योंकि वहां राजों की सभा है कृपाल अर्थात् देवताओं पर कृपा करते हुए क्योंकि उन के हेतु अवतार लेने वाले हैं।

प्रभु बिलोकि मुनिनयन जुडानें। होइहि काजु हृदें हरषानें॥ ४॥

दरसन कर के मुनि के दृग सीतल भए अरु जान्या समरण काल मोहीं जा प्रगट भये हैं सो मेरा मनोरथ भी सफल करेंगे ताते॥ ४॥

अतिआरति कहि कथा सुनाई। करहु कृपा प्रभु होहु सहाई॥ ५॥

अत्यंत दुखित ह्वै के वृत्तांत सुनाया अरु कहा हे प्रभु शीघ्र सहायता करो जौं कहो तेरा काम किस भांति बणता है तो॥ ५॥

आपन रूप देहु प्रभु मोही। आन भांति नहिं पावौं ओही॥ ६॥

हे हरि अपना रूप मुझ कों देवो ताते और भांति कर वह मुझको प्राप्ति नहीं होती अथवा आप कहिये अपना आप चतुरभुज परम सुंदर रूप न देवो हरिरूप कहिये कपि रूप मुझको देवो आन भांति कहिये और प्रकार अथा बिपरजे प्रकार करो ताते नहि पावों वोही अर्थ यह वह कुमारी मुझे ना प्राप्ति होवै जद्यपि यह अर्थ नारद का अभलखत नहीं परंतु यह अक्ष्यर उस के मुख से इस निमित्त कहाये

जो नारद पूछेंगे तुम ने मेरा मनोरथ क्यों भंग किया था तब हम कहेंगे हम ने तुमारी ही बानी सत्त करी थो तुम अपने बचनों का अर्थ विचार देखो आगे प्रसंग कहते हैं ॥ ६ ॥

जेहि बिधि नाथ होइ हित मोरा । करौ सो बेगि दास मैं तोरा ॥ ७ ॥

इनो बचनो कर भी वह अर्थ पुष्ट भया ताते नारद ने भ्रांत कर न समुझिया परंतु उसका हित तो कुमारी कि अप्राप्ति मोही है ॥ ७ ॥

निज मायाबल देषि बिसाला । हिय हँसि बोले दीनदयाला ॥ ८ ॥

हांम नारद के पूरबले गर्ब कों सिमर कर है जो तब कैसा मानी बना था अब कैसा दीन भया है वा इसकर हंसे जो अब काम रूपी प्रयोजन के अधीन हुआ बिनै करता है जब वांछित भंग होवैगा तब कुपत होइ कर स्राप देवैगा अरु रिदे मों इस कर हंसे जो प्रगट हंसने से कदाचित यह समझ जाता होय अथवा रिदे मों हंसना प्रसन्नता के अर्थ सो है सो प्रसन्नता यह धन्य मेरे भगत हैं जद्यपि काम कर बिहबल भी भया है तद्यपि एही कहा है जिम सो मेरा हित होय सोई करना इसो ते दीनदयालु कहे जो तिस को काम आगे दीन भया देखकर दयाकर बोले ॥ ८ ॥

दोहा—जेहि बिधि होइहि परम हित, नारद सुनहु तुम्हार ।
सोइ हम करब न आन कछु, बचन न मृषा हमार ॥१३२॥

इसी अर्थ कों दृष्टांत कर पुष्ट करते हैं ॥ १३२ ॥

कुपथ मांग रुजव्याकुल रोगी । बैद न देइ सुनहु मुनि जोगी ॥ १ ॥

जैसे रोग के खेदकर दुखित हुआ रोगी बैद सों कहता है मुझे विष देवो मैं खाइकर मर जावों अथवा और कुपथ अहार मांगता है तो बैद उस को नहीं देता मुनि जोगी संबोधन का भाव यह जुवती का संग योगीस्वरो मुनों कों अतिही अनुचित है ॥ १ ॥ टिप्पणी—कुपथ मांगु रुज ब्याकुल रोग से ब्याकुल मुनि योगी का कहना ब्यंग है ।

एहि बिधि हित तुम्हार मैं ठएऊ । कहि अस अंतरहित प्रभु भएऊ ॥२॥

तिसी प्रकार तुम ने तो आपु हित मांगा है परंतु जो तुम अपना बुरा मांगो तो भो मैं तुमारा हितुही करोंगा सो मै नें कर छोडा है ऐसे कहिकर श्रीभगवान अंतरधान भए ॥ २ ॥

मायाबिवस भए मुनि मूढा । समुझी नहिँ हरिगिरा निगूढा ॥ ३ ॥

माया के बलकर मुनि की मति मूढ भई ताते भगवान की निगूढा कहिए अति गूढ बानी का अर्थ न समुझिया तत्व यह भगवंत नें जो करणा था सोई कहा अरु नारद ने समुझिया मेरा रूप अति सुंदर किया है ॥ ३ ॥ टिप्पणी—मुन्शीरोशनलाल ने निम्न लिखित अर्थ लिखा है । हरि का बचन निगूढ़ा अर्थात् सरल था जो उन्हों ने बैद्य और रोगी का दृष्टांत कहा परन्तु मुनि नारद मोह के बश में हो मूढ़ हो गये ।

गवनें तुरत तहां रिषिराई। जहां स्वयंबरभूमि बनाई ॥ ४ ॥
निज निज आसन बैठे राजा। बहु बनावकरिसहितसमाजा ॥ ५ ॥
मुनिमन हरष रूपअति मोरे। मोहितजिआनहिबरिहिनभोरे ॥ ६ ॥
मुनिहित कारन कृपानिधाना। दीन्ह कुरूप न जाइ बषाना ॥ ७ ॥

मुनीश्वर के सुखद जो कृपानिध हैं तिस की कामादिकों से रख्या निमित्त अति कुरूप बनाय दीनी परंतु ॥ ७ ॥

सो चरित्र लषि काहु न पावा। नारद जानिसबहि सिरनावा ॥ ८ ॥

प्रभों का चरित्र तहां किसू ने ना लखा सो चरित्र यह लोको कों नारद का स्वरूप जो शास्त्रोक्त है सोई भासै अरु नारद को अपना रूप परम सुंदर भासै अरु एक नृपकन्या को अरु है रुद्रगण जो आगे कहणे हैं तिन को नारद का मरकट जैसा मुख अरु भयानक स्वरूप दृष्टि आवै सोई कहते हैं ॥ ८ ॥ टिप्पणी—मुन्शी रोशनलाल ने निम्न लिखित अर्थ लिखा है। वह चरित्र यह कि नारद के तीन रूप हो गये जब दर्पन में नारद देखते थे तो अपने को विष्णु रूप देखते थे और लोग नारद को नारद देखते थे और राजकन्या को बूढ़े बंदर के समान रूप दिखाई देता था।

दोहा—रहे तहां दुइ रुद्रगन, ते जानहिं सब भेउ।
बिप्रभेष देषत फिरहिं, परम कौतुकी तेउ ॥ १३३ ॥

परम कौतुकी जो शिवगण हैं सो बाडव रूप धार कर तिस का कौतुक देखते फिरैं जाते पूरब वृतांत के ज्ञाता हैं रुद्रगणो के तहां होने में एक अनुमान यह नारद के बिदा भए पीछे त्रिपुरारि ने तिन को आज्ञा करी तुम इस के साथ अलख्यत होइकर कौतुक देखते फिरो जो क्या क्या करता है अथवा गण उहां सुभावक आए थे अरु उस के पूरब वृतांत को जानते थे तिस कर कौतुक देखते रहे ॥ १३३ ॥ टिप्पणी—मुन्शी रोशनलाल ने निम्न लिखित अर्थ लिखा है। रुद्रगण वे जिन्हें महादेवजी ने उस दिन से जब से नारद ने महादेव के उपदेश को नहीं माना गुप्त उन के साथ कर दिया था।

जेहि समाज बैठे मुनि जाई। हृदय रूप अहमिति अधिकाई ॥ १ ॥

जिस के रिदै मों रूप का अहमित कहिये हंकार बडा है ऐसा नारद जिस समाज मों जाइ बैठता है ॥ १ ॥

तहँ बैठे महेसगन दोऊ। बिप्रबेष गति लषै न कोऊ ॥ २ ॥
करहिं कूटि नारदहि सुनाई। नीकि दीन्हि हरि सुंदरताई ॥ ३ ॥

कुटिलता पूरबक नारद को कहते हैं हरि ने इन को बडी रुचिरता दीनी है अरु ॥ ३ ॥ टिप्पणी—मुन्शीरोशनलाल ने निम्न लिखित अर्थ लिखा है। करहिं कूट नारद को सुना के कूट ठट्ठा करते हैं कि हरि ने नीक सुन्दरताई दी है यह वाक्य नारद के इच्छानुकूल हैं और कूट यह कि हरि अर्थात् बंदर और उस को नीक सुंदरताई अर्थात् विष्णु को नारद की बंदर की।

रीझिहि राजकुअँरि छबि देषी। इन्हहि बरिहि हरि जानि बिसेषी ॥४॥

नृपसुता इनहीं की छबि पर रीझैगी अरु इन को हरि से भी विशेष जानकर बरैगी अरु व्यंग यह हरि नाम कपि का है कपि जानकर इस की ओर देखै गोहो नहीं ॥४॥ टिप्पणी—नारद के अनुकूल अर्थ यह कि राजकुमारी इस छबि को देख के रीझैगी और हरि जान के इन को विशेष कर के बरैगी। और बिपरीत अर्थ यह कि ऐसी छबि को देख के रीझैगी नहीं बरन इनहिं हरि अर्थात् इन को बन्दर जान के बरिहि अर्थात् अन्तः करण मे जल जायगी।

मुनिहि मोह मन हाथ पराए। हंसहि संभुगन अति सचुपाए ॥५॥

मुनिश्वर का मन काम के हाथ मों रहि गया है अरु शिव के गण अति सुख पाइ के हंसते हैं भाव यह इस को काम के जीतने का अभिमान था सो अब अत्यंत कामातुर भया है ॥ ५ ॥ टिप्पणी—मुनि को मोह हो गया है क्योंकि उन का मन पराय हाथ में पड़ गया है।

जदपि सुनहिं मुनि अटपटि बानी। समुझि न परै बुद्धिभ्रमसानी ॥ ६ ॥

जदपि नारद तिनकियाँ बाता कों अटपटीयाँ जानता है परन्तु काम कर व्याकुल जो मति है सो अपनी प्रसंसा ही समुझता है ॥ ६ ॥

काहु न लषा सो चरित बिसेषा। सो सरूप नृपकन्या देषा ॥ ७ ॥

नारद की कुरूपतारूपी चरित्र राजसमाज मैं और किसी ने ना समुझा येक उस स्वयंबरा ने देख्या ॥ ७ ॥

मर्कटबदन भयंकर देही। देषत हृदय क्रोध भा तेही ॥ ८ ॥

मुख कपि जैसा अरु तन उस मे भी महाकुरूप देख के कुमारी को क्रोध भया जो यह कपि क्यों आगे हूँ हूँ बैठता है ॥ ८ ॥

दोहा—सषी संग लै कुअँरि तब, चलि जनु राजमराल।
देषत फिरै महीप सब, करसरोज जयमाल ॥ १३४ ॥

हस्तकमल मों जैमाला है किंबा कमल रचित जैमाला हाथ मैं लीनी हुई है इतर सुगम ॥ १३४ ॥

जेहि दिसि बैठे नारद फूली। सो दिसि तेहि न बिलोकी भूली ॥ १ ॥
पुनि पुनि मुनि उकसहिं अकुलाहीं। देषि दसा हरगन मुसुकाहीं ॥२॥

जदपि उस कुमारी नें इस की ओर न देखा अरु इन की पंक्ति को भी उलंघ गई तब रुद्रगणो कर प्रेरे हुये अरु अपनी मूढताकर भी मुनीश्वर ने जान्या मेरी ओर स्वयंबरा की दृष्टि नहीं परी तातै उकसहिं कहिये ऊंचा हूँ बैठता है अरु ऊंची ग्रीवां करता है अरु चाहता है जहां वह कुमारी गई है तिस समाज मैं चल बैठों ऐसी दशा देखकर रुद्रगण मुसकावते हैं भाव यह हमारे स्वामी का कहा इस ने नहीं माना अरु उन पर दोसारोपन किया है जो मेरा प्रभाव देख नहीं सकते तिस कर जेती इस की अवज्ञा करहिं सो बनती है ॥ २ ॥

धरि नृपतनु तहं गये कृपाला। कुंअरि हरषि मेली जयमाला ॥३॥

राजा का देह धारकर भगवान उहां गये तब उस कुमारी नें प्रसन्न हूं कै प्रभों के कंठ मों जैमाला डारी नृपतनधारण सो प्रभों का भाव यह मेरे चतुर्भुज स्वरूप के दरसन का अधिकार सभों कों नहीं प्रमाण गीता। सदुर्दरश मिदंरूपं दृष्टवा नसि यन्मम देवा अप्यस्वरूपस्य नित्यं दर्शन कांक्षणो। हे अर्जुन जो तैने मेरा यह रूप देखा है इस का दरशन अतिकठिन है देवता भी इस के देखणे को इच्छा करते हैं किंवा भगवंत ने जाना विष्णुरूप कर जो मैं उस दुलहीनि कों बरों तो आश्चर्य नहीं ताते नृपों का समाज है ताते नरतन ही परम सुंदर धार्या किंवा जों हम चतुर्भुजरूप धारकर जावेंगे तब नारद से लज्जितहोना पडैगा अरु नारद भी बीच समाज के क्रोध करैगा तिस कर नरतन धारा जो नारद पछाने नहीं वा सरवज्ञ ने यह जाना जौंनसा सरूप धार कर मैं उस दुलहीनो कों ल्यावोंगा उसो रूप मे अवतार होने का नारद मुझे स्राप देवेगा अरु रावण कों मानवतन कर मारणा है इस कर मनुज तन धारा ॥ ३ ॥

दुलहिनि लै गे लच्छिनिवासा। नृप समाज सब भएउ निरासा ॥ ४ ॥

लख्यमी का है जिनमो निवास अर्थ वह माया के पति सो दुलहिनि को लेगए तत्व यह वह कुमारी लख्यमीहीं थी उस ने प्रभों कोहीं बरना था सो तिन को प्राप्त भई जानके नृपसभ निरास भए ॥ ४ ॥

मुनि अतिबिकल मोह मतिनाठी। मनि गिरि गई छूटि जनु गांठी ॥५॥

मुनीश्वर की मति जो मोह कर नष्ट भई है ताते ऐसा व्याकुल भया जैसे किसो की गांठ से मनि गिर परै ॥ ५ ॥ टिप्पणी—मोहमतिनाठी अर्थात् मोह में मति नष्ठी है। नाठी नष्ट भई है ष्ट का ठ होता है यथा काष्ट काठ।

तब हरगन बोले मुसुकाई। निज मुष मुकुर बिलोकहु जाई ॥ ६ ॥

मुकुर में मुख देखन कथन का भाव यह दरपन मुख देखने का मुख्य साधन है अथवा मरकट को मुकुर में सन्मुख और रूप देखं कर रोष उपजताहै ताते उस को हास किआ किंवा जल निकट है इस मों मुख देखेगा तो कुपुत होए कर अबी स्राप देवेगा अरु मुकुर खोजते देर लगेगी तब लो हम भाग जावेंगे सोई कहते हैं ॥ ६ ॥ टिप्पणी—कुपुत = कोपित अर्थात् रंज होकर।

अस कहि दोउ भागे भय भारी। बदन दीष मुनि बारि निहारी ॥ ७ ॥

जद्यपि जल मों मुख देखना अनुचित है तथापि व्याकुलता कर ज्ञात ना रहो तब देख लिआ ॥७॥

बेषु बिलोकि क्रोध अति बाढा। तिन्हहि श्राप दीन्ह अति गाढा ॥ ८ ॥

दोहा—होहु निसाचर जाइ तुम्ह, कपटी पापी दोउ।
हंसेहु हमहिं सो लेहु फल, बहुरि हंसेहु मुनि कोउ ॥ १३५ ॥

ताते तुम जो कपटी हो जाते द्विज तन धारे हो अरु पापी हो जाते मुझे हांस किआ है ताते दोनों राख्यस होवो जो फेर कोऊ संतों को हंसैगा अर्थ यह ना हंसैगा ॥ १३५ ॥

मुनि जल दीख रूप निज पावा। तदपि हृदय संतोष न आवा॥ १॥

एक बेर जल मों मरकट मुख देखकर कोप भया था पुनः जब निश्चै कर देखनेलागा तब नारदहीं भास्या परन्तु रिदा प्रसन्न ना हुआ भाव यह जिस में मेरा कारज बनना था तब मुख मरकट का किया अब पूरबवत भया तो क्या हुआ॥ १॥

फरकत अधर कोप मन माहीं। सपदि चले कमलापतिपाहीं॥ २॥
दैहौं स्राप कि मरिहौं जाई। जगत मोरि उपहास कराई॥ ३॥

विष्णुजी कों स्राप देवोंगा कै मरजावोंगा जाते जगत मों हांसीजोग हूकै जीवने का क्या लाभ है॥३॥

बीचहिं पंथ मिले दनुजारी। संग रमा सोइ राजकुमारी॥ ४॥

प्रभों के मारग मिलने का भाव यह क्रोधादिकों का बेग चिरकाल कर मिट जाता है सो कदाचित खीरसमुद्र पहुंचते तलक क्रोध न रहे वा पैनिधि की सीतलता कर तामस मिट जाय अरु अब मारग के स्रम में विशेष रोष होवेगा तब शीघ्रही स्राप देवेगा स्राप लेने की इच्छा इस कर करी जाते दनुजारी हैं अर्थ यह बर्तमान काल विषे नारद के हंकाररूपी दानवों को मारणा है अरु भविसत विषे रावनादिकों का बध करणा है। रमा अरु राजकुमारी के संग लैने मो आसै नारदकों क्रोध उपजावने का है विश्वमोहनी को देखकर तो उस को रिस उपजनी थी अरु रमा को देखकर विशेष कोप उपजा जो ऐसी लख्यमी के समीप होते तुम ने मेरे विवाह मैं प्रतिबंध क्यों डारा॥ ४॥ टिप्पणी—कोई टीकाकार लिखते हैं कि विष्णु बीच में इसलिये मिले कि उन्हें श्राप लेकर अवतार लेना अंगीकार है।

बोले मधुर बचन सुरसाईं। मुनि कहं चले बिकलकी नांईं॥ ५॥

इस को कुपत देखकर भी प्रभु मीठे वाक्य बोले जाते सुरस्वामी हैं अर्थ यह परम सतोगुणी है अथवा अवतार धारकर सुरों के संकट निवारणे हैं सो कहत भए हेमुनीश्वर खिन्न चित्तोवत कहां चले हौ॥५॥

सुनत बचन उपजा अतिक्रोधा। मायबस न रहा मन बोधा॥ ६॥

आगामी चरणहुं का अर्थ निन्दा पख्य में तो प्रगट है परन्तु नारदजी परम भक्त हैं तिन के मुख सें प्रभो प्रत दुरवाक्य कथन नहीं बनते ताते सरवज्ञ सरस्वती नें इस के अर्थ अस्तुत पख्य मों लगाए हैं सोई कहते हैं॥ ६॥

परसंपदा सकहु नहिं देषी। तुम्हरें इरिषा कपट बिसेषी॥ ७॥

पर नाम शत्रु का है सो शत्रु संपदा कहिये आसुरी संपदा संतहुं का अध्याहार करणा आपने भगतां विषे तुम आसुरी संपदा देख नहीं सकते। तुमरे कहिये तुमारे विषे इरषा अरु कपट से विशेषता है अर्थ यह तुम मत्सर अरु दंभ से परे हौ किंवा विगत शेष हौ अर्थ यह इरषा अरु दंभ का अंस भी तुम मो नहीं॥ ७॥

मथत सिंधु रुद्रहि बौराएहु। सुरन्ह प्रेरि बिषपान कराएहु॥ ८॥

सिंधुमथन के काल विषे रुद्र कों बौरा किया सुरों कों प्रेरकर तिस कों विष पिलाई इस कथनकर प्रभों की सरब शक्तता सिद्ध भई जो तुम सें दुःसाध्य कारज कोऊ नहीं ॥ ८ ॥

दोहा—असुर सुरा विष संकरहि, आपु रमा मनि चारु ।
स्वारथसाधक कुटिल तुम्ह, सदा कपट व्यवहारु ॥ १३६ ॥

दैतों कों मद पिलाया शंकर कों विष दीनी लछमी अरु कौस्तुभ मनि आपु लीनी इस कथन कर प्रभों की यथोचित व्यवहार मों निपुनता कही । इहां पद अन्वै इस रीति से करना जौन से स्वारथ साधक कपटी हैं तिन मो तुम कुटिल हो अर्थ यह तिन को दुखदायक हो किंबा जौन से कुटिल हैं अरु सदा जिन का कपट ही व्यवहार है तिन के भी स्वारथसाधक कहिये मनोरथों को सिद्धकरनेहारे हो ॥१३६॥

परमसुतंत्र न सिर पर कोई । भावै मनहिं करहु तुम सोई ॥ १ ॥

इस कथन से प्रभों की सामर्थता सूची ॥ १ ॥

भलेहि मंद मंदेहि भल करहू । बिसमयहरषनहियकछुधरहू ॥ २ ॥

इहां समर्थता का अर्थ भी है किंबा जौन से भला कामकर अहंकारी होते हैं तिन को नीच करते हो जो बिकरम करणहारे भी दुष्ट करमो को त्यागकर तुमारी शरण परते हैं तिन को पवित्र करते हो इस में तुम को हरष सोक कुछ नहीं होता जाते उनो ने अपनी करनो का फल पाया है ॥ २ ॥

डहकि डहकि परिचेहुसबकाहू । अति असंक मनसदा उछाहू ॥ ३ ॥
कर्म सुभासुभ तुम्हहि न बाधा । अबलगितुम्हहिनकाहू साधा ॥ ४ ॥

तीरथो व्रतों नेमादिकों कर जब प्रीतवान डहकते कहिये अधिक खेद कों पावते हैं तब तिन को अपने भजन महं परचावते हो । एह तीनों पद उस्तुत मो है ॥ ४ ॥

भले भवन अब पायन दीन्हा । पावहु गे फल आपन कीन्हा ॥ ५ ॥

भला भवन है संतहुं का तहां जो पाएन कहिये सेवता दिया है जो भक्तहुं कों पाप से बचाया है तिस का शुभ फल पावोगे तातपरज यह रावन को मार कर यस पावोगे ॥ ५ ॥ टिप्पणी—पायन के स्थान पर और पुस्तकों में बायन पाठ है बायन का अर्थ बयना ।

बंचेउ मोहि जवनि धरि देहा । सोइ तनु धरहु स्राप ममएहा ॥६॥

भूप तन धार कर मुझ कों तुम ने ठगेआ है सो नरतन ही धारो अरु ॥ ६ ॥

कपिआकृति तुम कीन्हि हमारी । करिहहिं कीस सहाय तुम्हारी ॥७॥
मम अपकार कीन्ह तुम भारी । नारिबिरह तुम्ह होबदुषारी ॥ ८ ॥

दोहा—स्राप सीस धरि हरषिहिय, प्रभु बहु बिनती कीन्हि ।
निज माया कै प्रबलता, करषि कृपानिधि लीन्हि ॥ १३७ ॥

स्राप लेकर गंभीरता हेतु तिस के आगे विनय करी अरु हरषे सो हरष इस हेतु जो हमारा किसी के बर स्राप से कुछ सुधरता बिगरता नहीं किंबा उस को अभिमान था मैंने काम क्रोध जीता अरु अब देखोता है सुंदर इस्त्री के बरने निमित्त क्रोध से अधर पडे फरकते हैं ताते हरषे जो इसी बल पर बोलता था वा हम ने इस को हांस करवाया था सो तिस ते विशेष हम को इस ने स्राप दिया ताते हम लेनेदार रहे इसते खुसी अथवा यह मेरा भक्त है अरु अंकार रूपी महापिशाच इस को लागा था सो भली भई थोरे ही मैं निवृत्त भया इस कर प्रसन्न भये अरु माया की प्रबलता उस के मन से निवारी जाते कृपानिधान हैं॥ १३७॥

जब हरिमाया दूरि निवारी। नहि तहं रमा न राजकुमारी॥ १॥

रमा अरु राजकुमारी तौ माया के विशेष रूप हैं सो माया का बल मिटन कर अदृष्ट हूवे गया॥ १॥

तब मुनि अति सभीत हरिचरना। गहे दीर प्रनतारत हरना॥ २॥

तब कहिये माया निवृत्य अनंतर नारद ने अति भयवान हूवे के सरणागतों के दुखहारक जो प्रभु के पदारविंद हैं सो गहे अति त्रसित होवना प्रभों के दुरवाद कथनादिक अपराध मान कर अरु कहत भया॥ २॥

मृषा होउ मम श्राप कृपाला। मम इच्छा कह दीन दयाला॥३॥

जैसे कोई मद पानो किसी को दुरबचन कहता है तौ मद उतरे ते पुन: क्षमा करावता है तैसेहीं नारदजी ने चरण पकडे अरु कहने लगे हे कृपालु मेरे स्राप मिथ्या होइ जावें कृपालु कहणे का भाव यह मेरे दुरबचन सहारकर अरु सामर्थ होए कर भी मेरे पर कृपा करी यह सुनकर दीनदयाल ने कहा तुम चिंता मत करो मेरी इच्छाही इसी भांति थी दीनदयालु कथन का भाव यह रुद्रगणो ने नीच जोनि में पडकर दीन होना है अरु तिनो कों प्रभों ने उधारना है तब नारद बोल्या॥ ३॥

मैं दुर्बचन कहे बहुतेरे। कह मुनि मिटिहि पाप किमि मेरे॥४॥

जपहु जाई संकरसतनामा। होइहि हृदय तुरत बिश्रामा॥ ५॥

शिवजी का शतनाम जपो तिसकर तुमारा चित स्वस्त होवैगा इस कथन का भाव यह तुम ने महादेव विषे इरषा आरोप कर कै तिन का बचन न माननरूपी अवज्ञा करी थी ताते मैं ने माया डारकर तुमारी दुरदशा कराई है जौ नारद कहैं रुद्र के हेतु मुझ जैसे सेवक की दुरदशा तुम नें क्यों कराई तिस पर कहते हैं॥ ५॥

कोउ नहि सिव समान प्रिय मोरें। असि परतीति त्यागहु जनि भोरें॥ ६॥

जेहि पर कृपा न करहिं पुरारी। सो न पाव मुनि भगति हमारी॥ ७॥

अस उर धरि महि बिचरहु जाई। अब न तुमहि माया नियराई॥ ८॥

मुझ को अरु शंकरजी को अभेद जानकर निरसंक जगत मों बिचरो अब तुम पर माया का बल न परैगा॥ ८॥

दोहा—बहु बिधि मुनिहिँ प्रबोधि प्रभु, तब भये अंतरधान।
सत्यलोक नारद चले, करत रामगुनगान ॥ १३८ ॥

हरगन मुनिहिं जात पथ देषी । बिगत मोह मन हरष बिसेषी ॥ १ ॥

बिगत मोह कहिये रहित मोह इतर स्पष्ट ॥ १ ॥

अतिसभीत नारद पहिं आए । गहि पद आरतबचन सुनाए ॥ २ ॥

जद्यपि नारदजी को प्रसन्न भी देखा था तथापि अपने अपराध को बिचारकर अति डरते आये अरु चरण गहि कै अति दुखित गिरा बोले ॥ २ ॥

हरगन हम न बिप्र मुनिराया । बड अपराध कीन्ह फल पाया ॥ ३ ॥
श्राप अनुग्रह करहु कृपाला । बोले नारद दीनदयाला ॥ ४ ॥

स्राप अनुग्रह कहिये हम राखस जून से कब अरु किस भांति छूटेगें ॥ ४ ॥

निसिचर जाइ होहु तुम्ह दोऊ । बैभव बिपुल तेजबल होऊ ॥ ५ ॥

बैभव कहिये संपदा तेज अरु बल भी तुमारा बिपुल कहिये अधिक होएगा ॥ ५ ॥

भुजबल बिस्वजितब तुम्ह जहिआ । धरिहहिं बिष्णु मनुजतनु तहिआ ॥ ६ ॥

जहिआ कहिये जब तहिआ कहिये तब इतर स्पष्ट ॥ ६ ॥

समर मरन हरिहाथ तुम्हारा । होइहौ मुकुत न पुनि संसारा ॥ ७ ॥
चले जुगल मुनिपद सिरनाई । भये निसाचर कालहि पाई ॥ ८ ॥

मुनीश्वर के पगों पर शीश नाइ कै चले तब काल पाइ कर निशाचर भए जो निसाचरकुलमहुं जाई पाठ होवै तो उस पद का अध्याहार करणा उत्तम जो पुलस्तिजी का कुल है तिस विषे राखस भये ॥ ८ ॥

दोहा—एक कल्प एहि हेतु प्रभु, लीन्ह मनुजअवतार ।
सुररंजन सज्जनसुषद, हरि भंजनभुबिभार ॥ १३९ ॥

यह प्रथम चौपाई सोरठे सहित प्रक्षेपक भासती है जाते इस अर्थ की इहां कुछ आकांक्षा नहीं ताते अर्थ नहीं किआ अरु लिखा देख कर लिख छोडी है ॥ १३९ ॥ टिप्पणी—यद्यपि महात्मा संतसिंह क्षेपक लिखते हैं तथापि यह क्षेपक नहीं है महात्मा तुलसीदासजी की प्रति अक्षरा प्रवाह नकल जो महाराज बनारस के पास १७०४ संवत का लिखा है और जिस प्रति से खड्गविलासप्रेस बांकीपुर में रामचरित मुद्रित हुई है उस में यह पाई जाती है तथा महात्मा हरिहर प्रसादजी ने इसे क्षेपक नहीं लिखा है।

एहि बिधि जनम करम हरिकेरे । सुंदर सुषद बिचित्र घनेरे ॥ १ ॥
कल्प कल्प प्रति प्रभुअवतरहीं । चारुचरित नानाबिधिकरहीं ॥ २ ॥

तब तब कथा मुनिसन्ह गाई । परम पुनीत सबन सुषदाई ॥ ३ ॥
बिबिध प्रसंग अनूप बषानें । करहिं न सुनि आचरजसयानें ॥ ४ ॥
हरिअनंत हरिकथाअनंता । कहहिसुनहिबहुबिधिसबसंता ॥ ५ ॥
रामचंद्र के चरित सुहाए । कलपकोटि लगिजाहिं न गाए ॥ ६ ॥
एह प्रसंग मैं कहा भवानी । हरिमाया मोहहि मुनि ग्यानी ॥ ७ ॥
प्रभु कौतुकी प्रनतहितकारी । सेवत सुलभ सकलदुषहारी ॥ ८ ॥
सोरठा—सुर नर मुनि कोउ नाहिं, जेहि न मोह माया प्रबल ।
अस बिचारि मनमांहिं, भजिअ महामायापतिहि ॥१४०॥
अपर हेतु सुनु सैलकुमारी । कहौं बिचित्र कथा बिस्तारी ॥ १ ॥
जेहि कारन अज अगुन अनूपा । ब्रह्म भये कोसलपुरभूपा ॥ २ ॥
जो प्रभु बिपन फिरत तुम्ह देषा । बंधु समेत धरें मुनिबेषा ॥ ३ ॥
जासु चरित अवलोकि भवानी । सतीसरीर रहिहु बौरानी ॥ ४ ॥
अजहु न छाया मिटति तुम्हारी । तासु चरित सुनु भ्रमरुजहारी ॥ ५ ॥

जिस प्रभु कों सौमित्र संयुत मुनि बेष धारे हुये तैंने बन मो देखा था अरु जिस के चरित्र देख के सती शरीर मैं तेरी मति भ्रमी थी सो छाया अब लग भी नहीं मिटी तिस प्रभु के चरित्र जो संसार रोग के नासक हैं सो सुन ॥ ५ ॥

लीलाकीन्हि जो तेहि अवतारा । सो सब कहिहौंमतिअनुसारा ॥ ६ ॥

तिस प्रभु के अवतार की लीला मैं मति अनुसार बरनन करोंगा ॥ ६ ॥

भरद्वाज सुनि संकरबानी । संकुचि सप्रेम उमामुसुकानी ॥ ७ ॥

जाज्ञवलकजी कहते हैं हेभरद्वाज सरब प्रकार कल्यान करणीहारे जो शिवजी हैं तिन की बानी सुन कै प्रेम अरु संकोच कर उमा मुसुकाई सो प्रभों का स्वरूप चितार कर प्रेम भया अरु बौरानो पद सुन कर संकोच भया अब लग छाया नहीं मिटती यह उपालंभ सुन कर मुसकानी ॥७॥ टिप्पणी—जो शंकर ने कहा कि । सती सरीर रहिउ बौरानी । इस से पार्बती को सकुच हुई और जो यह कहा कि । जासु चरित सुन भ्रमरुज हारी । इस से प्रेम हुआ और मुसुकाने से प्रयोजन यह कि अपनी मोह छाया को मान लिया मुसुका के अंगीकार करने के भाव को रसिक जन जानें ॥ ७ ॥

लगे बहुरि बरनै बृषकेतू । सो अवतार भएउ जेहि हेतू ॥ ८ ॥

सो अवतार कहिये श्रीरामचंद्र का अवतार तिस का और कारण बहुरो कहिये नारद के श्राप से

इंतर कहत भये बृषकेतु विशेषण का भाव यह धरमपालक हैं धरम की बृद्ध निमित्त प्रभों के गुणानुबाद कहते हैं ॥ ८ ॥

दोहा—सो मैं तुम्ह सन कहौं सब, सुनु मुनीस मन लाइ।
रामकथा कलिमलहरनि, सकलकलुषहि नसाइ॥ १४१ ॥

मंगलकरनिसुहाइ पाठांतर।

स्वायंभूमनु अरु सतरूपा। जिन्ह तें भे नर सृष्टि अनूपा॥ १ ॥

कैसे हैं स्वयंभूमनु अरु सतरूपा जिन ते ब्रह्माजी नें मैथुनी मृष्टि उपजाई॥ १ ॥

दंपति धरम आचरन नीका। अजहुंगावश्रुति जिन्हके लीका॥ २ ॥

धरम के आचरणों में राजा रानी ऐसे श्रेष्ट भये जिनकियां लीका कहिये मरजादा बनाया हो यां वेदों कर प्रमाण अरु अबलग प्रसस्त हैं॥ २ ॥

नृप उत्तानपाद सुत तासू। ध्रुव हरिभगत भएउ सुत जासू॥ ३ ॥
लघुसुत नाम प्रियब्रत ताही। बेद पुरान प्रसंसहि जाही॥ ४ ॥

भागवत में प्रियब्रत बडा कहा है इहां उत्तानपाद बडा कहा है सो कल्पांत भेद है॥ ४ ॥

देवहुती पुनि तासु कुमारी। जो मुनि करदम कै प्रियनारी॥ ५ ॥
आदिदेव प्रभु दीनदयाला। जठर धरेउ जिह कपिलकृपाला॥ ६ ॥

जिह कहिये जिस देवहूती ने आदि देव प्रभु दीनदयालु कृपालु कपिलदेव को जठर मो धार्या है तातपर्ज यह तिस के गृह मो प्रभु पुत्र होते भये॥ ६ ॥

सांख्य सास्त्र जिन्ह प्रगट बषाना। तत्वबिचार निपुन भगवाना॥ ७ ॥

जिस कपिल देवजी ने सांख्य शास्त्र मो चोवीस तत्व कहि कर पचीसवां सभ का साखी आत्मा लखाया सो कहते हैं। मूलप्रकृतिरबिकृतिरमहदादय: प्रकृतविकृतिय: सप्त षोडसकस्तुबिकारो न प्रकृत रनविकृति: पुरस: ॥ मूल प्रकृति परम कारण सो किसी के विकार नहीं उस के विकार महं तत्व मह तत्व के विकार अहंकार सो तीन प्रकार सातक राजस तामस सातको अहंकार ते मन अरु कर्मेंद्रिय ज्ञानेंद्रिय राजसी अहंकार सहित तामस हंकार ते पंचतनमात्रा शब्द स्परसरूप रस गंध शब्दतनमात्रा ते अकाश सपरस तनमात्रा ते वायु रूप तनमात्रा ते तेज रस तनमात्रा ते जल गंध तनमात्रा ते प्रिथवी ए चौबीशतत्व पचीसवां पुरुस सब का प्रकाशक सांख्य के मत मों तत्तों की उतपति इसी भांति कही है अकूती अरु प्रसूती दोनों देवहूती कीआं भगनीआं थीआं सो रुच प्रजापति अरु दख्य प्रजापति कों बिवाहीआं तिन का प्रसंग इहां नहीं कहा॥ ७ ॥

तेहि मनु राज कीन्ह बहु काला। प्रभुआयसु सब बिधिप्रतिपाला॥ ८ ॥

तिस स्वयंभूमनु ने बहुत समा कहिए इंद्र के राज प्रजंत राज किआ अरु प्रभों ने गृहस्थ के धरम अरु राजा कों प्रजा पालनादिक धरम जो कहे हैं सो भली बिध कर पूरन किये॥ ८ ॥

सोरठा—होइ न विषय बिराग, भवन बसत भा चौथपन ।
हृदय बहुत दुष लाग, जनम गयो हरिभजन बिनु ॥१४२॥

विषयों मो आशक्तता कहिये स्वयंभु मनु की बनती नहीं ताते अवकाश पद का अध्याहार करणा जो विषयों सो बैराग कहिये त्याग का अवकाश नहीं होइ गृहस्थ मों वृद्ध अवस्था होइ गई तब तप भजन से बिना जनम व्यर्थ बीतने की चिंता भई बैराग के अवकाश न पावने का प्रकार यह उत्तानपाद तौ मनुजी के होतेहीं अपना अधिकार ध्रुव कों देकर तप कों चलागया अरु ध्रुव ने भी अलपकाल राज कर के अमरपद पाया अरु प्रियब्रत भी तप करताथा तब मनुजी ने ब्रह्माजी की इच्छानुसार विचारा राज प्रियब्रत को देवहिं सोई कहते हैं ॥ १४२ ॥

बरबस राज सुतहि तब दीन्हा । नारि समेत गवन बन कीन्हा ॥ १ ॥

बरबस कहिए बलातकार कर अर्थ यह ब्रह्माजी ने अरु मनुजी ने बडा जतन कर प्रियब्रत को राज प्रमान करवाया अरु मनुजी सतरुपा सहित बन को गये ॥ १ ॥

तीरथबर नैमिष बिष्याता । अतिपुनीत साधकसिधिदाता ॥ २ ॥

नैमिष नाम नैमषारन्य का है जाते एक समै ब्रह्माजी से मुनीश्वरा नें तप का अस्थान पूछा तब बिरंचिजी ने कहा मैं चक्र चलावता हों जहां इस का बग मंद हाए तहां मन का बेग भी निवृत्त होयगा सो उहां आय कर चक्र की नेमी कहिये धारा ठहरी ताते उस का नाम नैमिषा भया सो साधकों के सिद्ध देने मों प्रसिद्ध हैं ॥ २ ॥

बसहि तहां मुनिसिद्धसमाजा । तहंहिय हरषि चलेउ मनुराजा ॥ ३ ॥
पंथ जात सोहहिं मतिधीरा । ज्ञानभगति जनु धरें सरीरा ॥ ४ ॥
पहुंचे जाइ धेनुमतितीरा । हरषि नहाने निरमल नीरा ॥ ५ ॥

धेनुमती कहिय गोमती नदी इतर सुगम ॥ ५ ॥

आए मिलन सिद्ध मुनि ज्ञानी । धरमधुरंधर नृपरिषि जानी ॥ ६ ॥

राज रिष जो धरम का धुरंधर था तिस को मुनि वृतधारी जानकर सभी मुनीश्वर मिलने आये ॥६॥

जहँ जहँ तीरथ रहे सुहाए । मुनिन्ह सकल सादरकरवाए ॥ ७ ॥
कृससरीर मुनिपट परिधाना । संतसभा नितसुनहिं पुराना ॥ ८ ॥

बलकलादिक पट जिनों धारे हुये हैं ब्रतों अरु तीरथाटनों कर जिन के तन अति दुरबल भये हैं सो केता चिर तो सतसंग मों मिलकर कथा स्रवन करते रहे तब तपकरने का उद्यमकरत भये सोई कहवे हैं ॥८॥

दोहा—द्वादस अक्षर मंत्र पुनि, जपहिं सहित अनुराग ।
बासुदेवपदपंकजहिं , दंपति मन अति लाग ॥ १४३ ॥

ॐनमोभगवते वासुदेवाय यह द्वादश अक्षर मंत्र जपते रहे अरु वासुदेव प्रभु के पदारबिंदों में मन लगाइ रहे तदनंतर ॥ १४३ ॥

करहिं अहार साक फल कंदा। सुमिरहिं ब्रह्म सच्चिदानंदा ॥ १ ॥

साक फलादिक अहार कर कै ब्रह्म सच्चिदानंद जो निरगुण परमातमा है चित के निरोध हेतु तिस को सुमिरते रह तिस से उपरांत ॥ १ ॥

पुनि हरि हेतु करन तप लागे। बारिअहार मूल फल त्यागे ॥ २ ॥

हरि कहिये मायोपहित चैतन्य पुनः तिस निमित्त तपकरणे लागे तातपरज यह इन को तो दरसन की इच्छा है अरु दरसन जोहु तो माया सबलहो होता है ताते जलमात्र अधार कर कै तिस को ध्यावणे लागे ॥ २ ॥

उर अभिलाष निरंतर होई। देषहि नयन परम प्रभु सोई ॥ ३ ॥

अगुन अषंड अनंत अनादी। जेहि चिंतहि परमारथबादी ॥ ४ ॥

नेति नेति जेहि बेद निरूपा। निजानंद निरुपाधि अनूपा ॥ ५ ॥

अगुण अखंडादिक विशेषण सभी माया बशिष्ट में भी बनते हैं जाते माया तिस मों कल्पित है ॥५॥

संभु बिरंचि विष्णु भगवाना। उपजहिँ जासु अंस तें नाना ॥ ६ ॥

यह माया सबल को समष्टता दिखाई जौं कोऊ कहै जीवों को ब्रह्मादिकों की प्राप्ति दुर्लभ है सभ का पराब्रह्म तुम को कैसे प्राप्ति होवैगा तिस पर कहते हैं ॥ ६ ॥ टिप्पणी—जासु अंश राम के अंश भरत लक्ष्मण शत्रुघ्न।

ऐसेउ प्रभु सेवकबस अहई। भगत हेतु लीला तनु गहई ॥ ७ ॥

ऐसे सरब शक्ति स्वामी सेवकों के अधीन हैं ताते तिन को प्रसन्नता निमित्त लीला मात्र देह भी धारते हैं ॥ ७ ॥

जौं यह बचनसत्यश्रुतिभाषा। तौं हमार पूजिहि अभिलाषा ॥ ८ ॥

दोहा—एहि बिधि बीतेषटसहस, संबत बारिअहार।
संबत सप्तसहस्र पुनि, रहे समीर अधार ॥ १४४ ॥

बरष सहस दस त्यागेउ सोऊ। ठाढे रहे एकपद दोऊ ॥ १ ॥

बिधि हरिहर तप देषि अपारा। मनु समीप आए बहु बारा ॥ २ ॥

मांगहु बर बहु भांति लोभाये। परम धीरनहिचलहिँ चलाये ॥ ३ ॥

तिन का अत्युग्र तप देख कै ब्रह्मादिक तीनों एकत्रही बहुती बेर आये अरु कहा जो तुमारी इच्छा है सो हम पूरण कर देते हैं परंतु यह परम धैरजी हैं ताते मन कों ना चलाया अर्थ यह तिन से वर न मांगा विष्णुजी से परा ईश्वर का स्वरूप ध्यावणा यह उपासना की प्रगल्भता है ॥ ३ ॥

अस्थिमात्र होइ रहे सरीरा । तदपि मनाग मनहिँ नहिँ पीरा ॥४॥

जद्यपि शरीरों के अस्थित मात्र रहि गये परंतु मन कों मनाग कहिये रंचक मात्र भी पीड़ा नहीं भई जाते अत्युतम बर लेने की ओर वृत्ति लगी है ॥ ४ ॥

प्रभु सर्बज्ञ दास निज जानी । गति अनन्य तापस नृप रानी ॥ ५ ॥

सरब रिद ज्ञाता जो प्रभु हैं तिनों ने राजा अरु रानी को अनन्य दास जाना तब ॥ ५ ॥

मांगु मांगु बर भई नभबानी । परम गंभीर कृपामृतसानी ॥ ६ ॥

कृपारूपी सुधा सों भोगी हूई अरु परम गंभीर जाकी ध्वनि है सो बरंबूह रूपो पुनरुक्ति बाणी भई राजा रानी जो द्वै हैं तिस निमित्त वा राजा के विशेष तोष हेतु सोई कहते हैं ॥ ६ ॥

मृतकजिआवनी गिरा सुहाई । श्रवनरंध्र होइ उर जब आई ॥ ७ ॥
हृष्टपुष्ट तन भए सुहाए । मानो अबहिं भवन ते आए ॥ ८ ॥

दोहा—श्रवनसुधासम बचन सुनि, पुलक प्रफुल्लित गात ।
बोले मनु करि दंडवत, प्रेम न हृदय समात ॥ १४५ ॥

करणो कों पोऊष सदृश जो गिरा है सो सुन कर जिन कों अति हरष भया है ऐसा स्वयंभूमनु गदगद हुआ दंडवत कर साभिप्राय संबोधन दे कै कहत भया ॥ १४५ ॥

सुनु सेवकसुरतरु सुरधेनू । बिधि हरिहर बंदित पदरेनू ॥ १ ॥
सेवत सुलभ सकलसुषदायक । प्रनतपाल सचराचरनायक ॥ २ ॥
जौ अनाथ हित हमपर नेहू । तौ प्रसन्न होइ यह बर देहू ॥ ३ ॥

हे सेवकों को कल्पतरु अरु कामधेनु हमारी बिनै सुनौ अरु वांछित सिद्ध करो हे ब्रह्मादिकों कर पूज्यपाद बिध के पुत्र जान कर हमारे पर कृपा करो हे सेवकों के सुगम पुनः सरब सुखद अरु शरण पाल जडों चेतनों के स्वामी अनाथों के हितू हमकों शरणागत अरु अनाथ जान कर शोघ्र हो सब सुख देवन निमित्त यह बर देवो ॥ ३ ॥

जो सरूप बस सिव मन माहीं । जेहिकारन मुनिजतन कराहीं ॥४॥
जो भुसुंडिमनमानसहंसा । सगुनअगुनजेहिनिगम प्रसंसा ॥ ५॥

भुसुंड के मन रूपी मान सरोवर विषे जो मरालवत सोभता है गुणो सहित अरु त्रिगुणातीत कह कर जिस की प्रसंसा स्रुतां करतीआं है ॥ ५ ॥

देषहिं हम सो रूप भरि लोचन । कृपा करहु प्रनतारतिमोचन ॥ ६ ॥

हे शरणागतों के दुखनिवारक तिस स्वरूप को हम दृग भर कै देखिए भाव यह अब प्रगट देखिए किंबा पुत्र रूप कर बहुत चिर परजंत दरशन करिए यह कृपा करो ॥ ६ ॥

दंपतिबचन परम प्रिय लागे। मृदुल बिनीत प्रेमरसपागे॥ ७॥

कोमल अरु बिनै सहित अरु प्रेम संजुत जो राजा रानी के बचन हैं सो प्रभों कों अति प्यारे लगे तदनंतर॥ ७॥

भगतवछल प्रभु कृपानिधाना। बिस्वबास प्रगटे भगवाना॥ ८॥

भगवान भक्त वत्सल हैं अरु कृपानिधि है ताते तिन कों भक्त जानकर कृपाल भये अरु विश्ववास कहिये सरब व्यापक हैं ताते तहांसेहीं प्रगट भए अब तिन स्वरूप का बरनन करते हैं॥ ८॥

दोहा—नीलसरोरुह नीलमनि, नीलनीरधरस्याम।
लाजहिं तनुसोभा निरषि, कोटि कोटि सत काम॥ १४६॥

नील कमल सम कोमलता नीलमणी सम प्रकाश नीले मेघ सम उदारता अरु गंभीरता॥ १४६॥

टिप्पणी—नील सरोरुह श्याम कमल नीलमणि नीरधरकारे बादर ऐसे श्याम हरि हैं रघुनाथ की शोभा के बर्णन करने में कवि की बुद्धि उपमा नहीं पाती इस से प्रतीपालंकार में कहते हैं।

सरदमयंकबदन छबिसीवां। चारु कपोल चिबुक दर ग्रीवां॥ १॥

सरद रितु के चंद्रमा से भी मुख सोभा को अवधि है सुंदर कपोल अरु चिबुक है अरु संख के समान ग्रीवां है॥ १॥

अधर अरुन रद सुंदर नासा। विधुकरनिकरबिनिंदक हासा॥ २॥

अधरलाल हैं दंत अरु नासिका अति सुंदर है चंद्रमा के किरण समूहों को विशेष लज्जित करणहारा जिन का हास है॥ २॥

नवअंबुजअंबकछबि नीकी। चितवनि ललित भावती जी की॥ ३॥

नवीन कवलों से नेत्रों की छबि नीकी है अरु देखणे का प्रकार बहुत सुंदर है भक्तो के रिदै कों भावता है॥ ३॥

भृकुटि मनोजचापछबिहारी। तिलक ललाटपटल दुतिकारी॥ ४॥

भृकुटी मदन धनुष की शोभा कों भी हरनेहारी है अरु मस्तक पर तिलक इस सोभता है जैसे दुतिकारी कहिये दामिनीयों का पटल कहिये पुंज होवै किंवा लिलाट पटल कहिये मस्तक तिस की दुति करता कहिये प्रकाशक तिलक है॥ ४॥

कुंडल मकर मुकुट सिरभ्राजा। कुटिल केस जनु मधुपसमाजा॥ ५॥

मत्सकृतकुंडल हैं अरु मुकुट शिर पर प्रकाशता है भमरों समस्याम चिकनें अरु कुंडलिआरे केश हैं॥५॥

उर श्रीबत्स रुचिर बनमाला। पदक हारभूषन मनिजाला॥ ६॥

हृदै में श्रीवत्स कहिये भृगुलता का अथवा रोमावर्त्त का चिन्ह अरु सोभनीक बनमाला है पद कहिये जड़ाऊ पटरीआं तिन का हार है जिस कों पंजाब मों पचारि की कहते हैं अरु और भूषनमणिअहुं के

नम्रता पूरवक सुंदर रीति सें जो कहे हुये होहिं सो अमोलक बचन वा भगवान को पुत्र रूप कर जांचना यह अमोल बचन सो सुनकर क्रपासिंधु बोले ऐसेहीं होवेगा परंतु ॥ १ ॥

आपु सरिस षोजौं कहं जाई। नृप तव तनय होब मैं आई ॥ २ ॥
सतरूपहि बिलोकि कर जोरें। देवि मांगु बरु जो रुचि तोरें ॥ ३ ॥

पुनः क्रतज्ञ ने सतरूपा कों देख्या जो हांथ जोडे खडी है तब कहित भये हे देवी जो तेरी रुचि है सो तू भी मांगु यह सुनकर सतरूपा ने विचाख्या जिस कर राजा का सनमान रहे अरु मेरा वांछित भी सिद्ध होवै ऐसी जुक्ति करौं सोई कहती है ॥ ३ ॥

जो बरु नाथ चतुर नृप मांगा। सोइ क्रपाल मोहि अति प्रिय लागा ॥ ४ ॥

हे नाथ नृपति बडा चतुर है जातें आप को रिझाया है अरु तुम से सरब सुखों का साधक बर पाया है ताते तिस का मांग्या हुआ बर मुझ कों भी प्यारा लागा है अरु तुम क्रपालु हो ताते भूप का वांछित देकर मुझ पर भी क्रपा करी है ॥ ४ ॥

प्रभु परंतु सुठि होति ढिठाई। जदपि भक्ति बस तुम्हहिं सुहाई ॥ ५ ॥

हे प्रभु यह बात जद्यपि सुंदर है जो तुम हमारे गृह मों अवतार धरो परंतु इस सुठता में हम को ढीठता होती जो तुम को पुत्र जानना सो जद्यपि भक्त वत्सलताकर तुम को सुहावेगी तद्यपि ॥ ५ ॥

तुम ब्रह्मादिजनक जगस्वामी। ब्रह्म सकलउरअंतरजामी ॥ ६ ॥
अस समुझत मन संसय होई। कहा जो प्रभु प्रमान पुनि सोई ॥ ७ ॥

ब्रह्मादिकों कर ध्येय जो तुम हो तिस वोर देखकर चित्त को संशै होता है जो ऐसे प्रभों कों पुत्ररूप कैसे जानना कदाचित प्रभु कहें ढीठता से डरते हो तौ यह बर न लेवो तिस हित कहती है आप ने जो कहा है सो सत्य है तुम पुत्र रूप होवोगे माता का तातपरज यह है यह बर तौ तुम ने राजा को दिया है मुझे भिन्न यह बर देवो ॥ ७ ॥

जे निज भगत नाथ तव अहहीं। जो सुष पावहि जो गति लहहीं ॥ ८ ॥
दोहा—सोइ सुष सोइ गति सोइ भगति, सोइ निज चरन सनेहु।
सोइ बिबेक सोइ रहनि प्रभु, हमहिं कृपा करि देहु ॥ १५० ॥
सुनि मृदु गूढ रुचिर बचरचना। क्रपासिंधु बोले मृदु बचना ॥ १ ॥

कोमल बचन सुंदर रचना युत अरु जिनो का आसा गूढ है जो संतहुं जैसी गति मांगी सो सुनकर क्रपानिधि बोले ॥ १ ॥ टिप्पणी—बचनरचना = बचन की रचना।

जो कछु रुचि तोरे मन माहीं। मैं सो दीन्ह सब संसय नाहीं ॥ २ ॥
मातु बिबेक अलौकिक तोरें। कबहुं न मिटिहि अनुग्रह मोरें ॥ ३ ॥

जुबती शरीरों को तनु तनै धन बहुत प्रिय होता है तिस पर राजा का वर सवन कर भी तुम ने जो संतहुं जैसी गति मांगी है यह अलौकिक विवेक है सो कबहूं ना मिटैगा तत्व यह हमारे बनवास की समै तुझे सहाय होवैगा तब नृप ने विचारा प्रथम वर तौ मेरा अरु रानी का सांझा हुआ अरु येक वर रानी ने अधिक लिया ताते मैं भी और लेवों सोई कहते हैं ॥ ३ ॥

बंदि चरन मनु कहेउ बहोरी । अवर एक बिनती प्रभु मोरी ॥ ४ ॥
सुत बिषैक तव पद रति होऊ । मोहि बड मूढ कहै किन कोऊ ॥ ५ ॥

जैसी पुत्रहुं बिषे प्रीति होती है सो भी होवै अरु तुमारे ईश्वर रूप की प्रीति भी होवै इस महुं मुझे लोग भावे मूरख भी कहैं जो पुत्र कों पूजता है किंबा सुत विषै कही तेरे चरणहुं को प्रीति होवे अर्थ यह पुत्र रूप जान करही तुम्हारे साथ मेरो दृढ प्रीति होवे भावै लोग मुझे मूढ भी कहैं जो ईश्वरों कों पुत्र जानता है

मनिबिनुफनिजिमिजलबिनुमीना । ममजीवनतिमितुम्हहिंअधीना ॥६॥
अस बरु मांगि चरनगहि रहेउ । एवमस्तु करुनानिधि कहेउ ॥ ७ ॥

जब नृपने बर मांगकर चरण गहे तब कृपासिंधु ने कहा जैसे तुमारी भावना है ऐसेही होइगा यह कहिकै दयानिधि पुनः बोले ॥ ७ ॥

अब तुम्ह मम अनुसासन मानी । बसहु जाइ सुरपतिरजधानी ॥ ८ ॥
सोरठा—तहं करि भोग बिसाल, तात गए कछु काल पुनि ।
होइहहु अवध भुआल, तब मैं होब तुम्हार सुत ॥ १५१ ॥

तात पद कथन कर दूती बेर प्रतिज्ञाकरी ॥ १५१ ॥

इछामय नरबेष संवारें । होइहौं प्रगट निकेततुम्हारें ॥ १ ॥

मै अजनमा हौ गरभद्वारा मेरा जनम नहीं होना अपनीइच्छा पूरवक नरवेष धारकर तुम्हारे सदन मे पुत्र रूप होए कर प्रगटोंगा ॥ १ ॥

अंसन्ह सहित देह धरि ताता । करिहौं चरित भगतसुखदाता ॥ २ ॥

संकरखनादिक जो मेरी अंसा है तिनो संयुत देह धार कर चरित्र करोंगा पुनः तात पद कहणे सों तृतीय बेर प्रतिज्ञा भई ॥ २ ॥ टिप्पणी—अंशन सहित अर्थात् जिस अंश से पृथ्वी को थांभते हैं भाव लछमणजी । और जिस अंश से शत्रु का नाश करते हैं भाव शत्रुघ्नजी । और जिस अंश से विश्व का पालन करते हैं भाव भरतजी ।

जे सुनि सादर नर बड भागी । भव तरिहहिं ममता मद त्यागी ॥ ३ ॥
आदिसक्ति जेहि जग उपजाया । सोउ अवतरहि मोरि यह माया ॥४॥
पूरब मैं अभिलाष तुम्हारा । सत्य सत्य पन सत्य हमारा ॥ ५ ॥

पूरब कहिये पूरण करोंगा । तीन बेरी सत्य कहणा एक तो विशेष दृढ़ता निमित्त किंवा पूरब जो तीन बेर क्रम कर प्रतिज्ञा करी थी सोई इहां एकत्र देखाई अथवा तीनो प्रतिज्ञा करीयां प्रथम अपने अवतार की पुनः अंस रूप जो लख्यमन आदिक हैं तिन के अवतार की तृतीय आदिशक्ति जो जानकी हैं तिस के उपजने की ॥ ५ ॥

पुनि पुनि अस कहि कृपानिधाना । अंतरधान भए भगवाना ॥ ६ ॥

भक्तों को अत्यंत तोष निमित्त पुनः पुनः कहिकर अंतरध्यान भये ॥ ६ ॥

दंपति उर धरि भगतकृपाला । तेहि आस्रम निवसे कछु काला ॥ ७ ॥

समय पाइ तनु तजि अनयासा । जाइ कीन्ह अमरावति बासा ॥ ८ ॥

अनयास कहिये निरजतन इतर स्पष्ट ॥ ८ ॥

दोहा—यह इतिहास पुनीत अति, उमहि कहा बृषकेतु ।
भरद्वाज सुनु अपर पुनि, राम जनम कर हेतु ॥ १५२ ॥

एह इतिहांस कहियें स्वयंभूमनु की कथा शंकरजी ने उमा प्रति सुनाई है हेभरद्वाज अब इस औतार का और कारण सुन जैसे प्रतापभानु रावन हुआ है कोई एक इनो दोनो का प्रसंगों को आख्येपक भी कहते हैं जाते सूचीपत्र में इन का नाम प्रगट नहीं सो भगवंत जानै परंतु कहूं कहूं अर्थ असंगत अरु पुनरुक्त अरु अति सुगम सो है अरु अपनी समुझ में प्रतापभानु के प्रसंग बिना तो आगे की संगत नहीं मिलती ताते प्रमाण ही है बीच चौपाया आक्षेपक होहिं तो होहिं ॥ १५२ ॥

सुनु मुनि कथा पुनीत पुरानी । जो गिरिजा प्रति संभु बखानी ॥ १ ॥

हे भरद्वाज प्रभों के अवतार के कारण प्रतिपादिक जो पवित्र अरु पुरातन कथा शंकरजी ने उमाप्रति सुनाई है सो तू भी सुन ॥ १ ॥

बिस्वबिदित एक कैकय देसू । सत्यकेतु तहँ बसै नरेसू ॥ २ ॥

कैकै देश कहिये काशमीर इतर सुगम ॥ २ ॥ टिप्पणी—सत्यकेतु नाम राजा ।

धरमधुरंधर नीतिनिधाना । तेज प्रताप सील बलवाना ॥ ३ ॥

तेहि के भए जुगलसुत बीरा । सबगुनधाम महारनधीरा ॥ ४ ॥

बीर कहणे का भाव यह भ्रातों में गुणों की विषमता होती है अरु इनो में समता थी किंवा भार्यों की आपस मो मत्सर होती है सो इनो में न थी ताते बीर कहे किंवा दोनों सूरबीर थे किंवा सहोदरता से भी दोनो बीर थे ॥ ४ ॥

राजधनी जो जेठ सुत आही । नाम प्रतापभानु अस ताही ॥ ५ ॥

अपर सुतहि अरिमर्दन नामा । भुजबल अतुल अचल संग्रामा ॥ ६ ॥

भाइहि भाइहि परम समीती। सकल दोष छल बरजितप्रीती॥ ७॥
लोभादिक दोषहुं से अरु छल से रहित तिन की रीति थी॥ ७॥

जेठे सुतहिं राज नृप दीन्हा। हरि हित आपु गवन बनकीन्हा॥ ८॥

दोहा—जब प्रतापरबि भएउ नृप, फिरी दोहाई देस।
प्रजापाल अति बेद बिधि, कतहुं नहीं अघलेस॥ १५३॥

नृपहितकारक सचिव सयाना। नाम धरमरुचि सुक्र समाना॥ १॥
सचिव सयान बंधु बलबीरा। आपु प्रताप पुंज रनधीरा॥ २॥
अमित सुभट सब समरजुझारा। सेन संग चतुरंग अपारा॥ ३॥
सेन बिलोकि राउ हरषाना। अरु बाजे गहगहे निसाना॥ ४॥
गहगहे निसाना कहिए घोर नगारे बाजे॥ ४॥

बिजै हेतु कटकइ बनाई। सुदिन साधि नृप चलेउ बजाई॥ ५॥
जद्यपि सेना तो आगेही उत्तम थी परंतु चढने के समय चतुरंग कटक अतिस्रेष्ट बनाया अरु भला नखत्र सुभ महूरत साधकर नगारा बजाय कर चढिआ॥ ५॥

जहँ तहँ परी अनेक लराई। जीते सकल भूप बरिआई॥ ६॥
बरिआई नाम बल का अपर सुगम॥ ६॥

सप्तदीप भुजबल बस कीन्हे। लै लै दंड छाडि नृप दीन्हे॥ ७॥
राज्यों का राज न छीन्या जो स्रेष्टपदारथ थे सो उन से लेकर आनमनायकर पुन: राज मों इस्थित कर दिये॥ ७॥

सकल अवनिमंडल तेहि काला। एक प्रतापभानु महिपाला॥ ८॥

दोहा— स्ववस बिस्व करि बांहुबल, निज पुर कीन्ह प्रवेस।
अरथ धरम कामादि सुख, सेवै सबै नरेस॥ १५४॥

सकल सृष्ट कों भुजा के बलकर बस किया अर्थ यह छल किसू सों ना किया तब अपने कासमीरपुर में प्रवेश किआ अरु चारों पदारथों कों राजा सेवता है इस प्रकार अर्थ काम के सुख भोगता है धर्म अरु मोख के साधन जग्य अरु सतसंग आदिक करता है अथवा अर्थ धर्मादिक जिन मों पाए जाते हैं तिनो मनुष्यहुं की संगति सदा रहती है॥ १५४॥

भूपप्रतापभानुबल पाई। कामधेनु भै भूमि सुहाई॥ १॥
सब दुख बरजित प्रजा सुखारी। धरमसील सुंदर नरनारी॥ २॥
सब दुख कहिये आध व्याध उपाध॥ २॥

सचिव धरमरुचि हरिपद प्रीती। नृप हित हेतु सिषव नित नीती॥३॥

हरिभक्त जो धर्मरुचि नामा मंत्री है सो राजा के शुभनिमित्त नित्यही नीति उपदेश करता है तिस से नीति सुनकर ॥ ३ ॥

गुरु सुर संत पितर महिदेवा। करै सदा नृप सब की सेवा॥ ४॥

भूप धरम जे बेद बषाने। सकल करै सादर सुष माने॥ ५॥

दान आदर सों देता है अरु जज्ञादिकों का खेद नहीं मानता अपर सुगम ॥ ५ ॥

दिन प्रति देइ बिबिधि बिधि दाना। सुनै सास्त्र बर बेद पुराना॥ ६॥

नाना बापी कूप तडागा। सुमनबाटिका सुंदर बागा॥ ७॥

बिप्रभवन सुरभवन सुहाए। सब तीरथन बिचित्र बनाए॥ ८॥

दोहा— जहँलगि कहे पुरान श्रुति, एक एक सब जाग।
बार सहस्र सहस्र नृप, किए सहित अनुराग॥ १५५॥

जहं लगि कहिये जेते जज्ञ स्रुती स्मृतों नें कहे हैं तिस एक एक मख कों राजा ने हजार हजार बार किया जों जहं जहं पाठ होवै तो जिस जिस तीरथ पर येक येक मख करना कहा है तहां तहां सहस्र सहस्र किया ॥ १५५ ॥

हृदय न कछु फल अनुसंधाना। भूप बिबेकी परम सुजाना॥ १॥

हिर्दे बिषे किसी करम के फल की कुछ भी इच्छा न करी जाते नृप बिवेकी है जानता है सकामकरम फल दै के शीघ्रही नास हो जाते हैं ताते ॥ १ ॥

करै जे धरम करम मन बानी। बासुदेव अर्पित नृप ग्यानी॥ २॥

चढि बर बाजि बार एक राजा। मृगयाकर सब साजिसमाजा॥ ३॥

बिंध्याचल गंभीर बन गएऊ। मृग पुनीत बहु मारत भएऊ॥ ४॥

पवित्रमृग कहियें जिनकिआं बलिआं पित्रों अरु देवत्यों को मिलतीआं है अपर सुगम ॥ ४ ॥

फिरत बिपिन नृप दीष बराहू। जनु बन दुरेउ ससिहि ग्रसि राहू॥५॥

ऐसा उस सूकर का रूप है मानो मयंक को ग्रसकर राहु बन मे आन दुरा है ॥ ५ ॥

बड बिधु नहिं समात मुष माहीं। मनहु क्रोधबस उगिलत नाहीं॥६॥

कोल कराल दसन छबि गाई। तनु बिसाल पीवर अधिकाई॥७॥

घुरघुरात हय आरव पाए। चकित बिलोकत कान उठाए॥८॥

आरो अरु आरव पाठ होवै तो देश भाषा में शब्द का नाम है सो तुरंग के शब्द कों कहिये खटके कों पायकर सूकर घुरघुराया अरु कान उठाय कर चकित भया आरोपाए पाठ होवै तौ तिस सूकर के घुर

घुराल में राजा ने अश्वकों आरोपाए कहिये आरोपन किया अर्थ यह इस्थिर किया कैसा है तुरंग कोल कै शब्द कर चकृत हुआ कान तोर्ख कर कै देखता है जो इहां क्या है किंबा आरु पद दृष्टि का वाचक है सो दृष्टि कहिये दाडावाला सूकर तिस आरु का खष्टी कर कै आरो शब्द बनता है सो राजा अश्व आरो कहिये सूकर कै घुरघुर शब्द को पाए कर चकृत हुआ अरु कान उठाय कर देखत भया आरुः पुंसित रोरि भेदे तथा करकट दृष्टिणो इति मेदनीकोशे ॥ ८ ॥

दोहा—नीलमहीधरसिषर सम, देषि बिसाल बराहु।
चपल चलेउ हय सुटुकि नृप, हाँकि न होइ निबाहु ॥ १५६ ॥

सिकार सो चपल जो राजा है सो घोडे कों सटकाय कर चला जो इस सूकर कों थकायकर मारेंगा ॥ १५६ ॥ टिप्पणी—चपल के स्थान चपरि पाठ भी और पुस्तकों में है।

आवत देषि अधिक बर बाजी। चलेउ बराह मरुतगति भाजी ॥१॥
तुरत कीन्ह नृप सरसंधाना। महिमिलिगएउबिलोकतबाना ॥२॥
तकि तकि तीर महीपचलावा। करि छल सुअर सरीर बचावा ॥३॥
प्रगटत दुरत जाइ मृग भागा। रिसवस भूप चलेउ संग लागा ॥ ४ ॥

जब राजा शस्त्र प्रहारे तब वह अधह उरध होए कर तनु बचावै अरु जब जाने मुझे मारणे लागा है तब लोप होइ जाइ जब जाने निराम होइ कर फिरने लागा है तब समीप में हीं प्रगट होइ आवै अरु भूप भी क्रुधत हुआ उस का पीछा छोडे नहीं ॥ ४ ॥

गएउ दूरि बन गहन बराहू। जहँ नाहिन गजबाजिनिबाहू ॥ ५ ॥
अति अकेल बन बिपुल कलेसू। तदपि न मृगमग तजै नरेसू ॥ ६ ॥

बडे कष्टहुं सहुं भी मृग का पीछा छोडता नहीं जाते नरेश है तत्व यह महाहठी है ॥ ६ ॥

कोल बिलोकि भूप बड धीरा। भागि पैठ गिरिगुहा गंभीरा ॥ ७ ॥

सूकर ने जान्या राजा बडा धीरजवान है कष्ट कर व्याकुल होनेवाला नहीं कदाचित्त मुझे मारही डारे इस त्रास से परवत की गुफा मों धस गया तब ॥ ७ ॥

अगम देषि नृप अति पछिताई। फिरेउ गहनबन परेउ भुलाई ॥८॥

अति पछताइने का आसै यह स्रम बहुत हुआ अरु मृग न मूआ तिस पर भी सुभटों मों लज्जा आवेगी जो अति स्रेष्ठ तुरंग पर चढे भी भूपति ने एक शूकर न मारा पुनः इस कर भी पश्चाताप बन भयानक है संगी कोऊ नहीं क्या जानिये क्या अवस्था होवेगी सोई कहते हैं ॥ ८ ॥

दोहा—षेद षिन्न छुद्धित टृषित, राजा बाजि समेत।
षोजत व्याकुल सरित सर, जल बिनु भएउ अचेत ॥ १५७ ॥

फिरत बिपिन आश्रम एक देषा। तहँ बस नृपति कपटमुनिबेषा ॥१॥

जासु देस नृप लीन्ह छडाई। समरसेन तजि गएउ पराई॥२॥

समरसेन उस नृपति का नाम था किंवा समर महुं सेना त्याग कर भाग गयाथा सो भागने का हेतु कहते हैं॥ २॥

समय प्रतापभानु कर जानी। आपन अति असमय अनुमानी॥३॥
गएउ न गृह मन बहुत गलानी। मिला न राजहिं नृपअभिमानी॥४॥
रिस उर मारि रंक जिमि राजा। बिपिन बसै तापस कै साजा॥५॥
तासु समीप गवन नृप कीन्हा। यह प्रतापरवि तब तेहिं चीन्हा॥६॥
राउ तृषितनहिं सो पहिचाना। देषि सुबेष महामुनि जाना॥७॥
उतरि तुरग ते कीन्ह प्रनामा। परम चतुर न कहेउ निजनामा॥८॥

दोहा—भूपति तृषित बिलोकि तेहि, सरबरु दीन्ह देषाइ।
मज्जन पान समेत हय, कीन्ह नृपति हरषाइ॥१५८॥

गै श्रम सकल सुषी नृप भएऊ। निज आश्रम तापस लै गएऊ॥ १॥
आसन दीन्ह अस्त रबि जानी। पुनि तापस बोलेउ मृदुबानी॥ २॥
को तुम्ह कसबन फिरहु अकेले। सुंदर जुबा जीव पर हेले॥ ३॥

जीवों पर मारणे निमित्त हले कहिये हेले करणेवाला तूं कौन है किंवा सुंदर तेरी जुवावस्था है अरु आप ने जीव पर हेले कहिये जिस की अवज्ञा है प्रयोजन यह ऐसो सुंदर देह से जो तूं घोरबन में एकला फिरता है ताते जानोता है अपणे सुख कों नहीं चाहता जौं राजा कहै तुम को क्या प्रयोजन है मुझे एता कहते हो तिस पर कहिता है॥ ३॥

चक्रबर्ति के लच्छन तोरें। देष दया लागी अति मोरें॥ ४॥

राजा के सुख से सभों को सुख होता है ताते तेरे तन मो महाराजा के लख्यन देख के हमारे मन मों दया भई है तब भूपति ने विचार्‌या मुझ कों खिन्न देख कर इस रिष ने कृपा करी है अरु लख्यणो कर मुझे पछान्या भी है ताते ऐसी जुक्ति कहों अपना नाम भी प्रगट न होवै अरु इस कों अपनी बुद्धि अरु विद्या पर संका भी न आवै सोई कहता है॥ ४॥

नाम प्रतापभानु अवनीसा। तासु सचिवमैसुनहुमुनिसा॥ ५॥
फिरत अहेरे परेउ भुलाई। बडे भाग देषेउ पद आई॥ ६॥
हम कहँ दुर्लभ दरस तुम्हारा। जानतहौंकछुभलहोनिहारा॥ ७॥

तुमारे दरशन कर जानीता है कछु भली होणी है॥ ६॥

कह मुनि तात भएउ अँधियारा । जोजन सतरह नगर तुम्हारा ॥ ८ ॥

कदाचित राजा कहै सतरह जोजन मेरे आगे क्या वस्तु है तुम मारग बताइ देवो तौ अपने प्रयोजन निमित अगम देखावता हुआ कहता है ॥८॥ टिप्पणी—सतरह के स्थान पर सत्तर पाठ कई पुस्तकों में है ।

दोहा—निसा घोर गंभीर बन, पंथ न सुनहु सुजान ।
बसहु आजु अस जानि तुम्ह, जाएहु होत बिहान ॥

जौं कोउ कहै नृप सुजान था एकले ने पर इस्थान पर नहीं था रहणा तिस पर कहते हैं ।

तुलसी जस भवतव्यता, तैसी मिलै सहाइ ।
आपुन आवै ताहि पहि, ताहि तहां लै जाइ ॥ १५९ ॥

भावी के अनुसार पुरुष दुखसुख के समीप जाता है वा दुखसुख पुरुष के समीप आवता है ॥१५९॥

भलेहि नाथ आयसु धरि सीसा । बांधि तुरग तरु बैठ महीसा ॥ १ ॥

बाजि को बृक्ष मों बांधकर तिसी तरु के तले नृप बैठ गया ॥ १ ॥

नृप बहु भाँति प्रसंसेउ ताही । चरन बंदि निज भाग्य सराही ॥ २ ॥

बहुत भांति अस्तुत का हेतु यह मै चत्री यह ब्राह्मण है हम गृहस्ती यह अतीत हम नगरवासी यह बनवासी हम से आरजाकर बुद्धिकर सब भांति श्लाघ्य है ताते प्रसंस्या अरु ॥ २ ॥

पुनि बोलेउ मृदुगिरा सुहाई । मानि पिता प्रभु करौं ढिठाई ॥ ३ ॥
मोहि मुनीस सुत सेवक जानी । नाथ नाम निज कहहु बषानी ॥ ४ ॥

नाथनामनिज कहहु अर्थ तो येते में भी सिद्ध होताथा बख्यानपद इसनिमित्तदिआ आगे नाम का अर्थ पूछनाहै अथवा बख्यानपद विस्तार का वाचिकहै जो नाम भी कहो अरु और बृतांत भी कहो॥४॥

तेहि न जान नृप नृपहिं सो जाना । भूप सुहृद सो कपट सयाना ॥ ५ ॥

राजा ने तिस कों नहीं पछाणिआं अरु राजा कों उस ने जाणिआ है तिस पर भी नृप का सुभाउ सुहृद कहिये सूधा है जाते उस को बातां पर विश्वासकर गया अरु वह कपटी सयाना है ताते नृप कों अपना सेवक हुआ जानकर भी अपने प्रयोजन निमित्त तिस का संघारही चाहिआ तिस का हेतु कहते हैं ॥ ५ ॥ टिप्पणी—राजा सुहृद अर्थात् मित्रता में सयाना और वह कपट में सयानाथा ।

बैरी पुनि छत्री पुनि राजा । छल बल कीन्ह चहै निज काजा ॥ ६ ॥

शत्रु के रिदै मों दया कहां तिस पर छत्रियों के महारिदै कठिन तिस पर हूं राजा जिनो ने प्रयोजन पर हूं के उपकार भुलाइ के अपकार करणों ताते ज्यों क्यों काम सुधारना चाहिआ सो कारण यह ॥६॥ टिप्पणी—बैरी छल से चत्री बल से राजा कीन्ह चहे निज काजा । वा तीनों भिन्न २ कपट में गम्भीर हैं यहां तीनों मिल के एक हो गये हैं ।

समुझि राज सुष दुषित अराती। अवा अनल इव सुलगै छाती॥ ७॥

राज के सुख अरु शत्रुहुं के दुख समुझकर आवे की अग्नि समान रिदे सों ही जलता था॥ ७॥

सरल बचन नृप के सुनि काना। बयर संभारि हृदय हरषाना॥ ८॥

नृप के सूधे वाक्य सुन कै अरु बितीत बैर बिचार कै प्रसन्य भया तत्व यह जैसे इस नें हम निरष-पराधिवों को मारा था तैसे अब हम इस कों संघारैंगे ताते॥ ८॥

दोहा—कपट बोरि बानी मृदुल, बोले जुगुति समेत।
नाम हमार भिषारि अब, निरधन रहित निकेत॥ १६०॥

कोमलबानी अरु कपट सों भीगी हुई जुक्ति पूरबक बोल्या अब तो हमारा नाम भिख्यक निरधन घर रहित है इसमों युक्ति यह जो अब पद दिया अब का अभिप्राय यह इस मे आगे कहणा है मैं ब्रह्माजी से उपजया हों ताते पूरबकाल मों अनेक सृष्टा मैने रचीआं है अरु अब तो सभ किछु त्याग बैठा हों॥ १६०॥

कह नृप जे बिग्याननिधाना। तुम्हसारिषे गलितअभिमाना॥ १॥
सदा रहहिं अपनपौ दुराए। सब बिधि कुसलकुबेषबनाए॥ २॥

नृप ने कहा हे प्रभो तुम सारिखे ज्ञानवान जो गलत अभिमान कहिये निरहंकार हैं सो सदा ही अपना आप छिपावते हैं जद्यपि सरबविद्या मो निपुन होवैं तो भी लोक दृष्टि मों कुवेष कर छोडते हैं जो हम को कोउ मिले नहीं॥ २॥ टिप्पणी—अपनपौ = अपने रूप को।

तेहि तें कहहिं संत श्रुति टेरें। परम अकिंचन प्रिय हरि केरें॥ ३॥

तिन की अकिंचनता कों देखकर स्रुतां अरु संतजन तिन को भगवंत के परम प्यारे कहते हैं॥ ३॥

तुम्ह से अधन भिषारि अगेहा। होत बिरंचि सिवहि संदेहा॥ ४॥

तैसे तुम जो आपनी निम्रता अर्थ आप कों निरधन आदिक संज्ञा देते हो सो मुझ को तुमारे गुणों को देखकर यह संदेह होता है जो तुम विधि हरि हो वा उन के सम हो॥ ४॥ टिप्पणी—संदेह इस बात का कि अपनी तपस्या से हमार स्थान न ले लें।

जोसि सोसि तव चरन नमामी। मो पर कृपाकरिअ अवस्वामी॥ ५॥

जो तुम हो सो हो मेरो प्रणाम है मुझ पर कृपा करो॥ ५॥

सहज प्रीति भूपति की देषी। आपु बिषय बिस्वास बिसेषी॥ ६॥

सहज प्रीत कहिये उत्तमे लोगो विषै तो इस का निरदंभ प्रेम है तिस पर भी मेरे विषे तो अधिक बिस्वास हुआ है॥ ६॥ टिप्पणी—आपबिषय = अपने ऊपर।

सब प्रकार राजहिं अपनाई। बोलेउ अधिकसनेह जनाई॥ ७॥

सरब प्रकार कहिये अधिक सेवा अरु कोमलालाप तिस पर भी भोजन विषे मोहतोष दिखवाइ कर जब अपना किआ तब तिस मों अपना प्रेम लखाय कर बोल्या॥ ७॥

सुनु सतिभाउ कहौं महिपाला। इहां बसत बीते बहु काला॥ ८॥

दोहा—अब लगि मोहि न मिलेउ कोउ, मैं न जनावौं काहु।

लोकमान्यता अनल सम, कर तप काननदाहु॥

यह घोर बन है तातें मुझ कों अबलग कोऊ नहीं मिला अरु मेरी इच्छा भी किसू कों मिलन की नहीं अरु मान भये तप का नाश होता है ताते तिस की इच्छा भी नहीं अब ग्रन्थकार नीत कहते हैं। टिप्पणी—लोक मान्यता अनल आग के समान तपस्यारूपी बन को जला देता है।

सोरठा—तुलसी देषि सुबेष, भूलहिं मूढ न चतुर नर।

सुंदर केकी पेष, बचन सुधा सम असन अहि॥ १६१॥

कपटियों का सुवेष देखकर केवल मूरखहीं नहीं भूलते चतुर भी भूल जाते हैं जैसे मोर का रूप सुंदर है अरु बानी मिष्ट है परंतु भोजन सरप है तैसेही दुष्टों के रूप अरु बचन भले हैं करम बुरे हैं अब पुनः पूरब संबंध कहता है॥ १६१॥

तातें गुपुत रहौं जग माहीं। हरितजिकिमपिप्रयोजननाहीं॥ १॥

इस निमित्त मैं छिप्या रहता हौं जो भगवंत बिना किसी साथ कोई प्रयोजन नहीं जो नृप कहै भगवंत के प्रसन्न करबे हेतु भी बाह्यपूजा आदिक समग्री चाहती है तिस पर कहता है॥ १॥

प्रभु जानत सब बिनहिंजनाए। कहहु कवन सिधि लोक रिझाए॥ २॥

बाह्य समग्रीओ लोकरंजन हेतु है तिस मो संतहुं कों प्रयोजन नहीं जाते प्रभु रिदे के ज्ञाता हैं जो नृप कहै जगत साथ प्रयोजन नहीं तौ मुझ से एतो बातें क्यों करते हौ तिस पर कहता है॥ २॥

तुम्ह सुचि सुमति परम प्रिय मोरे। प्रीति प्रतीति मोहिपर तोरे॥ ३॥

अब जौं तात दुरावौं तोही। दारुन दोष बढै अति मोही॥ ४॥

तुमारे आचरण पवित्र हैं बुद्धि उत्तम है मुझ पर प्रीति अरु प्रतीति अधिक करते हौ ताते मुझे भी परम प्यारे लागते हो जौं ऐसे जान के मैं अपना गुन तुम सों छिपावौं तौ दोष भागी होता हौं तत्व यह सरल पूरष सों कपट करना महापाप है॥ ४॥ टिप्पणी—बढै के स्थान घटै पाठान्तर।

जिमि जिमु तापसु कहै उदासा। तिमि तिमि नृपहिं उपजबिस्वासा॥५॥

ज्यौं ज्यौं तापसी आपणी अलगता की बातें करता है त्यौं त्यौं नृप कों अत्यंत प्रीति होती है॥ ५॥

देषा स्वबस कर्म मन बानी। तब बोला तापस बगध्यानी॥ ६॥

नाम हमार एकतनु भाई। सुनि नृप बोलेउ पुनि सिरु नाई॥ ७॥

कहहु नाम कर अरथ बषानी। मोहि सेवक अति आपन जानी॥ ८॥

इस सुनकर कपट मुनि बोला॥ ८॥

दोहा—आदि सृष्टि उपजी जबहिं, तब उतपति भै मोरि ।
नाम एकतनु हेतु तेहिं, देह न धरी बहोरि ॥ १६२ ॥

जौ कहो एता चिर एक शरीर कैसे रहा तौ ॥ १६२ ॥

जनि आचरजु करहु मन माहीं । सुत तप तें दुर्लभ कछु नाहीं ॥ १ ॥
तपबल तें जग सृजै बिधाता । तपबल बिष्णु भए परित्राता ॥ २ ॥
तपबल संभु करहिं संघारा । तपबल सेष धरै महि भारा ॥ ३ ॥
भएउ नृपहि सुनि अति अनुरागा । कथा पुरातन कहै सो लागा ॥ ४ ॥
करम धरम इतिहास अनेका । करै निरूपन बिरति बिबेका ॥ ५ ॥

कर्मों धर्मों के जो अनेक इतिहास हैं सो कहे अर्थ यह अमके जुग मों अमके करमों को प्रधानता थी अमके राज मों अमके धरम की प्रधानता थी अमके समै मों अमके विरक्त थे अमके समै मों अमके विवेकी थे ऐसिद्यां वार्ता कपोल कल्पित सुनाया ॥ ५ ॥ टिप्पणी—अमके = अमुक ।

उदभवपालनप्रलयकहानी । कहसि अमित आचरज बषानी ॥ ६ ॥

उत्पति प्रलै आदिक जो प्रसंग पुराणो में सुने हुये थे सो भी अरु कुछ कपोल कल्पित भी आश्चर्य रूप बनाइकर सुनाये ॥ ६ ॥

सुनि महीस तापसबस भएउ । आपन नाम कहन तब लएउ ॥ ७ ॥

जब मुनि पर प्रतीति आई अरु अपना दुराया हुआ नाम नृपति कहने लगा तब ॥ ७ ॥

कह तापस नृप जानों तोही । कीनो कपट लाग भल मोही ॥ ८ ॥

सोरठा—सुनु महीस असि नीति, जहं तहं नाम न कहहिँ नृप ।
मोहि तोहि पर अति प्रीति, सोइ चतुरता बिचारि तव ॥ १६३ ॥

हे राजन नीति का मत ऐसेही है जौं कहूं नृप अकेला हुवै जाए तौ लोगों को अपना नाम न कहणा तद्यपि हम से संतों के आगे दुराव करण दोस था परंतु हमारी जो तुझ पर अतिप्रसन्नता है तातें तेरे अपराध की वोर दृष्टि नहीं करी तेरा चातुर्ज विचाया है अब तूं अपना बृतांत सुन ॥ १६३ ॥

नाम तुम्हार प्रतापदिनेसा । सत्यकेतु तव पिता नरेसा ॥ १ ॥
गुरप्रसाद जानिअ सब राजा । कहिय न आपन जानि अकाजा ॥ २ ॥

अपना गुन अरु मान प्रगट करणा संतों को एही अकाज है ॥ २ ॥

देषि तात तव सहज सुधाई । प्रीति प्रतीति नीति निपुनाई ॥ ३ ॥

हे तात तुमारी संतहुं विषे प्रीति पुनः हमारे विषे अतिप्रतीतिं बहुरो प्रथम अपणा नाम न कहना यह नीति इत्यादिक गुणो मो तुम को निपुन अरु अतिसरल देखकर ॥ ३ ॥

उपजि परी ममता मन मोरे। कही कथा निज पूछे तोरे ॥ ४ ॥

मेरे मन मों जो सनेह उपज्या है तातें तेरे पूछने के मान राखनार्थ मै ने भी अपना पूरब प्रसंग तुझे सुनाया है बिन पूछे पाठ होवे तो अर्थ तेरे पर कृपाकर कै मै ने बिन पूछे ही तुझ को प्रलै उतपत्यादिक प्रसंग सुनाइ दिये हैं कै हम को तौ किसी सों अलप बोलना भी नहीं सुहावता ॥ ४ ॥

अब प्रसन्न मैं संसै नाहीं। मांगु जो भूप भाव मन माहीं ॥ ५ ॥
सुनि सुबचन भूपति हरषाना। गहि पद बिनय कीन्हि बिधि नाना ॥६॥
कृपासिंधु मुनि दरसन तोरे। चारि पदारथ करतल मोरे ॥ ७ ॥
प्रभुहिं तथापि प्रसन्न बिलोकी। मांगि अगम बर होउं असोकी ॥ ८ ॥

जद्यपि मुझे किसू वस्तु की इच्छा नहीं तथापि तुम को प्रसन्य देख कै दुर्लभ वर मांग कै जरा मृत्यु आदिकों से असोक हुआ चाहता हौं सो सुनो ॥ ८ ॥ टिप्पणी—असोकी के स्थान पर बिसोकी पाठ है।

दोहा—जरा मरन दुख रहित तनु, समर जितै नहिं कोइ।
एकछत्र रिपुहीन महि, राज कल्प सत होइ ॥ १६४ ॥

नृप के अधिक लोभपर बचन सुनकर अपने दुष्टअभिप्रायकर कपट की नीव बांधताहुआ बोला ॥ १६४ ॥

कह तापस नृप ऐसेइ होई। कारन एक कठिन सुनु सोई ॥ १ ॥
कालौ तुअ पद नाइहि सीसा। एक बिप्रकुल छाडि महीसा ॥ २ ॥
तपबल बिप्र सदा बरिआरा। तिन के कोपन कोउ रखवारा ॥ ३ ॥
जौं बिप्रन बस करहु नरेसा। तौ तुअ बस बिधि बिष्णु महेसा ॥ ४ ॥
चलन ब्रह्मकुल सन बरिआई। सत्य कहौं दोउ भुजा उठाई ॥ ५ ॥

कितेइक देशों का यह प्रकार है वाक की दृढता निमित्त दोनो भुजा उठावते हैं सो उठाइ कै मैं सांच कहता हौं ब्राह्मणो साथ वल नहीं चलता अथवा भुजा पद भार्यों का वाचिक है मैं सत्य कहता हौं तुम दोनो भार्यों कों उठाय देवोंगा अर्थ यह नाशकर देवोंगा अथवा मेरी यह प्रतिज्ञा है तुमारे बुद्ध निमित्त द्वो भुजा उठाया हैं एक भुजा कहियै अपनी बुद्धि द्विती भुजा कालकेतु राक्षस की विद्या जो सूकर बणा था वा दो भुजा एक रिषीश्वरों से स्राप दुतीय अपने पुरषारथ सों तुमारा बध करना ॥ ५ ॥

बिप्रश्राप बिनु सुनु महिपाला। तोर मरन नहि कवनिहुं काला ॥ ६ ॥
हरषेउ राउ बचन सुनि तासू। नाथ न होइ मोर अब नासू ॥ ७ ॥
तव प्रसाद प्रभु कृपानिधाना। मो कहुँ सर्बकाल कल्याना ॥ ८ ॥

दोहा—एवमस्तु कहि कपटमुनि, बोला कुटिल बहोरि।

मिलब हमार भुलाब निज, कहहु त मोहि न षोरि ॥ १६५ ॥

जो वर तैने मांगे हैं सो तुझे प्राप्ति होहिंगे यह कहिकर कपटी पुनः बोला हमारे मिलणे अरु अपने बन विषे भूलने की बात जों तैने किसू को कही तो मै निरदोष हों तेरा बुरा होवेगा इस कथन मों आशय यह कदाचित यह प्रसंग किसू सों कहे अरु काऊ मेरा मरमी इस का मेरा स्वरूप निरणै कराय देवै तब मंत्र अफल होता है अरु कथन सें निवारणार्थ नृप कों और भ्रम डारता है ॥ १६५ ॥

तातें मैं तोहि बरजौं राजा । कहे कथा तव परम अकाजा ॥ १ ॥
छठें श्रवन यह परत कहानी । नास तुम्हार सत्य मम बानी ॥ २ ॥
यह प्रगटे अथवा द्विजश्रापा । निधन तोर सुनु भानुप्रतापा ॥ ३ ॥
आन उपाउ मृत्यु तव नाहीं । जों हरि हर कोपहि मन माहीं ॥ ४ ॥
सत्य नाथ पद गहि नृप भाषा । द्विजगुरकोप कहहु को राषा ॥ ५ ॥
राषै गुर जौं कोप बिधाता । गुरबिरोध नहि कोउ जगत्राता ॥ ६ ॥
जौं न चलब हम कहे तुम्हारे । होउ मरन नहिँ सोच हमारे ॥ ७ ॥
एकहिं डर डरपत मन मोरा । प्रभु महिदेवश्राप अति घोरा ॥ ८ ॥

दोहा—होहिं बिप्र बस कवन बिधि, कहहु कृपा करि सोइ ।
तुम्ह तजि दीनदयाल निज, हितू न देषों कोइ ॥ १६६ ॥

राजा के वाक्य सुनकर राजा की रुचि बधावता अरु आपनो अलज्ञता लखावता हुआ बोल्या ॥१६६॥

सुनु नृप बिबिध जतन जग माहीं । कष्टसाध्य पुनि होहिं कि नाहीं ॥१॥
अहै एक अतिसुगम उपाई । तहाँ परंतु एक कठिनाई ॥ २ ॥
मम आधीन जुगुति नृप सोई । मोर जाब तव नगर न होई ॥ ३ ॥
आजु लगें अरु जबतें भएऊं । काहू के गृह ग्राम न गएऊं ॥ ४ ॥

अब नृप कों धीरज देता है ॥ ४ ॥

जौं न जाउं तव होइ अकाजू । बनो आइ असमंजस आजू ॥ ५ ॥

जो तेरे जैसे सरल भक्त के गृह कल्यान निमित्त मैं न जावों तब तेरा अकाज है अरु मेरा भी अकाज कहिये मुझे भी दोस लागेगा ताते असमंजस बना है अर्थ यह न रह सक्ता हों न जा सक्ता हों ॥ ५ ॥

सुनि महीस बोले मृदुबानी । नाथ निगम असि नीति बषानी ॥ ६ ॥
बडे सनेह लघुन्ह पर करहीं । गिरि निज सिरनि सदा तृन धरहीं ॥७॥
अंबु अगाध मौलि वह फेनू । संतत धरै धरनि सिर रेनू ॥ ८ ॥

महान जो नदियां हैं सो जैसे शिर पर फेनु को धरती थाई हैं अरु महत जो धरती है सो जैसे सदा धूर कों शिर पर धारतीही है तैसे तुम से महातमा हम जैसे लघों पर प्रेम करतेहो हैं ॥ ८ ॥

दोहा—अस कहि गहे नरेस पद, स्वामी होहु कृपालु ।
मोहिलागि दुष सहिअ प्रभु, सज्जन दीनदयालु ॥ १६७ ॥

पद गहिकर राजा कहने लागा हे स्वामी जद्यपि तुम से विरक्तों संतों को नगरां मों गमन अरु राजसीयों सों संबंध परम खेददायक है परंतु मुझ दासा न दास के निमित्त अब आप कष्ट सहारिए जाते संतहुं का विरद दीनदयालु है ॥ १६७ ॥

जानि नृपहिँ आपन आधीना । बोला तापस कपटप्रबीना ॥ १ ॥
सत्य कहौं भूपति सुनु तोही । जग मह नहिंदुर्लभ कछु मोही ॥ २ ॥
अवसि काज मै करिहौं तोरा । मन तन बचन भगत तैं मोरा ॥ ३ ॥

पीछे जो हरषा था अपना बन मों भूलना अरु मेरा मिलाप किस् को ना कहना तिस की संका निवारनारथ जुक्ति पूरबक कारन कहता है ॥ ३ ॥

जोग जुगुति जप मंत्रप्रभाऊ । फलै तबहिं जब करिअ दुराऊ ॥ ४ ॥

योग की जुगति अरु तप का प्रकार अरु मंत्र विद्या अथवा वारता भी तबी सफल होए जो अप्रगट रहै नृप का बांछित जो ब्राह्मणों के बस करने का है तिस का उपाउ कपट गरभत कहता है ॥ ४ ॥

जौं नरेस मैं करौं रसोई । तुम्ह परसहु मोहि जानन कोई ॥ ५ ॥
अन्न सो जोइ जोइ भोजन करई । सोइ सोइ तव आयसु अनुसरई ॥६॥
पुनि तिनकें गृह जवैं जोऊ । तव बस होइ भूप सुनु सोऊ ॥ ७ ॥
जाइ उपाय रचहु नृप एहू । संबत भरि संकलप करेहू ॥ ८ ॥

दोहा—नित नूतन द्विज सहस सत, बरेहु सहित परिवार ।
मैं तुम्हरे संकलप लगि, दिनहि करब जेवनार ॥ १६८ ॥

तुम ने लख्य ब्राह्मणा कों कुटुंबों सहित दिन प्रति निवता देना अरु मै एकलाही तुमारे संकल्प के दिन प्रजंत अर्थ यह वर्ष भर रसोई साजता रहोंगा ॥ १६८ ॥

एहि बिधि भूप कष्ट अति थोरे । होइहहिँ सकल बिप्र बस तोरे ॥ १ ॥

थोरे कष्ट का अर्थ यह द्रव्य की तेरे घर तोट नहीं अरु होम जज्ञ सदा होते हैं तिस पर रसोई में ने करनी है तुम को परोसन मात्र कष्ट है अरु तिस कर द्विज सभी बस वरती होहिंगे अरु ॥ १ ॥

करिहहिं बिप्र होम मष सेवा । तेहि प्रसंग सह जेहि बस देवा ॥ २ ॥

और एक तोहि कहौं लखाऊ। मैं एहि बेष न आउब काऊ॥ ३॥
तुम्हरे उपरोहित कहुं राया। हरि आनब मैं करि निज माया॥ ४॥

निज माया कथन का भाव यह तूं द्विज को पठावै तो जोग नहीं ताते तैंने यह मंत्र अति गोप्य राखना है अरु द्विज के ल्यावणे मो मुझे जतन कछु नहीं जाते मैं अनंत शक्ति हौं जो नृप कहै पुरोहित के ल्यावणे मों क्या सिद्ध है तिस पर कहता है॥ ४॥

तपबल तेहि करि आपु समाना। रखिहौं इहां बरष परवाना॥ ५॥

इहां हमारे दरसन कों अनेक सुर मुनि आवते हैं ताते आसन सून छोडौं तो वह मुझे खोजते फिरैंगे। अरु बीच रहिकर पुरोहित कदाचित मुझ सों किसू बात की इरषा करै ताते तिस कों अपना सरूप बनाय कर इहां राखोंगा जों नृप कहै पुरोहित का व्यवहार कौन साधेगा तिस पर कहता है॥ ५॥

मैं धरि तासु बेषु सुनु राजा। सब बिधि तोर संवारब काजा॥ ६॥
गै निसि बहुत सेन अब कीजै। मोहि तोहि भूप भेंट दिन तीजै॥ ७॥

अब राजा कों अति प्रतीति दृढावन हेतु अपनी शक्ति अरु संकेत कहता है॥ ७॥

मैं तपबल तोहि तुरग समेता। पहुँचैहौं सोवतहि निकेता॥ ८॥

दोहा—मैं आउब सोइ बेषु धरि, पहिचानेहु तब मोहि।
जब एकांत बुलाइ सब, कथा सुनावौं तोहि॥ १६९॥

सो बेष कहिये पूरवोक्त पुरोहित रूप धारकर मै आवोंगा अरु जब तुझे इस काल का वृतांत सब सुनावों तब इस संकेत से मुझे निश्चै करना॥ १६९॥

सैन कीन्ह नृप आयसु मानी। आसन जाइ बैठ छलग्यानी॥ १॥
स्रमित भूप निद्रा अति आई। सो किमि सोव सोच अधिकाई॥ २॥

राजा स्रमित था अरु बर लेकर प्रसन्नता भई ताते सोइ गया अरु हम को अति चिंता है जो कुमंत्र मैंने बडा ठया है जब लग पूरन न होवै तब लौ अपने प्रान जाने का त्रास है अरु कालकेतु की भी बोडी करता है ताते जागताहीं रहा तब लौ॥ २॥

कालकेतु निसिचर तहँ आवा। जेहि सूकर होइ नृपहि भुलावा॥ ३॥
परम मित्र तापस नृप केरा। जानै सो खल कपट घनेरा॥ ४॥

जौं कोऊ कहै कपटी भूप का तो राजा नें देश छीन्या था कालकेतु राख्यस का क्या बैर था तिस पर कहिते हैं॥ ४॥

तेहि के सत सुत अरु दस भाई। खल अति अजय देवदुखदाई॥ ५॥

प्रथमहिँ भूप समर सब मारे। बिप्र संत सुर देषि दुषारे॥ ६॥
तेहि षल पाछिल बयर संभारा। तापस नृप मिलि मंत्र बिचारा॥ ७॥

तिस दुष्ट ने पूरबिला बैर चितारकर इस कपटी नृप सों मंत्र कर छोडा था जो कबी नृप मेरे दाब मों आया तो मैं तुझ लग ल्यावोंगा आगे तूं उस के नास का उपाउ करिवो॥ ७॥

जेहि रिपुछय सोइ रचेन्हि उपाऊ। भावी बस न जान कछु राऊ॥ ८॥

जिस भांति राजा का नाश होइ सो उपाउ उनों किया अरु करते हैं परंतु नेतबम तें राजा कों निकट होते भी कुछ सुध न भई जौं काऊ कहै शत्रु है थे अरु नृप एकला था पुनः स्रमित निद्रित था तिस कों उहांही क्यों न मार डारिआ तिसपर कहते हैं॥ ८॥

दोहा—रिपु तेजसी अकेल अपि, लघु करि गनिअ न ताहु।
अजहुँ देत दुष रबि ससिहिं, सिरअवसेषित राहु॥ १७०॥

महाप्रतापी शत्रु जद्यपि एकला भी होए तौ भो तिस को तुच्छ न गनिये जैसे रविशशि है थे अरु राहु एक था परंतु जब उन के कहे ते ता का शिर भगवान ने काट दिआ तब धर का नाम केतु भया अरु सिर का नाम राहु भया सो अबलग सूरज चंद्रमा कों दुख देताहो है तैसेही इनो बिचार किआ जो हम अब इस कों मारन लागहिं अरु यह जाग उठै तौ हम को मारैगा अरु जौं एकला मरैगा तो भी हमारा बांछित न सिद्ध होएगा तातें इस कों द्विज स्रापकर सकुलै मरवावहिं। ननु। नृप कों गृह मो गये आपही मों सुधि होइ किंबा इस के मुख में बनगमन के अख्यर सुनकर कोऊ मरमो पुरुष इस कों तुमारा प्रसंग सुनाइ देइ तब मंत्रहीं अफल होय जायगा। उत्तर। यह बात भी सांचो है परंतु मैंने इउ को ऐसे मोह मों फंसाया है अरु लोभ मों लुभाया है अरु भै देखाया है जिस कर यह प्रसंग न भाखैगा अरु मेरी प्रतीति न त्यागैगा अरु मै भी इस के पास शीघ्रही जावोंगा अरु भावी भी ऐसेहीं भासती है जो हमारा मंत्र सफल होवैगा इम भांति खंडनमंडनकर कै मनमो निश्चैकिया अबकालकेतु का मिलाप कहते हैं॥ १७०॥

तापस नृप निज सषहि निहारी। हरषि मिलेउ उठि भएउ सुषारी॥ १॥
मित्रहिँ कहि सब कथा सुनाई। जातुधान बोला सुष पाई॥ २॥
अब साधेउँ रिपु सुनहु नरेसा। जौं तुम्ह कीन्ह मोर उपदेसा॥ ३॥

मोर उपदेश कथन का भाव यह निशाचर ने यह सभ बृत्तांत भावी ज्ञान के बल कर कपटी मुनि को पूरबहीं सिखाय छोडा था॥ ३॥

परिहरि सोच रहहु तुम्ह सोई। बिनु औषधहिं ब्याधि बिधि षोई॥ ४॥

अब चिंता त्याग के तुम भी सोइ रहो दैव की क्रपा ते यह महाव्याध औषध बिना कहिये अल्प उपाउ कर निवृत भई॥ ४॥

कुल समेत रिपुमूल बहाई। चौथे दिवस मिलब मैं आई॥ ५॥

तापस नृपहिं बहुत परितोषी। चला महाकपटी अतिरोषी॥ ६॥

महाकपटी कहिये जो अनंत छल जानें अतिक्रोधी कहिये जो अधीन हुये पर भी दया न करै॥६॥

भानुप्रतापहिं बाजि समेता। पहुंचाएसि छन माँझ निकेता॥ ७॥
नृपहिं नारि पहि सयन कराई। हय गृह बाँधेसि बाजि बनाई॥ ८॥

दोहा—राजाके उपरोहितहिं, हरि ले गएउ बहोरि।
लै राषेसि गिरिषोह महं, माया करिं मति भोरि॥ १७१॥

राजा के उपरोहित कथन का भाव यह तप का निधि विप्र होता तौ उस पर निशाचर का बल ना पडता रजोगुनी वृत्तवाला था तौ उस ने हर लिया। माया सो उनमत्त कर कै कंदरा बीच तिस को दे छोडा है उपाउ करण का आसय यह जो प्रमत्त कर इस कों मैं छोडौं तब कोई इस कों कदाचित पछान लेइ अरु राजा कों जाइ कहै किंबा इसो कों कोई नगर में ले आवै तौ भो हमारा मंत्र सफल न होता अरु जौ नगखोह मेंही राखों अरु उहां सिर फोड कर हीं मर जाय तब व्यर्थ घात होइ अथवा कंदरा के दुआर पर जाय पुकारे अरु कोई सुन बैठे अरु दुआर खोल देवै तब भी अकारज होइ इस निमित्त दोनो उपाव किये॥ १७१॥ टिप्पणी—नग खोह = पर्बत खोह।

आपु बिरचि उपरोहितरूपा। परेउ जाइ तेहि सेज अनूपा॥ १॥

परोहित का रूप धार कर तिस की सुंदर सिहजा पर वह राख्यस जाइ सोविया जुवति ढिग सोवन का भाव यह गुरों का धरमनास होवै तौ शिष्य का बिनास होवै॥१॥ टिप्पणी—सिहजा = सज्या।

जागेउ नृप अनभये बिहाना। देषि भवन अतिअचरजु माना॥ २॥
मुनिमहिमा मन महुँ अनुमानी। उठेउ गवहिँ जेहिं जान न रानी॥ ३॥

मुनीश्वर की महिमा सत्य जानी जो उनो ने प्रतिज्ञा करी थी सो साँची भई अयम कारज भी सफल होयगा इस निमित्त उठ्यो गंवहिं कहिये उठ चलेआ जाते रानी भी न जानै तत्व यह रानी जानैगो तौ पूछैगी अरु मैंने बृत्तांत कहणा नहीं॥ ३॥

कानन गएउ बाजि चढि तेही। पुर नर नारि न जानेउ केही॥ ४॥

सरब लोगों मे अज्ञात तिसी तुरंग पर चढ कै बन कों चला गया॥ ४॥

गए जाम जुग भूपति आवा। घर घर उत्सव बाज बधाव॥ ५॥

अढ़ दिन बीते नृप इस निमित्त आया जो दुइ चार घडो दिन चढे मैं प्रवेश करोंगा तब लोक जानैंगे निकट नगर के दश पांच कोस पर तौ साधारण अश्व असवार घर से बाहर नहीं रहते तो राजा कैसे रहा अरु कदाचित उहां से कोऊ जाय पूछै ताते द्वै जाम बीते आया किंबा उस कपटी की प्रोहित रूप सें देखने की आसा कर नृप का चित्त उदासीन है ताते तिस दिन के बितावने निमित्त जुगजाम बीते आया॥५॥

उपरोहितहि देष जब राजा। चकित बिलोकि सुमिरि सोइ काजा॥६॥

बिप्र को जब नृप देखता है तब चक्रत होता है अपने कारज कों सुमर के द्विज कों देखकर चक्रत होवणा का भाव यह पुरोहित कों हम जनम भर देखते रहे हैं इस जैसा रूप मुनीश्वर का कैसे बनैगा जिस कों कोऊ न पछानैगा किंवा इस का तो शरीर भी परम बलवान नहीं इस जैसा तनधारकर एकला लख्य विप्रों कों भोजन किस भांति देवेगा किंचा कारज कों सुमरकर चक्रत होता है जो कारज मेरा अति बडा है किस भांति सिद्ध होवैगा ॥ ६ ॥

जुग सम नृपहि गए दिन तीनी । कपटी मुनिपद रहमति लीनी ॥ ७ ॥
समय जानि उपरोहित आवा । नृपहिँ मते महं सब समुझावा ॥ ८ ॥

मते कहिये एकांत महं ॥ ८ ॥

दोहा—नृप हरषेउ पहिचानि गुरु, भ्रमबस रहा न चेत ।
बरे तुरत सत सहस बर, बिप्र कुटुंब समेत ॥ १७२ ॥

गुर कों देख कै नृप कों ऐसा भ्रम भया जो चेतनता ना रही इहां चेतनता कहिये जो किसू बुद्धवान सों सल्लाह ना कर लीनी शीघ्रही लख्य ब्राह्मणा कों सकुटुंब निवता दिया ॥ १७२ ॥

उपरोहित जेवनार बनाई । छरस चारिबिधिजस श्रुतिगाई ॥१ ॥

मधुर । अम्ल । लवन । कटु । कखाय । तिक्त यह छरस । भख्य । भोज्य । चोस्य । लेह्य । यह चार बिधि । ऐसे भोजन बनाये ॥ १ ॥

मायामय तेहि कीन्हि रसोई । व्यंजन बहु गनि सकै न कोई ॥ २ ॥

मायामय कहिये सुंदर भोजन किंच पदारथ ल्याश्ता न देख्या अरु रसोई में सभ किछु तयार पडा किंवा अल्प से अधिक हूै जाइ अधिक से अल्प होइ जाइ कबू भासै कबू दृष्टि नहीं आवै ऐसे मायामय भोजन परंतु अनेक येक से येक स्रेष्ट ॥ २ ॥

बिबिध मृगन्ह कर आमिष रांधा । तेहि महु बिप्रमासु षल सांधा ॥ ३ ॥
भोजन कहं सब बिप्र बोलाए । पद पषारि सादर बैठाए ॥ ४ ॥
परसन जबहिँ लाग महिपाला । भइ अकासबानी तेहि काला ॥ ५ ॥

भोजन के जेवने से प्रथम नभबानी होवन का कारन यह द्विजमास की गंध भी रिषीश्वरों को प्राप्ति न होइ किंवा विप्र प्रथम सुरों कों बलिभां देते हैं ताते नभबानी भई जो यह वस्तु सुरों के जोग्य नहीं ॥५॥

बिप्रबृंद उठि उठि गृह जाहू । है बडि हानि अन्न जनि षाहू ॥ ६ ॥
भएउ रसोई भूसुरमासू । सब द्विज उठे मानि बिस्वासू ॥ ७ ॥
भूप बिकल मति मोहभुलानी । भावी बस न आव मुष बानी ॥ ८ ॥

दोहा—बोले बिप्र सकोप तब, नहिं कछु कीन्ह बिचार ।

जाइ निसाचर होहु नृप, मूढ़ सहित परिवार ॥ १७३ ॥

जब नभगिरा सुनी तब विप्रों ने यह विचार न किया जो दोष राजा मो है वा रसोये मो है क्रोधकर एहो वाक्य कहा हे मूढ भूप तूं सकुटुंब राख्यस होहु जो नृप कहै मुझ पर तुम ने कोप किया परंतु कुटुंब कों स्राप क्यों देते हो तिस पर कहते हैं ॥ १७३ ॥

छत्रबंधु तैं बिप्र बोलाई। घालै लिए सहित समुदाई ॥ १ ॥
ईस्वर राषा धरम हमारा। जैहसि तैं समेत परिवारा ॥ २ ॥

हे छत्रियों में नीच जातें द्विजों कों बोलाइकर कुटुंबहुं के संबूहों समेत तूं भ्रष्ट करने लगा था सो हमारी रख्या तो ईश्वर ने करी है अरु तूं सकुटुंब राख्यस होवैगा तिस पर हूं ऐसे भोजन जेंवावन का जो बरष भर का तैनें संकल्प करा था तातें ॥ २ ॥

संबत मध्य नास तव होऊ। जलदाता न रहै कुल कोऊ ॥ ३ ॥

बरष भर में तेरा नाम होयगा अरु कुल मों जलदाता भो कोऊ ना रहैगा ॥ ३ ॥

नृप सुनिस्राप बिकल अतित्रासा। भइ बहोरि बर गिरा अकासा ॥ ४ ॥

बिकल अरु अति त्रास यद इस निमित्त दिया विप्रों के स्राप सें मृत्यु पुनः राख्यस जोन्न बहुरो जलदाता न रहना पुनः अल्पकाल में नष्ट होगा जो जज्ञादिक हो न सकने बहुरो शत्रों से निरादर पाइ कर मरना ऐसी दसा नृप की देखकर तब यह स्रेष्ट अकाशबानी भई ॥ ४ ॥

बिप्रहु श्राप बिचारि न दीन्हा। नहि अपराध भूप कछु कीन्हा ॥ ५ ॥
चकित बिप्र सब सुनि नभबानी। भूप गए जहँ भोजनषानी ॥ ६ ॥
तहँ न असन नहिं बिप्र सुआरा। फिरेउ राउ मन सोच अपारा ॥ ७ ॥

पूरब जो मायामय रसोई कही थी तिस का स्वरूप अब निरनै भया जो नट के संगही माया बोत गई तब नृप अति चिंतातुर ह्वै कर आया ॥ ७ ॥ टिप्पणी—सुआरा = रसोईदार।

सब प्रसंग महिसुरन्ह सुनाई। त्रसित परेउ अवनी अकुलाई ॥ ८ ॥

तब ताकी दुरदशा देख कै द्विज बोले ॥ ८ ॥

दोहा—भूपति भावी मिटै नहि, जदपि न दूषन तोर।
किए अन्यथा होइ नहिं, बिप्रस्राप अतिघोर ॥ १७४ ॥

हे नृप जद्यपि तेरा दोष नहीं तथापि भावी ऐसेही थी जों तूं कहे अब दया करो तो विप्रों का अति घोर स्राप भया है जतन किये भी अन्यथा नहीं होता ॥ १७४ ॥

अस कहि सब महिदेव सिधाए। समाचार पुरलोगन पाए ॥ १ ॥
सोचहिं दूषन दैवहिं देहीं। बिरचत हंस काक किय जेहीं ॥ २ ॥

जिस दैव नें हंसहुं सम जो परम धरमी राजा था तिस कों कागहुं सम जो राक्ष्यस जोनि है सो दीनी तिस पर दोष धरते हैं ॥ २ ॥

उपरोहितहिँ भवन पहुंचाई । असुरतापसहिँ षबरि जनाई ॥ ३ ॥
तेहि षल जहँ तहँ पत्र पठाए । सजि सजि सेन भूप सब आए ॥ ४ ॥
घेरिन्हि नगर निसान बजाई । बिविध भांति नित होइ लराई ॥ ५ ॥
जूझे सकल सुभट करि करनी । बंधु समेत परेउ नृप धरनी ॥ ६ ॥

संपूरण सूरमें सुभटहुं किआं करनिआं कर कर मूये तत्व यह सन्मुख हूं कर सस्त्र मारहिं परंतु साप के बसतें सकलाहिरी तब अरिमरदन सहित प्रतापभानु भी मारया गया ॥ ६ ॥

सत्यकेतुकुल कोउ नहिं बाँचा । बिप्रश्रापकिमि होइ असाँचा ॥ ७ ॥
रिपु जिति सब नृप नगर बसाई । निज पुर गवने जय जस पाई ॥ ८ ॥

शत्रों कों मारकर अरु उस कपटी भूपकों कासमीर नगर मों इस्थापकर राजासभ अपनेपुर कों गए । ८॥

दोहा—भरद्वाज सुनु जाहि जब, होइ बिधाता बाम ।
धूरि मरु सम जनक जम, ताहि व्यालसमदाम ॥१७५॥

राजा के प्रसंग में अर्थ इस का ऐसे है जौन से भूपति इस ने धूरवतकर कोडे थे वहो गिरों सम भये जो ब्राह्मण पिता सम कृपा करते थे वेई जमतुल्य हुये जो कालकेतु दाम सम सूंन मन रहता था सो सरप की न्यांई डंसता भया ॥१७५॥ टिप्पणी—हे भारद्वाज मुनो जिस से जब बिधाता बाम अर्थात् टेढ़ा होता है तब उस के लिये धूरि मेरु पहाड़ के समान और पिता यम होजाता है और दाम अर्थात् रत्नमाला सर्प सम हो जाती है सो यह तीनों बातें राजा प्रतापभानु पर बीतीं अर्थात् कालकेतु जिस के सौ पुत्र और दश भाई सहायक समेत मारे गये वह अकेला धूर सम रह गया था सो उस ने पहाड़ हो के राजा को दबा दिया और कपटी मुनि को राजा पिता कर बोला वही उस के लिये यम हो गया और ब्राह्मण जो राजा के लिये रत्नमाला थे वही उस के लिये सर्प हो गये । वा दाम रस्सी को भी कहते हैं वह सांप सम हुआ ।

काल पाइ मुनि सुनु सोइ राजा । भये निसाचर सहित समाजा ॥ १ ॥
दससिर ताहि बीसभुजदंडा । रावन नाम बीर बरिवंडा ॥ २ ॥
भूपअनुज अरिमर्दननामा । भएउ सो कुंभकरन बलधामा ॥ ३ ॥
सचिव जो रहा धरमरुचि जासू । भएउ बिमात्र बंधु लघु तासू ॥ ४ ॥
नाम बिभीषन जेहि जग जाना । बिष्णु भक्त बिज्ञाननिधाना ॥ ५ ॥

इन की उतपति भारत मों इस भांति कहीहै बिस्रवामुनि जो पिता है तिस की सेवा निमित्त कुबेर ने

बडीयां चतुर तीन राक्षसियां दीनिघां तिनो ने जब गीतनिरतादिकों कर प्रजापति कों रिझाया तब प्रसन्न ह्वै कें विस्रवा तिन कों संतान देताभया पुसपोतकटा नामनी से रावन अरु कुंभकान उपजे मालनी से विभीषन उपज्या राका सें खरनामा पुत्र अरु सूपनखा नाम्नी सुता उपजी अरु ॥ ५ ॥

रहे जो सुत सेवक नृप केरे । भए निसाचर घोर घनेरे ॥ ६ ॥
कामरूप षल जिनस अनेका । कुटिल भयंकर बिगतबिबेका ॥ ७ ॥

कामरूप कहिये इच्छाचारी अरु प्रेतों पिशाचोंवत जातों के भेदोंकर भयानक जिन के देह अरु रिदें से कुटिल अरु विचार रहित ॥ ७ ॥

कृपारहित हिंसक सब पापी । बरनि न जाइ बिश्वपरतापी ॥ ८ ॥

कृपारहित कहिये सरणागतों पर भी दया न करनी हिंसक कहिये सरबभक्षी पापी कहिये कामादिकों कर पूरण जैसे बहुं सृष्टि कों संताप देते हैं सो कहा नहीं जाता जौं कोऊ कहै रावनादिक विस्रवा के पुत्र थे तिसे कूर क्यौं भये तिस पर कहते हैं ॥ ८ ॥

दोहा—उपजे जदपि पुलस्त्यकुल, पावन अमल अनूप ।
तदपि महीसुरश्रापबस, भए सकल अघरूप ॥ १७६ ॥

कीन्ह बिबिध तप तीनो भाई । परम उग्र नहिं बरनि सो जाइ ॥ १ ॥
गये निकट तप देषिबिधाता । मांगहु बर प्रसन्न मैं ताता ॥ २ ॥
करि बिनती पद गहि दससीसा । बोलेउ बचन सुनहु जगदीसा ॥ ३ ॥
हम काहू के मरहिं न मारे । बानर मनुज जात दुइ बारे ॥ ४ ॥

बिनै कर के रावन ने ब्रह्माजी कों कहा हम किसू से मारे ना मरहिं तब विरंचि ने कहा अमर तो कोऊ नहीं है तूं जिन के नाम कहेगा तिन से ना मरणे का बर तुझे देवोंगा तब संख्या करतिआं भावी बस ते उस नें नर बानर भूल गये तदनंतर ॥ ४ ॥

एवमस्तु तुम्ह बड तप कीन्हा । मैं ब्रह्मा मिलि तेहिबर दीन्हा ॥ ५ ॥

शिवजी उमाप्रति कहतेहैं ब्रह्माजी ने अरु मैंने मिलकर तिनकों बर दीना जो जैसे तुम ने कहा है तैसेहीं होयगा ॥ ५ ॥

पुनि प्रभु कुंभकरन पहिगएऊ । तेहि बिलोकि मन बिसमय भएऊ ॥ ६ ॥

घटकान कों देख कर बिस्मय इस हेतु भए उस का देह अरु उदर अतिदीरघ था ताते बिचार कीन्हा ॥ ६ ॥

जौं एह षल नितकरब अहारू । होइहि सब उजार संसारू ॥ ७ ॥
सारद प्रेरि तासु मति फेरी । मांगेसि नींद मास षट केरी ॥ ८ ॥

कुंभकान के मन मों थी षटमास जागना अरु एक दिन सोवना मैं मागोंगा ताते ब्रह्माजी ने सरस्वती कों प्रेरकर तिस की मति अरु बानी फिराय दीनी तिस ने षटमास सोवना एक दिन जागना मंग्या ॥ ८ ॥

दोहा—गये बिभीषन पास पुनि, कहेउ पुत्र बर मांग ।
तेहि मांगेउ भगवंतपद, कमल अमल अनुराग ॥ १७७ ॥

बिभीषन को पुत्र कथन का भाव यह गुनवानों पुत्रों विषे पिता का प्रेम अधिक होता है किंवा पू कहिये नरक त्र कहिये रक्षा अर्थ यह नरक निवारण जोग भगवंत की प्रीति है तिस कों मांगा जो पूत पाठ होवै तो पवित्र का वाचक प्रसिद्ध है तब तिस ने भगवंत के चरणारविंदों का निरमल प्रेम मांग्या जाते भगवंत पद तीनों का वाचिक है ताते तीनों ईश्वरों की अभेद भक्ति मांगी जो भगवंत पद विष्णु जी मोहीं लगावो तो भी बणता है जाते विष्णुजी शिव हर के गुर हैं ॥ १७७ ॥

तिन्हहि देइ बर ब्रह्म सिधाए । हरषित ते अपने गृह आए ॥ १ ॥
मयतनया मंदोदरिनामा । परम सुंदरी नारिललामा ॥ २ ॥

मय दानव की बेटी थी इस का स्रेष्ठ अरु नाम मंदोदरी ताते भी सुंदर अरु केवल उदर ही स्रेष्ठ नहीं परम सुंदरी कहिये सरबांग सुंदरी है अरु केवल सुंदरी ही नहीं नारियों विष ललामा कहिये रतन है गुणों विषे अरु पंचकन्या जो हैं तिन विष भी इस की संख्या है ताते भी ललाम है । अहिल्या द्रोपदी तारा कुंता मंदोदरी तथा । पंचकन्या स्मरेत्नित्यं महापातकनाशनं ॥ २ ॥

सोइ मयदीन्हि रावनहिं आनी । होइहि जातुधानपति रानी ॥३॥
हरषित भएउ नारि भलि पाई । पुनि दोउ बंधु बिआहसि जाई ॥४॥

पूर्वोक्त गुणोंसंयुत जो स्रेष्ठनारी है तिस कों पायकर प्रसन्नहुआ तब दोनोंभ्रातों का भी बडे स्थानों मैं बिवाह किया अब लंका की रचना अरु बीतीत वृत्तांतसुन कर रावन का तिसपर धावनादिक कहते हैं ॥४॥

गिरित्रिकूट एक सिंधु मझारी । बिधि निर्मित दुर्गम अति भारी ॥५॥
सोइ मय दानव बहुरि संवारा । कनकरचित मनिभवन अपारा ॥६॥
भोगावति जस अहिकुलबासा । अमरावति जस सक्र निवासा ॥७॥
तिन्ह तें अधिक रम्यअति बंका । जगबिख्यात नाम तेहि लंका ॥८॥

दोहा—खाईं सिंधु गंभीर अति, चारिहुं दिसि फिरि आव ।
कनककोट मनिखचित दृढ़, बरनि न जाइ बनाव ॥

यह प्रथम दोहा आख्येपक सा प्रतीत होता है ।

हरिप्रेरित जेहि कलप जो, जातुधानपति होइ ।
सूर प्रतापी अतुल बल, दलसमेत बस सोइ ॥ १७८ ॥

भगवंत की इच्छाकर जिस कलप बिषे राख्यसों का पति रावन होता है सो बडा सूर प्रतापी दल समेत लंका मोहीं निवास करता है ॥ १७८ ॥

रहे तहां निसचर भट भारे। ते सब सुरन्ह समर संघारे ॥ १ ॥
अब तहं रहहिं सक्र के प्रेरे। रक्छक कोटि जक्छपति केरे ॥ २ ॥
दसमुष कतहुं षबर असि पाई। सेन साजि गढ घेरेसि जाई ॥ ३ ॥

रावन ने यह खबर सुनी लंका गढ मों प्रथम निशाचर बसते थे सो देवत्यों ने मार दिये अरु त्रास कर अपना ठाणा न डारेआ कुबेर कों अपना हितू अरु निशाचरों का संबंधी जान कर उस की सेना तहां निवसाई है सो प्रथम पख्य कर लंका हमारी अरु अमरों की जान कर भी लैनी अरु कुबेर का विशेष अपमान करना है ताते सेना साज कर गढ कों घेर लिआ ॥ ३ ॥

देषि बिकट भट बडि कटकाई। जक्छ जीव लै गये पराई ॥ ४ ॥
फिरि सब नगर दसानन देषा। गएउ सोच सुषभएउ बिसेषा ॥ ५ ॥
सुंदर सहज अगम अनुमानी। कीन्हि तहां रावन रजधानी ॥ ६ ॥

सहज अगम कहिए परवत के मारग कठिन तिसपर गढ की रचना दुरगम सिंधु की अगमतादिक समुझ कै तहां रावन ने राजधानी करी ॥ ६ ॥

जेहि जस जोग बांटि गृह दीन्हे। सुषी सकलरजनीचर कीन्हे ॥ ७ ॥
एक बार कुबेर पर धावा। पुष्पकजान जीति लै आवा ॥ ८ ॥

दोहा—कौतुकहीं कैलास पुनि, लीन्हेसि जाइ उठाइ।
मनहुं तौलि निज बाहुबल, चला बहुत सुष पाइ ॥ १७९ ॥

अब रावन की संपदा अरु भायों पुत्रां के पराक्रम सब कहते हैं।

सुष संपति सुत सेन सहाई। जय प्रताप बल बुद्धि बडाई ॥ १ ॥
नित नूतन सब बाढत जाई। जिमि प्रतिलाभ लोभ अधिकाई ॥ २ ॥

सुख संपदादिक दस भांति को जो रावन की समृद्ध है सो दिन प्रति ऐसे बधती है जैसे धन के लाभ भये लोभ बधता है ॥ २ ॥ टिप्पणी—बधती = बढ़ती। बधता = बढ़ता।

अतिबल कुंभकरन अस भ्राता। जेहि कहुँ नहि प्रतिभट जग जाता ॥ ३ ॥

जिस के सन्मुख होणे योग्य सूर कोऊ जगत विषे जन्म्या नहीं है ऐसा अतिबली घटकान भ्राता है ॥ ३ ॥

करै पान सोवै षटमासा। जागत होइ तिहुँ पुर त्रासा ॥ ४ ॥
जौ प्रतिदिन अहार कर सोई। बिस्व बेगि सब चौपट होई ॥ ५ ॥

समरधीर नहिँ जाइ बषाना । तेहि सम अमित वीर बलवाना ॥ ६ ॥

समर बिषे बड़ा सूर अरु उस जैसे सूर और भी अनेक तत्व यह तन मों अरु अहार मों वह अद्वितीय अरु जोधे उस जैसे और भी तिनों मों ॥ ६ ॥

बारिदनाद जेठसुत तासू । भट महुं प्रथम लीक जग जासू ॥ ७ ॥
जेहि न होइ रन सनमुष कोई । सुरपुर नितहिं परावन होई ॥ ८ ॥

जिस के भय कर इंद्रपुरी सा सदा भाजड़ही रहती है अरु सकल सुरों का शिरोमनि है ऐसा मेघनाद जिस का बड पुत्र है ॥ ८ ॥ टिप्पणी—बारिद नाद । बारिद = घटा । नाद = शब्द । मेघनाद ।

दोहा—कुमुष अकंपन कुलिसरद, धूमकेतु अतिकाय ।
एक एक जग जीति सक, ऐसे सुभटनिकाय ॥ १८० ॥

कामरूप जानहिँ सब माया । सपनेहुं जिन्ह के धरम न दाया ॥ १ ॥

कामरूप कहिए इच्छाचारी ॥ १ ॥

दसमुष बैठ सभा एक बारा । देषि अमित आपन परिवारा ॥ २ ॥
सुतसमूह जन परिजन नाती । गनै को पार निसाचरजाती ॥ ३ ॥
सेन बिलोकि सहज अभिमानी । बोला बचन क्रोधमदसानी ॥ ४ ॥
सुनहु सकल रजनीचरजूथा । हमरे बैरी बिबुधबरूथा ॥ ५ ॥

हे रजनीचरों देवता हमारे शत्रु हैं समुचे पद दिआ राजमद कर किंवा सभों सुभटों के सनमान निमित्त यह सुन कर कदाचित निशाचरों के मन मों आवै सुरों की अरु हमारी कुल एक है तिस हेतु कहा तुम रजनीचर हो वह दिवाचर हैं ताता विरोधी भये पुनः वह सातक अंग कर यज्ञादिकों के करता तुम तमोगुण कर तिन के संहरता ताते भी शत्रुही भये जौं वह कहै शत्रु हैं तो आज्ञा करो हम संग्राम करैंगे तिस पर कहता है ॥ ५ ॥ टिप्पणी—सातक = सात्विक ।

ते सनमुष नहिं करहिँ लराई । देषि सबल रिपु जाहिं पराई ॥ ६ ॥

जौं वह कहै हे महाराज आप विचार कर कोऊ और उपाय बतावो तिस पर कहता है ॥ ६ ॥

तिनको मरन एक बिधि होई । कहौं बुझाइ सुनहु अब सोई ॥ ७ ॥
द्विजभोजन मष होम सराधा । सभ कै जाइ करहु तुम बाधा ॥ ८ ॥

दोहा—छुधाछीन बलहीन सुर, सहजेहिँ मिलिहहिं आइ ।
तब मारिहौं कि छाड़िहौं, भली भाँति अपनाइ ॥ १८१ ॥

छुधा कर निर्बलहुए देवता आप से हीं आय मिलैंगे तब उन को मार डारोंगा अरु जौं उन कों भली भांति जाचोंगा जो मेरे दास हुए हैं तब छोड देवोंगा ॥ १८१ ॥

मेघनाद को तब हंकरावा । दीन सीष बलु बयर बढावा ॥ १ ॥

हकरावा कहिये बुलावा जुद्ध की सिख्या दई अरु सेना दई अरु उस के रिदेमों सुरों सों बैर दृढ कराया अरु यह अज्ञां दीनी साधारण देवत्यों के बस करणे निमित्त तौ सेना कों आज्ञा दीनी सो गये हैं अरु ॥ १ ॥

जे सुर समरधीर बलवाना । जिन कौं लरिबे कर अभिमाना ॥ २ ॥
तिनहिं जीति रन आनेसु बांधी । उठि सुत पितुअनुसासन कांधी ॥ ३ ॥

उठ खडा भया पुत्र पिता की आज्ञा कंधे पर धर कर कहिये शिर पर धर कर ॥ ३ ॥

एहि बिधि सबही आज्ञा दीन्ही । आपुन चलेउ गदा कर लीन्ही ॥ ४ ॥
चलत दसानन डोलत धरनी । गर्जत गर्भ श्रवहिं सुररवनी ॥ ५ ॥

रावन के चलतिआं प्रिथवी कांपती है अरु गरजतिआं देवांगना के गरभ स्रव जाते हैं ॥ ५ ॥

रावन आवत सुनेउ सकोहा । देवन्ह तकेउ मेरुगिरिषोहा ॥ ६ ॥

खोहा कहिये गुफा इतर सुगम ॥ ६ ॥

दिगपालन्ह के लोक सोहाए । सूने सकल दसानन पाए ॥ ७ ॥
पुनि पुनि सिंघनाद करि भारी । देइ देवतन्ह गारि प्रचारी ॥ ८ ॥
रनमदमत्त फिरइ जग धावा । प्रतिभट षोजत कतहुं न पावा ॥ ९ ॥

प्रतभट कहिये द्वन्द जुद्ध करता सो खोज रहा है कोऊ कहूं नहीं मिलता ॥ ९ ॥

रबि ससि पवन बरुन धनुधारी । अग्नि कालजमसब अधिकारी ॥१०॥
किन्नर सिद्ध मनुज सुर नागा । हठि सबही के पंथहि लागा ॥ ११ ॥

अधिकारी कहिये जिन कों लोकपालु पदवी का अधिकार है अरु किन्नरादिक जो लघु हैं हठ कर सभों के पीछे पडा जो मेरे हुकुम से बाहर कोई ना रहे ताते ॥ ११ ॥

ब्रह्मसृष्टि जहं लगि तनुधारी । दसमुषबसबर्ती नर नारी ॥ १२ ॥
आयसु करहिँ सकल भयभीता । नवहिं आइ नितचरन बिनीता ॥१३॥

सभ लोक भय भीत हूै कर रावण को आज्ञा प्रमान करते हैं अरु चरणों पर शीश धरते हैं ॥ १३ ॥

दोहा—भुजबल बिस्वसुबस करि, राषसि कोउ न सुतंत्र ।
मंडलीक मिल रावनहि, राज करै निज मंत्र ॥

अपनी भुजा के बलकर सभों कों बस किआ अरु सुतंत्र कोऊ नहीं रहणे दिआ अरु मंडलेश्वर नृप रावन कों मिलकर उस का मंत्र लैकर अपने अपने राज करते हैं यह प्रथम दोहा भी प्राक्ष्येपक भासता है।

देव जच्छ गंधर्ब नर , किन्नर नाग कुमारि ।

जीति बरी निजबाहुबल, बहु सुंदर बर नारि ॥ १८२ ॥

इंद्रजीत सन जो कछु कहेऊ। सो सब जनु पहिले करि रहेऊ ॥ १ ॥

इंद्रजीत ने पिता की आज्ञा के कारज मानो पहिलेही कर छोड़े थे इस सो उस की पितृभक्ति अरु पराक्रम सूच्या ॥ १ ॥

प्रथमहिं जिन कहुं आयसु दीन्हा। तिन्ह कर चरित सुनहु जो कीन्हा ॥२॥

इंद्रजीतने प्रथम जिनों दुष्टों कों आज्ञाकरी थी तिनो नें जिस प्रकार धरमभ्रष्ट किया सो कहते हैं॥२॥

देषत भीम रूप सब पापी। निसिचरनिकर देव परितापी ॥ ३ ॥

तिनों पापियों के रूप भो महाभयानक अरु वह सभी राक्षस सुरों के अतिविरोधी तातें ॥ ३ ॥

करहिं उपद्रव असुरनिकाया। नाना रूप करहिं धरि माया ॥ ४ ॥

जेहि बिधि होइ धर्म निर्मूला। सो सभ करहिं बेदप्रतिकूला ॥ ५ ॥

निकाया कहिये संबूह नाना रूप करने इस भांति जैसे इल्व वो वतापी दुष्ट थे एक रिष बनता था निमंत्रन करणेवाला अरु येक भोजन बनता था जब रिष भुंचते थे तब मुनहुं के उदर फाडकर निकस आवता था तिनहुं को अगस्त्यजी ने भस्म किआ था ऐसिआं बेद सें प्रतिकूल अरु धरम के उखाडनेहारिआं माया अनेक करते हैं ॥ ३ ॥ टिप्पणी—मुनहु = मुनिहूं। उदर = पेट।

जेहिजेहि देस धेनु द्विज पावहिं। नगर गाउं पुर आगि लगावहिं ॥ ६ ॥

सुभ आचरन कतहुं नहि होई। बेद बिप्र गुरु मान न कोई ॥ ७ ॥

नहिं हरिभगति जग्य तप दाना। सपनेहुं सुनिय न बेद पुराना ॥ ८ ॥

छंद—जप जोग बिरागा तप मषभागा श्रवन सुनै दससीसा।

आपुन उठि धावै रहै न पावै धरि सब घालै षीसा ॥

जप जज्ञादिक सुनकर रावन शीघ्रहीं उठि दौरता है सुनकर रहि नहीं सकता गहिकर मुनों कों खीश घालै कहिये मार डारता है अरु जज्ञो किआं सामा भ्रष्ट कर देता है ॥

अस भ्रष्ट अचारा भा संसारा धर्म सुनिअ नहि काना।

तेहि बहु बिधि त्रासै देस निकासै जो कह बेदपुराना ॥

बेदपुराणकहणा पठन के अधर्मी है वा जो कोऊ अज्ञाजुत बेदशास्त्र का नाम भी लेवै तिस कों मार डारना ॥

सोरठा—बरनि न जाइ अनीति, घोर निसाचर जो करहिं।

हिंसा पर अति प्रीति, ताके पापहि कवनि मिति ॥ १८३ ॥

इस प्रसंग का शेष अरु नीति कहते हैं ॥ १८३ ॥

बाढे खल बहु चोर जुआरा। जे लंपट परधन परदारा ॥ १ ॥
मानहिं मातु पिता नहिं देवा। साधुन्ह सन करवावहिं सेवा ॥ २ ॥
जिन्ह के यह आचरन भवानी। ते जानेहु निसिचर सम प्रानी ॥ ३ ॥
अतिसय देषि धर्म की हानी। परम सभीत धरा अकुलानी ॥ ४ ॥

धरम कीं अतिहान यह जज्ञादिक क्रया निबृत्त भई द्वितिय दिन प्रति हांन होने लागो तृतीय जो स्रेष्ट पुरुष थे सो भी राज भै से धरम ना करैं चतुर्थ यह जो हव्य भुक देवता थे सो अपने लोकहुं कों ही त्याग गये तब व्याकुल ह्वै कै धरा बोली ॥ ४ ॥

गिरि सरि सिंधु भार नहिं मोही। जस मोहि गरुअ एक परद्रोही ॥ ५ ॥
सकल सुधरम देष बिपरीता। कहि न सकै रावन भयभीता ॥ ६ ॥

सकललोक देखते हैं मरजादा नष्ट भया है परंतु रावन के त्रासकर पृथवी साथ ऊचे कोऊ बात नहीं कर सकता तब ॥ ६ ॥

धेनुरूप धरि हृदय बिचारी। गई तहां जहं सुरमुनि झारी ॥ ७ ॥

बिचारी कहिये अनाथ जो बसुंधरा है अथवा रिदै मो बिचार किया जो कोऊ रिष मुनि मुझ सों संभाषण भी नहीं कर सकता ताते त्रास कर अपना रूप छिपाय कै गऊ का बपु बनाइ कै तहां गई जहां मेरु कि कंदरा आदिकों मों सुर मुनि छिप कै रहते हैं ॥ ७ ॥

निज संताप सुनाएसि रोई। काहू तें कछु काज न होई ॥ ८ ॥

छंद—सुर मुनि गंधर्बा मिलि करि सर्बा गे बिरंचि के लोका।
संग गोतनुधारी भूमि बिचारी परम बिकल भय सोका ॥
ब्रह्मा सब जाना मन अनुमाना मोर कछू न बसाई।
जाकर तैं दासी सो अबिनासी हमरो तोर सहाई ॥

टिप्पणी—सुर देवता मुनि ऋषि अर्थात् देवता मुनि गंधर्ब सब मिल के ब्रह्मा के लोक को गये और उन के संग गाय का स्वरूप धारण किये धरती बेचारी शोक भय से बिकल गई भय रावण का और शोक पाप के भार का ब्रह्मा ने सब जान के बिचार किया की हमारा कुछ बश्य नहीं पृथ्वी से कहा कि जिस की तैं दासी है सो अबिनाशी हमारी और तेरी सहाय करेंगे हमारी सहाय यह कि हमारे बरदान के अनुसार मनुष्य होके रावण का बध करेंगे और उसी बध से तेरी भी सहाय है और अबिनाशी इस लिये कहा कि जितने नाशवान हैं वे रावण के निकट न खड़े होंगे ।

सोरठा—धरनि धरहु मन धीर, कह बिरंचि हरिपद सुमिर।
जानत जन की पीर, प्रभु भंजिहि दारुन बिपति ॥ १८४॥

हे बसुधा धीरज किए खेद निवृत्त होता है सो तू भी समा लख कर धैरज कर अरु अपनी सहायता हेतु प्रभु का ध्यान धरो जौं तू कहै एता चिर भया प्रभु मेरे सहाय न हुये तौ तेरी दारुण बिपता है जाते रावणादिका नें बडे तप करे हैं तिनो ने भी फल भोगने हैं परंतु प्रभु दासों के दुखों को जानते हैं ताते सब कष्ट निवारेंगे ॥ १८४ ॥

बैठे सुर सब करहिं बिचारा। कहं पाइअ प्रभु करिय पुकारा ॥ १ ॥
पुर बैकुंठ जान कह कोई। कोउ कहै पयनिधि प्रभु सोई ॥ २ ॥

सोई प्रभु कहिये पूर्वोक्त विपत्ति भंजन प्रभु किंवा सोई कहिये सोया हुआ है ॥ २ ॥

तेहि समाज गिरिजा मैं रहेऊं। अवसर पाय बचन एक कहेऊं ॥ ३ ॥

प्रथम जो देवता सभ अपनी अपनी मति अनुसार इस्थान कहने लागे थे जब उन का मौन भया तब मैंने अवसर पाया। ननु। जब शिव जी बीचही बोला चाहते तब और किस की शक्ति थी जो बोलता रहता। उत्तर। प्रथम महेश्वर इस निमित्त मौन कर रहे थे जौं इन के बचनो मेंही बात निश्चै होइ जाइ तौ हम ने काहे को बोलना है परंतु जब समुझिया इन कों स्वरूप का निश्चै नहीं भया तब जान्या हमारे बैठे इन कों भगवंत के स्वरूप मैं संसै रहना जोग्य नहीं ताते बोले ॥ ३ ॥

जाके हृदय भगति जसप्रीती। प्रभु तहं प्रगट सदा यह रीती ॥ ४ ॥

जिस भक्त के रिदै मों जैसी प्रीति अरु जहां प्रतीत होती होए तिस का तिसी भांति प्रभु तहांही प्रगट होते हैं यह सदा भगवंत का बिरद है इस पर प्रमान सतजुग मों प्रहलाद आदिकों के कलि मों नामदेव आदिकों के इसी को बिस्तार कर कहते हैं ॥ ४ ॥

हरि व्यापक सर्बत्र समाना। प्रेम ति प्रगट होइ मैं जाना ॥ ५ ॥

प्रेमति इस पद का तकार छंद पूरण हेतु लघु है ॥ ५ ॥

देसकाल दिसि बिदिसिहु माहीं। कहहुं सो कहां जहां प्रभु नाहीं ॥ ६ ॥
अगजगमय सब रहित बिरागी। प्रेम तें प्रभु प्रगटै जिमि आगी ॥ ७ ॥

प्रभु अस्थावर जंगम मय हैं कहिये सरब शृष्टि तिन का रूप है अरु सभों मे रहित कहिये जिनों बिषे जगत का अत्यंताभाव है अरु विगत राग हैं अर्थ यह किसु पदारथ मों सनेह नहीं ऐसे प्रभु प्रेम किए इस भांति प्रतक्ष्य बपु धार कर दरसन देते हैं जैसे जतन करे से अनल प्रगट हूं आवता है ॥ ७ ॥

मोर बचन सब के मनमाना। साधु साधु करि ब्रह्म बषाना ॥ ८ ॥

बचन मेरा सभों कों प्यारा लगा अरु ब्रह्मा जी ने कहा धन्य हो धन्य हो इस कथन का भाव यह ब्रह्मा जी जैसा मरमवेत्ता तहां औरों को न था ॥८॥ टिप्पणी—सो मेरे बचन को सब ने माना और ब्रह्मा

ने साधु साधु अर्थात् सत्य सत्य कह के बखाना इस रामायण में चार कल्प के रामवतार का प्रसंग कहा है सो जिन्हों ने यह कहा कि प्रभु बैकुंठ में हैं उन्हों ने उन दो कल्पों के अवतार कहे जिन में जलन्धर रावण और जय विजय रावण के बध के लिये बैकुण्ठ से हुए थे और जिन देवताओं ने यह कहा कि वह प्रभु क्षीर समुद्र में हैं उन्हों ने उस अवतार को कहा जो नारद के शाप रुद्र गण से रावण हुए और उन के लिये क्षीर समुद्र से अवतार हुआ अब रहा चौथे कल्प का अवतार जिस में भगवान ने स्वयंभू शतरूपा को बरदान दिया कि हम तुम्हारे पुत्र होंगे और प्रतापभानु रावण हुआ है उसी को शंकर महाराज कहते हैं कि वह सर्वत्र समान व्यापक है ॥

दोहा—सुनि बिरंचि मन हरष तन, पुलकि नयन बह नीर।
अस्तुति करत सुजोरि कर, सावधान मतिधीर ॥ १८५ ॥

शंकरजी ने जो कहा है प्रभु प्रेम कर प्रगट होते हैं यह सुन कर मतिधीर जो ब्रह्माजी हैं सो प्रसन्न भए अरु चित्तवृत्ति कों सावधान कहिये भगवंतपरायण कर के रोमांच अरु अस्रुपात अरु गदगद बानी कर करजोरन पूरबक अस्तुत करणेलागे। ननु। संकट तो सकल सुरों कों धरा के सहित हीं था स्तोत्र एक ब्रह्माजी ही करणेलागे इस का भाव क्या है। उत्तर। ब्रह्माजी सभों से बडे हैं ताते स्तुत इन को ही करणो योग्य थी किंबा ब्रह्माजी ने सकल अमरों का अपने समीप आवने में अभिप्राय समुझेया जो रावनादिकों कों बर तुम ने हीं दिए हैं अब भगवंत के आगे प्रार्थना भी तुमहीं करो अरु करजोडने कर मन की नम्रता विशेष होती है अरु एकाग्रता भी होती है किंबा भगवंत की प्रसन्नता निमित्त यह विशेष साधन है। अंजुली परमा मुद्राख्यप्रदेवप्रसादनी। हाथजोडन जो है सो देव कों प्रसन्न करणे मों स्रेष्ट साधन है किंबा जो प्रभु पूछें तुमने मेरे ही आगे प्रार्थना करनी थी तो उस के अमर होने के बर क्यों दिए थे ताते द्वै हाथ जोडने से यह सूचेया है महाराज जद्यपि उस को प्रतीतिनिमित्त अमर होने के बर दिए हैं तथापि उस के काल निमित्त द्वै स्थान राख लिए हैं एक मनुष्य देह अरु एक बलीमुख तन किंबा द्वै हाथजोडने से यह लखाया है भगवंत रावण को बर हम ने दिए हैं अरु सुरों निमित्त प्रार्थना करन भी हमहीं आए हैं आपने भी दोनों बातां सुधारनिआं अब स्तोत्र कहते हैं ॥ १८५ ॥

छंद—जय जय सुरनायक जनसुषदायक प्रनतपाल भगवंता।
गोद्विजहितकारी जय असुरारी सिंधुसुताप्रियकंता ॥

हे भगवंत तुमारा जै होइ जै जै पद की पुनुरुक्ति अस्तुत मो है तुम सुरों के नायक हो भाव यह सुरों को संकट बना है सहाय होवो अरु जन सुखदायक हो तत्व यह केवल देवता ही दुखो नहीं हुए रिषिमुनि जो तुमारे दास हैं तिन कों भी महाकष्ट है तिन की सहायता करो जौं कहो मुझ कों क्या प्रयोजन है संग्राम करो तौ सरनपाल हो अर्थ यह हम सरणागत हैं अरु तुम धेनहुं द्विजों को रख्यक हो भाव यह राख्यस इन कों मारते हैं अरु तुम असुरारि हो दुष्टों का मारणा तुमारा सदा का सुभाव है अरु सिंधुसुता रंभा तिस का कंत कहिये पति जो इंद्र है तिस के तुम प्यारे कहिये भ्रात हो भाव यह अब इंद्र को अतिसंकट है किंबा सिंधुसुता जो लख्यमी है तिन को तुम अतिप्यारे हो अरु कंत हो

भाव यह लख्यमी का पिता जो सिंधु है सो भी उस में अतिदुखी है तिस की रख्या निमित्त औतार धार्यो।

पालन सुर धरनी अद्भुतकरनी मरम न जानै कोई।
जो सहज कृपाला दीनदयाला करहु अनुग्रह सोई॥

सुरों कों अरु धरा कों पालन निमित्त तुम अद्भुत करनिआं करते हो कहिये मत्सकूर्मादिक अवतार धारते हो परंतु इस मरम कों कोऊ नहीं जानता जो जिस का एक किंकर काल कोटों ब्रह्मांडों को भख्यन करै तिस ने आप बाराहादिक रूप किउं धारणे जो सहज कृपाल हो अर्थ यहु कृपा करनी तुमारा स्वभावक बिरद है जो प्रभु कहैं सी सभों पर कृपा करोंगा तिस पर कहते हैं तुम दीनदयाल हो अरु हम दीन हैं ताते कृपा करो।

जय जय अबिनासी सबघटबासी व्यापक परमानंदा।
अबिगत गोतीतं चरित पुनीतं मायारहित मुकुंदा॥

जै होए तुमारी तुम निवास ते रहित हो अरु सरबघट कहिए सरबपुर यष्टकां तिन में निवास करता हो तत्व यह अंतरजामी हो अरु व्यापक हो अर्थ यह पूरण हो अरु परमानंद स्वरूप हो अविगत कहिये ज्ञानरूप हो अरु गो जो इंद्रीगण हैं तिन से अतीत हो अरु तुमारे सगुण चरित्र भी अतिपवित्र हैं माया ते परे हो अरु मुक्तिदाता हो।

जेहि लागि बिरागी अतिअनुरागी बिगतमोह मुनिबृंदा।
निसिबासर ध्यावहिं गुनगन गावहिं जयति सच्चिदानंदा॥

जो बिगतमोह कहिए अविद्या रहित अरु राग रहित मुनीश्वरों के पुंज हैं सो जिस तुमारे स्वरूप की प्राप्ती निमित्त अति प्रेमी हूंकै दिनराति ध्यावते हैं अरु गुणो के संमूहों कों गावते हैं तिस सच्चिदानंद का जै होवे।

जेहि सृष्टि उपाई त्रिबिध बनाई संग सहाय न दूजा।
सो करहु अघारी चिंत हमारी जानिय भगति न पूजा॥

जिस ने तमरज सतगुनी सृष्टि उपाई है अरु दुती सहायक ना किआ। ननु। पंचभूतहुं का जगत किआ है तुम कैसे कहते हौ सहायक नहीं। उत्तर। जौं भूतहुं सों सृष्टि की उतपति मानोगे तब भूत किस सें उपजे कहोगे भूतों की उत्तपति हंकार से हंकार किस से उपज्या महततु सों महतत्त कासों प्रकृति सों प्रकृत किस सों प्रकृत अनादि है जौं प्रकृति अनादि मानौगे तौ कलपत कैसे होवैगी अरु आत्मा अद्वितीय कैसे होवेगा अरु श्रुति कहती है एक मेवा द्वितीय ब्रह्म ताते उस के संग उपादान निमित्त कोऊ नहीं बणता। सो पापों का अरि हरि हमारी चिंत कहिए सहायता करो कदाचित प्रभु कहैं जैसी तुम भक्ति करोगे तैसी मैं रख्या करोंगा तिस पर निम्रताकर कहते हैं हम तो पूजा भक्ति किछु नहीं जानते तुम दीनदयाल हो ताते कृपा करो।

जो भवभयभंजन मुनिमनरंजन गंजन बिपतिबरूथा ।
मन बच क्रम जामी छाडि सयानी सरन सकल सुरजूथा ॥

जों संसाररूपी त्रास का नासक है अरु संतहुं के मनहुं का प्रकाशक है अरु भक्तों किआं बिपदा कों हरणहारा है तिस कों ऐसा जान के अरु सकल चतुरायां त्यग के मनवचक्रमकर हम सभ तिस को सरण हों। टिप्पणी—जानी के स्थान बानी पाठ। जो आप ने सृष्टि के उपाय हेतु तीन बिधि बनाई अर्थात् रजोगुन सतोगुन तमोगुन ब्रह्मा, विष्णु, महेश और आप के संग में दूसरा सहायक नहीं था जिस मे हम अपना दुःख कहैं सो देवापनाशक अर्थात् असुरों के नष्ट करनेवाले हमारो चिन्ता हरो हम न तो भक्ति जानते हैं न पूजा जानते हैं केवल आप के बनाये हुए हैं जो संसार के भय को सदा तोड़ते और मनुष्य के मन को सुख देते और बिपत्ति समूह को नाश करते आये हैं उन की शरण में संपूर्ण देवता मन कर्म बचन से सयानी बानि छोड़ के प्राप्त हैं ।

सादर श्रुति सेषा ऋषय असेषा जाकहुं कोइ न जाना ।

शारदा सुतां शेषादिक अनेक रिषि जिस के स्वरुप कों नहीं जान सके जो प्रभु कहैं जिन कों मेरे रूप का ज्ञानही नहीं तिन की सहायता मै मे किस निमित्त करनी है तिस पर कहते हैं ।

जेहि दीन पिआरे बेद पुकारे द्रवो सो श्रीभगवाना ॥

जद्यपि ज्ञान रहित होहिं परंतु जो दीन हूंके सरण आवै सो जिस को प्यारे लागते हैं इस बात कों वेद कहते हैं ऐसा प्रभु हम को दीन सरनागत जान कै हम पर कृपा करे ।

भवबारिधिमंदर सब बिधि सुंदर गुनमंदिर सुषपुंजा ।
मुनि सिद्ध सकल सुर परम भयातुर नमत नाथ पदकंजा ॥

भव रूपी समुद्र को मंदराचल सम क्ष्योभक हो अर्थ यह संसार मों सरब व्यवहारों के करता हो अथवा संसार सिंधु को मंदराचल सम मथ के जिस ने संत रूपो रतन प्रगटाये हैं भाव यह अब तिनों संतों पर संकट बना है सहाय होवो अरु सकल बिधो मों सुंदर हो तत्व यह जैसा रूप धारकर जैसो कृपा करोगे तुम कों सभ सोभेगो तुम सकल गुणो के मंदिर हो अरु सुखों के संबूह हो हम सुर मुनि सभ परमत्रास पाइ कै हे नाथ हम तुमारे पदारविंदों को प्रणाम करते हैं ।

दोहा—जानि सभय सुर भूमि सुनि, बचन समेत सनेह ।
गगनगिरा गंभीर भइ, हरनि सोक संदेह ॥ १८६ ॥

देवत्यों अरु प्रिथवो कों भैवान जान कै अरु प्रेम सहित तिन की बिनै सुन कै सोकों संस्यहुं की हरती जो नभ भारती गंभीर है सो प्रगटी गंभोरता ध्वनि मों वा अर्थ मों जाने बांछितदाता है ॥ १८६॥

जनि डरपहु मुनि सिद्ध सुरेसा । तुम्हहिं लागि धरिहौं नरबेसा ॥ १ ॥

हे मुनीश्वरों सिधो इंद्रादि को मत भय करो तुमारे सुख निमित्त मैं मानव तन धारोंगा सुनों अरु

सिधों का नाम प्रथम लैना तिन कों सदा के जीतेंहै जानके तिन के सनमान हेतु जों तिन के मन में आवै प्रभु एकले हीं प्रिथवी मंडल पर विचरैंगे तिस निमित्त कहते हैं ॥ १ ॥

अंसन्ह सहित मनुजअवतारा । लेहौं दिनकरबंस उदारा ॥ २ ॥

संकरषण शंखचक्रादिक जो मेरे अंश भूत पारषद हैं तिनो सहित नरतन रविवंश मों धारेंगा रविवंश को उदार विशेषण बनताही है किंबा इस हेतु दिया जाते आप राजादिकों का त्याग करना है जों सुर कहैं आप के पिता माता बनन जोग्य कवन से पुन्यात्मा प्रगटैंगे तिस पर कहते हैं ॥ २ ॥

कस्यप अदिति महातप कीन्हा । तिन्ह कहुं मैं पूरब बर दीन्हा ॥ ३ ॥
ते दसरथ कौसल्या रूपा । कोसलपुरी प्रगट नरभूपा ॥ ४ ॥
तिन्ह के गृह अवतरिहौं जाई । रघुकुलतिलक सु चारौ भाई ॥ ५ ॥

इहां प्रभों के मुखों कस्यपअदिति का अरु नारद का नाम कहणा भी स्वयंभूमनु के प्रसंग कों आख्येपक सूचता है ॥ ५ ॥ टिप्पणी—महात्मा हरिहर प्रसादजी के मत से क्षेपक नहीं है ।

नारदवचन सत्य सब करिहौं । परम स्वसक्ति समेत अवतरिहौं ॥ ६ ॥

नारद की गिरा सत्य करबे हेतु अपनी परम शक्ति जो माया है तिस सहित अवतार धारेंगा अर्थ यह महामाया सीतारूपहू कर प्रगटेंगी ॥ ६ ॥

हरिहौं सकल भूमिगरुआई । निर्भय होहु देवसमुदाई ॥ ७ ॥

हे प्रिथवी तेरा सभ भार उतारेंगा तत्र यह निशाचरें कों मार कर और जो पापी हैं तिन को भी मारेंगा हे देवत्यों तुम को भी निरभय करेंगा ।

गगन ब्रह्मबानी सुनु काना । तुरत फिरेउ सुर हृदय जुडाना ॥ ८ ॥
तब ब्रह्मा धरनिहि समुझावा । अभय भई भरोस जिय आवा ॥ ९ ॥

तब बिरंचिने धराकों यह समझाया तुमने व्याकुल नहींहोना दशरथ के घरमों असुर्के सर्मे पुत्र उपजेंगे तब निरसंदेह राक्यस नष्टभए जानने यह सुनकर धरती को प्रतीतभई अरु त्रास नास भया ॥ ९ ॥

दोहा—निज लोकन ब्रह्मादि गे, देवन्ह इहै सिखाइ ।
बानरतन धरि धरनि महु, हरिपद सेवहु जाइ ॥ १८७ ॥

तब बिरंचादिकों नें सुरों को भी एही शिख्या दीनी प्रभों नें अवतार धारन की प्रतिज्ञाकरी है तो अस्मदादिक सेवक भी संग चाहीते हैं अरु रावण के मारण मो संकेत भी नरों बानरों का है ताते तुम भी बलीमुख तनु धारकर प्रभों कों ध्यावो जो शीघ्र अवतार धारैं ॥ १८७ ॥ टिप्पणी—शङ्का यह कि सब देवता ब्रह्मा के लोक को गये थे और यहां लिखते हैं कि निज लोकहिं बिरंचि गये उस का समाधान ब्रह्मा के दो लोक हैं एक निज लोक दूसरा सुमेरु पर्वत पर सभा लोक है सो संपूर्ण देवता ब्रह्मा के सभा लोक को गये थे वहां से ब्रह्मा अपने निज लोक को गये और देवता अपने २ स्थान को गये दूसरा अर्थ

यह कि ब्रह्मा ने देवताओं को सिखाया कि तुम बानर का तन धारणकरो जाय और निज लोकहि अर्थात् अपने तई कहा कि मैं भी अवतारलूंगा। ब्रह्मा के अंश से जांबवान का अवतार हुआ है। यहां पार्बती का पहला प्रश्न पूर्ण हुआ जो यह पूंछा था। प्रथम सो कारण कहो बिचारी। निर्गुन ब्रह्म सगुन बपुधारी।

गए देव सब निज निज धामा। भूमि सहित मन कियबिस्रामा॥ १॥
जो कछु आयसु ब्रह्मा दीन्हा। हरषे देव बिलंब न कीन्हा॥ २॥

बिधि की आज्ञा सुनकर सुर प्रसन्न भये अरु कपिदेह धारण मो देर न लगाई सुरों कों कपितन होना सुन कै हरष होवण का भाव यह बडाें को आज्ञां आनंद जुत माननो उचित है किंवा प्रभों की प्रतिज्ञा अनुसार शत्रों का नाश होना सुन कै हरषे अथवा जदपि पशू जोन तो मध्यम है परंतु भगवान का ध्यान धारेंगे अरु श्रीरामचंद्रजो का दरशन करेंगे तिस कर वह देह भी परम पवित्र होवैगी अरु पुन: स्वर्गादिकों कों भी भोगेंगे इस कर हरषे किंवा रावन ने जो किए हैं हमारे अपकार तिन का बदला देव शरीर सों तो हमारे से हो नहीं सकता जो उस को वर है अरु प्लवंगम देह मे रघुनाथजी की सहायता में उस की नारिआं के केश खैंचनादिक क्रयाकर कै अपने मन की तपत बुझावैंगे इस कर हरषे॥ २॥

बनचरदेह धरी छिन माहीं। अतुलित बल प्रताप तिन्ह पाहीं॥३॥
गिरितरुनखआयुध सभ बीरा। हरिमारग चितवहिं मतिधीरा॥ ४॥

सभी सूर बीर द्रुम अद्रि नखादिकों शस्त्रों कों संभार कै प्रभों का पंथ पडे देखते हैं॥ ४॥

गिरि कानन जहँ तहँ भरि पूरी। रहे निज निज अनीक रचि रूरी॥ ५॥

सभों कपिबनों अद्रों मों अपनो अपनी सेना सुंदर रीति सें बनाइ रहे हैं॥ ५॥

यह सब रुचिर चरित मैं भाषा। अबसो सुनहु जो बीचहिं राषा॥ ६॥

प्रिथवो को प्रार्थना अरु प्रभों की प्रतिज्ञा आदिक जो सुंदर प्रसंग है सों कहा अरु कस्यप अदिति आदिकों ने जो दशरथादिक तन धारणे है सो प्रसंग रहा हुआ अब कहता हौं॥ ६॥ टिप्पणी—मुन्शी रोशनलाल ने यों लिखा है। अर्थ यह कि वह कथा जो बीच में रह गई थी सो अब सुनों जिस कल्प में स्वायंभू शतरूपा दशरथ कौशल्या हुए थे।

अवधपुरी रघुकुलमुनिराऊ। बेदबिदित तेहि दसरथ नाऊ॥ ७॥
धर्मधुरंधर गुननिधि ग्यानी। हृदय भक्ति रति सारंगपानी॥ ८॥

टिप्पणी—मुन्शी रोशनलाल ने यों लिखा है। हृदय में सारंगपानि अर्थात् धनुर्धारी रघुनाथ की भक्ति बनी रही जिन का पूर्ब जन्म में तप किया था और उन्हों ने प्रगट हो के बर दिया था।

दोहा—कौसल्यादि नारि प्रिय, सब आचरन पुनीत।
पतिअनुकूल सप्रेम हढ़, हरिपदकमल बिनीत॥ १८८॥

कौशल्यादिक जो तिस राजा कियां रानियां है सो पति देवता हैं अरु आपस मों भी परम प्रेम है अरु भगवत पूजन परायण हैं अरु बिनय आदिक सभ आचरण तिनां के पुनीत हैं ॥१८८॥ टिप्पणी—मुन्शी रोशनलाल ने यों लिखा है । वही हरि पद जिस के लिये स्वायंभू शतरूपा ने तप किया । पुनि हरि हेतु करन तप लागे । इति ।

एक बार भूपति मन माहीं । भै गलानि मोरे सुत नाहीं ॥ १ ॥

एक बार राजा के मन मों चिंता भई जो मेरे गृह मों पुत्र नहीं एक बार का भाव यह पूर्ब जुबा अवस्था मों भोगाकार बृत्त थी अरु सुत उपजन की आसा भी रहती थी अब जरा निकट आई जान कै वह दोनों निवृत भया अरु गलान भई तिस का स्वरूप यह पुत्र सुख में बिना तन धनादिक किस काम हैं॥१॥

गुरुगृह गए तुरत महिपाला । चरन लागि करि बिनय बिसाला ॥ २ ॥

उत्तम लोकों की हरष सोक बिषे तो अपना बृत्तांत गुरों के आगे निवेदन करते हैं ताते नृप भी गुरों ढिग गया अरु पगों लाग के बिने करी महिपाल बिशेषण का भाव यह प्रिथवी का पालन तो नृप निगम रीति सें करता है अरु चित मों पुत्र बिसैनी चिंता है ताते ॥ २ ॥

निज दुष सुष सब गुरुहि सुनाएउ । कहि बसिष्ठ बहुबिधि समुझाएउ ॥३॥

तन धन तरनी आदिक जो राज अंग है तिनों कर तो मैं सुखी हों संतान का न होना यह दुख है यह सुन कर बशिष्टजी ने काल करमादिकों की गति कहिके बहुत भांति समुझाया तत्व यह जिस पाप कर एता चिर संतान न थी उपजी सो पाप निवृत भया है अब ॥ ३ ॥

धरहु धीर होइहहिं सुत चारी । त्रिभुवनबिदित भगतभयहारी ॥ ४ ॥

सृंगीऋषिहिं बसिष्ट बोलावा । पुत्रकाम सुभ जग्य करावा ॥ ५ ॥

रोमपाद नाम भूपति दशरथ का मित्र था अरु तिस ने बरषा करावन हेतु बडा जतन कर के सिंगी रिष कों आन्या था अरु पुत्रेष्टी मों भी सृंगीरिष अतिनिपुन था ताते वसिष्टजी ने तिस कों तहां से बोलाइ कै पुत्रेष्टी करवाई ॥ ५ ॥

भगति सहित मुनि आहुति दीन्हे । प्रगटे अगिनि चरू कर लीन्हे ॥ ६ ॥

चरू कहिये पायस सो हाथ मों लेकर अग्नि प्रगट भया अरु भूप प्रति कहा ॥ ६ ॥

जो बसिष्ट कछु हृदय बिचारा । सकल काजु भा सिद्ध तुम्हारा ॥ ७ ॥

हे भूपति जो रिदे में बिचार कर बशिष्टजी ने मख करवाया है सो पुत्र प्राप्तादिक सभ कारज तुमारे सफल होहिंगे परंतु ॥ ७ ॥

यह हबि बांटि देहु नृप जाई । जथाजोग जेहि भाग बनाई ॥ ८ ॥

जैसे जैसे अधिकार जोग रानियां हैं तैसा तैसा भाग्य बनाइ कै यह द्रव्य तिन को भुंचाय देवो ॥८॥

दोहा—तब अदृश्य पावक भए, सकल सभहिँ समुझाइ ।

परमानंदमगन नृप, हरष न हृदय समाइ ॥ १८९ ॥

यह दोहा भी आक्षेपक भासता है।

तबहिं राय प्रिय नारि बोलाईं। कौसल्यादि तहां चलि आईं ॥१॥
अर्द्धभाग कौसल्यहि दीन्हा। उभय भाग आधे कर कीन्हा ॥२॥
कैकेई कह नृप सो दएऊ। रहेउ सो उभय भाग पुनि भएऊ ॥३॥
कौसल्या कैकेई हाथ धरि। दीन्ह सुमित्रहि मन प्रसन्न करि ॥४॥

कौशल्या अरु कैकेई दोनो पटरानिआं राजा कों बहुत प्यारिआं थीआं ताते तिस हव्य के दोए बिभाग किए प्रथमे अर्द्ध भाग कौशल्याजी को दिआ तदनंतर सुमित्रा आई तब राजा ने विचार किआ जो इस को नं दीजिये तब इस का अपमान होवेगा यह दुचितीकर कै उस अर्द्ध के द्वै भाग किये एक कैकेई कों दै के बिचारिआ द्वितीय सुमित्रा कों देवों तब कैकेई इरषा करैगी ताते तिस के द्वै भागकर कै कौशल्या अरु कैकेई के हाथ परहो धर दिये अरु उन को कहे तुम सुमित्रा को भी कुछ देवो जाते समै सिर आई है तब उनो ने कहा जो तुम ने हम को पोछे दिआ है सो इस कों देवों तब उन की प्रसन्नता पूरबक भूपति ने दोनों के हाथो से उतार दांटा सुमित्रा को दिआ जौ कौशल्या के हांथ सो दिआ था तिस का लख्यमन भया जो कैकेई के हाथ सों दिआ था तिस का शत्रुघ्न भया ॥ ४ ॥

एहि बिधिगर्भसहितसबनारी। भईं हृदय हर्षित सुष भारी ॥ ५ ॥

एहि बिधि कहिये हव्य के भुंचने कर तीनो रानिआं गरभ धारकर प्रसन्न भयां ॥ ५ ॥

जा दिन तें हरि गर्भहि आए। सकल लोक सुष संपति छाए ॥ ६ ॥

अजन्मा प्रभु का गर्भ बिषे आवना सुतों शास्त्रों अनुसार बिरुद्ध है अरु श्रीगुरग्रंथ मों भी कहा है। सो मुख जलौ जितु कहैं ठाकुर जोनी। ताते इस के अर्थ मो ग्रंथकार का अभिप्राय इस भांति लखोता है जैसे। आनि देवाई नारदहि। इत्यादि बहुते पद षष्टी अनुसार कों अथवा का अर्थ मों लगते हैं सप्तमी अनुसार विषे अर्थ सो नहीं लगते तैसे इहां गरभहिं कहिये गरभ जोन कों हरि कहिए हरनेहारे अर्थ यह भक्तों के गरभ संकटहारो जो प्रभु हैं सो जादिन ते आए कहिये अवतार धारणा को इच्छा करी तब की सभलोकों में संपदा छाइ रही। ननु। भगवंत गरभ मों न आए तब माता ने किस भांति जानिआ पुत्र उपजेआ है। उत्तर। जब प्रभों को इच्छा अवतार धारन की होती है तब पवनदेवता उदर मों गरभाधानवत प्रतीत करावता है जब अवतार प्रगटेआ तब माया कर अछादत माता नें जानिआ मेरे घर पुत्र हुआ है अरु पवनदेवता अपने विस्तार कों संकोच लेता है इसी पर प्रमाण गीता। यदा यदाहि धर्मस्य ग्लानिर्भवति भारत। अभ्युथानमधर्मस्य तदात्मानं सृजाम्यहं॥ हे भारत जिस जिस काल विषे अधर्म का उदय होता है अरु धरम से लोग गलान करने लागते हैं तब मैं अपने आप कों सृजता हों कहिये अपना सगुण बपु प्रगट करता हों इस कथन सें प्रभों का गरभ बास न भया जातें अपने तन कों आप प्रगटाया। तथाच पाद्मे। माया

येषांमयासृष्टा यन्मां पस्यसि नारद ॥ सर्वभूतगुणैर्युक्तंनतुमां द्रष्टुमर्हसी । हे नारद सरब भूतों अरु सरब गुणो युक्ति कहिये सरब,का कारण रूप जो मै हों सो लोगों की दृष्टि कर देखणे योग्य नहीं ताते यह जो मेरा मानवतन तूं देखता है सो मैने माया रची है इस कथनकर भी प्रभु अजन्माही भये जो नटवत माया का पट देकर स्वांग किआ तथा च । कृष्णाखण्डे । तस्मवायोष्टमो गर्भो वायो पूरणो वभूवह । तिस देवकी का जो अष्टमा गरभ है सो वायु करहो पूरण होता भया तत्व यह सप्तगरभों मों बालक आये थे अरु प्रभों ने जोनि द्वारा जन्म न था करणा अरु माता आदिकां कों प्रतीति करावनी थी ताते गरभ कों वायु देवता पूरण करता भया अरु आगे ग्रंथकार ने भी प्रगटन समे के प्रसंग मो एही बात कहणी है जो प्रथम माता को चतुर्भुज रूप का दरसन भया अरु माता के कहे शिशु रूप भये ॥ ६ ॥

मंदिर महुं सब राजहिँरानो । सोभासील तेज की षानी ॥ ७ ॥

टिप्पणी—शोभा खानि कौशल्या, शील खानि कैकई, तेज गुण की खानि सुमित्रा ।

सुष जुतककुककालचलिगएऊ । जेहिप्रभुप्रगटसोअवसरभएऊ ॥ ८ ॥

दोहा—जोग लगन ग्रह बार तिथि, सकल भए अनुकूल ।
चर अरु अचर सुहरष जुत, रामजन्म सुषमूल ॥ १९० ॥

नौमी तिथि मधुमास पुनीता । सुक्ल पच्छअभिजितहरिप्रीता ॥ १ ॥

चैत्र महीना नौमी तिथ पुनर्वसु नछ्यत्र सूरज मंगल वृहस्पत शुक्र शनैश्चर यह पंचग्रह ऊंच के कर्क लग्न वृहसपति चंद्रमा लग्न में शुकुल पछ्य अभजित मूहूर्त्त हरि का प्यारा जाते रामचंद्र अवतार सदा इसी मों धारते हैं ॥ १ ॥

मध्य दिवस अतिसीत नघामा । पावनकाल लोकविश्रामा ॥ २ ॥

दिन का मध्यान था किंवा दिन लघु दीरघ नहीं मध्यस्थ है तिस घडी के समीप अरु सीत घाम की अधिकता नहीं जाते बसंत हैं अरु वह काल महापावन है जाते तिसमों प्रभु प्रगटे अरु सरब जगत कों सुख भया सो चराचरां का हर्ष बरनते हैं ॥ २ ॥

सीतल मंद सुरभि बह बाऊ । हर्षितसुर संतन्ह मनचाऊ ॥ ३ ॥

बन कुसुमितगिरिगनमनिआरा । स्रवहिंसकलसरितामृतधारा ॥ ४ ॥

प्रभों के पूजन निमित्त बन सभ प्रफुल्लित भये हैं अरु अद्र रमनीक भए हैं नदियों के जल अमृत अरु सीतल चलते हैं ॥ ४ ॥

सो अवसर बिरंचि जब जाना । चले सकल सुरसाजि बिमाना ॥ ५ ॥

जो चिन्ह पूरब कहे हैं सो देखकर विधने जान्या अब हरि अवतार प्रगटने के लछण भए हैं तब सभ सुरों संजुत दरसन कों आये ॥ ५ ॥

गगन बिमल संकुल सुरजूथा । गावहिं गुन गंधर्बबरूथा ॥ ६ ॥

नभनिरमल अरु सुरों के विमानोकर पूरण होरहा है बरूथ कहिये संबूहगंधर्ब जस गावते हैं ॥ ६ ॥

बरषहिं सुमन सुअंजलि साजी। गहगहि गगन दुंदुभी बाजी॥ ७॥
अस्तुति करहिं नाग मुनि देवा। बहुबिधिलावहिंनिजनिजसेवा॥ ८॥

दोहा—सुरसमूह बिनती करी, पहुंचे निज निज धाम।
जगनिवास प्रगटे प्रभु, अषिललोकबिश्राम॥ १९१॥

सरब जगतों का जिस बिषे निवास है अरु सरब जगत कों आनंददेनेहारे हैं सो जब प्रगटे तब देवता बिनैकरकै अपने लोकों को गए॥१९१॥ अब भगवान का ध्यान अरु माताकृत उस्तुत आदिक विस्तार कर कहते हैं।

छंद—भए प्रगट कृपाला परम दयाला कौसल्याहितकारी।

कौशल्या कै हितकारी कथन का भाव यह माता का हित पुत्रों में विशेष होताहै किंवा कौशल्या को पूरबसतरूपा जनम में तत्वज्ञान का वरदिआहुआ है इस ते विशेषहितकारी कहे वा दशरथ ने भी श्रीराम-चंद्र कै सुखदेखणे हैं परंतु कौशल्या ने अवध प्रजन्तदरसन करनाहै इस ते माता कै हित विशेष कहे।

हरषित महतारी मुनिमनहारी अद्भुत रूप बिचारी॥

मुनीश्वरों कै मनहरणेहारा जो अदभुत चतुर्भुज रूप हैं तिसकों देखकर माता प्रसन्न भई॥

लोचन अभिरामं तनु घनस्यामं निज आयुध भुज चारी।

स्याम नीरदवत तन है अरु परम सुंदर नैन हैं अरु चारो हाथो मों चारों शस्त्र हैं। ननु। चक्र अरु गदा तो शस्त्र हैं शंख अरु पद्म कों आयुध कैसे कहना। उत्तर। इस में आयुध पद दुष्टों कै दंडने अर्थ है लोह रूपकर नहीं चक्र अरु गदा यह बहिर्मुखी दुष्टों कै घातक हैं अरु शंख पद्म यह अंतर मुखी शत्रुहुं कै नाशक हैं जातें पांचजन्य शंख आपणी वेदरूपी ध्वनिकर भगतों के रिदे से अविवेक रूपी दुष्ट का नाश करता है अरु कमल अपनी प्रफुल्लता कर संतों कै रिदे सों सोकरूपी असुर कों मारता है।

भूषन बनमाला नयन बिसाला सोभासिंधु षरारी॥

खर कहिये खरदूषन किंवा खल कहिये दुष्ट तिनो कै अरि कहिये नासक हैं इतर सुगम।

कह दुइ कर जोरी अस्तुति तोरी केहि बिधि करौं अनंता।
मायागुनज्ञानातीत अमाना बेद पुरान भनंता॥

हे अनंता वेद शास्त्र तुमकों माया अरु त्रिगुणो अरु ज्ञान ते अरु मान कहिये अभिमान अथवामान कहिये प्रमान तिसते परै कहते हैं तो तुमारी अस्तुति कैसे करि सकौं जों प्रभु कहै तो तू मुझे पुत्र रूप कैसे जानैगी तिसपर कहती है।

करुनासुषसागर सबगुनआगर जेहि गावहिंश्रुति संता।
जो मम हित लागी जनअनुरागी भए प्रगट श्रीकंता॥

हे श्रीकंता तुम कृपा अरु सुखों के सिंधु हो अर्थ यह दयाकर सभों को सुख देनेहारे हो अरु सकल गुणों के सृजने में चतुर हो ऐसे जिस कों सुर्ता अरु संत कहते हैं सो भक्तवत्सल मेरे कल्यान निमित्त पुत्र रूप ह्वै प्रगटे हो।

ब्रह्मांडनिकाया निर्मित माया रोम रोम प्रति बेद कहै॥

माया कर रचित जो ब्रह्मांडो के संबूह हैं सो जिस के रोम रोम विषे निवास करते हैं ऐसे बेद सो कहा है प्रमाण दसमस्कंधे। द्युपतय एव ते न ययुरन्ततमनन्ततया त्वमपि यदन्तराण्डनिचया ननु सावरणाः खइव रजांसि वान्ति वयसा सह। हे देव सरव देवता तेरे अंत को नहीं जानते अरु तूं भी अपने अंत को नहीं जानता अपनी अनंतता कर जिसतें सप्तावरण कर सहित ब्रह्मांडो के संबूह तेरे अंतर उडते हैं काल समेत अकास में धूल के किनकें की न्याईं।

मम उर सो बासी यह उपहासो सुनत धीरमति थिर न रहै।

ऐसा भगवंतपुत्र रूप होकर मेरे उदरमहुं निवासकरे इसबात कों सुनकर धीरजवानो की मति भी भ्रमती है।

उपजा जब ग्याना प्रभु मुसुकाना चरित बहुत बिधि कीन्ह चहै।

जब माता को ज्ञान देखा तब प्रभु हंसे जो हमने तो अबी बहुत कौतुक करने हैं सो इस ज्ञान के होते कब सोभते हैं प्रभु के मुसकान का भाव यह अब तो तूं कहती है तुमारी माया के रोम रोम मह कोटि ब्रह्मांड हैं अरु जब पुत्र भावकर हम तेरे समीप रहेंगे तब क्या जानिवे क्या क्या शिख्याहमारेपर करेंगी माया प्रभों का हास्य है ताते मुसकाय कै माता पर माया डारी अरु।

कहि कथा सुहाई मातु बुझाई जेहि प्रकार सुतप्रेम लहै॥

सुंदर कथा कहिये पूरब जनम का वृत्तांत प्रभु ने सुनाया जो तुमने हमको पुत्र भाव कर जांच्या था ताते अब तुमारा बांछित सिद्ध करता हौं।

माता पुनि बोली सो मति डोली तजहु तात यह रूपा।
कीजै सिसुलीला अतिप्रियसीला यह सुख परम अनूपा॥

जब माता पर माया पडी तब ईश्वर की ज्ञाता बुद्धि भ्रमी अरु कहत भई तुम मेरे पुत्र हो यह रूप कैसा देखाया है क्या मुझे स्वपन आया है परम अनूपम सुखां का दाता जो बालक रूप है सो धार कर सिसु क्रीडा के सुख मुझे देवो।

सुनि बचन सुजाना रोदन ठाना होइ बालक सुरभूपा।
यह चरित जे गावहिं हरिपद पावहिं ते न परहिं भवकूपा॥

सुरभूप कहिये सरब देवत्यों के जो राजा हैं सो माता की गिरा सुनते ही बालक ह्वैकर रुदन करते भये किंबा सुरभूप प्रभु के रुदन की स्वर का विशेषण समुझना जो प्रभों की ध्वनि सरब स्वरों के भूप

कहिये सामबेद मय इय। प्रभों को जनमादिक विकारों से रहित जानके जौन से पुरुष इस चरित्र कों गावैंगे ते भी जनम मरण में न आवैंगे॥

दोहा—बिप्र धेनु सुर संत हित, लीन्ह मनुजअवतार।
निज इच्छा निर्मित भयो, मायागुनगोपार॥ १९२॥

माया से अरु त्रिगुणो से अरु बानी से जो परे प्रभु हैं सो द्विजादिकों हेतु अपनी इच्छा कर प्रगट भया है इस कथन मों पूरब गरभ वासमत के खंडनका जो अर्थ था सो ग्रंथकारके मुख से हीं सिद्धभया।

सुनि सिसुरुदन परम प्रिय बानी। संभ्रम चलि आई सब रानी॥ १॥

राजा के गृह मों पुत्र जनम की इच्छा सभों को है तिसपर महा अमतरस जेष्ठा रानी जो कौशल्या हैं तिस के पुत्र के रुदन रूपी अतिभावती गिरा सुनके संभ्रम कहिये करतव्या करतव्य बिचार रहित सभी रानिश्रां आइ पहुंचिश्रां॥ १॥

हर्षित जहं तहं धाई दासी। आनंदमगन सकल पुरबासी॥ २॥

घरों घरों मैं उत्सव की सुध देवे निमित्त दासिश्रां धार्या तिन से सुनकर सभलोक आनंद मो मगन भए सूची कटाह न्याइ कर लोगों का वृतांत कहा अब नृप का कहते हैं॥ २॥

दसरथपुत्र जन्म सुनि काना। मानहुं ब्रह्मानंद समाना॥ ३॥

कौशल्या के पुत्र जनम्या सुनके नृप को ब्रह्मानंद सम सुख हुआ जद्यपि श्रीरामचंद्र ब्रह्महि हैं तद्यपि राजा को पुत्र भाव भी है ताते उत्प्रेख्याकारी॥ ३॥

परम प्रेम मन पुलक सरीरा। चाहत उठन करत मति धीरा॥ ३॥

मन मो परम प्रेम भया ताते रोमांचादिक भए तिस हरषकर उठना चाहेआ जो चलकर सिसु कों देखों तब बिचाख्या दरबार मैं सिंघासन पर बैठे नृप कीं सभा पूरण किए बिना किसी व्यवहार निमित्त उठना योग्य नहीं तब मति मों धैरज कर कहता है औरो व्यवहारों हेतु उठना मुझे जोग्य नहीं अरु॥३॥

जाकर नाम सुनत सुभ सोई। मोरे गृह आवा प्रभु सोई॥ ५॥

जिस का नाम जप कर जगत पवित्र होता है सो प्रभु मेरे गृह मों पुत्र भया है ताते मुझे दरसनार्थ चलनाहीं जोग्य है ऐसे बिचार कर उठा अरु॥ ५॥

परमानंद पूर मन राजा। कहा बोलाइ बजावहु बाजा॥ ६॥
गुरु बसिष्ट कहं गएउ हंकारा। आए द्विजन सहित नृपद्वारा॥ ७॥

आपु मंदिर की ओर जाता हुआ गुरों को बुलावणे हेतु सचिव कों आज्ञा दे गया तब ब्राह्मणो समेत गुरु भी राजभवन मे आए अरु॥ ७॥

अनुपम बालक देषि न जाई। रूपरासि गुन कहि न सिराई॥ ८॥

ऐसा अदभुत शिशु देख्या जो रूप की खानि है अरु गुण जिस के कहि नहीं सकीते॥ ८॥

दोहा— नांदीमुख स्राद्धादि कर, जातकरम सब कीन ।
हाटक धेनु बसन मनि, नृप बिप्रन्ह कहुं दीन ॥ १९३ ॥

पुत्र जनम सों जबलग नाडी न काटिये तबलग सूतक नहीं प्रवेश करता सो पित्र तीरथ होता है उस समै स्वर्न मुक्तादिक दान का बडा फल है अरु नांदीमुख स्राद्ध भी अवस्य करतव्य है सो राजा ने सब बिधान किया ॥ १९३ ॥ टिप्पणी—नांदीमुख वह श्राद्ध है जो लड़का होने के समय होता है ।

ध्वज पताक तोरन पुर छावा । कहि न जाइ जेहिभांति बनावा ॥ १ ॥
सुमनबृष्टि अकास तें होई । ब्रह्मानंद मगन सब लोई ॥ २ ॥
बृंद बृंद मिलि चलीं लोगाई । सहज सिंगार किए उठि धाई ॥ ३ ॥

सहजसिंगार कहिये जैसे भूषण वस्त्र आगे बने हुए थे तैसेई रावे तत्व यह कुछ सिमृत ना रही अथवा इमै भूषणादिक पहिरते चिर लग जावै अरु उहां लोकों के समुदाय एकत्र होइ जावें तो हमको प्रवेश करना भी कठिन होवैगा ताते सहज सिंगार हीं राखे किंवा अति संपदा कर सदा ही सिंगारत हैं ताते विशेष सिंगार ना किए वा श्री रामचंद्र कृतम सुंदर नहीं तिसका उनों को भी दंभको बनावत भूलगई ॥ ३ ॥

कनककलस मंगल भरि थारा । गावत पैठति भूपति द्वारा ॥ ४ ॥

टिप्पणी—मंगल अर्थात् मंगल की सामग्री हर्दी, दूब, दही बतासा, लावा आदि ।

करि आरति निवछावरि करहीं । बार बार सिसुचरनन्हि परहीं ॥ ५ ॥

प्रणाम करणा ईश्वर भाव कर किंवा अति सुंदर मूरति जानकर किंच जेष्ठ राजपुत्र जान कर ॥ ५ ॥

मागध सूत बंदिगन गायक । पावन गुन गावहिं रघुनायक ॥ ६ ॥

मागधकहिएबंशप्रसंसक सूतकहिएपुरानिक बंदीकहिये जो नृप के संमत कहै गायक प्रसिद्ध: ते सभी प्रभों का जशगावतेहैं ॥ ६ ॥ टिप्पणी—मागध = जगा । सूत = पौराणिक । बंदीगन = भाट । गायक = गानेवाले ।

सर्बस दान दीन्ह सब काहू । जेहि पावा राखा नहिं ताहू ॥ ७ ॥

सभों के मन में ऐसी सुंदरता हुई जिनो ने दान लिया तिनो ने भी आपने गृह के पदारथ साथ मिलाइ कर आगे दान कर दिया ॥ ७ ॥

मृगमद चंदन कुंकुम कीचा । मची सकल बीथिन्ह बिच बीचा ॥ ८ ॥

कस्तूरी केसर अरु चंदन लोकों ने घस कर एता बरसाया जिस कर वीथियों सों करदम भया ॥ ८ ॥

दोहा—गृह गृह बाज बधाव सुभ, प्रगटेउ सुषमाकंद ।
हरषवंत सब जहं तहं, नगर नारिनरबृंद ॥ १९४ ॥

सुखमाकंद कहिये सोभा के मेघ अथवा सुंदर नील घनवत जिन की आभा है ॥ १९४ ॥

कैकयसुता सुमित्रा दोऊ । सुंदर सुतहिं जनत भइ ओऊ ॥ १ ॥

कैकै देश के नृप की सुता कैकेई अरु सुमित्रा भी सुंदर पुत्रों को उपजावतियां भइयां ॥ १ ॥

वह सुष संपति समय समाजा । कहि न सकै सारद अहिराजा ॥ २ ॥

उस समै का सुख अरु संपदा अरु समाज सारदा अरु सहस्रास्य से भी नहीं कहा जाता ॥ २ ॥

अवध पुरी सोहै एहि भांती । प्रभुहिँ मिलन आई जनु राती ॥ ३ ॥

तिस समै अवधपुरी मों ऐसी सोभा भई है मानो श्रीरामचंद्र के दरसन निमित्त निशा आई है ॥५॥

देषि भानु जनु मन सकुचानी । तदपि बनी संध्या अनुमानी ॥ ४ ॥

तिस जामिनो ने आगे भानु देख्या तब सकुची जो मैं इस के संमुख कैसे जावों तत्व यह भानु के निवारन को समर्थ नहीं अरु दरसन की इच्छा कर आप भी नहीं हटती तथापि संध्यारूप हूं गई जाते संध्या मों दोनो अंस होते हैं सोई उत्प्रेख्या कर कहते हैं ॥ ४ ॥

अगरधूप बहु जनु अंधिआरी । उडै अबीर मनहुं अरु नारी ॥ ५ ॥

मंदिरमनिसमूह जनु तारा । नृपगृहकलस सो इंदु उदारा ॥ ६ ॥

भवनबेदधुनि अति मृदुबानी । जनु षगमुषरसमय सुष जानी ॥ ७ ॥

वेदों की धुनि मानों पंखिवों का शब्द है सुख का समै जानकर ॥ ७ ॥ टिप्पणी—राजमंदिर में ऐसी कोमल बेदध्वनि होती है जैसे पची बसेरे में आके सुख सानी बानी को बोलते हैं ।

कौतुक देषि पतंग भुलाना । एक मास तेहि जात न जाना ॥ ८ ॥

इस उतसाह कों देखकर सूरज मगन भया एक मास प्रजंत तहां इस्थिर रहा इस मो हरष की अधिकता सूची जो चलना भूल गया ॥ ८ ॥ टिप्पणी । पतंग = सूर्य्य ।

दोहा—मास दिवस कर दिवस भा, मरम न जानै कोइ ।
रथ समेत रबि थाकेउ, निसा कवन बिधि होइ ॥ १९५ ॥

तीस दिन का दिन भया परंतु हरषरूपी सिंधु मों मगन भए लोगों को भी इस बात की सुध ना रही अरु अपनी कुल मों श्रीरामचंद्र का अवतार मान कै भानु को हरष अरु स्वामी का हरष देख कै तुरंग को हरषकर चलना विस्मृत भया तब बिभावरी कैसे होइ ॥ १९५ ॥ टिप्पणी । बिभावरी = रात ।

यह रहस्य काहू नहिं जाना । दिनमनि चले करत गुनगाना ॥ १ ॥

आनंद मों मगण होवनेकर बड़ा दिन होने का बृत्तांत किसूने ना लखा ता समै प्रभों के गुणगावता हुआ आदित चला ॥ १ ॥ टिप्पणी—रहस्य गुप्त चरित्र सूर्य अपना गुन गाते हुए चले इसलिये कि उन के वंश में राम ने जन्म लिया ।

देषि महोत्सव सुर मुनि नागा । चले भवन बरनत निजभागा ॥ २ ॥

तिस समै की बडे उत्सव को देख के सुरादिक अपने भागों कों सराहते हैं प्रभों के दरशन करने कर किंवा अब रावन मरैगा हम सुखी होवेंगे ॥ २ ॥

औरौ एक कहौं निज चोरी । सुनु गिरिजा अतिदृढ मति तोरी ॥ ३ ॥

पोछे भानु की चोरी कही अरु हेगिरजे अब मैं तुझे एक अपनी चोरी कहिए गुप्त वारता कहता हौं जाते तेरी अति दृढ मति है दृढ मति का कारण यह जाते तूं रुद्र सुता है किंवा अनेक दुख देखकर भी श्रीरामचंद्र की भक्ति में तेरी मति चलायमान नहीं भई ताते दृढ है इस कथन का तत्व यह हमारे गोप्य संकेत किसू अनअधिकारी प्रति नहीं कहणे ॥ ३ ॥ टिप्पणी—मैं और एक छिपी बात कहता हूं हे गिरिजा तुम्हारी बड़ी दृढ़ मति है गिरिजा कहने का अर्थ यह कि तुम पर्बत की पुत्री हो पर्बत के समान तुम्हारी दृढ़ मति है और तुम ने कहा था कि जो हम ने नहीं पूंछा वह भी कहना इसलिये हम तुम से कहते हैं ।

काक भुसुंडि संग हम दोऊ । मनुजरूप जानै नहि कोऊ ॥ ४ ॥
परमानंद प्रेमसुषफूले । बीथिन्ह फिरहिं मगन मन भूले ॥ ५ ॥

हेउमा भुसुंड अरु हम परमानंद मों मगनहुये बिथयो में भूलेफिरतेहैं तातपरज यह सरबपुर में लोग आनंदहुये रामसुजश कों निरंतरगावते हैं अरु हम बीथीबीथी मों भगवंत का जश सुनते फिरते हैं ॥५॥

यह सभ चरित जान पै सोई । कृपा राम कै जा पर होई ॥ ६ ॥

यह सभ चरित कहिये भक्ति के उत्साह संजुत हम मारिखयों का विचरना किंवा रामचंद्र के सुजश श्रवन का रहस्य सो जाने जिस पर रघुनाथजी कृपालु होवें ॥ ६ ॥ टिप्पणी—जिस बात के लिये हम चोरी करने को गये उस चरित्र को वही जानता है जिस पर राम की कृपा होती है ।

तेहि अवसर जो जेहि बिधि आवा । दीन्ह भूप जो जेहिं मन भावा ॥ ७ ॥

जिहि बिधि कहिए कोऊ त्रिने सहित कोऊ मानो कोऊ अपना मानादाक करता आया अरु जो कुछ उस को भाया सोई नृप मैं पाया तिन द्रव्यहु के नाम कहते हैं ॥ ७ ॥

गज रथ तुरग हेम गो हीरा । दीन्हे नृप नानाविधि चीरा ॥ ८ ॥

दोहा—मन संतोष सबन्हि के, जहं तहं देहिं असीस ।
सकल तनय चिरजीवहु, तुलसिदास के ईस ॥ १९६ ॥

जाचकों के प्रसंग मों अपना नाम कथन का भाव यह औरो जांचको के और बांछित सिद्ध किए अरु मुझ दीन कों प्रेम भक्ति दीनी ॥ १९६ ॥

कछुक दिवस बीते एहि भाँती । जातन जानिअ दिन अरु राती ॥ १ ॥
नामकरन कर अवसरु जानी । भूप बोलि पठए मुनि ग्यानी ॥ २ ॥

ग्यानी कहिए सकल शास्त्रज्ञाता तत्व यह इहां जोतिसविद्या की विशेषता चाहीती थी सो गुरों

को तिस की भी पूरणाज्ञात है ताते तिन कों बुलाया किंवा यह श्रीरामचंद्र के जथार्थ स्वरूप के वेता हैं ताते नाम एही राखैं ॥ २ ॥

करि पूजा भूपति अस भाषा। धरिअ नाम जो मुनि गुन राषा ॥ ३ ॥

यहबचन राजा के सुणाकर श्रीबशिष्टजी श्रीरामचंद्रजीका निरगुणरूप लखावतेहुए नामकहतेहैं ॥ ३ ॥

इन्ह के नाम अनेक अनूपा। मैं नृप कहब सुमतिअनूरूपा ॥ ४ ॥

शुद्ध सच्चिदानंदादिक इनके अनेक अरु अनूपम नामहैं तहां जैसी मेरी मति प्रविसती है तैसा नाम कहता हौं ॥ ४ ॥

जो आनंदसिंधु सुषरासी। सीकर ते त्रैलोक प्रकासी ॥ ५ ॥
सो सुषधाम राम अस नामा। अषिललोकदायकबिश्रामा ॥ ६ ॥

जो आनंद का उदधि अरु सुखों का संवूह है जिस के सीकर कहिये अंश ते त्रिलोकी प्रकासती है तिस सुखधाम सरब जगत कों विश्रामदाते का नाम रामचंद्र है ॥ ६ ॥

बिस्वभरन पोषन कर जोई। ताकर नाम भरत अस होई ॥ ७ ॥
जाके सुमिरन ते रिपुनासा। नाम सत्रुहन बेद प्रकासा ॥ ८ ॥

जो सृष्ठि कों तृप्ति अरु पुष्ट करता है तिस का नाम भरत है अरु जिस का नाम सुमिरे शत्रों का निधन होता है तिस का नाम शत्रुघ्न है ॥ ८ ॥

दोहा—लषन धाम अरु रामप्रिय, सकलजगतआधार ।
गुरु बसिष्ट तेहि राषा, लछिमन नाम उदार ॥ १९७ ॥

सरब सुभ लखनों का धाम अरु राम को रम्या कहिये व्याप्या हुआ अरु सभों का प्रिय अरु सरब जगतों का अधिष्टान अरु उदार कहिये सभों का वांछितदाता जो है तिस का नाम वशिष्टजी ने लख्यमन राख्या चारो भ्रातों के नामो में ब्रह्म के विशेषन ही दिये इस निमित्त जाते रामाश्वमेध मो कहा है। ततवाले मुनि श्रेष्ठ पुत्रांश्चाचतुरःसुतान्। प्राप्तपंक्तरथः साक्षात्चिरंब्रह्मसनातनं। हे मुनिवर तहां बाल कांड मो कहा है शृंगीरिष द्वारा पुत्रेष्ठी कर के पंक्तरथ कहिये दशरथ चतुंपुत्रों कों पावता भया कैसे हैं चारो सुत साख्यात सनातन ब्रह्म हैं। ननु। पदुमपुराण में लिखा है। शेषस्तु लक्ष्मनोभूत्वा राममेवान्व पद्यति। जातौ भरत शत्रुघ्नौ शंखचक्रगदाभृता। शेषनागलख्यमन होता भया जो श्रीरामचंद्र का अनुसारी है अरु भगवान के शंखचक्र भरत शत्रुघ्न होते भये यह विरोध कैसे मिटै अरु इस पख्य अनुसार शंख मो भरणपोषणादिक गुण कैसे घटै। उत्तर। शखादिक प्रभों का स्वरूप हैं भेद न समुझना अरु शंख में भरणपोषनादिक लख्यण इस भांति जानने अपणे वेदरूपी घोषकर जो सरब जगत कों भरै अरु अपणी पवित्र ध्वनि के बल कर जो संतों के रिदै पुष्ट करै चक्रसुदरसन के नाम सुमिरेसा शत्रों का नाश होना क्या आश्चर्य है। आसंका। शत्रुघ्न का नाम प्रथम अरु लख्यमन का पीछे इस कथन मो अक्रम दोस आवताहै। उत्तर। कविता के क्रमकर कदाचित आगे पीछे होय तो निरदोस है किंवा श्रीरामचंद्र तौ सरब के आद हैं ही अरु लख्यमन जी शंकरषण हैं अर्थ यह सर्व सृष्ट कों आकर्षणकरणेहारे हैं ताते पीछे कहे

किंबा श्रीरामचंद्रजी आदि अरु लक्ष्मनजी अंत संपुटवत अरु भरत शत्रुहन मध्य रत्नोवत जैसे संपुट रत्न की रख्या करता है तैसे श्रीरामचंद्रजी अरु लक्ष्मनजी भरत शत्रुहन रूपी रत्नो को बन के दुखों में पुनः कैकई के कलंकों से रख्या करते हैं ॥

धरे नाम गुरु हृदय बिचारी। बेदतत्व नृप तव सुत चारी ॥ १ ॥

हृदै बिषे विचार कर गुरों ने जथाजोग नाम धरे अरु कहा हे भूपति तेरे चारोपुत्र चहूवेदों का तत्त्व हैं अर्थ यह श्रुतों कर प्रतिपाद्य जो परब्रह्म है यह चारो तद्रूप हैं ॥ १ ॥

मुनिधन जन सर्वस सिवप्राना। बालकेलिरस तेहि सुष माना ॥ २ ॥

श्रीरामचंद्र मुनीश्वरों का धन हैं जन का सरबसु हैं अरु शंकरजी का प्राण हैं अथवा प्राण रूपी बाणी है सो परा पश्यंती आदिक चारो बाणियां शंकरजीकिआं मानो एही चार मूरता हैं इन के बाल सरूप की केलों मद्धिं महादेव का मन प्रसन्न होताहै अब चारोभ्रातों में प्रीति की रीति कहते हैं ॥२॥

बारहि ते निज हित पति जानी। लछिमन रामचरनरति मानी ॥ ३ ॥

बालक अवस्था सेही अपने हितू अरु स्वामी जान कर लक्ष्मन ने रामचंद्र के चरणहुं महं प्रीति करी कौशल्या के हाथ मे लेकर जो हव्य का बिभाग राजा नें सुमित्रा कों दिआ था तिस सों लक्ष्मन भया सो सनेह बिचार कर हितू जाने अरु ईश्वर भाव कर स्वामी जाने ॥ ३ ॥

भरत सत्रुहन दूनौभाई। प्रभुसेवक जस प्रीति बढाई ॥ ४ ॥

कैकेई के हाथ मे जो बिभाग नृपति ने सुमित्रा को दिआ था सो शत्रुहन भया ताते अरु पीछे उपजन कर भी भरत का अनुगामी भया किंबा रिपुसूदन ने ऐसे बिचाग्या हम दोनों भगवान के अनुचर हैं परंतु भरत मुख्य हैं ताते भगवान के ध्यान मो शंख प्रथम कहिता है चक्र पीछे गनिता है किंबा शंख सातकी स्वरूप है चक्र तामसी है तिस कर भो मुझकों इन की सेवाही करतव्य है वा शंख का संयोग प्रभों के मुखारबिंद सों भी है अरु मेरा केवल हस्त मों है इस कर भी यह सं छठ हैं ताते सेवकी अंगीकार करी ॥ ४ ॥

स्याम गौर सुंदर दोउ जोरी। निरषहिं छबि जननी त्रन तोरी ॥ ५ ॥

श्रीरामचंद्र अरु भरत स्याम जोरी लक्ष्मन अरु शत्रुघ्न गौर जोरी अथवा रामचंद्र अरु लक्ष्मन भरत अरु शत्रुघ्न स्याम गौर जोरी तिन की अपूर्वता देख कर माता तृण तोरतिआं हैं जो हमारी दृष्ट कृत दोष इन पर न होवै ॥ ५ ॥

चारहुं रूप सीलगुनधामा। तदपि अधिक सुषसागर रामा ॥ ६ ॥

हृदय अनुग्रह इंदु प्रकासा। सूचत किरिन मनोहर हासा ॥ ७ ॥

कबहुं उछंग कबहुं बरपलना। मातु दुलारें कहि प्रिय ललना ॥ ८ ॥

श्रीरामचंद्र की हिर्देरूपी नभ बिषे अनुग्रहरूपी चंद्रमा प्रकाश हुआ है सो कृपा संजुत मुसुकानरूपी

किरणो द्वारा लखीता है ॥ ७ ॥ कबी गोदी मे बैठालकर कबी पलना में पौढाइकर प्यारेलाल आदिक बचन कहिकर माता भगवान को लडावती है ॥ ८ ॥

दोहा—ब्यापक ब्रह्म निरंजन, निर्गुन बिगतबिनोद।
सो अज प्रेमभगतिबस, कौसल्या के गोद ॥ १९८ ॥

सरब व्यापक सरब मे बडा माया मे परे त्रिगुणातीत विशेषकर सर्व प्राप्ति आनंद रूप किंवा विशेष कर आनंद के प्राप्ति करावनेहारे हैं किंवा विनोद पद इहां सोक का उपलक्षक है अर्थ यह जिन के हरष अरु सोक विशेषकर गत हुये हैं सो अजन्मा प्रभु भक्तों के प्रेम कर बस हुआ कौशल्याजी के गोदी महुं खेलता है ॥ १९८ ॥

कोटिकामछबि स्याम सरीरा। नील कंज बारिद गंभीरा ॥ १ ॥

स्याम रूप मे सोभा की न्यूनता को संका न करनी जासे भगवान का स्याम शरीर अनंत मनमथहुं की शोभा अरु इंदीवर जैसी स्यामता अरु मेघ सम गंभीरता धारता है ॥ १ ॥

अरुन चरनपंकजनषजोती। कमलदलन्हि बैठे जनु मोती ॥ २ ॥
रेष कुलिस ध्वज अंकुस सोहैं। नूपुर धुनि सुनि मुनिमन मोहैं ॥ ३ ॥

श्रीरामचंद्र के चरणो मे कुलिश का चिन्ह पापरूपी परवत के काटने को धुजा धरम के इस्थित करणे को अंकुश मनरूपी मातंग बस करणे को है अरु केते पुराणों में जा इकोस लछ्यन प्रभों के चरणो में कहे हैं सो इहां तीन लछ्यन कहनकर एकीसही समुझने जैसे तीनलोक कथनकर एकीश लोकों का बोध होता है जिनो मुनीश्वरो ने सरब रसों से मन को उपरत किया है तिन के मन को भी भगवंत के पगनूपरों की वेदरूपी ध्वन मोह करती है ॥ ३ ॥ टिप्पणी—श्रीराम के अरुण कमल चरणतल के आश्रय जो अंगुलियों के नखों की जोति है सो अरुण दिखाती है जैसे लाल कमल के दलों पर बैठ कर मोती लाल दीखता है। यह तदगुणालंकार है।

कटि किंकिनी उदर त्रय रेषा। नाभिगंभीर जान जिन देषा ॥ ४ ॥

इस कथनकर अति सौंदर्ज सूचिआ ॥ ४ ॥ टिप्पणी—नाभि की गम्भीरता वह जाने जिस ने देखा है अर्थात् ब्रह्मा जो नाभि कमल से उत्पन्न होकर अनेक वर्ष पर्यन्त ऊपर से नीचे को गये थे और अंत न पाया उन्हीं को गोसाईं जी साक्ष्य देते हैं।

भुज बिसाल भूषन जुत भूरी। हिय हरिनष सोभा अति रूरी ॥ ५ ॥

आजान बाहुं हैं भाव यह दासहुं की सहायता निमित्त बडीआं भुजा करीआं हैं सो अनंत भूषणहुं संयुक्त हैं उर विषे सेर के नख माता ने रछ्या निमित्त पहिराए हैं तिन की अति सोभा है ॥ ५ ॥

उर मनिहारपदिक की सोभा। बिप्रचरन देषत मन लोभा ॥ ६ ॥

मणिवों का हार उदर विषे है पदक नाम पटडीवों का जो जटित चौकिआं की पचारि की भूसन छाती के चारो वोर होता है जौं मनिहार पाठ होय तो मनिहार कहिये सुंदर जो एक पदक जटित है

सो सोभता है किंवा पदक नाम हीरे का कंठ विषे सुंदर हीरे की चौकी है अरु भृगुलता को देखकर मन को लोभ होता है जाते अवतारों का लक्षन है किंबा भगवंत की भक्त वत्सलता बिचारकर मन मों लोभ होता है जो ऐसे कृपालु स्वामी सेवने जोग्य हैं ॥ ६ ॥ टिप्पणी—भूसन = भूषण ।

कंबु कंठ अति चिबुक सुहाई । आनन अमितमदनछबि छाई ॥ ७ ॥

टिप्पणी—शंख कैसा त्रिरेख मत खंड और चिबुक ठोढ़ी अति शोभित है और बे प्रमाण कामों की छबि मुख पर छा रही है ।

दुइ दुइ दसन अधर अरुनारे । नासा तिलक को बरनै पारे ॥ ८ ॥

द्वै द्वै दांत स्वेत निकसे हैं अरु ओष्ट लाल हैं नासिका अरु तिलक की शोभा कौन कह सकता है ॥८॥

सुंदर श्रवन सुचारु कपोला । अतिप्रिय मधुर तोतरे बोला ॥ ९ ॥

नील कमल द्वै नैन बिसाला । बिकट भृकुटि लटकन बरमाला ॥१०॥

इंदीवरों सम स्याम कोमल अरु बिस्तृत दृग हैं भृकुटि बांकी हैं अरु लटकन कहिये भूषन जिसकों झवा कहते हैं सो माथे पर सोभता है ॥ १० ॥ टिप्पणी—यह चौपाई गोस्वामी तुलसी दासजी की शुद्ध प्रति जो महाराज बनारस के पास है उस में नहीं है इसलिये महात्मा हरिहर प्रसादजी ने भी यहां पर नहीं लिखा, पर उत्तर कांड में इस प्रकरण के मिलान में कोउ कह के इस को लिखा है और सुखदेवलाल जो प्रायः मानस रामायण की चौपाइयों को अपनी टीका में काट छांट कर निकाल दिया है उस ने भी अपनी टीका में इसे लिखा है और ऐसा अर्थ किया । "नील कमल से दोनों विशाल नेत्र हैं अति बांकी सुन्दर भृकुटि हैं और मनोहर ललाट पर लटकनि लटकती है" । और मुन्शी रोशनलाल ने भी अपनी टीका में इस चौपाई को लिखा है और ऐसा अर्थ किया है । "नीलकमल उपमा कज्जल से भरे हुए नेत्रों की है विकट भृकुटि टेढ़ी भौं माथे पर सुन्दर लटकन है" ।

चिक्कन कच कुंचित गभुआरे । बहु प्रकार रचि मातु संवारे ॥ ११ ॥

स्याम अरु अस्निग्ध केश कुंचित कहिये घुंघुरिआरे गंभुआरे कहिये सघन सो माता ने सुंदर रीति सें संवारे हैं ॥ ११ ॥

पीत झिंगुलिया तनु पहिराई । जानु पानि बिचरनि मोहि भाई ॥ १२ ॥

जानुओं करके अरु हाथों करके आगन मों विचरणा मुझकों भावता है ॥ १२ ॥

रूप सकहिं नहि कहि श्रुतिसेषा । सो जानै सपनेहुं जिन्ह देषा ॥ १३ ॥

इसकें आगे सुख संदोह आदि अरु प्रभु मोहि माया तोर अंत प्रसंग आख्येपक भासते हैं जाते अर्थ अति सुगम अरु अधक भोहैं अरु पाठ भी सिथिल है परंतु प्रति देख के लिखीहै ॥ १३ ॥

दोहा—सुषसंदोह मोहपर, ग्यानगिरागोतीत ।

सो प्रभु दंपति प्रेमबस, कर सिसुचरित पुनीत ॥ १९९ ॥

सुखों का संबूह मोह से परे ज्ञान वानो अरु इंद्रिया ते अतीत सो प्रभु राजा रानी के प्रेम बस हुआ उनों की प्रसन्नता निमित्त बालकों की न्यांई चरित्र करता है ॥ १९९ ॥

एहि बिधि राम जगतपितुमाता । कोसलपुरबासिन्ह सुषदाता ॥ १ ॥
जिन्ह रघुनाथचरन रति मानी । तिन्ह की यह गति प्रगट भवानी ॥ २ ॥

हे उमा जिनों पुरसों पूरब जनमां मै श्रीरामचंन्द्र की भक्ति करीहै तिनकी यह गति भईहै जो अजोध्या में जनम पाया है अरु श्रीरामचंद्र का दरशन करकै मुक्त होहिंगे जो कोऊं कहै जोगादिक भी मोख्य के साधन हैं तिस पर कहते हैं ॥ २ ॥

रघुपतिबिमुष जतन कर कोरी । कवन सकै भवबंधन छोरी ॥ ३ ॥
जीव चराचर बस कै राषे । सो माया प्रभु सों भय भाषे ॥ ४ ॥

जो सरब जीवों के बसकरनेहारी माया है सो भी प्रभों से भैवान कहीती है ॥ ४ ॥

भृकुटिबिलास नचावै ताही । अस प्रभु छाडि भजिय कहु काही ॥ ५ ॥
मन क्रम बचन छाडि चतुराई । भजत क्रपा करिहैं रघुराई ॥ ६ ॥
एहि बिधि सिसुबिनोद प्रभु कीन्हा । सकलनगरबासिन्हसुष दीन्ह ॥ ७ ॥
लै उछंग कबहुंक हलरावै । कबहुं पालने घालि झुलावै ॥ ८ ॥

श्रीरामचंद्र कों गोदी मों लेकर माता हांथों से कबी खिलावती है कदहूं झूलने मद्दं झुलावती है ॥ ८ ॥

दोहा—प्रेममगन कौसल्या, निसि दिन जात न जान ।
सुतसनेहबस माता, बालचरित कर गान ॥ २०० ॥

एक बार जननी अन्हवाए । करि सिंगार पलना पौढाए ॥ १ ॥
निजकुल इष्टदेव भगवाना । पूजा हेतु कीन्ह असनाना ॥ २ ॥
करि पूजा नैबेद्य चढावा । आपु गई जहँ पाक बनावा ॥ ३ ॥
बहुरि मातु तहवां चलि आई । भोजन करत दोष सुत जाई ॥ ४ ॥

जो अपने इष्टरूप विष्णुदेव कों माता ने नैवेदचढाया था तिस कों श्रीरामचंद्र नें भुंचेया तब माता ने देख्या ॥ ४ ॥

गै जननी सिसु पहिं भयभीता । देषा बाल तहां पुनि सूता ॥ ५ ॥
बहुरि आइ देषा सुत सोई । हृदय कंप मन धीर न होई ॥ ६ ॥

इहां उहां दुइ बालक देषा । मति भ्रम मोर कि आन बिसेषा ॥ ७ ॥

माता बिचारती है मंदिर में अरु झूलने में द्वै बालक देखे हैं सो मेरी मतिभ्रमी है अथवा इसी के बिशेषकर द्वै रूप भए हैं ॥ ७ ॥

देषि राम जननी अकुलानी । प्रभु हंसि दीन्ह मधुर मुसुकानी ॥ ८ ॥

जब प्रभों ने जान्या माता व्याकुल भई है तब उस की प्रसन्यतार्थ मधुर मुसुकाइकर पुनः हंस दीना हांसकर जब बदन खूला तब ॥ ८ ॥

दोहा—दिषरावा मातहि निज, अद्भुत रूप अषंड ।
रोम रोम प्रति लागे, कोटि कोटि ब्रह्मंड ॥ २०१ ॥

अगनित रबि ससि सिव चतुरानन । बहु गिरि सरित सिंधु महि कानन ॥ १ ॥

काल कर्म गुन ग्यान सुभाऊ । सो देषा जो सुना न काऊ ॥ २ ॥

काल कहिए समा करम कहिये सरब जीवों के पाप पुंन गुन कहिये रज तम सतु ज्ञान कहिये परोक्ष्य अपरोक्ष्य सुभाव कहिये सरब लोगोंकिआं प्रकिरतां यह सभो सरूप धारी नहीं देखे अरु ऐसे पदारथ देखे जो कबो सुने भी नहीं ॥ २ ॥

देषी माया सब बिधि गाढी । अतिसभीत जोरें कर ठाढी ॥ ३ ॥

टिप्पणी—सब प्रकार जिस का सुगाढ़ बंधन है ऐसी माया देखी कि अत्यन्त भयभीत राम के सन्मुख हाथ जोरे खड़ो है । जीव को और उस को नचावनेवाली अविद्या माया को और उस से छुड़ाने वाली भक्ति को देखा सोवते हुए जो देखा सो शान्त रूप माया गुण ज्ञान से भिन्न है जो भोजन करते रूप देखा सो करुणा और सुखों का समुद्र और गुनों की खानि है और यह तीसरा विराट रूप है जिस के रोम रोम में कोटि कोटि ब्रह्मांड लगे हैं सो यह तीनों वही हैं जिन को स्तुति कौशल्या ने जन्म समय की थी । कह दुइ करि जोरी अस्तुति तोरी केहि बिधि करों अनन्ता । इत्यादि ।

देषा जीव नचावै जाही । देषी भगति जो छोडै ताही ॥ ४ ॥

जीव का सरूप देख्या जो मायाकर निरतत है भक्ति का सरूप देख्या जो तिसी जीव को माया ते छुडावै है अथवा जिस भक्त को माया छोड देती है अर्थ यह तिस पर बल नहीं पडता ॥ ४ ॥

तन पुलकित मुष बचन न आवा । नयन मूंदि चरननि सिरु नावा ॥ ५ ॥

ऐसे देखकर माता अत्यंत भयवान अरु बिस्मित भई ॥ ५ ॥

बिस्मयवंत देषि महतारी । भए बहुरि सिसुरूप षरारी ॥ ६ ॥

अस्तुति करि न जाइ भय माना । जगतपिता मै सुत करि जाना ॥ ७ ॥

हरिजननी बहु बिधि समुझाई । यह जनि कतहुं कहसि तैं माई ॥ ८ ॥

दोहा—बार बार कौसल्या, बिनय करै कर जोरि।
अब जनि कबहूं व्यापई, प्रभु मोहि माया तोरि॥ २०२॥

बालचरित हरि बहु बिधि कीन्हा। अति अनंद दासन्ह कहुं दीन्हा॥ १॥
कछुक काल बीते सब भाई। बडे भए परिजनसुषदाई॥ २॥

परिजन कहियं परिवार के लोग इतर सुगम॥ २॥

चूडाकरन कीन्ह गुरु जाइ। बिप्रन्ह बहुत दच्छिना पाई॥ ३॥

चूडाकरन कहियं करण वेधादिक अपर सुगम॥ ३॥ टिप्पणी—चूड़ाकरण जो मुंडन का अर्थ लें तो चक्रवर्ती राजाओं के शिर पर छुरा लगाने की रीति नहीं पाई जाती इस मे चूड़ा पहिनावने का अर्थ संभवित होता है।

परम मनोहर चरित अपारा। करत फिरत चारिउ सुकुमारा॥ ४॥
मनक्रमबचनअगोचर जोई। दसरथअजिर बिचर प्रभु सोई॥ ५॥

अजिर कहिए अंगना इतर सुगम॥ ५॥

भोजन करत बोल जब राजा। नहिं आवत तजि बालसमाजा॥ ६॥
कौसल्या जब बोलन जाई। ठुमकठुमक प्रभु चलहिं पराई॥ ७॥

ठुमक ठुमक कहिए सुंदर चाल में प्रथम सनैसनै चलना पुनः शीघ्र भागना॥ ७॥

निगम नेति सिव अंत न पावा। ताहि धरै जननी हठि धावा॥ ८॥

जो प्रभु स्रुतहु अरु शिवकर दुर्गम हैं ताको माता दोडकर बल सों हकारकर पकडती है॥ ८॥

धूसर धूर भरे तन आए। भूपति बिहँसि गोद बैठाए॥ ९॥

धूर के लपेटनकर तन जिन का धूसरा हुआ है सो आये तब नृप नें मुसुकाय कै गोद मों बैठाए राजा के बिहंसने का भाव यह पुत्रों को देखकर अति आनंद भया अथवा जिन को नेतनेतकर वेद कहते हैं सो अब कैसा सरूप धारकर आए हैं॥ ९॥

दोहा—भोजन करत सुचपल चित, इत उत अवसरु पाइ।
भाजि चले किलकात मुष, दधिओदन लपटाइ॥ २०३॥

भोजन करते हैं परंतु चपल चित हैं इत उत जब अवसरदेखा तब भागे अथवा भोजन करते हैं चपलता कहिए शीघ्र से खेलन निमित्त चित कहिए चितव कै इतउत कहिए सरब दिशा मों अर्थ अरु सरब ओर देखते रहे जब नृप की अरु माता की दृष्टि बचाई तब किलक कै दौडे मुख मों दधि चावल लपेटही रहे दधि ओदनहीं कथन का भाव यह बाल अवस्था मों दधि दूधादिक प्रिय होते हैं किंवा इहां कहणवाले भुसुंडजी हैं सो उनो ने उत्तरकांड मों यह बात कहनी है। जूठ जो परइ अजिर मों सो

उठाइकर खाउं। सो और भोजन मुख के भीतर प्रवेश कर जाते हैं अरु दधि ओदन विशेषकर बालकों के मुख में बाहर लपटते हैं तब गिडते हैं ॥ २०३ ॥

बालचरित अतिसरल सुहाए। सादर सेष संभु श्रुति गाए ॥ १ ॥

अति सरल कहिए कुटिलता आदिक दोषों से रहित जाते तिस अवस्था मों सभ काऊ सरल होता है तिस पर यह तो ईश्वर हैं अरु सुहाये कहिए मन कों अति भावते हैं तिन कों श्रेष्ट जान के शारदादिक गावते हैं ॥ १ ॥

जिन्हकरमन इन्ह सननहि राता। ते जन बंचित किए बिधाता ॥ २ ॥

सुंदर बालकों के विनोदों कों देखकर सभों का मन मृदु होता है तिस पर भी श्रीरामचंद्र को बाल क्रीडा महाअद्भुत सो सुनकर भी जिनां कों प्रीति नहीं उपजती सो मानों विधाता ने ठगे हैं ॥ २ ॥

भए कुमार जवहिं सब भ्राता। दीन्ह जनेऊ गुरु पितु माता ॥ ३ ॥

कुमार कहिये जब अष्ट बर्षां मे बडे भये तब पितु आदिकों ने जज्ञोपवीत दीनि ॥ ३ ॥

गुरुगृह गए पढन रघुराई। अलप काल विद्या सब पाई ॥ ४ ॥

अल्पकाल कहिये अष्ट दिन मों चौंसठ कला सीखिआं यह प्रसंग औरो रामायणों मों कहा है जो कोऊ कहै अष्टदिन मों सभ विद्या सीखणिआं आश्चर्ज है तिस पर कहते हैं ॥ ४ ॥

जाको सहज स्वास श्रुति चारी। सो हरि पढ यह कौतुक भारी ॥ ५ ॥

तुम को सीघ्र विद्या सीखणे का आश्चर्य है अरु हम कों यह आश्चर्ज है चारों बेद जिस भगवंत के सहज स्वांस हैं सो पढे किस से ॥ ५ ॥

बिद्या बिनय निपुन गुन सीला। खेलहिं खेल सकल नृपलीला ॥ ६ ॥

विद्या का रूप का राज का गरब सभ को होता है सो जिन कों नहीं अरु सुभाविकही जिन से गुण होते हैं अरु खेल संपूरण राज्यों के खेलते हैं अस्वहुं रथहुं घोडहुं में अरु प्रजापालन में प्यार है ॥ ७ ॥

करतल बान धनुष अति सोहै। देखत रूप चराचर मोहै ॥ ७ ॥

जिन्ह बीथिन्ह बिहरै सब भाई। थकित होहि सब लोग लुगाई ॥ ८ ॥

टिप्पणी—जिन बीथियां में सब भाई बिचरते हैं तहां तहां के नर नारी थकित होकर दर्शन करते हैं। चारों भाई के चलने से लोग लुगाई थक जाते हैं यह बात विपरीत पाई जाती है समाधान यह है कि संपूर्ण पुरवासियों के प्राण हैं प्राण के थकने से प्राणी भी थक जाता है।

दोहा—कौसलपुरबासी नर, नारि बृद्ध अरु बाल।
प्रानहुं तें प्रिय लागत, सब कहु राम कृपाल ॥ २०४ ॥

कोशलपुरबासीवों सभों कों प्रभु प्रानो से प्यारे लागते हैं जाते राम हैं अर्थ यह सभ के आत्मा हैं अरु व्यवहार मों कृपालु हैं अर्थ यह सब लोगां कों पालते हैं ॥ ८ ॥

बंधु सषा सभ लेहिं बोलाई। बन मृगया नित षेलहि जाई॥ १॥
पावन मृग मारहिं जिय जानी। दिन प्रति नृपहिं देषावहिं आनी॥२॥

पावन मृग कहिये जिनों का मास सिमृतहुं ने भक्ष्य कहा है तिन कों मारकर॥ २

जे मृग रामबान के मारे। ते तनु तजि सुरलोक सिधारे॥ ३॥
अनुज सषा सँग भोजन करहीं। मातु पिता आज्ञा अनुसरहीं॥ ४॥

अनुजहुं सखहुं मे मिलकर मांसादिक भोजन करगो सें सनेह की अधिकता सूची जाते जिन के साथ बमनादिक धारनं की अधिक प्रीति है वही जुद्ध में काम आवते हैं अरु माता पिता की आज्ञा माननें मे धरम की बृद्धता लखाई॥ ४॥

जेहिबिधि सुषी होहिं पुरलोगा। करहिं कृपानिधि सोइ संजोगा॥ ५॥

जिस भांति पुर के लोग सुखी रहै प्रभु तिन के जाग विचारकर कारज करते हैं॥ ५॥

बेद पुरान सुनहिं मन लाई। आपु कहहि अनुजन्ह समुझाई॥ ६॥

गुरों से सुन के तिन का अनुवाद एकांत बैठ के भ्रातों प्रति कहते हैं अथवा स्रवणकाल मोहीं जो कठिन आसै हें ते भ्रातों प्रति आपु समुझाइ देते हैं॥ ६॥

प्रातकाल उठि कै रघुनाथा। मातु पितहिं गुरु नावहि माथा॥७॥
आयसु मांगि करहिं पुरकाजा। देषि चरित हरषै मन राजा॥ ८॥

दोहा—ब्यापक अकल अनीह अज, निर्गुन नाम न रूप।
भगति हेतु नाना बिधि, करत चरित्र अनूप॥ २०५॥

जो सरब व्यापक कलना अरु इच्छा में रहित अजन्मा त्रिगुणातीत नाम रूप से परे प्रभु हैं सो भक्तवत्सलता कर नाना चरित्र करते हैं॥ २०५॥

यह सब चरित कहा मैं गाई। आगिल कथा सुनहु मन लाई॥ १॥

बाल्यावस्थादिकों के चरित्र मै ने कहे हैं अब और प्रसंग मन दै के सुनो इस मो विशेष मन देना कथन का भाव यह राजा ने विश्वामित्र प्रति कहणा है मुझ कों रामचंद्र प्राणों से प्रिय हैं ताते यहे समुझना ऐसा प्रेम राजा का है तो प्रभु तिस के गृह में पुत्र भए हैं किंवा आगे जुद्ध का बरनन है इस प्रसंग मो मन दै कै यह समुझणा श्रीरामचंद्र में क्रोधादिक नहीं यह क्रीडा सुरों संतो को रक्ष्या अरु असुरों की मुक्ति हेतु है किंवा इस कथा मों मन लगाइ कै करणी का महातम समुझना जो शरीर कर तो कौशिक भो मानव ही था परंतु तिस से रविबंशी राजा दशरथ कैसा त्रसित होएगा तत्व यह उत्तम करनो सभों कों करतब्य है सोई कहते हैं॥१॥ टिप्पणी—पार्बती का तीसरा प्रश्न। बालचरित्र पुनि कहहु उदारा। इस का उत्तर यहां पूर्ण हुआ।

बिश्वामित्र महामुनि ग्यानी। बसहि बिपिन सुभ आश्रमजानी॥ २॥

जहं जप जग्य जोग मुनि करहीं। अति मारीच सुबाहुहिं डरहीं ॥ ३ ॥
देषत जग्य निसाचर धावहिं। करत उपद्रव मुनि दुषपावहिं ॥ ४ ॥
गाधितनय मन चिंता व्यापी। हरि बिनु मरै न निसचर पापी ॥ ५ ॥

बिश्वामित्रजी के मन मों तिन के बध निमित्त चितवनी भई जाते गाधि के पुत्र हैं अर्थ यह छत्री की अंसु हैं ताते तिन की अवज्ञा परत्यक्ष मान कीनी जों कोऊ कहै छत्री को अंस हैं तो तिन कों मारै तो जान्या यह दुष्ट भगवंत बिना और के हाथ नहीं मरते इस निमित्त ॥ ५ ॥

तब मुनिबर मन कीन्ह बिचारा। प्रभु अवतरे हरनमहिभारा ॥ ६ ॥

ब्राह्मण भावकर मुनिवर ने बिचार कीना जो सुरोंकार प्रदर्शी भगवंत ने दशरथ के गृह चतुर्व्यूह अवतार धार्या है ॥ ६ ॥ टिप्पणी—वर मुनि और बिचार दोनों का विशेषण होता है।

एहु मिसु देषौं प्रभु पद जाई। करि बिनती आनौं दौ भाई ॥ ७ ॥

इस मिस द्वारा प्रभों के पदारबिंद देखोंगा तत्व यह प्रभों ने अबो अपना प्रताप नहीं प्रगटाया ताते दैतों के बध हेतु नृप प्रति कहों अरु इस मिस प्रभु के चरण देखों अरु बिनैकर के दोनों भ्रातों को ल्यावों अर्थ यह राम राजा कों देना बनेगा प्रभों के आगे तो रिदेकर प्रार्थनाहीं करनी है जो दरसन दे के अस्मदादिकों कों कृतार्थ करो जों कोऊ कहै रामचन्द्र कुमार हैं क्या जानिए तुमारे संग आवैं के न आवैं तहां कहते हैं ॥ ७ ॥ टिप्पणी—अबो = अभी। यहां पवर्ग के ४ र्थ वर्ण ३य वर्ण हुआ है।

ग्यान बिराग सकलगुनअयना। सो प्रभु मैं देषहु भरि नयना ॥ ८ ॥

लोगों की दृष्ट मैं तिन की मानव देह है अरु हम तो तिन कों ज्ञान वैराग्यादिकों के धाम ईश्वर जानते हैं तत्व यह ज्ञान के बलकार सरबज्ञ हैं भावी तिन से गोप्य नहीं अरु वैराग्य के बलकर इस अवस्था मों पितादिकों का त्याग तिन कों कठिन नहीं ॥ ८ ॥

दोहा—बहु बिधि करत मनोरथहिं, जात लागि नहिं बार।
करि मज्जन सरजू जलहि, गए भूप दरबार ॥ २०६ ॥

प्रभों के दरसन निमित्त इस भांति के बहुत मनोरथ करता है अरु जातिआं देर न लागी जाते नगर निकट था वा तप की सामर्थ थी तब सरजू मो स्नान कर कै राज दरबार मों पहुंचे जाते प्रातस्नान सभों को उचित है वा स्नान बिना समीप से गए तीरथ का अपमान होता है किंबा मारग का स्रम निवारणार्थ मज्जन कीना किंबा नृप के लोग प्रथम सुध देवैंगे ताते स्नान किआ सोई कहते हैं ॥ २०६ ॥ टिप्पणी—बहुबिधि के स्थान पर। बहि बिधि करत मनोरथ। पाठ और इस का अर्थ यों रोशनलाल ने लिखा है कि सरजूजल में स्नान कर के मुनि राजा के दरबार में गये यह अर्थ कहने में अगली चौपाई से शंका होती है कि जब दरबार में गये तो राजा को देखना चाहिये था सुनने का प्रयोजन नहीं है इसलिये ऐसा अर्थ करते हैं कि पहले पद में विश्वामित्र का वर्णन है दूसरे में यह कि राजा जिस समय सरजू में स्नान कर के दरबार में पहुंचे तब मुनि के आगमन को सुना।

मुनिआगमन सुना जब राजा । मिलन गये लै बिप्रसमाजा ॥ १ ॥

सभा में बैठे राजा ने खबर सुनी जो विश्वामित्रजी आएं हैं तब ब्राह्मणो का समाज लेकर शीघ्र हीं मिलन आए सो केवल बिप्रों का समाज साथ ल्यावना अपनी ब्रह्मण्यता लखावने निमित्त वा जात का जात से भाव होता है इस कर उन की प्रसन्यता निमित्त किंवा राजा के मन विषे उपजा जो विश्वामित्र जी नदी पर मुझे नहीं उडी क्या दुआरे परहीं आन खडे हुये हैं कदाचित मेरा किसी हाथों कोऊ अपराध विचार कर रिसवंत हुए होहिं ताते ब्राह्मणों का आश्रय लै कर गया ॥ १ ॥

करि दंडवत मुनिहिं सनमानो । निज आसन बैठारे आनो ॥ २ ॥
चरनपषारि कीन अतिपूजा । मो सम आजु धन्य नहि दूजा ॥ ३ ॥
बिबिध भांति भोजन करवावा । मुनिवर हृदय हरष अतिपावा ॥ ४ ॥

हरष पावने का भाव यह सुंदर भोजन पाइ कर रिदा प्रसन्न होता है किंवा ऐसे विचारया प्रथम हम कों आगे लेने गया है पुनः अंतसपुर मे डेरा दिया है अरु ऐसी भक्ति सो भोजन खवाया है तिस कर जानीता है हमारा बांछित भी सिद्ध होवैगा ॥ ४ ॥

पुनि चरननि मेले सुत चारी । राम देषि मुनि देह बिसारी ॥ ५ ॥

टिप्पणी—बिरति बिसारी का अर्थ बैराग्य को बिसरार्के रागी होगये अर्थात् रामको देख के गृस्थाश्रम को धन्य माना ॥ ५ ॥

भए मगन देषत मुष सोभा । जनु चकोर पूरनससि लोभा ॥ ६ ॥

जब चारो भ्राता ने पगों पर प्रनाम करे तब श्रीरामचंद्र कों देख कर मुनीश्वर कों अपने तन की सुधिहो न रही तिस पर मुख की शोभा देख कर ऐसे मगन भए जैसे पूरणमासी के ससि पर चकोर प्रीत करता है ॥६॥

तब मन हरष बचन कह राऊ । मुनि असिक्रपा न कीन्हेहु काऊ ॥ ७ ॥
केहि कारन आगमन तुम्हारा । कहहु सो करत न लावों बारा ॥ ८ ॥

कौशिक की कृपा देखकर रोष का सन्देह नृवृत्त भया तब प्रसन्न हुै कर राजा बोल्या हे मुनीश्वर ऐसी कृपा तो आगे तुम ने कबी नहीं करी आसैं एहु तुम से रिषों का गृह मो आवाहन बिना आगमन बडे भागों का फल है परंतु॥ ७ ॥इस भांत नृप के प्रतज्ञा पूरवक शक्य सुन कर मुनिवर बोला ॥ ८ ॥

असुरसमूह सतावहिं मोही । मैं जांचन आएउ नृप तोही ॥ ९ ॥

यह सुन कर कदाचित नृप कहै जो मुझ को करतव्य है सो कहो तिस पर कहते हैं ॥ ९ ॥

अनुज समेत देहु रघुनाथा । निसिचरबध मैं होब सनाथा ॥ १० ॥

सनाथ कहणे का भाव यह निश्चर मुझे अनाथ जान कर दुखावते हैं जब यह उन को मारेंगे तब मुझकों सनाथ मान कर पुनः कोऊ न दुखावैगा केवल लछमन कों रघुनाथ जी के संग लेन का भाव

यह है भ्रात निशाचर हैं तिन के बध निमित्त चारों भ्रातों का लेना नीति विरुद्ध है किंवा यह कारन रामचंद्र अरु लछ्यमनजी ने हीं करणे हैं ताते दोउ बीर मांग अब बिश्वामित्रजी अपनी बुद्धि से राजा के मुख नेत्रों द्वारा अटेयता का आसा लख कर आगे से हीं कहते हैं ॥ १० ॥ टिप्पणी—अनुज कहने से लछमणलाल का बोध होताहै राच्छसों के बध में हम सनाथ होंगे।

दोहा—देहु भूप मन हरषजुत, तजहु मोह अज्ञान।
धर्म सुजस प्रभु तुम कों, इन कर अतिकल्यान ॥ २०७ ॥

हे राजन पुत्रों को प्रसन्न हु कर मेरे संग देवो अरु अज्ञान कर उपज्या हुआ जो मोह है तिस को त्यागो प्रयोजन यह पुत्रों के सनेह से संतों की प्रसन्नता अतिविशेष जानो अथवा पुत्र भाव के मोह कर श्रीरामचंद्रजी के वास्तव रूप में जो तुमकों अज्ञान है सो त्यागो जौ नृप कहै इस किये मुझे क्या लाभ होवैगा तिसपर कहते हैं। प्रभु कहिये हे राजन तुमारे पुत्रहुं कर जो मेरी रछ्या होवेगी अरु जग्य पूरण होवेगा ताते तुम कों धरम अरु जश भी बडा होवेगा अरु जौं तुम इन कों बालक जान कर चित को कायर न करै तो इन का अतिकल्यान होवैगा अतिकल्यान का अभिप्राय यह राछ्यसों कों मार कर जै आदिक पावैंगे यह दोहा आछ्येपक भासता है जाते पाठसिथिल हैं अरु अर्थ असंगत है ॥२०७॥ टिप्पणी—रोशनलाल ने यों अर्थ किया है। अज्ञानता इस बात का कि यह कोन हैं और कैसे राचसों को मारेंगे अतिकल्याण पत्नी सहित होना और त्रैलोक्य की बिजय प्राप्त करना।

सुनि राजा अति अप्रिय बानी। हृदय कंप मुषदुति कुभिलानी ॥ १ ॥

अतिअप्रियबानी कहिये पुत्र वियोग पुनः युगल पुत्र का वियोग बहुडो पुत्र कुमार तिस पर भी श्री रामचंद्र जो प्राणो से प्यारे तिस पर भी राछ्यसों संग प्रथम युद्ध निमित्त ले जाना यह सुन कर नृप का उर कांप्या अरु बदन मुरझाया अरु कहण लागा ॥ १ ॥

चौथेंपन पाएउं सुत चारी। बिप्र बचन नहिं कहेहु बिचारी ॥ २ ॥

जौं मुनि कहैं अब ऐसे दुखित भये हो तो प्रथम प्रतिज्ञा क्यों करी थी तिस पर कहता है ॥ २ ॥ टिप्पणी—चौथेपन में हमारे चार पुत्र हुए सो विप्र अर्थात् वेद वेत्ता हो के आप ने यह अन विचार बात कैसे कही।

मांगहु भूमि धेनु धन कोसा। सर्वस देउं आजु सहरोसा ॥ ३ ॥

सहरोसा नाम निश्चै का अपर सुगम ॥ ३ ॥ टिप्पणी—सहरोसा = भूरता समेत।

देह प्रान तें प्रिय कछु नाहीं। सोउ मुनि देउं निमिषएकमाहीं ॥ ४ ॥

देह दान कहिये एक दोए अंग काट देने प्रानदान प्रसिद्ध ही है जो मुनि कहैं प्रानों से अति प्यारा कौन है तिस पर कहता है ॥ ४ ॥

सब सुत प्रिय प्रानन की नाईं। राम देत नहि बनै गोसाईं ॥ ५ ॥

हे मुनिवर भरतादिकों पुत्रों संग तो प्राणो सम सनेह है अरु रामचंद्र तो अतिप्यारे हैं तातें यह जो तुमारा अतिहठ है तो और सुतों मैं कोऊ ले जावो रघुनाथ जू का पठावना नहीं बनता जो मुनि कहैं छत्रियों के पुत्र जुद्ध निमित्त ही होते हैं तुम एता सनेह क्यों करते हो तिस पर कहते हैं ॥ ५ ॥

कहं निसिचर अतिघोर कठोरा। कह सुंदर सुत परमकिसोरा ॥ ६ ॥

हे मुनीश्वर संग्राम हेतु तन की अवस्था देखीती है तिस पर प्रतिभट देखीते हैं सो मेरे पुत्र परम सुंदर अरु किसोर अवस्था अरु सुबाहु मारीच जैसे राछ्यसों सों संग्राम ॥ ६ ॥

सुनि नृपगिरा प्रेमरससानी। हृदय हरष माना मुनिज्ञानी ॥ ७ ॥

ज्ञानीमुनि कहिये तृकाल ज्ञाता हैं अर्थ यह राजा की पूरब भक्ति जानते हैं अरु आगे जो कछु होना है सो भी जानते हैं किंवा श्रीरामचंद्र जू के स्वरूप के जथार्थ ज्ञाता हैं तातें भूप को बिनै सुन अरु प्रेम देख कर हरषे ॥ ७ ॥

तब बसिष्ट बहुबिधि समुझावा। नृपसंदेह नास कहुं पावा ॥ ८ ॥

श्रीरामचंद्र का जथार्थ स्वरूप बशिष्ट जीनें राजा कों लखाया अथवा बशिष्ट जीनें बिश्वामित्र जी का प्रताप लखाया जो इन के साथ होते रामचंद्र जी कों किसी का भय नहीं अरु उद्दम इन का जानकी के संग रामचंद्र के बिवाह निमित है इत्यादिक बचन सुनकर राजा का संदेह निवृत्य भया ॥ ८ ॥ टिप्पणी—बहु बिधि समझाना यह है कि रघुनाथ का रूप और उन की प्रतिज्ञा भूभार उतारने की और बिश्वामित्र याचक की बड़ाई और तप का प्रताप और राजा की यह प्रतिज्ञा। "कहहु सो करत न लाउं बारा।" और कुल की सनातन रीति जिस का लक्ष्य यह है। "रघुकुल रीति सदा चलि आई। प्रान जाइ बरु बचन जाई॥"

अतिआदर दोउ तनय बोलाए। हृदय लाइ बहु भांति सिषाए ॥ ९ ॥

जुद्ध हेतु पठावने हैं अरु शिशु हैं तातें बड़े सनमान पूरवक बोलाइकर रछाकीआं अरु मुनीश्वर की आदर किआं शिख्या दीनिआं अरु कहा ॥ ९ ॥

मेरे प्राननाथ सुत दोऊ। तुम्ह मुनि पिता आन नहिं कोऊ ॥ १० ॥

तुम दोनों सुत मेरे प्राणों के रछ्यक हो परंतु अब तुमने बिश्वामित्रजी बिषे पिता भाव करना आप सों राजकुमार अरु उन सों अतीतादिक भाव न करने ॥ १० ॥ टिप्पणी—राजा दशरथ ने मनु शरीर में यह बर मांगा था कि "मनि बिनु फनि जिमि जल बिनु मीना। मम जीवन तिमि तुमहि अधीना॥" सो यहां रामचंद्र से बहुत दिन के बियोग होने पर भी दशरथ बने रहे यह ग्रन्थ का संदेह है सो उस का निवारण यह है कि दशरथ ने यह कहा कि "तुम मुनि पिता आन नहिं कोऊ।" अर्थात् अपना पितृत्व मुनि को दिया इस से वियोग नहीं हुआ।

दोहा—सौंपे भूपति ऋषिहि सुत, बहु बिधि देइ असीस।
जननीभवन गए प्रभु, चले नाइ पद सीस॥

सोरठा—पुरुषसिंघ दौ बीर, हरष चले मुनिभयहरन।
कृपासिंधु मतिधीर, अषिलबिस्वकारनकरन ॥ २०८ ॥

पुरुषों विषे सिंघ कथन का भाव यह जैसे केहरि करिवों कों मारने निमित्त चले तब सेना नहीं चाहते तैसे प्रभों ने नृप सें चमूं ना मांगी कृपासिंधु हैं ताते मुनीश्वर पर कृपा करी अरु मतिधीर हैं ताते मुनीश्वर की अरु पिता की आज्ञा प्रमान करी सरब सृष्टि के करता हरता हैं ताते असुरों का बध कछु वस्तु नहीं जानिया अब भगवान का ध्यान अरु विश्वामित्र के संग पयान कहते हैं ॥ २०८ ॥

अरुन नयन उर बाहु बिसाला। नीलजलजतन स्याम तमाला ॥ १ ॥

इंदीवर सम सुंदर अरु तमाल तरु सम पुष्ट तन हैं इतर स्पष्ट ॥ १ ॥

कटि पट पीत कसे बर भाथा। रुचिर चाप सायक दुहु हाथा ॥ २ ॥
स्याम गौर सुंदर दौ भाई। बिस्वामित्र महानिधि पाई ॥ ३ ॥
प्रभु ब्रह्मन्य देव मैं जाना। मोहिनित पिता तजेउ भगमाना ॥४॥

विश्वामित्रजी मन मों कहते हैं मैंने प्रभों को ब्रह्मण्य देव निश्चे किया है जाते मेरे निमित्त पिता कों त्याग आये हैं तातपरज यह जद्यपि नृप ने कहा था तुम रिष के संग जावो तद्यपि यह कहते हम बालक हैं अरु पगों चलना है तौ मेरा क्या बल था ताते ब्रह्मण्यता कर मेरा मनोरथ सफल किया है। ननु। राक्ष्यसों साथ संग्राम अरु राजा नें सुतों कों पगगामो पठावना इस का आसे क्या। उत्तर। भूपति ने कौशिक की आज्ञा माननी थी सो गाधसुत ने यह बिचारा कदाचित इन को रथी अरु सेना सहित देख के निशाचर न आवैं अरु मारना तिन कों अवश्य है ताते प्रभों का प्रताप जनावने हेतु तिन कों पगों चलतेहीं ले गए किंवा तिन दुष्टों कों गर्बित देख के किसी मुनिवर ने शाप दिया था जो तुम बालकों बिरथियों सो मरोगे तिस का वाक्य सत करबे हेतु कृपालु प्रभु पगों चलते गए ॥ ४ ॥

चले जात मुनि दीन दषाई। सुन ताडका क्रोध करि धाई ॥ ५ ॥

मग मो जाते हुए मुनीश्वर ने दिखाई जिनो मेरे जज्ञ बिध्वंस को मारगे तुम चले हो तिनो की माता यह दुष्टा खडी है यह अप्रिय वाक सुनकर ताडका इन के बध निमित्त दौडी तब उस जख्यणी कों बेग सों आवती देखकर ॥ ५ ॥ टिप्पणी—ताड़काराक्षसी मारीच सुबाहु की माता दीन्ह दिखाई अर्थात् विश्वामित्र ने ताड़का का नाम ले के रघुनाथ को दिखाई सो मुनि का बचन सुन वह क्रोधकर के दौड़ी।

एकहिं बान प्रान हरि लीना। दीनजान तेहि निजपद दीना ॥ ६ ॥

इस मो तीन आसंका है एकहीं बान सों ताडिका कों किस निमित्त मारा अरु जुवती अवध्य है तिस का बध क्यौं किया अरु प्रथम प्रारंभ जुद्ध का रघुनाथजी नें इहां सेहीं किया है तामे इस्त्री का बध महाअमंगल है सो क्यों किया प्रथमउत्तर यह दशसहस्र गज का बल धारती है तिस कों अरु सभों कों अपना पुरुषारथ देखावने निमित्त एकबान सें मारी अथवा बहुते बानो कर पीडित न होवे

तिस पर कृपाकर एकही बान मारा अथवा नाश इस का अवश्य करणा है बहुता चिर रखकोडा करते कदाचित मरण पड जाए तब मारी न जायगी प्रमाण श्रीरामायणे । रामोवाच। विभीषणो वा सुग्रीव यदि वा रावण: स्वयं । अभयं सर्व भूतभ्योददाम्येतद्व्रतंमम । हे सुग्रीव विभीषण के शरण राखणे मो क्या संदेह है जों रावण आप शरण आवै तो तिस कों भी अभैदान देना मेरा यह नेमही है । अब द्वितीय प्रश्न का उत्तर शत्रों के त्रास देने निमित्त अवज्ञा कों मारा है जो दुष्ट ऐसे समुझैगें जिनो ने संतो के दुख देने-हारो नारो मारो है सो राछसों पुरुखों कों कब छोडते हैं अरु देवन कों भी इसी से धीरज होवेगा अरु विश्वामित्रजी की आज्ञा मानन कर हम कों इस के मारण का दोस न होयगा प्रमाण श्रीरामायणे । विश्वामित्रउवाच । नहि ते स्त्रीवधकृते घृणाकार्या नरोत्तम । चतुर्वर्णहितार्थाई कर्त्तव्याराजसूनुना । हे नरोत्तम जिस नारी के मारणकर चारो वरनों का हित होय तिस के मारण मों तुम को दया करणी उचित नहीं जाते तुम राजपुत्र हो अथवा जुद्ध में प्रहार करणे कों जो कोऊ सन्मुख आवै तिस के बध का दोस नहीं प्रमाण मार्कंडेयपुराणे । मरुतउवाच। मित्रं वा बन्धवो वापि पितावा यदि वा गुरु: । प्रजापालन विघ्नाय यो हन्तव्य: महीभृत: । मित्र होवै वा बांध होवै वा पिता होय वा गुरु होइ प्रजा के पालन मो जो विघ्न करै सो राजा कर के अवश्य बध योग्य है २ । तृतीयाख्यप का उत्तर आद में बध इस का मंगलरूप जान के इस निमित्त किया जैसे अविद्या के नाश भये कामादिक नष्ट होते हैं तैसे इस के बध भए राछस सभ नाश होवैंगे इसी निमित्त ताडका को नाश महातम सो दुराशा रूप अविद्या की समता दीनी है तिस कों पापनी अरु अबला अरु बिधवा आदिक दोषोंकर दीन जान के प्रभों ने मुक्त दीनी ॥ ६ ॥

तब ऋषिनिजनाथहिं जिय चीन्ही । विद्यानिधि कहु विद्या दीन्ही ॥ ७ ॥

तब कहिये ताडका बध के अनंतर रिष नें जिय मों यह बात चीनी कहिये समुझी जो जथार्थ यह मेरे नाथ हैं जाते परिछ्या करि लीनो अरु विद्या के उदधि हैं इन के पूजन निमित्त मैं भी अपनियां विद्या पुष्पादिकों वत देयों ताते बला अतिबला दोनो विद्या दीनियां तिन का महातम कहते हैं ॥ ७ ॥

जाते लाग न छुधा पिपासा । अतुलित बल तन तेज प्रकासा ॥ ८ ॥

इन विद्या के धारणहारों कों जुद्धादिकों विषे भूख तृषा नहीं व्यापती तन का बल अरु तेज प्रत्युत विशेष होता है ॥ ८ ॥ टिप्पणी—पिपासा पाठांतर पियासा ।

दोहा—आयुध सर्व समर्पि कै, प्रभु निज आश्रम आनि ।
कंद मूल फल भोजनहि, दीन भक्ति हित जानि ॥ २०९ ॥

एक शत अस्त्र के मंत्र रिष जानता था सो सभी दीने अरु भोजन निमित्त कंदमूलादिक दिए प्रभों कों भक्तों का हितू जान के भाव यह सेवक भक्तिपूरबक पुष्प पत्रादिक जो अरपै तिन की प्रीति देख के प्रभु सभ किछु ग्रहण करते हैं ॥ २०९ ॥

प्रात कहा मुनि सन रघुराई । निर्भय जग्य करहु तुम्ह जाई ॥ १ ॥
होमकरन लागे मुनिझारी । आपु रहे मख की रखवारी ॥ २ ॥

जब प्रभों की आज्ञा सुन के मुनीश्वरों के पुंज होमकरणलागे तब तिन के तोष निमित्त आप शस्त्र पहिर रथों पर चढ़ि कै स्थित भए ॥ २ ॥

सुन मारीच निसाचर कोही। लै सहाय धावा मुनिद्रोही ॥ ३ ॥
बिन फल बान राम तेहि मारा। सत जोजन गा सागरपारा ॥ ४ ॥

बिन फलबान कहिये लोह सें रहित केवल कानां किंवा श्रीरामचंद्र के बान चलने का फल है सत्रु नाश सो उस फल सें बिनाबान प्रभों ने मारा जो उस को जीवता रखना था तब वह तिस बान कर प्रेर्या हुआ शत जोजन सिंधु सें पार लंकाद्वीप मों जाय पडा ॥ ४ ॥

पावकसर सुबाहुं पुनि जारा। अनुज निसाचर कटकु संघारा ॥ ५ ॥

सुबाहुं को अनलबान सों जलाय दीना अरु लछमनजी ने सभ कटक मार डारा ॥ ५ ॥

मारि असुर द्विजनिर्भयकारी। अस्तुति करहिं देवमुनिझारी ॥ ६ ॥
तह पुनि कछुकदिवस रघुराया। रहे कीन बिप्रन पर दाया ॥ ७ ॥

कारज तो एताही था परंतु विप्र जो बहुत सनेह करें ताते प्रभु भी तिनो पर कृपा कर तहां कैतक दिन रहे कृपाकरणे का भाव यह सुबाहुं आदिकों का कोऊ मित्र आइ कै रिषों को दुख न देवै ॥ ७ ॥

भगति हेतु बहु कथा पुराना। कहे बिप्र जद्यपि प्रभु जाना ॥ ८ ॥

जद्यपि प्रभु सरबज्ञ हैं तद्यपि भक्ति हेतु कहिये जिनों प्रसंगों में भगवंत की भक्तवत्सलता अरु दीनदयालुता सिद्ध होती है ते कथा लोगों को सधा बधावने हेतु रिष सुनावते हैं ॥ ८ ॥

तब मुनि सादर कहा बुझाई। चरित एक प्रभु देषिय जाई ॥ ९ ॥

तब कौशिक ने प्रीति संयुत बुझाइ कहिये समुझाइकै कहा हे प्रभो जद्यपि राजा ने तुम कों इहां तलक आवने की आज्ञा करी थी तथापि स्वयंबर मों अनेक नृप एकत्र होने हैं उहां तुम जैसे प्रतापवानों का अवस्य चलना चाहिता है तहां चल कर एक कौतुक देखो जो प्रभु कहैं क्या कौतुक है तिस पर कहते हैं ॥ ९ ॥

धनुषजग्य कर रघुकुलनाथा। हरषि चले मुनिवर के साथा ॥ १० ॥

हेरघुकुलनाथा उहां धनुषजग्य रूपी कौतुक है तत्व यह औरों स्वयंबरों में कन्यावरण मात्र करतिआं हैं अरु इहां संभुकोदंड चढावनाहै अरु तुम रघुबंसिवों के शिरोमणि हो तुमारे बिना वह चाप किस सें चढता है ताते तुम चलो यह सुनकर प्रसन्नतापूरवक मुनिवर के संग चले प्रसन्नता का भाव यह बडे कारज मों प्रतापवान अवस्य उद्योग करते हैं किंवा महालछमी रूप सीता मिलणी है ताते हरष किंवा ज्ञानी मुझकों अतिप्यारे हैं अरु ज्ञानिवों का शिरोमणि जनक है तिसकों दरसन देवो यह हरष ॥ १० ॥

आश्रम एक दीष बन माहीं। षग मृग जीव जंतु तहँ नाहीं ॥ ११ ॥
पूछा मुनिहि सिला प्रभु देषी। सकल कथा मुनि कही बिसेषी। १२ ॥

जो सकलकथा मुनीश्वरने रामचंद्रप्रति सुनाई है सो ग्रंथवृद्ध के भय से ग्रंथकारएक दोहेमें कहते हैं ॥ १२ ॥

दोहा—गौतमनारि श्रापबस, उपलदेह धरि धीर ।
चरनकमल रज चाहती, कृपाकरहु रघुबीर ॥ २१० ॥

हे प्रभो गौतमजी के निमित्त अहिल्या विरंचि ने उपजाई तब तिस का अधिक सौंदर्ज देखकर इंद्र ने चाही परन्तु बिधने गौतम कों हीं दीनी तद्यपि सुरेश की रुचि परस्पर रही तब एक काल मों तुराषाड तिम ठिग गया अरु गौतमजी ने देख्या तदनंतर रिष के स्राप कर तिसकों सहस्र भग भये अरु यह शिला भई तुमारे चरणो के स्परस कर अपना उधार मानतीहुई उडींतीथी सो अब इस पर कृपा करो यह सुन कर प्रभों ने चरन छुहाया तब ॥ २१० ॥

छंद—परसत पद पावन सोकनसावन प्रगट भई तपपुंज सही ।
देषत रघुनायक जनसुषदायक सनमुष होइ कर जोरि रही ॥

सोक नासक जो प्रभों के पदारबिंद हैं तिन को स्परस करतिआहीं तपपुंज कहिये गौतमरिष तिस की सही कहिए सखी अर्थ यह तपनिध को प्यारी प्रगट भई जनो के सुखदाता जो रघुनाथ हैं तिन कों देखतिआहीं हाथ जोर के सन्मुख हूं ठाढी है जौ तपपुंज अहिल्या कों कहिये तौ यह दोष आवता है महातपस्विनी थी तौ व्यभिचार परायन क्यों भई ।

अतिप्रेम अधीरा पुलक सरीरा मुष नहिं आवै बचन कही ।
अतिसय बडभागी चरनन्हि लागी जुगलनयन जलधार बही ॥
धीरजु मन कीना प्रभु कहुँ चीना रघुपतिकृपा भगति पाई ।

प्रथम जो प्रेमकर मन बिहूल भया था अरु द्दगों से जल का प्रवाह चला था ताते मन कों धीरज दीना अरु नेत्रों कों पोछ के प्रभों का दरसन कीना तब रघुनाथजी की कृपाकर भक्ति पाई ।

अति निर्मल बानी अस्तुति ठानी ज्ञानगम्य जय रघुराई ॥

भगवंत के जश मों प्रविर्त्तमे हारी जो अतिविमल गिरा है तिस कर अस्तुत कीने हे रघुराई तुमारा जै होइ कैसे हो तुम महावाक्य जन्य जो ज्ञान है तिस कर प्राप्ति होते हो ।

मैं नारि अपावन प्रभु जगपावन रावनरिपु जनसुषदाई ।
राजीवबिलोचन भवभयमोचन पाहि पाहि सरनहिं आई ॥

रावन के रिपु इस कर कहे प्रभों के दरसन कर इस कों तृकालज्ञान भई अपर सपष्ट ।

मुनि श्राप जो दीना अति भलकीना परमअनुग्रह मैं माना ।

मुनीश्वर ने स्राप जो दिया था सो अति भला किया था अर्थ यह उस स्राप के होवने कर औरों पापों से मैं नृबत्त भई किंबा पाखानजोनि मो केवल सून हूं रही तप्त थंभों के दुख से बची यह भी मेरा भला किया था अरु तिस स्राप कों अब मैं नें परम अनुग्रह माना है जाते ।

देखे भरलोचन हरि भवमोचन इहै लाभ संकर जाना ॥

संसार रूपी भय के निवारक जो तुम हो तिन को मैने नेत्र भर के देखा है ताते मुनीश्वर का श्राप अनुग्रह है सो तुमारे इस दरसनरूपी लाभ का फल शंकरजी जानते हैं जो प्रभु कहैं अब तेरी क्या इच्छा है तिस पर कहती है ।

बिनती प्रभु मोरी मै मति भोरी नाथ न मागौं बर आना ।
पदकमलपरागा रस अनुरागा मम मन मधुप करै पाना ॥

हे प्रभो मेरी मति भोरी कहिये मूर्ख है परंतु अब मेरी बिनै सुनो और बर नहीं मांगतो तुमारे चरणारबिंदों की जो पराग कहिए रज है तिस मों जो प्रेमरूपी रस है तिस को मेरा मनरूपी भ्रमर सदा पीवता रहै यह दान मांगती हौं कैसे तुमारे चरन हैं ।

जेहिपद सुरसरिता परमपुनीता प्रगट भई सिवसीसधरी ।
सोइ पदपंकज जेहि पूजत अज मम सिर धरेउ कृपाल हरी ॥

जिनो तुमारे पदारबिंदों से उपजी हुई सुरसरी को परम पावन मान के शंकरजी ने शीस पर धारी अरु जिनों चरणों को विधहरादिक पूजते हैं ते पदकमल तुम ने मेरे सीस पर धारे जाते तुम कृपालु हौ ताते मेरे बडे भाग हैं ।

एहि भांति सिधारी गौतमनारी बारबार हरि चरनपरी ।
जो अति मन भावा सो बर पावा गै पतिलोक अनंद भरी ॥

दोहा—अस प्रभु दीनदयाल हरि, कारन रहित कृपाल ।
तुलसिदास सठ तेहि भजु, छांडि कपट जंजाल ॥ २११ ॥

चले राम लछिमन मुनि संगा । गए जहां जगपावनि गंगा ॥ १ ॥

इहां से आगे यह कथा आख्येपक है परंतु सुंदर जान के कुछ पाठ सुधार के राखी है ॥ १ ॥

पुनि सुरसरि उतपति रघुराई । कौसिक पहिं पूछा सिरनाई ॥ २ ॥
कह मुनि प्रभु तवकुल एक राजा । नाम सगर तिहुंलोक बिराजा ॥ ३ ॥
तिह कै जुग भामिनि सुकुमारी । प्रथम केसनी सुमती प्यारी ॥ ४ ॥
सब प्रकार संपत गुन भ्राजा । सुत बिहून मन बिस्मै राजा ॥ ५ ॥
एक समै भामिनि द्वौ साथा । गए बनहिं तपहित रघुनाथा ॥ ६ ॥
सघन सफल तरु सुंदर नाना । तहं भृगुमुनि बस तेजनिधाना ॥ ७ ॥

दोहा—सहित नारि नृप मुदित मन, तहां बरष सत येक।
कीना तप भल देष भृगु, अस्तुति कीन्ह अनेक॥ २१२॥

राजा का उग्रतप देख कै भृगुमुनीश्वर ने राजा की प्रसंसा करी॥ २१२॥

कहि निज दुष प्रनाम नृप कीन्हा। दै असीस तब मुनि बर दीन्हा॥ १॥
नृप घरनी सन मुनि अस भाषा। मागहु बर जो जेहि अभिलाषा॥२॥
सुनिमुनि बचन सीसतिन्ह नावा। देहु नाथ तुम कहं जो भावा॥ २॥
एकहिं एक कह्यो सुत होना। दूसरहि सहससाठगुन लोना॥३॥
हरषित भई सुभग बर पाई। हाथ जोरि चरननि सिर नाई॥ ४॥
सहित भामिनिन अवधहिं आए। हरष सहित कछु दिवस बिहाए॥ ५॥
जानि घरी सुंदर सुषदाई। केसनि असमंजस भे आई॥ ६॥
सुमति प्रसव तुंबनी एक सोई। सो सुत प्रगट कहे मुनि जोई॥ ७॥

केशनी रानी का असमंजस सुत हुआ अरु सुमती नाम जो रानी थी तिस से एक तुंवरी प्रसूत भई तिस बीच साठ सहस्र बीज था सो एक एक बीज एक एक पुत्र हो गए॥ ७॥

हरष सहित दिए दान नरेसू। पूजे प्रभु गुर गौरि गनेसू॥ ८॥
घृत घट सुंदर बिबिध मंगाए। ते सब सुत नृपतिनमहुं नाए॥ ९॥

नाए नाम पावणे का॥ ९॥

दोहा—एहि विधि उपजे सकल सुत, पूजे सब मनकाम।
जाहिं दिवसनिसि हरष जुत, सुनहु राम घनस्याम॥ २१३॥

परिजन सब घर घरनि नरेसू। अति अनंद तन मिटा कलेसू॥ १॥
होहिं सुकाज सकल मन चीते। तिह सुषबसत बहुत दिन बीते॥ २॥
सरजूनदी अवध जो अहई। बिमल सलिल उत्तरतट बहई॥ ३॥
प्रजा लोक के बालक नाना। नित उठि तहां करैं असनाना॥ ४॥
असमंजस तहं तरनी आनी। तिन चढाइ बोरैं निज पानी॥ ५॥
भई प्रजा सब परम दुषारी। बालकबध सुन सुनहु षरारी॥ ६॥
सकल गये जहं बैठ नृपाला। बोले बचन नाइ पद भाला॥ ७॥

तुम नृप रच्छो प्रजा प्रतिपाला । सुत तुमार भा सबकर काला ॥ ८ ॥
तजब देस हम सुनहु नरेसू । बिना तजे नहिं मिटै कलेसू ॥ ९ ॥

दोहा—तब सुत कीन्हे पाप बहु, मारे बालकबृंद ।
तुम कहुं प्रान समान सो, हम कहुं ते मति मंद ॥ २१४ ॥

प्रजागिरा सुनि धीरज दीन्हा । सुतहिं देस ते बाहर कीन्हा ॥ १ ॥

असमंजश को वैराग भया तब उस ने जान्या पिता मुझ कों बन मों जान न देइगा ताते यह उपाउ किया नगर के बालकों कों कौतुक के मिस नाव पर चडावै अरु सरिता मों डोब देवै यह अनुचित देख कर पिता नें बनवास दिआ तब संपूरण बालकों को नदी ते निकासकर अपने अपने गृह मों पठाय दिआ अरु आप बन कों चला गया यह कथा पुराणांतर मो है ॥ १ ॥

तासु तनै जग बिदित प्रभाऊ । गुन निधि अंसमान तिहि नाऊ ॥२॥
बसत छूटै नृप के सो कैसे । फनि मनि मीन सलिल रह जैसे ॥३॥
गई प्रजा सब निज निज धामा । भे निसोच मनकहुं बिश्रामा ॥ ४ ॥
बहुरि नृपति मन कीन बिचारा । आइ भयो पन चौथ हमारा ॥ ५ ॥
द्विज मंत्री गुर सुतन बोलाए । हिमगिरि बिंध मध्य तब आए ॥ ६ ॥

हिमाचल अरु बिंध्याचल की जहां संध मिलती है तिस अस्थान मों जज्ञ निमित्त आए ॥ ६ ॥

रुचिर बेदिका एक बनाई । देषत बनै बरनि नहिं जाई ॥ ७ ॥
मष अरंभ छाड्यो तब तुरगा । बेगवंत देषिय जिमि उरगा ॥ ८ ॥

उरगा नाम इहां गरुड का समझना ॥ ८ ॥

दोहा—सुरपति सुनि मष दारुन, मन महं करि अनुमान ।
आइ तुरंग तब लीनेउ, मरम न कोऊ जान ॥ २१५ ॥

राषा जाइ कपिल मुनि पाहीं । कौन जान काहुक गम नाहीं ॥ १ ॥

आसंका । और इस्थान सभी छोड कर अश्व कों कपिलमुनि पास राखणा किमर्थ । उत्तर । इंद्र ने बिचारा लोकों ने अश्वहरणें में मेरे पर उनमान करना है तिस पर मैं ऐसे इस्थान मैं छपाऊं जहां किसू कों संभावना न होइ किंवा सुरपति त्रिकालज्ञ है यह जाना कपिलजी के पास यह अश्व छुडावन जावैंगे तब भस्म होवैंगे इस निमित्त उहां बांधा ॥ १

जुगवत रहे जु सुभट सयाना । लेत तुरंग तिनहूं नहिं जाना ॥ २ ॥
तिन सब आइ कहा नृप पाहीं । महाराज हम कहत डराहीं ॥ ३ ॥

लोन तुरंग को जान न कोई। सो हम करहिं जो आयसु होई ॥ ४ ॥
सुनत बचन नृप बिस्मै पावा। सकल सुतन कहं तुरत बोलावा ॥ ५ ॥
जाहु तुरंग तुम हेरहु जाई। सकल चले चरनन सिरनाई ॥ ६ ॥
सुरपति सम देषिय सब बीरा। सकल धनुर्धर अतिरन धीरा ॥ ७ ॥
तिनहि चलत धरनी अकुलाई। बलि पसु जीव भए सब आई ॥ ८ ॥

तिन कों महामूढ अरु अहंकारो जानकर किंबा इश्वरों के दोषी जान कर तिन के चलने से धरती व्याकुल भई अरु वह भो हरष कर ऐसे चले जैसे बलदान करने निमित्त कोऊ पशू कों ले चले अरु वह कूदता जाय ॥ ८ ॥

सुमन बाटिका उपबन बागा। सरित कूप बापिका तडागा ॥ ९ ॥
नगर गाउं मुनिगन थलनाना। गिरि कानन कंदर इस्थाना ॥ १० ॥

सोरठा—एहि बिधि सोधि न जाइ, आये सब मिलि भूप पहिं।
चरनन माथा नाइ, बोले प्रभु कहुं अश्व नहिं ॥ २१६ ॥

षोदहु महिसुत फेरि पठाए। चले सकल पूरब दिसि आये ॥ १ ॥
तिन के कर जो कुलिस समाना। जोजन भरि षोदहिं बलवाना ॥ २ ॥
देष अतुल बल बिबुध डेराने। मरिहैं कहि बिरंचि सनमाने ॥ ३ ॥
षोदत महिपताल सब आये। दिग्गज येक देषि सिरनाए ॥ ४ ॥
तेहि पूछा सब कथा सुनाये। बहुरि सकल दच्छिन दिसि आये ॥ ५ ॥
एहि बिधि पुनि दूसर गज देषा। अतिउतंग गुन बिमल बिसेषा ॥ ६ ॥
ताहू कहुं प्रनाम तिन्ह कीन्हे। चले षनत पच्छिम चित दीन्हे ॥ ७ ॥
तीसर देष प्रदच्छिन दीन्हा। पुनि उत्तर दिसि सोधन कीन्हा ॥ ८ ॥
दिग्गज चौथ निरषि सुष पाए। सकल कपिल मुनि पहं पुनि आए ॥ ९ ॥
षोदहि महि को पार न पावा। सोभा चहुंदिसि जलधि सुहावा ॥ १० ॥

दोहा—देषा आइ तुरंग तव, बांधा मुनिवर पास।
बोले बचन सकोप होइ, भा चह सब कर नास ॥ २१७ ॥

षोदा महि हम चारिहुं कोधा । रे रे दुष्ट बहुत तोहि सोधा ॥ १ ॥

कोधा नाम दिसा का ॥ १ ॥

कोउ कह चोर दोष बहु होई । एहि सम छलो अवर नहि कोई ॥ २ ॥
सुनत बचन मुनि चितवा जबहीं । भए भस्म छिन महुं सब तबहीं ॥ ३ ॥

तिन के जलने मो कारन कहते हैं ॥ ३ ॥

पावक जानि धरहिं कर प्रानी । जरहि न काहे ते अभिमानी ॥ ४ ॥
जानि गरल जे संग्रह करहीं । सुनहु राम ते काहे न मरहीं ॥ ५ ॥
क्रोध कीन बिनु करे बिचारा । भए सकल तिहि ते जरछारा ॥ ६ ॥
अंसुमान दूत नृपति बुलायो । नहिं आये सब तिन्हे पठायो ॥ ७ ॥

दोहा—दीन्हो नृपति असीस तब, अति हित वारहिं वार ।
बेगि फिरहु लै तुरंग सुत, मेरे प्रानअधार ॥ २१८ ॥

चल्यो नाइ पद सीस कुमारा । बिष्णुभक्त तिहुंपुर उजिआरा ॥ १ ॥
जहं कहुं निरष मुनिन के धामा । पूछि षबर कर दंडप्रनामा ॥ २ ॥
चलैं मुनिनसन पाइ असीसा । चहुं दिगजन कों नावत सीसा ॥ ३ ॥
एहिबिधि सोधतमगमहुं जाता । मिला गरुड सुमतीकर भ्राता ॥ ४ ॥

सुमती नाम जो राजा सगर की राणी थी सो कस्यप अरु बिनिता की बेटी थी ताते गरुड की भगिनी थी ॥ ४ ॥

चरण परत तब आसिष दयो । जरे सकल जेहि बिधि सो कह्यो ॥ ५ ॥
सुनतहि बचन सोच भा भारी । लै षगपति देषाइ थल बारी ॥ ६ ॥

जल का इस्थान दिखलाया ॥ ६ ॥

अंसुमान तहं मंजन कीन्हा । क्रम क्रम सबन तिलांजुल दीन्हा ॥७॥
बहुरि गरुड बोले सुनु ताता । मैं तोहि कहौं करौ एक बाता ॥८॥

सोरठा—करु सुत सोइ उपाइ, गंगा आवै अवनि जिहि ।
दरसन ते अघ जाइ, मज्जन कीन्हे परम सुष ॥ २१९ ॥

षष्ट सहस सब तरिहैं एहि बिधि । गंगा पाइ परम पावन निधि ॥ १ ॥

षष्टसहस कहिये साठसहस जो राजा के पुत्र हैं इस उपाव से सभ तरैंगे ॥ १ ॥

सुनि अस बचन हृदै महुं भाए । सहित गरुड मुनिवर पहं आये ॥ २ ॥
तब षगेस मुनि चरननि नाई । पूरब नृप कर कथा सुनाई ॥ ३ ॥
आसिष देइ तुरंग मुनि दीन्हा । हरषित हृदै गवन तब कीन्हा ॥ ४ ॥
नगर समीप गरुड पहुंचाई । गए भवन निज तब रघुराई ॥ ५ ॥
इहां तुरंग लै नृप सिर नाई । षष्टसहस मुनि कथा सुनाई ॥ ६ ॥
बिस्मै हरष बिबस नृप भयो । कीन्हा जग्य दान बहु दयो ॥ ७ ॥

पुत्रहुं का बध सुनकर बिस्मै अरु पौत्र का अश्व सहित आगमन देखकर हरषजुत राजा कहत भया ॥७॥

बहुबिधि नृपति राजसुनि कीन्हा । सकलप्रजा कहुंअति सुष दीन्हा ॥८॥

दोहा—अंसुमान कौं राज दै, आपु गयो सुरधाम ।
सुरसरि बिन आई तहां, लहै न मन बिस्राम ॥ २२० ॥

तासु तनै दिलीप नृप भयो । मन तपहित उत्तर दिस गयो ॥ १ ॥
अतिहि अगम तप कीन्ह नृपाला । भये कालबस गै कछुकाला ॥ २ ॥
कहिये कहं दिलीप प्रभुताई । सेव जासु बहु नृप रहि आई ॥ ३ ॥

दिलीप के सेवा में नृपों के रहने का हेतु यह राजसू जग्य बहुत किए किंवा दिलीप कों परमधरमात्मा मानकर तिन के व्यवहार कों देखने अरु सिख्या लैने निमित्त नृप आनकर सेवते थे ॥ ३ ॥

जुगवत जिहसुरपति नितरहई । महिमातेहिकबिकेहिबिधि कहई ॥४॥
भागीरथ अस सुत भए जासू । पितु सम नीति अधिक उर तासू ॥५॥

भागीरथ ने पिता के सदृश भी जग्यादिक धरम करे अरु सुरसरी के ल्यावन आदिक करम पिता से अधिक भी करे ॥ ५ ॥

तिनहि बोलि नृप दीने राजा । आपु चले उठि तप के काजा ॥ ६ ॥
मन महं करत पंथ अनुमाना । सुरसरि आव तजौं नतु प्राना ॥ ७ ॥
जिमिमनु तन दीने तिम देऊं । फिरि निज नगर कु नांव न लेऊं ॥ ८ ॥

जैसे अंसुमान ने तन त्यागा है तैसेहीं तप कर मैं भी त्यागोंगा ॥ ८ ॥

सोरठा—एहि बिधि करत बिचार, नृप कीना तब प्रबल तप ।
बीते कछु एक काल, देह तजी कोउ प्रगट नहिं ॥२२१॥

सुरसरि लागि तजे तनु भूपा । सो तजि मूढ पियहिं जल कूपा ॥ १ ॥
इहां भगीरथ मन अस भयो । पितु न आव बहु दिन चलिगयो ॥ २ ॥
काकुसथेक तनै तिहि रह्यो । दीना राज नीति बहु कह्यो ॥ ३ ॥
कहि प्राचीन कथा सुत पाहा । दीन असीस चल्यो नरनाहा ॥ ४ ॥
निकसत नगर सगुन भल पाये । अतिहि निबड बन तहं नृप आये ॥ ५ ॥
देषि भगीरथ बन सुष पावा । सुरसरि हित तप कों मनलावा ॥ ६ ॥
एकचरन द्वौभुजा उठाए । रवि सन्मुष चितवहिं मनुलाए ॥ ७ ॥
बरष सहस बीते एहि भाँती । जात न जाने दिनु अरु राती ॥ ८ ॥
देषि उग्र तप अंजल आए । बोले नृप सन बचन सुहाए ॥ ९ ॥
चाहौ नृप सो लेहु बरदाना । बोल्योनृप करि अजहिं प्रनामा ॥ १० ॥
जो मागौं सो जानत अहहू । मोहिसनमांगनप्रभुकिमिकहहू ॥ ११ ॥

सोरठा—तदपि कहौं प्रभु देहु, मम संतान की बृधबर ।
दूसर मागौं एहु, गंगा निधि पावौं परम ॥ २२२ ॥

ब्रह्माजी ने भगीरथ कों कहा बर मांग तब भगीरथ ने कहा जो हमरे मन का मनोरथ है सो तुम जानते हो परन्तु तुमारे कहणे से प्रतीति भया तुमारी इच्छा कोई अवर बर देने की भी है तिस निमित्त मैं मांगता हौं मेरी संतान वृद्ध होवै अर्थ यह बह चिर प्रजंत रहे अथवा मेरी कुल मों वृद्ध कहिये महान भाव संत राजा उपजै अरु द्वितीय बर देवो जो गंगा धरा पर आवे संतान का बर प्रथम जांचन मों भाव यह संतों अवतारों के कुल में उपजने का गंगाजी सें भी अधिक महातम है अथवा भागीरथ ने ऐसे जाना यह बात तो बिरंचि जानते हैं इनों ने देवापगा निमित्त तप किए हैं जौं मैं प्रथम एही बर मागौं अरु ब्रह्माजी शीघ्र हीं एवमस्तु कहि कर अंतरध्यान हो जायं तिस कर प्रथम और बर मांग कर पीछे एहु मांगा ॥ २२२ ॥

एवमस्तु कहि पुनि बिधि कहई । सुरसरि देउँ ताहि को सहई ॥१॥
छुटे जाहिं पुनि तुरत रसातल । फिरहि न बहुरि नृपति सुनिमातल॥२॥

मातल नाम मात लोक का ॥ २ ॥

तेहिते कहौं भूप तोहि पाहीं । अतिदयाल संकर मन माहीं ॥ ३ ॥

अति दयाल का भाव यह मेरे प्रतक्ष्य होवन सम उन के दरसन मों देर न लगेगी ॥ ३ ॥

सो सक राषि देव सरि आजू । उनहि जपे तब होइहि काजू ॥ ४ ॥

अस कहि विधि अंतरहित भए। बहुरि भगीरथ सिव तप ठए ॥ ५ ॥
विबुध बरष अंगुष्ट अधारा। बार बार सिव नाम उचारा ॥ ६ ॥
सिव दयालु प्रगटे तब आए। हाथ जोर नृप बिनै सुनाए ॥ ७ ॥
मैं राषव सुरसरि कहिं पासा। अस कहि संकर गै कैलासा ॥ ८ ॥

दोहा—उहां देवसरि सिवबचन, सुनि मन कृत हंकार।
जाउं रसातल सिव सहित, जात न लावौं बार ॥ २२३ ॥

अंतरजामि सिव रच्यो उपाई। निज सिर जटा सुअगम बनाई ॥ १ ॥
इहां भगीरथ अस्तुति कीन्हो। सुनि मृदुगिरा छाडि बिधि दीन्ही ॥ २ ॥
छूटे सोर भयो तब भारी। चकित देव अहि दिगगज चारी ॥ ३ ॥
सुरसरि आ सिवजटा समानी। एक वरष लौं रही भुलानी ॥ ४ ॥
कौतुक देष सकल सुर हरषे। कहि जै जयति सुमन तिन बरषे ॥ ५ ॥
बहुरि भगीरथ अस्तुति कीन्ही। सिव तब डारि बुंद एक दीन्ही ॥ ६ ॥
तेहि ते भई तीन तब धारा। गगन पताल एक महि सारा ॥ ७ ॥
गई जो नभ सो अघ की सांपिनी। देवन धरा नाम मंदाकिनि ॥ ८ ॥

पापों के नासकरने कों सरपिनी सम है ॥ ८ ॥

सोरठा—दूसर गई पताल, नाम प्रभावति हरन दुष।
तीसर गंग भुवाल, सब संतन कहुं करन सुष ॥ २२४ ॥

भुवाल कहिए भूमंडल विषे अपर सुगम ॥ २२४ ॥

आइ भगीरथ तब सिर नावा। बोलो सुरसरि बचन सुहावा ॥ १ ॥
बेगवंत नृप रथ तैं आनू। तुरंग मरुतसमसुभ्र जिमि भानू ॥ २ ॥
तिहि रथ चढि चलु नृप मम आगे। चलि हौं मैं तब पाछे लागे ॥ ३ ॥
सुनि नृप दिव्य तुरत रथ आना। चढ्यो हृदै सुमिरत भगवाना ॥ ४ ॥

भगवान के सुमिरण का भाव यह तुरंगादिकों के सवार होने काल मों निरविघ्न रहने निमित्त सुमिरण चाहीता है अथवा मेरे पितरों का उद्धार निर्विघ्न होवै ताते सुमिरन करा किंवा अतिउत्तम वस्तु के प्राप्ति होवणाकर जो चित कों अतिउत्साह भया है तहां हंकार की निवृत्ति हेतु सिमरन किया ॥ ४ ॥

चली अग्र करि नृप सुरसरी। देवन मुदित सुमन झर करी ॥ ५ ॥
चलत तेज कछु बरनि न जाई। टूटैं तरु गिरि सिला सुहाई ॥ ६ ॥
करहि कोलाहल जीव बहुभांती। कमठ नक्र झष नानाजाती ॥ ७ ॥
मज्जन करहिं देव तहं आई। मुनिगन सिद्ध रहैं सभ छाई ॥ ८ ॥

सोरठा—करहिं जप्प मुनि जोग, हरष हृदै नहिं जाइ कहि।
दरसन ते जग लोग, तरिहैं अस सब मुनि कहैं ॥ २२५ ॥

करहिं जु मज्जनतपमन लाइहि। तिहिकीमहिमाकहि न सिराइहि ॥१॥
स्यंदन पर नृप सोहहिं कैसे। तेजवंत रबि देषिय जैसे ॥ २ ॥
नाघत सैल सुहावन देसा। पाछे सुरसरि अग्र नरेसा ॥ ३ ॥
हरि दुआर समीप तब आए। षेत देषि सुरसरि मनभाए ॥ ४ ॥
तीरथहूं मन भा सुष भारी। आ प्रयाग पहुंची अघहारी ॥ ५ ॥
तहं मज्जन कीन्हे अघ जाई। बहुरि देवसरि कासी आई ॥ ६ ॥
सो सिवपुरी सहज सुषदाई। बरनि न जाइ मनोहरताई ॥ ७ ॥
और बिबिध बिध तीरथ जानी। गई तहां किम कहौं बषानी ॥ ८ ॥
मग लोगन कहुं करत सनाथा। जाइ चली एहि बिधि रघुनाथा ॥ ९ ॥

दोहा—मिलि बहोरि उदधिहिं गई, उदधि हृदै सुषमान।
लग्यो सराहन भगीरथहिं, तुम सम धन्य न आन ॥ २२६ ॥

कीन्हि अस जस करै न कोई। तप बल महिमा कस नहिं होई ॥ १ ॥
सगर तनै तारे ततकाला। हरषवंत तब भए भुआला ॥ २ ॥
अवरहु रहे जु कुलमहुं कोऊ। तिन के संग तरे सब ओऊ ॥ ३ ॥
सकल सुरनसंग तहां बिधाता। नृपसन आइ कही अस बाता ॥ ४ ॥
धन्य भगीरथ जग जस जयो। तुम समान नृप और न भयो ॥ ५ ॥
आपन सत्य प्रतग्याकयो। संमत बेद जियन सुष दयो ॥ ६ ॥
गंगासागर सब कोउ कहहीं। अघ उलूक देषत रबि डरहीं ॥ ७ ॥

भागीरथी सुनाम कहै हैं। सुरमुनि नाग सिद्ध जस गैहैं ॥ ८ ॥
अस कहि बिधिनिज लोकहिंआए। इहां भगीरथ अति सुषपाए ॥ ९ ॥
छंद—पायो अमित सुष बहुरि पूजा सुरसरिहिं मन लाइ कै।
तब दीन आसिष देवसरि नृप भवन गे सुषपाइ कै ॥
एहि भांति सुनि गंगा कथा तब राम रिषि चरनहि नये।
कह दास तुलसी रामलषनहिं महामुनि आसिष दए ॥
दोहा—कौसिक आसिष सुधा सम, पाइ हरष रघुराज।
प्रभु संसय सब दूमि गए, लवा निरषि जिमि बाज ॥ २२६ ॥
आख्येपक कथा इहां रही ॥ २२६ ॥

गाधिसून सबकथा सुनाई। जेहि प्रकार सुरसरि महि आई ॥ २ ॥
तब प्रभु ऋषिन्ह समेत नहाए। बिबिध दान महिदेवन्हि पाए ॥ ३ ॥
हरषि चले मुनिबृंद सहाया। बेगि बिदेहनगर निअराया ॥ ४ ॥
पुररम्यता राम जब देषो। हरषे अनुज समेत बिसेषी ॥ ५ ॥
अनुज सहित प्रभों के हरषित होने का आसा यह जो इहां हमारीसा सकतां हैं अथवा जनक कि प्रभावकर इहां अनेक संत हैं ताते अपना प्यारापुर जान कै हरषे किंवा पुर की सरब रचना अति बिचित्र देखकर अनंद अधिक भया सोई कहते हैं ॥ ५ ॥

बापी कूप सरित सर नाना। सलिल सुधासम मनिसोपाना ॥ ६ ॥
सोपान नाम पउडीवों का अपर सपष्ट ॥ ६ ॥

गुंजत मंजु मत्त रस भृंगा। कूजत कल बहुबरन बिहंगा ॥ ७ ॥
रस पर मत्त होकर मनोहर भ्रमर गुंजारते हैं कोकिलादिक पंछी कूंजते हैं ॥ ७ ॥

बरन बरन बिकसे बनजाता। त्रिबिध समीर सदा सुषदाता ॥ ८ ॥
अनेकों रंगों के कमल फूले हैं अरु सीतल मंद सुगंधत बायु चलता है ॥ ८ ॥

दोहा—सुमनबाटिका बाग बन, बिपुल बिहंग निवास।
फूलत फलत सुपल्लवित, सोहत पुर चहुंपास ॥ २२७ ॥
जो केवल पुष्प मैं सो सुमनबाटिका जो मेवे के वृक्षोंवाले नगर के समीप लगाए हुये सो बाग जो दूर अरु कृतम सो बन तिनो में फूल फलादिक रुचिर हैं अरु खग बोलतेहुये सोभते हैं जद्यपि श्रीरामचंद्रजी तो अबी नगर से बाहर हैं परंतु प्रसंगकर गुसांईजी नगर के भीतर का भी बरनन करते हैं ॥ २२७ ॥

बनै न बरनत नगरनिकाई। जहां जाइ मन तहां लोभाई॥ १॥

टिप्पणी—मनबरणनकरनेवाला है वह जहां जाता है वहां लुभाजाता है इस से वर्णन नहीं हो सक्ता और नगर निकाई अतिविशेषण है अर्थात् कोई नगर किसी वस्तु का हो यह निज निकाई का नगर है।

चारु बजार बिचित्र अटारी। मनिमय जनु बिधि सुकरसुधारी॥ २॥

मानो बिध ने आपने हाथो से संवारिया हैं एह उत्प्रेक्षा अति उस्तुत मो है॥ २॥

धनिक बनिक बर धनद समाना। बैठे सकल बस्तु लै नाना॥ ३॥

धनवान जो वनिक हैं जिन का धन कुबेर के सदृश है सो हाटों पर अनेक पदारथ लिए बैठे हैं॥३॥

चौहट सुंदर गली सोहाई। संतत रहहिं सुगंध सिचाई॥ ४॥

चौरस्त्यों बजारों अरु बीथियों की शुद्धता ऐसी जाननो जो स्वयंबरकर भई है राजा के प्रतापकर निरंतर सुगंधता सों भीगीयां रहतीयां है॥ ४॥

मंगलमय मंदिर सब केरे। चित्रित जनु रतिनाथ चितेरे॥ ५॥

पुर नर नारि सुभग सुचि संता। धरमसील ग्यानी गुनवंता॥ ६॥

टिप्पणी—पुर के नर नारी सुन्दर ऐश्वर्य्य और पवित्र शान्त रस से युक्त हैं॥ ६॥

अति अनूप जहँ जनक निवासू। बिथकहिंबिबुधबिलोकिबिलासू॥ ७॥

जनक के मंदिर कों देख कर देवता भी विशेष कर थकित होते हैं॥ ७॥

होत चकित चित कोट बिलोकी। सकल भुवन सोभा जनु रोकी॥ ८॥

चित मों चक्रत होते हैं देवता कोट देख कर जिस कोट ने मानो सरब मंदिरों की सोभा रोक लोनी है प्रयोजन यह सकल मंदिरों से कोट सुन्दर है वा मानो उस गढ नें सरब ब्रह्मांड की सोभा अपने मों धारी है॥ ८॥

दोहा—धवल धाम मनि पुरट पट, सुघटित नाना भांति।
सियनिवास सुंदर सदन, सोभाकिमिकहिजाति॥ २२८॥

मनिवों के श्वेत धाम हैं अरु स्वर्ण के किंवाड सुन्दर रीति से घडेहुये हैं साख्यात सीता की जहां निवास है तिस मंदिर की शोभा कैसे कही जाइ॥ २२८॥

सुभग द्वार सब कुलिस कपाटा। भूर भीर नट मागध भाटा॥ १॥

सुभग कहिये सुन्दर हैं मंदिरों के द्वार मुख्य तीनों को बज्र सम अति दृढकपाट लगेहुए हैं अरु तिन के आगे जांचकोंकी भीर होइरही है॥ १॥ टिप्पण—पाठांतर=भूपभीर। कुलिश=हीरा। भूप=राजा। नट=नाचनेवाले। मागध=बंश के प्रशंसा करनेवाले। भाटा=भाट इन सब कों भीड़ लग रही थी।

बनी बिसाल बाजिगजसाला । हय गय रथ संकुल सब काला ॥ २ ॥

इस कथन कर राजा की अतिसमृद्धि लखाई ॥२॥ टिप्पणी—घोड़ों और हाथियों और रथों का समूह सब काल रहता है ।

सूर सचिव सेनप बहुतेरे । नृपगृह सरिस सदन सब केरे ॥ ३ ॥

इस कथन कर नृप की अतिसुहृदता अरु उदारता लखाई ॥ ३ ॥

पुर बाहिर सर सरित समोपा । उतरे जहं तहं बिपुल महीपा ॥ ४ ॥

इस कथन कर स्वयंबर का स्वरूप दिखाया ॥ ४ ॥

देषि अनूप एक अमराई । सब सुपास सब भांति सुहाई ॥ ५ ॥

जहां सब सुपास कहिये सब सुख हैं अर्थ यह सुन्दर मंदिर है सीतल अरु मिष्टजल हैं सुन्दर छाया हैं मनोहर पुष्प हैं फुहारे छूटते हैं सब भांति सुहाई कहिये चारो ओर बडीआं सबजीआं हैं निकट कोऊ मारग नहीं ताते धूर से रहया है निकट किसी का डेरा नहीं ताते ऊंचे शब्द से अरु मलिनता से रहित है नगर से अत्यंत दूर नहीं अरु अति निकट भी नहीं ऐसा सुन्दर रसाल बाग देख कर ॥ ५ ॥

कौसिक कहा मोर मनु माना । इहां रहिय रघुबीर सुजाना ॥ ६ ॥

सुजान कहिये तुम सुष्टज्ञाता हो तत्व यह राज्यों सों दूर उतरनाहीं उचित है किंवा तुमारे पिता के द्वार पर हम तुमारे दरसन के लोभ निमित्त आपही चले गए थे अरु इहां बिदेह से इतर और राजा बहुते हैं राजा के आये बिना नगर सों जाना जोग्य नहीं किंवा तुम रघुबीर हो ताते कुलकर भी मान्य हो नृप के आगमन बिना नगर प्रवेश सों तुमारा मान नहीं रहता अरु इनों बातों को तुम समुझते हो ताते सुजान हो ॥ ६ ॥

भलेहि नाथ कहि कृपानिकेता । उतरे तहं मुनिबृंद समेता ॥ ७ ॥

हेनाथ बहुत भला ऐसे कहिकर मुनीश्वरों संजुत उहां उतरे कृपानिकेत विशेषण का भाव यह विश्वामित्रजी को बडाई देने निमित्त तिन को नाथ संबोधन दे के तिन की आज्ञा प्रमान करी ॥ ७ ॥

बिश्वामित्र महामुनि आए । समाचार मिथिलापति पाए ॥ ८ ॥

विश्वामित्र को महामुनि कहणे का भाव यह इसी देह में छत्री से ब्राह्मण भये हैं किंवा जिन के साथ श्रीरामचंद्र हैं ते सब से महान हैं । इहां मिथलापति विशेषण इस निमित्त जद्यपि बिदेह की जथारथ दृष्टि में स्वामी सेवक भाव नहीं परंतु व्यवहार दृष्टि मो यह मिथलापुरी के पति हैं अरु वह इन के पुर मों आए हैं ताते ॥ ८ ॥

दोहा—संग सचिव सुचि भूरिभट, भूसुर बर गुरु ज्ञाति ।
चले मिलन मुनिनायकहिं, मुदित राउ एहि भाँति ॥ २२९ ॥

जद्यपि रिषीश्वर का दरशन करन चले हैं तथापि किसी राजा का हों मेल होइजावे अथवा और अनेक व्यवहार है कोई मंत्र पूछना होइ ताते पवित्र सचिव संगलिए अरु कई दुष्टराजे भी इहां आए हुए हैं कदाचित

उन के मन में आवै राजा के साथ मल्लोग हैं इस को बांध कर जानकी खोस लेजावैं ताते संग बहुत सुभट लिए अरु मुनीश्वरों के सनमान निमित्त भूसुरवर लिए अरु गुरभक्तता के निमित्त पुनः बिश्वामित्रजी के सनमान निमित्त भी ज्ञात गुर कहिये कुलसंबंधी गुर सतानंद जी लिये आते यह गौतमजी के पुत्र हैं इस प्रकार संतहूं के दरसन करन के हरषकर पूरन नृप कौशिक ढिग आया ॥ २२८ ॥

कीन्ह प्रनामु चरन धरि माथा । दीन्हि असीस मुदित मुनिनाथा ॥१॥

मुनिवर कों मोद इस कर धन्य नृप है जिस के दृष्टि में जगत सत्ताही नहीं तिस ने कैसी रीति से रिषों का मान किया है किंबा हम के मनोरथ पूरणकारियों कों हम संग ल्याये हैं ताते प्रसन्यता ॥१॥

बिप्रबृंद सब सादर बंदे । जानि भाग्य बड राउ अनंदे ॥ २ ॥

कुसल प्रश्न कहि बारं बारा । बिश्वामित्र नृपहिं बैठारा ॥ ३ ॥

बारंबार कुशल प्रश्न किये नृप के सनमानहेतु सो राजा दृष्टि कर सनमान अरु ज्ञानमान जानकर अति सनमान ॥ ३ ॥

तेहि अवसर आए दो भाई । गए रहे देषन फुलवाई ॥ ४ ॥

स्याम गौर मृदु बयस किसोरा । लोचन सुषद बिश्वचितचोरा ॥ ५ ॥

स्याम गौर जिन के बरन हैं मृदु जिन का तन है किसोर कहिये षोडस बरष की जिन की अवस्था है जिन का दरसन नेत्रों कों सुखदायक अरु सभ संसार के मन कों भी हरता है किंबा नैन भगवान के लोगों कों सरब भांति के सुखकारक अरु मनहारक हैं ॥ ५ ॥

उठे सकल जब रघुपति आए । बिश्वामित्र निकट बैठाए ॥ ६ ॥

मुनीश्वरों का उठना बिश्वामित्रजी की इच्छा कर अरु जनक के लोगों का उठना मुनों को ओर देख कर अरु तेज भी न सहाया तब विश्वामित्र जी ने रामचंद्र कों समीप बैठाया ॥ ६ ॥

भे सब सुषी देषि दोभ्राता । बारि बिलोचन पुलकित गाता ॥ ७ ॥

प्रभों का दरसन कर के जो सभों को हर्ष भया है ताते अस्रुपात अरु रोमांच हूं आये ॥ ७ ॥

मूरति मधुर मनोहर देषी । भयेउ बिदेहु बिदेहु बिसेषी ॥ ८ ॥

मधुर मूरति कहिए जो बाह्य करनन कों प्रिय मनोहर कहिये जो अंतःकरण कों प्यारी तिस कों देख कै नृप परम बिदेह भए अर्थ यह ज्ञान के बल कर तौ बिदेह हैं ही अब प्रेम के बल कर विशेष बिदेह भये चौपाई के पद षोडस ॥ ८ ॥ टिप्पणी—बिदेह देहाभास रहित और उस मे बिदेह होना देही हो जाना है।

दोहा—प्रेममगन मनु जानि नृप, करि बिबेकु धरि धीर ।
बोले मुनिपद नाइ सिर, गदगद गिरा गंभीर ॥ २३० ॥

भगवान के दरशन कर जब राजा ने मन कों प्रेम मो बिहबल देख्या तब विवेक के बल सों धीरज भी धारया तथापि प्रेम रुकी नहीं तब गदगद कंठ हुआ गंभीर स्वर कर मुनीश्वर सों पूछने लगा ॥२३०॥

कहो नाथ सुंदर द्वौ बालक। मुनिकुलतिलक कि नृपकुलपालक॥१॥

हे नाथ एह जो दोनो सुंदर बालक हैं सो किसू मुनि के सुत हैं वा काहू राजा के पुत्र हैं इहां प्रभों विषे बालक पद सनेह का द्योतक है जातें पिता पुत्र कों बालकहीं जानते अरु कहते हैं अरु ससुरा भी पिता के समही कहा है मुनि के साथ तिलक अरु नृप के साथ पालक पद इस निमित्त दिया है जैसे तिलक मस्तक पर सोभता है तैसे जो यह मुनि पुत्र हैं तौ मुनों के शिरोमनि होवहिंगे अरु जौ राजकुमार हैं तौ नृपों के सरब बंसों कों पालैंगे ओर अनुमान कहता है॥१॥

ब्रह्म जो निगम नेति कहि गावा। उभय भेष धरिकै सो आवा॥२॥

यह मुनिकर जो मुनि कहैं हे राजन रिषों के संगकर मुनि पुत्र अरु शास्त्रादिकों लख्यणोकर राजकुमार यह अनुमान तौ बनते थे तुम ने इन को सच्चिदानंद कैसे जान्या तिस पर नृप कहता है॥२॥

सहज बिराग रूप मन मोरा। थकित होत जिमि चंद चकोरा॥३॥

इनहिं बिलोकत अति अनुरागा। बरबस ब्रह्मसुखहिं मन त्यागा॥४॥

मेरा मन पदारथों विषे रंचक सनेह नहीं करता अरु इन कों देखकर ऐसा आशक्त हुआ है बलातकार सें निरविकल्प कों छोडकर इन के स्वरूप मेंलागा है इसते मैं नें इन कों ब्रह्म निरणे किया है॥४॥

तातें प्रभु पूछौं सतिभाऊ। कहो नाथ जनि करहु दुराऊ॥५॥

मुनीश्वर सों पूछने मो नृप का आसै यह लखीता है जैसे कोऊ जवांहरी अमोलरतन कों आप परखता है तौ आपनी बुद्धि की परिख्या निमित्त और पारख सें भी निरणे करावता है तब भूप को गिरा सुनकर॥५॥

कह मुनि बिहँसि कह्यो नृप नीका। बचन तुह्मार न होइ अलीका।६॥

मुनीश्वर ने मुसकाय के कहा हे राजन तुम ने बहुत स्रेष्ट कहा है तुमारा बचन कबो अलीका कहिये मिथ्या नहीं होता तत्व यह ब्रह्महो हैं मुसकान का भाव यह जैसे कोई दुरलभ वस्तु होवै किसी पास छिपी हुई अरु कोई और देखकर उस के स्वरूप कों ततख्यणहीं पछान लेवै तब वह प्रथम पुरुष उस की बुद्धि पर प्रसन्न होता है तैसे रघुनाथजी के वास्तव स्वरूप के पछानने कर नृप पर मुनिश्वर प्रसन्न भए वा भावी कों बिचारकर हंसें जो तुम तो हमारे से पूछते हो अरु अबी तुमारे इन के बडे संजोग अरु आनंद होने हैं अब नृप की अरु अपनी पुरबोक्त कों पुष्ट करते हुए कहते हैं॥६॥

एहि प्रिय सबहिं जहाँ लगि प्रानी। मन मुसकाहिं राम सुनि बानी॥७॥

हे राजन यह सरब भूतों कों प्यारे हैं तत्व यह सरब के आत्मा हैं तब प्रभु मुसकाए जो कैसी गोप्य रीति से मुनीश्वर नें मेरा जथार्थ स्वरूप राजा कों लखाया है अरु हांस प्रगट न किया जाते गंभीरता मो दोष आवता है तब विश्वामित्रजी रघुनाथजी का व्यवहारक स्वरूप कहणे लागे॥७॥

रघुकुलमनि दसरथ के जाये । मम हित लागि नरेस पठाये ॥ ८ ॥

रघुबंशियों के शिरोमणि हैं वा राघवों का शिरोमनि जो दशरथ है ताके पुत्र हैं अरु मेरा यज्ञ पूरण करणे हेतु राजा ने भेजे थे ॥ ८ ॥

दोहा—राम लषन दोउ बंधु बर, रूप सील बल धाम ।
मष राषेउ सब साषि जग, जीति असुर संग्राम ॥ २३१ ॥

बडे का नाम रामचंद्र है लघु का नाम लख्यमन है दोऊ भात रूप शील अरु बल का पुंज हैं जिनो ने सुबाहु आदिकों कों मार कर मेरा मख राख्या है मैं यह बात इन के उतकर्ष निमित्त मिथ्या नहीं कहता इस बात के साखी अनेक लोक हैं ॥ २३१ ॥ टिप्पणी—रौशनलाल ने निम्न लिखित अर्थ किया है । यज्ञ को रक्खा और सारे जगत की साख को रक्खा इन्हों ने असुरों को संग्राम में ।

मुनि तव चरन देषि कह राऊ । कहि न सकौं निज पुन्य प्रभाऊ ॥ १ ॥

यह सुन कर राजा कहता है हे मुनिवर मैं अपने पुन्यों का प्रभाव कहि नहीं सकता जिनो कर तुमारे चरणारबिंद देखे हैं ॥ १ ॥

सुंदर स्याम गौर दोउ भ्राता । आनंदहू के आनंददाता ॥ २ ॥
इन्हकै प्रीति परस्पर पावनि । कहि न जाइ मन भाव सुहावनि ॥ ३ ॥

हे मुनीश्वर यह दोनो भातों की जैसी आपस मो निरदोष प्रीति है अरु धरमादिकों के पालन मो जैसे इन के भाव हैं सो कथन मों नहीं आवते ॥ ३ ॥

सुनहु नाथ कह मुदित बिदेहू । ब्रह्म जीव इव सहज सनेहू ॥ ४ ॥

तब प्रसन्नता पूरवक नृप कहता है हे नाथ इन दोनों भातो का ब्रह्म अरु जीव की न्याईं अकृतम प्रेम है राजा कों प्रसन्नता नीकै दृष्टांत फुरन कर भई ॥ ४ ॥

पुनि पुनि प्रभुहिं चितव नरनाहू । पुलक गात उर अधिक उछाहू ॥ ५ ॥

पुनः पुनः देखना प्रेम की अधिकता कर किंबा इन के अंगो की ओर देखता है पुनः जानकी के अंगो की ओर देखकर आनंद उपजता है जो यह भी सीतावत सर्वांग सुन्दर हैं किंवा पुनः पुनः देखने से मानो बिनै करता है मेरा मनोरथ सफल करो ॥ ५ ॥

मुनिहिं प्रसंसि नाइ पद सीसा । चलेउ लवाइ नगर अवनीसा ॥ ६ ॥

मुनीश्वर की अस्तुति करी तुम धन्य हो जिन की कृपा कर मैं इन की दरसन किया है इत्यादिक वाक्य कहि कर पुर भीतर तिनकों ल्याया ॥ ६ ॥

सुंदर सदन सुषद सबकाला । तहां बास लै दीन्ह भुआला ॥ ७ ॥

सकल रितों में जो सुखदायक मंदिर हैं तिस मों मुनीश्वर के निवास देने कर राजा की अधिक

रुचि सूची जो केवलसीत निवारक धाम मैं बिस्राम देता तौ सीतकाल मात्र राखन मों सद्दा जानीती अथवा वह सरदरितु थी जिस मो कबी सीत कबो उस्नता की चाह होती है ताते सरबकाल सुखद डेरा दिया ॥ ७ ॥

करि पूजा सब बिधि सेवकाई । गयेउ राउ गृह बिदा कराई ॥ ८ ॥

पूजा कहिये पाद्यरघादिक पुनः किए अरु असनबसन सैनादिक सकल द्रव्य अरु सेवक भी सौंप कर आप नृप गृह कों गया ॥ ८ ॥

दोहा—ऋषयसंग रघुबंसमनि, करि भोजन बिश्राम ।
बैठे प्रभु भ्राता सहित, दिवस रहा भरिजाम ॥ २३२ ॥

रिषों समेत प्रभों ने भोजन करकै सैनादिक करे तदनंतर उठकै दोनों भ्रात बैठे तब लों पहर भर दिन रहा जाम भर दिन कथन का आसै यह कौतुक देखणे का समा चतुर्थ जामही होता है ॥ २३२ ॥

लषनहृदै लालसा बिसेषी । जाइ जनकपुर आइअ देषी ॥ १ ॥

लछ्यमनजी कों जनकपुर देखन की विशेष लालसा है नवीन पुर देखन मों लालसा थी अरु पुर के लोक जो सांतातमा सुने हैं ताते तिन के देखने की विशेष इच्छा भई ॥ १ ॥

प्रभुभै बहुरि मुनिहि सकुचाहीं । प्रगट न कहहीं मनहिं मुसुकाहीं ॥ २ ॥

प्रभों का भै है अरु मुनीश्वर से भी संकोच करते हैं जो यह जानैंगे बाल सुभाव हैं तद्यपि अति-लालसा कों मुसकान द्वारा प्रगट करते हैं ॥ २ ॥

राम अनुजमन को गति जानी । भगत बछलता हिय हुलसानी ॥ ३ ॥

अंतरजामता कर अरु लछ्यमनजी के मंद मुसुकान द्वारा भी उन के रिदै कों समुझ कर प्रभों के भक्तवत्सलता में हुलासहुआ जो लछ्यमनजी की प्रसन्यता मुझे करतव्य है किंबा यह जनकपुर है इहां के निवासीलोग भी सभी मेरे भक्त हैं ताते दरसन देकर उन की अभिलाष पूरण कर आवैं इस कर भक्तवत्सलता कही ॥ ३ ॥

परम बिनीत सकुचि मुसुकाई । बोले गुरुअनुसासन पाई ॥ ४ ॥

परम बिनीत जो श्रीरामचंद्र हैं तिन का रिदा सकुचेआ संकोच सौमित्रजी की ओर से जो एह बांछित की अप्राप्ति कर अप्रसन्न न होवैं अथवा गुरों की वोर सें सकुचे हम गुरों कों किस भांति कहैं हम देखन जाते हैं तब दृग नीचे कर कै मुसुकाय ता समै मुनीश्वर ने जान्या अरु पूछा क्या कहते हो तब गुरों की आज्ञा पाइ कर बोले ॥ ४ ॥

नाथ लषन पुरु देषन चहहीं । प्रभुसकोच डर प्रगट न कहहीं ॥ ५ ॥
जौं राउर आयेसु मैं पावौं । नगर देषाइ तुरत लैआवौं ॥ ६ ॥

हे नाथ सौमित्र जी की इच्छा जनकपुर देखन मों है परंतु प्रभों के भै कर सकुचते हैं ताते प्रगट नहीं कहते ॥५॥ इस कथन मों भ्रात स्नेह अरु गुरुभक्ति पुनः पुरदेखन मों अपनो भी सूची ॥ ६ ॥

सुनि मुनीस कह बचन सप्रीती। कस न राम तुम्ह राषहु नीती॥ ७॥

श्रीरामचंद्रजी के बचन सुन कर मुनीश्वर प्रीति संजुत बोल्या हे प्रभो तुम ऐसी नीति क्यों न राखो प्रीति संजुत बोलना रघुनाथजी की नम्रता देख कर किंवा तिन का ऐश्वर्य बिचार कर॥ ७॥

धरमसेतुपालक तुम्ह ताता। प्रेम बिबस सेवकसुषदाता॥ ८॥

धरमसेतु पालक हो ताते मुनीश्वरों का मान राखना तुम कों जोग्य है प्रेम के बस हो पर सेवकों के सुखदाता हो ताते हम सेवकों कौ मानसहित सुख देते हो किंवा लक्ष्मनजी यह नगर के लोक भी सभ सेवक हैं इन के बांछित सिद्ध कर इन को सुख देयोगे ताते॥ ८॥

दोहा—जाइ देषि आवहु नगर, सुषनिधान दौ भाइ।
करहु नयन सब के सफल, सुंदर बदन दिषाइ॥ २३३॥

देखना अपूर्व वस्तु का होता है सो तो संपूरण ब्रह्मांड तुमारी माया कर रचित है परंतु तुमारा औतार लोकों के कृतार्थ निमित्त है ताते इस नगर के लोगों के नेत्रों को भी अपने सुन्दर मुख देखाय कर सफल कर आवो॥ २३३॥

मुनिपद कमल बंदि दोउ भ्राता। चले लोकलोचनसुषदाता॥ १॥

मरजाद रावने निमित्त मुनिवर के पगों पर प्रनाम कर के सर्वों के सुखदाता जो दो भ्राता हैं सो पुर कों चले॥ १॥

बालकबृंद देषि अति सोभा। लगे संग लोचन मनु लोभा॥ २॥

अब तासमै का ध्यान कहते हैं॥ २॥

पीत बसन परिकर कटि भाथा। चारु चाप बर सोभित हाथा॥ ३॥

पीतबसन है भगवान के ध्यान में कहे हैं अपर उहां परिकर कहिए जिस सों कमर बांधिए अपर सपष्ट॥ ३॥

तन अनुहरत सुचंदन षोरी। स्यामल गौर मनोहर जोरी॥ ४॥

स्याम गौर जो सुंदर तन हैं तिन के अनुसारहीं चंदन के तिलक किए हैं स्यामल तन पर पीत तिलक किया है गौर तन पर अरुन तिलक किया है॥ ४॥

केहरि कंधर बाहु बिसाला। उर अतिरुचिर नागमनिमाला॥ ५॥

नागमनि कहिये हाथीयों के मस्तकों से मोती निकसे हैं तिन की माला॥ ५॥

सुभग सोन सरसीरुह लोचन। बदन मयंक ताप त्रय मोचन॥ ६॥

सुंदर अरुन कमलोंवत नेत्र हैं तीनों तापों का खंडक ससीसम मुख है अथवा तीनों कहिए पामर जज्ञासू ज्ञानी इनों का ताप खंडक है अर्थ यह अज्ञानियों को जिज्ञासा जज्ञासियों को ज्ञान ज्ञानियों को जीवन मुक्ति की दृढता करावता है॥ ६॥

कानन कनक फूल छबि देहीं । चितवत चितहिं चोरि जनु लेहीं ॥ ७ ॥
कानों विषे करनफूल सोभते हैं सो मानों देखनहारे के चित कों चोराइ लेते हैं ॥ ७ ॥

चितवनि चारु भृकुटि बर बाँकी । तिलक रेष सोभा जनु चाँकी ॥ ८ ॥
प्रभों के देखने की रीति परम सुंदर है अरु तिलक की रेखा तो मानों सोभा को चांकी कहिये छापा लगाया है अर्थ यह सकल सोभा माथेही मैं रोक राखो है ॥ ८ ॥

दोहा—रुचिर चौतनी सुभग सिर, मेचक कुंचित केस ।
नष सिष सुंदर बंधु दोउ, सोभा सकल सुदेस ॥ २३४ ॥
सुंदर चौतनी कहिए रंगीन तीरा शिर पर है अरु मेचक कहिये स्याम अरु कुंचित कहिए कुंडल्यारे केश हैं अरु सरब अंगों की शोभा जथोचित बनी हुई हैं अब नगर मों प्रभो कों देखकर जुवतियों के परस्पर कथन पूरबक दैव चै सें रघुनाथजी की अधिकता युक्ति पूरबक लखावते हैं ॥ २३४ ॥

देषन नगरु भूपसुत आए । समाचार पुरबासिन्ह पाए ॥ १ ॥
धाए धाम काम सब त्यागे । मनहु रंक निधि लूटन लागे ॥ २ ॥
निरषि सहज सुंदर दो भाई । होंहि सुषी लोचन फल पाई ॥ ३ ॥
सहज सुंदर कहिए जिनो के तनो की भूषणादिकोंकर कुछ विशेष सुंदरता नहीं तिनों को देखकर नेत्रों का फल जानते हैं ॥ ३ ॥

जुबतीं भवन झरोषन्हि लागी । निरषहिं रामरूप अनुरागी ॥ ४ ॥
कहहिं परस्पर बचन सप्रीती । सषि इन्ह कोटि कामछबि जीती ॥ ५ ॥
प्रीति संजुत कहतीआं हैं हे सखीवा इनो ने अनंतों मदनों की छबि हरि लीने हैं जातें ॥ ५ ॥

सुर नर असुर नागमुनि मांहीं । सोभा असि कहुं सुनियत नाहीं ॥ ६ ॥
जौं कोऊ कहै तुम कहतीआं हो सुरादिकों में ऐसा कोऊ नहीं परंतु ब्रह्मा विष्णु शिव परम सुंदर हैं तिस पर कहतीआं हैं ॥ ६ ॥

बिष्णु चारिभुज बिधिमुषचारी । बिकट भेष मुषपंचपुरारी ॥ ७ ॥
बिष्णुजी परम सुंदर हैं परंतु भुजा चारि है तात्पर्य यह किसू के हाथ मों एक छठी अंगली होती है तब हाथ सुंदर नहीं लागता अरु जहां दोए भुजा अधिक होवैं सो दुभुज शरीर जैसी सोभा कैसे पावैं अरु शरीर के प्रमान सें किसू का शिर अथवा नाक भारी होता है तब शरीरकी शोभा न्यून हो जाती है अरु जहां एक शरीर पर चार शिर हुये तो एक शिर जैसी आभा कैसे होइ पुनः शरीर सुंदर भी होवैं परंतु वस्त्र मलीन होवैं तब सुखमा पूरन नहीं रहती अरु जहां बाघंबर सर्प बिभूत मुंडमाला अरु पांच शिर होवैं सो पीतांबरों अरु भूषणो संजुक्त शरीर जैसी छबि कब पावता है ॥ ७ ॥

अपर देव अस कोऊ नाही । यह छबि सषी पटतरिय जाही ॥ ८ ॥

जिन की समता कों यह तीनो ईश्वर भी न पावैं तब और देवता तो इन के सम भी कोई नहीं हे सखीवो रघुनाथजी की तुल्यता जिन कों दीजिए ॥ ८ ॥

दोहा—बयकिसोर सुषमा सदन, स्याम गौर सुषधाम ।
अंग अंग पर वारिअहि, कोटि कोटि सत काम ॥ २३५ ॥

षोडश बरष की अवस्था है अरु शोभा के मंदिर हैं स्याम गौर जिन के बरन हैं अरु सुखों के मदन हैं जिन के एक एक अंग की छबि पर कोटि कोटि मनोज वारियैं अब प्रभों की अनूपमता कथन पूरबक पिता नामादिक भेद कहतीयां हैं ॥ २३५ ॥

कहहु सषी अस को तनुधारी । जो न मोह अस रूप निहारी ॥ १ ॥
कोउ सप्रेम बोली मृदुबानी । जो मै सुना सो सुनहु सयानी ॥ २ ॥
ए दोउ नृप दसरथ के ढोटा । बाल मरालन्हि के कल जोटा ॥ ३ ॥
मुनिकौसिकमष के रषवारे । जिन्ह रन अजिर निसाचर मारे ॥ ४ ॥

बिश्वामित्रजी के जज्ञ की रख्या निमित्त जिनो ने रणरूपी अजिर कहिए अंगन बिषे राख्यस मारे हैं अंगन कथन का भाव यह तिन के बध मों कुछ जतन नहीं हुआ बालक्रीडावत मार डारे हैं किंवा अजर कहिए जो जरा मृत्यु में भै न थे करते तिनों राख्यसों कों इनो मार दीना है आगे इन दोनों मे भेद सुनो ॥ ४ ॥

स्यामगात कल कंज बिलोचन । जो मारीच सुभुज मदमोचन ॥ ५ ॥
कौसल्यासुत सो सुष षानी । नाम राम धनु सायक पानी ॥ ६ ॥
गौर किसोर बेष बर काछे । कर सर चाप राम के पाछे ॥ ७ ॥
लछिमनु नाम राम लघुभ्राता । सुनु सषि तासु सुमित्रा माता ॥ ८ ॥

दोहा—बिप्रकाजु करि बंधु दोउ, मग मुनिबधू उधारि ।
आए देषन चापमष, सुनि हरषी सब नारि ॥ २३६ ॥

इस्त्रीवों के प्रसन्न होने मों भाव यह कि एइभी उत्तम कुल मों उपजे हैं ताते जनकजा के जोग हैं वा सुबाहु मारीच का बिध्वंसकर आए हैं तिसकर जानीता है बली हैं धनुष कों भी तोरैंगे किंवा निशाचरों का बध तो और भी करते हैं परंतु इनो के चरण छुइकर अहिल्या तरी है सो अति प्रतापवान हैं धनुष कों तोडैंगे अब अपनी बुद्धिमत्ताकर बांछित निमित्त प्रीति के अरु पश्चातापादिकों के बचन कहतीयां हैं ॥ २३६ ॥

देषि रामछबि कोउ एक कहई । जोगु जानकिहि यह बरु अहई ॥ १ ॥
जौं सषि इन्हहिँ देष नरनाहू । पन परिहरि हठि करै बिबाहू ॥ २ ॥

हे अली नृप ने इन कों देखा नहीं जौं देखैगा तौ प्रण का हठ त्याग कै सीता सों इन का बिवाह कराइ देवैगा तिस सखी का वाक्य सुनकर ॥ २ ॥

कोउ कह ए भूपति पहिचाने। मुनि समेत सादर सनमाने ॥ ३ ॥

सादर अरु सनमाने जो दोए पद हैं सो एक मुनीश्वर की ओर एक रघुबीरजी की ओर लगावना ॥ ३ ॥

सषि परंतु पनु राउ न तजई। बिधिबस हठि अबिबेकहिं भजई ॥ ४ ॥

दैव नेत के बस हुआ नृप अबिवेक द्वारा हठ कौ अंगीकार करता है एह सुन कर ॥ ४ ॥

कोउ कह जौं भल अहइ बिधाता। सब कहँ सुनिअ उचितफलदाता ॥५॥
तौ जानकिहिं मिलिहि बरु एहू। नाहिन आलि इहां संदेहू ॥ ६ ॥

जौं कोऊ कहै इन कै संजोग भए तुम कों क्या लाभ है तिस पर कहतीयां हैं ॥ ६ ॥

जौं बिधिबस अस बनै संजोगा। तौ कृतकृत्य होहिं सब लोगा ॥ ७ ॥

जौं दैव नेत कर यह संजोग बनै तौ हम सभ इन के दरसन संभाषनादिकों कर कृत कृत्य होवै जौं कोऊ कहै ऐसा तुमारा सनेह इन के देखने सों है तब तुम ने अजोध्या में जाय कर दरसन करना तिस पर कहती हैं ॥ ७ ॥

सषि हमरें आरति अति तातें। कबहुंक ए आवहिं येहि नातें ॥ ८ ॥

आ(समंतादि रतिरय समिनसआरति अर्थ यह जिन सों सरब भांति कर प्रीति होवै सो हमारे भरता अति तातें कहिये महातमों गुनी हैं गृह से हम कों बाहर कब जाना मिलता है। कबहुं कि कहिये सदैव ना किसी किसी समें तिस पर भी ए आवहिं एही इसी नगर सों आवैं तिस पर भी यह नाते कहिये जानकी का बिवाह होए अरु यह फेर भी कबी आवैं तौ हम भी भोजनादिकों के मिस घर सों बुलाइकर दरसन करिए ॥ ८ ॥

दोहा—नाहित हम कहुं सुनहु सषि, इन्ह कर दरसन दूरि।
यह संघट तब होइ जब, पुन्य पुराकृत भूरि ॥ २३७ ॥

हे सखी इस संजोग बिना हम को इन के दरसन कहां अरु यह संयोग भी तब होवै जब हमरे पूरबले किए बहुत पुन्य होहिं ॥ २३७ ॥

बोली अपर कहेहु सषि नीका। येहि बिवाह अतिहितसबहीका ॥१॥
कोउ कह संकरचाप कठोरा। ए स्यामल मृदुगात किसोरा ॥ २ ॥
सब असमंजस अहइ सयानी। यह सुनि अपर कहै मृदुबानी ॥ ३ ॥

हे सयानी धनुष कठोर यह बालक राजा का प्रन अति उग्र इन सरब प्रकारों कर अनबनती सी बात भासती है ॥ ३ ॥

सषि इनकहँ कोइक अस कहहीं । बडप्रभाउ देषत लघुअहहीं ॥ ४ ॥

हे सखी कोईएक बुद्धिवान इनकी बात करते हैं देखण मों यह छोटे हैं प्रभाव कर बडे हैं जाते ॥ ४ ॥

परसि जासु पदपंकजधूरी । तरी अहल्या कृत अघ भूरी ॥ ५ ॥

सो कि रहैं बिनु सिवधनु तोरें । यह प्रतीति परिहरिय न भोरें ॥ ६ ॥

अरु इस जुक्त कर भी जानिता है ॥ ६ ॥

जेहि बिरंचि रचि सीय संवारी । तेहि स्यामल बरु रचेउ बिचारी ॥ ७ ॥

तासु बचन सुनि सब हरषानी । ऐसेइ होउ कहैं मृदुबानी ॥ ८ ॥

दोहा—हिय हरषहिं बरषहिं सुमन, सुमुषि सुलोचनि बृंद ।
जाहिं जहां जहँ बंधु दोउ, तहं तहं परमानंद ॥ २३८ ॥

पुर पूरब दिसि गे दोउ भाई । जहं धनुमषहित भूमि बनाई ॥ १ ॥

अति बिस्तार चारु गच ढारी । बिमल बेदिका रुचिर संवारी ॥ २ ॥

अत्यंत बिसत्रित अरु सुन्दर चोकोना इस्थान तिन के मध्य धनुष रावने को शुभ्र बेदी बनी हुई ॥ २ ॥

चहुं दिसि कंचन मंच बिसाला । रचे जहां बैठहिं महिपाला ॥ ३ ॥

तेहि पाछे समीप चहुं पासा । अपर मंच मंडली बिलासा ॥ ४ ॥

कछुक ऊँच सब भाँति सुहाई । बैठहिँ नगर लोग जहं जाई ॥ ५ ॥

तिन्ह के निकट बिसाल सुहाए । धवल धाम बहु बरन बनाए ॥ ६ ॥

जहं बैठे देषहिँ सब नारी । जथाजोगु निज कुल अनुहारी ॥ ७ ॥

मंचहुं का क्रम इस प्रकार प्रतीति होता है जैसे सरोवर की पांडिआं हातिआं हैं जोन से राज्यों के बैठने के सो आगे अरु जो मंडलीकों के बैठने के सो पीछे परंतु उन से ऊंचे तिन से पीछे अरु ऊंचे मंच नगर के लोकों के यथा अधिकार बैठने के तिन से पीछे मंदिर जहां सभ इस्त्रीआं भी उत्तरोत्तर आपने आपने अधिकार अनुसार बैठहिं प्रयोजन यह जिन का पीछे बैठने का अधिकार होय उन को भी धनुष का कौतुक सभी द्रिष्ट आवै जौं कोऊ कहै रघुबीरजी ने तो आगे काऊ स्वयंबर न था देखा इस रचना को कैसे जानेआ तिस पर कहते हैं ॥ ७ ॥

पुर बालक कहि कहि मृदुबचना । सादर प्रभुहि देषावहिं रचना ॥ ८ ॥

नाथ स्वामी आदिक संबोधन दे के प्रीत पूरबक पुर के सिसु तहां की रचना प्रभों को देखावते हैं ॥ ८ ॥

दोहा—सब सिसु येहि मिसु प्रेमबस, परसि मनोहर गात ।
तन पुलकहि अति हरषु हिय, देषि देषि दोउ भ्रात ॥ २३९ ॥

भगवान के कोमल तन को बालक सपरस किया चाहते हैं यह उन के प्रताप से सकुचते हैं परंतु सुंदर रचना देखावने के मिस तन कों हाथ लगाइकर कहते हैं हे महाराज देखो एह कैसा सुंदर अस्थान है ॥ २३८ ॥

सिसु सब राम प्रेमबस जानें। प्रीति समेत निकेत बखानें ॥ १ ॥
निज निज रुचि सब लेहिँ बोलाई। सहित सनेह जाहिँ दोउ भाई ॥ २ ॥

प्रभों ने कुमार सभी प्रेम मगन देखा जाते प्रीत संयुत बालकों नें वोहो मंदिर वा अपने अपने गृह भी श्रीरामचंद्र कों देखलाए पुनः रामचंद्र कों अपने मंदिरहुं मों ले जाते हैं रामचंद्र भी उन की प्रीति के बस चले जाते हैं ॥ २ ॥

रामु देखावहिँ अनुजहिं रचना। कहि मृदु मधुर मनोहर बचना ॥ ३ ॥

तिनों बालकों के प्रेम की रचना प्रभु सौमित्रजी कों देखावते हैं जो जनकपुरबासीवों सिसों का प्रेम देखो अरु जनकपुर को रुचिरता देखो अब प्रभों की सामर्थ अरु भक्तवत्सलता कहते हैं ॥ ३ ॥

लवनिमेष महु भुवननिकाया। रचै जासु अनुसासन माया ॥ ४ ॥
भगति हेतु सोइ दीन दयाला। चितवत चकित धनुषमखसाला ॥ ५ ॥

जिन को आज्ञाकर माया निमिख मो कोटि ब्रह्मांड सजे सो दीनदयाल भक्तों की प्रसन्नता निमित्त चाप का अस्थान देख कै चकृत होते हैं ॥ ५ ॥

कौतुकु देखि चले गुरु पाहीं। जानि बिलंबु त्रास मन माहीं ॥ ६ ॥

सभ कौतुक देखते अति अवसर भया तब जान्या हम ने कहा था लछमन कों सीघ्र ल्यावैंगे सो हम को भी अति देर लगी है ताते गुरों का भै मानकर चले जौं काऊ कहे ईश्वरों कों किस का त्रास है तिस पर कहते हैं ॥ ६ ॥

जासु त्रास डर कों डर होई। भजनप्रभाउ देखावत सोई ॥ ७ ॥

जिन के भैकर काल भी कांपता है सो प्रभु भक्तों को महिमा लखावत हैं तत्व यह जो मेरी भक्ति करे मैं तिन के ऐसा अधीन होता हां ॥ ७ ॥

कहि बातैं मृदु मधुर सुहाई। बिदा किए बालक बरिआई ॥ ८ ॥

बरिआई नाम बलातकार का अपर सपष्ट ॥ ८ ॥

दोहा—सभय सप्रेम बिनीत अति, सकुच सहित दोउ भाइ।
गुरुपदपंकज नाइ सिर, बैठे आयसु पाइ ॥ २४० ॥

भै से मुख रूखा भया प्रेम से नयन सजल हुये बिनती कर शिर नम्र भए हैं संकोच कर दूर से हीं प्रणाम कर कर आज्ञा पाइ कै बैठे ॥ २४० ॥

निसिप्रवेस मुनि आयसु दीन्हा । सबहीं संध्याबंदन कीन्हा ॥ १ ॥
कहत कथा इतिहास पुरानी । रुचिर रजनि जुग जाम सिरानी ॥ २ ॥
मुनिबर सयन कीन्ह तब जाई । लगे चरन चापन दोउ भाई ॥ ३ ॥
जिन्ह के चरनसरोरुह लागी । करत बिबिध जप जोग बिरागी ॥ ४ ॥

जिन के चरणारविंदों को ध्यावने हेतु पुरुष सुख सों विरक्त होएकर जप जोगादिक करते हैं ॥ ४ ॥

तेइ दोउ बंधु प्रेम जनु जीते । गुरपद कमल पलोटत प्रीते ॥ ५ ॥

सो रघुबीरजी भक्तों को भक्ति कर बस हुए कौशिक कों गुरु मान के तिन के चरणारविंदों कों प्रेम में मलते हैं ॥ ५ ॥

बार बार मुनि आयसु दीन्हा । रघुबर जाइ सयन तब कीन्हा ॥ ६ ॥
चापत चरन लषनु उर लाए । सभय सप्रेम परम सचुपाए ॥ ७ ॥

प्रभों के पगों कों सहित भय के अरु सहित प्रेम के सौमित्रजी चांपी करते हैं ईश्वर जानकर भै करते हैं भ्रात भावकर प्रेम करते हैं परम सचु कहिये महासुख पावते हैं ॥ ७ ॥

पुनि पुनि प्रभु कह सोवहु ताता । पौढे धरि उर पदजलजाता ॥ ८ ॥

जब बारबार प्रभों कहा भाई सैन करो तब पदारविंदहुं का ध्यान रिदे महुं धार कर सोइ रहे किंवा चरण रिदे के साथ लगाइ कर उहां हीं सैन कर रहे ॥ ८ ॥

दोहा—उठे लषनु निसि बिगत सुनि, अरुनसिषाधुनि कान ।
गुरु ते पहिले जगतपति, जागे रामु सुजान ॥ २४१ ॥

अरुनसिखा कहिये कुकट तिस की धुनि सुनि के रघुनाथजी से प्रथम सौमित्रजी जागे अरु गुरों से प्रथम श्रीरामचंद्र जागे जाते सुजान हैं तात्व यह सेवक कों पीछे सोवना अरु प्रथम जागना बनता है ॥ २४१ ॥

सकल सौच करि जाइ नहाए । नित्य निबाहि मुनिहिं सिरनाए ॥ १ ॥

सकल शौच कहिए करपख्यालनादिक । नित्य निबाहि कहिए नित्यकरम गायत्री संध्या आदिक करकर ॥ १ ॥

समय जानि गुरुआयसु पाई । लेन प्रसून चले दोउ भाई ॥ २ ॥
भूपबाग बर देषउ जाई । जहँ बसंत रितु रही लोभाई ॥ ३ ॥

और बाग तो बसंत रितु मै प्रफुल्लित होते हैं अरु इस बाग पर मोहित होइ कर मानो बसंतरितु इहां हीं सदा रहती है ॥ ३ ॥

लागे बिटप मनोहर नाना । बरन बरन बर बेलिबिताना ॥ ४ ॥

बृक्षों के अरु बेलों के जो आपुस में संजोग हुए हैं सो मानों नाना रंगों के चंदोए बने हैं ॥ ४ ॥

नव पल्लव फल सुमन सुहाए। निज संपति सुररूष लजाए॥ ५॥

इहां अतिस्योक्त्यलंकार है॥ ५॥

चातिक कोकिल कीर चकोरा। कूजत बिहंग नचत कल मोरा॥ ६॥

मध्य बाग सर सोह सुहावा। मनिसोपान बिचित्र बनावा॥ ७॥

जिस सरोवर किस्यां मनिहुंकर रचित सुंदर पौडिय़ां है सो बाग के बीच सोभता है॥ ७॥

बिमल सलिल सरसिज बहुरंगा। जलषग कूजत गुंजत भृंगा॥ ८॥

निर्मल जल महुं अनेक रंगहुं के कमल हैं तिनहुं के पत्रहुं पर और जलखग कूंजते हैं अरु भ्रमर भी गुंजारते हैं॥ ८॥

दोहा—बागु तडागु बिलोकि प्रभु, हरषे बंधु समेत।
परम रम्य आरामु यह, जो रामहि सुषदेत॥ २४२॥

सभों कों रमावनेहारे श्रीरामचंद्र तिन कों जिसनें प्रसन्न किया है ताते यह परमसुंदर बाग है॥२४२॥

चहुं दिसि चितइ पूछिमालीगन। लगे लेन दलफूल मुदितमन॥ १॥

प्रथम चारो दिसा बाग किस्यां देखकर जहां सुंदर पुष्प देखे तब माली सें पूछकर लेने लगे जाते माली अप्रसन्न न होवै मुदित मन का कारण पुष्पों का देखन मात्र अथवा पोके वन में फूल स्रेष्ट नहीं मिले इहां राजा के बाग में सुंदर पुष्प पाए हैं किंवा भविष्यत लखकर हरष हुआ जो इहां हम कों जानकीजी का दरसन होना है सोई कहते हैं॥ १॥

तेहि अवसर सीता तहँ आई। गिरिजा पूजन जननि पठाई॥ २॥

जों कहो जानकी किस हेतु आई तो॥ २॥

संग सषी सब सुभग सयानी। गावहिं गीत मनोहर बानी॥ ३॥

सियानीयां अवस्थाकर अरु बुद्धिकर भी अपर सपष्ट॥ ३॥

सर समीप गिरिजागृह सोहा। बरनि न जाइ देषि मनमोहा॥ ४॥

मज्जनु करि सर सषिन्ह समेता। गई मुदित मन गौरिनिकेता॥ ५॥

मुदित मन होने का हेतु स्नान करना अथवा श्रीरामचंद्र का दरसन जो करना है तिस भावी कों विचार के प्रसन्न मन हैं किंवा देवी की पूजा करने जो चली हैं अरु बर लेने की इच्छा है तिसकर मन ने आगेहीं प्रसन्यतारूपी सगुन लखाया है॥ ५॥

पूजा कीन्ह अधिक अनुरागा। निज अनुरूप सुभग बरु मागा॥ ६॥

अति प्रेमकर देवी का पूजन किया अरु सरब भांतिकर अपनें जोग बर चाह्या अब श्रीरामचंद्र के देखने का हेतु कहते हैं॥ ६॥

एक सषी सिय संग बिहाई । गई रही देषन फुलवाई ॥ ७ ॥
तेहि द्वै बंधु बिलोकेउ जाई । प्रेमबिबस सीता पहिं आई ॥ ८ ॥

दोहा—तासु दसा देषी सषिन, पुलक गात जल नैन ।
कहु कारन निजहरष कर, पूछत सब मृदुबैन ॥ २४३ ॥

तिन के बचन सुन कै वह सखी बोली ॥ २४३ ॥

देषन बाग कुंअर द्वै आए । बयकिसोर सब भाँति सुहाए ॥ १ ॥

किसू राजा के द्वै पुत्र बाग देखन आए हैं षोडश वर्षांतर तिन को अवस्था है अरु सब भांति कहिये सरीरोंकर भूषणोंकर वस्त्रों शस्त्रोंकर बुद्धिकर बलादिकोंकर परम सुंदर है जो सीता पूछै तिन की सुंदरता का बरननकर तिस हेतु प्रथमही कहती है ॥ १ ॥

स्याम गौर किमि कहौं बषानी । गिरा अनयन नयन बिनु बानी ॥ २ ॥

स्याम अरु गौर जो सुंदर मूरता हैं तिन का स्वरूप कैसे बरननन करौं कहनेवाली जिह्वा है तिस के नेत्र नहीं देखनेवाले नेत्र हैं तिन को रसना नहीं तातपरज यह जिस वस्तु कों कोई देखै अरु वोही आनकर कहै तब जथारथ कहि जाता है अरु देखे कोऊ और अरु कहनेवाला होवै कोई और तब वह ज्यों की त्यों नहीं कही जाती सो इहां पेखनेवाले नेत्र तिन का स्वरूप भिन्न इस्थान भिन्न क्रया भिन्न देवता भिन्न कथनेहारी जिह्वा तिस के इस्थानादिक सब उन में भिन्न अरु जब पेखनहारों का अरु कथनहारों का संबंधही नहीं हुआ तब रामचंद्र का स्वरूप कैसे कह्या जाइ । ननु । सरब इंद्रियों का अधिष्टान मन है सो एक है ताते स्वरूप कथन मों आया चाहिये । उत्तर । स्वरूप चक्षु इंद्री ने देखा उस ने आग मन कों कहा मन ने जिह्वा इंद्री से कहाया तौभी बहुते इस्थानो में बात पसरी ॥ २ ॥

सुनि हरषीं सब सषीं सयानी । सियहिय अति उतकंठा जानी ॥ ३ ॥

सयानीआं सखिआं को हरख इस कर भया जैसा रूप इस ने कहा है तैसा होय तो जानकी के जोग्य है अरु अस्थान एकांत है इहां देखना भी रीति पूरबक होयगा यह जान कर जब सीता की वोर देखा तब उस कों भी दरसन की अति रुचि देखी ता समै ॥ ३ ॥

एक कहै नृपसुत तेइ आली । सुने जे मुनि संग आए काली ॥ ४ ॥
जिन निज रूप मोहनी डारी । कीने स्वबस नगर नर नारी ॥ ५ ॥

चत्वारो सुगम । जों कहै तैने किस भांति जान्या है जो सभीलोग बसभए हैं तिसपर कहती है ॥ ५ ॥

बरनत छबि जहँ तहँ सब लोगू । अवसि देषिअहि देषन जोगू ॥ ६ ॥

हे अली मैंने इस भांति जान्या है जहां जाईता है तहां सभ लोग उनहीं के गुणानबाद बरनन करते हैं ताते तिन का दरसन अवस्य करतव्य है ॥ ६ ॥

तासु बचन अति सियहिं सुहाने। दरसन लगि लोचन अकुलाने॥ ७॥

तिस के बचन सीता को अतिप्यारे लगे जाते राजादशरथ के पुत्र अरु विश्वामित्रजी के संग अरु सभों कर प्रसंसित सुने तब दरसन निमित्त लोचन आतुर भए इहां लोचन पद मन का उपलक्षक है॥७॥

चली अग्र करि प्रिय सषि सोई। प्रीति पुरातन लषै न कोई॥ ८॥

तिस सखी कों आगे कर कै ऐसी रीति सें चली जैसे मेरी पुरातन प्रीति कों कोऊ न जानै किंवा सीताजी की पुरातन प्रीति कों सखिआं नहीं लखसकतीआं सखी कों प्यारी विशेषण देने का भाव यह रघुनाथजी की बात सुनाई है॥ ८॥

दोहा—सुमिरि सीय नारदबचन, उपजी प्रीति पुनीत।
चकित बिलोकति सकल दिसि, जनु सिसु मृगी सभीत॥ २४४॥

जद्यपि नारदजी का संभाषण इस ग्रंथ मो नहीं कहा तथापि पुरानांतरों की कथा है नारदजी ने सीता जू कों कहा था तुझे रामचंद्र का दरसन बाग मों होवेगा वह सत्य वाक्य सिमरणकर कै पतिरूप जानकर पवित्र प्रीति करती भई तब सिसुमृगीवत सभीत चकृत हुैकर देखती है जो कोऊ माता पिता को मेरी यह बात न जाइ सुनावै अब रामचंद्र कें ओर की बात कहते हैं॥ २४४॥

कंकन किंकिनि नूपुर धुनिसुनि। कहत लषन सन रामहृदय गुनि॥१॥

किंकिनीआं अरु नूपुरों कें शब्द सुनकर प्रभु जुक्ति बिचार कै अनुज प्रति कहत भये॥ १॥

मानहु मदन दुंदुभी दीनो। मनसा बिस्वबिजय कहँ कीनी॥ २॥

हे सौमित्र यह ध्वनि मानो कामदेव की दुंदुभी बाजती है विश्वविजै करबे निमित्त जैसे भूपतों कें मन समाज जब एकत्र होते हैं तब दिगविजै किआ चाहते हैं तैसे सुंदर जुवतीआं मदन की सैना हैं तिन कें भूषनादिकों के शब्द दुंदुभिआं तिनो कर बिश्वात्मा जो हम हैं सो मानो हमारे जितने की इच्छा करी है॥ २॥

अस कहि फिरिचितएतेहिओरा। सियमुषससि भय नयन चकोरा॥ ३॥

ऐसे कहि कै जब फिर कै तिस ओर द्रष्ट करी तब सीताजी के मुखमयंक मो चक्षुचकोरों सम लुभाइ रहे॥ ३॥

भये बिलोचन चारु अचंचल। मनहु सकुचि निमि तजेदृगंचल॥ ४॥

चारो नेत्र अस्थिर भये सो संकोचकर मानो निम राजे नें दृगों के अंचल त्याग दिए हैं तत्व यह पति त्रिय के संजोग समें बडे किनारा करते हैं सो निम राजा जानकीजी का पितामा है अरु बशिष्टजी के वरकर तिसका सभों की निमषा मों निवास है तिस ने सीता कों अपनी सुता अरु रामचंद्र सों तिस का मिलाप जानकर निमखों अपना अस्थान छोड दीना है ताते निमेष नहीं लागते॥ ४॥

देषि सीयसोभा सुष पावा। हृदय सराहत बचन न आवा॥ ५॥

सीता को सुंदरता देखकर परम प्रसन्न भये परंतु रिदै में सराहते हैं जिह्वाकर नहीं कहते आते तिस की सोभा बानो से परे है किंवा लज्याकर नहीं कहते यह मन में विचार करते हैं ॥ ५ ॥

जनु बिरंचि सब निजनिपुनाई। बिरचि बिश्व को प्रगट देषाई ॥ ६ ॥
सुंदरता को सुंदर करई। छबिगृह दीपसिषा जनु बरई ॥ ७ ॥

सीता सकल सौंदरजों को सुंदर करनहारी हैं संपूरण जगत किया जो छबी हैं सो मानो मंदिर सम हैं यह जानकीजी दीपसिखा सम सभों को प्रकासती हैं जो कोऊ कहै सीतापरम सुंदरही भई तथापि अंगों की उपमा कथी बनती है तिस पर कहते हैं ॥ ७ ॥

सब उपमा कबि रहे जुठारी। केहि पटतरिय बिदेहकुमारी ॥ ८ ॥

ससी सम मुख कीर सम नासा कपोत सम कंठादिक उपमा कबीश्वरों ने आगे इस्त्रियों को देकर उछिष्टकर डारीयां हैं सो जैसे पुष्प अथवा वस्त्र किसी के अंगों मो पहिराए हुए उत्तमों के पहिरणे योग्य नहीं रहते तैसे उछिष्ट उपमा बिदेह राजा की अजोनिजा पुत्री प्रति कैसे दीनियां जाहिं ॥ ८ ॥

दोहा—सियसोभा हिय बरनि प्रभु, आपनि दसा बिचारि।
बोले सुचि मन अनुज सन, बचन समयअनुहारि ॥ २४५ ॥

प्रथम सीताजी की सुंदरता को रिदै में जानिया पुन अपने मन की ओर देख्या जो जानकी के रूप पर मोहित भया है तब शुचि मन कहिये निहकपट मन किंवा जिन के मन में कबी बिकार न उपजे सो तिस समें में जैसी भांति कथन उचित था तैसी भांति लछमन प्रत बोले ॥ ॥ २४५ ॥

तात जनकतनया यह सोई। धनुषजग्य जेहि कारन होई ॥ १ ॥

जद्यपि जनक के कन्या और भी सुनतीया है परंतु जिस के हेतु धनुषजग्य होता है सो एही भासती है जो सौमित्रजी कहें इस के इहां आवने का क्या प्रयोजन है तबार ॥ १ ॥

पूजन गौरि सषी लै आई। करत प्रकास फिरै फुलवाई ॥ २ ॥

देबी की पूजा निमित्त इस को सखियां लै आयां है सो मानों फुलबाडी को प्रकाशती फिरती हैं तातपरज यह आरों के शरीर फूल पहिरिकर सुंदर लागते हैं अरु सीताजी के समीप होनेकर पुष्प सोभते हैं ॥ २ ॥

जासु बिलोकि अलौकिक सोभा। सहज पुनीत मोर मन छोभा ॥ ३ ॥

सहज पुनीत कहिये जिस में बिकार कबी न उपजै तिस मेरे मन को जिस की अलौकिक शोभा देखकर छोभ भया है ॥ ३ ॥

सो सभ कारन जान बिधाता। फरकहिं सुभग अंग सुनु भ्राता ॥ ४ ॥

हे भ्राता इस कारण को दैव जानै जो मेरे मन को उदवेग क्यों भया है अरु शुभ सूचक मेरे सभी अंग फरकते हैं जो कोऊ कहै सुन्दर रूप पर दृगादिकों का मोहित होणा सुभाव ही है तिस पर कहते हैं ॥४॥

रघुबंसिन कर सहज सुभाऊ। मन कुपंथ पगु धरहिं न काऊ॥ ५॥
मोहि अतिसय प्रतीति मन केरी। जेहि सपनेहुं परनारि न हेरी॥ ६॥

हमारे तौ कुल का यह सुभाव है तनकी क्या बात है मन ने भी परनारी आदिकों विषै राग न करना तिस पर भी तौ मुझे अपने मन पर अतिप्रतीति है परस्त्री की ओर कबी प्रवित्तनेवाला नहीं इस संबंध मों नीति कहते हैं॥ ६॥

जिनके लहहिं न रिपु रन पीठी। नहि पावत परतिय मन डीठी॥ ७॥
मंगन लहहिं न जिन कै नाहीं। ते नर बर थोरे जगमाहीं॥ ८॥

जिन पुरषों की संग्राम मैं सत्रों ने कबी पीठ नहीं देखी अरु एक साधारण दृष्टि है एक मन की दृष्टि है सो किसू स्थान मैं एक बार दृष्टि सुन्दर जुवती पर पड भी जाय तौ दोस नहीं अरु मन की दृष्टि कहिए तिस कों पुनः राग पूरबक देखना सो दोष उतपादक है अथवा मन की कहिए मन का संकल्प सो भी जिन का परस्त्री वोर नहीं पडता अरु भिक्षुकों ने जिन के द्वारे से नकार कबीं नहीं सुना ऐसे उत्तम नर संसार मों दुरलभ हैं॥ ८॥

दोहा—करत बतकही अनुज सन, मन सियरूप लुभान।
मुषसरोजमकरंद छबि, करै मधुपइव पान॥ २४६॥

बात सौमित्र सों करते हैं अरु मन जो सीताजी के रूप पर लोभाया है सो उस के मुख रूपी कमल की छबिरूपी रसकों भ्रमरों सम नैनहु द्वारा पान करता है ता समय सुमन चुनतेहुए प्रभु कछुक आगे चले जब सीता से अदृष्ट भए तब॥ २४६॥

चितवति चकित चहूं दिसि सीता। कहँ गये नृपकिसोर मन जीता॥ १॥

जिनो ने अपना मन जीता हुआ है जाते मेरे रूप पर लोभायमान नहीं भये किंवा जिनों ने मेरा मन जीत लिया है सो राजकुमार कहां गए॥ १॥

जहँ बिलोक मृगसावकनयनी। जनु तहं बरस कमलसितश्रेनी॥ २॥

मृगसावकनैनी जो सीता है जिस वोर दृष्टि करती है मानो तहां सुन्दर स्यामकमलों के संबूह पडे बरसते हैं॥ २॥

लता ओट तब सषिन लषाए। स्यामल गौर किसोर सुहाए॥ ३॥
देषि रूप लोचन ललचाने। हरषे जनु निज निधि पहिचाने॥ ४॥

रामचंद्र के सरूप को लता की ओट से प्रगट देख कर सीताजी के नेत्रों को ऐसा हरष भया जैसे किसी को निधि गंवाती हुई फेर उस को दृस आवै॥ ४॥

थके नयन रघुपतिछबि देषे। पलकनहूं परिहरी निमेषे॥ ५॥

नेत्र प्रभों के रूप मों आशक्त हुये अरु निमेष भी अचल भये॥ ५॥

अधिक सनेह भई मतिभोरी। सरदससिहिं जनु चितव चकोरी॥ ६॥

अत्यंत प्रेम कर बुद्धि मो सूधता आई अर्थ यह कपट चपलतादिक ना रहे जैसे सरद पत्र के मयंक के देखणे हेतु चकोरी की और वोर हृत्त नहीं जाती॥ ६॥

लोचनमग रामहिं उर आनी। दीन्हे पलककपाट सयानी॥ ७॥

जब सीता जू ने अपनी बुद्धि ततपरायण देखी जो दरसन बिना मन नहीं रहता अरु लोक लज्या है तब प्रभों का नख सिख प्रजंत ध्यान रिदे मों न्याय कर पलक कपाट दीने कहिये नैन मूंद लिए जाते सयानी है सयानी का भाव यह उत्तम पदारथ जिस कों हाथ आवै तब चाहिये कंवार देकर जतन मों राखना अथवा नेत्र मूंद कर भगवान के सरूप का आनंद रिदे मैं अनुभव करां जाकों मै अधिक दिखलाना योग्य नहीं अथवा जब मैं मुख देखती रहोंगी तब सखिआं जानैंगिआं रामचंद्र कोंहीं देखतो हैं अरु जों नेत्र मूंदे होहिंगे तब गौरी आदिकों के ध्यान के भी अनुमान करहिंगिआं प्रयोजन स्यानप का यह अपनी बात जेती गुप्त रहे तेती भली है॥ ७॥

जब सिय सषिन प्रेमबस जानी। कहि न सकहिं कछु मन सकुचानी॥ ८॥

सीता कों प्रेमबस देखकर उस के भय से तो सखिआं कछु कहि नहीं सकतिआं अरु माता को ओर में संकोच करतिआं है जो यह प्रसंग माता सुनैंगी तो हमारे पर रोस करैंगी॥ ८॥

दोहा—लताभवन तें प्रगट भए, तेहि अवसर दो भाइ।
निकसे जनु जुग बिमल बिधु, जलदपटल बिलगाइ॥ २४७॥

मेघों सम तरों के स्याम पत्र हैं तिन कों भेद कर जुगल इंदुहू के समान श्रीरामचंद्र अरु लछमन प्रगट भए। अब पुनः ध्यान बरनन करते हैं॥ २४७॥

सोभा सुभग सोवट्टी बीरा। नीलपीत जलजाभ सरीरा॥ १॥

सोभा कहिए अंगों किआं भिन्न भिन्न अरु सुन्दरताई कहिए समुच कांति तिस की सींव हैं दोनो भाई नील अरु पीत कमलों के समान जिनों के सरीरों की आभा है॥ १॥

मोरपंष सिर सोहत नीके। गुंछ बीच बीच कुसुमकली के॥ २॥

तिस समे मोरपख्य श्रीरामचंदजी ने धारे हुए थे अरु सीस मों पगडी की लख्यना करनी जाते सीस के बीच मोरपख्य पुष्पकलिआं गुंथत कहिआं हैं अथवा मोरपख्य संयुत श्रीरामचंद्रजी का ध्यान कहूं लिखा नहीं ताते यह पद ग्रंथकार के मुखों लगावना मेरे पख्य कहिये तुलसीकिआं मंजरिआं सो भगवान के सिर पर सोभा पावतिआं हैं अरु चीरे के बीच कुसुम अरु कलिआं बनाय कर धरिआं हैं अथवा रामायण को कथनहारे भुसुंडजी हैं यह वाक्य उन के मुख सों लीजिये मोरपंख कहिये मेरे पंख

सो काकपक्ष्य अरु काकपक्ष्य पाठ होवै तौभी अर्थ यही है परंतु इस रामायण में काकपक्ष्य शिर श्रीरामचंद्रजी कों कहीं नहीं कहा अरु उन के बीच फूलों का गुथन अप्रसिद्ध है अरु .पूरब देश कीचाल मों भी लोक टोरघ पटे नहीं राखते अरु इस अर्थ मों एक और बडा दोष है प्रभों का शीश नगन कहना बनैगा जातेध्यान मोंइहां मुकुट पगडीकुछलिखा नहीं आगे जो अर्थ किसू को भावे सो भला ॥२॥

भालतिलक श्रमबिंदु सुहाए । श्रवन सुभग भूषन छबि छाए ॥ ३ ॥

तरों मैं फिरने कर भया है जो स्रम तिस कर स्वेद के बिंदहुं संजुक्त तिलक मस्तक पर सोभता है अरु कुंडलादिक जो भूषन हैं सो सुन्दर करनों मैं छबि पावती हैं ॥ ३ ॥

बिकट भृकुटि कच घूंघरवारे । नवसरोज लोचन रतनारे ॥ ४ ॥

बांकी भृकुटी है केश कुंडलिआरे हैं नबीन लाल कमलो सम नेत्र हैं ॥ ४ ॥

चारु चिबुक नासिका कपोला । हाँसबिलास लेत मन मोला ॥ ५ ॥

सुषछबि कहि न जाइ मोहि पाहीं । जो बिलोकि बहु काम लजाहीं ॥ ६ ॥

उर मनिमाल कंबु कल ग्रीवां । कामकरभ कर भुजबल सीवां ॥ ७ ॥

उर बिषे मनिवों की माला है शंख जैसी सुंदर ग्रीवां है कामदेव के मातंग का जो करभ कहिये बालक है तिस के सुंड सम बल की सीमा भुजा हैं ॥ ७ ॥

सुमन समेत बाम कर दोना । सांवर कुंअर सषी सुठि लोना ॥ ८ ॥

पुष्पों के संजुत बामकर पर दोना धरा हुआ है सखिआं आपुस महुं कहतिआं हैं जद्यपि कुंअर तो दोनों सुंदर हैं परंतु सांवर कुंअर अति मनोहर हैं ॥ ८ ॥

दोहा—केहरिकटि पट पीत धर, सुषमासीलनिधान ।
देषि भानुकुलभूषनहिं, बिसरा सषिन अपान ॥ २४८ ॥

सिंह सा कटि अरु पीतपट अरु शोभा के सिंधु अरु शील के निधि भानुबंश कों भूसितकरणहारे जो रघुनाथजी हैं तिन कों देखकर सखिवों कों अपने तन की सुधिभूलि गई किंवा अपान पद साथ गरब का अध्याहार करना तिन के मन विषे जो अपनी सीता के रूप का गरब था सो श्रीरामचंद्र का सरूप देखे निहत भया जा समैं सीताजी कों ध्यान परायण अरु सभों सखिवों को प्रभों के रूपपरायण देख्या ता समैं ॥ २४८ ॥

धरि धीरज एक आलि सयानी । सीता सन बोली गहि पानी ॥ १ ॥

आली कों सयानी इस निमित्त कहा अवस्थाकर बडी थी तत्व यह सुंदर स्वरूप कों देखकर विशेष आतुरता जुवा शरीर मै होनी है जरा में ऐसी नहीं होती तातेधीरज संयुत बोली किंवा जैसे और सखिआं साधारण वाक्य कहैंगिआं जो गहिर भई है तैसे न कहा हाथ पकरकर जानकीजी कों समुझाया किंवा ऐसे जाना सीता नेत्र मूंदकर रामचंद्र का देखणा हमारे सें छिपावती है सो हम भी एक जुक्ति सें हों लखावें इस कर सयानी सोई कहती है ॥ १ ॥

बहुरि गौरि कर ध्यान करेहू । भूपकिसोर देषि किन लेहू ॥ २ ॥

हे सीते देवी का ध्यान पुनः करिवो अब इन राजकुमार को देखो ॥ २ ॥

सकुचि सीय तब नैन उघारे । सनमुष द्वै रघुसिंह निहारे ॥ ३ ॥

संकोच सहित जानकीजी के नेत्र खोलने का भाव यह मेरे प्रेम कों सखिआं लखगैयां हैं किंवा ऐसे जाना ध्यान मैं तो सुंदर मूरत मुझे प्रतख्य थी कदाचित अब इहां में वह गये होवैं अरु ध्यान भी तजौं दोनो प्रकारों सें बियोग पडे इसकर संकोच से दृग खोले कहिये प्रथम थोरी सी दृष्टि खोली जिस मों दोनो काम बने रहें अरु जब श्रीरामचंद्र कों देखलिआ तब संपूरण नेत्र उघारे तब रघुबंश सो सिंघ कहिए राघवों मों स्रेष्ट जो प्रभु हैं सो सन्मुख देखे प्रभों कों सिंघ कथन का भाव यह किसू के मन मो यह न आवै और नृप सेना सहित हैं अरु रघुबीरजी एकले हैं सो केहरि एकलाही अनेकों करिवों के मारने बिडारने कों सामर्थ होता है ॥ ३ ॥

नषसिष देषि राम की सोभा । सुमिरि पितापनमनअतिछोभा ॥ ४ ॥

रामचंद्र की सोभा देख कर मन तौ परबस भया अरु पिता के प्रन कों सिमर कर रिदै को छ्योभ कहिये उदवेग हुआ जो रामचंद्र का स्वरूप त्यागा नहीं जाता परंतु पिता का बचनभी उलंघ्या नहीं जाता ॥४॥

परबस सषिन लषी जब सीता । भए गहरु सब कहहि सभीता ॥ ५ ॥

सीता कों बरबस जान कर जानकी के भय से सखिआं ऊंचे नहीं कहि सकतिआं अरु माता की भै से मौन नहीं रहसकतिआं तातें सनै सनै कहतिआं हैं बहुत चिर भया है तिनों में एक सखी सीता की अधिक प्यारी बोली ॥ ५ ॥

पुनि आउब एहि बरिया काली । अस कहि मन बिहंसी एकआली ॥ ६ ॥

हे सखी अब चलो कालि इसी समें फेर आवैंगिआं ऐसे कहि कै एक सखी मन मैं हंसि कहिए मंद मुसुकाई इस कथन मों सीता का बांछित सिद्ध कीना जो काल तुझे फेर दरसन करावैंगिआं अरु प्रभों को भी सुनाया तुम ने भी इसी बखत आवना सो व्यंग वाक्य सखी भाव कर कहा अरु प्रगट न हंसी सीता के रोष सें त्रास कर जाते वह राजसुता है ॥ ६ ॥

गूढ गिरा सुनि सिय सकुचानी । भएउ बिलंब मातुभय मानी ॥ ७ ॥

गूढ बानी कहिये जिस का अभिप्राय यह मेरी आशक्तता इस ने लख लीनी है सो सुन कर सीता माता के भै से आसंकत भई ॥ ७ ॥

धरि बड धीर राम उर आनें । फिरी अपनपौ पितु बसजानें ॥ ८ ॥

चलने की इच्छा तौ रंचक भी नहीं परंतु सखिवों की वोर देख कर अरु नीति बिचार कर अरु अपने आप कों पिता के बस जान कर धीरज धार कै रघुनाथजी की मूरति रिदै मों बसाइ कै गृह कों चली ॥८॥

दोहा—देषन मिस मृग बिहँग तरु, फिरत बहोरि बहोरि ।

निरषिनिरषिरघुबीरछबि , बाढैप्रीति न थोरि ॥ २४९ ॥

रामचंद्रजी के दरसन में सीता अविप्ति हैं ताते जो कोऊ पंछी वृक्ष मृग सुन्दर दृष्टि आवता है तिस कों ध्यान मों कर कर आगे लंघ जाती हैं अरु सखियों के देखलावने निमित्त फिर कर कहती हैं यह कैसा सुन्दर मृग है इत्यादिक बचन कहि कर रामचंद्र का दरसन कर लेती है ॥ २४९ ॥

जानि कठिन सिवचाप बिसूरति । चली राषि उर स्यामल मूरति ॥ १ ॥

शिवजी के धनुष को कठिन जान कर चिंता करती हुई जानकी श्रीरामचंद्रजी की स्याममूरति का ध्यान रिदे महुं धार कर देवी की मंदर के ओर चली जो इस स्याम सुन्दर सें धनुष भंग होवण का बर गिरजा से लेवों ॥ १ ॥

प्रभु जब जात जानकी जानी । सुष सनेह सोभा गुन षानी ॥ २ ॥

सुखो का प्रेम का सोभा अरु गुणो का पुंज जो सीता हैं तिस का जब प्रभों ने गृह की ओर गवन जान्या तब ॥ २ ॥

परम प्रेममय मृदु मसि कीन्ही । चारु चित्त भीतहि लिषिलीन्ही ॥३॥

परम प्रेम रूप कोमल सिआही सो चारु कहिये सीताजी की सुन्दरता अथवा हंसवत गति सो चित रूपी भीत बिषे लिखलीनी तत्व यह ध्यान रिदे मो धार लिआ अब सीता की प्रीति कहते हैं ॥३॥

गई भवानीभवन बहोरी । बंदि चरन बोली करजोरी ॥ ४ ॥

बहोरी कहिये दुतीयबेर देवी के मंदिर मों गई अरु प्रणामकर के साभिप्रायविशेषण देतीहुई बोली ॥४॥

जै जै जै गिरिराजकिसोरी । जै महेसमुषचंदचकोरी ॥ ५ ॥

तीन बेर जै कहने का आसा यह तुम ने त्रिगुणात्मक होकर तीनो देविआं के रूप धारे हैं ताते सरब शक्ति हो मेरा वांछित सिद्ध करो अरु मेरे मनबच काइ को जे करावो जो बियोगरूपी शत्रु कों जीत कें श्रीरामचंद्र कों मिलों गिरराजकिसोरी कथन का भाव यह है जैसे हिमाचल ने तेरा पानिग्रहन शंकर जी कों कराया था तैसेहीं भूपति श्रीरामचंद्र को मेरा पानिग्रहन स्नेह होवै ॥ ५ ॥

जय गजबदन षडानन माता । जगतजननि दामिनि दुति गाता ॥६॥

हेजगदंबे हेदामिनी सम दुतिवान जैसे गणेश अरु सामकार्तक तेरे दोनो पुत्र जगत में प्रमाणीक हैं तैसेही मेरे गृह में भी होवें ॥ ६ ॥

नहिं तव आदि मध्य अवसाना । अमित प्रभाव बेद नहिं जाना ॥ ७ ॥

अपिभव बिभवपराभवकारिनि । बिस्वबिमोहनि स्वबसबिहारनि ॥ ८ ॥

अपि कहिए निश्चै कर भव कहिये संसार के विभव अरु पराभव के करनेहारी हैं जों भव भव पाठ होवै तो भव कहिए संसार तिस का भव कहिये जनम अपर स्पष्टः प्रयोजन यह उतपति स्थित संहार करती तूही है ताते मेरा संयोग श्रीरामचंद्रजी सों करदेहि अरु सरब बिस्व मों मोहनीशक्ति तूही है

ताते जो दुष्ट मेरे संजोग मो बिघ्न करता होवैं तिन कों मूढ कर देहु अरु तुमारा स्वतंत्र व्यवहार है ताते रघुनाथजी कों स्वतंत्र करदेहु ॥ ८ ॥

दोहा—पति देवता सुतीय महुं, मातु प्रथम तव रेष ।
महिमा अमित न सकहिं कहि, सहस सारदा सेष ॥ २५० ॥

हे देवी पतिव्रता विषे तूं मुख्य है यह कथन का आसा यह है मेरी भी श्रीरामचंद्र विषे तेरे जैसी पति भक्ति होइ अरु तेरी महिमा सहससेष अरु सारदा के कथन में भी अमित है सो मैं कैसे कहों ॥२५०॥

सेवत तोहि सुलभ फल चारी । बरदाइनी पुरारिहिं प्यारी ॥ १ ॥
देबि पूजि पदकमल तुम्हारे । सुरनर मुनि सब होहिँ सुषारे ॥२॥
मोर मनोरथ जानहु नीके । बसहु सदा उरपुर सबही के ॥३॥
कीन्हेउ प्रगट न कारन तेही । अस कहि चरन गहे बैदेही ॥४॥

जाते तूं सरब के उरोंरूपी पुरों मे बसती है ताते मैं तेरे आगे अपना मनोरथ प्रगट नहीं कहा तात परज यह कुलवंती कन्या कों स्वामी की बात कहणी ते लज्या आवती है चरण गहणे का भाव यह मेरा मनोरथ पूरणकर ॥ ४ ॥

बिनय प्रेमबस भई भवानी । षसी माल मूरति मुसुकानी ॥५॥
सादर सियप्रसाद सिर धरेऊ । बोली गौरि हरष हिय भरेऊ ॥६॥

सीताजी के प्रेम अरु बिनयकर देवी प्रसन्न भई तब उमा के सीस पर जो पुष्पमाला थी सो सीताजी की ओर गिड पडी अरु देवो की मूरति मुसकाई सो पुष्परूप प्रसादी सीता सिर पर धारया जाते ऐसे कहा है देवता पर पुष्पादिक भेंट चढाइए अरु उस में ते कछु अपनी ओर आन पडे तब जानिये देवता ने प्रसन्न होकर प्रासदी दिया है तब देवी हरष कर बोली हरषयुत बोलने का भाव यह बर हरष से ही दिया जाता है किंवा सीता परमेश्वरी है श्रीरामचंद्र परमेश्वर हैं इनों के नाम जपकर औरों के कारज सिद्ध होते हैं सो हमारे से बर जांचने लागी है इसलिए अति हरष सों बोली ॥ ६ ॥

सुनु सिय सत्य असीस हमारी । पूजहि मनकामना तुम्हारी ॥७॥
नारदबचन सदा सुचि साँचा । सो बर मिलहि जाहि मन राँचा ॥८॥

नारदजी का बचन पवित्र है जाते प्रभों के गुणानुवाद मिस्रित हैं अरु सदा सांचा है कबीं अन्यथा होवनवाला नहीं जाते तिन कों भावी ज्ञान है तिनोंने जो कहा था श्रीरामचंद्र का तुझे बाग मों दरसन होयगा पुनः धनुष तोड कर तुझे बरेंगे सोई बात तैंने निश्चै जाननी यह प्रसंग पीछे भी अरु इहां भो पुराणांतर से समुझना ॥ ८ ॥

छंद—मन जाहि रांच्यो मिलिहि सो बर सहज सुंदर सांवरो ।

करुनानिधान सुजान सील सनेह जानत रावरो ॥

जो करुनानिधान हैं जाते तुझे बाग मों आइ कै दरसन दिया है अरु सुजान हैं जाते तेरे मृदु-शील अरु प्रेम कों जानते हैं अरु जो स्याम रूप सोई सहज सुन्दर हैं अरु जिस मो तेरा मन लागा सोई कंत तुझे मिलेगा ॥

एहि भांतिगौरिअसीससुनि सियसहित हियहरषीअली।
तुलसी भवानिहिं पूजि पुनि पुनि मुदितमन मंदिर चली ॥

सोरठा—जानि गौरि अनकूल, सियहियहरष न जाइ कहि।
मंजुल मंगल मूल, बाम अंग फरकन लगे ॥ २५१ ॥

अब श्रीरामचंद्र का वृतांत कहते हैं ।। २५१ ॥

हृदय सराहत सीयलोनाई। गुरुसमीप गौने दौ भाई ॥१॥

दोऊ भात सीताजी की सुन्दरता कों मन मो इस निमित्त सराहते जाते हैं जो लक्ष्मनजी माता की सुन्दरता पिता कों कैसे सुनावैं अरु रघुनाथजी अपनी रानी की रुचिरता पुत्र प्रति कैसे कहैं तब गुरों ढिग पहुंचे ॥ १ ॥

राम कहा सब कौसिक पाँही। सरल सुभाव छुआ छल नाहीं ॥ २ ॥

अपनी देर लगने का हेतु श्रीरामचंद्र ने आपहीं गुरों कों सुनाय दिया जाते अतिसरलचित्त हैं तदनंतर ॥२॥

सुमन पाइ मुनि पूजा कीन्ही। पुनि असीस दुहुं भाइन्ह दीन्ही ॥ ३ ॥
सुफल मनोरथ होहु तुम्हारे। रामलषन सुनि भए सुषारे ॥ ४ ॥

गुरों का बचन सत्य जानकर जानकी की प्राप्ति हेतु श्रीरामचंद्र प्रसन्न भए अरु रघुनाथजी कों आनंदित देख कै किंवा तुमारे पद जो बहुबचन गुरो ने दिया है ताते अपने मनोरथ की भी सफलता जान कर सौमित्रजी भी प्रसन्न भए ॥ ४ ॥

करि भोजन मुनिवर बिज्ञानी। लगे कहन कछु कथा पुरानी ॥५॥
बिगत दिवस गुरुआयसु पाई। संध्याकरन चले दौ भाई ॥६॥

कथा स्रवणांतर संध्या भई जान कै प्रभु संध्या बंदनादिकों निमित्त चले तब लौं ॥ ६ ॥

प्राची दिसि ससि उगउसुहावा। सियमुषसरिसदेषि सुषपावा ॥७॥
बहुरि बिचार कीन्ह मन माहीं। सीयबदन सम हिमकर नाहीं ॥८॥

सूक्षम दृष्टि कर कै बिचारा यह हिमकर है अर्थ यह अति जाडा करता है ताते सीताजी के मुख सम नहीं अरु केवल जाडा कराताही नहीं और दोष भी है ॥ ८ ॥

दोहा—जन्म सिंधु पुनि बंधु बिष, दिन मलीन सकलंक।

सिअमुषसमता पाव किमि, चंद्र बापुरो रंक ॥ २५२ ॥

सीताजी के मुख की सदृशता कों इंदु कैसे पावै जाते संबंधियों के लख्यनोकर भी सरीर दुखित होता है सो उस का पिता सिंधु जडतत इस का पिता राजा जनक परम ज्ञानी चंद्रमा की भगनी विष सीता की भगनी उरमिला जिस का नाम भी सुखद ससी दिन मों मलीन जानकी की सदा एक रस प्रकाश स्वरूप इंदु कलंकी सीता सदा अकलंक सीता महामायारूप चंद्रमा मायाकर रचित एक बपुराजीव रंक कहिए जिस कों दिन मों सदा आपदा रहै तिस पर ॥ २५२ ॥

घटै बढै बिरहिनिदुषदाई । ग्रसै राहु निज संधिहि पाई ॥ १ ॥

इंदु एक पख्य मो घटताहै एक पख्य मों बढताहै अरु जनकजा आदि शक्ति ताते दोनो पख्य में सम है बिधु बिरहिनियों को दुखदायकहै यह चिदशक्ति सरबानंद स्वरूप है पुरनिमा विषे प्रतिपदा का संध पाइ ससि कों राहु ग्रसताहै अरु इस के राहु आदिक सभ रचेहुए हैं ताते इस कों कौन ग्रास सकै ॥ १ ॥

कोकसोकप्रद पंकजद्रोही । औगुन बहुत चंद्रमा तोही ॥ २ ॥
बैदेही मुष पटतर दीन्हे । होइ दोष बड अनुचित कीन्हे ॥ ३ ॥

चक्रवाक अरु कमल चंद्रमा से दुखित होते हैं इत्यादिक दोसहुंकर रचितजो इंदु है तिस को बैदेही के मुख के सदृश कहना अनुचित है ताते बडा दोष होता है ॥ ३ ॥

सिअमुषछबि बिधुब्याज बषानी । गुर पहिं चले निसा बडि जानी ॥ ४ ॥

ससी के मिसकर सीता के मुख की छबि कही तब लो रात बहुत बितीत भई जानकर गुरों के समीप गए ॥ ४ ॥

करिमुनिचरनसरोज प्रनामा । आयसु पाइ कीन्ह बिस्रामा ॥ ५ ॥
बिगत निसा रघुनायक जागे । बंधु बिलोकि कहन अस लागे ॥ ६ ॥
उग्यो अरुन अवलोकहु ताता । पंकजकोकलोकसुषदाता ॥ ७ ॥

हे लख्यमन देखो अरुणा कहिए भानु उदै भया है जिसकर कमल अरु चक्रवाक और सभो लोक प्रसन्य होते हैं प्रमान मेदनी अरुणो व्यक्त रागेर्के संध्या रागेर्के सारथो सुगमः यह वाक्य सुनकर सौमित्रजी बिचारया भानु के मिसकर किसू सुंदर रीति सो मैं प्रभों का प्रभाव कहों ताते ॥ ७ ॥

बोले लषन जोरि जुग पानी । प्रभुप्रभाउसूचक मृदुबानी ॥ ८ ॥

प्रभों के प्रभाव की द्योतक जो कोमल बानी है सो लख्यमनजी दोऊ हाथ जोडकर बोले दोनो हाथ जोडनकर अतिनम्रता से मानों यह सूच्या तुम कों वेद नेत नेत कर कहते हैं हमारे कहने में जो कछु न्यूनता होय सो आप ख्यमा करनी किंबा तुमारी उस्तुत मैं भानु के उपमान कर बरनन करता हों सो आदित हमारा कुल बृद्ध है तुम परमेश्वर हो दोनो के पख्य मैं जो कोऊ वाक्य अनुचित होइ सो मेरा अपराध दोनो ने ख्यमा करना ॥ ८ ॥

दोहा—अरुनोदय सकुचे कुमुद, उडगन जोतिमलीन।
तिमि तुम्हार आगमनसुनि, भए नृपति बलहीन॥ २५३॥

जैसे अर्क के उदै भये ते कुमुद पुष्प सकुचे हैं अरु तारागन मलीन भए हैं तैसे हो तुमारा आगमन सुनकर कुटिल नृपति सकुचे हैं अरु उनकिआं सेना की छबि छीन भई है॥ २५३॥

नृप सब नषत करहिंउजियारी। टारिनसकहिं चापतमभारी॥ १॥

नृप रूपी नछत्र प्रकाश करते हैं अर्थ यह भूपति मुखकिआं बातां कर अपना उतकरष जनावते हैं परंतु धनुष रूपी तिमिर को नहीं टार सकते सो तुम टारोगे॥ १॥

कमल कोक मधुकर षगनाना। हरषे सकल निसा अवसाना॥ २॥

जैसे कमल चक्रवाकादिक निशा का अंत भया देखकर हरषे हैं॥ २॥

ऐसे प्रभु सब भक्त तुम्हारे। होइहहि टूटे धनुष सुषारे॥ ३॥
उग्यो भानु बिनु श्रम तम नासा। दुरे नषत जग तेज प्रकासा॥ ४॥

जैसे रवि के उदै भये निरजतन हीं तम नास होता है अरु निखत्र लोप होते हैं तैसे तुमारे प्रकाश कर सभों का भ्रम निवृत्त भया है अरु कुटिल भूप रूपी उडगन द्रवेंगे॥ ४॥

रवि निज उदै व्याज रघुराया। प्रभुप्रताप सब नृपन्ह देषाया॥ ५॥

हे रघुराया आदित ने अपने उदय होण के मिस कर तुमारा प्रताप सब महीपतों को देखाया है तातपरज यह जैसे मैं उदै हुआ हौं तैसे रघुनाथजी का उदै होएगा जाते आज धनुष टूटैगा॥ ५॥

तव भुजबलमहिमा उदघाटी। प्रगटी धनु बिघटनपरिपाटी॥ ६॥

हे प्रभो तुमारी भुज बल के महातम को उदघाटन कहिये प्रगट करने निमित्त प्रगट भई है धनु बिघटन कहिये धनुष तोरने की परपाटी कहिये रीत तत्व यह औरों नृपों से चाप उठाया भी नहीं जाना अरु तुम ने तोर डारना है ताते तुम्हारा प्रताप प्रगटैगा॥ ६॥

बंधुबचन सुनि प्रभु मुसकाने। ह्वै सुचि सहज पुनीत नहाने॥ ७॥

लछमनजी ने जो सुन्दर रीति से भावो बरनन करी है तिस को सुन कर प्रभु हंसे अरु सहजपवित्र जो श्रीरामचंद्र हैं तिनो ने शौच कर स्नान किआ॥ ७॥

नित्यक्रिया करि गुर पहि आए। चरनसरोज सुभग सिरनाए॥ ८॥
सतानंद तब जनक बोलाए। कौसिक मुनि पहिं तुरत पठाए॥ ९॥

मुनीश्वर के समीप गुरों को शीघ्र भेजन मो राजा का भाव यह प्रातकृत्य मों उन कों देर न लगै जातें सभों नृपों से प्रथम आवैं अरु रीतपूरवक उन कों स्थान देखाइके बैठाइये॥ ९॥

जनक बिनयतिन्ह आइ सुनाई। हरषे बोलि लिये दौ भाई॥ १०॥

जब जनक की बिनै सतानंदजी से कौशिक ने सुनी तब राजा की प्रीति अरु बुधमता कों बिचार कर मुदित भये किंवा रघुनाथजी की बिजै का हेतु जान कर प्रसन्न भये तब द्वौ भ्रातन कों निकट बोलाया ॥ १० ॥

दोहा—सतानंदपद बंदि प्रभु, बैठे गुरु पँहि जाइ ।
चलहु तात मुनि कहेउ तब, पठवा जनक बोलाइ ॥ २५४ ॥

जो रामचंद्र कहैं नृप ने किस निमित्त बोलाया है तिस पर कहते हैं ॥ २५४ ॥

सीयस्वयंबर देषिअ जाई । ईस काहि धौं देइ बडाई ॥ १ ॥

हे रामचंद्र सीता का स्वयंबर देखण कों चलो जो ईश्वर किस को बडाई देता है तत्व यह कदाचित तुम कोही देवैं यह वाक्य त्रिकालज्ञ मुनि ने संदिग्ध कहा बात गोप्य राखणे हेतु किंवा प्रभों को सरवज्ञ जान कै तब ॥ १ ॥

लषन कहा जसभाजन सोई । नाथ कृपा तव जापर होई ॥ २ ॥

हे प्रभो जिस पर तुमारी कृपा है सोई जश का भाजन है तत्व यह तुमारी कृपा रघुनाथजी परहो है ॥ २ ॥

हरषे मुनि सब सुनि बर बानी । दीन्ह असीस सबन सुष मानी ॥ ३ ॥

बरबानी कहिए नम्रतादिकों सहित बानी अपर सपष्ट ॥ ३ ॥

पुनि मुनिबृंद समेत कृपाला । देषन चले धनुषमषसाला ॥ ४ ॥

रघुनाथजी कों कृपालु विशेषण देने का भाव यह सामर्थ ईश्वर आप्त काम स्वामी तथापि करुणाकर मुनीश्वरों की प्रसन्नता राखन अरु राजा कों मान देन लोगहुं कों दरशन दे कै निहाल करन निमित्त धनुषजज्ञ कों देखन चले ॥ ४ ॥

रंगभूमि आये द्वौ भाई । अस सुधि सब पुरबासिन्ह पाई ॥ ५ ॥
चले सकल गृहकाज बिसारी । बालक जुबा जरठ नर नारी ॥ ६ ॥
देषि जनक भीर भइ भारी । सुचि सेवक सब लिये हँकारी ॥ ७ ॥

सुचि सेवक कहिये जो अपने बरन धरम महं निपुन होवैं अरु सभ लोकों के अधिकार के भी ज्ञाता होवैं तिन कों कहा ॥ ७ ॥ टिप्पणी—शुचि सेवक = बिश्वासी सेवक ।

तुरत सकल लोगन्ह पहिँ जाहू । आसन उचित देहु सब काहू ॥ ८ ॥

दोहा—कहि मृदु बचन बिनीत तिन्ह, बैठारे नर नारि ।
उत्तम मध्यम नीच लघु, निज निज थल अनुहारि ॥ २५५ ॥

उनो ने सरब बरणाश्रमों कों जथा अधिकार कोमल बचन नम्रता सहित कहि कर आशनो पर बैठाए दिया जाते सुचि सेवक थे ॥ २५५ ॥

राजकुंअर तेहि औसर आए । मनहु मनोहरता तनु छाए ॥ १ ॥

राजकुंअर कहिए राजा के पुत्र अथवा सरब सुंदर कुमारों के शिरोमनि तहां आए हैं औरो के अंगो सो मनोहरता होती है अरु इन के तनहीं मानो मनोहरता के बने हुए हैं ॥ १ ॥

गुनसागर नागर बर बीरा। सुंदर स्यामल गौर सरीरा ॥ २ ॥

दया क्षमा आदिक जो गुण हैं तिनो के सिंधु हैं अरु केवल सतोगुनीही नहीं व्यवहार सो भी नागर कहिये चतुर हैं अरु केवल व्यवहारी नहीं सूर बीर हैं अरु सूरेवत कठोरही नहीं परम सुंदर जिन के तन है ते प्रभु ॥ २ ॥

राज समाज बिराजत रूरे। उडगन महँ जनु जुग बिधु पूरे ॥ ३ ॥

नृपो मे रघुबीरजी ऐसे सुंदर सोभते हैं जैसे तारामंडल मैं है ससी पूरनमासी के होवैं ॥ ३ ॥
टिप्पणी—रूरे अर्थात् विशेषतर शोभा करते हुए अथवा बड़े राजाओं की सभा को विशेष सोभा करने वाला जैसे तारागण में दो पूरे चांद।

जिन्ह कै रही भावना जैसी। प्रभुमूरति तिन्ह देषी तैसी ॥ ४ ॥

तिसी को विस्तारकर कहते हैं परंतु यह प्रसंग आश्चर्यपक भासता है जो कवि का वांछित तौ इन दोनो चरणो मै सिद्ध हू रहा है ॥ ४ ॥ टिप्पणी—इस चौपाई का ब्यौरा जो आगे कहा है उस में नव रस वर्णन किये हैं।

देषहिँ भूप महा रणधीरा। मनहु बीररस धरे सरीरा ॥ ५ ॥
डरे कुटिल नृप प्रभुहि निहारी। मनहु भयानक मूरति भारी ॥ ६ ॥

टिप्पणी—भय रस।

रहे असुर छल कै नृप बेषा। तिन्ह प्रभु प्रगट काल समदेषा ॥ ७ ॥

टिप्पणी—रौद्र रस।

पुरबासिन्ह देषे दौ भाई। नरभूषन लोचनसुषदाई ॥ ८ ॥

टिप्पणी—इस में शृङ्गार रस की कली कही है अगले दोहे में उस का बिकाश है।

दोहा—नारि बिलोकहिँ हरषि हिय, निज निज रुचि अनुरूप।
जनु सोहत सिंगार धरि, मूरति परम अनूप ॥ २५६ ॥

नारीयों को अपनी अपनी रुचि के अनुसार प्रभु भासे जो मानो सृंगाररस मूरति धारकर आया है तत्व यह जैसे सृंगारों में तिन की रुचि थी तैसा तैसा रूप तिन कों भासे किंवा जैसी जैसी तिन की रुचि थी तिस तिस अनुसार सृंगार की मूरति भासते हैं तत्व यह किसू कों पति किसू कों सुत किसू कों भ्रातादिक भासते हैं परंतु परम सुन्दर रूप देखतियां हैं अरु जो शृंगार धर काम का नाम कहि कर अर्थ करिए तौ निज निज रुचि अनुसार का अर्थ नहीं बनता ॥ २५६ ॥

बिदुषन प्रभु बिराटमय दीसा। बहु सुष कर पग लोचन सीसा ॥ १ ॥

बिदुष कहिए पंडित तिनो ने प्रभों को बिराट रूप देख्या सहस्त्रहीं जिस के शिर चरनादिक हैं प्रमाण सुति। सहस्र शीर्षा पूर्षः सहस्राक्षः सहस्रपात्। जिस पुरुष के सहस्र शिर हैं सहस्र नेत्र हैं अरु सहस्र कर चरण हैं॥ १॥ टिप्पणी—बीभत्सरस पंडितों ने प्रभु को बिराटरूप देखा क्योंकि उन की उपासना वही रूप है अर्थात् बहुत से मुख और हाथ और पांव और लोचन और शिर।

जनकजाति अवलोकहिं कैसे। सजन सगे प्रिय लागहिं जैसे॥ २॥

जो जनक के जाति संबंधी हैं तिन को रघुबीरजी जामाता भ्रातासम प्रिय लागते हैं॥ २॥

सहित बिदेह बिलोकहिं रानी। सिसुसमप्रीति न जाइ बषानी॥ ३॥

रानियों संयुक्त जनक कों दोऊ भैया पुत्रहुं सम दीसते हैं जाते जामाता सुत सम कहाही है॥ ३॥ टिप्पणी—यह करुनारस की कली है जनक के सजाती ऐसे देखते हैं जैसे गोद के पुत्र को प्रीति से मा बाप देखते हैं जिस का यथार्थ वर्णन नहीं हो सकता।

जोगिन परम तत्वमय भासा। सांत सुद्ध सम सहज प्रकासा॥ ४॥

जिस आत्मा के शांतशुद्ध आदिक विशेषण हैं योगियों को प्रभु तिस का वपु भासते हैं जोगी ज्ञानी इहां एक अर्थ में हैं॥ ४॥ टिप्पणी—शांतरस योगियों को परम तत्व में दिखाई दिये शांतरस कैसा कि शुद्ध जिस में किसी और रस का मिलाप नहीं और सम अर्थात् बराबर और स्वयंप्रकाश है जिनका।

हरिभक्तन देषे दोउ भ्राता। इष्टदेव इव सबसुषदाता॥ ५॥

हरिभक्त कहिए उपासक तिन को गुरु ईश्वररूप भासते हैं इहां इव पद एववत निश्चै के अर्थ सो हैं प्रयोजन यह रामकृष्ण नरसिंहादिकों रूपों मों जिस की उपासना थी सोई रूप तिस को दृष्टाया॥५॥ टिप्पणी—अद्भुतरस जो जिस देवता को उपासनावाला था उसी देवता के रूप में उन्हें देखा।

रामहि चितव भाव जेहि सीआ। सो सनेह सुष नहि कथनीआ॥ ६॥

टिप्पणी—यह हास्यरस है।

उर अनुभवत न कहि सक सोऊ। कवन प्रकार कहै कवि कोऊ॥ ७॥

सीताजी के भाव कों सीता रिदै मों जानती हैं अरु कहि नहीं सकती तो कवि कैसे कहै इस का आसा यह जुवती भावकर तो स्वामी के संयोग का सुख अकथनीय है वासतव सरूपकर उह चिनमात्र हैं उह चिनशक्ति हैं ताते भी अनिर्वाच्य विश्राम है॥ ७॥

जेहि बिधि रहा जाहि जस भाऊ। तेहि तस देषेउ कोसलराऊ॥ ८॥

टिप्पणी—ऊपर जो चौपाई में प्रभु लिखा था सो वह प्रभु कौशल राउ हैं॥ ८॥

दोहा—राजत राजसमाज महँ, कोसलराजकिसोर।
सुंदर स्यामलगौरतन, बिस्वबिलोचनचोर॥ २५७॥

प्रभों कों सभों के द्रिगन का चोर इसकर कहा यह भी स्याम गौर सुंदर हैं अरु नेत्रों के भी स्याम

गौर रूप हैं अरु जोति विशेष अल्प जोति का भाव अपने में खैंच लेती है सो इस के स्वरूप के प्रकाश के प्रभावकर सभों की दृष्टि इन की ओर लाग रही है ॥ २५७॥ टिप्पणी—रोशनलाल ने निम्न लिखित अर्थ किया है। चौदहविद्याओं में से चोरविद्या का इस दोहे में तरीभार वर्णन है चोर की सब से बड़ाई यह है कि आंखों का काजल चुरा ले सो यह उस से बढ़के है कि विश्व की आंखों को चुरा लेते हैं सो यह चोर विद्या की निपुणता इन को किशोर अवस्था में प्राप्त है तो न जाने आगे क्या करेंगे और चोर छिप के रात के समय राजा के नौकरों से डरता हुआ मूर्खों के यहां चोरी करता है यह ऐसे निपुण चोर हैं कि बड़ी सभा में दिन धौले राजाओं के समाज में निडर हो उन से बड़ी वस्तु अर्थात् सम्पूर्ण विश्व की चोरी को चोरी करते हैं कि जिन आंखों से देखकर चोर पकड़ा जाता है सो उन को भी चुरा लेते हैं अब कौन देखे और कौन पकड़े।

सहज मनोहरमूरति दोऊ। कोटिकामउपमा लघु सोऊ ॥ १ ॥

टिप्पणी—सहज अर्थात् भूषण मन के संग रहनेवाले ऐसी मनोहर मूर्ति हैं कि कोटहान काम की उपमा दीजाय सो भी थोड़ी।

सरदचंदनिंदक मुष नीके। नीरजनयन भावते जीके ॥ २ ॥

टिप्पणी—नीके का शब्द सरदचंद और मुख और नीरज अर्थात् कमल इन सब से लगता है और बिनिन्दक शब्द से भी लगता है अर्थ यह कि मुख शरदचंद का निदंक है और नैन कमल के निंदक हैं इस से जब उपमा दोनों को नष्ट हो गई तो कहने को जगह न रही तो केवल कवि के जी के भाव तें रह गया ॥ २ ॥

चितवन चारु मारमनहरनी। भावत हृदय जात नहिबरनी ॥ ३ ॥

देखने की रीति बड़ी सुंदर है जो कामदेव के मन कों भी मोहती है जिस की वोर देखते हैं उस सुख कों उस का मनहीं जानता है कहि नहीं सकता ॥ ३ ॥

कल कपोल श्रुति कुंडल लोला। चिबुक अधर सुंदर मृदुबोला ॥ ४ ॥

दोनो कपोल अति सुंदर हैं तिन पर कानहुं के कुंडल चंचल सोभते हैं चिबुक अरु अधर सुंदर है अरु कोमल बचन हैं ॥ ४ ॥

कुमुदबंधु कर निंदक हासा। भृकुटि बिकट मनोहर नासा ॥ ५ ॥

कुमुदबंधु जो इंदु है तिनकिआं किरनां कों लजित करनेवाला भगवान का हास है भृकुटी बांकी बड़ी सुंदर है नासिका रुचिर है ॥ ५ ॥

भाल बिसाल तिलक झलकाहीं। कच बिलोकि अलिअवलि लजाहीं ॥ ६ ॥

सुंदर मस्तक पर तिलक सोभता है केसों की सचिक्कन स्यामता कोंदेखकर भमरों के संबूह लज्जित होते हैं ॥ ६ ॥

पीत चौतनी सिरहिं सुहाई। कुसुमकली बिच बीच बनाई ॥ ७ ॥

चौतनी नाम रंगदार पगडी का सा सीस पर सोभती है तिस के बीच सुमन अरु कलिआं बनाइकर धरिआं है कईएक चौतनी टोपी कों कहते हैं परंतु षोडश वरष की अवस्था अरु राजसमाज मों रघुकुल तिलक के सीस पर टोपी कहणी नहीं बनती ताते एही अर्थ प्रमाण है अरु पूर्बला काक पक्ष्य पाठ भी निरस्त भया ताते इहां पुष्प चौतनो मां कहे ॥ ७ ॥ टिप्पणी—रोशनलाल ने निम्न लिखित अर्थ किया है। पीतांबरी चौकानो टोपी शिरों पर शोभित है अर्थात् शिरों से टोपियों की शोभा है और बीच बीच में कुसुम की कलियों से बनाई गई हैं।

रेषैं रुचिर कंबु कल ग्रीवां। जनु त्रिभुवन सुषमा को सींवां॥ ८॥

संख सम ग्रीवां सो सुंदर जो तीन रेखा हैं सो मानहुं तीनहुं भुवन की सोभा तिन महुं समाय रही है ॥ ८ ॥

दोहा—कुंजरमनि कंठाकलित, उरहि तुलसि की माल।
वृषभकंध केहरि ठवनि, बलनिधि बाहु बिसाल॥ २५८॥

गजहु के मस्तकहुं से जो मोती निकसते हैं तिनहुं का सुंदर कंठा है उनमत सिंघ के समान गमन है भुजा लांबीआं हैं अरु बलवान हैं ॥ २५८ ॥

कटि तूनीर पीत पट बाँधे। कर सर धनुष बाम बर कांधे॥ १॥

पीतांबर साथ कटि मो निखंग बांध्या हुआ है चाप बाम कांधि मो पाया हुआ है अरु सायक हाथ मो है ॥ १ ॥ टिप्पणी—पाया = धरा।

पीत जग्यउपबीत सुहाये। नषसिष मंजु महा छबि छाये॥ २॥
देषि लोग सब भये सुषारे। एकटक लोचन चलत नतारे॥ ३॥

तारे कहिये लोचनो के मध्य स्याम पुतलिआं सो स्याममूरति के देखने मों अचलहो रहिआ हैं ॥३॥

हरषे जनक देषि दौ भाई। मुनिपद कमल गहे तब जाई॥ ४॥

जनक अरु कुशकेतु जो दौ भाई हैं तिनहुं ने प्रसन्न हूंकर मुनीश्वर के चरण कमल पकडे किंवा दोनो भाई जो रामचंद्र लक्ष्मन हैं तिन कों देखकर राजा प्रसन्न भया ताते मुनीश्वर के चरण पकडे भाव यह गुरां कों प्रनाम उचित है किंवा जिनो ने ऐसी अद्भुत मूरति का दरसन कराया है तिन को नमस्कार है दोनो पग पकडन का भाव यह है महाराज मेरे गृह मो भी दोनो सुता हैं तिन के पति ए दोनो भैया होवैं किंवा दोनो पग पकडने से राजा ने इह आसे सूचे हे महाराज रंगभूमि देखा अरु मेरा वृत्तांत भी सुनो सोई कहते हैं ॥ ४ ॥

करि बिनती निज कथा सुनाई। रंगअवनि सब मुनिहिं देषाई॥ ५॥

बिनै कर कै अपनी एह कथा सुनाई हे प्रभो जब दक्ष्य के जज्ञ मो सतीदग्ध हुई है तब शिवजी एही धनुष लेकर धाये हैं अरु कोपकर सुरां का बिध्वंस किआ जो तुम ने जज्ञ मो हमारा बिभाग नहीं

रखवाया तब सभ अमरों ने स्तुतकर के शिवजी कों प्रसन्यकर लिया ता समै निमि का ज्येष्ठ पुत्र देव-राट नामा हमारा बडा उर्हा था तब त्रिदशों के संमतकर कहिये देवत्यों के कहे महादेव ने धनुष देवराट को दिया अरु कोप निवारा तब का चाप हमारो कुल मै पूजीता है कूर्म पुराण में भी ऐसेहीं लिखा है अध्यात्म मै अरु भारत में ऐसे कहा है त्रिपुरदैत को मारकर शिवजी मिथिलापुर में धनुष धर गये थे सो कल्पांतर भेद जानना अरु एक समै जानकी ने खेलते हुए सखियों के बीच सुभाविकहीं धनुष कों उठाय लिया अरु कन्या में अधिक बली पति की परिख्या निमित्त मैं ने धनुष तोडावने की प्रतिज्ञा करी थी सो मेरा मनोरथ तुमारी कृपाकर सफल होएगा इत्यादिक कथा सुनाइकर रंगभूमि की रचना सभ संग होइकर देखगई ॥ ५ ॥ टिप्पणी—रौशनलाल ने निम्न लिखित अर्थ किया है। निज कथा अर्थात् प्रन आदि की कथा सो यह है कि एक कल्प में राजा जनक अपने घर से कुछ अन्तर पर धनुष की पूजा करने जाते थे एक दिन सीता उन के साथ गईं सो अपने मन में विचारा कि पिता इतनी दूर इसी कारण श्रमकर आते हैं इस से उस को उठाकर अपने घर ले आईं दूसरे कल्प में जहां राजा जनक पूजा करते थे वहां धनुष रक्खा हुआ था और पूजा करने का स्थान नित्य सीता की माता लीपती थीं परन्तु धनुष के कारण चौकोर नहीं लिपता था एक दिन उन को कुछ काम लग गया इस कारण सीता लीपने को गईं और उन्हों ने धनुष को हटा के सीधा चौक लीप दिया तीसरे कल्प की यह कथा है कि लड़कियों के साथ सीता उस स्थान के आस पास जहां धनुष धरा था चाईं मांईं खेलती थीं ओढ़नी का अंचल धनुष में अटका और वह धनुष अपने स्थान से हट गया तीनों कल्पों में ऐसा चमत्कार देखकर राजा जनक ने जाना कि यह ब्रह्म विद्या है जो इस धनुष को तोड़े उसके साथ इन का बिबाह करना योग्य है सो यह सब कथा विश्वामित्र को सुनाई।

जहँ जहँ जाहिँ कुंवरबर दोऊ। तहँ तहँ चकित चितव सबकोऊ ॥६॥

जुगल कुमारों कों देख कर लोकों के चक्रत होने का भाव यह सरूप की सुन्दरता अधिक है किंवा सभी लोक कहते हैं रामचंद्र धनुष तोडेंगे अरु इन की कुमार अवस्था अरु परम कोमल देह दृष्टि आवती है यह बात कैसे बनैगी ॥ ६ ॥

निज निज रुष रामहि सब देषा। कोउ न जान कछु मरम बिसेषा ॥ ७ ॥

सभ लोकों ने अपनी अपनी ओर श्रीरामचंद्र का मुख देख्या अरु यह मरम किसी ने न जान्या रघुनाथजी का मुख एक वोर है वा सर्व ओर है ॥७॥ टिप्पणी—अपने अपने ओर राम को सब ने देखा परन्तु इस का मरम किसी ने नहीं जाना यह रघुनाथ का रहस्य है जिसे वे वा उन के जन जानते हैं।

भलि रचना मुनि नृप सन कहेऊ। राजा मुदित महा सुष लहेऊ ॥ ८ ॥

महा सुख का भाव यह नृप ने विचार्या जिस मुनिवर पर्ह त्रिलोकी रचन को सामर्थ है तिस ने जो मेरे स्थान सराहे हैं ताते मेरा जतन सफल भया अरु होवैगा ॥ ८ ॥

दोहा—सब मंचन ते मंच एक, सुंदर बिसद बिसाल।

मुनि समेत दो बंधु तहं, बैठारे महिपाल ॥ २५९ ॥

वह मंच सुन्दर अधिक अरु बिस्तार मै भी बिशाल था तहां तीनो एकत्र बैठे ॥ २५९ ॥

प्रभुहिं देखि सब नृप हिय हारे । जनु राकेस उदय भय तारे ॥ १ ॥

टिप्पणी—सब राजा अन्तस में ऐसे हार गये जैसे राकेश अर्थात् शरद पूनों के चन्द्रमा को देख कर तारे हार जाते हैं ॥ १ ॥

अस प्रतीति सब के मन माहीं । राम चाप तोरब सक नाहीं ॥ २ ॥

सभों के मन मों ता समै यह प्रतीति भई श्रीरामचंद्रजो धनुष तोड़ैंगे इस बात मों सक कहिए संदेह नहीं जौं कहो शंकर का धनुष है रामचंद्र से भी न टूटै तौ क्या आश्चर्य है तिस पर कहते हैं ॥ २ ॥

बिनु भंजे भवधनुष बिसाला । मेलिहि सीय राम उरमाला ॥ ३ ॥

अस बिचारि गवनहु घर भाई । जस प्रताप बल तेज गँवाई ॥ ४ ॥

यह मरम बेधी वाक्य भूपतों की परिख्या निमित्त जब किसू नृप ने कहा तब ॥ ४ ॥

बिहँसे अपर भूप सुनि बानी । जे अबिबेक अंध अभिमानी ॥ ५ ॥

जोन से अभिमानी मूढ़ताकर अंधे थे ते हास मों तिन का निरादरकर कहत भए ॥ ५ ॥

तोरहु धनुष ब्याह अवगाहा । बिनु तोरे को कुअंरि बिवाहा ॥ ६ ॥

जो धनुष को तोरे सो बिवाहकर के सीता कों अवगाहै अर्थ यह जानकी के सुख भोगैं किंबा अवगाहन पद नदो तरन के अर्थ बिषे है जौं रामचंद्र चाप कों तोरैं तौ सी हम सुभटन रूपी सरिता को अवगाह कहिये संग्राम मों पैरकर सीता बरैं अरु कारमुक तोरे बिना सीता का बरना कहां ॥ ६ ॥

एक बार कालहु किन होऊ । सिय हित समर जितब हम सोऊ ॥७॥

एक बार कथन का आसा यह कबी तो कालने सरीर कों जीतनाही है परंतु अबको बेर तौ सीता के निमित्त हम काल कों भी जीतैंगे ॥ ७ ॥

यह सुनि अपर भूप मुसुकाने । धरमसील हरिभक्त सयाने ॥ ८ ॥

तिन मूढ़ों के बचन सुनकर जो धरमात्मा अरु भगवंत के भक्त राजा हैं ते मुसकाए अरु बोले ॥ ८ ॥

सोरठा—सीतहिं ब्याहब राम, गर्व तोर कर नृपन के ।

जीति को सक संग्राम, दसरथ के रनबांकुरे ॥ २६० ॥

बांकुरे नाम बांके का अरु चतुर का भी अपर सपष्ट ॥ २६० ॥ टिप्पणी—दशरथ जिन का समर टेढ़ा है उन के यह हैं वा दशरथ के यह पुत्र हैं जो रण में बांके हैं ।

ब्यर्थ मरहु जनि गाल बजाई । मनमोदकनि कि भूख बुताई ॥ १ ॥

बकवाद कर के ब्यर्थ काहे को मरते हो जौं कहो हम सीता के प्राप्ति की इच्छा करते हैं तौ मन के

संकल्पकर रचित जो मिष्ट द्रव्य है तिनों कर तन की भूष नहीं मिटतो तौ कहो तुमारे मत में क्या भावता है तिस पर कहते हैं ॥ १ ॥

सिष हमार सुनि परम पुनीता । जगदंबा जानहु जिअ सीता ॥ २ ॥

टिप्पणी—सिख हमार जो परम पुनीत है सो सुनो ।। २॥

जगतपिता रघुपतिहिं बिचारी । भरि लोचन छबि लेहु निहारी ॥ ३ ॥

टिप्पणी—बिचारी का अर्थ यह कि देखने में लड़का लड़के हैं परन्तु विचार में जगत के माता पिता हैं ।

सुंदर सुषद सकलगुनरासी । ए दोउ बंधु संभुउरबासी ॥ ४ ॥

सुधा समुद्र समीप बिहाई । मृगजल निरषि मरहु कत धाई ॥ ५ ॥

प्रथम जिन का रूप मनोहर तिस पर सभों के सुखदायक अरु गुणो के सिंधु तिस पर भी शंकरजी के सेव्य ऐसे सुधा के समुद्रवत सब भांति आनंद दायक जो रघुनाथजी हैं तिन के मिलाप का सुख त्याग के मृगतृष्णा के जलवत जो सीता की प्राप्ति है जिस को तुमारा हाथ सपरसही नहीं होना तिस हेतु मूढ़ों मृगोंवत क्यों जतनकर के मरते हो मृगतृष्णा का द्रष्टांत सीता को देवन का भाव यह सीता मायारूप है जो वह कहै हम तुमारा कहा नहीं मानते तिस पर कहते हैं ॥ ५ ॥

करहु जाइ जाकहँ जो भावा । हम तौ आजु जन्मफल पावा ॥ ६ ॥

अस कहि भले भूप अनुरागे । रूप अनूप बिलोकन लागे ॥ ७ ॥

देषहिं सुर नभ चढ़े बिमाना । बरषहिं सुमन करहिं कल गाना ॥ ८ ॥

दोहा—जानि सुअवसर सीय तब, पठई जनक बोलाइ ।
चतुर सषी सुंदर सकल, सादर चली लवाइ ॥ २६१ ॥

सुअवसर जान के सीताजी को राजा जनकजी ने बुलाय पठाया तब चतुर सखियां तिस को सनमान पूरबक कहिये शृंगारत कर आप चारों ओर हूं के ले आइयां सुअवसर कथन का भाव यह राजा आय बैठे हैं सीता को देषे बिना धनुष को बल नहीं लगावते ताते बोलावने का अब अवसर है किंवा मारगों की भीड निवृत्त भई है जाते समाज एकत्र भया है अब जानकी के आवन का अवसर है किंवा यह महूरत अति शुभ है इस समै में आई सीता की अभिलाषा अवश्य पूरण होयगी अब सीता की अनूपमता अरु तिस का हेतु कहते हैं ॥ २६१ ॥

सियसोभा नहि जाइ बषानी । जगदंबिका रूपगुनषानी ॥ १ ॥

सीता जू की सोभा कही नहीं जाती जाते जगतजननी है ताते पुत्रों को माता की रूप की सोभा कथन अनुचित है अरु बानी से भी परे है जाते रूप अरु गुणो का सिंधु है अरु और हेतु भी है ॥ १ ॥

उपमा सकल मोहि लघु लागी । प्राकृतनारिअंगअनुरागी ॥ २ ॥

सीय बरन सो उपमा देई। कुकबि कहाइ अजस को लेई॥ ३॥

ससि सम मुख मृगोंवत नैन इत्यादिक जो उपमा है सो कबीश्वरो ने आगेही प्राकृतियों नारियों में दोनी हुई है अरु मुझ कों तुछ भी भासियां हैं ते लघु अरु उच्छिष्ट उपमा जानकी कों देकर आप कों कुकवि कौन कहावै जों कोऊ कहै शुक नामा आदिक उपमा तुम नहीं देते तब जो पूरब सुंदर इस्त्रियां भइयां हैं तिन की सदृशता कहो तिस पर कहते हैं॥ ३॥

जौं पटतरिअ तीय सम सीया। जग अस जुवति कहाँ कमनीया॥ ४॥

जौं और इस्त्रियां का पटतरा सीताजी कों दीजिए तो जग कहिये त्रिलोकी महं सीता जेसियां सुंदर इस्त्रियां कहां हैं जौं कोऊ कहै सुरसखियों की सोभा नहीं देते तो भारती आदिकों की उपमा देओ तिस पर कहते हैं॥ ४॥

गिरा मुखर तन अर्ध भवानी। रति अति दुखित अतनुपति जानी॥ ५॥

सरब जगत मैं सरस्वती सुंदर है परंतु मुखर है जाते सब की रसना पर बोलती है प्रयोजन यह अधिक बोलनहारा सुंदर नहीं लागता अरु पारबती कों सुंदर कहोगे सो सुंदर तो निश्चै हैं परंतु शिवजी के अरधंग सो सदा रहती है ताते दाहिना अंग तो उमा का दृष्टही नहीं आवता एक बाम अंग प्रगट है तिस को जानकी की समता कैसे दीजिये रति कों सुंदर कहो तो बिधवा की शोभा पूरन नहीं रहती ताते वह सो अति दुखित है तिस कों सीता के तुल्य कैसें कहिये जौं कहो लख्यमी तो सर्ब गुणो संपन्न है तिस पर कहते हैं॥ ५॥

बिष बारुनी बंधु प्रिय जेही। कहिअ रमा सम किमि बैदेही॥ ६॥

जद्यपि रमा सुंदर है परंतु सहोदर के सुभाव अवस्य पडते हैं सो लख्यमी कियां भगनियां विष बारुनी तिस को उत्तम भगनियोंवाली जो सीता है तिस की उपमा कैसे दीनी जाय बैदेही कथन का भाव यह पिताकर भी समता नहीं जाते उस का पिता जडतत सिंधु इस का पिता ज्ञानवानों का शिरो मणि जौं कहो सीताजी की सोभा निमित्त किसी का पटतरा तो दिया चाहिये तिस पर कहते हैं॥ ६॥

जो छबि सुधापयोनिधि होई। परमरूपमै कच्छप सोई॥ ७॥

सरब जगत कियां छबांरूपी जो अमृत है तिस का होए समुद्र अरु सरब जगत के जो सुंदर रूप हैं सोई होय कुर्म॥ ७॥

सोभा रजु मंदर सिंगारू। मथै पानिपंकज निज मारू॥ ८॥

सरब जगत की जो सोभा है सो होवै रजु अरु सृंगार होवै मंद्राचल अरु कामदेव अपने हस्तकमलों कर मथै॥ ८॥

दोहा—एहि बिधि उपजै लच्छि जब, सुंदरतासुषमूल।
तदपि सकोच समेत कबि, कहैं सीय सम तूल॥ २६२॥

एहि जुक्ति सें सर्व सौंदर्ज अरु सुखों को मूल जब लछमी उतपत्ति होवै तब भी कवीश्वर सकुच कर तिस कों सीताजी की समता देवैं समतूल जो पुनरुक्त पद है सो देस भाषा है अरु दूसरा पद पूरण निमित्त राखा है ॥ २६२ ॥

चली संग लै सषी सयानी । गावत गीत मनोहर बानी ॥ १ ॥

सरब भांति के ब्यवहार समुझन में जो सयानिआं हैं सो सखिआं सुन्दर गीत गावती हुयां सीताजी कों संग ले चलिआं ॥ १ ॥

सोह नवल तनु सुंदर सारी । जगतजननि अतुलित छबिभारी ॥ २ ॥

सीताजी का जो नवीन तन है सो सुन्दर बस्त्रकर सोभता है किंवा तन पर रुचिर पट सोभता है विशेष छबि इस कर नहीं कही जो जगत की जननी है पुन: छबि भी अतुल है कथन मो नहीं आवती ॥ २ ॥

भूषन सकल सुदेस सोहाये । अंग अंग रचि सषिन्ह बनाये ॥ ३ ॥

सुदेश कहिये जहां जहां जो चाहीते हैं अथवा सरब सुन्दर देशों के जो स्रेष्ट भूषण हैं सो सखिवों ने सरब अंगों में पहिराये हैं ॥ ३ ॥

रंगभूमि जब सिय पगु धारी । देषि रूप मोहे नर नारी ॥ ४ ॥

टिप्पणी—एक अर्थ सीधा है दूसरा अर्थ यह कि जब सीता ने पांव धरा तब रंग भूमि हो गई और उस को देख के सब नर नारी मोह गये ॥ ४ ॥

हरषि सुरन दुंदुभी बजाई । बरषि प्रसून अपछरा गाई ॥ ५ ॥

सकल अमरों के अति हरष होने का भाव यह अब रघुनाथजू सों जानकी का बिवाह होवेगा तौ हमारे संकट मिटन का उपाय भी होएगा ॥ ५ ॥

पानिसरोज सोह जयमाला । अवचट चितए सकल भुआला ॥ ६ ॥

सीताजी के हस्त कमलों में जैमाला सोहती है किंवा कमलों की जो जैमाला है सो करों मैं सोभती है । अवचट कहिये चकृत हूवै के सीताजी की अधिक सुन्दरता कों नृप देखते हैं ॥ ६ ॥

सीय चकितचित रामहिं चाहा । भये मोहबस सब नरनाहा ॥ ७ ॥

सीता को जो श्रीरामचंद्र दृष्टि नहीं आए ताते चकित हूवै के सरब ओर देखती है तब राजे अपनी ओर से मैथली की दृष्टिउपरत देख कर मोह बस कहिये जडवत हूवै गए हैं ॥ ७ ॥

मुनि समीप देषे दौ भाई । लगे ललकि लोचन निधि पाई ॥ ८ ॥

तब सीताजी ने कौशिक के निकट दो भाई देखे तदनंतर ललक कहिये उमग के नैन प्रभों के दरसन की ओर लगे जैसे किसू कों निधि प्राप्त होइ ॥ ८ ॥

दोहा—गुरजनलाज समाज बड, देषि सीय सकुचानि ।
लगी बिलोकन सषिन तन, रघुबीरहि उर आनि ॥ २६३ ॥

बडियां इस्त्रियां जो संग हैं तिन की लजाकर अरु बडे समाज की संकाकर जानकी सकुची तब प्रभों का ध्यान रिदै मों धारकर जैसे श्रीरामचंद्र को ओर देखया था तिसी रीति सें सखियों की ओर देखने लग गई उस दृष्टि के छिपावने निमित्त सखियों की ओर देखण का भाव यह धनुष टूटे बिना तौ श्रीरामचंद्र का मिलाप नहीं होता तब लग मैं अपनी गंभीरता तौ राखौं ॥ २६३ ॥

रामरूप अरु सियछबि देषी। नर नारिन्ह परिहरी निमेषी ॥ १॥

सोचहिं सकल कहत सकुचाहीं। बिधि सन बिनय करहिंमनमाहीं ॥२॥

चितवनी तौ लोक यह कहते हैं धनुष कों कोई ओर न तोडै जातें श्रीरामचंद्र हीं सीता कों जोग हैं अरु लोगो मैं कहते इस कर सकुचते हैं राजा की बेटी की बात है तातें बिध के आगे बेनती कर कहते हैं॥२॥

हरु बिधि बेग जनकजडताई। मति हमार अस देहु सुहाई ॥ ३ ॥

हे देव चाप तोडे बिना सीता रघुनाथजी कों ना देन रूपी जो जनक की जडता कहिए हठ है सो निवार कै इस को भी हमारे जैसी बुद्धि देहु जों कहो तुमारा सिद्धांत क्या है तिस पर कहते हैं ॥ ३ ॥

बिनु बिचार पन तजि नरनाहू। सीय राम कर करै बिबाहू ॥ ४ ॥

हान लाभ का बिचार राजा कुछ न करै हठ त्याग कर रामचंद्र सों सीता का बिवाह कर देवै जों कोऊ कहै राजा भी चाहता है रामचंद्र सों सीता का बिवाहु परंतु लोकापवाद सों भय करता है तिस पर कहते हैं ॥ ४ ॥

जग भल कहि भाव सब काहू। हठ कीन्हे अंतहुं उर दाहू ॥ ५ ॥

असंख्यात जो लोक इहां हम हैं तिन सभों कों एही बात भावती है तातें जानते हैं सरब जगत भलाही कहेगा अरु जों राजा ने प्रण का हठ किया अरु सीता कों जथाजोग बर न मिला तब उस का भी रिदा जलता रहेगा अथवा एसि समाज में भी जो धनुष किसी सि न तोडया अरु कन्या कुआरी रही तब भी रिदे का दाह रहेगा ॥ ५ ॥

येहि लालसा मगन सब लोगू। बर सांवरो जानकी जोगू ॥ ६ ॥

तब बंदीजन जनक बोलाए। बिरदावली कहत चलि आए ॥ ७ ॥

कह नृप जाइ कहहु पन मोरा। चले भाट हिय हर्ष न थोरा ॥ ८ ॥

स्वामी ने जो निज मुख सें सेवा फुरमाई है इस कर भाटों कों अति हरष भया किंवा महान समाज मो जो अपने भूप की सत्य प्रतज्ञा सुन्दर पदहुं कर कहने है तिस कर अत्यंत प्रसन्नता किंवा बंदियों के मन ने श्रीरामचंद्र सें सीता के बिवाह का उत्साह रूपी सगुन लखा है तिस कर महा आनंद भये॥८॥

दोहा—बोले बंदी बचन बर, सुनहु सकल महिपाल।

प्रन बिदेह कर कहहिं हम, भुजा उठाइ बिसाल ॥ २६४ ॥

.. भाट कहते हैं जदपि इस समाज में सरब लोक हैं परंतु हम केवल चत्रियों को तिन मो भी भूपतीं कों बिदेह का प्रण सुनावते हैं जाते तरक की बात सुन कर महो के पालनहारों को हीं तमक चडती है भुजा ऊंची कर कहणा स्वामी की उतकृष्टता निमित्त के अपनी बुद्धि की बडाई हेतु के बचन की अति सपष्टता निमित्त बिदेह पद कथन का भाव यह अज्ञानीयो के प्रण मिट भी जाते हैं अरु ज्ञानग का ज्ञात पूरवक प्रण होता है सो निवृत नहीं होता अब प्रण के कथन मों नृप की स्तुत ब्याज लघुता अरु चाप को अति महिमा अरु धनुष भंग मों महालाभ देखावते हुए कहते हैं ॥ २६४ ॥

नृपभुजबल बिधु सिवधनु राहू। गरुअ कठोर बिदित सब काहू ॥ १ ॥

भूपहुं के भुज दंडहुं के बल रूपी चंद्रमा के आछादन कों शिवधनु राहु के तुल्य है तिस की गिरिष्टता अरु कठोरता कों सभ जानते हैं जातें ॥ १ ॥

रावन बान महा भट भारे। देखि सरासन गवहिं सिधारे ॥ २ ॥

रावन का अरु बानासुर का पूरब समाज मों आगमन भया है यह बात रामचंद्रिका मा किसी पुरान के प्रमान मों कही है सो सरासन कों देख कर हीं गवहिं सिधारे कहिये चले गए हैं तत्व यह चाप कों हाथ नहीं छुहाया ॥ २ ॥

सोइ पुरारिकोदंड कठोरा। राजसमाज आजु जेइ तोरा ॥ ३ ॥
त्रिभुवन जय समेत बैदेही। बिनहिं बिचार बरै हठि तेही ॥ ४ ॥

तिस कठिनभव धनुष कों जो कोऊ तोरै तिस को त्रिलोकी को जय सहित बैदेही बिना बिचार बरैगी अर्थ यह तिस का रूप शीलादिक कछु न बिचारैगी ॥ ४ ॥

सुनि पन सकल भूप अभिलाषे। भट मानी अतिसय मन माषे ॥ ५ ॥

जो सूरता के मानी हैं अरु जिन के मन मो अतिक्रोध है अर्थ यह औरों का उतकर्ष नहीं सहारते मो यह बात सुनकर इच्छा करत भये ॥ ५ ॥

परिकर बांधि उठे अकुलाई। चले इष्ट देवन सिर नाई ॥ ६ ॥

कटों मों वस्त्र बांध के अरु अपने उपास्यों कों मनाइ के बिकल होयकर उठे अर्थ यह बडे छोटे के आगे पीछे का बिचार ना किआ किंबा शीघ्र उठे जो प्रथम हमहीं धनुष कों उठावें अथवा सीता के रूप देखकर मन मोहित भया है ताते ब्याकुल भये हैं जो किसी प्रकार जानकी मिले। ननु । राजे तो अपने इष्टदेवन कों मनायकर चले थे उन का मनोरथ सिद्ध क्यों न भया। उत्तर। धनुष त्रपुरारि का तिस के तोडने निमित्त उद्योग किआ अरु श्रीरामचंद्र साख्यात ईश्वर तिन कों विद्यमान छोडा अपने इष्ट जो सामान देवता हैं तिन कों बंदनाकर अपने कारज की सफलता चाहते हैं जैसे कोई जलनिधि कों तरा चाहै अरु अपनी मूढता से अल्प जलवान जो तडाग हैं तिन का पूजन करै ॥ ६ ॥

तमकि तमकि तकि सिवधनु धरहीं। उठै न कोटि भांति बल करहीं ॥ ७ ॥

तमकि कै कहिए कुपुत होकर कै धनुष कों टेखते हैं अरु उठावते हैं जब एक हाथ से धनुष नहीं उठता तब दोऊ हाथ लगावते हैं जब दृढ़करन में भी नहीं उठता तब पगों का बल देते हैं ऐसे अनेक प्रकारों का बल लगावते हैं अरु ॥ ७ ॥ टिप्पणी—कुपुत = क्रोधित ।

जिन्ह के कछु बिचार मन मांही । चाप समीप महीप न जांही ॥ ८ ॥

जिनो नृपों कें मन मो कुछ बिचार है अर्थ यह परवधत पर प्रसन्य हैं किंवा चाप को अपने बल से गरिष्ट जान्या है कै ओरों कें बल देखन पूरबक बिचार भया है वा रघुनाथजी के प्रभाव की कुछ वेत्ता हैं ते आशनो से उठेही नहीं ॥ ८ ॥

दोहा—तमकि धरहिं धनु मूढ़ नृप, उठै न चलहिँ लजाइ ।
मनहु पाइ भट बांहुबल, अधिक अधिक गरुआइ ॥ २६५ ॥

मूढ़ राजा तमकि कें धनुष कों पकडते हैं जब नहीं उठता तब लज्जित होकर चले जाते हैं सो मानो भूपों की भुजा का बल धनुष कें बीच पकडता जाता है ताते धनुष भारी होता जाता है इस कथन का आसा यह है अध्यातम में कहा है पंचहजार मल्ल धनुष कों उठाय ल्याए अरु इहां कहते हैं ॥२६५॥

भूप सहस दस एकहि बारा । लगे उठावन टरै न टारा ॥ १ ॥

दशसहस्र नृप यह विचारकर उठावन लगे थे जो प्रथमे धनुष तोडकर पुनः आपुस मों जुद्ध करेंगे जो जिवता बचेगा सो सीता कों बरेगा तदपि ॥ १ ॥ टिप्पणी—एकबार = एकदिन ।

डगै न संभुसरासन कैसे । कामीबचन सतीमन जैसे ॥ २ ॥
सब नृप भए जोग उपहासो । जैसे बिनु बिराग सन्यासी ॥ ३ ॥
कीरति बिजै बीरता भारी । चले चाप कर बरबस हारी ॥ ४ ॥

जो पोकें दानहुं जन्नहुंकर इन का जश था अरु जुद्धहुं में जै पाई हुई थी सो सूरमत्व था जो बल था तिस का बधाया चाहते थे सो मूढ़ता कें बलकर धनुष कें हाथ बिवस आप से हार चले ॥ ४ ॥

श्रीहत भए हारि हिय राजा । बैठे निज निज जाइ समाजा ॥ ५ ॥

रिटे का उत्साह जिन का भ्रष्ट भया है अरु मुख की छबि भ्रष्ट भई है सो शिर नीचाकर कें अपने सेवकों मों जाइ बैठे ॥ ५ ॥

नृपन्ह बिलोकि जनक अकुलानें । बोले बचन रोष जनु सानें ॥ ६ ॥

ननु । रोषसानें कहना था मानो पद किस निमित्त दिया । उत्तर । बिदेह की दृष्टि विषे जगतही नहीं तब रोष कैसे होवे परंतु तिस की व्यवहारक उक्ति कहते हैं ॥ ६ ॥

दीप दीप के भूपति नाना । आए सुनि हम जो पनठाना ॥ ७ ॥
देव दनुज धरि मनुजसरीरा । बिपुल बीर आए रनधीरा ॥ ८ ॥

हे भाई सभों खंडो दीपों के नृप अनेक अपनिमां शक्तांकर आए तिस पर भी हमारा धनुष तुडावनरूपी प्रन सुनकर आए अरु केवल मानव नहीं सुरासुर जो बडे बीर अरु रणधीर है ते भो मनुजतन धारकर आए अरु अल्प लाभ में भी बडे पुरुष उपेक्ष्या करते हैं सो इहां ॥ ८ ॥

दोहा—कुंअरि मनोहरि बिजय बडि, कीरति अतिकमनीय ।
पावनहार बिरंचि जनु, रच्यो न धनुदमनीय ॥ २६६ ॥

सीतारूपी कुंअरि भी बडी मनोहर है अरु जो धनुष रावणादिकों सों नहीं टूटा तिस के तोडनेकर बिजै बडी है अरु यह सुंदर कीरति भी युगों प्रयंत रहनेवाली है परंतु जानिता है इन तीनों पदारथों के पावनेहारा अरु धनुष तोडनेहारा बिधाता ने मानों कोऊ रचा नहीं ॥ २६६ ॥

कहो काहि यह लाभ न भावा । काहु न संकरचाप चढवा ॥ १ ॥

टिप्पणी—यह लाभ कहो किस को नहीं भावता । अर्थात् सब को भावता है ।

रहौ चढाउव तोरब भाई । तिल भरि भूमि न सके छडाई ॥२॥

तोरना अरु पनच चढावना तो रहा था पृथ्वी से ऊंचाही किसू से नहीं होता तत्व यह कहो ऐसे निरबल भए हैं तो राख्यसो नें सृष्टि जीति लीनी है ताते ॥ २ ॥ टिप्पणी—पनच = धनु ।

अब जनि माषै कोउ भटमानो । बीरबिहीन मही मैं जानी ॥ ३ ॥
तजहु आस निज निज गृह जाहू । लिषा न बिधि बैदेहिबिवाहू ॥ ४ ॥

जौं कोऊ कहै नृप में पराक्रम रह चूका तो चाप टूटन का हठ तुमहीं त्याग देवोतिस पर कहते हैं ॥ ४ ॥ टिप्पणी—नृप = राजा ।

सुकृत जाइ जौं पन परिहरऊं । कुंअरि कुंआरि रहौ का करऊं ॥ ५ ॥

मुझे असमंजश बना है जौं प्रन का त्याग करौ तो धरम नास होय अरु जौं प्रन राखौं तौ कन्या कुंआरी रहेगी ताते मैं क्या उपाव करौं किंवा कन्या कुआंरी रहौ तो रहोमै प्रन नहीं त्यागता परंतु ॥५॥

जौं जानत बिनु भट महि भाई । तौ पन करि होतेउं न हंसाई ॥६॥

हे भाई जौं मैं जानता बसुंधरा में बीर कोऊ नहीं तो प्रन कर कै आप को हासी ना करावता ॥ ६ ॥

जनकबचन सुनि सब नर नारी । देषि जानकिहिं भए दुषारी ॥ ७ ॥

जनक के दीन वाक्य सुनकर अरु सीता की परम सुंदर नवीन अवस्था मों पति प्राप्ति का संदेह देवकर सभी लोक अति चिंतातुर भये ॥ ७ ॥

माषे लषन कुटिल भइ भौहैं । रदपट फरकत नयन रिसौहैं ॥ ८ ॥

लख्यमनजी कोपे भृकुटी कुटिल भई अरु अधर फरकने लागे नेत्र लाल भए ॥ ८ ॥

दोहा—कहि न सकत रघुबीरडर, लगे बचन जनु बान ।

नाइ रामपदकमल सिर, बोले गिरा प्रमान ॥ २६७ ॥

श्रीरामचंद्र के भय कर लछ्मनजी बोल नहीं सकते परंतु बचन जो बिसखों सम लगे तब प्रभों के पगों पर प्रनाम कर कै प्रमान गिरा बोले बान कथन का भाव यह जैसे मरमबेधीसायक लगे हाहाकार किए बिना किसू सें रहा नहीं जाता तैसे प्रभों के समोप न था भी बोलना तथापि इन से रहा न गया अरु प्रणाम करणे का भाव यह हे प्रभो मेरी अवज्ञा छ्यमा करणी जाते मैं आज्ञा बिना बोलता हों तब प्रमाण वाक्य कहिये जिस में स्वामी का सनमान रहे अरु अपने बल में अधिक भी न होवे सोई देखावते हैं ॥ २६७ ॥

रघुबंसिन्ह महं जहं कोउ होई। तेहि समाज अस कहै न कोई ॥ १ ॥
कही जनक जस अनुचित बानी। बिद्यमान रघुकुलमनि जानी ॥ २ ॥
सुनहु भानुकुलपंकजभानू। कहौं सुभाउ न कछु अभिमानू ॥ ३ ॥

इस कथन का भाव यह है जैसे भानु कों देख कर कमल प्रफुल्लित होते हैं तैसे तुमारे प्रताप कर हमारा उत्साह संजुत बोलना हुआ है। सुभाउ कहिये परम जथारथ वाक सो मैं कहता हों हंकार कर रंचक भर भी मिथ्या न कहोंगा ॥ ३ ॥

जौं तुम्हार अनुसासन पावौं। कंदुक इव ब्रह्मांड उठावौं ॥ ४ ॥

कंदुक नाम गेंद का अपर सुगम ॥ ४ ॥

कांचे घट जिमि डारौं फोरी। सकौं मेरु मूलक जिमि तोरी ॥ ५ ॥
तव प्रताप महिमा भगवाना। कोबा पुरो पिनाक पुराना ॥ ६ ॥

कोवा कहिये क्या है पुरो कहिये सनमुख जीरन धनुष अथवा को कहिये क्या बापुरो कहिये तुच्छ इहां पिनाक पद शिव संबंध कर इसो धनुष का वाचिक है अपर सपष्ट ॥ ६ ॥

नाथ जानि अस आयसु देऊ। कौतुक करौं बिलोकिय तेऊ ॥ ७ ॥

हे नाथ इस दास का ऐसा बल जान कर जौं आज्ञा करो तो मैं एक और कौतुक देखावौं सो सुनो ॥ ७ ॥

कमलनाल जिमि चाप चढावौं। जोजन सत प्रमान लै धावौं ॥ ८ ॥

टिप्पणी—कमल नाल कमल की डांडी उत्तर राजा जनक को इस बात का है कि। तिल भर भूमि न काहु छुड़ाई। अर्थ यह कि मैं सौ योजन प्रमाण तक ले कै दौड़ जाऊं एक अर्थ यह भी होता है जो मैं आप को सत्य जानता हूं तो प्रमाण करता हूं कि उसे लेकर जाऊं ॥ ८ ॥

दोहा—तोरौं छ्चकदंड जिमि, तव प्रतापबल नाथ।
जौ न करौं प्रभुपदसपथ, कर न धरौं धनुभाथ ॥ २६८ ॥

छ्वक दंड कहिये जो बरषा रितु मैं स्वेत छतरियां उपजतिआ हैं तिनों सम चाप को तोरौं तुमारे प्रताप के बल कर अरु जौं यह उक्त सांचो न करौं तो फेर धनुषबान न धारना ॥ २६८ ॥

लषन सकोप बचन जब बोले। डगमगात महि दिग्गज डोले ॥ १ ॥

धरा का अरु दिग्गजों का कांपना लख्यमनजी को बचन की पुष्टता हेतु ॥ १ ॥

सकल लोक सब भूप डेरानें। सियहिय हर्ष जनक सकुचानें ॥ २ ॥

नृपों सहित सभ लोग डरे जो पृथ्वी फट गई तो हमारा क्या बल चलेगा। सीताजी के रिदे कों हरष इस कर भया जो हमारे सहायक पहुंचे अरु जनक को संकोच इस कर भया श्रीरामचंद्र का प्रताप मै ने मुनीश्वरा में सुना था पुन: आप भी निश्चै किया था तौ भी मै ने एती बात अनुचित कही जो पृथ्वी में बीर कोऊ नहीं ॥ २ ॥

गुर रघुपति सब मुनि मन माहीं। मुदित भये पुनि पुनि पुलकाहीं ॥ ३ ॥

इन सबन कों हरष का भाव यह अति बडा समाज था अरु लख्यमनजी कुमार थे परंतु जथोजोग्य बोले हैं ॥ ३ ॥

सैनहिँ रघुपति लषन निवारे। प्रेम समेत निकट बैठारे ॥ ४ ॥

सैनत में नेवारन का भाव यह जो हम मुख में कहैं तुम बोलो मत तब इन का निरादर होता है किंवा जों हम अनुज कों कहिकर बैठावैंगे तब लोक जानहिंगे अपना बल प्रगटकरने निमित्त इनो नेहीं कहकर बोलाया है तब गंभीरता में दूसन आवता है ताते सैनतही से बैठाए दिए अथवा सरब नृपों को ऐसे प्रतीत करवाया जद्यपि लख्यमनजी नें अपना बल एता कहा है जिस में दिग्गज कांपने लगे हैं अरु सभ राजा भी सहम गए हैं तद्यपि श्रीरामचंद्र ऐसे बलनिधि हैं जिन की सैनतही में वह बैठ गया है वा इन के वाक्य सुनकर केते दुष्टों राज्यों कों मन में हरष भया है जो प्रथम लोकों मे प्रसिद्ध था धनुष भंगन अरु जानकी बरन रामचंद्र ने करना है अरु अब उन का अनुजही अति पराक्रमी बोला है अब दोनो भैया का आपुस मों जुद्ध पडेगा य ह जो राज्यों का कुभाउ है तिस के नेवारने निमित्त रघुबीरजी ने यह सूचन किया अनुज हमारा ऐसा अग्याकारी है नेत्रो की सारत समुझकर बैठ गया है। प्रेम समेत बैठालने से अतिआदर जनाया तातपरज यह जो तुम ने कहा है सो सत्य है अरु योग यथा ॥ ४ ॥

बिश्वामित्र समय सुभ जानी। बोले अतिसनेह मैं बानी ॥ ५ ॥

शुभ समै कहिए वह घडी निख्यत्र लग्न निमष बिजैदायक विशेष था अथवा सभों राज्यो ने अपनी इच्छा से अरु जनक के मरम बेधी बचन सुनकर भी पोछे बल राख नहीं लिया तिस पर रामानुज ने अपने बल के वाक्य भी कहे हैं अब देर करनी जोग्य नहीं इस औसर जानकर कहा ॥ ५ ॥

उठहु राम भंजहु भवचापा। मेटहु तात जनकपरितापा ॥ ६ ॥

भवचापा कथन का भाव यह जो किसी मानुख्य का धनुष होए तो उस के तोडने मह्नुं तुम को लघुता है जाते तुम ईश्वर हो अरु यह ईश्वरों का चाप है तिस के तोडने में तुमारी न्यूनता नहीं जो तुम कहो न्यूनता भई तौ भी हमारे जो अति प्रि शंकरजी हैं तिन का कोदंड हम काहे खंडिए तिस पर कहते हैं। हे प्यारे जनक के रिदे मों महाताप है जो मेरी प्रतग्या पूरन ना भई अरु सीता का बिवाह ना भया

सो यह खेद इस के रिदै का निवारो जाते यह भी तुमारा परम प्यारा मंत है ॥६॥ टिप्पणी—मुन्शी रोशनलाल ने निम्न लिखित अर्थ किया है। एक अर्थ यह कि भव अर्थात् शंकर के धनुष का तोड़ो और जनक के परिताप को मेटो दूसरा यह कि धनुष जो प्रताप का जनक अर्थात् उत्पन्न करनेवाला है उसे तोड़ो इस चौपाई में दो रस बीर और करुना के कहते हैं।

सुनि गुरबचन चरन सिर नावा। हरष बिषाद न कछु उर आवा ॥ ७ ॥

ठाढ भये उठि सहज सुभाये। ठवनि जुवा मृगराज लजाये ॥ ८ ॥

यह चार चरण आख्येपक भासते हैं जाते इन में अर्थ असंगत है जो इन सो प्रभों का चलना कहा आगे दोहे चौपाई मों कहा मंच से उठना अरु आज्ञा मागनो ॥ ८ ॥

दोहा—उदित उदयगिरिमंच पर, रघुबर बाल पतंग।
बिकसे संत सरोज सब, हरषे लोचन भृंग ॥ २६९ ॥

उदयाचल अद्रूपी जो मंच है तिस में श्रीरघुनाथजीरूपी बालभानु उदे भये तिन कों देखकर संतों के मुखरूपी कमल बिगसे अरु दृगरूपी भृंग हरषे अरु ॥ २६९ ॥

नृपन्ह कर आसा निसि नासी। बचन नषतअवलीन प्रकासी ॥ १ ॥

नृपों की सीताग्रहण को आसा रूपी जो रात्र थी सो निधन भई अरु आपुस मों नृपों के बोलनरूपी जो निख्यत्र थे तिन का प्रकाश अवलीन कहिये निवृत्त भया तत्व यह प्रताप कों देख के मोन होगए किंवा निख्यत्रां को अवली कहिये पंक्त सो न प्रकासी अर्थ यह लीन भई ॥ १ ॥

मानी महिप कुमुद सकुचानें। कपटी भूप उलूक लुकानें ॥ २ ॥

मानी महिप कहिये हंकारो राजे सो कुमुदोंवत सकुच गये कपटी भूप कहिये जो दैत्य राजरूप छल कर आए थे सो उलूकोंवत छप गए कहीं दृष्ट नहीं आए ॥ २ ॥

भए बिसोक कोक मुनि देवा। बरषहिं सुमन जनावहिं सेवा ॥ ३ ॥

पुष्पहुं किआं बरषा कर कर देवत्यों ने सेवा अपनी जनावनी इस निमित्त हे महाराज हम तुमारे सेवक हैं अरु रावण से दुखी हैं तिस दुष्ट के मारने का उद्यम राज प्राप्ति से आगे हीं करना ॥ ३ ॥

गुरपद बंदि सहित अनुरागा। राम मुनिन सन आयसु मागा ॥ ४ ॥

गुरु जो बिश्वामित्रजी हैं तिन के चरणो पर बडी प्रीति से प्रणाम किआ जो हे महाराजजी तुमारी कृपा कर मैं जै पावोंगा पुनः औरों सरब रिषों सों आज्ञा मांगी जो तुम ने भी सहायता करनी। ननु। कौशिक के अरु मुनों के बर कर श्रीरामचंद्र ने धनुष तोडना था। उत्तर। प्रभु मरजादा पुरषोत्तम हैं अरु भगवंत का बिरद है संतहुं को बडाई देनी प्रमान भागवते सनकादिकों प्रति बैकुंठ वाक्य। यत्सेवया चरणपद्मपवित्र रेणुं सद्यः क्षताखिलमयं प्रति लब्ध शीलं न स्त्री विरक्त मपिमांविहातियस्या प्रेख्या लवार्थ इतरेनियमानवहंति। जिन बिप्रों की सेवा ते मेरे चरण पदुम की रेनु पवित्र भई अरु जिन की सेवाते मैं

सभ लोकों के पाप नासक भया जिन की सेवा ते मुझे शुभ शील भया है जिस के कृपा कटाक्ष प्राप्ति होने कों ब्रह्मादिक नियम कों धारते हैं तिस लक्ष्मी से मैं बिरक्त भी हों परंतु जिन की सेवा के प्रभाव में वह लक्ष्मी मुझ कों नहीं त्यागती ॥ ४ ॥

सहजहि चले सकलजगस्वामी। मत्त मंजु बरकुंजर गामी ॥ ५ ॥

उनमत्त गज के गवनवत प्रभु धीरज से चले किंवा सकल बिस्व के नाथ हैं उन कों किसू नवीन की प्राप्ति तौ नहीं होनो ताते सहज कहिये आपने आनंद मैं गमन चले ॥ ५ ॥

चलत राम सब पुरनरनारी। पुलकपूरि तन भए सुषारी ॥ ६ ॥

लोगों को हरष इस कर भया भली भई प्रथम सरब नृपों ने बल लगाया अरु उन से धनुष न टूटा अब रघुनाथजी उठे हैं यह तोड़ैंगे। ननु। जौं इन से भी न टूटै तिस पर कहते हैं ॥ ६ ॥

बंदि पितर सुर सुकृत सँभारे। जौं कछु पुन्य प्रभाउ हमारे ॥ ७ ॥
तौ सिवधनु मृनाल की न्यांई। तोरहु राम गनेस गोसांई ॥ ८ ॥

लोग कहते हैं हे गणों के स्वामी शंकरजी किंवा गणेशजी हमारी बिनै सुनो जौं कछु देव पितर पूजन आदिक पुन्य हमारे संचित हैं तौ तिन के फल का बल भी श्रीरामचंद्र की भुजा मोंहीं पड़ै जिस कर चाप बिसकी तंतवत टूटै इस कथन मों लोगों की सुहृदता अरु आत्मनिवेदन भक्ति सूची अब रानी की बात कहते हैं ॥ ८ ॥

दोहा—रामहिं प्रेम समेत लषि, सषिन समीप बोलाइ।
सीतामातु सनेहबस, बचन कहै बिलषाइ ॥ २७० ॥

रामचंद्र का स्वरूप प्रेम कर सीता के जोग्य देख्या तब सखियों को निकट बोलाय कर सीता की माता दुखित हूं कर वाक्य कहती भई सीतामात कथन का भाव यह जनक कियां रानियां तौ बहुत थियां तिनो मैं जिस ने सीता कों पुत्री किया हुआ है तिस कों विशेष खेद भया किंवा जब बेटियों को खेद होता है तब रिदे के सनेह कर माता कों भी अकसमात प्रतीत हो जाता है सो इस समै जो सीता जी के मन मों चिंता भई है तिस कर माता भी दुखित भई अरु बोली ॥ २७० ॥

सषि सब कौतुक देषनिहारे। जेउ कहावत हितू हमारे ॥ १ ॥
कोउ न बुझाइ कहै नृप पाहीं। ए बालक अस हठ भल नाहीं ॥ २ ॥

जौं कहो एह कुमार हैं तौ धनुष भी जीर्न है तहां सुनो ॥ २ ॥

रावन बान छुआ नहिं चापा। हारे सकल भूप करि दापा ॥ ३ ॥
सो धनु राजकुंअर कर देहीं। बाल मराल कि मंदर लेहीं ॥ ४ ॥

रावन अरु बानासुर जिस धनुष कों उठावन मों आप कों असमर्थ मान कर चाप कों छुहेही न थे अरु और भूपति भी गरब कर हार परे थे तिस चाप का उठावना रामचंद्र पर कथन तो ऐसा है जैसे

हंस के बालक पर मंद्राचल का भार पड़े प्रयोजन यह जिस अद्र कों बड़े मराल आदिक खग ना उठाय सकें तिस कों बालक कैसे उठावें ॥ ४ ॥

भूपसयानप सकल सिरानी । सषि बिधिगति कछु जात न जानी ॥५॥

जब महाधीमतों से अविदित बात होवै तब जानिता है दैव नेत प्रतिकूल है सो राजा परम प्रबुद्धि अरु अब तिस को मति मों यथोचित बात नहीं आवती ताते क्या जानिए नेत किस भांति है ॥ ५ ॥

बोली चतुर सषी मृदुबानी । तेजवंत लघु गनिए न रानी ॥ ६ ॥

कोमलबानी कर एक सखी कहत भई हे रानी तेजवानों कों छोटे नहीं जनीता सखी कों चतुर कथन का भाव यह रानी के चिंतातुर बैन सुन के औरां सखिवोंवत मौन न रही उत्तर देने कों उदत भई किंवा बचनहुं को रचना ऐसी जुक्त हुं दृष्टांतहुं कर करी रानी के चित कों तोष कर दिया किंवा यह जो कहती है हमारे हितकारी राजा कों नहीं समुझावते सो भी हम कों हीं सुनावती है जो तुमारे पति मंत्री हैं वह नृप कों कहैं परंतु इस औसर में हमारा कथन अपने सबंधिवों को नहीं होता ताते रानी के तोष निमित्त अरु जथार्थ वाक्य कर भी इहां रामचंद्र का प्रताप बरनन करना जोग्य है सोई कथन करने लागी ताते चतुर कही ॥ ६ ॥

कहँ कुंभज कहँ सिंधु अपारा । सोष्यो सुजस सकल संसारा ॥ ७ ॥

अगस्त्य का मानव बपु सो भी कुंभ से उपज्या हुआ तिस ने लक्ष्य जोजन का समुद्र पान किया तिस कों सरब जगत जानता है ॥ ७ ॥

रबिमंडल देषत लघु लागा । उदै तासु त्रिभुवन तम भागा ॥ ८ ॥

मारतंड का मंडल छोटा सा दृष्टि आवता है अरु तिस के प्रकाश कर त्रिभुवन कहिये तीन आकाश भूर भुवर स्वर तीनों का तम नास होता है तो उस को लघु कैसे कहिये ॥ ८ ॥

दोहा—मंत्र परम लघु जासु बस, बिधि हरि हर सुर सर्ब ।
महामत्त गजराज कहुं, बस कर अंकुस पर्ब ॥ २७१ ॥

परमलघु मंत्र कहिये दोए अक्षर एक अक्षर प्रजंत भी होते हैं अरु तिन कर ब्रह्मादिक प्रत्यक्ष दरसन देते हैं तब उन कों लघु कैसे गिणिए अंकुश अति क्षुद्र होता है अरु एते बड़े गज कों बस करता है उस कों लघु कैसे कहिए । २७१ ॥

काम कुसुमधनुसायक लीन्हे । सकल भुवन अपने बस कीन्हे ॥ १ ॥
देबि तजिय संसै अस जानी । भंजब धनुष राम सुनु रानी ॥ २ ॥

एक कामदेव सुभट अरु तिस के हाथ मो पंचहुं बानहुं संजुक्त पुष्पों का धनुष अरु त्रिलोकी कों जीत लिया तो तिस कों लघु कैसे गनिए तैसेही हे देवी रामचंद्र बड़े शक्तिवान हैं धनुष के तोड़ने मों तूं निरसंदेह होहु ॥ २ ॥

सषीबचन सुनि भइ परतीती। मिटा बिषाद बढ़ी अति प्रीती॥ ३॥

तिस सखी की चतुरता संजुत गिरा सुन कै धनुष भंग की प्रतीति भई अरु निश्चिंत ह्वै कै तिस सों अति सनेह किआ॥ ३॥

तब रामहिं बिलोकि बैदेही। सभय हृदय बिनवति जेहि तेही॥ ४॥

रघुनाथजी को ओर देख कै सीता धनुष न टूटने कें भय कर जिस किस आगे बेनती करती है॥ ४॥

मनही मन मनाव अकुलानी। होहु प्रसन्न महेस भवानी॥ ५॥

करहु सफल आपन सेवकाई। करि हित हरो चापगरुआई॥ ६॥

गौरीशंकर का मन बिषे मनावना इस कर कहा है मन संयुक्त भक्ति फल का विशेष है किंवा उत्तम कुल की कन्या है ताते स्वामी की बात कहणे मे लज्या करती हैं॥ ६॥

गननायक बरदायक देवा। आजु लगे तव कीन्यौ सेवा॥ ७॥

बार बार सुनि बिनती मोरी। करहु चाप गरुता अति थोरी॥ ८॥

हे गणो के नाथ सरब बरों कें दाते देव जब में गंधाक्ष्यतादिकों कर शिव धनु का पूजन करणे आवती थी तब प्रथमे तुमारा पूजन कर लेती थी ताते मैं बारंबार बिनै करती हौं कृपा कर सुनो अरु फल यह देवो रघुनाथजी कें आगे चाप अति हरुआ होय गनेशजी कें नाम बहुत हैं परंतु इहां गणनायक हौं इस निमित्त कहा रुद्रगण बडे बडे शक्तिवान हैं तिन कें तुम स्वामी हौ ताते तुम परम शक्तिवान हुए सो आपनी शक्ति कर कारमुक का बोझ त्रिनवत कर देवो अथवा संपूरण प्रमथगण तुमारी आज्ञा मो हैं जाते तुम उन कें नायक हौ ताते कृपा कर उनों को आज्ञा देवो रामचंद्र कें हाथ लगावण कें साथही धनुष कों अद्रिष्ट वह गण उठाए लेवें इस ते धनुष को गरुता रघुबीरजो कों अति हरुवो प्रतीति होवै॥ ८॥

दोहा—देषि देषि रघुबीर तन, सुर मनाव धरि धीर।
भरे बिलोचन प्रेम जल, पुलकावली सरीर॥ २७२॥

श्रीरामचंद्र की कोमलता अरु सुंदरता कों देख कर प्रेम सों जिम कों अस्रुपातादिक भए हैं सो सीता धीरज धार कर पूरवोक्त देवत्यों कों ध्यावती है जो तुम श्रीरामचंद्र में बल विशेष पावो॥ २७२॥

नीके निरषि नयन भरि सोभा। पितुपन सुमिरि बहुरि मन छोभा॥ १॥

नीके प्रकार नैन भर कर देखती हैं जाते श्रीरामचंद्र की अधिक सुंदरता है अरु पिता कें प्रण कों सुमर कर स्योभ यह होता है जो श्रीरामचंद्रजी सें धनुष न टूटैगा तौं मैं क्या करोंगी॥ १॥

अहह तात दारुन हठ ठानी। समुझत नहिं कछु लाभ न हानी॥ २॥

अहह कहिये अति खेद है पिता ने कठिन हठ किआ है श्रीरामचंद्र जू सों सनबंध होवनादिक लाभ अरु धनुष टूटे बिना कन्या कुंआरी रहनादिक हान इन कों नहीं भासती जौं कोऊ कहै किसू द्वारा नृप कों यह बात कहावो तिस पर कहती है॥ २॥

सचिव सभै सिष देइ न कोई । बुधसमाज बड अनुचित होई ॥ ३ ॥

नृप के प्रन भंग का त्रासकर मंत्री यह बात कहि नहीं सकते हा देव ऐसो बुद्धिवानों की सभा में कैसी अजोग्य बात होती है तिस अजोग्यता का स्वरूप कहती है ॥ ३ ॥

कहँ धनु कुलिसहुं चाहि कठोरा । कहँ स्यामल मृदुगात किसोरा ॥ ४ ॥

जहां दोय बेर कहं कहं पद आवै तहां बडे भेद के अर्थ सो होता है चाहि नाम इहां कथन का है कहां वह चाप जो कुलिश सों कठोर है अरु कहां एह स्यामकोमलगात अरु किसोर अवस्था अथवा इस अर्थ में अध्याहार करणा तोरनहारे का कहां वह धनु जिस के तोडनहारे का शरीर बज्र से भी कठोर चाहिए अरु कहां यह कोमलगात जो काऊ कहै तूं धीरजकर क्या जानिए रघुनाथजीहीं धनुष कों तोरडारें तिस पर कहती है ॥ ४ ॥

बिधि केहि भांति धरौं उर धीरा । सरससुमनकन बेधिय हीरा ॥ ५ ॥

हे देव जो हीरा मार के बरमें करन बेधिये सो मरमों के सुमनकर कब बेध्या जाता है पाठांतर । सिरससुमन कन बेधिय हीरा । सिरस सुमन कहिय सरीह के वृक्ष का फूल जो अतिकोमल अरु लघु होता है तिस का कन कहिये एक तंत तिस से क्या हीरा बेध्या जाता है तैसेहीं जिस धनुष कों दशसहस्र भूप एकठा होएकर न उठाएसका सो इस कोमलतन से कैसे टूटेगा तातें मुझ कों कैसे धीरज आवे ॥ ५ ॥

सकल सभा की मति भइ भोरी । अब मोहि संभुचापगति तोरी ॥ ६ ॥

सभा के सरब लोगहुं की मति मूढ भई है जातें भूपति कों नहीं समुझावते हे संभुचाप अब मुझ को तेरी गति कहिये में तेरी सरणा हों जों धनुष कहै मैं क्या करूं तिस पर कहती है ॥ ६ ॥

निज जडता लोगन पर डारी । होहु हरुअ रघुपतिहि निहारी ॥ ७ ॥

हे चाप तुझ सो जो जडता है जिस कर तुझे कोऊ उठाय नहीं सकता सो तूं सभीं लोगो पर डार देहु जो उह उठकर रघुनाथ जू सों बिरोधनाकर सकें अरु तूं हरुआहु श्रीरामचंद्रजी के तन की कोमलता देख के अथवा तूं है शंकरजी का चाप अरु रामचंद्र साथ शिवजी का सरब प्रकार सनबंध है तातें अपने स्वामी की मैत्री की ओर दृष्टकर तूं हरुआ होहु ॥ ७ ॥

अतिपरिताप सीय मन माहीं । लवनिमेष जुगसत सम जाहीं ॥ ८ ॥

सीताजी के मन सों अति परिताप है प्रभों से अप्राप्ति रहने का किंवा सीताजी कों अतिसेकर परताप कहिये पश्चाताप है जो जब बाग सो मै नें प्रभों का दरशन किया था तबी पुष्पमाला इन के कंठ सों डार देनी थी सो अवसर चूका अब क्या जानिये क्या होयगा एक एक लव अनेकों जुगों सम बीतता है ॥ ८ ॥

दोहा—प्रभुहि चितै पुनि चितवमहि, राजत लोचन लोल ।
खेलत मनसिज मीनजुग, जनु बिधुमंडल डोल ॥ २७३ ॥

प्रथमे प्रभों की ओर देखती हैं पुनः मेदनी की ओर देखती है तिस कर नैनों की चंचलता ऐसे

सोभती है जैसे चंद्रमा के मंडल में दोए मीन कल्लोल करे प्रभों की वोर देखकर धरा की ओर देखण का भाव यह श्रीरामचंद्र के देखने की उतकंठा है परंतु देखती हुई समाज में लज्जित होती है तब धरा की ओर देखण लगजाती है अथवा श्रीरामचंद्र को देखा है कोमल अरु धनुष को जान्या है अतिगरीष्ट ताते धरती को वोर देखणे से मानो प्रार्थना करती है हे माता सरब पदारथो में बोझ तेरा हीं है धनुष को गरुआई कों तुम खैंच लेहु अथवा जैसे कई गुह्य सिद्धांत बेटीवों बेटिवों के रिदे मों आवते हैं अरु संका कर मातापिता कों कहि नहीं सकते तब किसी जुक्ति सों लखावते हैं तैसे रघुनाथजी को सरूप कों देख कर जानकीजी का मन अत्यंत मोहित भया है अरु प्रिथवी सीता की माता है ताते लज्या कर मुख में कहो नहीं सकती परंतु श्रीरामचंद्र की ओर देख कर पुनः भूमि की ओर देखने से यह लखावती है जो मेरा मन इन पर बिरस भया है हे माता मुझे एही भरता देना चतुर्थ प्रभु पद जो दिया है सो समर्थता के निमित्त हे महाराज तुम को मैंने अपने मन कर स्वामी किया है सो तुम भी समर्थ हो अरु बसुंधरा को वोर देखती है जो तूं मेरी माता है तूं भी समर्थ है जाते महिधात पूज्य के कहिए उतकृष्ट वां अर्थ बिषे है तो ऐसे संबंधिवों के होते मुझ को क्यों ऐसा कष्ट है पंचम प्रथम तो रामचंद्रजो धनुष तोड़ेंगे अरु मैं इन कों बरोंगी कदाचित इस मो भेद भी होए तो माता तुम ने मुझ को मारग देना जो मैं धरनी बीचहीं प्रबेश कर जावों किंबा हे प्रभो इस बसुमती की प्रार्थना सुन कर तुम ने इस की रख्या निमित्त अवतार धारा है सो मैं इस की बेटी हौं प्रथम मेरा दुख निवारो मुझे अपनी चरनी लावो पुनः रावनादिकों कों मार कर सकल स्रष्ट कों सुखी करना जौं कोऊ कहै अपना दुख संताप प्रगट क्यों नहीं कहती तिस पर कहते हैं ॥ २०३ ॥

गिरा अलिनि मुषपंकज रोकी । प्रगट न लाज निसा अवलोकी ॥ १ ॥

बानी रूपी मधुपो सीताजी के मुख पंकज से वडिवों की लज्या रूपो निसा को भै से प्रगट नहीं होती ॥ १ ॥

लोचनजल रह लोचनकोना । जैसे परम कृपन कै सोना ॥ २ ॥

लोचन से प्रेम अरु सोक कर जल उपज्या है परन्तु लोक लज्या कै अप सगुन जान कै सीताजी ने कोन्यो मों ऐसे रोक्या है जैसे परम कृपिन स्वर्ण कों हाथ मो दृढ करता है ॥ २ ॥

सकुची व्याकुलता बडि जानी । धरि धीरज प्रतीति उर आनी ॥ ३ ॥

नेत्रों से जल होने से अपने मन की विशेष व्याकुलता लख कर गुरजनो की ओर से सीता सकुची तब रघुनाथजी के प्रभाव पर प्रतीति कर के रिदे कों धीरज दीना अरु यह कहा ॥ ३ ॥

तन मन बचन मोर मन साँचा । रघुपतिपदसरोज चित राँचा ॥ ४ ॥

तौ भगवान सकलउरबासी । करै मोहि रघुबर कै दासी ॥ ५ ॥

इहां ग्रंथकार ने भगवान पद रघुबर से जो भिन्न राख्या है सो व्यवहार दशा मों जौं कोऊ कहै तुझे रामचंद्र हो बर कैसे मिलैगा तिस पर नोति कहते हैं ॥ ५ ॥

जाकर जेहि पर सत्य सनेहू । सो तेहि मिलै न कछु संदेहू ॥ ६ ॥

जिस का किसू पदारथ मों सांचा प्रेम दृढ होवै सो तिस को प्राप्त हू रहता है इस मों कुछ संसै नहीं ॥ ६ ॥

प्रभु तन चितै प्रेम प्रन ठाना । कृपानिधान राम सब जाना ॥ ७ ॥

प्रभों की ओर देख के जब सीताजी का मन तदाकार भया तब प्रभों ने इस को प्रेम की दसा कों जान्या जाते कृपानिध हैं अरु ॥ ७ ॥

सीयबिलोकि तक्यौ धनु कैसे । चितव गरुड लघु ब्यालहिं जैसे ॥ ८ ॥

सीता की प्रीति अरु सौंदर्ज देख के प्रभु प्रसन्न भए हैं ताते धनुष को ऐसा तुछ जान के देख्या जैसे बैनतेय लघु सपोली कों देखें तातपरज यह अब तोर डारते हैं तूं चिंता मतकर ॥ ८ ॥

दोहा—लषन लख्यौ रघुबंसमनि, ताक्यौ हरकोदंड ।
पुलक गात बोले बचन, चरन चापि ब्रह्मंड ॥ २७४ ॥

जब सौमित्रजी ने देख्या धनुष अब प्रभों नें दृष्ट तरे किया है सो तोडते हैं तब पगकर ब्रह्मांड कों दबायकर प्रसन्यता पूरबक बोले सो बोलना स्वामी का प्रताप कथन हेतु अरु पगकर ब्रह्मांड का दाबना धरा को सावधान करने निमित्त है सोई कहते हैं ॥ २७४ ॥

दिसिकुंजरहु कमठ अहि कोला । धरहु धरनि धरि धीर न डोला ॥ १ ॥
राम चहहिं संकरधनु तोरा । होहु सजग सुनि आयसु मोरा ॥ २ ॥

दिसकुंजर कहिये जोन से चार गज धरा के ऊपर चारों कोने दबाए खडे हैं अरु अहि कहिए बासकनाग जोन सो धरा के ऊपर कुंडल मारे बैठा है कूर्म अरु बाराह जिनों ने धरा उठाई हुई है तिनो प्रति लछमनजी ने कहा यह शिवचाप महाबली है अरु तोडन की इच्छा भी परम ईश्वरो ने करी है कदाचित बल अधिक लग जाय ताते तुमो न सचेत रहना मोर आयसु कथन का आसा यह लछमनजी शेषरूप सरब धरनीधरहुं के शिरोमनि हैं ताते इन को अपने अधिकार का हान लाभ बिचारना अरु सभों पर आज्ञा करनी उचित है ॥ २ ॥

चाप समीप राम जब आए । नर नारिन सुर सुकृत मनाए ॥ ३ ॥

रघुनाथजी कोदंड ढिग आए देख के सभ लोगों ने अपने इष्टदेव अरु पुन्य स्मरण किए सो आगे बिस्तारकर कहेंगे अबगम्य उतप्रेख्याकर धनुष को जहाज अरु तिस के ऊपर चढकर डूबनेहारा समाज बरनते हैं ॥ ३ ॥

सब कर संसै अरु अग्यानू । मंद महीपन कर अभिमानू ॥ ४ ॥

लोगों कों जो धनुषटूटन विषे संसै है अरु रामचंद्र के सरूप विषे अज्ञात है अरु मंद नृपहुं जिन सेंधनुष नहीं टूटा अरु पुनः भी गरब मों आहत हैं तिन का जो हंकार है ॥ ४ ॥

भृगुपति केरि गर्ब गुरुआई । सुरमुनिबरन केरि कदराई ॥ ५ ॥

जामदग्नि को जो शस्त्रविद्या का मान है अरु सहसबाहुं आदिकों के मारने की गरुआई कहिए बडिआई है अरु कदाचित रामचंद्र से चाप न टूटता होय यह बिचारकर सुरोंमुनों की जो कातुरता है ॥ ५ ॥

सिय कर सोच जनकपछितावा। रानिन्ह कर दारुन दुखदावा॥ ६॥

सीताजी को जो सोक है रामचंद्र को अप्राप्ति का जनक को जो पश्चाताप है कठोर बोलने का अथवा धनुष टूटन की प्रतिज्ञा करन का रानियों को दुख को अगिन यह कदाचित इन सों भी धनुष न टूटे अरु सीता कुआरी रहे इत्यादिक सभी मिलकर॥ ६॥

संभुचाप बड बोहित पाई। चढे जाइ सब संग बनाई॥ ७॥

टिप्पणी—शंभु के धनुष को यह सब बड़ी जहाज पाके और अपना संग बना के यह समझ कि जो एक जायगा तो सब जांयगे और एक रहा तो सब रहेंगे उस पर जा चढ़े।

रामबाहुबल सिंधु अपारू। चहत पार नहिं कोउ कनहारू॥ ८॥

श्रीरामचंद्र की भुजा का बलरूपी अगाध समुद्र है तिस से पार उतारनहारा कनहारु कहिए करन-धार जिन कों मल्लाह कहते हैं सो कोऊ नहीं तत्व यह पूरब राज्यों के बलरूपी उदधों को शिवजी की सहायतारूपी मल्लाह कर धनुष तरेया था अरु अब रघुबीरजो किआं भुजा के बलरूपो जल सें तरावने-हारा कोऊ नहीं ताते डूबेगा सोई कहते हैं॥ ८॥

दोहा—राम बिलोके लोग सब, चित्र लिखे से देषि।
चितई सोय कृपायतन, जानी बिकल बिसेषि॥ २७५॥

कृपाल जो श्रीरामचंद्र हैं तिनो ने सब लोगों की ओर देख्या जो हमारे बिषे सनेह अरु चाप टूटने बिषे संदेह कर कै चित्रों सम जड हुवे रहे हैं अरु सीता देवी तो महाव्याकुल है सोई कहते हैं॥ २७५

देषी बिपुल बिकल बैदेही। निमिष बिहात कल्प सम तेही॥ १॥

अपने धैरजजुत गमनकर कोदंड के टूटने सो जो देर लगो है तिस निमित्त सीता को अति व्याकुल जानकर कृपाल प्रभु बिचार करते हैं॥ १॥

तृषित बारि बिनु जो तनु त्यागा। मुए करै का सुधा तडागा॥ २॥

सामान्य जल की इच्छा करता हुआ कोऊ तिषावंत जो मर जाय तो पुनः सुधा सरोवर को प्राप्ति सों उस कों क्या सिद्ध होता है सुधा पद इहां अमृत का बाचिक नहो लेना जाते अति दूषन आवता है ताते लख्यनाकर अति बिमल अरु मिष्ट जल का वाचक जानना अथवा सुधा नाम चूने का है जो किसू तृषित कों पोखर का जल भो न मिला अरु उसो मुए हुए कों चूने गच तलाब सों डारिए तो क्या सिद्ध है सुधा लेपों मृतंस्नुही इत्यमरातृतीयकांडे नानार्थबर्गे टीकादारद्यपियेनदेवगृहादिकं लिप्यसेत लेप-चूर्णं सुधा तैसे तृषावंत। सम सीता जो तिस ने जोवते पोखर जलवत चाप का उठावना ना किया अरु मृत्यु भई पीछे धनुष कों तोड दिया तो उस के किस काम का॥२॥ टिप्पणी—मुये को सुधा का तड़ाग अर्थात् जल का तलाव क्या करेगा वा कहनेवाला कहता है कि मुये को तलाव क्या करेगा क्या अमृत का तलाव है वा यह कि जो मर गया सो मुये पर जल के तलाव को क्या करेगा।

का बरषा सब कृषी सुषाने । समै चुकै पुनि का पछिताने ॥ ३ ॥

जौं खेतियां सूक जाहिं तो पीछे बरषा किस काम है अरु जों समा बीत जाय तो पुन: उस कारज निमित्त पश्चाताप किये क्या होता है किंबा पीछे दोनों दृष्टांत भए अरु समै चूकै इस चरन कों द्राष्टांत महुं लगावना ॥ ३ ॥

अस जिय जानि जानकी देषी । प्रभु पुलके लषि प्रीति बिसेषी ॥ ४ ॥
गुरहिं प्रनाम मनहिं मन कीन्हा । अतिलाघव उठाइ धनु लीन्हा ॥ ५ ॥

पीछे कौशिक कों प्रनाम करि आए हैं ताते अब मन माहीं करी किंबा यह बिचार्या अब धनुष की ओर से मुख फेर कर प्रनाम करने लागिओं कदाचित कोई लोग प्राण त्याग देवै ताते मन माहीं बंदना करी वा मनहीं मन जो है पद दिए हैं सो एक बसिष्टजी कों करी जाते उन से सरब बिद्या सीखियां हैं अरु दुतीय रघुनाथजी के गुर शिवजी हैं तिन को प्रनाम किआ जो धनुष भंग करण की अवज्ञा हम कों ख्यमा करणी अरु अति शीघ्र धनुष कों उठाइ लिआ ॥ ५ ॥

दमक्यो दामिनि जिमि जब लयऊ । पुनि धनु नभमंडल सम भयऊ ॥६॥

प्रथम दामिनी की न्यांई धनुष का आकार किंबा प्रकाश भया पुन: चडने अरु खंचने कर मंडलाकार भया ॥६॥

लेत चढावत षेंचत गाढे । काहु न लषा देष सब ठाढे ॥ ७ ॥

चाप के चढावनादिक करम मों प्रभों ने ऐसी शीघ्रता करनी धनुषबिद्या की बिशेषता अर्थ अरु सीता के तोष निमित्त भी ॥ ७ ॥

तेहि छन राम मध्य धनु तोरा । भरे भुवन धुनि घोर कठोरा ॥ ८ ॥

टिप्पणी—चाणा मध्य का अर्थ यह कि जो चाणा होता है उस का ऊपर छाड़ के मध्य में तोड डाला यह सुघड़ता का वर्णन है वा धनुष का मध्य तोड़ डालना ।

छंद—भरे भुवन घोर कठोर रबि रथ बाजि तजि मारग चले ।
चिक्करहिं दिग्गज डोल महि अहि कोल कूरम कलमले ॥

तिस घोर कठोर शब्दकर तीनो लोक पूरे अरु तिस कर त्रसित हुए भानु के कि कान भी मारग छोड चले दिशा के मातंग चीत्कारते हैं अरु पृथ्वी कांपती है शेषनाग अरु बाराह अरु कूर्मादिक जो पृथ्वी के आधार हैं सो कलमले कहिए व्याकुल भए ॥

सुर असुर मुनि कर कान दीन्हे सकल बिकल बिचारहीं ।
कोदंड षंड्यो राम तुलसी जयति बचन उचारहीं ॥

सुरों असुरों से घोर शब्द सहारया न गया ताते कान मूंद कर व्याकुल हुए बिचार करते हैं यह प्रलय समान आघात कैसे भया है जब सभों ने निश्चै भया धनुष टूटा है तब जै जै करने लागे । नन्तु । सुरां

सुनो ने तो जै जैकार कीना असुरों किस भांति किया। उत्तर। रघुनाथजी सभ के आत्मा हैं तातें तिन को इच्छा अनुसार तिस समै सभों के मुख से बिबस जै जै शब्द भया ॥

सोरठा—संकरधनुष जहाज, सागर रघुबरबाहुबल ।
बूड सो सकल समाज, चढा जो प्रथमहिं मोहबस ॥ २७६ ॥

पूरब जो कहि आए हैं धनुषरूपी जहाज पर पापरूपी समाज चढा था अरु पार उतारने का साधन कोऊ न था सो सभ डुबेआ ॥ २७६ ॥

प्रभु दौ चाप षंड महि डारे । देषि लोग सब भए सुषारे ॥ १ ॥
कौसिक रूपपयोनिधि पावन । प्रेमबारि अवगाह सोहावन ॥ २ ॥
रामरूप राकेस निहारी । बढत बीचि पुलकावलि भारी ॥ ३ ॥

प्रेमरूपी सुंदर अगाध अंबु सो पूरण जो बिश्वामित्रजी का तनरूपी सिंधु है सो श्रीरामचंद्ररूपी पूरण शशि कों देखकर रोमांच रूपी बीचिअर्हुं कर पूरण परमानंद जुक्त हुआ है ॥ ३ ॥

बाजे नभ गहगहे निसाना । देवबधू नाचहिं करिगाना ॥ ४ ॥
ब्रह्मादिक सुर सिद्ध मुनीसा । प्रभुहिं प्रसंसहि देहिं असीसा ॥ ५ ॥
बरषहिँ सुमन रंग बहु माला । गावहिँ किन्नर गीत रसाला ॥ ६ ॥
रही भुवन भर जै जै बानी । धनुष भंग धुनि जात न जानी ॥ ७ ॥
मुदित कहहिंजहँतहँ नर नारी । भंजेउ राम संभुधनु भारी ॥ ८ ॥

दशकं सुगमः

दोहा—बंदी मागध सूतगन, बिरद बदहिं मतिधीर ।
करहिँ निछावरि लोगसब, हय गय धन मनि चीर ॥ २७७ ॥

बंदी कहिये जो राज्यों का मत देख के कहैं मागध कहिये जो बंशों का बरनन करैं सूत कहिये जो पुराणों की प्रक्रया सों कहैं सो जश बरनन करते हैं अरु लोग तिन कों तुरंग मतंगादिक देवते हैं तिनों कों मतिधीर विशेषन देने का प्रयोजन यह बहुत कहत्यां जाकी बानी सिथिल न होए अरु कोऊ वाक्य भूले नहीं पुनः बडे समाज मैं सभों के अधिकार पूरबक यथोचित बचन शास्त्र बिहित सुंदर पद रचना कर कहै ॥ २७७ ॥

झांझ मृदंग संष सहनाई । भेरि ढोल दुंदुभी सोहाई ॥ १ ॥
बाजहिं बहु बाजने सोहाये । जहँ तहँ जुवतिन मंगल गाये ॥ २ ॥

इहां से आगे पांच दृष्टांत दार्ष्टांत कहते हैं ॥ २ ॥

सषिन सहित हरषी सब रानी । सूषत धान परा जनु पानी ॥ ३ ॥

जनक लह्यो सुष सोच बिहाई । पैरत थके थाह जनु पाई ॥ ४ ॥
श्रीहत भये भूप धनु टूटे । जैसे दिवस दीपछबि छूटे ॥ ५ ॥
सीयसुषहिंबरनिय केहि भांती । जनु चाचिकी पाइ जलस्वाती ॥ ६ ॥
रामहिं लषन बिलोकहिं कैसे । ससिहिं चकोरकिसोरक जैसे ॥ ७ ॥

दशकं सुगम: अब गुरों की आज्ञा कर सीताजी का रामचंद्र ढिग सुंदर सखिवों संजुत आगमन अरु चाल की शोभा कहते हैं ॥ ७ ॥

सतानंद तब आयसु दीन्हा । सीता गवन राम पहं कीन्हा ॥ ८ ॥

सतानंदजी गुरु हैं अरु परम प्रज्ञ हैं ताते सुअवसर जान कै जानकी कों रघुनाथजी कै कंठ मों जैमाल पहिरावन की आज्ञा करी तब सीता उस ओर पधारी ॥ ८ ॥

दोहा—संग सषी सुंदरि चतुरि, गावहिं मंगलचार ।
गवनी बालमरालगति, सुषमा सीवँ अपार ॥ २७८ ॥

अपार सोभा की सीमा रूप जो सीता हैं सो सुंदरिवों मंगल गावतियों सखियों संजुत बालहंसनीवत चली । अब सीताजी की छबि अरु सखिवों के कहे प्रभों को जैमाल पहिरावनी कहते हैं ॥ २७८ ॥

सषिन मध्य सिय सोहति कैसी । छबिगन मध्य महाछबि जैसी ॥ १ ॥
करसरोज जयमाल सोहाई । बिश्वबिजयसोभा जनु छाई ॥ २ ॥
तन सकोच मन परम उछाहू । गूढ प्रेम लषि परै न काहू ॥ ३ ॥

तन बिषे संकोच है नवबधू भाव कर अरु मन बिषे उत्साह है स्वामी के मिलने का अरु सीताजी का गूढ प्रेम कहिये सनातन प्रेम तिस को कोऊ लख नहीं सकता वा मन मों परमोत्साह भयेहूं तन कों इस निमित्त सुकचावती है जो मेरे गूढ प्रेम कों कोऊ लखै नहीं ॥ ३ ॥

जाइ समीप रामछबि देषी । रहि जनु कुंअरि चित्रअवरेषी ॥ ४ ॥

रामचंद्र की शोभा देख कै सीता ऐसे भई जैसे मूरति लिखो होए ॥ ४ ॥

चतुर सषी लषि कहा बुझाई । पहिरावहु जयमाल सुहाई ॥ ५ ॥

सीताजी कों प्रेम सो मगन लख कर सखी ने नैनहुं की सैन सें बुझाय कर कहा जैमाल पहिरावन मों देर ना करो जाते यह औसर शुभ है बुझाइ कर इस हेतु कहा जो सखी चतुर है ॥ ५ ॥

सुनत जुगलकर माल उठाई । प्रेमबिबस पहिराव न जाई ॥ ६ ॥

दोनो हाथों कर माला इस हेतु उठाई जाते प्रेम कर अंग सिथिल भये हैं एक हाथ सों उठाई नहींगई अथवा एक हाथ कर ईश्वरों पर पुष्पादिक चढावने कर निरादर होता है अरु पहिरावने मों

देर इस कर करी जो श्रीरामचंद्र के मुख कों पुनः उर कों कुछ आशरन होवैगा सो एह एता बिवधान भी देख नहीं सकती किंवा जिस कंठ साथ मैं मिलन था तिस कंठ साथ प्रथमें माला मिलने लगो है इस सपतीनीक संकोच कर पहिराई नहीं जाती तब सीताजी के भुजा के अरु करों को अरु श्रीरामचंद्र जी के मुख को उपमा उत्प्रेख्या कर कहते हैं ॥ ६ ॥

सोहत जनु जुग जलज सनाला। ससिहिं सभीत देत जयमाला ॥ ७ ॥

सुंदर नाला संजुत मानो दो सत पत्र हैं सो भै संजुत चंद्रमा कों माला अर्पन करते हैं भै इस निमित्त कहा इंदु के सन्मुख भए पदुम सकुचतेही हैं सो इहां भी माला पकडनकर हाथ मुद्रत है ॥ ७ ॥

गावहिं छबि अवलोकि सहेली। सिय जयमाल रामउर मेली ॥ ८ ॥

सोरठा—रघुबर उर जयमाल, देषि देव बरषहिं सुमन।
सकुचे सकल भुआल, जनु बिलोकि रबि कुमुदगन ॥ २७९ ॥

रघुबीरजी के उर मो जैमाला देखकर देवता पुष्प बरषावते हैं जो प्रभों को सोभा अति नोकी भई है किंवा अब सीताजी का संजोग प्रभों सो हुआ है हमारा कारज शीघ्र होवैगा अरु नृप इसकर सकुचे जो हम ने इनो सो बिरोध किआ था अरु इन का प्रताप भानुवत प्रबल भया है हम कुमुदोंवत तृसकार पावैंगे ॥ २७९ ॥

पुर अरु ब्योम बाजने बाजे। षल भये मलिन साधु सब राजे ॥ १ ॥

नगर मों अरु नभ मों जब आनंदद्योतक बजंत्र बाजे तब सुन के दुष्टों के रिदै मलीन भये अरु संतों के रिदै राजे कहिए प्रसन्न भए ॥ १ ॥

सुर किन्नर नर नाग मुनीसा। जय जय जय कहि देहिं असीसा ॥ २ ॥

नाचहिँ गावहिं बिबुधबधूटी। बार बार कुसुमांजुलि छूटी ॥ ३ ॥

बिबुधबधूटी कहिये अपसरा सो नृत्यगान करतिआं हैं अरु बारंबार पुष्पों किआं अंजुलिआं बरषावती हैं ॥ ३ ॥

जहँ तहँ बिप्र बेदधुनि करहीं। बंदी बिरदावलि उच्चरहीं ॥ ४ ॥

महि पाताल नाक जस ब्यापा। राम बरी सिय भंजेउ चापा ॥ ५ ॥

नाक कहिये स्वर्ग इतर सपष्ट ॥ ५ ॥

करहिँ आरती पुरनरनारी। देहिँ निछावरि बित्त बिसारी ॥ ६ ॥

पदार्थों कों वारते हुए लोक अपने धन के प्रमान को नहीं देखते बहुत देते हैं ॥ ६ ॥

सोहत सीय राम कै जोरी। छबी सृंगार मनहु एक ठोरी ॥ ७ ॥

सीता अरु श्रीरामचंद्र एकठे ऐसी सोभा पावते हैं मानो सोभा औ सिंगाररस मूरति धारे खडे हैं ॥ ७ ॥

सषी कहैं प्रभुपद गहु सीता। करति न चरनपरस अतिभीता ॥ ८ ॥

सखियों ने कहा है सीते प्रभों के पगों पर प्रनाम कर तब भैभीत हुई प्रनाम करने में सकुची सो भैभीत का अभिप्राय तो गोसांईजी ने कहा है अरु और भो जो बुद्धि मो आए सो कहते हैं सीताजी ने सरवज्ञताकर बिचारा मेरा है श्रीरामचंद्रसाथ प्रथम स्परस अरु इस काल मैं स्परस होय तो सदा बियोग रहेगा ताते संकोचकर उस काल को बिताया भी तथापि कछुक उस का निरवलांस रहा जाते अल्प वियोग भया किंवा कदाचित श्रीरामचंद्रजी कहैं तूं हमारी आदिशक्ति अरु हम कों देखकर आप सें आन कर ना मिली हमारा बल देखकर भी सखियों के कहे से अब चरण स्परस करणे लागी हैं इस उपालंभ के भै सें अतिभीत भई अथवा बैदेही ने यह जान्या जब मैं नमस्कार करोंगी तबहीं सखियां मुझे गृह की ओर लै जाएगियां तिस वियोग सें अति भीत होएकर सकुची अब मुलकारों का भाव कहते हैं ॥ ८ ॥

दोहा—गौतमतियगति सुरति करि, नहिं परसति पग पानि ।
हिय हरषे रघुबंसमनि, प्रीति अलौकिक जानि ॥ २८० ॥

गौतमतिय जो अहिल्या श्रीरामचंद्र के चरण परसकर आकाश कों चली गई इस निमित्त राजकुमारी नें भी संकाधारी तब जानकीजी की अलौकिक प्रीति कहिये जिसकर परम गति आदिकों की भी इच्छा नहीं करती तिस कों देखकर प्रभु बिगसे सो मन मों इस हेतु मुसकाए जो समाज में ऊंचे हंसना जोग्य नहीं ॥ २८० ॥

तब सिय देखि भूप अभिलाषे । कूर कपूत मूढ मन माषे ॥ १ ॥

धनुष टूटा देख कर भी नृपों कों सीता बरने की उतकंठा भई परंतु जिनों के क्रूर कहिये दुष्ट सुभाव हैं अरु जो नीच पिता के कुसुत हैं जो बुद्धिहीन हैं जिनो के मन क्रोध कर पूरन हैं आगे तिन की कथा अरु कुउक्त कहते हैं ॥ १ ॥

उठि उठि पहिरि सनाह अभागे । जहँ तहँ गाल बजावन लागे ॥ २ ॥

मंद भागी स्थानों सें उठ खडे भये अरु बर्म चर्म पहिर के गालबजावन कहिये बकबाद करन लागे तिस का सरूप देखावते हैं ॥ २ ॥

लेहु छडाइ सीय कह कोऊ । धरि मारहु नृपबालक दोऊ ॥ ३ ॥
तोरेहुं धनुष चाड नहिं सरई । जीवत हमहिं कुंअरि को बरई ॥ ४ ॥

धनुष तोरे भी सीता के बरन की चाड कहिये इच्छा इन की पूरन नहीं होती जातें हमारे जीवतियां सीता कों कौन बरेगा कदाचित कोऊ कहै आगे तौ वह दोनों भ्रात हीं थे अब तो राजा जनक भी उन का संगी होयगा तिस पर कहते हैं ॥ ४ ॥

जौं बिदेह कछु करैं सहाई । जीतहु समर सहित दो भाई ॥ ५ ॥

इस भांति जब तिनो प्रलाप करे तो ॥ ५ ॥

साधु भूप बोले सुनि बाँनी । राजसमाजहिँ लाज लजाँनी ॥ ६ ॥

बल प्रताप बीरता बडाई। नाक पिनाकहिं संग सिधाई॥ ७॥

जो बुद्धवान नृप थे सो कहते भए रे तुमने तौ सरब महीपतों कों लज्जित किया है रे नीचो तुमारा बल प्रताप सूरता बडिआई अरु नाक धनुष के साथ हीं कटि गई है॥ ७॥

सोइ सूरता कि कहुं अब पाई। असबुधितौबिधि मुहँमसिलाई॥ ८॥

जिस बलकर दस सहस्र नृप एकठा होएकर धनुष को उठाइ भी न सके सोई बल है कै जनक के अरु दुहु भ्रातन के जीतन का बल कहूं से अब और ल्याये हो जौं ऐसी तुमारी बुद्धि है तबी बिधाता नें तुमारे मुख काले किए हैं॥ ८॥

दोहा—देषहु रामहि नयन भरि, तजि इरषा मद मोहु।
लषनरोष पावक प्रबल, जानि सलभ जनि होहु॥ २८१॥

जौं हमारी सिख्या मानौ तौ इर्षादिक दोस त्याग कर अरु ईश्वर जान कै रामचंद्र का दरसन करौ नहीं तौ जान बूझ कर लख्यमनजी के क्रोधरूपी अनल बिषे क्यों जलते हौ अरु सीता बरन मों अब तुमारी इच्छा ऐसो है॥ २८१॥

बैनतेयबलि जिमि चह कागू। जिमि सस चहै नागअरिभागू॥ १॥
जिमि चह कुसल अकारनकोही। सुष संपति चाहै सिवद्रोही॥ २॥
लोभी लोलुप कीरति चहई। अकलंकता कि कामी लहई॥ ३॥
हरिपदबिमुष परम गति चाहा। तस तुम्हार लालच नरनाहा॥ ४॥

जैसे गरुड के भोजन कों सुन्दर देख कर काग ग्रहन किया चाहै अरु जो गजहुं के मारनेहारा सिंह है तिस के अहार को जैसे ससा खाया चाहै जो व्यर्थ क्रोधी हैं सो जैसे कुशल चाहै जैसे ईश्वरों का द्वेषी सुखसंपदा चाहै जैसे लोभी अरु चपल अपनी सुन्दर कीरति चाहै जैसे व्यभिचारी अपनी अकलंकता चाहै जैसे भगवंत से बिमुख मुक्ति की इच्छा करै तैसे तुम सीता कों चाहते हो॥ ४॥

कोलाहल सुनि सीय सकानी। सषी लवाइ गई जहँ रानी॥ ५॥

नृपों का खरभर सुन देख कै सीता अरु सखियां ससंक भयां तब यह कोऊ दुष्ट क्रुद्र सीता पर सस्त्रघात ना करे तातें रानी निकट ले गयां॥ ५॥

राम सुभाय चले गुरु पांही। सियसनेह बरनत मन मांही॥ ६॥

तदनंतर रामचंद्र ने बिचारया इहां इस्थित होणा तौ एते कारज प्रजंतहीं बणता था अब सुभाय कहिये अपनी गंभीरताकर श्रीरामचंद्र मुनीश्वर की ओर चले परंतु सीता के प्रेम कों मन मो बिचारते हुये तब यह नृपों के बकवाद की ओर दृष्टही न करी जैसे गजराज कूकरों के शब्द कों कुछ नहीं जानता॥ ६॥

रानिन्ह सहित सोचबस सीया। अबधौं बिधिहिं काह करनीया॥ ७॥

नीचों नृपों का प्रलाप सुनकर जनक किर्या रानियां अरु जानकी चिंतातुर भई जो हम ने जान्या था अभिलाष पूरी है परंतु इनो सभो नें संग्राम किया तो क्या जानिए दैव क्या करे ता समै का लक्ष्यमनजी का स्वरूप कहते हैं ॥ ७ ॥

भूपबचन सुनि इत उत तकहीं । लषन रामडर बोलि न सकहीं ॥ ८ ॥

लक्ष्यमनजी का इतउत देखना अतिक्रोधकर है परंतु प्रभों के भै सें मुखते कछु नहीं बोले ॥ ८ ॥

दोहा—अरुन नयन भृकुटी कुटिल, चितवत नृपन सकोप ।
मनहुं मत्तगजगन निरषि, सिंहकिसोरहिं चोप ॥ २८२ ॥

अब नृपहुं पर लोगों का कोप अरु परशुराम का आगमन कहते हैं ॥ २८२ ॥

षरभर देषि बिकल पुर नारी । सब मिलि देहिं महीपन गारी ॥ १ ॥
तेहि अवसर सुनि सिवधनुभंगा । आये भृगुकुल कमलपतंगा ॥ २ ॥

शिवजी जो हमारे गुर हैं तिन का धनुष किसी छत्री ने तोड्या है यह सुनतेहीं भृगुबंसि बंसरूपी पदुमों कों सबिता सम प्रफुल्लित करनेहारे जो परसुरामजी हैं सो तहां आये भृगुबंसियों का हरषदाते कथन का भाव यह ता समै छत्रियों की हान देखकर भार्गव प्रसन्न होते थे ॥ २ ॥

देषि महीप सकल सकुचानें । बाज झपट जनु लवा लुकानें ॥ ३ ॥

अब परसधर का बीररस मै ध्यान कहते हैं ॥ ३ ॥

गौर सरीर भूति भलि भ्राजा । भाल बिसाल त्रिपुंड बिराजा ॥ ४ ॥

त्रिपुंड नाम सैवों तिलक का ॥ ४ ॥

सीस जटा ससिबदन सोहावा । रिसिबस कछुक अरुन होइ आवा ॥ ५ ॥
भृकुटी कुटिल नयन रिसराते । सहजहिं चितवत मनहुं रिसाते ॥ ६ ॥

भृकुटी क्रूर हैं अरु द्दगरक्त हैं किसू की ओर सुभाविक देखते हैं तौ भी क्रुद्दतहो जानिते हैं ॥ ६ ॥

वृषभ कंध उर बाहु बिसाला । चारु जनेउ माल मृगछाला ॥ ७ ॥

वृषभोंवत भारी कंध हैं उर अरु भुजा बिसलित हैं जनेऊ रुद्राख्यमाला अरु मृगछाला सुंदर सोभते हैं ॥ ७ ॥

कटि मुनिबसन तून दुइ बांधे । धनु सर कर कुठार कल कांधे ॥ ८ ॥

बलकलों के संग है निखंग कटि मों बांधे हुए हैं अरु धनुष मों बान जोडकर बावें हाथ मों पकडिया हुआ है दाहिने हाथ मों कुठार कांधे पर धरा हुआ है ॥ ८ ॥

दोहा—सांतवेष करनी कठिन, बरनि न जाइ सरूप ।
धरि मुनितन जनु बीररस, आए जहँ सब भूप ॥ २८३ ॥

गौर तन अरु बिभूत अरु बलकलादिकों कर सांत वेष है सस्त्रधारण अरु रिदे के क्रोधकर हिंसा आदिक कठिन करनिआं हैं रूप की सुंदरता अरु तेज कहा नहीं जाता मानो बीररस मुनीश्वर का तन धरकर नृपों के छलने निमित्त आया है ॥ २८३ ॥

देषत भृगुपतिबेष कराला। उठे सकल भयबिकल भुआला ॥१॥

प्रथम परसुराम पुनः सस्त्रधारी अरु अति क्रुधयुत देख कर जौन से दुष्ट नृप थे सो त्रास कर कांपते हाथजोड के उठ खडे हुए अरु ॥ १ ॥

पितु समेत कहि कहि निज नामा। लगे करन सभ दंडप्रनामा ॥ २ ॥

जेहि सुभाय चितवहिं हित जानी। सो जानै जनु आयु षोटानी ॥ ३ ॥

जिस की ओर सौम्य दृष्टि कर देखते हैं सो भी जानता है मानो मैं मरा ॥ ३ ॥

जनक बहोरि आइ सिर नावा। सियहिं बोलाइ प्रनाम करावा ॥ ४ ॥

आसिष दीन्ह सषी हरषानी। निज समाज लै गई सयानी ॥ ५ ॥

परसरामजीने जानकी कों आसीस दीनी तब सखिआं जो सयानी है सो प्रसन्य हूं के ततछ्यन हीं सीता कों रानिआं पास लै गयां तत्व यह अब तो प्रसन्न हुआ है कदाचित धनुषभंग का कारण इसी कों समुझ के कोपकरे ताते हमारा इहां इस्थित होना जोग्न नहीं ॥ ५ ॥

बिस्वामित्र मिले पुनि आई। पदसरोज मेले दोउ भाई ॥ ६ ॥

पुनः कहिये तिस से उपरांत बिश्वामित्रजी तो परसुराम कों कंठमिले श्रीरामचंद्रजी अरु सौमित्रजी कों तिनो के चरणारबिंदों पर प्रनाम कराया जाते वह भार्गव हैं अरु कहा ॥ ६ ॥

राम लषन दसरथ के ढोटा। दीन असीस देषि भल जोटा ॥ ७ ॥

रामहिं चितय रहे थकि लोचन। रूप अपार मारमदमोचन ॥ ८ ॥

आशिरबाद तो दोनो को दई परंतु रघुनाथजी कों देख के दृगोंकिआं पलकां ना लागे जाते मनोज के मदहरनेहारा प्रभों का अपार रूप है ॥ ८ ॥

दोहा—बहुरि बिलोकि बिदेह सन, कहहु काह अति भीर।
पूछत जानि अजान जिमि, ब्याप्यो कोप सरीर ॥ २८४ ॥

जद्यपि चापतोडन के वृतांत कों जान्या है तद्यपि अपनी गंभीरता लखावने हेतु अजानेवत राजा जनक कों पूछते हैं यह कैसी भीड है परंतु कहत्यां कहत्यां तन पर क्रोध के लछ्यन दिसते जाते हैं तब ॥२८४॥

समाचार कहि जनक सुनाए। जेहि कारन महीप सब आए ॥ १ ॥

जनक ने यह समाचार सुनाया तुम जानते हो सीता के बर निमित्त धनुष चढावने की मेरी प्रतिज्ञा है तिस निमित्त दोयबेर स्वयंबर आगे किआ है अब त्रितीयबेर पुनः किआ था ॥ १ ॥

सुनत वचन फिर अनत निहारे । देषे चापषंड महि डारे ॥ २ ॥

अनतनिहारे कहिये धनुष की ओर देख्या अरु जान्या टूटा है तब ॥ २ ॥

अतिरिस बोले वचन कठोरा । कहु जड जनक धनुषकेहि तोरा ॥ ३ ॥

अति रिस उपजन का हेतु क्षत्रियों सस्त्र धारीयों को एकठा देखना अथवा धनुषभंग देखकर अति रिस भई जो क्षत्रियों मै ऐसा बलवान कौन प्रगट्या है अरु अतिरिस का लछन एहु जिस जनक का सनमान करते होते थे तिस कों जड कहा अरु आगे भी कहते हैं ॥ ३ ॥

वेगि देषाउ मूढ नत आजू । उलटौं महिजहँ लगि तवराजू ॥ ४ ॥

रे मूढ चापतोडनहारा मुझे शीघ्र देखाउ कै जिस निमित्त तेरा सनमान था सो धनुष तै नें तुडवाया है ताते तेरो सकलो धरती उलटाय देता हूं अर्थ यह प्रिथवी कों उलटा करता हूं अथवा राज और को देता हौं ॥ ५ ॥

अति डर उतर देत नृप नाहीं । कुटिलभूप हरषे मन माहीं ॥ ५ ॥

अतित्रास कर राजा ने उत्तर ना दिआ अतिभै यह जो सन्मुख बोलों अरु मेरा बहुत निरादर करैं अरु रामचंद्र का नाम बतावों तो उन कों मार डारैं अरु कुटिल भूप इस कर प्रसन्य भये जो परसुराम रामचंद्र कों मार डारैगा ॥ ५ ॥

सुर मुनि नाग नगरनरनारी । सोचहि सकल त्रास उरभारी ॥ ६ ॥

सुरमुनि आदिक इस हेतु चिंतातुर हैं यह सहसबाहु का घातक है इस आगे कौन ठहर सकता है ॥ ६ ॥

मन पछताति सीयमहँतारी । विधि अब सवरी बात बिगारी ॥ ७ ॥

सीताजी की माता अति पश्चाताप कर कहती है भली बात बनी थी परंतु अब दैव ने बिगाड दीनो तत्व यह और नृप लडते तब उपाव हो सकता था इस कै आगे किसू का बल कब चलता है ॥ ७ ॥

भृगुपति कर सुभाव सुनि सीता । आधा निमष कल्पसम बीता ॥ ८ ॥

जब जानकीजी ने परसुधर का सुभाव सुना जो एकोसबेर क्षत्री मार कै अरु क्षत्राणियों कै गरभ छेद कै इस ने पितरों कों रुधिर कर तरपण किआ है तब वह अर्द्धछ्यन कल्प समबीत्या जो रघुनाथजी कों क्या करैगा तदनंतर ॥ ८ ॥

दोहा—सभै बिलोके लोग सब, जानि जानकी भीर ।
हृदय न हर्ष बिषाद कछु, बोले श्रीरघुबीर ॥ २८५ ॥

कैसे श्रीरामचंद्र हैं जिन कों धनुष भंगादिकों का कछु हरष नहीं अरु परशुराम कै आगमन का कछु बिषाद कहिये खेद नहीं तिनो नें जब सब लोक भयवान देखे अरु जानकी कों अतिकातुर जान्या तब धनरव गंभीर गिरा बोले गंभीर ध्वनि सों किंवा अर्थ सों ॥ २७० ॥

नाथ संभुधनुभंजनिहारा । होइहै कोउ एकदास तुम्हारा ॥ १ ॥

हेनाथ अर्थ यह है ब्राह्मण शंकरजी के चाप का खंडक कोऊ तुमारा दासही होयगा तत्व यह छत्री ब्राह्मणों के दासही होते हैं ॥ १ ॥

आयसु काह कहिय किन मोही। सुनि रिसाय बोले मुनि कोही ॥ २ ॥

तिस धनुष के तोडनहारे कों क्या आज्ञा है सो मुझे क्यों नहीं कहते एह सुनकर मुनीश्वर कोप संयुक्त बोला ॥ २ ॥ टिप्पणी—कोही = क्रोधी।

सेवक सो जो करै सेवकाई। अरिकरनी कर करै लराई ॥ ३ ॥

हे रामचंद्र सेवक सेवा करनेहाराहोता है औ सत्रु कियां करनिआं करनेहारा होता है कदाचित रामचंद्र कहैं तुमारे साथ किसी ने क्या शत्रुता करीहै तिस पर कहते हैं ॥ ३ ॥

सुनहु राम जेहि सिवधनु तोरा। सहसबाँहु सम सो रिपु मोरा ॥ ४ ॥

सहसबाहु मम इस कर है उसने पिता को अवज्ञा करी थी इस ने मेरेगुरों को अवज्ञा करी है ॥४॥

सो बिलगाइ बिहाइ समाजा। नत मारे जैहैं सब राजा ॥ ५ ॥

सो पुरुष समाज कों छोड कर भिन्न होय खडे होवै नहीं तो सभों नृपों कों मार डारोंगा ॥ ५ ॥

सुनि मुनिबचन लषन मुसुकाने। बोले परसुधरहि अपमाने ॥ ६ ॥

मुनीश्वर के बैन सुन कर लख्यमनजी मंद मुसुकाय तत्व एह मुनीश्वरों ने सस्त्र भी बांधे तो क्या छत्रियों के सन्मुख होसकते हैं सो प्रथम तो हांस कर तिस का निरादर किआ था पुन: तिस को अपमान करते हुए बोले ॥ ६ ॥

बहु धनुहीं तोरीं लरिकाईं। कबहु न असि रिस कीन्हि गोसाईं ॥ ७ ॥
एहि धनुपर ममता केहि हेतू। सुनि रिसाय कह भृगुकुलकेतू ॥ ८ ॥

हे ब्राह्मण ऐसिआं धनु खडिआं तो बालक अवस्था में हम ने अनेक तोडिआं हैं आगे तो तुम कबो नहीं रिसाए तुम पद इहां आगे बिप्रों का उपलख्यक भो है इस धनुष पर तुमारा सनेह किस निमित्त हैं अब अपने बिषे बिप्र संबोधन अरु शंकरजी के चाप अरु धनुखंडी बिशेषण सुन कर भृगुवंस के केतु अतिहि रिसाए हुए बोले ॥ ८ ॥

दोहा—रे नृपबालक काल बस, बोलत तोहि न सँभार।
धनुहीं सम त्रिपुरारिधनु, बिदित सकल संसार ॥ २८६ ॥

रे राजकुमार काल जो तेरा पहुंचा है ताते तूं संभारकर बचन नहीं कहताजौन से सर्बों के प्रलै करता महादेव तिन का त्रिपुर दैत के मारनहारा यह चाप त्रिलोकी में प्रगट तिस को धनुही सम कहता है अतिकुपित हुए ने जो सौमित्रजी कों नृप बालक सनमान का बाक कहा सो जथारथ पख्य में तो तेज घटा अरु ब्यवहार में तिस की अवज्ञा जानकर रे तूं आदिक पद कहे अरु गाधसुत ने जो तिस कों मिलाया था जाते राजपुत्र कहा अरु तूं संभारकर नहीं बोलता इस कथन का प्रगट तत्व यह चाप कों

धनुही कहता है अरु मूरख आमा यह मुझ कों बिप्र कहता है जाते यह आप कों परम सस्त्रधारी जानते हैं इसीलिए पिता के गृह मे जनमतेही चले गए थे अरु इन के उपजावने मों ममीक रिष नें बिष्णुजी के क्षत्रीरूप का आवाहन अरु बिश्वामित्र के उपजावने में शिवजी के तपोस्वरूप का आवाहन किया था परंतु बिश्वामित्रजी को माता नें फल बदलाय के खाए ताते बिप्रों के गृह परशुरामजी जनमे अरु क्षत्री के गृह बिश्वामित्र जनमे तिस कर परशुरामजी बिप्र संबोधन पर रोष करते हैं ॥ २८६ ॥

लषन कहा हँसि हमरे जाना। सुनहु देव सब धनुष समाना ॥ १ ॥

सौमित्रजी ने जान्या हम कों मुसकावता देखकर अरु गुसांई संबोधन सुनकर यह कुपित हुआ है तब तिस का बिशेष कोप देखने हेतु कहते हैं देव अर्थ यह है भूदेव हमारी समझ मे तो सब धनुष समही हैं तत्व यह जो हमारे हाथो कर ना टूटें तिस कों बडा जानिए अरु ॥ १ ॥

का छति लाभ जून धनु तोरे। देषा राम नयन के भोरे ॥ २ ॥

राजा लोग धरा की लाभ कों बडा पदार्थ मानते हैं सो इस जीरन धनुष तोरे मे क्या हम कों छित लाभ कहिए पृथवी प्राप्ति भई है पाठांतर छत लाभ इस निरबल धनुष तोडने में अरु छोरने में हम को क्षति कहिए हान क्या अरु लाभ क्या जों कहो लाभ न था तो क्यों तोडा तहां सुनो रघुनाथजी तिस कों नया अरु प्रबल जान के खेंचकर देखन लगे थे सो ॥ २ ॥

छुअत टूट रघुपतिहि न दोसू। मुनि बिनु काज करिय कत रोसू ॥ ३ ॥

हाथ लगावतो बहु टूटक भया इस मों प्रभों का भी क्या अपराध अरु हे मुनि तुम भी ऐसी नकारो बातों के बिगडने मों किस बुद्धिकर रोष करने लागे हो जब ऐसे निधडक अरु अपमान के बाक सुने तब ॥३॥

बोले चितइ परसु की ओरा। रे सठ सुनें सुभाव न मोरा ॥ ४ ॥

परसु की ओर देख के अर्थ यह कुठार की तिख्यण धार तिस कों देखाइ के कहने लागे रे मूढ तैंने मेरा क्षत्रघातक सुभाव नहीं सुना ॥ ४ ॥

बाल बिलोकि बधौं नहिं तोही। केवल मुनि जड मानसि मोही ॥ ५ ॥

मैं तुझ बालक जानकर अबलग नहीं मार्या रे जड तूं मुझ केवल सतोगुनो मुनीश्वरही जानता है जौं सौमित्रजी कहें तुम ब्राह्मण नहीं मुझ कोंहो भ्रम पडा है तिस निमित्त कहते हैं ॥ ५ ॥

बालब्रह्मचारी अतिकोही। बिश्वबिदित क्षत्रियकुलद्रोही ॥ ६ ॥

भुजबल भूमि भूप बिनु कीन्ही। बिपुल बार महिदेवन दीन्ही ॥ ७ ॥

मै ब्राह्मण तो हौं बालक अवस्था सेही ब्रह्मचारी हौं परंतु क्षत्रियों पर मेरा अतिकोप है मुझ को क्षत्रियों का घातक सब सृष्टि जानती है अरु केवल अपनियों भुजों के बल कर कई बेर पृथवी कों निक्षत्रा करके मैने ब्राह्मणों प्रति दई है तत्व यह मैं महाजितेन्द्रै अरु परम उदार हौं अरु जो तूं जानता होहिं इनों ने निरबल नृप मारे होहिंगे तो ॥ ७ ॥

सहसबाहुभुजछेदनिहारा। परसु बिलोकु महीपकुमारा ॥ ८ ॥

सहस्रबाहुं अरजन हयेराजा दत्तात्रेकर बरलब्ध को भुजा के काटनेहारा मेरा यह कुठार देख मेरे बल आगे तूं नृप बालक क्या वस्तु है ॥ ८ ॥

दोहा—मातुपितहिँ जनि सोचबस, करसि महीपकिसोर।
गर्भन के अर्भकदलन, परसु मोर अतिघोर ॥ २८७ ॥

हे राजकुमार तुझे दशरथ का पुत्र जान के मैं दया करता हौं तूं उन को अपने सोक कर पीड़ित ना कर अरु जों तू जानै मुझे बालक जान के कुछ ना कहैंगे तौ मेरा कुठार क्षत्रानियों के गरभों के बालकों को छेदनेहारा है तब लछमनजी ने लख्या महीसकिसोरादिक संबोधन दै कै हमारे पिता के मानकर न पूरदक हमकों निवारताहै अब इस का तेज घटा है तौ तिस के बिशेषघटावने हेतु ॥ २८७ ॥

बिहँसि लषन बोले मृदुबानी। अहो मुनीस महाभट मानी ॥ १ ॥

लछमनजी का बिहसना उन के निरादर निमित्त अरु मृदुबानो कहनी महीश किसोर संबोधन के बदले अरु बिप्र जान कर कछुक सनमान अर्थ भी सो निरादर के प्रथम कठोर वाक पंचचरनहुं महुं कोमल वाक दोहे के पूर्वार्द्ध सहित नवचरनहुं मो देखावते हैं। अहो आश्चर्ज है तू मुनीश्वर हूै के सूरता का महागरब करता है अरु ॥ १ ॥

पुनि पुनि मोहि देषाव कुठारू। चहत उडावन फूंकि पहारू ॥ २ ॥

बारंबार मुझे कुठार देखावता है सो कुठार रूपी फूक से क्या मुझ गिरवर कों उडाया चाहता है अरु जो तेरे मन मों होय मेरियां बातां सुन कर अरु कुठार देख कर यह डर जायगा तो ॥ २ ॥

इहाँ कुम्हडबतिया कोउ नाहीं। जे तरजनी देषि मरि जाहीं ॥ ३ ॥

कुमडवतिआ कोऊ कीट होता है अथवा कुमडवतिआ नाम कासीफल का उस की प्रथम अवस्था मों तरजनी अंगुरी उस को ओर करिए तब वह सूक जाता है सो हम उस की न्याई परसु देख कर मरजानेवाले नहीं अब कोमलबचन कहते हैं परंतु वह भी उस को कोप उपजावनहारे ॥३॥ टिप्पणी—मुन्शी रौशनलाल ने निम्न लिखित अर्थ किया है। यहां कुम्हड़े को बतिया कोई नहीं है जो तर्जनी अर्थात् अंगूठे के पासवाली अंगुली देखते ही मरजायगी अथवा यहां कुम्हड़ा है वह बतिया नहीं है जो आप को देख के मरजाती है। कुम्हड़ा अंगुली देखने से नहीं मरता है।

देषि कुठार सरासन बाना। मैं कछु कहा सहित अभिमाना ॥ ४ ॥
भृगुकुल समुझि जनेउ बिलोकी। जो कछु कहो सहौं रिस रोकी ॥ ५ ॥

हे महाराज कुठारादिक सस्त्र अरु अभिमान सहित तुम कों देख कर तो तुम को मैनें सुभट जान्या था तब कुछ वचन कहे थे किंवा मैं अभिमान संजुत बोला था अरु अब जनेऊ आदिक चिन्ह देख कर तुम कों द्विज जान्या है सो जद्यपि कुबचन सुनकर हम क्षत्रियों की कोप तो उपजता है परंतु ब्राह्मणो को गिरा जान कै अरु अपना कोप रोक के सुनेगा जाते ॥ ५ ॥

बधे पाप अपि कीरति हारे । मारत हूं पां परिय तुम्हारे ॥ ६ ॥

जो तुम को मारिए तो पाप अरु जो तुम से हारिए तो अपि कहिये निश्चेकर कीरति होती है तातें तुम मारो तो भी हम ने पगों लागना अरु कईएक इस का अर्थ ऐसे भी करते हैं जौं तुम कों मारिए तो पाप अरु जो हारिए नो अपकीरति जो कही होइ कै भिख्युकों से निरबल हैं तिस पर हमारा कुलाचार है ॥ ६ ॥ टिप्पणी—अपि कीरति और अपकीरति दोनों पाठ हैं ।

सुर महिसुर हरिजन अरु गाई । हमरे कुल इन पर न सुराई ॥ ७ ॥

जो सुराई पाठ होवे तो सूरता सुगम ॥ ७ ॥

कोटि कुलिस सम बचन तुम्हारा । व्यर्थ धरो धनु बान कुठारा ॥ ८ ॥

तातपर्ज यह स्राप देकर मारो तो सांच है अरु तुमारे कुठार से हम कब मरते हैं ॥ ८ ॥

दोहा—जो बिलोकि अनुचित कहेउं, छमहु महामुनि धीर ।
सुनि सरोष भृगुबंसमनि, बोले गिरा गंभीर ॥ २८८ ॥

सम्बहुं मंजुत तुम कों देख कर जो मैंने तुम को कोऊ अजोग कहा हाए तो भी तुम ने खिमा करना जाते तुम महामुनीश्वर धीरजवंत हो इस भांति के बचन सुन के सरोष जो परसुरामजी हैं सो गंभीरबानी बोले गंभीरता बानी सो यह जिस सों प्रगट तो जुद्ध को प्रतीति हाए अरु रिदा उन के प्रताप को देख कर जुद्ध से निबृत हुआ हाए अरु अपना भै देखलाय कर किसी ढार्गों उन कों आपने आगे नम्र करने का आसा होइ सोई देखावते हैं ॥ २८८ ॥

कौसिक सुनो मंद यह बालक । कुटिल कालबस निजकुलघालक ॥ १ ॥

कौशिक संबोधन देने का भाव यह जब मैं कुशबंसियों को मारनेलागा था तब किर्तकराज्यों को अपनी कुल के संबंध कर तुम ने बचाया था तिसो प्रकार इस बालक के निमित्त भी जो तुम ने पुनः प्रार्थना करनी होए तो अब इस को निवारो पीछे क्रोध में आये हम इस कों छाडेंगे नहीं ॥ १ ॥

भानुबंसराकेसकलंकू । निपट निरंकुस अबुध असंकू ॥ २ ॥

सूरजवंश रूपी पूरण चंद्र कों यह मूढ कलंकवत दाग देनेहारा है जाते अतिनिरंकुश है तत्व यह बडे भ्रात अरु नृप की ओर भी नहीं देखता अरु कुबुद्धी है जाते बुद्धिवों का निरादर करता है अरु असंक है जाते मुझ से नहीं डरता भानुबंश कों पूरनेंदु कथन का भाव यह जनक रविवंसी हैं अरु रामचंद्र भी भानुवंसी हैं यह मेरे साथ मैत्री जान कै इस कों धिकारेंगे ॥ २ ॥

कालकवल होइहि छिन माहीं । कहौं पुकारि खोरि मोहि नाहीं ॥ ३ ॥

एह बालक छ्यन मों काल का कवल कहिए ग्रास होए जायगा मैं पुकार कर कहता हौं तुमने मुझे दोस नहीं देना हम ने यह बालक मिलाए थे अरु इनो ने मार दिया है ॥ ३ ॥

अब हटकहु जौं चहो उबारा । कहि प्रताप बल रोष हमारा ॥ ४ ॥

हे विश्वामित्रजी जो इस का जीवना चाहते हो तो अब इस को मौन करावो अरु जो कहो हमारा कहा नहीं मानता तो एकीसबेर धरा की निछत्रियां करण रूपी जो मेरा प्रताप अरु बल अरु क्रोध है सो इस को सुनावो जाते बडियों नृपों का बध सुन कर डर जावैगा यह सुन कर सौमित्रजी ने उस कों अति निरबल लख्या तब ॥ ४ ॥

लषन कहेउ मुनि सुजस तुम्हारा । तुमहिं अछत को बरनै पारा ॥ ५ ॥
अपने मुष तुम आपन करनी । बार अनेक भांति बहु बरनी ॥ ६ ॥
नहि संतोष तौ पुनि कछु कहहू । जनि रिसरोकि दुसह दुष सहहू ॥ ७ ॥

सौमित्रजी ने कहा हे मुनीश्वर तुम जो इन को कहते हो हमारा प्रतापादिक सुनाइ कै इसे डरावो सो तुमारे जस का वक्ता तुमारे जैसा और कौन है तत्व यह अपने गुण कहने धृष्टों का काम है सो तो सहस्रबाहु के जीतन अरु गर्भ छेदनादिक अपने गुन तुम ने बहुत भांतों कर आपही सुनाए हैं जो कछु रहते हैं तौ कृपाकर पुनः आप ही सुनाय देवो गुनो के अप्रगट होणे का कोप रिदै में रोक कर तिस अगिन सों अपना रिदा ना जलावो तत्व यह तुमारा रोष रूपी पावक हमारा तो कुछ बिगार नहीं सकता तुमारे उर को ही दाहेगा ॥ ७ ॥

बीरब्रती तुम धीर अछोभा । गारी देत न पावहु सोभा ॥ ८ ॥

तुमारे वाक्यों द्वारा जाना है तुम बीर रणधीर हो अरु ब्रह्मचर्यादिक ब्रतों के धारणहारे हो सो जो ब्रत के धारणहारे सांच हो तो तुमारा रिदा अख्योभ चाहिता है दुरबचन बोलते तुम भले नहीं लागते अरु जौं रणधीर हो तो भी बकवाद भला नहीं जाते ॥ ८ ॥

दोहा—सूर समर करनी करहिँ, कहि न जनावहिँ आपु ।
बिद्यमान रन पाइ रिपु, कायर करहिँ प्रलापु ॥ २८९ ॥

सूर बीर संग्राम में अपनी करनी देखावते हैं मुख किथां बातां कर जोधे नहीं बनते तिस पर भी शत्रु कों सन्मुख हुआ देख कर प्रलाप करना तो अति कादरों का काम है ॥ २८९ ॥

तुम तौ काल हांक जनु लावा । बार बार मोहि लागि बोलावा ॥ १ ॥

हे मुनि तुम जो कहते हो तेरा काल आया है सो तुमने तो मानो काल कों हांक लगाई है अर्थ यह बारंबार बोलावते हो परंतु तुमारा बोलाया काल आवता नहीं ॥ १ ॥

सुनत लषन के बचन कठोरा । परसु सुधारि धरेउ कर घोरा ॥ २ ॥
अब जनि देइ दोस मोहि लोगू । कटुबादी बालक बधजोगू ॥ ३ ॥

तेज से अति हीन भए हैं ताते अब लोगों पर निहोरा दिया है अपर सुगम ॥ ३ ॥

बाल बिलोकि बहुत मै बाँचा । अब यह मरनहार भा साँचा ॥ ४ ॥

इस को सिसु जान कै मै बहुत बचीआ था अर्थ यह क्रोध निवृत्त किया था परंतु यह अवज्ञा करता है ताते अब निश्चै मरता है ॥ ४ ॥

कौसिक कहा छमिअ अपराधू । बालदोषगुन गनहिं न साधू ॥ ५ ॥

बिश्वामित्रजी ने कहा इस को अविज्ञा क्षमो जाते भले लोग बालकों के दोषों अरु गुनो को नहीं गिनते यह सुनकर पुन: उनो पर उपकार लखावता हुआ बोला ॥ ५ ॥

कर कुठार मै अकरनकोही । आगे अपराधी गुरद्रोही ॥ ६ ॥
उतर देत छाडौं बिनु मारे । केवल कौसिक सील तुम्हारे ॥ ७ ॥

छत्रिवों पर तौ मेरा अवज्ञा बिना भी रोष होता है तिस पर यह मेरे गुरों के चाप का खंडक तदोत्तर अपराधी जो मेरे सन्मुख बोल्या तिस पर मेरे बचन सुनकर भी सन्मुख उत्तर देता है अरु मैं हूं किमू तप जप मो ततपर नहीं हाथ मों कुठार धरे खरा हों अरु इस का अबलों मूड नहीं काट डाल्या सा हे बिश्वामित्रजी केवल तुमारे संबंध अरु शील को ओर देखकर ॥ ७ ॥

न त एहि काटि कुठार कठोरे । गुरहि उरिन होतें श्रम थोरे ॥ ८ ॥

जौं तुमारा संकोच न करता तौ इस का मूंड अपने उग्रकुठार सों काट के गुरों का रिन उतार देता अरु इस के बध मो मुझे जतन कुछ न था ॥ ८ ॥

दोहा—गाधिसुअन कह हृदय हँसि, मुनिहिं हरीअरसूझ ।
अयमय षांड न ऊषमय, अजहु न बूझ अबूझ ॥ २९० ॥

गाधिसुअन जो बिश्वामित्रजी हैं सो हंसकर हृदै मों कहत भए मुनीश्वर जो परसुराम हैं तिस कों हरीअर कहिए हरिआवल अर्थ यह सभ सबुज खेतही दीसता है तत्र यह इन कों और छत्रिओं सम जानता है जौं कोऊ कहै इस का नाम भी छत्री है तिस पर कहते हैं नाम तो सम है परंतु वस्तु मै बडा भेद है जैसे लोह मय भी खांड कहिए खरग अरु ईख मय का नाम भी खांड सो मिठाई तत्व यह नाम तो इन के सम भए परंतु ईखमय खांड का खाना सुखद अरु लोहमय खांडों कों मुख मै पाए मुख फट जाय तैसे यह छत्री इस की दुरदसा करनहारे हैं परंतु एह समुझता नहीं किंवा कईएक अर्थ करते हैं खांड नाम टुकरिवों का सो लोहे के टुकडे जो सस्त्र हैं यह तिनो सम हैं ईष के टुकडे जो गनेरियां हैं तिनो सम नहीं द्राष्टांत एकही बिश्वामित्रजी कों इहां गाधसुत विशेषण का भाव यह छत्रिवों का उदै देखकर प्रसन्य भए हैं अरु वह महाहंकारी है तिस का गरबखंडन देखकर भी प्रसन्न भये अरु मन मों बिहंसन का भाव यह इन के प्रगट हंसे उस का अति अपमान होता था अरु इन की गंभीरता मों दोस आवता था पीछे जो परसुराम ने कहा था मैं अकारण क्रोधी हों अरु इस का शिर काटकर मैं गुरों से अरिन होता तिस का उत्तर ॥ २९० ॥

कह्यो लषन मुनि सील तुम्हारा । को नहिं जान प्रगट संसारा ॥ १ ॥
मातहि पितहिं अरिनो भए नीके । गुररिन रहा सोच बड जीके ॥ २ ॥

यह व्यंग बचन है हे मुनीश्वर तुम अपने मुखों आप कों अकारणक्रोधी क्यों कहते हो तुमारा शील तौ सरब जगत मों प्रसिद्ध है अरु तीन रिन सभों के शिर पर हैं तिनो के उतारे से सपुंन होता है सो तुम हुएही जाते माता पिता का रिन भली रीति सें उताय्या है तातपर्ज यह माता कों अपने हाथो माय्या है अरु छत्रियों सो बैरकरके पिता कों मरवाया है दोयरिन उतरे अब गुरों के रिन उतारने की चिंता है ॥२॥

सो जनु हमरे माथे काढा। दिनचलिगयो ब्याजबहु बाढा॥ ३ ॥
अब आनिय ब्यवहरिआ बोली। तुरत देउ मैं थैली षोली॥ ४॥

सो गुरों का रिन मानो हमारे मस्तक पर काढ्या है अरु बहुत चिरबीतनेकर ब्याज भी बहुत बढाया है अब किसी सराफ कों बोलावो मै थैली खोल देउं जब लख्यमनजी ने अति अनादर का बचन यह कहा तब ॥ ४ ॥

सुनि कटु बचन कुठार सुधारा। हाय हाय सब सभा पुकारा॥ ५॥

परसुधर कों रण हेतु उदत हुआ देखकर लख्यमनजीहूं क्रोधकर बोले ॥ ५ ॥

भृगुपति परसु देषावहु मोही। बिप्र बिचारि बच्यो नृपद्रोही॥ ६ ॥

हे नृपघाती तूं ओरों राज्यो का भुला हुआ मुझे कुठार देखावता है परंतु मै ने बिप्र अरु भारगव जान कै तुझे अबला छाडा हैं ॥ ६ ॥

मिले न कबहु सुभट रन गाढे। द्विज देवता घरहि के बाढे॥ ७॥

गाढे सुभट कहिये दृढ सूर तुझे कबी मिले नहीं रे द्विज तै नें घर के देवता बाढे हैं प्रयोजन यह जा तै ने मारे हैं वह जोधा नहीं थ घरों में बैठकर सुरोंवत प्रजा सें अरु भृत्यों में पूजा करावनेवाले थे ॥७॥

अनुचित कहि सब लोग पुकारे। रघुपति सैनहिं लषन निवारे॥ ८॥

तब सभों लोगो ने कहा लख्यमन जी अजोग्य कहते हैं जाते परशुराम जी बडे पुनः द्विजप्रतापी वह अपनी बीर मे मिटते हैं अरु यह बांरबार तिन कों छेडते हैं तब प्रभों ने नैन सैन कर सौमित्र जी कों निवाय्या साई कहत हैं ॥ ८ ॥

दोहा—लषनउतर आहुति सरिस, भृगुबर कोपकृसानु।
बढत देषि जल सम बचन, बोले रघुकुलभानु॥ २९१ ॥

लख्यमन जी के बचन आहुतिआं सम हैं अरु परसुराम का क्रोध अनल सम है तिस कों प्रचंड होता देख कै जलसम बचन प्रभु बोले जाते रघुकुल मों भानु सम हैं भाव यह तप्त का अरु बरषा का अधिष्टान भी भानु ही हैं ॥ २९१ ॥

नाथ करहु बालक परछोहू। सूध दूध मुष करिय न कोहू॥ १ ॥

हे नाथ यह बालक सूधा है दूधपान करनिहारे सिसु सम है अर्थ यह अति अयाना है ताते इस पर कृपा करो कोप न करो जौ परसुराम जी कहैं एती बडे कों अस्थनपानी सम कैसे कहते हो तिस पर कहते हैं ॥ १ ॥

जौं पै प्रभु प्रभाव कछु जाना। तौं कि बराबर करै अयाना॥ २॥

हे प्रभो बरषों को बहुलता कर बड़े नहीं बनीते बुद्धि कर बड़े होहिं तो प्रमान होते हैं सो इस कों तुम्हारे प्रभाव जानन की बुद्धि होती तौ बराबरी क्यों करताइया नाही है जौ परसुराम जो कहैं इसकी मूढ़ अवस्था अनुहर भी कछुक दंड चाहिए तिस पर कहते हैं॥ २॥

जौं लरिका कछु अचगरि करहीं। गुरु पितु मातु मोद मन भरहीं॥ ३॥

अचगर कहिए अजोग्य चपलता जौं बालक करते हैं तो भी गुर अरु पिता माता प्रसन्न होते हैं तत्व यह अवस्था के सुभाव कर अब इन की बुद्धि चपल है बड़े भए बुद्धि ठहरैगो तब सरब व्यवहार धीरज सों करैंगे॥ ३॥

करैं क्रपा सिसु सेवक जानी। तुम सम सील धीर मुनि ग्यानी॥ ४॥

ताते तुम सारषे सीलवंत धीरजवान अरु ज्ञानी मुनि ऐसिबों कों बालक अरु दास जान कर क्रपा करते हैं॥ ४॥

रामबचन सुनि कछुक जुडानें। कहि कछु लषन बहुरि मुसुकानें॥ ५॥

जैसे घाम कर धरा तप्त अधिक होए तब प्रथम बरषा करहो संपूरण सीतलता नहीं होती तिसी प्रकार क्रोध परसरामजी कों बहुत था अरु सांत के बाक्य श्रीरामचंद्र जी ने अबी अल्प कहे हैं तिस कर कछुक जुडानें वा श्री रामचंद्र ने इस की सांत निमित्त सनमान के वाक्य तो बहुत कहे हैं परंतु कहूं मुनि आदिक संबोधन जो कहे हैं तिस वाक कों सुन कर पूरन प्रसन्नता न भई किंबा राम कहिये परसराम सो जद्यपि रामशब्द रमावने का बोधक है ताते इन कों परमप्रसन्नता चाहीतोथो परंतु इन के आदि जो राम शब्द से बडा परसु शब्द तमोगुण का बोधक है ताते ही क्रोधी हैं अरु अब श्रीरामचंद्रजी के वाक्य सुन कर भी अलप प्रसन्न भए तब कछु हृदये वचन कह कर सोमित्र जी पुनः मुसकाए॥५॥

हँसत देषि नषसिष रिस ब्यापी। राम तोर भ्राता बड पापी॥ ६॥

गौर सरीर स्याम मन माहीं। कालकूटमुष पयमुष नांही॥ ७॥

बरण इस का गौर है अरु हिदा स्याम है अरु तुम कहते हो इस के मुख मों दूध हैं सो नहीं इस के मुख तो कालकूट है॥ ७॥ टिप्पणी—पयमुखो नहीं है यह विषमुखी है।

सहज टेढ अनुहरै न तोही। नीच मीच सम देष न मोही॥ ८॥

सदा का कुटिल है तेरे अनुसार भी नहीं अरु यह नीच मुझ कों मोच सम नहीं देखता परसुराम ने कहा था लछ्यमन बडा पापी है तिस का उत्तर॥ ८॥ टिप्पणी—देष के स्थान लषि पठांतर।

दोहा—लषन कह्यो हंसि सुनो मुनि, क्रोध पाप कर मूल।
जेहि बस जन अनुचित करहिँ, चरहिँ बिस्वप्रतिकूल॥ २९२॥

इस कथन कर यह लखाया जिस कों कोप अधिक होए सो पापी होता है सो व्यर्थ क्रोधी तुम हो तदनंतर प्रभों की कुछ कोमलता देख कर एह भी मृदु गिरा बोले परंतु व्यंग मिश्रित ॥ २९२ ॥

मै तुम्हार अनुचर मुनिराया। परिहरि कोपकरिय अब दाया ॥ १ ॥
टूट चाप नहिं जुरै रिसानें। बैठिय होइहि पाय पिरानें ॥ २ ॥

हे मुनि धनुष जो टूटा है सो नेत्र लाल किए अरु भृकुटि कुटिल करे तौं जुडता नहीं चाप बैठिए खडे हुए पांव दुखने लगे होंहिंगे जौं कहो हम नें चाप पूरब जैसा बनवाया लैना है तब रिस उतारनी है तहां सुनो ॥२॥

जौं अतिप्रिय तौ करिय उपाई। जोरिय कोउ वड गुनी बोलाई ॥ ३ ॥

जौं कारमुक मों अधिक सनेह हैं तौ कोऊ कारीगर बोलवाए कर इस कों जुडवावों गठवाई का मोल हमारे से लेना ॥ ३ ॥ टिप्पणी—कारमुक = धनुष = चाप।

बोलत लषनहिं जनक डेराहीं। मष्ट करहु अनुचित भल नाहीं ॥ ४ ॥
थर थर कांपहिं पुरनरनारी। छोट कुमार षोट अतिभारी ॥ ५ ॥
भृगुपति सुनि सुनि निर्भय बानी। रिस तन जरै होइ बलहाँनी ॥ ६ ॥

ज्यों ज्यों लछ्यमन जी के निधरक वाक्य परसुधर सुनता है त्यौं त्यौं कोप सों तन सूकता है अरु बल प्रताप घटताजाता है पोछे जिनों पर निहोरा दिआ था उन को तो कहना बनता नहीं अरु अपनी महत्तता अबी छोडी नहीं जाती तातें ॥ ६ ॥ टिप्पणी—सूकता = सूखता।

बोले रामहिं देइ निहोरा। बच्चौ बिचारि बंधु लघु तोरा ॥ ७ ॥

हे रामचंद्र तेरा भ्रात बिचार कै मैंने अब लो यह छोड्या है कै ॥ ७ ॥

मन मलीन तन सुंदर कैसे। बिषरसभरा कनकघट जैसे ॥ ८ ॥

दोहा—सुनि लछिमन बिहंसे बहुरि, नयन तरेरे राम।
गुर समीप गवने सकुच, परिहरि बानी बाम ॥ २९३ ॥

लछ्यमन को हंसते देख कर रामचंद्र ने कोप दृष्टि करी तब लछ्यमन जी सकुच गये अरु बामता त्याग कर गुरों के पास जाय खडे भए संकोच का हेतु यह श्रीरामचंद्र जी ने भ्रू भंग किआ है किंवा गुरों की ओर देखकर सकुचे जो इनो ने हम कों परसुराम के आगे नमस्कार कराई थी अरु हम ने उन कों निरादर के बाक कहे हैं कदाचित गुरु कुछ मन मों ल्यावते होवें किंवा परसराम सृष्टि विजई हैं अरु हम ने उस का राजसमाज में निरादर किआ है इस बात का कुछ अपने मन मैं अहंकार न आवै तातें सकुचे ॥ २९३ ॥

अतिबिनीत मृदु सीतल बांनी। बोले राम जोरि जुग पानी ॥ १ ॥

जिस सो विशेष नीति है अरु अति कोमल अरु सीतल है ऐसी बानी रघुनाथजी हाथ जोडकर बोले हाथ जोडने का भाव अति नम्रता अथवा दोनो हाथ जोडने से यह प्रतीत कराया हम आयुध छोडकर अधीन भए हैं किंवा भाई भुजा होते हैं सो मै अपनी ओर से अरु लक्ष्मन के ओर से भी हाथ जोडता हौं अथवा दोऊ कर जोडने से यह लखाया दोनों प्रकार तुम पूजने जोग्य हो जाते ब्राह्मण हो अरु अवस्थाकर बडे हो किंवा शिवजी के शिष्य हो तिसकर हमारे गुर भाई हुये अरु विश्वामित्रजी के संबंधी हो इन दोनो निमित्तों से दोऊ हाथ जोडे अरु कहते भये ॥ १ ॥

सुनहु नाथ तुम्ह सहज सुजाना। बालकबचन करिय नहिंकाना॥ २॥

सहज सुजान पद साधारन अर्थ में तौ उन को बुद्धिमता का प्रतीति करावता है अरु सूक्षम अभिप्राय यह तुम ईश्वर अंस हो इस कौ बालक जानकर इस के बचन नहीं सुननें बचना का प्रयाजन समुझना तातपर्ज यह समा तुमारा हूं चूका है अब तुम बन मों जायकर तप करो ॥ २ ॥

बर्वर बालक एक सुभाऊ। इनहिं न बिदूषहिं बिदुषनकाऊ॥ ३॥

बिदुष कहिये जुद्धवान सो बावरियों अरु बालकों को सम जान के इन को क्रया पर रोस नहीं करते जौं परशुराम कहैं बोलने की अवज्ञा तो हम सिसु जानकर छमेंपरंतु धनुष भंग का रोस हम कौं अधिक है तिस पर कहते हैं ॥ ३ ॥ टिप्पणी—बवरे के स्थान पर बररे पाठ भी है।

तेहि नाहीं कछु काज बिगारा। अपराधी मैं नाथ तुम्हारा॥ ४॥
कोप क्रपा बध बंधु गुसाँई। मोपर करिय दास की न्याई॥ ५॥

हे प्रभो चाप तोडन का कोप तौ उस पर ना करो जाते उस कारज का अपराधी मै हौं ताते क्रपा करो कोप करो बांधो मारो जो इच्छा होए सो मोपर करो जैसे दासों पर स्वामी सिख्या करते हैं दास कथन का तत्व यह मुझ कों विरोधी न जानो दास जान के मित्रता सों सिख्या करो ॥ ५ ॥

कहिय बेगिजेहिबिधि रिस जाई। मुनिनायक सोइ करौं उपाई॥ ६॥

हे मुनिवर जिस प्रकार आप का कोप निव्रत होता है सो शीघ्र कहो मैं उसी भांति करता हौं ॥ ६ ॥

कह मुनि राम जाइ रिस कैसे। अजहुं अनुज तव चितव अनैसे॥ ७॥

मुनीश्वर बोल्या हे रामचंद्र तुमारे कहे तो मै रोष निवारों परंतु भ्रात तेरा अब भी अनयैसे कहिये अनीति से मेरी ओर देखता है अर्थ यह उस की कुटिलता जब लौं मैं ना मिटावों तब लौ रोष कैसे घटावौं अरु ॥ ७ ॥ टिप्पणी—अनैसे = शत्रु दृष्टि से।

एहि के कंठ कुठार न दीन्हा। तौ मै काह कोपकरि कीन्हा॥ ८॥

तुम ने जो कहा कोप निवारो सो इस का कंठ इस कुठार साथ मैं ने ना काट्या तौ मै ने कोप क्या किया जाते ॥ ८ ॥

दोहा—गरब श्रवहिं अवनिपरवनि, सुनि कुठारगति घोर।

परसु अछत देषौं जिअत, बैरी भूपकिसोर॥ २८४॥

भूपतों की वो रानियों के गरभ जिस कुठार का आगमन सुनकर गिरपडते थे तिस परशु के समीप होते राजपुत्र अरु मेरा शत्रु सन्मुख जीवता खडा है तौ मै ने रोष कब किया है अवनिपरवनि कथन का तत्व यह जैसे अवनी कहिये पृथ्वी कठोर है तैसेहीं तिस के पति जो नृप हैं तिन के रिदे कठन हैं अरु ततसदृशही रानियों के रिदे कठन हैं सो जिस परशु के भैकर फट जाते थे जौं कोऊ कहै तुम कुठार क्यों नहीं मारते तिस पर कहते हैं ॥ २८४॥

बहै न हाथ दहै रिस छाती। भा कुठार कुंठित नृपघाती॥ १॥
भयो बाम बिधि फिरेउ सुभाऊ। मोरे हृदय कृपा कस काऊ॥ २॥

क्रोध सों मेरी छाती जलती है अरु हाथ नहीं उठता ताते जानीता है कुठार कुंठितभया है अथवा दैव की प्रतिकूलता कर मेरा सुभावही बदल गया है के तो मेरे रिदे मों कृपा कहां॥ १॥

आजु दया दुष दुसह सहावा। सुनि सौमित्र बिहंस सिर नावा॥ ३॥

आजु दयाकर मैं बडा दुखी भया हौं यह सुन के मुसकायकर सौमित्रजी ने प्रनाम किया के महाराज तुम धन्य हो अरु कहत भए॥ २॥ टिप्पणी—हंसना व्यंग है।

बाउ कृपा मूरति अनुकूला। बोलत बचन झरत जनु फूला॥ ४॥

जैसी तुमारी सौम्य मूरति है तैसेही रिदे मै कृपा होयगी अरु तैसेहीं मृदु बचनबोलते हो जो पुष्पों समान झडते हैं उस ने जो कहा था दयाकर मेरा मन अति तप्या है तिस का उत्तर॥ ४॥

जौ पै कृपा जरहिं मुनि गाता। क्रोध भये तन राष बिधाता॥ ५॥

हेमुनि जो दया संग तुमारा तन जलने लागा तौ क्रुद्ध भये भगवंतहीं राखे अर्थ यह कोप संग भस्म हुआ चाहिये पीछे कहाथा प्रभों के डराए हुए लक्ष्मनजी तूष्नी होय गये अरु अब पुनः बोले सो अंतरजामी की इच्छा मोहीं जानने तब तेजहीन हुये जो परसुरामजी हैं सो जनक पर निहोरा दे कै बोले॥ ५॥

देषु जनक हठि बालक येहू। कीन्ह चहत जड जमपुर गेहू॥ ६॥
बेगि करहु किन आँषिन ओटा। देषत छोट षोट नृपढोटा॥ ७॥

हे जनक तुम ने मेरे पर दोष न धरना इस बालक की मूढता देखो यह किसू का कहा नहीं मानता मरनाहीं चाहता है देखने मो लघु है अरु रिदे से महामलीन है जों तुम ने इसे बचावना है तो मेरे दृगों से दूर ले जावो यह सुनकर॥ ७॥

बिहँसे लषन कहा मुनि पांहीं। मूँदे आंषि कतँहु कोउ नांहीं॥ ८॥

लक्ष्मनजी नें हंसकर निकट आइ के हृदए में कह दिया तुम अपने नैन मूंद छोडो तुम कों कोऊ नहीं दृष्ट आवेगा तब परसुराम ने बिचारा जुद्ध तो हम ने करना नहीं जाते यह महाबली हैं अरु

बचनों में लछ्यमन हारता नहीं परंतु रामचंद्र नम्र बोलते हैं इन को भयदायक बचन कहिकर मान मनावों तौ भी मेरे बात समाज मों रहि आवती है ताते ॥ ८ ॥

दोहा—परसुराम तब राम प्रति, बोले उर अतिक्रोध।
संभुसरासन तोरि सठ, करसि हमार प्रबोध ॥ २८५ ॥

बंधु कहै कटु संमत तोरे। तूँ छल बिनै करसि कर जोरे ॥ १ ॥

हे रघुबर सौमित्र तेरे संमत सोहीं मुझे अपमानता है अरु तूं महाछली है ताते करजोर कें नम्र बचन कहता है सो मुझे प्रमान नहीं ॥ १ ॥

करु परितोष मोर संग्रामा। नाहि त छाडु कहावन रामा ॥ २ ॥

दोनो भाई तुम सनध्य होदो अरु संग्राम मो मेरा तोष करो अर्थ यह मुझे जीतो तौं भला कै तो तै ने अपना नाम रामचंद्र क्यों धराया है तत्व यह राम अवतार मैं हों तूं क्यौं बनता है ॥ २ ॥

छलतजि करो समर सिवद्रोही। बंधु सहित न त मारौं तोही ॥ ३ ॥

रे शिव द्रोही यह मीठा गिराछपी छल छोड के मुझ सों जुद्धकर नहीं तो दोनों भातां कों अबी मार डारता हों ॥ ३ ॥

भृगुपति बकहिं कुठार उठाए। मन मुसुकांहि राम सिरु नाए ॥ ४ ॥

भृगुपति कों बकता देखकर रामचंद्र शीश नवाइकर मन मों मुसकावते हैं सीस नवावना नम्रता कें अर्थ है अथवा हमारा मुसकावना परसुराम नेत्रों द्वारा न लखि मुसकावने का भाव यह अब परसुराम का बकवाद मात्र है संकर्षणजो ने बचनों द्वारा इन का बल आकर्षणकर लिया है यह जानकर बोले ॥ ४ ॥

गुनहि लषन कर हम पर रोषू। कतहुं सुधाइहुं तें बड दोषू ॥ ५ ॥

हे मुनीश्वर दोष लछ्यमनजी का अरु हम को सुधा जान के कोप हमारे पर करते हो कबहू सूधि अहुं ते भी दोस होते हैं परंतु नीत मों सांच कहा है ॥ ५ ॥

टेढ जानि संका सब काहू। बक्र चंद्रमहिँ ग्रसै न राहू ॥ ६ ॥

जैसे बक्रचंद्रमा कों राहु नहीं ग्रास सकता अरु सूध भए कों ग्रसता है तैसेही लछ्यमन पर तुमारा बल नहीं पडता अरु हमारे पर क्रोध करते हो इहां प्रश्नों कें उत्तर क्रम पूरबक नहीं बिवस्था लगाइ लेनी परसुराम ने जो कहा था तेरे भ्राता का मूड न काटे बिना मेरा कोपक्या है अरु निवृत्त कैसे होए तिस का उत्तर ॥ ६ ॥

राम कहेंहि रिस तजहु मुनीसा। कर कुठार आगे यह सीसा ॥ ७ ॥
जेहि रिस जाइ करिए सो स्वामी। मोहि जानि आपन अनुगामी ॥ ८ ॥

हे स्वामी सौमित्र को क्या कहते हो तुमारे हाथ मों कुठार है अरु मै ने आगे अपना सीस धरा है तुम कोप निवारन कर लेवो परंतु मुझ कों दास जानकर मारो तातपरज यह शत्रु भावना ना करो जो

हम शत्रु के आगे सिर नहीं धरते परसुराम ने जो कहा था तूं संग्राम मो मेरा तोषकर अरु लक्ष्मन तेरे संमत बोलता है तिस दोनों का उत्तर कहते हैं ॥ ८ ॥

दोहा—प्रभुहिं सेवकहिं समर कस, तजहु बिप्रबर रोष।
बेष बिलोके कहेसि कछु, बालकहूँ नहि दोष ॥ २८६ ॥

हे महाराज तुम ब्राह्मण स्वामी हम छत्री सेवक हमारा तुमारा संग्राम कैसे बनै ताते रोष त्यागो अरु तुमारा शस्त्र धारी बेष देख कै लक्ष्मन बोल्या है उस को भी दोस न देवो अब उस का तेज अति घटावन हेतु एही वाक्य विस्तार कै कहते हैं ॥ २८६ ॥

देषि कुठारबानधनुधारी। भइ लरिकहिं रिस बीरबिचारी ॥ १ ॥

तुमारे हाथो मैं कुठारादिक शस्त्र देख कै बालक ने जान्या यह कोऊ जोधा हैं ताते इस कों रिस चढी तौ सन्मुख बोला जौं परसुराम कहैं यह मुझ कों न था जानता तिस पर कहते हैं ॥ १ ॥

नाम जान पै तुम्हहिं न चीन्हा। बंससुभाव उतर तेहिं दीन्हा ॥ २ ॥

तुमारा नाम तौ सुना हुआ था परंतु दरसन ना था करा हुआ अरु हमारे बंश का सुभाउ किसू की अवज्ञा सहारन का नहीं तिस पर भी यह कुमार है ताते इस ने उत्तर दीने अरु ॥ २ ॥

जौं तुम अवतेहु मुनि की न्यांई। पदरज सिसु सिर धरत गोसांई ॥ ३ ॥

जौं तुम मुनीश्वरोंवत दंड कमंडलादि धारी आवते तौ अनजान सिसु भी तुमारी चरणरज कों सीस पर धरता पाठांतर होतिहु सुगम ताते ॥ ३ ॥

छमहु चूक अनजानत केरी। चहिय बिप्रउर क्रपा घनेरी ॥ ४ ॥

उस ने जो कहा था मेरा नाम राम है तें अपना नाम रामचंद्र मेरी समता कारन हेतु धरा है तिस का उत्तर कहते हैं ॥ ४ ॥

हमहिं तुम्हहिं सरबर कस नाथा। कहहु न कहाँ चरन कहँ माथा ॥ ५ ॥
राम मात्र लघु नाम हमारा। परसु सहित बड नाम तुम्हारा ॥ ६ ॥

हे नाथ तुम सों हमारी समता कैसे होती है तुम ही कहो सीस अरु पग सम कैसे होहिं सो तुम सीस स्थानी भार्गव परम स्रेष्ट हम छत्री चरण स्थानी तुमरे दाम अरु नाम की बात कहो तौ हमारा नाम राम तिस के दोए अख्यर तुमारा नाम परसुराम तिस के पांच अख्यर इस कर भी तुमारी समता नहीं होती अरु ॥ ६ ॥

देव एकगुन धनुष हमारे। नवगुन परम पुनीत तुम्हारे ॥ ७ ॥

हे देव हमारे बिषे धनुष बिद्यारूपी एकगुन अरु तुमारे बिषे परम पवित्र नवगुन रिजु: तपस्वी संतुष्टी सुचिर्दांतो जितेंद्रिय:। दाताविद्वांश्चसूरश्च ब्राह्मणो नवभिर्गुणै: ॥ सरलता तप संतोष पवित्रता इंद्रेदमन मन को बसकरणा किंवा ज्ञानइंद्रै करमइंद्रै बस करणे उदारता विद्वान कामादिकों के जीतने बिषे सूर यह नवगुण ब्राह्मण के हैं ॥ ७ ॥

सब प्रकार हम तुम सन हारे । छमहु बिप्र अपराध हमारे ॥ ८ ॥

हे बिप्र हम तुमारी बराबरी किसी भांति नहीं कर सकते हमारे विषे जो सन्मुख बोलना अरु धनुष भंग रूपी दोस भी भया है तौ भी तुम छमा करो ॥ ८ ॥

दोहा—बार बार मुनि बिप्रद्विज, कहा राम सन राम ।
बोले भृगुपति सरुष हंसि, तुहूं बंधु सम बाम ॥ २९७ ॥

मुनि बिप्रादिक संबोधन श्रीरामचंद्र ने कहे तिस कर तौ हुआ रोष अरु आप कों अब लजान्या ताते हंसे जो रघुनाथजी भी लछमनवत कुप्त न होहिं अरु मुसकान पूरवक कहत भए तूं भी भ्रात सम है तत्व यह केवल सरल नहीं जाते ॥ २९७ ॥

निपटहिं द्विज करि जानहिं मोही । मैं जस बिप्र सुनावौं तोही ॥ १ ॥

हे रामचंद्र तूं मुझ को केवल ब्राह्मण जजन जाजनादिक क्रया करावनेहारा जानता होवैगा सो मैं ब्राह्मण तो हों परंतु आपना ब्रह्मत्व तुझे सुनावता हों ॥ १ ॥

चाप श्रुवा सर आहुति जानू । कोप मोर अतिघोर क्रसानू ॥ २ ॥
समिध सैन चतुरंग सोहाई । महामहीप भए पसु आई ॥ ३ ॥
मै यह परसु काटि बलि दीन्हा । समरजज्ञ जग कोटिक कीन्हा ॥ ४ ॥

धनुष रूपी श्रुवा है बाणरूपी आहुतियां मार मारादिक शब्दरूपी मंत्रहुं कर पडतियां हैं मेरे कोप रूपी घोर अनलमहुं चतुरंगिनी जो नृपों की चमू है सो इंधन अस्थानी है अरु बडे राजे महापसों स्थानी हैं सो इस परसु सों काटि के बल देकै मैंने संग्राम रूपी अनेक मख किए हैं जद्यपि मुख्य पशु कों मख बिषे शस्त्रकर नहीं मारीता तदपि कई पसु सस्त्रों कर भी काटिते हैं अरु कहूं एकजज्ञों में खंड कर काटना मुख्य पसु का भी बिधान है ताते इहां भी कहा है ॥ ३ ॥४॥

मोर प्रभाव बिदित नहिं तोरे । बोलसि निदरि बिप्र के भोरे ॥ ५ ॥

मेरे ऐसे प्रभाव कों तू नहीं जानता ताते निरादर करताहुआ बिप्रों के भुलावे कहिए सामान द्विजों वत मुझे बुलावता है अरु यह भी जानीता है ॥ ५ ॥

भंज्यो चाप दाप बड बाढा । अहमित मनहुं जीति जगठाढा ॥ ६ ॥

धनुष तोडने कर तुझ कों बडा गरब भया है ताते तूं आप कों सभों से विशेष जानता है तुझ कों अहंता यह है मानो मैं ने सरब बिस्व जीती है एह सुन कै ॥ ६ ॥

राम कहा मुनि कहो बिचारी । रिसि अति बड लघु चूक हमारी ॥ ७ ॥
छुअतहिं टूट पिनाक पुराना । मैं केहि हेतु करौं अभिमाना ॥ ८ ॥

हे मुनिवर हमारे अति अल्प अपराध पर अबिचारतहीं एता कोप करते जातेहो बिचार कर तो

बोलन सीखो तुम जो कहते हो तूझे चाप तोडने का गरब भया है जीरण धनु हाथ छुहावतेही टूट गया मैंने उस पर क्या गरब करना था अरु तुम जो कहते हो तूं हम को निरादरार्थ ब्राह्मण कहता है तो ॥८॥

दोहा—जौं हम निदरहिं विप्र बदि, सत्य सुनहु भृगुनाथ।
तौ अस को जग सुभटजेहि, भयबस नावहिं माथ ॥ २९८ ॥

हे भृगुनाथ सांची बात सुनो जौं हम ब्राह्मण नाम तुम को निरादरार्थ कहते हैं तो नमस्कार किंस कर करते हैं तातपर्ज यह हम कों जोधा का तो भै नहीं संतों का अदब है सोई कहते हैं ॥ २९८ ॥

देव दनुज भूपति भट नाना। समबल अधिक होउ बलवाना ॥ १ ॥
जौं रन हमहिं प्रचारै कोऊ। लरहिं सुखेन काल किन होऊ ॥ २ ॥

देवता दानवादिक एक भट होइ के अनेक होहिं अपने सम बली होहिं के अधिक होहिं हम रवि-बंसियों कों जौं कोऊ संग्राम हेतु प्रचारै तौ हमैं जुद्ध करत्यां संका नहीं आवती जो काल भी सन्मुख आवै जाते नीति सास्त्रों मो कहा है ॥ ३ ॥

छत्रीतन धरि समर सकाना। कुलकलंक तेहि पावर आना ॥ ३ ॥

जो छत्रियों के कुल मैं उपजकर जुद्ध सों भै करता है सो नीच अपनी कुल मो कलंक ल्यावता है प्रमाण श्लोकः सुभम्तिष्टततावदंन्यः परांमुखानां समरेषुपुंसा पत्न्योपितेषांन छ्यामुषानिपुरः सखी नाम पिदर्सयंति संग्राम विषे पिष्ट देनेवाले जो पुरुष हैं तिन के वोर शुभ लोकों की बात क्या कहनी सखियों के सन्मुख लजाकर तिन कियां जुवतियां मुख नहीं देखाए सकतीयां सांडिल स्मृतौ क्षत्रियस्योरिपृष्ठ्य-चंप्रिष्टेब्रह्मव्यवस्थितं। तेनप्रिष्टं न दातव्यं पृष्ट दो ब्रह्महाभवेत्। छत्रो को छातो विषे छत्रधर्म बसता है सूरता निमित्त अरु ब्रह्मतु पृष्ट विषे रहता है सहायता हेतु ताते छत्रो सत्रों आगे पृष्ट न देखावे जाते प्रिष्ट दिए ब्रह्महत्यारा होता है ॥ ३ ॥

कहौं सुभाव न कुलहिं प्रसंसी। कालहुं डरहिं न रन रघुबंसी ॥ ४ ॥

हे ब्राह्मण मैं कुल की प्रसंसा हेतु नहीं कहता सांच कहता हों भानुबंस मो उपजनहारे भूप जम-राज का भी त्रास संग्राम विषे नहीं करते जो परसुधर कहैं काल से भय न हुआ तो हमारे आगे क्यों सीस धरते हौ तिस पर कहते हैं ॥ ४ ॥

विप्रबंस कै अस प्रभुताई। अभै होइ जो तुम्हहिं डेराई ॥ ५ ॥

तुमारे ब्राह्मणो के बंश की यह बडाई है जो तुम संतों से डरैं तिस के सभ भै निवृत्त होते हैं ताते हम तुम कों सिवते हैं ॥ ५ ॥

सुनि मृदु वचन गूढ रघुपति के। उघरे पटल परसुधरमति के ॥ ६ ॥

मृदु कहिये कोमल जो करणों कोंप्रिय वाक। हमहिं तुमहिं सरबरि कस नाथा। इत्यादि। गूढ कहिये जो अपने प्रभाव कों गुप्त कर लखावणेहारे। जो हम निदरहिं बिप्र बदि इत्यादिक। सुनकर परसुराम की

बुद्धि पर जो पड़दा परा था सो निवृत्त भया तातपरज यह जद्यपि यह भी ईश्वर अंस था तद्यपि माया के बलकर श्रीरामचंद्र के स्वरूप मों जो अज्ञात भई थी सो मिट गई तब कहने लागा ॥ ६ ॥

राम रमापति कर धनु लेहू। खैंचहु मिटै मोर संदेहू॥ ७॥

हे रामचंद्र मेरे कर बिषे जो चाप है सो रमापति के हांथ का है सो तुम लेकर खैंचोगे तब मैं तुम कों निरसंदेह ईश्वर जानोंगा इस पर श्रीरामायण बिषे आख्यान है एक समै बिसुकरमा नें द्वै धनुष बनाए एक बिष्णुजी कों दिया एक महादेव कों दिया पुनः किसी काल मों देवसभा एकत्र भई तहां तीनो ईश्वर भी थे तब किसी प्रसंग द्वारा शिवजी अरु बिष्णुजी कुपुतवत भये तब वोही धनुष दोनों के हाथो मों थे जब शिवजी ने धनुष चढाया तब बिष्णुजी ने हुंकार कर वह चाप सिथिल कर दिया पुनः बिष्णुजी ने अपना यह धनुष चढाया तब महादेव सें यह धनुष सिथिल न भया ताते यह धनुष प्रबल है इस को तुम खैंचोगे तो मैं तुम कों निरसंदेह विष्णु रूप जान कर पूजोंगा तब श्रीरामचंद्रजी ने उस के हाथ सों धनुष पकड लिया ॥ ७ ॥

देत चाप आपुहिं चलि गयेऊ। परसुराम मन बिस्मै भयेऊ॥ ८॥

एक वोर से सरासन परसुराम के हाथ मों था दुतो वोर से जब रघुनाथजी ने अपनी ओर खेंचा तब परसुराम साथ हो खैंच्या हुआ चला आया ऐसा पराक्रम देख के अति आश्चर्ज भया जो भली भई जो मैं इन सो जुद्ध न था किया ॥ ८ ॥

दोहा—जाना रामप्रभाउ तब, पुलकप्रफुल्लित गात।
जोरि पानि बोले बचन, हृदय न प्रेम समात॥ २८९॥

श्रीरामचंद्र के प्रभाव कों जान कर हरष सें रोमांच हुये अरु हांथ जोड कर कहत भया दोनो हाथ जोडने का भाव यह मै दोनो भाइवों कों हाथ जोड कर बिनती करता हों किंवा तुमारो आज्ञा कर अबो प्रिथ्वी मंडल में रहना है सो इहां भो मेरी तुमो नें प्रतिष्ठा राखणी अरु अंत कों भी अपने स्वरूप म मुझ कों साजुज्य करणा ॥ २८९ ॥

जै रघुबंसबनजबनभानू। गहनदनुजकुल दहन क्रसानू॥ १॥

तुमारा जै होय जो रघुकुल रूपी कमलों के बनो कों आदित्य हो अरु दानवों का कुल रूपी जो गहन बन है तिस के दाहनहारे अनल हो ॥ १ ॥

जै सुरधेनुबिप्रहितकारी। जै मदमोहकोहभ्रमहारी॥ २॥
बिनयसीलकरुनागुनसागर। जैति बचनरचना अति नागर॥ ३॥

जै होवे तुमारी नम्रता सदव्रत्त अरु क्रपा आदिक गुनो के सिंधु हो अरु बचना की रचना मो अति निपुन हो वाक्य कथन मों अतिनिपुनता यह वाक्य कठोर न होइ मिथ्या न होइ अपने प्रताप कों लखाइ के रिपों कों रिदे भै भीत करे अरु आतम प्रसंसा भी जिस में प्रगट न लखिए अरु अर्थ बहुत होवै अक्ष्यर अल्प होहिं ॥ ३॥

सेवकसुषद सुभग सब अंगा। जै सरीरछबि कोटि अनंगा॥ ४॥

जै होय तुमारा जो भक्तवत्सल हो अरु सरब अंग जाके मनोहर हैं किंवा ईश्वरता जीव भाव भूप रूप इत्यादिक सरब अंगन की नीकी बिधि धारते हो अरु कोटि कामदेवों सम जिन के तन की शोभा है॥ ४॥

करौं काह मुष एक प्रसंसा। जै महेसमनमानसहंसा॥ ५॥

शंकरजी के मन रूपी मानसर मों जो तुम मरालों सम सोभते हो तिन की मैं एक जिह्वा कर क्या उपमा करों॥ ५॥

अनुचित बहुत कह्यो अज्ञाता। छमहु छमामंदिर द्वौ भ्राता॥ ६॥

तुमारे महातम की मुझे अज्ञात रही ताते मैं बहुत कुबचन बोल्या सो मेरो अवज्ञा तुम दोऊ भैया ख्यमो जाते तुम छमा के धाम हो॥ ६॥

कहि जै जै जै रघुकुलकेतू। भृगुपति गएउ बनहिं तप हेतू॥ ७॥

तीन बार जै पद कहने का भाव यह लोक ऐसे न जानहिं इन का अपमान हुआ है भै कर कहते हैं ताते मनबचक्रमकर कहा अथवा तीनो लोको मो तुमारी जै होवै अथवा तीनों कालों मो तुमारी जै होवै सो इस प्रकार जो भूतकाल मों सुबाहु मारीचादिकों कों मार कै जै पाई है बर्तमान मैं धनुषभंग किआ अरु मुझ कों जीता है भविष्य मों रावनादिकों सें जै पावोगे॥ ७॥

अपिभै कुटिल महीप डराने। अति प्रताप देषत सकुचाने॥ ८॥

जो कुटिल नृप थे सो निश्चैकर भै वान भए जो अप पाठ होए तो अप भै कहिये कुतसत त्रासकर अर्थ यह सरबस्व नास होने के भै कर राजा डरे किंवा अपने अपने बोलने के भैकर नृप डरे जाते तिन का अति प्रताप देख्या जो इनों ने परसुराम कों जीता है तो क्या जानिए हमारी क्या दसा करैंगें॥ ८॥

दोहा—देवन दीन्हीदुंदुभी, प्रभु पर बरषहिं फूल।
हरषे पुरनरनारिसब, मिटी मोह भयसूल॥ ३००॥

मोह कहिए मूढता तिस कर जो भै अरु मूल उपजे थे सो मिटे इतर सुगम॥ ३००॥

अति गहगहे बाजने बाजे। सबहिं मनोहर मंगल साजे॥ १॥
जूथजूथ मिलि सुमुषि सुनैनी। करहिं गान कल कोकिलबैनी॥ २॥
सुष बिदेह कर बरनि न जाई। जन्मदरिद्र मनहुं निधि पाई॥ ३॥

जैसे जनम भर जो दरिद्री रहा होए तिस को निध पाइकर प्रसन्नता होती है तैसे सीता के अनरूप नर की जो बहुत काल से जनक को चिंता थी सो सरबगुण संपन्य स्वामी तिसका देखकर अनंत अनंद भया इहां दृष्टांत की तुच्छता वोर वृत्य ना देनी एक अंग लेना अथवा जनम दरिद्र कहिये जहां जनमों का दरिद्र होए अर्थ यह जनमों का अभाव होय ऐसे बिदेह राजा कों रामचंद्र के स्वरूप का साख्यातकार दरसन मानो निध मिली उत्प्रेख्या इस कर कही जो स्वरूप नित्य प्राप्ति है॥ ३॥

बिगत त्रास भै सीय सुखारी। जनु बिधुउदै चकोरकुमारी ॥ ४ ॥

सरब त्रास निवार कै सीता ऐसी प्रसन्न भई जैसे प्राची सो इंदु के उदै भए चकोर की सुता आनंद होती है ॥ ४ ॥

जनक कीन्ह कौसिकहिं प्रनामा। प्रभुप्रसाद धनु भंज्यो रामा ॥ ५ ॥
मोहि कृतकृत्य कीन्हदुहुँ भाई। अब जो उचितसोकरियगोसांई ॥६ ॥

कृत कृत्य कहिए इन के दरसन सें मैं परमानंद कों प्राप्ति हुआ हौं किंवा मेरिआं जो कन्या रामचंद्र अरु लख्यमन के चरनी लागेगिआं तिस कर मैं कृत कृत्य हुआ अब जो व्यवहार की रीति है सो आप पूरन करावो ॥ ६ ॥

कह मुनि सुनु नरनाथ प्रबीना। रहा बिबाह चापआधीना ॥ ७ ॥

राजा कों प्रवीन कथन का भाव यह जिस ने आतमअपरोष किआ तिन के आगे व्यवहार का जानना केती बात है किंवा बुद्धि मताकर भी जानते हो बिवाह का प्रतिबंध तो धनुष टूटन प्रजंत था सो ॥७॥

टूटत हीं धनु भयो बिबाहू। सुर नर नाग बिदित सब काहू ॥ ८ ॥

दोहा—तदपि जाइ तुम करहु अब, जथा वंसब्यवहार।
बूझि बिप्र कुल बृद्ध गुर, बेदबिदित आचार ॥ ३०१ ॥

जद्यपि बिवाह तौ हूँ रहा है तथापि बिप्रों सें कुल बृद्धो सें गुरों सें पूछ कर लौकक बैदिक व्यवहार रुचिर भांति कर करो जाते भगवंत ने कारज निरबिघन किआ है अरु ॥ ३०१ ॥

दूत अवध पुर पठवहु जाई। आनै नृप दसरथहिं बोलाई ॥ १ ॥
मुदितराउ कहिभलेहिंकृपाला। पठए दूत बोलि तेहि काला ॥ २ ॥

राजा ने प्रसन्न हूँ कर कहा हे कृपाल आपने बहुत भला कहा है अरु तिसी समें दूत बोलाइ कै राजा दशरथ को वोर पठाए दीने मुनीश्वर कों कृपाल विशेषण इस हेतु दिआ जैसे कृपा कर रघुनाथजी कों ल्याए अरु मेरे बांछित सिद्ध कराए तैसें धीरज सें बिवाह को आज्ञा देन सों भी सेरा शुभ अरु जस बांछिआ अरु मोद का भाव यह दशरथ के आगमन का लौकिक रीति में तो आनंद है परंतु बसिष्टजी परम बिवेकी आवैंगे तिस कर परम आनंद होएगा किंवा इस के आवने जावने में श्रीरामचंद्र का अरु मुनीश्वर का इहां रहना होवैगा तिस दरसन कर परमानंद होवैगा ॥ २ ॥

बहुरि महाजन सकल बोलाए। आइ सबन्ह सादर सिर नाए ॥ ३ ॥

महाजन कहिए नगर के पंच अपर सुगम ॥ ३ ॥

हाट बाट मंदिर सुरबासा। नगर सवांरहु चारो पासा ॥ ४ ॥

हाट बाट अरु सुरबास कहिये देवाले आदिक भी सुधारो अरु नगरों का भी चारो वोरों से मार्जन

कर सुह करी किंबा हाट बाट मंदिर अरु देवाले यह सभ रचना पुर के चारो ओर करी प्रयोजन यह जहां जनेत के लोग उतरैं तहांही उन कों सब सुख प्राप्त होहिं ॥ ४ ॥

हरषि चले निज निज गृह आए। पुनि परिचारक बोलि पठाए ॥ ५ ॥
रचहु बिचित्र बितान बनाई। सिर धरि बचन चले सचु पाई ॥ ६ ॥

राजा की आज्ञा सुन कर लोक प्रसन्नताजुत अपने गृह मों आए कर जथोचुत कारजों मों ततपर भये ॥५॥

परचारक कहिये फरास जिन कों फरस करन की अरु बितान लगावने की मुखत्यारी है तिन कों बोलाए कर कहा आश्चर्ज बितान बनावो तब वै आज्ञा प्रमान कर सचु कहिये सुख पाइ कर चले प्रसन्यता का आसा यह स्वामी ने सेवा बताई है किंबा रामचंद्र सीता का बिवाह है दशरथ का आगमन है इहां असंख्यात लोक एकत्र होने हैं सो हमारी कारीगरी देख के प्रसन्य होवैंगे ॥ ६ ॥

पठये बोलि गुनी तिन्ह नाना। जो बितानबिधिकुसल सुजाना ॥ ७ ॥

तिन फरासों ने गुनी बोलाय जो बितान के ब्योंत अरु खंभादिक रचना बनाइ कर करनेहारे हैं ॥७॥

बिधिहि बंदि तिन्ह कीन्ह अरंभा। बिरचे कनककेदलि के खंभा ॥ ८ ॥

ब्रह्माजी कों नमस्कार कर अरंभ करने का भाव यह बिरंचजी सरब जगत की मरजादा के उतपादक हैं सो हमारी यह कृत्य भी सफल करैं तब स्वर्ण मै कदली के वृक्ष बनाये मीनाकारी के रंग कर के जाते बेदी मैं केले के तरु लगावणे जोग हैं आगे तिन का स्वरूप कहते हैं ॥ ८ ॥

दोहा—हरितमनिन के पत्रफल, पदुमराग के फूल।
रचना देषि बिचित्र अति, मन बिरंचि कर भूल ॥ ३०२ ॥

केदली के पत्र अरु फल सबुज होते हैं सो हरितमनि जो है पन्ने तिना कों चीरकर पत्रफल बनाए पदुम राग कहिए रक्तमनि उनो कों चीरकर फूल बनाए परंतु ऐसी रचना करी जिस को कोई पछान न सकै जो यह पत्र पुष्प फल कृतम हैं औरों की क्या है जिस कों देखकर बिरंचि कों भी भ्रम होए इहां प्रयोजन कारीगरां की प्रसंसा मा है ॥ ३०२ ॥

बेनु हरितमनिमै सब कीन्हे। सरल सपर्न परहिं नहिं चीन्हे ॥ १ ॥

सबुज मनिअहुं के बांस बनाए हरे सूधे अरु गांठहुं के रूप भी ऐसे बनाए हुये पछाने न जाहिं जो कृतम हैं ॥ १ ॥

कनककलित अहिबेलि बनाई। लषि नहिँ परत सपरन सुहाई ॥ २ ॥
तेहि के रचि पचि बंध बनाए। बिच बिच मुकुतादाम सुहाए ॥ ३ ॥

स्वर्न कों मीनाकारी के रंगकर नागबेला बनायां तिन बेलहुं के बंधन अरु पेंचसांगोपांग बांसहुं साथ करे जहां उमकिआं स्वेत मंजरिआं होतिआं हैं तहां मोतिअहुं किआं लड़िआं बनायां ॥ ३ ॥

मानिकमरकतकुलिस पिरोजा। चीर कोरि पचि रचे सरोजा ॥ ४ ॥

किए भृंग बहुरंग बिहंगा । गुंजहिँ कूजहिँ पवनप्रसंगा ॥ ५ ॥

मानिकां पन्यों हीर्यों पिरोजियों कों चीरकर कारीगरों ने तिन के कोनें निकासकर कीने सरल राख कर कीने एक दूसरे बीच खचित अभेदकर कर अनंत रंगों के पद्म बनाए तिनो के ऊपर रतनोंही के भृंग अरु बिहंग बनाए उनो बिहंगों के बीच इस प्रकार के छिद्र राखे जो पवन के चलने कर भ्रमरों का गुंजार अरु पंखिवों का शब्द अपनी अपनी जात अनुसार पडा प्रतीत होता है ॥ ५ ॥

सुरप्रतिमा षंभन गढि काढी । मंगलद्रव्य लिए सब ठाढी ॥ ६ ॥

जहां कदली आदिकों के खंभ थे तिनों के बीच मोंहीं सुरों कियां प्रतिमा बनायां जिना के हाथों विषे मंगल द्रव्य पुष्पादिक लिए हुये हैं ओ ऐसे उन को ओर देखे तिन को मानों सभ पदारथ देतियां हैं॥६॥

चौकें भाँति अनेक पुराए । सिंधुरमनिमै सहज सुहाए ॥ ७ ॥

जहां बिप्र चौक पूरते हैं गणेशादिकों के पूजन निमित्त तिन के क्रया भद अरु देस भेदकर भिन्न भिन्न प्रकार हैं सो कारीगरों ने जथोचित चौक गजमोतिअरु अरु रत्नो के उस इस्थान बीच प्रथमही बनाए राखे अब बंदनवार का स्वरूप कहते हैं ॥ ७ ॥

दोहा—सौरभ पल्लव सुभग सुठि, किए नीलमनि कोर ।
हेमबौर मरकत घवर, लसत पाटमै डोर ॥ ३०३ ॥

सौरभ पल्लव कहिए आम्र पत्र सो नीलमनों की किए बौर कहिये बूर सो स्वर्ण का किया घवर कहिए गुछे आम फल सो मरकत कहिये सबुजमनो तिन के किए रेसम कियां डोरा साथ बांध के ॥३०३॥

रचे रुचिर बर बंदनवारे । मनहुं मनोभव फंद सँवारे ॥ १ ॥

सो बंदनवारां केसियां बनियां हैं मानो काम के फसांवनेहारियां फांसियां हैं अथवा कामरूपो बधिक ने मानों फांसो लगाया है फांसियां की समता इस कर जो फांसियां भी पंछियों के मारगो में लगतियां हैं यह भी द्वारों में हैं फांसियां भी दाम मैं दृढ होतियां हैं यह भी पाट मैं डोर कर अति दृढ हैं फांसियां मैं कुछ चाग धरी होती है इना में भी आम के गुछे हैं फांसियां बंधन करतियां हैं यह भी मन कों बस करतियां हैं ॥ १ ॥

मंगल कलस अनेक बनाए । ध्वजपताक पट चमर सोहाए ॥ २ ॥

मंगल द्रव्य के कलश अरु लघुदीरघ ध्वजा अरु बस्त्र अरु चामर जथाजोग अस्थानो में धरे ॥ २ ॥

दीप मनोहर मनिमै नाना । जाइ न बरनि बिचित्र बिताना ॥ ३ ॥

बितान की अकथता सों कारण कहते हैं ॥ ३ ॥

जेहि मंडप दुलहिनि बैदेही । तेहि बरनै अस मति कबि केही ॥ ४ ॥

दूलह राम रूपगुनसागर । सो बितान तिंहु लोक उजागर ॥ ५ ॥

जनकभवन की सोभा जैसी। गृह गृह प्रति पुर देषिय तैसी॥ ६॥

जैसी सोभा जनक के मंदिर की कही है तैसी अपने अपने गृहों में सभों ने बनाई इस कथन का भाव यह जनक के राज मों लोग ऐसे प्रसन्न हैं तिस का कारज अपना जानते हैं किंवा सीता श्रीरामचंद्र सभों के आत्मा हैं तिन के उत्सव का सभों कों आनंद भया॥ ६॥

जेहितिरहुतितेहि समय निहारी। तेहि लघुलाग भुवनदसचारी॥ ७॥

तिरहुत कहिये जनक का देश किंवा पुरी तिस कों जिस ने ता समै देखा है तिस कों ब्रह्मांड की संपदा तुछ भासती है जातें॥ ७॥

जो संपदा नीचगृह सोहा। सो बिलोकि सुरनायक मोहा॥ ८॥

इस वाक को अतिस्योक्ति मिटावने निमित्त कहते हैं॥ ८॥

दोहा—बसै नगर जेहि लच्छि करि, कपट नारि बर बेष।
तेहि पुर कै सोभा कहत, सकुचित सारद सेष॥ ३०४॥

अपना आप छिपाइ कै जहां सुन्दर इस्त्री का रूप बनाइ कै लछ्यमी बसती है तिस पुर की सोभा कथन कों सारदा शेष भी सामर्थ नहीं होते अब दूत जो पठाए थे तिन की बात कहते हैं॥ ३०४॥

पहुँचे दूत रामपुर पावन। हरषे नगर बिलोकि सुहावन॥ १॥
भूपद्वार तिन्ह खबर जनाई। दसरथ नृप सुनि लिए बोलाई॥ २॥
करि प्रनाम तिन्ह पाती दीन्ही। मुदित महीप आप उठि लीन्ही॥ ३॥

जब वह पाती देन लगे तब राजा ने जनकजी के सनमान निमित्त उत्थान हूं कर अपनो हीं भुजा आगे कर कर लीनी॥ ३॥

बारि बिलोचन बांचत पाती। पुलक गात आई भरि छाती॥ ४॥

इस मों प्रेमानंद की अधिकता कही॥ ४॥

राम लषन उर कर बर चीठी। रहि गे कहत न षाटी मीठी॥ ५॥

रामचंद्र अरु लछमन के उर को जो पाती है तिस का स्वाद राजा ने खाटा मीठा कछु न कहा तिस का हेतु यह पाती में रघुनाथजी का प्रताप है सो तिन का सुख अनिर्बाच्य है तातें तुस्नी भये वा बडों को रीति है जब अति आनंद प्राप्ति होए तब गंभीरता करनी लखावना नहीं प्रमाण गीता। न प्रहृष्येत्प्रियंप्राप्यनोद्विजेत्प्राप्यचाप्रियं। वांछित कों पाइ कर हर्ष न करणा अप्रियवस्त कों पाइ कर अप्रसन्न न होना। आसंका। रामचंद्र की विजै कों खाटी कहणे का भाव क्या। उत्तर। राजा ने नीतशास्त्र के बिचार सों समुझा हमारे से तौ मुनीश्वर अपणे जज्ञ की पूरणता निमित्त रामचंद्र अरु लछ्यमन कों ले गये थे अरु हमारे पूछे बिनाही धनुष जज्ञ मों चले गए अब तो शुभ भया परंतु उहां राजों का समुदाव

या अरु परसुरामजी भी आए थे कदाचित कोई बिघ्न बालकों को होता तब हम क्या करते इस कर खाटी कहणी थीं परंतु गंभीरता कर ना कही ॥ ५ ॥

पुनि धरि धीर पत्रिका बाँची । हरषी सभा बात सुनि साँची ॥ ६ ॥

साँची बात कथन का आसा यह बुद्धवानों का नेम है मुख के कथन मे लिखोहुई बात कों परपक जानना ॥ ६ ॥

षेलत रहे तहाँ सुधि पाई । आए भरत सहित लघु भाई ॥ ७ ॥

हितवंत भ्राता जो शत्रुघ्न है तिस संयुक्त भरतजी क्रोडाशक्त थे तहाँ किसू नें जाय कहा राजा कों कहूं से पत्रिका आई है तिस कों बडे प्रेमकर पढता है तब अनुमान किआ कदाचित श्रीरामचंद्र के वोर सेही आई होए ताते पूछने हेतु आए सोई कहते हैं ॥ ७ ॥

पूछत अतिसनेह सकुचाई । तात कहाँ ते पाती आई ॥ ८ ॥

पिता के रूबरू बोलने की सकुच है परंतु रघुनाथजी के प्रेम बलकर पूछा है महाराज यह पत्रिका कहाँ से कहिये किस की आई है ॥ ८ ॥

दोहा—कुसल प्रानप्रिय बंधु दो, अहैं कहो केहि देस ।
सुनि सनेहसाने बचन, बाँचो बहुरि नरेस ॥ ३०५ ॥

भूपति ने कहा कुशल कहिये चतुर प्रानप्रिय कहिए परसपर जिन दोनो भायों का प्रानों सम प्यार है किंवा मुझ कों जो प्रानहुं मम प्यारे हैं तिन की ओर से आई है यह सुनकर भरत ने कहा रघुबीरजी तो मुनीश्वर के संग गए थे अब किस देस मो हैं राजा कों जो पत्रिका के अक्षरो की रचना अतिप्यारी लगी है अरु उन का अतिप्रीति देखा ताते बात न सुनाई पुनः पत्रिकाही पढकर सुनाई ॥ ३०५ ॥

सुनि पाती पुलके दो भ्राता । अधिक सनेह समात न गाता ॥ १ ॥
प्रीति पुनीत भरत कै देषो । सकल सभा सुष लह्यो बिसेषी ॥ २ ॥

पुनीत प्रीति कहिए जो मृत्सर ईर्षा से भी रहित होए तत्व यह रामचंद्र का प्रताप सुनकर इस के रिदे कों ऐसा आनंद हुआ जैसे अपने प्रताप का होए ताते सभासदों कों हरष भया जो जिस गृह मो भ्रात अमत्सर होवैं तिन का व्यवहार परमारथ भली रीति सों बनता है ॥ २ ॥

तब नृप दूत निकट बैठारे । मधुर मनोहर बचन उचारे ॥ ३ ॥
भैया कहहु कुसल दो बारे । तुम्ह नोके निज नैन निहारे ॥ ४ ॥

ता समे भूपति ने दूत कों सिंघाशन के निकट बैठाया अरु मधुर कहिए मिष्ट बचन जो दूतों को भैया कहना अरु बहुबचन देना मनोहर कहिये सुंदर जिन मों अपनी नम्रता होए जाते अपने महाबीरों पुत्रो कों दो बारे कर पूछा जो मेरे दोनो कुमार भली भांति तुम ने अपने नेत्रों देखे थे जो दूत कहैं उहाँ अनंत राजकुमार थे तुम अपने सुतों का लक्षन कहो ताते नम्रता पूरबक प्रथमही कहता है ॥ ४ ॥

स्यामल गौर धरे धनु भाथा। बै किसोर कौसिक मुनि साथा॥ ५॥
पहिचानहु तुम्ह कहहु सुभाऊ। प्रेमबिबस पुनि पुनि कह राऊ॥ ६॥

हे भाई बडे का स्याम सुन्दर अरु लघु का गोर बरन है अरु परम प्रसिद्ध जो बिश्वामित्रजी हैं तिन के संग हैं अरु धनुषबान धारो हैं यह वाक्य उनों ने सुने परंतु नृप के बोलत्या तौ बीच न था बोलना सो तिन को तुष्नी भए देख कर प्रेम बिबस नृप बारंबार पूछता है तुम ने सुभाउ कहिये सांच कहना मेरे पुत्रों कों पछानते हो देखे थे प्रसंन थे जो दूत कहैं तुम ऐसे बिह्वल क्यों हो तिस हेतु प्रथम हीं कहता है॥ ६॥

जा दिन तें मुनि गएउ लवाई। तब ते आजु साँच सुधि पाई॥ ७॥

जिस दिन के तिन को कौशिक मुनि ले गए हैं तिस दिन की सांची सुधि कहिए पत्रिका आजहीं आई है मुनि गए लवाई कहणे का भाव यह मैं रामचंद्र कों कब बिछोडता था परंतु मुनीश्वर की आज्ञा दुःनिवार्य थी वह लेगए॥ ७॥

कहो बिदेह कवन बिधि जानें। सुनि प्रियबचन दूत मुसुकानें॥ ८॥

भो भैया एह बात सुनावो बिदेह नृप ने तिन कों आप सिहीं जान्या कै गाधसुत के संग कर पछान्या कै काहू से पूछे यह किस के पुत्र हैं ऐसे प्रेमातुर बैन सुन कर दूत मुसुकाय मुसुकान का हेतु यह आनंद में पूरण दूत आए हैं अरु भूपति आप बात पूछने लागा है अथवा राजा ने जो बिदेह पद दिआ है अर्थ यह जिस कों अपनी देह की सुधि नहीं तिस ने रामचंद्र कों किस प्रकार जान्या इस प्रेम सहित कटाख्य अपने स्वामी के जस का सुन कर दूत हंसे जाते नाते का संबंध है वा राजा ने जो बारंबार रामचंद्र की बात पूछी है तिस का बडा प्रेम देख कर प्रसन्न भए किंवा राजा श्रीरामचंद्र कों इत्यादिकों जुगतों कर पूछता है बिश्वामित्र के साथ हैं स्याम गौर सरूप हैं सो श्रीरामचंद्र का प्रभाव तो त्रिलोकी सें नहीं छिपा रहनेवाला परंतु जैसे निकटवासियों को तीरथ का प्रभाव अलप प्रतीत होता है तैसे नृप कों भी प्रभो सें पुत्र भावही है ताते मुसकाने अरु कहत भए॥ ८॥

दोहा—सुनहु महीपतिमुकुटमनि, तुम्ह सम धन्य न कोउ।
राम लषन जाके तनै, बिस्वबिभूषन दोउ॥ ३०६॥

हमारी बिनै सुनो हे महाराज्यों के शिरोमनि जौन से श्रीरामचंद्र अरु लछमन सरव बिश्व कों भूषित करणहारे हैं सो जिस के पुत्र हैं ताते तुम सारखा पुन्य पुंज और कोऊ नहीं पीछे जो राजा ने कौशिक के संगादिक लख्यणो कर प्रभों का कुशल पूछा था तिस का उत्तर दूत कहते हैं॥ ३०६॥

पूछन जोग न तनै तुम्हारे। पुरुषसिंह तिहुँ पुर उजिआरे॥ १॥

हे स्वामी तुमारे पुत्र किसी सें बूझ कर जानने जोग्य नहीं वह पुरुषों सें के हरी सम हैं तिन का प्रभाव त्रिलोकी सें बिदित है तत्व यह जिस समाज में केहर जावै तहां पूछने नहीं पडते॥ १॥

जिन के जस प्रताप के आगे। ससि मलीन रबि सीतल लागे ॥ २ ॥

हे प्रभो जिन की जश की उज्जलता आगे ससि मलीन प्रताप के तेज आगे रबि सीतल ॥ २ ॥

तिन कहँकहियनाथकिमि चीन्हे। देषिय रबि कि दीप कर लीन्हे ॥ ३ ॥

हे नाथ आप जो कहते हो राजा जनक ने तिन कों कैसे पछान्या तत्व यह बिश्वामित्रजी के संग कर पछाने होहिंगे जो जद्यपि मुनीश्वर तेजस्वी हैं तद्यपि तुमारे पुत्रों आगे तो तिन का तेज ऐसा भासता है जैसे भानु आगे दीपक अब सरब बृतांत सुनो ॥ ३ ॥

सीयस्वयंबर भूप अनेका। सिमिटे सुभट एक ते एका ॥ ४ ॥

अनेक नृप तिन मों एक से एक बिशेषबली सिमटे कहिए एकठे भए तत्व यह बलिवों कों देख के बली अतिबल लगावते हैं तिस पर हूं जानकी का स्वयंबर जान के बल लगावते परंतु ॥ ४ ॥

संभुसरासन काहु न टारा। हारे सकल बीर बरिआरा ॥ ५ ॥

धनुष महादेव का था ताते किसू मों उठाया ना गया सकल सुभट बरवस हारे तिस पर हूं ॥ ५ ॥

तीनि लोक महं जे भट मानो। सभ कै सक्ति संभुधनु भाँनो ॥ ६ ॥

जौन से सुबाहुं अरु बीर मणी आदिक जोधा त्रिलोको मों अपने सहश किसू कों न थे गिनते जाते रावन वध अनंतर असुमेध मों रघुनाथजी की चमूसाथ लड़ेंगे इहां तिन को शक्ति भी टूटगई जाते शिवजी का धनुष था ॥ ६ ॥ टिप्पणी—असुमेध = अश्वमेध।

सकै उठाइ सुरासुर मेरू। सो हिय हारि गयं करि फेरू ॥ ७ ॥

सुरहुं असुरहुं संजुत सुमेर को जो उठाइ सकते थे किंवा जो अमर वा दैत बली कंचन गिर के उठावने मों सामर्थ थे इस में बानासुर की बात लखाई जाते बानासुर असुर तो है परंतु सुरों सम भी हैं जाते प्रहलाद का प्रपौत्र है सो बानासुर कईबेर सेसजी के पास जाय कर आपनिआं भुजा पर ब्रह्मांड को उठाइ लेता था सो भी रिदे मो हारमान कर फेर कहिए मिस कर गया जो हमारी कुल भगतों की है अरु सीता को रामचंद्र बरना है ताते भगवंत को वस्तु हम कैसे गहैं। ननु। वह बात तो उस ने त्रिकालग्यता के बल कर जथार्थ कही इस में मिस क्या हुआ। उत्तर। जथार्थ कहता तो स्वयंबर बीच क्यों आवता ताते जानिता है धनुष कों गरुआ देख कर सुन्दर रीति से मिस कर चला गया ॥ ७ ॥

जेहि कौतुक सिव सैल उठावा। तिह तेहि सभा पराभव पावा ॥ ८ ॥

इस में रावन को बात लखाई जो पूरब स्वयंबर में दशकंठ भी आया था तब बानासुर कों देख कर लंकेश ने भी मिस किआ मेरे गुरों का धनुष है तब लोगहुं ने उस कों कहा गुरों समेत कैलाश कों उठाया था तब अवज्ञा ना भई अरु धनुष कों उठावते अवज्ञा होती है इत्यादिक बचनो का तिरस्कार पाय कर वह भी चला गया ॥ ८ ॥

दोहा—तहाँ राम रघुबंसमनि, सुनिय महा महिपाल।
भंज्यो चाप प्रयास बिनु, जिमि गज पंकजनाल ॥ २०७ ॥

हे महाराजा हे रघुबंसियों के शिरोमन तिस अस्थान में अरु तिस जनक के समाज में तिस कोदंड को श्रीरामचंद्रजी ने ऐसे तुछ जान के टूटूक किया जैसे उनमत्त गज कमल की कोमल नाडी कों तोडै ॥ ३०७॥

सुनि सरोष भृगुनायक आए। बहुत भाँति तिन आँषि देषाए ॥ १ ॥

कबी ने शिव धनुष तोडा यह सुन कर परसुरामजी बडे कोप सों आए अरु रक्त नैन दिखाइ कर बहुत भांति सों भय देने निमित्त बचन कहे परंतु ॥ १ ॥

देषि रामबल निज धनु दीन्हा। करि बहु बिनै गवन बन कीन्हा ॥ २ ॥

जब रघुबीरजी कों अतिरणधीर जान्या तब अपना चाप भी तिन कों दिया अरु हाथ जोड के बोलन की अवज्ञा क्ष्यमाइ कै बन कों गए ॥ २ ॥

राजन राम अतुलबल जैसे। तेजनिधान लषन पुनि तैसे ॥ ३ ॥

कंपहि भूप बिलोकत जाके। जिमि करि हरिकिसोर के ताके ॥ ४ ॥

हे भूपति कोदंडखंडन अरु परशुधर के दंडन कर रघुनाथजी का बल तो प्रगट भया परंतु लछ्यमनजी भी तिन के सदृशही हैं तिन कों देख के तहां राजे ऐसे कांपते थे जैसे हरिकिसोर कहिये जुवा केहरि तिस कों देख के करी कांपै ॥ ४ ॥

देव देषि तव बालक दोऊ। अवर आँषि तर आवत कोऊ ॥ ५ ॥

हे देव तुम कहते हो तुम कों मेरे पुत्रहुं की पछान है कै नहीं अरु हम बिनै करते हैं जब के तुमारे पुत्र हम ने देखे हैं तब का और कोऊ हमारी दृष्ट तरे आवता है अर्थ नहीं आवता ॥ ५ ॥

दूतबचनरचना प्रिय लागी। प्रेमप्रताप बीररसपागी ॥ ६ ॥

दूतों के बचनों की रचना जो प्रेम में प्रताप में बीररस में मिली हुई है सो नृप कों प्यारी लागी तिस का क्रम कहते हैं। सुनहु महीपति मुकुट मनि। यह दोहा प्रेम मै इस में आगे। पूछन जोग न तनय तुमारे। इत्यादि सगरी चौपाई दोहा अयम के चौपाई के चार चरण। करि बहु बिनै गवन बन कीना। इहां प्रजंत बाईस तुकहुं मै प्रताप मै वाक इस मे आगे। राजन आदि। अवर आंख तर आवत कोऊ। पराजंत षटचरनहुं मों बीररस मे वाक ॥ ६ ॥

सभा समेत राउ अनुरागे। दूतन्ह देन निछावरि लागे ॥ ७ ॥

कहि अनीति ते मूदहिँ काना। धरम बिचारि सबन सुष माना ॥ ८ ॥

कान मूंदने अरु अनीति कथनकर अति त्याग लखाया जो हमारे नृप की बेटी का संबंध तुमारे गृह भया हम तुमारा द्रव्य कैसे लेवैं तब उन कों धरमात्मा जान कै सभ प्रसन्न भए ॥ ८ ॥

दोहा—तब उठिभूप बसिष्ट कह, दीन पत्रिका जाइ।
कथा सुनाई गुरुहिँ सब, सादर दूत बोलाइ ॥ ३०८ ॥

तदनंतर अपनो नम्रता अरु गुरों के सनमान निमित्त राजा नें बशिष्टजी के गृह मों जाइकर पत्रिका आप दीनी अरु दूत बोलाइकर वृत्तांत सभ तिन के मुखों स्रवन कराया जो गुरों के सन्मुख अपने मुखों कहत्यां कोऊ हंकार का वाक्य न निकस जाय ॥ ३०८ ॥

सुनि बोले गुरु अति सुष पाई । पुन्यपुरुष कहु महि सुष छाई ॥ १ ॥

राजा को नम्रता देख कै अरु दूतों से वृत्तांत सुन कै गुर अधिकप्रसन्न होएकर कहन लगे धरमात्मा पुरुषों पर संपूरण मही के सुख छाइ रहते हैं जो नृप कहता होए हे प्रभो परसराम के जितनादिक संकल्प तौ मेरे मन मों न थे तिस निमित्त गुर प्रथमही कहते हैं ॥ १ ॥

जिमि सरिता सागर महुँ जाहीं । जद्यपि ताहि कामना नाहीं ॥ २ ॥
तिमि सुष संपति बिनहिं बोलाए । धरमसील पहिँ आवहिँ धाए ॥ ३ ॥

हे नृप तुम ने रघुबीरजी को बिश्वामित्र के जज्ञ को पूरणता निमित्त पठाया था कोदंडखंडनादिकों हेतु न थे पठाये परंतु तुमारे धरम के बलकर सरब सृष्टि को बीजे आदिक लाभ सुभावकहीं आन प्रापति भए कदाचित नृप नम्रता कर कहै मै ने ऐसा कौनधरम किआ है तिस निमित्त आगेही गुर कहते हैं ॥ ४ ॥

तुम्ह गुरबिप्रधेनुसुरसेवी । तस पुनीत कौसल्या देवी ॥ ४ ॥
सुकृती तुम्ह समान जग माहीं । भयउ न है कोउ होनेउ नाहीं ॥ ५ ॥

जो नृप कहै हे प्रभो आगे मरुतादिक ऐसे धरमातमा भए हैं तिन के अंसु मो नहीं तिस निमित्त गुर कहते हैं ॥ ५ ॥

तुम्ह ते अधिक पुन्य बड काके । राजन राम सरिस सुत जाके ॥ ६ ॥

हे भूपति मरुतादिकों के पुन्य बडे थे परंतु तुमारे सम भी नहीं हो सकते जाते तुमारे गृह मों पारब्रह्म साख्यात रामचंद्रादिक चार पुत्र रूप ह्वै कर उपज्या है सो कैसे हैं ॥ ६ ॥

बीर बिनीत धरम ब्रतधारी । गुनसागर बर बालक चारी ॥ ७ ॥

किसी के पुत्र मों एक गुन पूरण होता है वहु आपने धन्य भाग मानता है अरु जिस के सुत बहुत होते हैं तिन मों कोऊ भला कोऊ दोसवंत होता है अरु तेरे ऐसे भाग हैं प्रथम तेरे पुत्र महाबीर पुनः गुणो के मान से रहित बहुडो आपस मों अति प्रेम पुनः ब्रतों नेमो के धारणहारे हैं ऐसे सरब गुनो के निध चारोही पुत्र एक सारखे यह सुन कर कदाचित नृप के मन मो आवै ऐसे हरख पर कोऊ बिघ्न ना पड जाए ताते तिस के तोष हेतु गुर कहते हैं ॥ ७ ॥

तुम्ह कहुँ सर्ब काल कल्याना । सजहु बरात बजाइ निसाना ॥ ८ ॥

दोहा—चलहु बेगि सुनि गुरबचन, भलेहिँ नाथ सिरु नाइ ।
भूपति गवने भवन तब, दूतन्ह बास दिवाइ ॥ ३०९ ॥

जब गुरों ने कहा समाज साज कै शीघ्र चलने की तयारी करो तब सुन के नृप ने कहा हे नाथ

भली बात अरु प्रनाम किया उठ कै दूतों का डेरा करवाया अरु आपु अंत:पुर मो आया तब मंदिर मों बैठ कै ॥ ३०९ ॥

राजा सब रनिवास बोलाई । जनकपत्रिका बाँचि सुनाई ॥ १ ॥
सुनि संदेस सकल हरषानी । अपर कथा सब भूप बखानी ॥ २ ॥

अपर कथा कहिए पत्रिका से इतर परसुराम सों प्रश्नोत्तरादिक प्रसंग जो दूतों ने मुखाग्र कहे थे सो राजा ने आप कहे जाते अंतसपुर मों पर पुरषों का आवना उचित न था ॥ २ ॥

प्रेमप्रफुल्लित राजहिं रानी । मनहुं सिखिनि सुनि बारिदबानी ॥ ३ ॥

सब वृतांत सुन कर आनन्द से रोमांचित हुइयां रानियां ऐसे सोभतियां हैं जैसे मेघ की गंभीर धुनि सुनि कै मोरनियां प्रसन्य होतियां हैं ॥ ३ ॥

मुदित असीस देहिं गुर नारी । अतिआनंदमगन महतारी ॥ ४ ॥

वसिष्टों इस्त्रियों से वांछित असीसें अरु रामचंद्र का परम प्रताप सुन कर माता कों अतिआनंद भया ॥४॥

लेहि परसपर अतिप्रिय पाती । हृदै लगाइ जुरावहिं छाती ॥ ५ ॥
राम लषन की कीरति करनी । बारहिं बार भूपबर बरनी ॥ ६ ॥

श्रीरामचंद्र अरु लछमनजी की अहिल्या तारणादिक कीरति अरु कोदंड खंडनादिक करनी नृप ने प्रसन्यता मों बारंबार कही ॥६॥

मुनिप्रसाद कहि द्वार सिधाए । रानिन्ह तब महिदेव बोलाए ॥ ७ ॥

मुनिप्रसाद कथन का आसा यह मन मों हंकार न होवै ॥ ७ ॥

दिए दान आनंद समेता । चले बिप्रबर आसिष देता ॥ ८ ॥

सोरठा—जाचक लिए हँकारि, दीन्हि निछावरि कोटि बिधि ।
चिरजीवहु सुत चारि, चक्रबर्ति दसरथ के ॥ ३१० ॥

कहत चले पहिरे पटनाना । हरषि हने गहगहे निसाना ॥ १ ॥

चक्रवरती जो दशरथ हैं किंवा दशरथ के पुत्र जो चक्रवर्ती हैं सो चिरजीवैं ऐसे कहते अरु भूषन बस्त्र पहिरे जाचक गृहों कों गए तब दुंदुभियां बाजियां ॥ १ ॥

समाचार सब लोगन्ह पाए । लागे घर घर होन बधाए ॥ २ ॥
भुवन चारिदस भरा उछाहू । जनकसुतारघुबीरबिबाहू ॥ ३ ॥

ननु । जानकी अरु रामचंद्र के विवाह से तिरहुत अरु कोशल देश मैं आनंद होए चतुर्दशभुवन मैं कैसे बने । उत्तर । जानकी माया है रामचंद्र सच्चिदानंद हैं जिन से भिन्न प्रमाणू को सत्ता भी नहीं ताते तिन के आनंद से सभों कों आनंद हुआ चाहिए ॥ ३ ॥

सुनि सुभकथा लोग अनुरागे। मग गृह गली सँवारन लागे॥ ४॥

चाप कों तोड कै परसुराम का मुख मोड कै रघुनाथजी का जनकसुता सों बिवाह होता है एह स्रेष्ट कथा सुन कै लोगों कों जो बडा हरष भया है सो जनेत की सोभा हेतु मग मंदिरादिकों को लेपनादिक करने लागे जो किसू के मन मों आवै आगे नगर के बाजारादिक मल आवृत रहते थे तिस निमित्त कहते हैं॥ ४॥

जद्यपि अवध सदैव सुहावन। रामपुरी मंगलमै पावन॥ ५॥
तदपि प्रीति कै रीति सुहाई। मंगल रचना रची बनाई॥ ६॥

जदपि अजोध्या सदा सुंदर अरु पवित्र है जातें इख्वाकबंसियों की राजधानी है तिस पर श्रीरामचंद्र को जनमपुरी मांगल्यदाती तथापि अपने चित के सनेहकर लोगों नें मंगल किर्या विशेष रचना करियां तिन का स्वरूप देखावते हैं॥ ६॥

ध्वज पताक पट चामर चारू। छावा परम बिचित्र बजारू॥ ७॥
कनककलस तोरन मनिजाला। हरदि दूब दधि अछत माला॥ ८॥

स्वर्ण के कलश अरु मणियों के लाट बनाए हैं कलसों पर हलदी खबल घास दधि अख्यत अरु पुष्पमाला धरकर तुर्क सोलां॥ ८॥

दोहा—मंगलमै निज निज भवन, लोगन्ह रचे बनाइ।
बीथी सोच सुगंध सब, चौकै चारु पुराइ॥ ३११॥

पूर्वोक्त प्रकार कर अपने अपने गृह लोगों ने मंगल मै बनाये हैं अरु रथ्या सुगंधित जलों सों छिनकियां हैं अरु गृहों मों गणपतादिकों की पूजा हेतु चौक पूरे हैं सो रघुबीरजी के बिवाह को निरबिघनता निमित्त॥ ३११॥

जहँ तहँ जूथ जूथ मिलि भामिनि। सजि नव सात सकल दुतिदामिनि॥१॥

नव सात कहिये षोडस सिंगार॥ १॥

बिधुबदनी मृगसावकलोचनि। निज स्वरूप रतिमानबिमोचनि॥ २॥

चंदमा जैसे मुख अरु मृग पुत्रों जैसे चपल अरु स्याम अरु कोमल जिन के द्रिग अरु अपनी सुन्दरता कर रति का मद हरतियां जो जुबतियां हैं सो॥ २॥

गावहिं मंगल मंजुल बानी। सुनि कलरव कलकंठि लजानी॥ ३॥

मनोहर गिरा कर गीत गावतियां हैं जिन के कलरव कहिये सुन्दर शब्द सुन के कलकंठ कहिये कोकिला सो भी लज्जित होतियां हैं॥ ३॥

भूप भवन किमि जाइ बषाना। बिश्व बिमोहन रच्यो बिताना॥ ४॥

मंगल द्रव्य मनोहर नाना। राजत बाजत बिपुल निसाना॥ ५॥

मंगलाचारों के अनेक द्रव्य तहां बिराजते हैं अरु अनंत नगारे बाजते हैं अपर सुगम॥ ५॥

कतहुँ बिरद बंदी उच्चरहीं। कतहुं बेदधुनि भूसुर करहीं॥ ६॥
गावहिं सुंदर मंगल गीता। लै लै नाम राम अरु सीता॥ ७॥
बहुत उछाह भवन अति थोरा। मानहुं उमग चला चहुओरा॥ ८॥

सर्वात्मा सच्चिदानंद रूप जो श्रीरामचंद्र हैं तिन संबंधी उत्साह जो कोटि ब्रह्मांडो मों न समावे तो इस गृह मों कैसे समावै ताते मानो शब्दरूप ह्वै कर बाहर निकसा है॥ ८॥

दोहा—सोभा दसरथ भवन की, को कबि बरनै पार।
जहाँ सकलसुरसीसमनि, राम लीन्ह अवतार॥ ३१२॥

भूप भरत पुनि लिए बोलाई। है गज स्यंदन साजहु जाई॥ १॥
चलहु बेगि रघुबीरबराता। सुनत पुलकपूरे दौ भ्राता॥ २॥
भरत सकल साहनी बोलाए। आएसु दीन्ह मुदित उठि धाए॥ ३॥

साहनी कहिए तुरंगों के दरोगे ते भरत ने बोलाए अरु अस्वों के सिंगारन की आज्ञा तिन को दई तब वह बिवाह का मंगल जान के शीघ्र गए अरु॥ ३॥

रचि रचि जीन तुरंग तिन साजे। बरन बरन बर बाजि बिराजे॥ ४॥

जैसे रंगहुं के बाजी तैसे तैसे बरनहुं की तिन के ऊपर जीनै साजी तिन कर तिनों को सोभा अति भाजी॥ ४॥

सुभग सकल सुठि चंचलकरनी। अंग इव जरत धरत पग धरनी॥ ५॥

सो तुरंग रंगों कर सुभग अरु अंगों कर भी सुठ अरु गति आदिक करनिआं भी तिनकिआं अति चपल जैसे अगिन कर जली हुई प्रिथवी पर कोऊ पैर नहीं लगाइ सकता तैसे उन का सुंब धरती सों छूहता नहीं पाठांतर अयदिव जरत तिस का अर्थ जैसे जलते लोहे पर कोई पांव धरै तैसे प्रिथवी पर पांउ धरते हैं॥ ५॥

नाना जाति न जाहिं बखानें। निदरि पवन जनु चहत उडानें॥ ६॥

केते सिंधु के कछी के अरबादिक देशों के अनुसार तुरकी ताजी तिनकिआं अनंत जातां अरु बेग सो पवन कों पीछे छोड कर मानों उडते हैं॥ ६॥

तिन पर छैल भए असवारा। भरत सरिस बै राजकुमारा॥ ७॥

तिनो तुरगों पर बांके सूर चढे जिनो की अवस्था भरत को तुल्य है अवस्था को समता कथन का आसा यह बडे चपलों अस्वों पर नवीन अवस्थावान पुरुष ही रुचिर चढते हैं किंबा अपनी अपनी

आरजा को समतावालों सोही सभों का सनेह होता है ताते भरत ने भी अपने समो कोही श्रेष्ठ अश्वों पर आरूढ किआ. तिन के स्वरूप का बरनन करते हैं ॥ ७ ॥

सुंदर सब भूषन बर धारी। कर सर चाप तून कटि भारी ॥ ८ ॥

शरीरों कर सुंदर अरु भूषनों कर सजे हुए जो तुरंगो पर सोभें पुनः शस्त्रधारी भी हैं केवल सोभा देनहारे ही नहीं ॥ ८ ॥

दोहा—करे छबीले छैल सब, सूर सुजान नवीन।
जुग पदचर असवारप्रति, जे असिकलाप्रवीन ॥ ३१३ ॥

पहिरनवारे जो सस्त्र अरु वस्त्र हैं तिन बिना और वस्तु जिनो ने कोऊ न उठावनी सो करे तुरंगों के बरणहुं अरु जीनहुं अनुसार भूषन वस्त्रादिक जिन कीते छबीले जसेत जानकरही भूषनहुं वस्त्रहुं कर भूसित नहीं भए सदाही सृंगारों जुक्त रहैं सो छैल जो सृंगारों निमित्तही शस्त्र न बांधे चित के अतिदृढो होवें सो सूर जो सूरता के तमोगुण करही सदा आवृत न रहै जैसा देश काल देखना तैसी बात करणी सो सुजान किंबा शस्त्रविद्या मों सुजान अरु किनू को दाडो नहीं आई अरु किनों को अगाज हुआ है सो नवीन तिन के सुख अरु सोभा निमित्त दो दो सेवक पादगामो एक एक असवार के साथ परंतु जौ-न से घोडिअहुं को सेवा आदिकों के जानन मों अति प्रबोन हैं प्रयोजन यह जो अश्वों को अरोग राखें किंबा तिन का पाएक होना इस हेतु जब असवार शोघ्रता मों उतर्या चाहै तब उनदासों को अपने घोडे से उतरत्यां देर न होइ अब तिन के कुल को सूरता कहते हैं ॥ ३१३ ॥

बाँधे बिरद बीर रनगाढे। निकसि भए पुर बाहिर ठाढे ॥ १ ॥

बंदिवों ने जिन के बंसो की उस्तुत की समुदाय बनाए हुए हैं ऐसे भट पुर के बाहर घोडों पर चढ कर खडे हुए ॥ १ ॥

फेरहिँ चतुर तुरग गति नाना। हरषहिँ सुनि सुनि पनव निसाना ॥ २ ॥

ढोलों नगारों को सुनकर सवारों के मन मों चाउ चढता है तब नाना गतोंकर अश्वों को फेरते हैं नानागतों कहिये कुदावना दाहनावर्त बामावर्तादिक बहुरों सभ सस्त्रों को कंवाइदों करनिओं आगे रथों की कहते हैं ॥ २ ॥

रथ सारथिन्ह बिचित्र बनाए। ध्वज पताक मनि भूषन लाए ॥ ३ ॥
चमर चारु किंकिनि धुनि करहीं। भानुजानसोभा अपहरहीं ॥ ४ ॥

चामरादिक समग्रीवों सहित स्यंदन अरु किंकनिओं तुरंगहुं किआ पुनः रथों कीआंभी शब्द हैं अरु रथों का प्रकास भानु के रथ से भो सोभावान ॥ ४ ॥

सावकरन अगनित हय होते। ते तिन्ह रथन्ह सारथिन जोते ॥ ५ ॥

स्याम हैं जिन के करण अरु श्वेत हैं जिन के बरण ऐसे अश्व जो यज्ञों के तुरंगों सम थे सो तिन रथों मों जोते ॥ ५ ॥

सुंदर सकल अलंकृत सोहैं। जिन्हहिँ बिलोकत मुनिमन मोहैं॥ ६॥
जे जल चलहिं थलहिं की न्यांई। टाप न बूड बेग अधिकाई॥ ७॥

जे कि कान जलों मों प्रिथवीवत चलते हैं अरु जद्यपि वह घोडे नदी सें उपजे हुए नहीं तद्यपि बेग की अधिकता सो टाप कहिये पांव उन का जल मों बूडता नहीं॥ ७॥

अस्त्र सस्त्र सब साज बनाए। रथी सारथिन्ह लिए बोलाए॥ ८॥

अस्त्र शस्त्रादिक समग्रियां रथो मों राखकै सारथिवों ने रथियों आगे बिनैकर कै रथों पर चढाए॥८॥

दोहा—चढि चढि रथ बाहर नगर, लागी जुरन बरात।
होत सगुन सुंदर सकल, जो जेहि कारजजात। ३१४॥

आगे गजों का कहते हैं॥ ३१४॥

कलित करिबरन्हि परी अँवारी। कहि न जाइ जेहि भाँति सँवारी॥ १॥

कलित कहिए सुंदर गजहुं पर अनुपम अंवारियां पडियां हैं॥ २॥

चले मत्त गज घंट बिराजो। मनहुं सुभग सांवनघनगाजो॥ २॥

बादरों की घटावत स्याम बारन चलते हैं अरु बरषाकाल के मेघो सम गरजते हैं पदातीं का बरनन गुसांईजी ने इस निमित्त नहीं किआ रामचंद्र के बिवाह के उत्साहकर भूपति नें पदातिं कों भी बाहन दीने अरु कुछक आगे कहैंगे भी॥ २॥

बाहन अपर अनेकबिधाना। सिबिका सुभग सुषासन जाना॥ ३॥

ए दोनों पालकी के भेद हैं जिन पर छत्रीयां अरु पडदे होवें सो सिबिका अरु जिन का बक्र बांस होवै अरु प्रगट होवें सो सुखासन॥ ३

तिन्ह चढि चले बिप्रबरबृंदा। जनु तनु धरे सकल श्रुति छंदा॥ ४॥

मानों बेदों की रिचा ने बिप्रहुं क तन धारे हैं इतर सपष्ट॥ ४॥

मागध सूत बंदि गुनगायक। चले जान चढि जो जेहि लायक॥ ५॥

मागध कहिये जो बंसहुं का बरनन करै सूत कहिये जो पोराण उस्तत करैं बंदी कहिए जो नृप का संमत लख का सपद कवित्त श्लोक बनाइ कर कहै ते भी अपने अपने अधिकार जोग बाहनों पर चढ चले गुनगाथक संज्ञा इन सभों की है अरु केवल गायकों कों भी है॥ ५॥

बेसर ऊंट बृषभ बहु जाती। चले बस्तु भरि अग्नित भांती॥ ६॥

बेसर नाम खच्चरों का इतर प्रसिद्ध॥ ६॥

कोटिन्ह कांवर चले कहारा। बिबिध बस्तु को बरनै पारा॥ ७॥

कोटिन पद एकत्र करना कांवर नाम बहंगियों का किंबा कहूं निकावर भी बहंगी को कहते हैं तिन मों उपहारादिक अनंत बस्तों धर कर अनेक कहार चले॥ ७॥

चले सकल सेवकसमुदाई। निज निज साज समाज बनाई॥ ८॥

जो बस्तां पीछे कहिआए हैं तिन के राखने खरचनें आदिक साज समाज बनाइकर सेवक उन के साथ चले॥ ८॥

दोहा—सब के उर निरभर हरष, पूरित पुलक सरीर।
कबहिँ देषिबे नैन भर, राम लषन दो बीर॥ ३१५॥

श्रीरामचंद्रजी अरु लछमन जू को कब दृष्ट भर के देखेंगे इस बात का सभों को निरभर कहिए पूरण हरष है तिस कर रोमांचित तन हुए हैं॥ ३१५॥

गरजहिं गज घंटाधुनि घोरा। रथरव बाजि हसहिं चहुंओरा॥ १॥

रथों के चलने की भी अरु किंकनियों कैपि शब्द होते हैं अरु बाजी भो हिनकहते हैं॥ १॥

निदरि घनहिंघुमरहिंनिसाना। निज पराव कछु सुनिय न काना॥ २॥

निसान कहिये दुंदुभियां सो मेघो के शब्दों को निरादर करतियांहुआ घुमरतियां कहिये बजतियां हैं जिन के घोर शब्द कर अपनी पराई बात सुनी ही नहीं जाती॥ २॥

महाभीर भूपति के द्वारे। रज सम होहिं पषान पवारे॥ ३॥

नृप के द्वारे पर ऐसी भीड भई है जिन के पगों संग पखान जो पवर कहिए पडेथ किंवा पवारे कहिए पौर के अर्थ यह द्वारे के पाथर थे सो रज ह्वै गए हैं॥ ३॥

चढी अटारिन्ह देषहिं नारी। लिए आरती मंगल थारी॥ ४॥
गावहिं गीत मनोहर नाना। अति आनंद न जाइ बषाना॥ ५॥
तब सुमंत दुइस्यंदन साजी। जोते रबिहयनिंदक बाजी॥ ६॥

तिस समै सुमंत नामे शचिव नें दुइ रथ तैयार करे परंतु जिन के आगे सूरज के घोडे से भी विशेष तुरंग जोडे॥ ६॥

द्वौ रथ रुचिर भूप पहिँ आने। नहिं सारद पहिं जांहि बषाने॥ ७॥

इहां अतिस्योक्ति है॥ ७॥

राजसमाज एक रथ साजा। दूसरे तेजपुंज अति भ्राजा॥ ८॥

दोहा—तेहिरथ रुचिर बसिष्टकहँ, हरषि चढाइ नरेस।
आपु चढे स्यंदन सुमिरि, हर गुर गौरि गनेस॥ ३१६॥

ननु। ग्रंथों में गणेशजी का पूजन आदिक कहा है इहां गणपति का नाम पीछे कहा। उत्तर। जहां पूजन का बिधान होता है तहां गणपति का आदि होए इहां तो नाम सिमरण कहा है सो नाम आदि भगवंत का ही सिमरन जोग्य है॥ ३१६॥

सहित वसिष्ठ सोह नृप कैसे। सुरगुरु सहित पुरंदर जैसे॥ १॥
करि कुलरीति बेदबिधि राऊ। देषि सबन सब भांति बनाऊ॥ २॥
सुमिरि राम गुरआएसु पाई। चले महीपति संष बजाई॥ ३॥

श्रीरामचंद्र का सुमिरन कर कै अरु गुरों की आज्ञा पाइ कर अरु शंख की धुनि कर कै राजा चढा। आसंका। राजा अपने पुत्र के नाम का सिमरनकर चढा। उत्तर। रामनाम बेदहुंकर प्रमान सदा पूजनीय है किंबा रामचंद्र को पुत्र सनेह पूरबकही सिमरन किया जो अब चल के उन कों देखोंगा॥ ३॥

हरषे बिबुध बिलोकि बराता। बरषहिं सुमन सुमंगलदाता॥ ४॥
भयो कोलाहल हय गज गाजे। ब्योम बरात बाजने बाजे॥ ५॥
सुर नर नारि सुमंगल गाई। सरस राग बाजहिं सहनाई॥ ६॥

सहनाई का शब्द बडा होता है परंतु उहां ऐसे बजंत्री हैं जो उन की धुन कों मृदुकर कर राग के सम बजावते हैं॥ ६॥

घंट घंटिधुनि बरनि न जाई। सरौ करहिं पाइक फहराई। ६॥

घंट्यों की जो महाधुनि है सो कही नहीं जाती। सरौ कहिए सनमुख नृप के ध्वजा लै कै पाइक फहरते हैं किंबा सरौ नाम सहवों का सहवों के आकार मोरपंख के बनाए कर भी पाएक हाथ मों राखते हैं बिवाह के समे आगे चलते हैं अथवा सरोकरण नाम कूदने फांदने का है पाएक कूदते जाते हैं अरु धुजा तिन के हाथो मैं फहरतिआं हैं॥ ६॥

करहिं बिदूषक कौतुक नाना। हासकुसल कल गान सुजाना। ८॥

बिदूषक नाम नकलिवों का सो तिन की बिशेषता एही है हांसिकिआं बातां बहुत जानैं अरु गान बिद्या कें भी निपुन होवैं॥ ८॥

दोहा—तुरग नचावहिं कुँअर बर, अकनि मृदंग निसान।
नागर नट चितवहिं चकित, डगहिं न ताल बंधान॥ ३१७॥

अकन नाम सुनने का तिन अस्थानो मैं इस ग्रंथ मैं यह पद आवेगा सो इसी अर्थ सें बनेगा जब बजंत्री सुन्दर रीति से नगारे बजावते हैं तब सुघर सवार अश्वों को नचावते हैं परंतु वह तुरंग ऐसे पांव धरते हैं जो नगार्यों के तार सें उन का पग बितार नहीं पडता इस चतुरता कों देखकर नट भी चक्रत होते हैं॥ ३१७॥

बनै न बरनत बनी बराता। होंहि सगुन सुंदर सुषदाता॥ १॥
चारा चाष बाम दिसि लेहीं। मनहुं सकल मंगल कहि देहीं॥ २॥

चारा नाम तीतर का चाख नाम गरुड पक्षी का जो बिजैदसमी कों देखिता है सो बाम बोर शुभ है॥२॥

टिप्पणी—रौशनलाल ने लिखा है कि चाख नीलकंठ बाम दिशि अपने चारे को ले रहें हैं। और इस अर्थ को मैं भी मानता हूं पंजाब में नीलकंठ को गरुड़ कहते हैं। पर इस देश में गरुड़ दूसरे पक्षी को कहते हैं। यह सांप को खाता है बड़ा भारी होता है।

दाहिन काग सुषेत सुहावा। नकुल दरस सब काहुन पावा॥ ३॥

काग दाहिने भला परंतु सुन्दर खेत मों शुभ रीति सें बैठा होए। नकुल कहिए जो सरपों कों मारता है तिस का बामे दाहिने का भेम नहीं कही दृष्ट आवे॥ ३॥ टिप्पणी—नकुल = नेवला।

सानकूल वह त्रिबिध बयारी। सघट सबाल आव बर नारी॥ ४॥

सीतल मंद सुगंध वायु अपने संग चले पुनः पतिवंति इस्त्री घट कों पूर कर शिर पर उठाया अरु बालक कों अंक मों लेकर आगे मिले किंबा घट अथवा बालक एक पदारथ होय तो भी प्रमान॥ ४॥

लोवा फिरि फिरि दरस देषावा। सुरभी सनमुष सिसुहि पिआवा॥ ५॥

लोवा नाम लुंबडी का उस का भी देखनाही शुभ है बावें दाहिणे का भेद नहीं। वत्सकों चुषावती हुई धेनु सन्मुख आई॥ ५॥

मृगमाला फिरि दाहिन आई। मंगलगन जनु दीन देषाई॥ ६॥

मृगमाला प्रदख्यना की रीति सें आई यह सर्व मंगलहुं का मूल हुआ॥ ६॥

क्षेमकरी कह क्षेम बिसेषी। स्यामा बाम सुतरु पर देषी॥ ७॥

खेमकरी नाम कोकिल का अरु चांडूर पख्यी का भी है उन की बानी सुननी शुभ है स्यामा नाम काली चिडी जोन सो ब्रह्म महूर्त मैं बोलती है लंबे पूंछवाली वह बाम ओर सुन्दर वृक्ष पर दीसै तो शुभ है॥७॥
टिप्पणी—क्षेमकरी चील्ह विशेष क्षेम कहती है। श्यामा पक्षी सुतरु अच्छे वृक्षों पर।

सनमुष आयो दधि अरु मीना। कर पुस्तक दुइ बिप्र प्रबीना॥ ८॥

इहां पुर्ष का अध्याहार करणा दधि अरु मीन को हाथ मों धरकर कोऊ पुरुष सनमुख आवे अरु पुस्तकों कों हाथ मो लेकर द्वै बिप्र आवै तो सुभ किंबा दोनो हाथों मै पुस्तक धर कर एक बिप्र आवै तो भी शुभ॥८॥

दोहा—मंगलमै कल्यानमै, अभिमतफलदातार।
जनु सब साँचे होन हित, भए सगुन एक बार॥ ३१८॥

मंगल मै हैं जाते कल्यान मै कहिये सुखदाता हैं सुखदाता इस कर हैं जातें बांछित फल देनेहारे हैं सो सभी सगुन मानों सांचे होवने निमित्त एकठेही हुए हैं सांचा होना यह अपने बिषे शुभ फल देवन की शक्ति लोको में प्रतीति करावनो इसी निमित्त शुभ हुए हैं के एक दौए सें भी कारजों की सिद्ध होतीही थी जनु पद इस निमित्त कहा जो हुए सुभाव करहैं॥ ३१८॥

मंगल सगुन सुगम सब ताके। सगुन ब्रह्म सुंदर सुत जाके॥ १॥

सगुन ब्रह्म सुन्दर बपुधार कर जिन का पुत्र रूप भया है तिन का सगुनों लग क्या है जो कोऊ कहै सगुन बिवाह की निरबिघ्नता अरु जश हेतु चाहिये तिस हेतु कहते हैं॥ १॥

राम सरिस बर दुलहिनि सीता। समधी दसरथ जनक पुनीता ॥ २ ॥
सुनि अस ब्याह सगुन सब नाचे। अब कीन्हे बिरंचि हम साँचे ॥ ३ ॥

इस कथन का आसा यह जिस समाज मै एक पुरुष यथार्थ धरमी होइ तिस के प्रभाव कर सभों के कारज सिद्ध होते हैं अरु इहां तौ साख्यात रामचंद्र दूलह अरु जानकी दुलहिनी दसरथ अरु जनक समधी इन के कारज तौ सभी सुफल होने हैं तब सगुनों ने बिचार्या हम अपनी प्रधानता क्यों न कराइ लेवैं जौं इन के होने कर हीं नृप को परम मंगल भया है ॥ ३ ॥

एहि बिधि कीन्ह बरात पयाना। है गै गाजहि हने निसाना ॥ ४ ॥

अब जनक की बुध अरु उदारता पूरवक ब्यवहार कहते हैं ॥ ४ ॥

आवत जानि भानुकुलकेतू। सरितन जनक बँधाए सेतू ॥ ५ ॥
बीच बीच बर बास बनाए। सुरपुर सरिस संपदा छाए ॥ ६ ॥

मिथला अरु अजोध्या के बीच बीच कहिए जहां मजिल का बिस्राम सरब समाज कों करना उचित है तहां तहां निवास जोग्य डेरे बनाए दिए परन्तु जिनो मो स्वरग सम संपद्दा पूरण हैं सोई कहते हैं ॥६॥

असन सयन बर बसन सुहाए। पावहिं सब निजनिज मनभाए ॥ ७ ॥

असन कहिए भोजन सैन कहियै सेज्या अरु बस्त्रादिक जो जिस की इच्छा होए तैसा उहां के लोगो सें लेवें ॥ ७ ॥

नित नूतन सुष लषि अनुकूले। सकल बरातिन्ह मंदिर भूले ॥ ८ ॥

अपने तन को प्रकिरतों के अनकूल नित प्रति नवीन कहिये संष्ट सुख जो लोगों कों मिलते हैं ताते अपने गृहों के सुख सभों कों भूल गए हैं अब बरात का जनकपुर मों पहुंचनादिक कहते हैं ॥८॥

दोहा— आवत जानि बरातबर, सुनि गहगहे निसान।
सजि गज रथ पदचर तुरंग, चले लेन अगवान ॥ ३१८ ॥

कनककलस अरु कोपर थारा। भाजन ललित अनेक प्रकारा ॥ १ ॥
भरे सुधा सम सभ पकवाने। भांति भांति नहि जाइ बषाने ॥ २ ॥

स्वर्ण की गागरैं अरु कोपर कहिए तबलबाज अरु थाल अरु और भी अनेक पात्र तिनो मों अनेक भांतों किआं मिठायां पूरिआं हूंयां जिन की संख्या न होए अरु ॥ २ ॥

फल अनेक बर बस्तु सुहाई। हरषि भेंट हित भूप पठाई ॥ ३ ॥
भूषन बसन महामनि नाना। षग मृग है गै बहु बिधि जाना ॥ ४ ॥

खग बाज जूरं कही आदि की मृग गैंडे किंबा कस्तूरी के मृगादिक अपर सपष्ट ॥ ४ ॥

मंगल सगुन सुगंध सुहाए। बहुत भांति महिपाल पठाए ॥ ५ ॥

मंगल सगुनो के बस्त्रादिक अति सुंदर अरु सुगंधित अनेक राजा ने भेजे ॥ ५ ॥

दधि चिउरा उपहार अपारा । भरि भरि कांवर चले कहारा ॥ ६ ॥
उपहार कहिए भेटा किंवा जो भोजन के समे से पीछे अहार होवैं अरु जिन में चौकी का नेम न होवै अपर सपष्ट ॥ ६ ॥

अगवानन जब दीष बराता । उर आनंद पुलक भर गाता ॥ ७ ॥
अगवानो ने जब जनेत की बनावत देखी है तब आनंद सों तन मन पूरण भये हैं तत्व यह जैसी हमारे नृप सेवा की त्यारी करी थी तैसेही सुंदर जनेत है ॥ ७ ॥

देषि बनाव सहित अगवाना । मुदित बराती हने निसाना ॥ ८ ॥
जब बहुतियां समयियां अरु सुंदर समाज अगवान्यों का देख्या तब बरातियों ने भी दुंदुभियां बजाया तत्व यह राजा के अधिकार पूरबक पदारथ लै कै यह आए हैं ॥ ८ ॥

दोहा—हरषि परसपर मिलन हित, कछुक चले बगमेल ।
जनु आनंदसमुद्र द्वै, मिलत बिहाइ सुबेल ॥ ३१९ ॥
कैसे लोगों को आगे आपुस मों जान पछान है ताते परस्पर मिलने निमित्त वह प्रथमहीं बगमेल कहिये बाहन चलाइ कै आगे भये तब लौ समाज सभी निकट ह्वै कै उमगा जैसे द्वै समुद्र उछल कै मिलैं ॥ ३१९ ॥

बरषि सुमन सुरसुंदरि गावहिं । मुदित देव दुंदुभी बजावहिं ॥ १ ॥
अमर पुष्प बरषावते हैं अरु सुंदरियां जो अपछरा हैं सो गावतियां हैं अरु किन्नर नामी देवता बादित बजावते हैं ॥ १ ॥

बस्तु सकल राषी नृप आगे । बिनै कीन्हि तिन अति अनुरागे ॥ २ ॥
जो पदारथ जनक ने पठाए थे सो दसरथ के आगे धर कै तिनो अगवानों नें नृप की अरु अपनी वोर से बहुत प्रेम कर बिनै करी तब ॥ २ ॥

प्रेम समेत राय सब लीनी । भइ बकसीस जाचकन्हि दीनी ॥ ३ ॥
इहां प्रेम कहिए आदर संजुत नृप ने तिनों से सभ वस्तु लै कै कुछक बकशीश कहिए संबंधियों अरु सूरों कों दीनी अरु और वस्तु जांचकन कों दीनी ॥ ३ ॥

करि पूजा मान्यता बडाई । जनवांसे कहुँ चले लवाई ॥ ४ ॥
बहुत भांति से सनमान पूजा आदिक कर कै बरात कों जनवास कहिए डेरे की ओर ले चले अत्र पगों चलन का प्रकार कहते हैं ॥ ४ ॥

बसन बिचित्र पांवडे परहीं । देषि धनद धनमद परिहरहीं ॥ ५ ॥
जहां बाहनों से उतर कर भूपतादिक चलने लगे हैं तहां ऐसी बस्त्र बिछावते हैं जिन को देख कै कुबेर भी धन का मद त्याग देवैं ॥ ५ ॥

अति सुंदर दीन्हे जनवासा। जहँ सब कहँ सब भाँति सुपासा॥ ६॥

डेरे ऐसे सुन्दर दिए हैं जहां सभ लोगों को सरब भांति की क्रया का सुपास कहिये सुख अपने अपने डेरो मोहीं होए॥ ६॥

जानी सिय बरात पुर आई। कछु निज महिमा प्रगटि जनाई॥ ७॥

सीताजी ने जान्या जनेत ईश्वरों को है कदाचित हमारे संबंधियों से इन की पूरण सेवा न होइ सकै तातें कुछ अपनी महिमा भी दिखाई अल्प महिमा देखावन का हेतु यह जिस की एक दृष्टि कर कोटि ब्रह्मांड सजीवहि तिस के आगे एक जनेत का पालन केती बात है तिस महिमा देखावन का सरूप कहते हैं॥ ७॥

हृदै सुमिरि सब सिद्धि बुलाई। भूप पहुनई करन पठाई॥ ८॥

सीताजी ने सिद्ध कों रिदै मो सिमरेआ जब वह सन्मुख आया तब कहा समाज संजुत नृप की सेवा करो तुका सीलह॥ ८॥

दोहा—सिधि सब सिय आयसु अकनि, गई जहां जनवास।
लिए संपदा सकल सुष, सुरपुर भोग बिलास॥ ३२०॥

अकनि नाम स्रवन का अपर सुगम॥ ३२०॥

निज निज बास बिलोकि बराती। सुरसुष सकल सुलभ बहु भाँती॥ १॥
बिभव भेद कछु कोउ नहिं जाना। सकल जनक कर करहिँ बषाना॥ २॥

बिभव भेद कहिये जो संपदा रूप सिधां सीता ने पठायां है तिन का भेद कोऊ नहीं जानता सभ जनक की महिमा गावते हैं॥ २॥

सियमहिमा रघुनायक जानी। हरषे हृदै हेतु पहिचानी॥ ३॥

सीताजी के रिदै का सनेह अपने बिखे श्रीरामचंद्र ने इस बिध से जानिआ जो इस ने पिता से भिन्न अरु गुप्त जनेत की सेवा हमारी प्रसन्नता निमित्त करी है तिस कर हरखे॥ ३॥

पितु आगमन सुनत दोउ भाई। हृदै न अति आनंद समाई॥ ४॥
सकुचत कहि न सकत गुरु पाहीं। पितु दरसन लालस मन माहीं॥ ५॥

विश्वामित्रजी गुर हैं तातें तिन के बोलने मे रामचंद्र सकुचते हैं किंवा गुर सरवज्ञ हैं हम कों जो दूतों ने आप से नहीं कहा तिस कर जानिता है बिलंब से ही सुभ होवैगा अथवा जौ हम कहैं तौ मुनीश्वर बिचंस कर कहैंगे पिता हमारे से अधिक प्यारा लगा तातें सकुचते हैं॥ ५॥

बिश्वामित्र बिनै बडि देषी। उर उपजा संतोष बिसेषी॥ ६॥
हरषि बंधु दोउ हृदै लगाए। पुलक अंग अंबक जल छाए॥ ७॥

श्रीरामचंद्र की अति नमता देख कर कौशिक महासंतुष्ट भए भाव यह प्रभु सभों कों व्यवहार परमारथ की शिक्ष्या देते हैं तब प्रसन्न ह्वै कै दो भ्रातन कों हृदै मों लगाया अरु अश्रुपातादिक भए कंठ लगावन का भाव यह प्रेम कर यह दोनो बंधु हृदै मों धारणजोग हैं तब तिन की प्रसन्नता अरु राजा के मान हेतु ॥ ७ ॥

चले जहां दसरथ जनवासे । मनहु सरोवर तके पिआसे ॥ ८ ॥

दोहा—भूप बिलोके जबहिँ मुनि, आवत सुतन समेत ।
उठे हरषि सुषसिंधु महँ, चले थाहसी लेत ॥ ३२१ ॥

थाहसी नाम तारीका अपर सुगम अरु कईएक थाहसी नाम जल कीथाह का कहते हैं परंतु उस अर्थ करे दोस आवता है जाते थाह अल्प जल मो होती है सो नृप सुखों की अलपता देखन लगा यह कथन नहीं बनता अब मिलन की रीति कहते हैं ॥ ३२१ ॥

मुनिहि दंडवत कीन्ह महीसा । बार बार पदरज धरि सीसा ॥ १ ॥
कौसिक राउ लिए उर लाई । कहि असीस पूछी कुसलाई ॥ २ ॥
पुनि दंडवत करत दोउ भाई । देषि नृपति उर सुष न समाई ॥ ३ ॥
सुत उर लाइ दुसह दुष मेटे । मृतकसरीर प्रान जनु भेटे ॥ ४ ॥

दुसह दुख कहिए रामचंद्र का बियोग सो रामचंद्र अरु लछमन के कंठ मिलने सें निवृत भया अथवा अर्थ इस भांति करना दुसह दुख कहिए संपूरण राज्यों का भैपरसुरामजी काभै किंवा जन्मादिक भै सो जिनो नें मेटेथा है ऐसे पुत्रहुं कों उर माथ लगाया तब ऐसा हरषभया जैसे मृतक कों प्रान मिलने सें हरष होता है ॥ ४ ॥

पुनि बसिष्ठपद सिर तिन्ह नाए । प्रेममुदित मुनिवर उर लाए ॥ ५ ॥

राजा से पीछे बशिष्ठजी का मिलना इस हेतु कहा गुरों मे पिता का सनमान विशेष लिखा है ॥५॥

बिप्रबृंद बंदे दुहुं भाई । मनभावती असीसैं पाई ॥ ६ ॥
भरत सहानुज कीन्ह प्रनामा । लिए उठाइ लाइ उर रामा ॥ ७ ॥
हरषे लषन देषि दोउ भ्राता । मिले प्रेमपरिपूरन गाता ॥ ८ ॥

लछमन कों देखकर भरत शत्रुहन हरषे अथवा तिन कों बिलोककर सौमित्र प्रसन्न भए अरु प्रेम सों पूरण ह्वैकर मिले ॥ ८ ॥

दोहा—पुरजन परिजन जातिजन, जाचक मंत्री मीत ।
मिले जथाबिधि सबन प्रभु, परम कृपालु बिनीत ॥ ३२२ ॥

सभों को जथोचित मिले जाते परम कृपालु हैं अरु विशेष कर नीति जानते हैं जो नीति शास्त्रो मे कहा है मरजादा कबू न छाडनी ॥ ३२२ ॥

रामहिं देषि बरात जुडानी। प्रीति की रीति न जाइ बषानी ॥ १ ॥

रघुनाथजी कों बडे प्रभाव संजुत देख कै सब लोगों का रिदा सीतल भया अरु ऐसे प्रेमकर मिलते हैं जो कहा न जाइ ॥ १ ॥

नृप समीप सोहैं सुतचारी। जनु धरमादि प्रगट तनधारी ॥ २ ॥

राजा की शोभा चारों सुतांकर ऐसी बनी है जैसे कोऊ बडभागी धरम अर्थ काम मोख्य कों पाइ कर सोभै ॥ २ ॥

सुतन्ह समेत दसरथहिं देषी। मुदित नगर नर नारि बिसेषी ॥ ३ ॥

पुत्रों जुक्त राजा कों देखकर नर नारियां सभ प्रसन्न भए भाव यह राजा तो सुंदर हैं परंतु पुत्र भी मनोहर हैं एकत्र बैठते बहुत सोभते हैं किंवा बिदेह की चार कन्याथिआं अरु राजा के भी चारो पुत्र हैं इन सभों का बिवाह इहांहीं होए तो बडा हरष होय अथवा अर्थ ऐसे करना पुरस तौ प्रसन्न भए परंतु इस्त्रिआं विशेष प्रसन्न भैयां सो आगे कहेंगें ॥ ३ ॥

सुमन बरषि सुर हनहिँ निसाना। नाकनटी नाचहिँ करि गाना ॥ ४ ॥

नाक कहिये स्वर्ग तहां किआं नटिआं कहिये अपसरा अपर सुगम ॥ ४ ॥

सतानंद अरु बिप्र सचिवगन। मागध सूत बिदुष बंदीजन ॥ ५ ॥

बिदुष कहिये पंडित अपर सुगम ॥ ५ ॥

सहित बरात राउ सनमाना। आयसु मांगि फिरे अगवाना ॥ ६ ॥

जनेत संजुत आदर सों नृप का डेरा कराइ कै सतानंदादिक जो अगवान थे सो आज्ञा लै कै अपने डेरे कों आए ॥ ६ ॥

प्रथम बरात लगन ते आई। ताते पुर प्रमोद अधिकाई ॥ ७ ॥

लगन होना है मार्गसीर्ष मैं अरु जनेत आई है कार्तिक मो ताते पुर मो बडा आनंद है जो बहुत चिर एकत्र रहणा होएगा ॥ ७ ॥

ब्रह्मानंद लोग सब लहहीं। बढउदिवस निसि बिधिसन कहहीं ॥ ८ ॥

सरब लोगों कों बिदेह पुर का निवास कर किंवा रघुनाथजी के प्रभाव के प्रकाश कर वा दरशन के प्रताप कर जो प्रभों के स्वरूप की ज्ञात भई है ताते ब्रह्मानंद सम सुख पावते हैं अरु प्रेम कर यह चाहते हैं बिवाह मो हैं अल्प दिन हैं ताते दिन रात्री स्वर्गवासियों जैसे होहिं जो हम कों अधिक काल दरसन होता रहै ॥ ८ ॥

दोहा—राम सीय सोभाअवधि, सुकृतअवधि दोउ राज।
जहँ तहँ पुरजन कहहिं अस, मिलि नरनारिसमाज ॥ ३२३ ॥

सभ पुरुष इस्त्रियां मिल के कहते हैं श्रीरामचंद्र अरु सीता में अधिक सुन्दरता किसू को नहीं अरु दशरथ जनक से पुन्य बडे किसू के नहीं तिसी कों बिस्तार कर कहते हैं ।। ३२३ ।।

जनकसुकृतमूरति बैदेही। दसरथसुकृत राम धर देही ॥ १ ॥

बिदेह के पुन्यो की मूरति सीता है दशरथ के सुकृतों की मूरत श्रीरामचंद्र हैं इस कथन का आशा यह इनों के पुन्य असंख है इस जनम मो भोगे नहीं जाते अरु इनोने मुक्ति होना है फेर जनम पावना नहीं ताते सब सुख इसी जनम मों भोगावने हेतु लक्ष्मीनारायण इन के गृह उपजे ।। १ ।।

इन सम काहु न सिव अवराधे। काहु न इन समान फल लाधे ॥ २ ॥

इन्ह सम कोउ न भयो जग माहीं। है नहिं कतहूं होन्यो नाहीं ॥ ३ ॥

हम सब सकल सुकृत कै रासी। भै जग जनम जनकपुरबासी ॥ ४ ॥

अरु हम सभों ने भी पूरब पुन्य करे हैं जाते भारतखंड मों मानुष जनम। पुनः जनक जैसे ज्ञानवान राजा के पुर मो तनुधारे हैं तिस पर भी ॥ ४ ॥

जिन जानकीरामछबि देषी। को सुकृती हम सरिस बिसेषी ॥ ५ ॥

अब श्रीरघुनाथजी का दरसन करते हैं ताते हम से अधिक अरु हम सारिखा पुन्यवान कवन है ।।५।।

पुनि देषब रघुबीरबिबाहू। लेब भली बिधि लोचनलाहू ॥ ६ ॥

कहहिँ परस्पर कोकिलबैनी। यह बिबाह बड लाभ सुनैनी ॥ ७ ॥

तिस लाभ का स्वरूप दिखावते हैं ॥ ७ ॥

बडे भाग बिधि बात बनाई। नैनअतिथि ह्वै हैं दो भाई ॥८॥

हमरे भागों कर बिधाता ने यह संजोग किआ है जाते यह दोऊ भैया हमारे नेत्रों के अतिथ कहिए दरसन जोग्य होहिंगे जों कोऊ कहै अब काऊ काल दरसन भया तो बडा लाभ क्या भया तिस पर कहती हैं ॥ ८ ॥

दोहा—बारहिं बार सनेहबस, जनक बोलाइब सीय।
लेन आइहैं बंधु दोउ, कोटि काम कमनीय ॥ ३२४ ॥

जानकी सों जनक का बडा सनेह है ताते नृपसुता को बोलाइ पठाया करेगा अरु यह दोनो भैया जो असंख कामदेवों से कमनीय कहिए सुन्दर हैं सो सीता के लेने हेतु इहां आया करेंगे तब ।।३२४।।

बिबिध भाँति होइहि पहुनाई। प्रिय न काहि अस सासुर माई ॥ १ ॥

हम अपने अपने गृह मो बोलाय कर अनेक भांति की पहुनाई कहिये भोजन जिवांवेंगिआं राजा के जो जामाता हुए तो हम सभों के भी हुए जों काऊ कहै क्या जानिए आवें की न आवें तिस पर कहतिआं हैं हेमाई ऐसे धनी ससुरार किस कों प्रि नहीं होते अर्थ यह सभों कों प्रि होते हैं उन के गृह मों हासरस के सुख भोगने निमित्त जामाता अवश्य आवते हैं ।। १ ।।

तब तब राम लषनहिं निहारी। होइहिं सब पुरलोग सुषारी॥ २॥

अब नृप दशरथ की ओर का प्रसंग कहते हैं॥ २॥

सषि जस राम लषन कर जोटा। तैसहिं भूप संग दुइ ढोटा॥ ३॥
स्याम गौर सब अंग सुहाए। ते सब कहहिं देषि जे आए॥ ४॥

ते सब कहिये हमारे कंत जाते पति का नाम प्रगट नहीं लैना अपर सपष्ट॥ ४॥

कहा एक मैं आजु निहारे। जनु बिरंचि निज हाथ संवारे॥ ५॥
भरत रामहीं की अनुहारी। सहसा लषि न सकैं नर नारी॥६॥

भरत की मूरति तो श्रीरामचंद्र सारखी है जब भरत कों देखिए तब रामचंद्र का भ्रम पडता है जब रघुनाथजी कों देखिए तब भरत का भ्रम पडता है जब एकठे बैठे होवहि तब भी सपट नहीं जाने जाते बुद्धवान लोग बैठने के अधिकारादिकों कर जानते हैं॥ ६॥

लषन सत्रुसूदन एकरूपा। नष सिष ते सब अंग अनूपा॥ ७॥
मन भावहिं मुष बरनि न जाहीं। उपमा कहुं त्रिभुवन कोउ नाहीं॥८॥
छंद—उपमा न कोउ कह दास तुलसी कतहुं कबिकोबिद कहैं।

चारो भैयों की उपमा देने कों कहूं भी कोऊ पदारथ उपमान नहीं ऐसो भांति कवि अरु पंडित कहते हैं।

बलबिनै बिद्यासीलसोभासिंधु इन सम एइ अहैं॥

जिस मो बल अधिक होता है जहां नम्रता नहीं होती जहां दोनों होए तहां विद्या की पूरणता नहीं होती जो विद्या मो निपुन भी होए तिस मो अभिमान की अधिकता होती है सुसीलता दुरलभ है जिस मो यह भी होए सो सरूपकर ऐसा सुंदर नहीं होता जो यह सम गुणा जुक्त भी होए तो चार भैया एक से नहीं होते ताते सरब गुणो की निधि इन के सम एहो हैं।

पुरनारि सकल पसारि अंचल बिधिहिंबचन सुनावहीं।
ब्याहियहिं चारिहु भाइ एहि पुर हम सुमंगल गावहीं॥
सोरठा—कहहिं परस्पर नारि, बारिबिलोचन पुलकतन।
सषि सब करब पुरारि, पुन्यपयोनिधि भूप दोउ॥ ३२५॥

अंबु मो अंबक पूरे अरु तन रोमांचित हुए हैं जिन केते जुवतिआं कहतिआं हैं हे सखिवो महादेव हमारे सभ मनोरथ सफल करेंगे जाते दोनो नृप पुन्यो का सिंधु हैं अस्रु पातादिक होवने का हेतु प्रभों का स्वरूप कथन का प्रेम किंवा भावी वियोग की व्याकुलता पुरारि पद कहणे का भाव यह महादेव ग्रंथकार के गुर हैं से अपने अभिप्राय कर नारियों के मुख से भी कहा है किंवा यह कपरदी का चाप था जो वह

ना वहते तौ रामचंद्र ना तोड़ते सो जाते धनुष भंग कराया है ताते यह मनोरथ भी हमारा सफल करैंगे॥ ३२५ ॥

एहि बिधि सकल मनोरथ करहीं। आनद उमगि उमगि उर भरहीं॥१॥

इस भांत के मनोरथ जुवतियां करतियां हैं अरु प्रभों की ओर उमगे हुए जो रिदे हैं तिन कों आनंद सों पूरतियां हैं अब साधुभूपतों का गमन कहते हैं॥ १ ॥

जे नृप सीयस्वयंबर आए। देषि बंधु सब तिन सुष पाए॥ २॥

कहत रामजस बिसद बिसाला। निज निज गेह गए महिपाला॥ ३॥

गए बीति कछु दिन एहि भांती। प्रमुदित पुरजन सकल बराती॥ ४॥

जेते दिन जनेत आगे आई थी सो दिन बीतीत भये पुर लोग बरातिवों की ओर से अरु बराती पुरबासियों की ओर से प्रसन्न हैं तत्व यह बियोग नहीं चाहते तब लो॥ ४॥

मंगलमूल लगनदिन आवा। हिमरितु अगहन मास सुहावा॥ ५॥

हिमरितु मैं अगहन कहिये मंघर का सुन्दर मास अगहन कों सुन्दर कथन का भाव यह पौष का मास मंगल कारजों मो नहीं लिया किंवा अगहन मों सीत अलप होता है तिस का रुचिर किंवा भगवान ने कहा है मासानां मार्गसीर्षोहं ताते सुन्दर है॥ ५॥

ग्रह तिथि नषत जोग बर बारू। लगन सोधि बिधि कीन्ह बिचारू॥ ६॥

पठै दीन्ह नारद सन सोई। गनी जनक के गनकन जोई॥ ७॥

जो लगन जनक के जोतषियों ने गना था सोई तिथवार यह नखत्र ब्रह्माजी ने लिख कर नारद के हाथ पत्र पठाया॥ ७॥

सुनी सकल लोगन एह बाता। कहैं जोतिषी बुद्धि बिधाता॥ ८॥

जब लोगों ने यह वृत्तांत सुना तो प्रसन्न भए जो हमारे जोतषियों को बुध बिधाता सदृश है अब तिस लगन का स्वरूप दिखावते हैं॥ ८॥

दोहा—धेनुधूरिबेला बिमल, सकलसुमंगलमूल।
बिप्रन कह्यो बिदेह सन, जानि सगुन अनकूल॥ ३२६॥

मंघर का मास पूर्वभाद्रपदा नख्यत्र पंचमी तिथ गोधूल अवसर तिस मो और भी सभी जोग वारादिक शुभ बिचार के जोतषियों ने जनक प्रति कहा इस मै पानिग्रहन करावो। आसंका। ब्रह्माजी ने लगन सोध कर बिवाह लिखा तो रामचंद्र अरु सीता कों बनवासादिक क्यों हुये। उत्तर। बिवाह के लगन का फल यह है बिवाहादिक मंगल निरबिघ्न होवैं अरु आपस मै पतिविखा का सनेह संतान शुभ होवै अरु बनवासादिक कष्ट तौ जनम ग्रहों के अनुसार होते हैं। ननु। केते रामायणों मै परसुरामजी का आवना बिवाहसे उपरांत कहा है तौ निरबिघ्न मंगल कैसे हुआ सीता कों रघुनाथजी नें बनवास दिवाया

अरु लवकुश ने संग्राम किआ तो सनेह क्या रहा । उत्तर । यह बात जथार्थ है तो भी बिरंचि पर दोस नहीं आवता ब्रह्माजी सरवज्ञ हैं जो जो कारज रामचंद्र के अवतारों मों होने थे सो बिचार कर तिन के अनुसार हीं लगन सोध्या था तिसि भांति हुये इसी निमित्त ग्रंथकार ने बिचार पद मूल मों राख्या है जो संपूरण वृत्तांत ब्रह्माजी ने प्रथम हीं बिचार लिया था अरु नारद के हाथ भी पत्र इसी हेतु पठाया था जो नारद भगवंत का मन है । आसंका । पिता माने तो भविसत बिचार कर लगन सोध्या जनक के जोतषिवों ने क्यों न बिचार कर राजा कों कहा इन ग्रहों नछत्रों के फल कर सीता रामचंद्र कों कष्ट होवैगा । उत्तर । जो व्यवहार समष्ट बुद्ध मो फुरे हैं सोई जीवों की बुद्धि मो आवते हैं जैसे पांचभौतिक सृष्टि बिध ने रची है अरु दसहुं इंद्रिअहुं कर सरीरों का व्यवहार सिद्ध किआ है सो और उपजावन तो भिन्न रहा कोऊ बुधवान नाम भी नहीं कहि सकता जो अमका तत अमकी इंद्रिआं और अमकी क्रया निमित्त चाहीते थे तत्व यह जो बिधाता नहीं बनाया सो जीवों की बुद्धि बिषे आवता ही नहीं तैसे जोतषिवों ने भी ग्रहों निछत्रों की गति बिध की इच्छा के अनुसार ही जानी तदनंतर ॥ ३२६ ॥

उपरोहितहिं कह्यौ नरनाहा । अब बिलंब कर कारन काहा ॥ १ ॥

सतानंद तब सचिव बोलाए । मंगल सकल साजि सब ल्याए ॥ २ ॥

संष निसान पनव बहु बाजे । मंगल साज सगुन सब साजे ॥ ३ ॥

सुभग सुआसिनि गावहिँ गीता । करहिँ बेदधुनि बिप्र पुनीता ॥ ४ ॥

सुआसिन नाम सौभागवती वह इस्त्रिअहुं का इतर सुगम ॥ ४ ॥

लेन चले सादर एहि भांती । गए जहां जनवाँस बराती ॥ ५ ॥

सतानंदजी सचिवहुं इस्त्रिअहुं बिप्रहुं सहित ल्यावने हेतु राजा के समीप गये ॥ ५ ॥

कोसलपति कर देषि समाजू । अति लघु लाग तिनहि सुरराजू ॥ ६ ॥

राजे दशरथ का समाज देख कै ता समै तिन कों इंद्र की संपदा भी अति लघु भासती है जाते इंद्रा-दिक तहां कौतुक देखण आए हैं ॥ ६ ॥

भयो समै अब धारिय पाऊ । यह सुनि परा निसानहिं घाऊ ॥ ७ ॥

बिनै कर कहा हे महाराज लगन समै समीप आया है अब राजभवन मैं चरण पधारिए यह सुनकै निशाने घाउ कहिये नगारे चोट परी ॥ ७ ॥

गुरुहिं पूछि करि कुलबिधि राजा । चले संग मुनि साधु समाजा ॥ ८ ॥

गुरों कों पूछकर वैदिक लौकिक व्यवहार जो उचित थे सो कर कै रिषों मुनों का समाज संग लेकर नृप चला । आसंका । उस उतसाह मैं साथ जनेत कहनो बनती थी सो नहीं कही मुनीश्वरों अरु संतों को साथ कहने का प्रयोजन क्या । उत्तर । जहां राजा की जात्रा कहिती है तहां सैना का कथन अर्थांतरही आइ जाता है जाते सैना आप से पहुंचती है अरु रिषों मुनो का नाम कहे बिना नहीं जान्या जाता

तातें संतों कों सतकार बिना संग जाने का क्या प्रयोजन तिसकर सेना का नाम ना कहा यह रिषों का कहा जो संतों को सनमान कर नृप ने संग लिया अरु तिन के संग लेने का भाव यह राजा ने बिचाख्या यह हैं मंगल इनो में बिघ्न भी होते हैं तिनो के निवारने निमित्त संतों का समाज चाहीता है वा राजा के मन ऐसी आई धनुषभंग परसुराम का जीतन रामचंद्र के जानकी में बिवाह का हरष भया है बड़ा कदाचित मुझे हंकार आए जाता होए तिस को निवृत निमित्त मुनीश्वरों का समाज साथ लिया अथवा यह बिवाहआदिकों को मंगल अतिउतसाहदायक हैं जुवा अवस्था मां सुन्दर लागते हैं हमारी वृद्ध अवस्था है अरु चलना भी अवश्य बनता है जाते रामचंद्र का बिवाह अरु जनक में सनबंध परन्तु ऐसी रीति से चलिए लौकिकव्यवहार पूरण रहे अरु मन भी उपसम रहे इस निमित्त संतों का समाज साथ लिया ॥ ८ ॥

दोहा—भागबिभव अवधेस कर, देषि देव ब्रह्मादि।
लगे सराहन सहसमुष, जानि जन्म निज बादि ॥ ३२७ ॥

दसरथ के भागों का बिभव कहिये प्रभाव सो देख कर ब्रह्मादिक अपने जन्म कों व्यर्थ मानते भए प्रयोजन यह जिस स्वामी के चरणों की हम उपासना करते हैं तिस का पुत्रभाव कर दशरथ अब शिर पर पुष्प चढावेगा अरु सरब प्रकार के कौतुक देखेगा। आसंका। बिरंच से दशरथ कों आनंद की अधिकता कहनी कैसे बनै। उत्तर। ग्रंथकारों की रीति है जिस का महातम कहना होता है तिस के आगे औरों की लघुता कह जाते हैं तैसे इहां भी दशरथ के उतकर्ष कथन में प्रयोजन है बिधि की न्यूनता मो नहीं अथवा इहां भक्ति की अधिकता कही जो दशरथ को भक्ति के फल की वोर देव कर बिरंचादिक आप कों न्यून मानते भए जैसे दसमस्कंध मो कहा है ब्रह्माजी ने। अहाभाग्य महाभाग्य नंद गोप व्रजो कसां। यन्मित्रं परमानंद पूर्ण ब्रह्मसनातनं॥ नंदगोप के बृजवासियों का बड़ा उत्तम भाग्य है जिस का परममित्र सर्बव्यापक सच्चिदानंद सनातन ब्रह्म श्रीकृष्ण देव वपुकर इस्थित हैं। अहातधन्या व्रज गोरमन्यास्तन्यामितं पीतमतीवतेमुदा। यासांविभोवत्सतरात्मजात्म नायत त्रिप्तयद्यापिन चालमध्वरा॥ आश्चर्य है धन्य हैं व्रज की धनु अरु तरुनियां हे बिभोवत्स अरु सिसुरूप धर के जिन के स्तना का दूधरूपी अमृत पान कर तुम प्रसन्न भए जिस तुमारी त्रिप्ति कों अब परजंत यज्ञ भी समरथ नहीं होते ॥ ३२७ ॥

सुरन सुमंगलअवसर जाना। बरषहिं सुमन बजाइ निसाना ॥ १ ॥
सिव ब्रह्मादिक बिबुधबरूथा। चढे बिमानन्हि नाना जूथा ॥ २ ॥
प्रेमपुलकितन हृदै उछाहू। चले बिलोकन रामबिबाहू ॥ ३ ॥

श्रीरामचंद्रजी के बिवाह देखन का जो भया है रिदे को उतसाह तिस कर तन पर रोमांचादिक भये हैं ॥ ३ ॥

देषि जनकपुर सुर अनुरागे। निज निज लोक सबन लघु लागे ॥ ४ ॥

देवतिषहुं कों अपने लोकहुं की संपदा लघु लागनी इस कथन मों जनकपुर की महिमा जाननी

किंवा सुरां ने यह बिचार्या हमारे लोकों मां अपनी अपनी बिभूति है अरु इहां इस काल मों सरब बिश्व की बिभूति है ॥ ४ ॥

चितवहिँ चकित बिचित्र बिताना। रचना सकल अलौकिक नाना ॥ ५ ॥

जिस बितान का पोछे बरनन कर आए हैं तिस कों देखकर सभ अमर भी चक्रत होते हैं जो ऐसा बितान सरबांग सुंदर कबी नहीं देखा ॥ ५ ॥

नगरनारिनर रूपनिधाना। सुघर सुधरम सुसील सुजाना ॥ ६ ॥

पुर के नारी नर रूप मों अति सुंदर ब्योहार मों चतुर बरनाश्रमों के धरम मां निपुन सोम्य सुभाव अरु सुजान कहिये ज्ञानवान ॥ ६ ॥

तिन्हहिँ देखि सब सुर सुरनारी। भए नषत जनु बिधु उजियारी ॥ ७ ॥

तिन के ज्ञानादिक गुन देख के देवता अरु देववधूआं आपु कों इंदु आगे उडगनो सम जानत भए ॥ ७ ॥

बिधिहिँ भयो आचरज बिसेषो। निज करनी कछु कतहुं न देषो ॥ ८ ॥

ननु। इहां कहा बिरंचिजी ने आपनो करनी कहूं न देखी सा ब्रह्माजी की रचना बिना ब्यवहार कैसे बने। उत्तर। ब्रह्माजी ने स्थावर जंगम सृष्ट सब करी है परंतु मरकतमनीवां के आसपत तो नहीं रचे इत्यादिक रचना देखकर आश्चरज भया अथवा जैसे बत्सहरन समै ब्रह्माजी ने अपनी सृष्ट में बिलक्षन बत्सगोपाल देखे थे तैसे इहां भी अपूरब रचना देखी तातपरज यह लक्ष्मीनारायणकृत सृष्टि है मेरी कृत नहीं अथवा निज करनी कहिए अपने कारणहारी अर्थ यह जिस अविद्यारूप मायाकर ब्रह्माजी भी रचै हैं सो कतहुं न देखी तत्व यह जनकपुर के लोक सोपि सभी ज्ञानवान अरु रामचंद्र का समाज भी प्रभों के दरशन अरु बशिष्टजी के उपदेश कर ज्ञातज्ञेय बिद्या किसू के रिदै मा न देखी अथवा निज करनी का अर्थ यह जो कोई कारज करता है कहता है मै ने किया सा ऐसा हंकारी इहां कहूं नहीं देखा सभी कहते हैं भगवंत ने किया है ऐसे भगवंत परायण लोक देख कर बिरंचि आश्चर्यरूप होय भया ॥ ८ ॥

दोहा—सिव समुझाए देव सब, जनि आचरज भुलाहु।
हृदै बिचारहु धीर धरि, सीयरघुबीरबिबाहु ॥ ३२८ ॥

शंकरजी ने ब्रह्मादिकों कों समुझाया तुम आश्चर्य मान कर भूलो नहीं रिदै मों बिचार कर देखो सच्चिदानंदरूप जो सीतारामचंद्र हैं यह तिन का बिवाह है ब्रह्मादिकों पर ब्यवहार की प्रबलता है तातें कबी कबी भ्रम पड जाता है अरु शंकरजी कों सदा निर्विकल्पता है तातें निरसंदेह रहते हैं ॥ ३२८ ॥

जिन कर नाम लेत जग माहीं। सकल अमंगल मूल नसाहीं ॥ १ ॥
करतल होहिँ पदारथ चारी। ते सिय राम कह्यो कामारी ॥ २ ॥

जिस श्रीरामचंद्रजी का नाम जपनमात्र कर सरब उपद्रव नाश होते हैं अरु चार पदारथ जीवों को प्राप्ति होते हैं सो श्रीरघुनाथजी इहां साख्यात हैं कामारि बिशेषन का भाव यह सरब बिकारों सो काम मुख्य है तिस के जीतने कर जो मन निरमल है तातें प्रभों के सरूप के जथार्थ ज्ञाता हैं ॥ २ ॥

एहि बिधि संभु सुरन्ह समुझावा। पुनि आगे बरबसह चलावा॥३॥

देवता जो रघुबीरजी से वा दशकंठ से सकुच कर दूर खडे थे तिन को शिवजी ने समुझाय कर फेर बरबस कहिये बल कर आगे चलाया किंवा बस नाम बैल का अपना जो श्रेष्ठ बैल है तिस को आगे चलाया समीप हाने निमित्त॥३॥

देखन देषसु दसरथ जाता। महामोद मन पुलकित गाता॥४॥

अमरों ने देख्या है दशरथ का गमन जो मन तन कर परमानंदत हैं पुन: कैसो बनो है॥४॥

साधु समाज संग महिदेवा। जनु तनु धरे करहिं सुति सेवा॥५॥

राजा के संग संतों अरु ब्राह्मणों का समाज कैसा है मानो देह धार कर नृप को श्रुत सेवते हैं इहां सेवना सोभा देने के अर्थ सो है॥५॥

सोहत साथ सुभग सुतचारी। जनु अपबरग सकल तनुधारी॥६॥

अरु चारि पुत्र संग कैसे सोभते हैं माना सलोकादिक चारों मुक्त ने देह धारे हैं॥६॥

मरकतकनकबरन बर जोरी। देषि सुरन्ह भइ प्रीति न थोरी॥७॥

रामचंद्र अरु भरत नीलमनियों की जोडी लछमन शत्रुघ्न कनकमनियों की जोडी तिन की रुचिरता देख के अमरों को अति प्रेम भया॥७॥

पुनि रामहिं बिलोकि हिय हरषे। नृपहिं सराहि सुमन वहु बरषे॥८॥

दोहा—रामरूप नषसिषसुभग, बारहिं बार निहारि।
पुलक गात लोचन सजल, उमा समेत पुरारि॥३२९॥

श्रीरामचंद्र के सरूप का नख सिख ध्यान कर के जो प्रेम उपजा है ताते गिरजासहित शिवजी को रोमांचादिक हुए प्रेम का हेतु यह बालअवस्था का ध्यान तो हम को अति प्रिय है परन्तु यह सभे को यह मूरति भी चित को अति भाई है किंवा यह बिचार्या जिस को बेद नेत नेति कर कहते हैं सो परमात्मा भक्तबत्सलता कर क्या क्या चोज करता है सो ध्यान करते हैं॥३२९॥

केकिकंठदुति स्यामल अंगा। तडितबिनिंदक बसन सुरंगा॥१॥

मोर की ग्रीवां सम परम सुन्दर रघुनाथजी का बरन है अरु दामिनी की शोभा को न्यूनकरनहारा प्रभों का पिताम्बर है॥१॥

ब्याहबिभूषन बिबिध बनाए। मंगलमै सब भांति सुहाए॥२॥

ब्याह बिभूषन कहिय मुकुटादिक सो गणेशादिकों के चिन्हां कर मंगल मै हैं अरु रतनों कर जटित सब प्रकार सुन्दर हैं॥२॥

सरदबिमलबिधुबदन सुहावन। नैन नवल राजीव लजावन॥३॥

सरदरितु के पुरनमासी के चंद्र सा निरमल मुख है अरु नवीन इंदीवरों का लज्जित करणहारे दृग हैं॥३॥

सकल अलौकिक सुंदरताई। कहि न जाइ मनहीं मन भाई॥ ४॥

प्रभों की सुन्दरता लोकों सम नहीं ताते मनहीं मन कहिये मन का मन सो अति सूखमहत प्रयोजन यह रामचंद्र का तत्व अति गुह्य है तिस कर जेता मन सूख्यम होए तब उस कों विशेष लखता है अथवा मन ही मन कहिये मन को मनन निश्चयामन किए से सरूप जानिता है॥ ४॥

बंधु मनोहर सोहहि संगा। जात नचावत चपल तुरंगा॥ ५॥
राजकुंअर बर बाजि देषावहिं। बंसप्रसंसक बिरद सुनावहिं॥ ६॥

राजकुमार कहिए चारो भातीं में इतर सो अश्वों के कौतुक देखावते हैं बंसप्रसंसक मागध जन सो बरद कहिये बडोंकियां सुभ करनियां सुनावते हैं अब रघुनाथजी की सवारी कहते हैं॥ ६॥

जेहि तुरंग पर राम बिराजैं। गति बिलोकि षगनायक लाजैं॥ ७॥

और राजपुत सभ तुरंगों कों नचावते हैं अरु रघुनाथजी घोडे को चाल ही अति सुन्दर चलावते हैं जाते अवस्था कर स्वभाव कर बिवाह के समै कर रघुनाथजी कों गंभीरता ही चाहिती है॥ ७॥

कहि न जाइ सब भांति सुहावा। बाजिबेष जनु काम बनावा॥ ८॥

तिस के तन की अरु भूषनो की सोभा कही नहीं जाती मानो मदन तुरंग का रूप धार कर सोभता है॥ ८॥

छंद—जनु बाजिबेष बनाइ मनसिज राम हित अति सोहई।
आपने बै बल रूप गुन गति सकल भुवन बिमोहई॥

वह तुरंग अपनी जुआनी कर बल रूप गति आदिक गुनो कर सभ जगत कों मोहता है॥

जगमगत जीन जराव जोति सुमोति मनि मानिक लगे।

जडाऊ जा जीन है तिस को जोत जगमगात कहिए प्रकासती है कैसो जीन है जिस मो मोती मणियां मानिक लगे हुए है॥

किंकिनि ललाम लगाम ललित बिलोकि सुर नर मुनि ठगे॥

किंकनी कहियें जो तुरंग के कंठ मों होती है अथवा आगे के पावों मों होती है सो ललाम कहिए अति स्रेष्ठ है लगाम जो मुख मों है सो सुन्दर है इतर सुगम॥

दोहा—प्रभुमनमहि लैलीन मन, चलत बाजि छबि पाव।
भूषितउडगन तडितघन, जनु बर बरहि नचाव॥ ३३०॥

श्रीरामचंद के मन मों जिस का मन लीन भया है सो तुरंग प्रभोंकर प्रेरित चलता हुआ ऐसे सोभता है जैसे नछयत्रों अरु तडिताकर सोभित जो मेघ है तिस कर प्रेरित मयूर निरत करै प्रभों के मन मों अश्व के मन लीन होवन का हेतु यह प्रभों कों हाथ पांव हिलावना न पडै किंवा प्रभों के स्परसादिकों कर तुरंग भी मुक्ति हुआ चाहिता है ताते तिस का मन प्रभों विषे लीन भया अर्थात् मनोनास भया जो कोऊ कहै तुरंग की एती महिमा कहते हो तदाह॥ ३३०॥

जेहि बर बाजि रामअसवारा । तेहि सारदौ न बरनै पारा ॥ १ ॥
संकर रामरूपअनुरागे । नैनपंचदस अतिप्रिय लागे ॥ २ ॥

इस का तातपरज यह शंकरजी ने जान्या और व्योहार तो है नेत्र भी सिद्ध करते हैं परंतु पंचदश नैनहुं के होने का हम कों आज विशेष लाभ भया ॥ २ ॥

हरि हित सहित राम जब जोहे । रमा समेत रमापति मोहे ॥ ३ ॥

उपासना की दृढता कर कै गुसांईजी ने स्वयंभूमनु के प्रसंग विषे रामचंद्र कों विष्णुजी का परा कहा है तिस कर रमापति मोहित होने बनते हैं किंवा जो अभेदता लीजिए तो भगवंत ने बिचाऱ्या मत्स कूरमादिक अवतार मेरे सभी परम श्रेष्ट हैं परंतु इस अवतार को इस समै छबि अधिकही बनी है ताते मोहित भए ॥ ३ ॥

देषि रामछबि बिधि हरषानें । आठै नैन जानि पछितानें ॥ ४ ॥

बिधि का पश्चाताप शंकरजी के नेत्रों की अधिकता देखकर ॥ ४ ॥

सुरसेनपमन बहुत उछाहू । बिधि ते एह बडलोचनलाहू ॥ ५ ॥

सुरों का सेनापति स्यामकारतक तिस कों अति आनंद है बिरंचि से अपनी अधिकता देखकर जो मेरे नेत्र द्वादस हैं ॥ ५ ॥

रामहिं चितै सुरेस सुजाना । गौतमश्राप परम हित माना ॥ ६ ॥
देव सकल सुरपतिहिं सिहाहीं । आजु पुरंदर सम कोउ नाहीं ॥ ७ ॥

सिहाहीं नाम उस्तुत करने का अपर सपष्ट । आसंका । जो दृग अनेक होहिं तो भी देखणेवालोहत एकही होती है । उत्तर । जैसे एक चख्यु से दुहूं नेत्रों की दृष्ट विशेष होती है तैसेही अनेकों की सम्भनी किंवा कविश्वरों के चमत्कार हैं जिस में वाक्य की रुचिरता होए सो कहना ॥ ७ ॥

मुदित देवगन रामहिं देषो । नृपसमाज दुहुं हरष बिसेषो ॥ ८ ॥

प्रभों का दरशन कर के देवता प्रसन्य हैं अरु नृपो के दोनो समा जिनो कों प्रभों के दरशन कर अरु सरब भांति के स्वाद बनने कर बडा हरष है ॥ ८ ॥

छंद—अतिहरष राजसमाजु दुहुं दिसि दुंदुभी बाजहिं घनी ।
बरषहिँ सुमन सुर हरषि कहि जै जैति जै रघुकुलमनी ॥
एहि भांति जानि बरात आवत बाजनें बहु बाजहीं ।
रानी सुआसिनि बोलि परिछनि हेतु मंगल साजहीं ॥

सुआसन नाम सौभागवतिहुं का परछन नाम पूजन का अपर सुगम ।

दोहा—सजि आरती अनेक बिधि, मंगल सकल संवारि ।

चली मुदित परिछन करन, गजगामिनि बरनारि ॥ ३३१ ॥
बिधुबदनी मृगसावकलोचनि। सब निज तनछबि रतिमदमोचनि ॥ १ ॥
बरन बरन पहिरे बर चीरा। सकल बिभूषन सजे सरीरा ॥ २ ॥
सकल सुमंगल अंग बनाए। करहिं गान कलकंठि लजाए ॥ ३ ॥
जिन के गान की स्वर सुन कर कोकिल भी लजित होती है ॥३॥ टिप्पणी—मृगसावक = मृगबच्चा।
कंकन किंकिनि नूपुर बाजहिं। चाल बिलोकि कामगज लाजहिं ॥ ४ ॥
कामगज कहिये सुन्दर मातंग किंवा कामदेव का दुरद होवै सो भी जिन के गमन को देखकर लज्जित होवै ॥ ४ ॥टिप्पणी—दुरद = हाथी।

बाजहिं बाजन बिबिध प्रकारा। नभ अरु नगर सुमंगलचारा ॥ ५ ॥
सची सारदा रमा भवानी। जे सुरतिय सुचि सहज सयानी ॥ ६ ॥
कपटनारिबरबेष बनाई। मिली सकल रनिवासहिं जाई ॥ ७ ॥
रमा उमा आदिक जो देवियां हैं सो रघुनाथजी के बिवाह का कौतुक देखने निमित्त छल कर इस्त्रियों के रूप धार कर रानियों के बीच आयां जो कोऊ कहै रानियों ने तिन से क्यों ना पूछा जो तुम कौन हो तिस पर कहते हैं ॥ ७ ॥

करहिं गान कल मंगलबानी। हरषबिबस सब काहु न जानी ॥ ८ ॥
परम सुन्दर तिन के स्वरूपादिक अरु परम रुचिर रीति से गावतियां ताते तिन के प्रताप कर कोऊ पूछ ना सकीं किंवा अपने आनंद मों सभ मगन हैं ताते किसू को बूझ न जानन का अवसर नहीं सोई कहते हैं ॥ ८ ॥

छंद—को जान केहि आनंदबस सब ब्रह्म बर परिछन चली।
ब्रह्मरूपी बर कों जो पूजन चलियां हैं ताते सभी आनंद मो मगन हैं और की पछान कहां रहै॥
कल गान मधुर निसान बरषहिं सुमन सुर सोभा भली ॥
ता समै सुन्दर राग की स्वर अरु नगारों की मधुर ध्वनि हो रही है अरु देवता पुष्प बरषावते हैं तिस की सोभा अति बनी है।

आनंदकंद बिलोकि दूलह सकल हिय हरषित भई।
अंभोजअंबकअंबु उमग्यो अंग पुलकावलि छई ॥
आनंद का कंद कहिए मेघ जो दूलह श्रीरामचंद्र हैं तिन कों देख कै सभ जुबतियां अति प्रसन्न भयां अंभोज कहिये कमल तिनो सम जो अंबक कहिये दृग हैं तिनों मो अंबक कहिये जल सो उमगया अरु तन पर रोमांच हुए। टिप्पणी—कंद = बरसनेवाले बादल। अंभोज = कमल।

दोहा—जो सुष भा सियमातुमन, निरषि रामबरभेष ।
सो न सकहिं कहि कल्प सत, सहस सारदा सेष ॥ ३३२ ॥

माता कों अतिसुख कथन का भाव यह प्रथम चिंतातुर थी पुनः बांछित अनुसार सोता के जोग बर देखा तातें अनिर्बाच सुख कहा किंवा जनक की अरधंगी श्रीरामचंद्र के स्वरूप कों जथारथ जानती थी तातें उस का सुख अनिर्बाच कहा है ॥ ३३२ ॥

नैन नीर हटि मंगल जानी । परिछन करहिं मुदित मनरानी ॥ १ ॥

हरष अरु सोक कर रिदा द्रवीभूत होता है तब हगन्हुं तें जल निकसता है सो जद्यपि उन के नैनहुं तें तो हरष संबंधी जल स्रवैआ था तद्यपि नैनों का स्रवना अपसगुन मान कर जल कों रोक्या अरु प्रसन्न ह्वै के आरती करन लागिआं तदनंतर ॥ १ ॥

स्रुति संमत अरु कुलआचारू । कीन्ह भली बिधि सबव्यवहारू ॥ २ ॥
पंचसब्द सुनि मंगल गाना । पट पांवडे परहिँ बिधि नाना ॥ ३ ॥

पंचशब्द कथ्यते तत बितवन सुखरनाद अर्थ । तततंती बितचरम का, घन कांसी को जान । नाद शब्द घट का कहत, सुखर स्वाम पहिचान ॥ इन को ध्वनि पूरबक मंगलगान करते हैं अरु जहां भूपति पगों चलने लागे हैं तहां अमोलक पट अनेक प्रकारों के आगे बिछावते जाते हैं ॥ ३ ॥

करि आरती अरघ तिन्ह दीन्हा । राम गवन मंडप तब कीन्हा ॥ ४ ॥

प्रथम आरती करी पुनः अरघ कहिए गंध अछ्यत पुष्प मिलाय कें जलांजुली दीनी इस भांति सत-कारत ह्वै कै प्रभों ने तिस बितान में प्रवेश कीना ॥ ४ ॥

दसरथ सहित समाज बिराजें । बिभव बिलोकि लोकपति लाजें ॥ ५ ॥
समै समै सुर बरषहिं फूला । सांति पढहिं महिसुर अनुकूला ॥ ६ ॥

समै समै कहिए जहां गणेशादिकों के पूजन मो अब बिप्र अछत डारते हैं तहां तहां सुरसुमन डारैं अरु बिप्रों ने सांति पढी ॥ ६ ॥ टिप्पणी—लोकपति = इंद्र बरुण कुबेर आदिक ।

नभ अरु नगर कोलाहल होई । आपन पर कछु सुनै न कोई ॥ ७ ॥
एहि बिधि राम मंडपहिँ आए । अरघ देइ आसन बैठाए ॥ ८ ॥

छंद—बैठारि आसन आरती करि निरषि बर सुष पावहीं ।
मनि बसन भूषन भूरि वारहिं नारि मंगल गावहीं ॥
ब्रह्मादि सुरबर बिप्रबेष बनाइ कौतुक देषहीं ।

ननु । बेता मैं ब्रह्मादिकों कों साख्यात आवने की क्या संक्या थी जो बिप्रों के तन धार आए। उत्तर। जो ईश्वर करैं सो प्रमान वा यह बिचार किआ जो हम अपने स्वरूपकर जाय बैठेंगें तो प्रभों कों कैते

लौकिक व्यवहारों में संकोच करना पडेगा यह विप्र वेष होएगा तौ भली रीति सौं सभ कौतुक देखेंगें।

अवलोकि रघुकुलकमलरविछबि सफल जीवन लेषहीं॥

दोहा—नाऊ बारी भाट नट, रामनिछावरि पाइ।

मुदित असीसहिं नाइ सिर, हरष न हृदै समाइ॥३३३॥

नाऊ कहिये जिस कों पंजाब मैं नाई कहते हैं भाट नट प्रसिद्ध बारी नाम पनवारे बनावनवाल्यो का इतर सुगम अब भूपति का मिलना आदिक व्यवहार कहते हैं॥३३३॥

मिलि जनक दसरथ अतिप्रीती। करि बैदिक लौकिक सब रीती॥१॥

मिलत महा दो राज बिराजें। उपमा षोजि षोजि कबि लाजें॥२॥

महाराजे कहिए जे परंपराकर राजाहोहिं किंवा राजपदवी अरु विवेकात्मा होहिं तिन को मिलत्यां देखकर अनेकों कवीश्वरों नें उपमा खोजिआं परंतु॥२॥

लही न कतहुं हारि हिय मानी। इन सम एइ उपमा उर आनी॥३॥

समधी देषि देव अनुरागे। सुमन बरषि जस गावन लागे॥४॥

समधी कहिए नातेदार तिन कों देखकर सुरों कों अति प्रेम भया तब पुष्प बरषाइ कै तिन का जश कहने लागे॥४॥

जग बिरंचि उपजावा जब ते। देषे सुने ब्याह बहु तब ते॥५॥

सकल भाँति सम साज समाजू। सम समधी देषे हम आजू॥६॥

राज व्यवहार अवस्था रूप बुद्धिविवेक कुल उस के पुत्र परमेश्वर उस की कन्या लक्ष्मी इत्यादिक सभों साजों समाजों संजुत सम समधी आज देखे हैं॥६॥

देवगिरा सुनि सुंदर सांची। प्रीति अलौकिक दुहुं दिसि मांची॥७॥

अमरों को बानी सुंदर पद रचना कर किंवा ततवेता जो अपने स्वामी हैं तिन के जस मिस्रित अरु सांची यह जो विशेषता इनो कही है सो सभी इन मो हैं अरु सुरो कों मिथ्यावाद का क्या प्रयोजन ऐसे जान कै दोनो ओर के लोगों मैं अत्यंत प्रेम बढा भाव यह हमारे राजा अमरोंकर ऐसे स्लाघ्य हैं तो हमलोग भी नृसंदेह मुक्ति भागी होहिंगे॥७॥

देत पाँवडे अरघ सुहाए। सादर जनक मंडपहिं ल्याए॥८॥

छंद—मंडप बिलोकि बिचित्र रचना रुचिरता मुनि मनहरे।

राजादशरथ नें मंडप की सुन्दर रचना देखी है जो सुन्दरता मुनीश्वरों के मनों कों हर लेवैं तहां।

निज पानि जनक सुजान सब कहँ आनि सिंहासन धरे॥

राजा जनक ने अपने हाथों भूपतादिकों के बैठने हेतु सिंहासन बिछाए जाते नृप सुजान हैं भाव

यह किसू व्यवहारों सों चूकनेवाला नहीं इहां व्यवहार यह साध्या जो हमारा पक्ष न्यून है अरु यह समा दुरलभ है अरु जैसा इन का सतकार करना मेरे मन मो है तैसा मेरकों मेक्या जानिए न हूं सकै ताते सभों कों आप मंचों पर बैठाया तदनंतर ॥

कुलइष्ट सरिस बसिष्ट पूजे बिनै करि आसिष लही।
कौसिकहिं पूजत परम प्रीति कि रीति तौ न परै कही ॥

कौशिक की पूजा मों प्रेम की विशेषता इस कर कही जो यह रघुनाथजी कों साथ लाए तो मेंने सभ मनोरथ पाए।

दोहा—बामदेव आदिक रिषै, पूजे मुदित महीस।
दिए दिब्य आसन सबहिं, सब सन लही असीस ॥ ३३४ ॥

बहुरि कीन्ह कौसलपति पूजा। जानि ईस सम भाव न दूजा ॥ १ ॥

रिषों के अनंतर नृप कों पूज्या परंतु इस भाव कर के अर्थ यह राजा के चरणोदक कों सिर पर चढाया। आसंका। मुनीश्वरों से पीछे राजा के पूजन का भाव क्या। उत्तर। समधी मनबंध कर तो मिलनी मों तो अरघ पांवडे आदिक दे कर राजा कों पूज्या है अरु इहां मुनीश्वरों का पूजन प्रथम इस निमित्त किया बसिष्टजी राजा के गुर हैं बिश्वामित्र बामदेवादि गुरों के तुल्य हैं अरु सरब रिष तप की निधि हैं उत्तम बरण हैं अरु केवल भाव ग्राहक हैं उन का पूजन प्रथमहीं उचित है राजा दशरथ को भी इस में प्रसन्नता होएगी ॥ १ ॥ टिप्पणी—जान ईस सम। शंकर के समान जानकर।

कीन्ह बहुत बिधि बिनै बडाई। कहि निज भाग्य बिभव बहुताई ॥ २ ॥

समता कर के तिन की बहुत बडाई करी अरु अपने भागों का प्रभाव अमित बरनन किया ॥ २ ॥

पूजे भूपति सकल बराती। समधी सम सादर बहु भाँती ॥ ३ ॥

दशरथ कों इष्टदेव सम जान के पूज्या था अरु जनेतियों कों नृपसम जान के पूज्या ॥ ३ ॥

आसन उचित दिए सब काहू। कहौं कहा मुख एक उछाहू ॥ ४ ॥

उचित आसन कहिए जैसे जैसे बरातियों के भूषण बस्त्रादिक थे तैसे आसन दिये किंवा रितु अनुसार अथवा उन के अधिकार जोग जैसे चाहीते थे तैसे आसन दिए मेरा एक मुख है कैसा कहों किंवा ऐसियों तो उहां अनेक समधियां हैं एक आसनों का आनंद मैं क्या कहों ॥ ४ ॥

सकल बरात जनक सनमानी। दान मान बिनती बर बानी ॥ ५ ॥

सकल बरात कहिए क्षत्रियों से लघु बरन जो थे तिन का भी दान मान मीठा बोलन बिनै आदिक कर आदर किया बिनै कर मिष्ट बोलन का भेद यह वैसों सूद्रों आगे हाथ जोडे अरु जिनों अंत्यजजातों कों स्परस न था करना तिन कों दूर से मीठे बचन कहे ॥ ५ ॥

बिधि हरि हर दिसि पति दिनराऊ। जे जानहिं रघुबीरप्रभाऊ ॥ ६ ॥

जे जानहिं यह पद ब्रह्मादिकों पर भी है अथवा उनों से इतर और भी सुरासुरादिक जो रामचंद्र के सरूप देखते थे ॥ ६ ॥ टिप्पणी—दिशपति = इंद्र बरुन कुबेर आदि । दिनराउ = सूर्य्य । .

कपट बिप्रबरबेष बनाए । कौतुक देषहिं अतिसचु पाए ॥ ७ ॥

कपट बिप्र कहिए मायाकर बिप्रों की न्याईं वेषकरकर कौतुक देखते हैं अरु अति सुख पावते हैं ॥७॥

पूजे जनक देव सम जाने । दिए सुआसन बिन पहिचाने ॥ ८ ॥

जद्यपि वह ब्राह्मण बने तथापि उन का प्रताप छिपाया न रहा ताते जनक ने सुरों सम जान के पूजे अरु पछाने बिनाही स्रेष्टों आसनो पर बैठाए जौं कोऊ कहै जनक ज्ञानवान था उन के जथारथ रूप कों क्यों न जान्या तिस पर कहते हैं ॥ ८ ॥

छंद—पहिचान को केहि जान सबन अपान सुधि भोरी भई ।
आनंदकंद बिलोकि दूलह उभै दिसि आनँदमई ॥

जब सभों कों अपनी देहकी सिमृत नहीं तो और कों कैसे पछान सकै आनंद का मेघ जो श्रीरामचंद्र हैं तिन कों देखकर सरब लोक आनंद मै हुए ।

सुर लषे राम सुजान पूजे मानसिक आसनदए ।

श्रीरामचंद्र सभ बारता के सुष्ट ज्ञाता हैं तिनो ने जान्या देवत्यों का पूजन न करिए तो इन का निरादर होता है तिस निमित्त आपही मानसी आसनादिक कर पूजा करी भाव यह लोगो मों सुरों की प्रगटता न थी करनो जो वह रावन के भै में छिपकर आए थे अथवा बिवाह के समै आसन से उठना न था बनता ताते मनकरही पूजन किआ किंवा मानसी पूजा का फल बिशेष है तिस कर किआ ।

अवलोकि सील सुभाव प्रभु को बिबुधमन प्रमुदित भए ॥

शील अरु सुभाव परजाय भेद हैं परंतु जहां दोनो एकत्र होवहिं तहां शील नाम व्रत का प्रमाण मेदनी शील: सुभावेशदवृते इहां शदवृत कहिए सुरो का शतकार मों देखकर प्रसन्न हुए देवता कहते हैं भगवान जद्यपि हमारे कर पूज्य हैं परंतु अपनी सदवृति कर हम कों पूजते हैं ।

दोहा—रामचंद्रमुषचंद्रछबि , लोचन चारु चकोर ।
करत पान सादर सकल , प्रेम प्रमोद न थोर ॥ ३३५ ॥

तिन के सुंदर चकोर रूपीदृग श्रीरामचंद्रजी के मुखरूपी ससी के छबिरूपी रस कों पान कर के परम प्रेम अरु आनंद कों पावते हैं ॥ ३३५ ॥

समै बिलोकि बसिष्ठ बुलाए । सादर सतानंद सुनि आए ॥ १ ॥

सभा के बीचहीं बशिष्टजी दशरथ के निकट बैठे थे अरु सतानंदजी जनक के समीप बैठे थे बिबाह का समा जानकर बशिष्टजी ने तिन को निकट बोलाया आसा यह बशिष्टजी की आज्ञा उनो पर बनती है जातें वह कन्या।वा।सी हैं तब बशिष्टजी के बैन सुन के सतानंदजी नम्रतासहित आए तदनंतर बशिष्टजी ने कहा ॥१॥

बेगि कुंअरि अब आनहु जाई । चले मुदित मुनिआयसु पाई ॥ २ ॥
रानी सुनि उपरोहितबानी । प्रमुदित सषिन समेत सयानी ॥ ३ ॥

जब रानी नें गुरों की बानी सुनी जानकी के ल्यावन की तब सखिआं सहित प्रसन्न भई सयानी विशेषण का भाव यह गुरों की आज्ञा सुनतेहीं उचित काम कर लिया हरषकर प्रमाद न किया सोई कहते हैं ॥ ३ ॥

बिप्रबधू कुलवृद्ध बुलाई । करि कुलरीति सुमंगल गाई ॥ ४ ॥
नारिबेष जे सुरबरबामा । सकल सुभाउ सुंदरी स्यामा ॥ ५ ॥

जो देविआं नारिआं के तन धर कर आयां हुआ हैं तिन के सुभाउ अरु तन भी सुन्दर हैं अरु स्यामा कहिए षोडस बरषों किआं हैं जाते सुरों की एही अवस्था रहती है ॥ ५ ॥

तिनहिं देषि सुष पावहिं नारी । बिनुपहिचान प्रानते प्यारी ॥ ६ ॥
बार बार सनमानहिँ रानी । उमा रमा सारद सम जाँनी ॥ ७ ॥

हरष बस हुई रानी तिन कों उमा रमा रूप नहीं जनती परंतु तिन के सम जानकर बारंबार सनमान करती हैं ॥ ७ ॥

सीय सँवारि समाज बनाई । मुदित मंडपहिँ चली लवाई ॥ ८ ॥

सीताजी कों संवार कहिय सृंगार कराइ के अरु सखिवों का सुन्दर समाज बनाइ के मंडप की ओर ले चलिआं ॥ ८ ॥

छंद—चली ल्याइ सीतहिं सषी सादर सजि सुमंगल भामिनी ।
नवसप्त साजे सुंदरी सब मत्तकुंजर गामिनी ॥

नवशत कहिए षोडस सिंगार सो कहते हैं । प्रथम सकल सुच मज्जन अमल बास जावक सुदेस केस पास कों सुधारबो । अंग राग भूषन बिबिध मुख बास राग कज्जल कलित लोक लोचन निहारबो ॥ बोलन हंसन चित चातुरी चलन चारु पल पल वृत पतिवृत प्रत पारबो । केसो दास सहुलास करहुकुंअर राधे एहि बिधि षोडस सिंगारन संवारबो ॥ १ ॥

कलगान सुनि मुनि ध्यान त्यागहिं काम कोकिल लाजहीं ।

काम की जो कोऊ कोकला होवैगी तिस की धुनि तौ अति मनोहर होवैगी सो भी जिन की स्वर कर लज्जित होती है ।

मंजीर नूपुर कलित कंकन तालगति बर बाजहीं ॥

मंजीर अरु नूपुर दोनो चरण भूषन हैं अरु क्षुद्रघंटिका भी कलित कहिये सुन्दर है अरु राग की ताल सम उन की धुनि होती है यह उन इस्त्रिवों का गमन का चातुर्ज ॥

दोहा—सोहति बनितावृंद महुं, सहज सुहावनि सीय।
छबिललनागन मध्य जनु, सुषमातिय कमनीय॥ ३३६॥

सहज सुन्दर कहिए जिस की सोभा भूषणादिकों लग नहीं ऐसी जो सीता है सो तिनों जुबतियों मो ऐसी सोभती है जैसे सकल बिश्व की छबीरूपी जुबतियां एकत्र होहिं अरु तिन मों सुखमा कहिए महाछबिरूपी एक सुन्दर तरुनी होइ॥ ३३६॥

सिय सुंदरता बरनि न जाई। लघु मति बहुत मनोहरताई॥१॥
आवत देषि बरातिन सीता। रूपरासि सब भाँति पुनीता॥२॥

जो सीता रूप की निध है अरु पतिब्रतादिक पुनीत गुन सभ जिस बिषे हैं अरु स्वामीनी है तिस कों जब बरातियों ने आवती देख्या तब॥ २॥

सबहिं मनहिं मन कीन्ह प्रनामा। देषि राम भए पूरन कामा॥३॥

सभ लोकों ने मन मों प्रनाम करे जाते मन की भक्ति का फल विशेष है किंवा पानग्रहन का समा समीप पहुंचा है कदाचित सभों कों नमस्कार करते देर लगे अरु अवसर चूक जाए ताते मनमोहीं प्रणाम किया। श्रीरामचंद्र का पूरण काम कहणा व्यवहार दृष्टि कर है किंवा इस पद का अर्थ लोगों की ओर लगावना प्रथम सीता की सुंदरता पुनः रामचंद्र को देखकर पूरण काम कहिए लोग प्रसन्न भये जो भली जोडी जुरी है अथवा सीता ब्रह्मविद्या है अरु रामचंद्र सच्चिदानंद हैं तिन का दरशन कर सभी लोक भी पूरण काम हुये हैं॥ ३॥

हरषे दसरथ सुतन समेता। कहि न जाइ उर आनँद जेता॥४॥

दशरथ कों सुतोंसहित हरष होने का कारण रघुबीरजी के बिवाह की निकटता देखकर॥ ४॥

सुर प्रनाम करि बरषहिँ फूला। मुनिअसीससुनि मंगलमूला॥५॥
गाननिसानकोलाहल भारी। प्रेम प्रमोद नगर नर नारी॥६॥
एहि बिधि सीय मंडपहिँ आई। प्रमुदित साँति पढहिँ मुनिराई॥७॥

शांति कहिये वेदपाठ द्यौ शांतिरंत रिषग्यं शांति इत्यादि जो वेदमंत्र तहां पढने उचित थे सो प्रसन्न हुके मुनीश्वरों ने पढे॥ ८॥

तेहि अवसर कर बिधि ब्यवहारू। दुहुँ कुल गुरु मिलि कीन्ह अचारू॥८॥

आचार कहिये कुलोचित कर्म अरु व्यवहार का विधान दोनो ओर का सो दोनो गुरों ने किया॥८॥

छंद—आचारु करि गुर गौरि गनपति मुदित बिप्र पुजावहीं।
सुर प्रगटि पूजा लेहिं देहिं असीस अति सुष पावहीं॥

और बिवाहों में तो पूजा कृतम इस्थानो पर धरिनी है इहां गणेशादिक देवतास्वरूप धारकर पाद्यादिक अर्चा प्रगट करावते हैं।

मधुपर्क मंगलद्रव्य जो जेहि समै मुनि मन महुं चहैं ।
भर कनककोपर कलस सो सब लिए परिचारक रहैं ॥
दधि बिषे मधु घृत मिलाये सो मधुपर्क इत्यादिक जो मंगल द्रव्य हैं तिन को स्वर्ण के कुंभों अरु तबलशाजों मो डारकर सेवक मुनीश्वरों को ओर देखते रहते हैं जब चाहैं तब देइए ।
कुलरीति प्रीति समेत रबि कहि देत सब सादर किए ।
जो कुल मों हद होती हैं सो सब रीति बतावते हैं सो इहां दोनो कुलों का बडा भानु है सोई सभ रीति कहता है तिसी भांति सभ लोक करते हैं ।
एहि भांति देव पुजाइ सीतहिं सुभग सिंघासन दिए ॥
सिंघासन दिए कहिए देशभाषा मै जिन कों खाचों पर बैठावणा कहते हैं ।
सियराम अवलोकनि परसपर प्रेम काहु न लषि परै ।
सीता अरु रामचंद्र का परसपर देखना अरु प्रेम ऐसी गुह्य रीति सों है जो और कोऊ नहीं जान सकता जातें ।
मनबुद्धिबरबानी अगोचर प्रगट कबि कैसे करै ॥
लोगों की क्या बात है प्रभों का प्रेम रस मन बुद्धि सें परे है तो कवि की बानी कैसे कहे ।
दोहा—होम समै तन धरि अनल, अतिहित आहुति लेहिं ।
बिप्रबेष धरि बेद सब, कहि बिवाहबिधि देहिं ॥३२७॥
जनकपाटमहिषी जग जानी । सीयमातु किमि जाइ बषानी ॥ १ ॥
जनकजी कियां रानियां अनेक थियां तिनो में पाटमहिषी कहिए पटरानी जो सीताजी की माता है जिस के गुण अनूपम हैं ॥ १ ॥
सुजस सुकृत सुष सुंदरताई । सब समेटि बिधि रचीबनाई ॥ २ ॥
पतिब्रतादिक जस दानादिक सुकृत पतिआज्ञा माननादिक सुख अरु रूप की सुंदरता यह सभ एकत्र कर के मानो बिधाता नें तिस का तन रचा है ॥ २ ॥
समै जानि मुनिबरन्ह बुलाई । सुनत सुआसिनि सादर ल्याई ॥ ३ ॥
राजा रानी ने एकत्र बैठ के सीता का पानिग्रहन करावना है सो समा समीप जान के मुनीश्वरों ने रानी कों बोलवाया तब सुआसिन कहिए सौभागवतियां तरुनियां शीघ्र ही तिस कों ले आयां ॥ ३ ॥
जनकबामदिसि सोह सुनयना । हिमगिरि संग बनी जनु मैना ॥ ४ ॥
जनक जी सुनैना के बामदिसा सो सोभते हैं । सिमंतेच बिवाहेच चतुर्थ्यांसहभोजने । ब्रतेदानेमखे श्राद्धे पत्नीतिष्टतिदक्षिणे ॥ ४ ॥ टिप्पणी—मैना जिस की कन्या पारबती हैं ।

कनक कलस मनि कोपर रूरे । सुचिसुगंधमंगलजलपूरे ॥ ५ ॥

स्वर्ण के अरु मनिअहुं के कलश अरु तबलबाज पवित्र अरु सुगंधित अरु मंगल व्यवहार संबंधी जो जल हैं तिनो कर पूरित ॥ ५ ॥

निज कर मुदित राय अरु रानी । धरे राम के आगे आनी ॥ ६ ॥

जद्यपि वह कलश सेवकों ने ल्यावने थे परन्तु प्रभों की सेवा समुझ कर प्रसन्न भए जो राजारानी हैं तिनो ने आप ही उठाय आने ॥ ६ ॥

पढहिं बेद धुनि मंगल बानी । गगन सुमनझरि अवसर जानी ॥ ७ ॥

पीछे तो अमर मरजादा के पुष्प बरषावते थे अब सुअवसर देख कर सुमनों की झरी लगाई ॥७॥

बर बिलोकि दंपति अनुरागे । पाय पुनीत पषारन लागे ॥ ८ ॥

दंपति कहियें पति त्रिय इतर सुगम ॥ ८ ॥

छंद—लागे पषारन पायपंकज प्रेम तन पुलकावली ।
नभ नगर गाननिसानजै धुनि उमगि जनु चहुं दिसि चली ॥

आकाश बिषे अरु पुर बिषे जो राग के अलाप अरु दुंदुभी के शब्द हुए हैं तिन की धुनि मानो चारो दिस उमग चली है इहां जनु पद कथन का आसै यह जंत्रियों के बल कर ध्वनि नहीं पसरी माना अपनी इच्छा कर लोगों को खुसी की खबर देने चली है ॥

जे पदसरोज मनोजअरिउर सर सदैव बिराजहीं ।
जे सुकृत सुमिरत बिमलता उर सकल कलिमल भाजहीं ॥

शंकरजी के रिदैरूपी सरोवर बिषे कमलहुं सम जो पद बिराजते हैं अरु जो सुकृती तिनों का ध्यान करते हैं तिन के मन निस्ताप अरु निरमल होते हैं मनोजअरि कथन से शिवजी के रिदे की सीतलता सूची जाते निस्काम रिदेही सीतल होते हैं अरु ॥ टिप्पणी—मनोजअरि = शंकर ।

जे परसि मुनिपतनी लही गति रही जो पातकमई ।
मकरंद जिन को संभुसिर सुचिता अवधि सुर बरनई ॥

जिन चरनारबिंदों की रस रूपी मकरंद गंगा रूप शंकरजी ने सिर पर धारी है जिस को देवता पवित्रता की अवधि बरनन करते हैं ॥

करि मधुप मनमुनि जोगिजन जिन सेइ अभिमत गति लहैं ।
ते पद पषारत भाग्यभाजन जनक जै जै सब कहैं ॥

मुनीश्वर अरु जोगीश्वर अपने मनो कों भ्रमरोंसम कर कै जिनोचरणारविंदो कों सेवते हैं अरु बांछित पावते हैं तिनों को बडभागी जनक धोवता है अरु सभ लोग जै जै करते हैं ॥

बर कुंअरि करतल जोरि साषोच्चार दौ कुलगुरु करैं।
भौ पानिग्रहन बिलोकि बिधि सुर मनुज मुनि आनँद भरैं॥

दूलह अरु दुलहिनी के करतल जोरन करिए रामचंद्र के दाहिने हाथ पर सीताजी का दखिन कर धरा तिस पर बाम कर दै कै संपुट किया तिस पर रघुनाथजी का बामहस्त दै कर चारो हाथ एकत्र किए तब दोनों गुरो ने कुलो के गोत्राचार पढे इस भांति पानिग्रहन देख कर सभ कों आनंद भया।

सुषमूल दूलह देषि दंपति पुलक तन हुलस्यो हियो।
करि लोकबेदबिधान कन्यादान नृप भूषन कियो॥

प्रभों प्रति नृप के कन्यादान करण पर दृष्टांत कहते हैं।

हिमवंत जिमि गिरिजा महेसहि हरिहिं श्रीसागर दई।
तिमि जनक रामहि सिय समरपो बिश्व कल कीरति नई॥

कैसी है सीता जो बिश्व बिषै सौंदर्ज अरु कीरति मै है अपर सपष्ट।

क्यों करै बिनै बिदेह कग्यो बिदेह मूरति साँवरो।

तिस समै राजा जनक कों बिनै करनी उचित थी परंतु सांवरी मूरति कों देखकर राजा बिशेष बिदेह होए गया है ताते बेनती कैसे करै।

करि होमबिधिवत गाँठि जोरी होन लागी भाँवरी॥

दोहा—जैधुनि बंदीबेदधुनि, मंगल गान निसान।
सुनि हरषहिँ बरषहिँ बिबुध, सुरतरुसुमन सुजान॥ ३३८॥

आगे तौ देवता और पुष्प बरषावते थे जब श्रीरामचंद्र का बिवाह देखा तब प्रसन्न हूै कर कल्पबृक्ष के फूल बरषावन लगे जाते सुजान हैं॥ ३३८॥ टिप्पणी—सुरतरु सुमन = कल्पबृक्ष के फूल।

कुंअरि कुंअर कल भाँवरि देहीं। नैन लाभ सब सादर लेहीं॥ १॥

बर दुलहिनी की प्रदक्षना करणे की रीति देखकर सभ नेत्रों का लाभ लेते हैं॥ १॥

जाइ न बरनि मनोहर जोरी। जो उपमा कछु कहौं सो थोरी॥ २॥

श्रीरामचंद्रजी की अरु सीताजी की जो सुंदर जोडी जुडी है तिस की उपमा लाइक तौ कोऊ है नहीं परंतु काव्य की रुचिरता हेतु तिन के थंभो मों प्रतिबिंब की उपमा कहते हैं॥ २॥

रामसीय सुंदर प्रतिछाहीं। जगमगात मनि षंभन माहीं॥ ३॥
मनहुं मदन रति धरि बहु रूपा। देषत रामबिवाह अनूपा॥ ४॥

खंभ में जो अनेक मणियां लगिया हुयां हैं तिनो सभो मैं प्रभों के प्रतिबिंब देखिते हैं सो मानो

कामदेव अरु रति बहुतेरूप धारकर प्रभों के बिवाह का कौतुक देखते हैं जौं कोऊ कहै प्रगट ह्वै कर दरसन क्यों नहीं करते तिस पर कहते हैं॥ ४॥

दरसलालसा सकुच न थोरी। प्रगटत दुरत बहोरि बहोरी॥ ५॥

उन को रामचंद्र के दरसन की लालसा है अरु शंकरजी जो तहां बैठे हैं तिन से भै है ताते मानो श्रीरामचंद्र के संग फिरते हैं तत्व यह जिस ओर प्रभु आवते हैं तिसी ओर मणिवों में भासते हैं इतो- वोर गुप्त होते हैं॥ ५॥

भये मगन सब देषनिहारे। जनक समान अपान बिसारे॥ ६॥

ऐसे कौतुक देख के सभी मगन भए मानो जनकवत सभी बिदेह हुये हैं॥ ६॥

प्रमुदित मुनिन्ह भांवरी फेरी। नेग सहित सब रीति निबेरी॥ ७॥

नेग कहिये जो प्रोहितादिकों कौं लाग दान मिलता है सो सभदे कै वह कारज समाप्त किया॥७॥

राम सीयसिर संदुर देहीं। सोभा कहि न जात बिधि केहीं॥८॥

श्रीरामचंद्रजो जो सीताजी के सीस पै सिंदूर चढावते हैं तिस की सोभा किसूभांति कही नहीं जाती जौं कोऊ कहै आगे सोभा क्यों कही है तो पूरण पद का अध्याहार कर के अर्थ करणा प्रभों के सिंदूर चढावने को जो संपूरण सोभा है सो किसी बिधि कही नहीं जाती किंवा तिस सोभा कथन कों बिध के हिये विषे भी जाय कहिये स्थान नहीं तौ मैं कैसे कहों परंतु तनक एक सोभा कविता की रुचिरता हेतु गम्य उत्प्रेक्ष्याकर कहता हों॥ ८॥

अरुन पराग जलजभरि नीके। ससिहिं भूष अहिलोभ अमी के॥ ७॥

मानो अरुण पराग कों अपने मों भर कर नीकी भांति कमल चंद्रमा कों भूषे अहि कहिये भूषित करते हैं अर्थ यह पूजते हैं अमृत की प्राप्ति निमित्त अथवा अमृत नाम जल का भी है इहां पद अन्वै करना परन्तु दूरन्वै है नीके जल की प्राप्त निमित्त कमल चंद्रमा कों पूजते हैं प्रयोजन यह सामान जल मो तो हम सदा रहते हैं नीके कहिये विशेष अमृत जो कबी सूखे नहीं तिस को इच्छा ससी सें करते हैं तैसे हस्तकमल प्रभु के रसरूपी अमृत के लोभ कर सोताजो के मुखरूपी मयंक कों मानो भूषित करते हैं कईएक अहि नाम सरप का कहते हैं कमल पद हाथों का भिन्न अहि पद भुजा का भिन्न सो बनता नहीं जो बिवाह मंगल का समा है अरु सीताजी कों रामचंद्र का प्रथम स्परस है इहां नागों को उपमा देनी भुजा कों क्या जोगता है॥ ७॥

बहुरि बसिष्ठ दीन्ह अनुसासन। बर दुलहिनि बैठे एक आसन॥८॥

छंद—बैठे बरासन राम जानकि मुदित मन दसरथ भए।
तन पुलक पुनि पुनि देषि आपन सुक्रत सुरतरुफल नए॥

अपने पुन्यरूपी कल्पद्रुम के फल जो हैं पुत्र अरु सुनुखा सो देख कर राजा प्रसन्न होता है।

भरि भुवन रहा उछाह रामबिबाह भा सबहीं कहा ।
केहि भाँति बरनि सिरात रसना एक एह मंगल महा ॥

सरब ब्रह्मांड मों उत्साह पूर्या जाते सभों कों रमावनेहारे अरु सरब मों रमे हुये जो श्रीरामचंद्र हैं तिन का बिवाह भया एह बात सभ लोक कहते हैं अरु जेता यह मंगल हुआ सो मैं एकरसनावाला कैसे कह सकता हों जब रघुबीरजी का बिवाह हुइ रहा तब बसिष्ठजी नें राजा कों कहा तुमारे गृह बिषे तीन कन्या और हैं अरु हमारे भी तीनो पुत्र और हैं ताते ऐसा संजोग कहां बनता है अबी उन को बुलवावो अरु मंगल करो ॥

तब जनक पाइ बसिष्ठ आयसु ब्याहसाज सँवारिकै ।
मांडवी स्रुतिकीरति उर्मिला कुंअरि लइ हँकारिकै ॥

इन का क्रम इस भांति था मांडवी अरु स्रुतिकीरति यह दोनो बेटिआं राजा के भ्रात कुशध्वज किआं अरु उरमिला बेटी राजा की पुनः सीताजी में लघु मांडवी रामचंद्र से लघु भरत मांडवी से लघु उरमिला भरत से लघु लख्यमन उरमिला से लघु स्रुतिकीरति लख्यमन से लघु शत्रुघन सोई कहते हैं ॥

कुसकेतुकन्या प्रथम जो गुनसील सुष सोभामई ।
सब रीति प्रीति समेत करि सो ब्याहि नृप भरतहिं दई ॥
जानकी लघुभगिनी सकल सुंदरि सिरोमनि जानि कै ।
सो जनक दिन्ही ब्याहि लषनहिँ सकल बिधि सनमानिकै ॥
जिहि नाम स्रुतिकीरति सुलोचनि सुमुषि सब गुनआगरी ।
सो दई रिपुसूदनहिं भूपति रूप सील उजागरी ॥

इन कथन मों अवस्था का क्रम मिला पुनः रामचंद्र अरु लख्यमन दोनो जनक के घर बिवाहे भरत अरु शत्रुहन को कुशकेतु की कन्या बिवाहिआं द्वितीय क्रम ओर कहते हैं ।

अनुरूप बर दुलहिन परस्पर लषि सकुचि हिय हरषहीं ।

अनरूप कहिये मिलत रूप तत्व यह श्रीरामचंद्र अरु भरत स्यामबरण सीता अरु मांडवी गौरबरण लख्यमन अरु रिपुसूदन गौर बरण उर्मिला अरु स्रुतिकीरति अलसी के सुमनवत स्यामबरण सो आपस मों देखते हैं अरु बडे समाज कर सकुचते हैं अरु प्रसन्न होते हैं जो हमारे भले संजोग भए वा अनरूप कहिये जैसे पति सुन्दर तैसिआं जुबतिआं सुन्दर तिन को परस्पर देख कर कहिए कबी कुमारों को ओर देखणा कबी कुमारिवों की ओर पुर लोग देखकर राजा के भै से सकुचते हैं अरु मन मो प्रसन्न होते हैं ।

सब मुदित सुंदरता सराहहिं सुमन सुरगन बरषहीं ॥
सुंदरी सुंदर बरन जुत सब एक मंडप राजहीं ।

जनु जीवउर चारी अवस्था बिभुन सहित बिराजहीं॥

चारी अवस्था कहिए जागृत स्वप्न सुषुप्ति तुरीआ तिन के बिभु कहिए स्वामी बिस्व तैजस प्राज्ञ सुत्रात्मा जैसे वह मिल कर जीव के हिदै मो बिराजते हैं तैसे चारी कुमार चारो शक्तों संजुत उस मंडप मो सोभते हैं और दृष्टांत कहते हैं॥

दोहा—मुदित अवधपति सकल सुत, बधुन्ह समेत निहारि।
जनु पाए महिपालमनि, क्रियन सहित फल चारि॥३३९॥

चार फल कहिए धरम अर्थ काम मोक्ष क्रया कहिये तिन के साधन इहां दृष्टांत का एक अंग ग्रहण करणा फलरूप कुमार अरु क्रयारूप दुलहिनिआं अथवा धरमादिकों कर जो सुख भोग हैं सो कहिये क्रया इस भांति दृष्टांत की बिषमता भी मिटी॥ ३३९॥

जस रघुबीर ब्याहबिधि बरनी। सकल कुँअर ब्याहे तेहि करनी॥ १॥

बिवाह का प्रकार एकही है तातें इहां संक्षेप किआ है॥ १॥

कहि न जाइ कछु दाएज भूरी। रहा कनक मनि मंडप पूरी॥ २॥
कंबल बसन बिचित्र पटोरे। भाँति भाँति बहु मोल न थोरे॥ ३॥

रतन कंबल एक पसमीने के उत्तम बस्त्रों का भेद है और सुन्दर पटंबर अनंत रंगहुं के अरु बडे मोल के॥३॥

गज रथ तुरग दास अरु दासी। धेनु अलंकृत कामदुहासी॥ ४॥

कामदुहासी कहिये कामधेनु जैसिआं इतर सुगम॥ ४॥

बस्तु अनेक करिय किमि लेषा। कहि न जाइ जानैं जिन देषा॥ ५॥
लोकपाल अवलोकि सिहाने। लीन्ह अवधपति सब सुष माने॥ ६॥

सिहाने नाम सीतल होन का अरु सलाहन का भी॥ ६॥

दीन्ह जाँचकन्हि जो जेहि भावा। उबरा सो जनवासेहिं आवा॥ ७॥

जो पदारथ जांच को जांचे सो तिन को दिए जो रहे सो डेरे को पठाए दिए॥ ७॥

तब कर जोरि जनक मृदुबानी। बोले सब बरात सनमानी॥ ८॥

छंद—सनमानि सकल बरात आदर दान बिनै बडाइकै।
प्रमुदित महामुनि बृंद बंदे पूजि प्रेम लडाइकै॥

बरातिवों को जो देना जोग्य था सो मानपूरबक अरु बिनैपूरबक दिआ तदनंतर जो मुनीश्वर उहां थे तिन को प्रेम कर पदार्थ दिए अरु पूजा करी॥

सिरनाइ देव मनाइ सबसन कहत करसंपुट किए।

देवन कों मनाइ कर पुनः हाथ जोर सभ कों शिर नवाइकर राजा कहता है देवन कों मनावन का भाव यह तुम ने कृपा कर के सभों का चित प्रसन्न करणा किंवा लोगों को देवों सम मनाय कर फिर हाथ जोड के कहता है।

सुर साधु चाहत भाव सिंधु कि तोष जल अंजलि दिये।

जैसे सिंधु जलांजुली सों तृप्ति नहीं होता परंतु सेवक का भाव लेता है तैसे तुम ने मेरी प्रीति ग्रहण करणी पदार्थों को तुच्छ जा को ओर ना देखना इस भांति सभ लोगन प्रति कहि कर।

कर जोरि जनक बहोरि बंधु समेत कोसल राय सों॥
बोले मनोहर बैन सान सनेह सील सुभाय सों।
संबंध राजन रावरे हम बडे अब सब बिधि भए॥
एह राज साज समेत सेवक जानबो बिनु गथ लए॥

हे भूप शिरोमणि आप के पदारबिंदों साथ जो हमारा नाता भया और हमारी सभ भांति कर बडाई भई और हम क्या कहें इस राजादिक पदार्थों संजुत तुम ने हम कों धन खरचे बिनाही मोल लिया है।

एदारिका परिचारिका करि पालबी करुना मई।

दारा नाम इस्त्री का है तिन में दारिका पद लघुता निमित्त कन्या का नाम कहा चारका नाम चारों का है करुणा मय यह चारो कुमारियां हैं पर पालनों करिया इन को सभी भांति सें पालना करनी किंवा परिचारिका नाम भी किंकरियों का है यह जो कुमारियां दासिआ हैं इन का राजकुमारी जानकर मान नहीं करना आप ने मोल लीनियां किंकरियांवत जानकर इन का पालन करना।

अपराध छमिबो बोलि पठए बहुत हौं ढीठो दई॥

हे महाराज उचित एह थी कन्यां लेकर हम सकुटुंब जाते पास अजोध्या बीच विवाहकर देते परंतु लोकाचार निमित्त तुम को इथां बोलाय भेज्या है यह हमारा अपराध छिमा करना और भी बहुत ढीठो कहिए बडाई दई।

पुनि भानुकुलभूषन सकल सनमान बिधि समधी किए।
कहि जात नहिं बिनती परस्पर प्रेम परि पूरन हिए॥

राजा दशरथ ने भी समधी का सनमान का समूह किया जो हम तुमारे संबंधकर कहियें की गिनती मो आज भए हैं इत्यादिक अतिनम्रता करी।

बृंदारिकागन सुमन बरषहिं राउ जनवासहिं चले।
दुंदुभी जै धुनि बेदधुनि नभ नगर कौतूहल भले॥

बृंदारिका कहिए देवता अपर सुगम।

तब सखी मंगल गान करत मुनीसआयसु पाइ कै ।
दूलह दुलहिनिन सहित सुंदरि चलीं कोहबर नाइ कै ॥

कोहबर नाम हासभवन का जहां बैठकर हांसबिलास करते हैं तहां सखियां बर कन्यान कों नाइ कै कहिये लै कै गयीं ।

दोहा—पुनि पुनि रामहिँ चितव सिय, सकुचति मन सकुचै न ।
हरत मनोहर मीन छबि, प्रेम पियासे नैन ॥ ३४० ॥

प्रेम कर सीता बारंबार श्रीरामचन्द्र की ओर देखती है सखियों का समाज जानकै तन तौ प्रभों के स्परस से सकुचता है अरु मन नहीं सकुचता है जाते प्रसन्न हैं अरु प्रेम कर प्यासे जो सीताजी के दृग हैं सुंदर मीनो की चपलता कों भी हरते हैं अब प्रभों का ध्यान कहते हैं ॥ ३४० ॥

स्याम सरीर सुभाव सुहावन । सोभा कोटि मनोज लजावन ॥ १ ॥
जावक जुत पदकमल सुहाए । मुनिमनमधुप रहत जिन्हि छाए ॥ २ ॥

जावक के लगावने कर चरण अतिलाल सुन्दर कमलोंवत भए हैं जिन मुनीश्वरों के मन भ्रमरों सम बसते हैं ॥ २ ॥

पीत पुनीत मनोहर धोती । हरत बालरबिदामिनिजोती ॥ ३ ॥

बालरबिजोति कहिए प्रात के भानु की प्रभा कों अरु तड़िता की जोत कों सुन्दर धोती लजावती है ॥ ३ ॥

कल किंकिनि कटिसूत्र मनोहर । बाहुँ बिसाल बिभूषन सुंदर ॥ ४ ॥

कटिसूत्र कहिये कटिदेश की रचना किंवा कटिसूत्र किंकनी से भिन्न भूषन भी होता है ॥ ४ ॥

पीत जनेऊ अतिछबि देई । करमुद्रिका चोरि चित लेई ॥ ५ ॥
सोहत ब्याह साज सब साजे । उर आयत उर भूषन राजे ॥ ६ ॥

आयत कहिये बिशाल इतर सुगम ॥ ६ ॥

पीअर उपरना कांषा सोती । दुहुं आँचरन लगे मनि मोती ॥ ७ ॥

पीतबरन का जो उपरना है सो कांखासोती कहिए दोनो कंध्यो पर धरा हुआ है अरु दोनो वोर अंचल्यो मों मणिआं अरु मुक्ता लगे हुये हैं ॥ ७ ॥

नैन कमल कल कुंडल काना । बदन सकल सौंदर्ज निधाना ॥ ८ ॥
सुंदर भृकुटि मनोहर नासा । भाल तिलक रुचिरता निवासा ॥ ९ ॥
सोहत मौर मनोहर माथे । मंगल मै मुकुतामनि गांथे ॥ १० ॥

मुक्तामनि जटित अरु जिस मों गनपतादिक चिन्ह मंगल रूप मनिन कृत बने हुये हैं ऐसा मौर कहिये मुकुट मस्तक पर सोभता है ॥ १० ॥

छंद—गाथे महामनि मौर सुंदर अंग सब चितचोरहीं ।
पुरनारि सुरसुंदरी बरन बिलोकि सब टनतोरहीं ॥

सुंदर सरूप देखकर इस्त्रियों कों भ्रम पडता है जो हमारी दृष्टि का आवेश इहां होजावेगा तिस दोष के नेवारनार्थ पुरस कियां नारियां अरु सुरीकियां रमनियां तृण तोरतियां हैं वा राजकुमारों का दुलहिनियां संजुत देखकर इतर लोगों पर गिलान कर तिन का तोडतियां हैं तत्व यह वर बरनो का संजोग एही देखा है और का तो जन्मही व्यर्थ है अथवा श्रीरामचद्र का दरसन देखकर मानों मन को बोर सें मोह का तिनका तोडतियां हैं श्रीरामचंद्र की आर जोडने निमित्त ।

मनि बसन भूषन भूरि वारहिं नारि मंगल गावहीं ।
सुर सुमन बरिषहिं सूत मागध बंदि सुजस सुनावहीं ॥
कोहबरहिं आनै कुंअरि कुँअर सुआसिनिन्ह सुष पाइकै ।

जिस मंदिर मां हलदी का छापा लगाइ कर गणपति का अस्थापन करना अरु तहां बर कन्या कों लौकिक रीति निमित्त प्रणाम कराइ कै बैठारना सो मंदिर कहिये कोहबर तहां सुआसिन कहिए सोभागवतियां तरनियां प्रसन्न ह्वै कै प्रभों कों भी लै आयां अरु ।

अति प्रीत लौकिक रीति लागो करन मंगल गाइकै ॥

अति प्रेम सो तिस समै के गीत गावतियां हैं अरु लौकिक रीति कहिये उचित अनुचित व्यवहार हास्य निमित्त करतियां हैं प्रथम रीति यह लाम देतियां हैं दानो का जो नम परसपर मुख मा देवे दुतीय रीति यह पति से परोख्य कन्या के मुख मो खाप की गरी का लाम देकर समुझाय छोडतियां है तूं इस कों दातों मैं पीस कर मुख मो धर तब दूलहु कों कहतियां हैं तुम इस का घूंघट खोलकर मुख देखो जब वह मुख देखन लागता है तब दुलहिनी वह उस के मुख पर डार देती है तब बडा हास्य होता है तृतीय रीति यह है जल दूध मिलाय कर बड पात्र मे डारतियां है पुनः उस मों अंगूठी डार देतियां हैं अरु बर कन्या को कहतियां ह तुम दोनो हाथ डारकर निकासो तब वह हाथ डारते हैं जो कन्या ने मुंदरी निकास लीनी तो उस को जीत भई जो दूलह ने निकास लीनो तब उस को जीत भई इस भांति सात बेर करतियां हैं सखिआं भी दोनो पखां कियां बणातियां है माई कहतियां हं ।

लहकौरि गौरि सिषाव रामहिँ सीय सन सारद कहैं ।
रनिवाँस हासबिलासरसबस जन्म को फल सब लहैं ॥

प्रथम रीति को टीका लह कहिये देखकर कौर कहिये लाम सुंदर भोजन जो आगे आन धरा है गौरी रघुनाथजी कों प्रीति पूरबक कहती हैं तुम रामचंद्र के बदन मों कौर देवो जब परस्पर देते हैं तब सखियां सभ बडे आनंद कों पावतियां हैं इस अर्थ करे प्रथम क्रीडा सिद्ध भई व लहि कहिए जानकी के मुख मों गरी का ग्रास देखकर भवानी रघुनाथजी को सिखावती है जब तुम घूंघट खोलोगे तब दुलहिनी तुमारे

मुख पर याम डार देवेगी तुम ने ऐसो बिधि करनी मुख भी देखो अरु उच्छिष्ट भी मुख पर ना परै अरु सारदा बैठेहो प्रति कहती है जब रघुनाथजी ने घूंघट खोल्या अरु मुख सन्मुख किया तब तुम ने ऐसो शीघ्रता करनी जो उच्छिष्ट उन के मुख परहो परै इस भांति जब रामचंद्र ने मुख खोल्या अरु सीताजी ने फुरक चलाया कुछुक दूलह के मुख पर पडा तब बडा हांसविलास भया इस अर्थ करै द्वतीय क्रीडा सिद्ध भई किंच कौर नाम अंक का है लहिकौर कहिये देखकर अपनी गोद विषे श्रीरामचंद्र की मनोहर मूरति गोरी सिखया देती है यह दूधमहं अगूठी डारो है इस को तुम शीघ्र कर प्रथम पकड लेवो जो तुमारो जीत होवै अरु सीताजी को सारदा सिखावती है मुंदरी शीघ्रता कर प्रथम तुम पकडो जब दोनो हाथ डारते हैं कबो एक के हाथ में आवती है कबो एकठा दोनो का हाथ परता है तब आपुस में खैंचा खैंची करते हैं तब बडा हासरस होता है।

निज पानि मनि महुं देषि प्रतिमूरति सुरूपनिधानकी।
चालति न भुजबल्ली बिलोकनि बिरहबसभइ जानकी॥

जब अंगुठी सीताजी ने हाथ में धरी तब उस की मणि में जो परा है सन्मुख श्रीरामचंद्र का प्रतिबिंब तिस को देखकर सीताजी को भया है आनंद अरु सन्मुख दरसन की लज्या है अरु अंगुठी की मनि मा मूरति प्रगट देखती है तब सीता मुंदरी को हाथ माहो धरि राखा है उस समें सखिआं कह तिआं हैं मुंदरी दूध में डारो तो डारने पर जानकी की भुजाबल्ली चलती नहीं जो उस प्रतिबिंब के देखने का मैथली का बिरह होता है इस अर्थ में त्रितीय क्रीडा सिद्ध भई।

कौतुक बिनोद प्रमोद प्रेम न जाइ कहि जानहिं अली।
बर कुंअरि सुंदर सकल सषी लवाइ जनवासहिं चली॥

तिस समें के कौतु को के जो आनंद है सो और कोशक कथन की नहीं वह सखिआंही जानतिआं हैं इस भांति तहां क्रोडा कराय के राजा के डेरे को वार दूलहिनी की चरण धारवन निमित्त ले चलिआं।

तेहि समै सुनिअ असीस जहँ तहँ नगर नभ आनंद महा।
चिरुजिअहु जोरो चारु चारो मुदित मन सबही कहा।
जोगिंद्र सिद्ध मुनीस देव बिलोकि प्रभु दुंदुभि हनी॥
ग हरषि बरषि प्रसून निज निज लोक जै जै जै भनी।

दोहा—सहित बधूटिन कुँअर सब, तब आए पितु पास।
सोभा मंगल मोद भरि, उमग्यो जनु जनवास॥ ३४१॥

दूलहिनिआं सहित दूलह चारो जब पिता पास आए तब सभों का मंगल मोद संयुक्त मानो जनेत उमगी है इहां उत्प्रेख्या का अर्थ यह शरीरों कर तो सभ बैठे रहे हैं अरु रिदे सभों के उमगे हैं॥ ३४१॥

पुनि जेवनार भई बहु भांती । पठए जनक बोलाइ बराती ॥ १ ॥
परत पाँवडे बसन अनूपा । सुतन समेत गवन किय भूपा ॥ २ ॥
अनूपम जो बस्त्र है तिन को पांवडे करते हैं अर्थ यह तिन पर पुत्रों संयुत राजा पग धरता जाता है ॥२॥
सादर सब के पांय पषारे । जथाजोग पीढन बैठारे ॥ ३ ॥
पीढन कहिये मूढ चौकियां कुरसियां चरण धोय कर प्रथम सभों को तिनों पर बैठाया ॥ ३ ॥
धोए जनक अवधपतिचरना । सील सनेह जाइ नहिं बरना ॥ ४ ॥
जिस भांति नम्रता अरु प्रेम कर राजा जनक ने नृप दशरथ के चरन धोये हैं सो कहा नहीं जाता ॥४॥
बहुरि रामपदपंकज धोए । जे हरहृदैकमल महँ गोए ॥ ५ ॥
गोए कहिए छपाए गोए अपर सपष्ट ॥ ५ ॥
तीनो भाइ राम सम जानो । धोए चरन जनक निज पानी ॥ ६ ॥
आसन उचित सबहिँ नृप दीन्हे । बोलि सूपकारी सब लीन्हे ॥ ७ ॥
तब भोजन के जोग्य पृथ्वी पर आसन दिये अरु रसोई करणहारे सभ बुलाए ॥ ७ ॥
सादर लगे परन पनवारे । कनक कील मनि पान सँवारे ॥ ८ ॥
भोजन निमित्त पत्तलांद् ने आगे धरते हैं सो जनक ने पत्र बनाए पनिवों के जाते पत्रों के रंग सबुज होते हैं अरु बीच कील लगाये स्वर्ण के जाते कीलों का रंग जरद होता है ॥ ८ ॥

दोहा—सूपोदन सुरभी सरपि, सुंदर स्वाद पुनीत ।
छिन मैं सब कहं परसि गे, चतुर सुआर बिनीत ॥ ३४२ ॥

कवियों की रीति है प्रथम सिद्धअन्न भोजन देना तिस कर सूपोदन कहिये दाल भात सुरभी सरपि कहिये गऊ का घृत जाते अति पवित्र है परंतु बहुत सुन्दर स्वादवंत बना हुआ तिस को चतुर जो सुआर कहिये परोसनवाले हैं सो बिनै संयुत खण में परोस गए सुआरों का चातुर्य यह भोजन सभ सभों को पहुंचाय देने मान पूरवक अरु शीघ्रता बडी ॥ ३४२ ॥

पंच कवलि करि जेवन लागे । गारि गानसुनि अति अनुरागे ॥ १ ॥
पंच कवल कहिए प्रथम पंचग्रास प्राणों को आहुतियां देनियां प्राणाय स्वाहा अपानाय स्वाहा इत्यादिक कर के [illegible] लागे अरु जुबतियों की गारी सुन के परम प्रसन्न भए तिस दाल भात उपरांत ॥१॥
भांति [illegible] पर पकवानें । सुधा सरिस नहिं जाहि बषानें ॥ २ ॥
पकवान [illegible] अमृत सम रसवंत अरु अनेक भेदों के ॥ २ ॥
परसन लगे [illegible]आर सुजाना । बिंजन बिबिध नाम को जाना ॥ ३ ॥
चारि भांति [illegible]जनबिध गाई । एक एक बिधि बरनि न जाई ॥ ४ ॥

चार प्रकार कहे हैं भोजन के लेह्य पेह्य भक्ष्य चोष्य आगे एक एक के अनेक भेद स्वादीक बनाए हुए जिन का रस कथन मों न आवे ॥ ४ ॥

छरस रुचिर बिंजन बहु जाती। एक एक रस अगनित भांती ॥ ५ ॥

मधुर कटुक अमल तिक्त लवन कखाय यह खटरस रुचिर कहिए देखने बिषे सुन्दर अरु अनेक जातों के द्रव्य तिन मों रींधे हुए आगे एक एक रस के मिस्रित अनेक भेद किए हुए ॥ ५ ॥

जेंवत देहिँ मधुर धुनि गारी। लै लै नाम पुरुष अरु नारी ॥ ६ ॥
समै सुहावनि गारि बिराजा। हँसत राउ सुनि सहित समाजा ॥७॥
एहि बिधि सबहिन भोजन कीन्हा। आदर सहित आचमन दीन्हा ॥८॥

दोहा—देइ पान पूजे जनक, दसरथ सहित समाज।
जनवासेहिँ गवने मुदित, सकलभूपसिरताज ॥ ३४३ ॥

प्रथम पान खवाय अरु पीछे जो कुछ द्रव्यादिक देश रीति थी सो दे कै सभों की पूजा करी तब हरषित हुआ नृप समाज सहित डेरे कों चला ॥ ३४३ ॥

नित नूतन मंगल पुर माहीं। निमिष सरिस दिन जामिनि जाहीं ॥१॥
बड़े भोर भूपति मनि जागे। जाँचक गुनगन गावन लागे ॥ २ ॥

यह चारो तुकां आख्येपक प्रतीति होती है जाते जिस संध्या मों व्याह भया तिसी रात्र मों भोजन किया पुन: डेरे जाइ कै पुत्र सनुषांजुत देखे तब लग रात्र बीती पीछे प्रातकृत कीनी इस के प्रथम नित नूतन मंगल अरु पिछली रात्र भूपति का नित जागना कहना कैसे बने अरु तुकां डारनहारे ने एही न्यूनता देखी है जो इहां सैन जागृत कथन करनी थी सो उस ने पूरवा पर नहीं बिचारया अरु ग्रंथकार ने इस निमित्त नहीं कहा जो राजा को सगरी रैन उत्सव मों बीती है जाते प्रथम रामचंद्र का बिवाह पुन: तीनहुं भ्रातहुं का पुन: भोजन जेवना बहुरो अपने डेरे जाइ कर सुत सुस्नुषा देखणे सो जौं एक एक पहर चारो क्रया मों गणिए तो भी रात्र बीत जाती है तो जागना सोवना कहां से होय ॥ २ ॥

देषि कुँअर बर बधुन समेता। किमि कहि जाइ भयो सुष जेता ॥ ३ ॥
प्रातक्रिया करि गे गुरु पाहीं। महाप्रमोद प्रेम मन माहीं ॥ ४ ॥
करि प्रनामपूजा कर जोरी। बोले गिरा सुधा जनु बोरी ॥ ५ ॥
तुम्हरी कृपा सुनहु मुनिराजा। भयो आजु मैं पूरन काजा ॥ ६ ॥
अब सब बिप्र बुलाइ गोसांईं। देहु धेनु सब भाँति सुहाईं ॥ ७ ॥

इहां सरब बिप्र कहिये जो गोदान के पात्र हैं ते सरब बोलाइ कै गउआं देवो जाते गोदान के पात्र

[illegible] होते हैं प्रमाण । दानधर्मे स्वाध्यायपाठ्य सुधियोनिप्रसांतं बैतानस्थंपाप भीरु बहुज्ञं गोखुष्यांतंनाति तोषणांसरण्यं वृतिगलानंता द्दसंपात्रमाहु । बेद पठित होवै पित मात कुल सुद्ध होवै यज्ञ कर्म बिषे स्थित होवै पाप ते भै करे बहुत शास्त्र जाननेवाला होवै गउवों बिषे खिमा कर जुक्त होवै अति तीषण न होवै सरनागत की पालना करनेवाला होवे जीवका कर खिन्न होवै किंबा बृत्य बिषे जिस को गलान है अर्थ यह बिचार के पदार्थों कों अंगीकार करै सो गोदान का पात्र होता है गुरों प्रति कहणा सनमान निमित्त वा गोदान के पात्रों के गुरु भली प्रकार बेत्ता हैं ।। ७ ।।

सुन गुरु कर महिपाल बडाई । पुनि पठए मुनिबृंद बोलाई ॥ ८ ॥

इहां महिपाल पद इस निमित्त कहा जिन की वृति धरम परायण होती है तिनों राज्यों सेती मही की पालना होती है तिस की बडाई करणा का भाव यह एता हरष पाएकर जिस को वृति प्रमादी नहीं भई संतहुं के पूजन अरु नम्रता महुं प्रीति है ॥ ८ ॥

दोहा—बामदेव अरु देवरिषि, बालमीक जाबालि ।
आए मुनिबरनिकर तब, कौसिकादि तपसालि ॥ ३४४ ॥

निकर कहिए संबूह तपसालि कहिए तप के मंदिर इतर सुगम ॥ ३४४ ॥

दंड प्रनाम सबहि नृप कीने । पूजि सप्रेम बरासन दीने ॥ १ ॥
चारि लाष बर धेनु मंगाई । कामसुरभि सम सील सुहाई ॥ २ ॥

कामधेनु सम सुशील अरु सुंदर ॥ २ ॥

सब बिधि सकल अलंकृत कीने । मदित महिप महिदेवन दीने ॥ ३ ॥

दान देने के समे जों दाता क्रोध करता है तो दान का फल नास होता है इस कर राजा ने प्रसन्न होए कर दिआ किंबा कृपिन दान देइ कर पश्चाताप करते हैं मुदित पद कहणे से राजा की उदारता सूचो । आसंका । जिस का बिवाह होता है कन्यादान लेने के पतिग्रह निवारणे निमित्त उस से राजा उआं दान कराइतिआं है ताते रामचंद्र आदिकों से दान करावना बनता था राजा के करने का क्या प्रयोजन है । उत्तर । इस का उत्तर कईएक कहते हैं चारलख्य गऊ चारो भाईवों सेती कराई अरु दीनी राजा ने परंतु जों यह उत्तर दीजिए तो एता पद लिखे ग्रंथ बृद्ध होता था ताते बीचहो लिखते इसकर यह सिद्ध भया श्रीरामचंद्र परमेश्वर अरु जानकी लख्यमी सदा की अरधंगी तिनो बिषे पतिग्रह कहना नहीं बनता अरु भ्रात भी तद्रूप हैं अथवा प्रभों से ना कराये तौ अनुजों से कराए रीति बिगडती है अरु मरजादापालन निमित्त करणा बनता था ताते उन के स्थान नृप ने कीनिआं ॥ ३ ॥

करत बिनै बहु बिधि नरनाहू । लहेउं आजु जग जीवनलाहू ॥ ४ ॥
पाइ असीस महीस अनंदा । लिए बोलि पुनि जाचकबृंदा ॥ ५ ॥
कनक बसन मनि है गै स्यंदन । दिए बूझि रुचि रबि कुलनंदन ॥ ६ ॥

बूझि रुचि कहिये जांचकों की इच्छा पूछकर कनकादिक दिए जाते रघुकुल कों आनंददाता हैं तत्व यह इन कें दानो का प्रमान कौन कर सकता है ॥ ६ ॥

चले मुदित बरनत गुनगाथा । जै जै जै दिनकरकुलनाथा ॥ ७ ॥
एहि बिधि रामबिबाहउछाहू । सकै न बरनि सहसमुष जाहू ॥ ८ ॥

दोहा—बार बार कौसिकचरन, सीस नाइ कह राउ ।
यह सुष सब मुनिराज तव, कृपाकटाच्छप्रभाउ ॥ ३४५ ॥

बारंबार मुनीश्वर कें चरणो पर शिर नवावना अति नम्रता हेतु किंवा अपना अपराध खिमा करावता है हे महाराज जब तुम रामचंद्र कों लेने आए थे तब मै तुमारे साथ रघुनाथजी को दिया था न चाहता अब तुमरी कृपा कर मुझे एता आनंद भया है जो कछु बरनन नहीं कर सकता उस समै का मेरा अपराध खिमा करना ॥ ३४५ ॥

जनक सनेह सील करतूती । नृप सबराति सराह बिभूती ॥ १ ॥

जनक के शील सनेह करणिओं कों अरु बिभूति कों राजा सहित बरात के प्रसंसते हैं किंवा दूसरो राति बिवाह कों भई सो सब राति कहिये तिस सगरी राति मों राजा दशरथ मिथिलापति कें गुणों कों सराहता रहा जब तीसरा दिन भया तब दशरथ ने बीचार्‍या जनेत का रहना तोन दिन लौकिक रीति है अरु हम को तो प्रथमही रहतिआं बहुत दिवस भए हैं ॥ १ ॥

दिन उठि बिदा अवधपति माँगा । राषहिँ जनक सहित अनुरागा ॥ २ ॥

प्रात समै उठ कै सचिवों को पठाया जो राजा सों बिदा मांगो तब बडा प्रेम कर कै जनक ने कहा ऐसी क्या शीघ्रता है बिदा मांगने कें संग राजा कों अवधपति बिशेषण का भाव यह अजोध्या अति प्यारी है अरु उहां से आए बहुत दिन भये हैं तिस को सिमृत कर शीघ्र बिदा मांगी अथवा अवध नाम भाषा मों आयु का भी है जैसे स्वामी कों प्रजा कें सुख दुख की सभ सुध होती है तैसे राजा कों अपने सरीर की प्रतीति थी जो आयु अब थारे दिन हैं तिस निमित्त शीघ्र बिदा मांगी ॥ २ ॥

नित नूतन आदर अधिकाई । दिनप्रति सहस भाँति पहुनाई ॥ ३ ॥
नित नव नगर अनंद उछाहू । दसरथगवन सोहाइ न काहू ॥ ४ ॥

पूरबली चौपाई कें आदि मों जो चार तुकां आक्ष्येपक कहिआं थी सो 'बात इहां निश्चै भई जो वोही अर्थ इहां कहा अरु इहां कहना बनता है सो तीनि दिन सों उपरांत रहना लोगों ने कुछ खेद न मान्या प्रत्युत अति आनंद भये ॥ ४ ॥

बहुत दिवस बीते एहि भाँती । जनु सनेह रजु बँधे बराती ॥ ५ ॥

उहां बिवाहानांतर भी जनेत कों रहत्यां बहुत दिन भये तिन कें रहन कर पुरलोग तौ परसन्य परंतु जनेत भी मानो तिन कें सनेहरूपी बंधन कर बांधे गए जाते चलने सो चित किसू का न होए ॥ ५ ॥

कौसिक सतानंद तब जाई । कहा बिदेह नृपहिँ समुझाई ॥ ६ ॥

तब बिश्वामित्र अरु सतानंदजी ने राजा जनक कों समुझाइ कै कहा जद्यपि तुमारी दृष्टि व्यवहार-ओर नहीं परतो जाते तुम बिदेह हो तथापि व्यवहार बर्तना उचित जान कै ॥ ६ ॥

अब दसरथ कहँ आयसु देहू । जद्यपि छाडि न सकहु सनेहू ॥ ७ ॥
भलेहि नाथ कहि सचिव बोलाए । कहि जै जीव सीस तिन्ह नाए ॥ ८ ॥

दोहा—अवधनाथ चाहत चलन, भीतर करहु जनाउ ।
भए प्रेमबस सचिव सुनि, बिप्र सभासद राउ ॥ ३४६ ॥

हे मंत्रिवों अंतःपुर सो सुध दै कै दुलहिनिवों के चलने की त्यारी करवादो जाते राजा दशरथजी चला चाहते हैं यह सुन कर आमात्य अरु मोसाहब अरु बिप्र अरु राउ कहिये लघु राजे जो उहां थे किंवा आप राजा भी प्रेम सों व्याकुल भए जब सचिवों ने यह बात लोगों में प्रगटाई तब ॥ ३४६ ॥

पुरबासी सुनि चलिहि बराता । बूझहि बिकल परस्पर बाता ॥ १ ॥
सत्य गवन सुनि सब बिलषाने । मनहुँ साँझ सरसिज सकुचाने ॥ २ ॥

बरात का निश्चै गमन सुनि कै पुरबासिवों के मुख ऐसे मुरझाये हैं जैसे निशा सों कमल कुंभिलावै ॥ २ ॥

जहँ जहँ आवत बसे बराती । तहँ तहँ सीध चला बहु भांती ॥ ३ ॥
भरि भरि बसह अपार कहारा । पठए जनक अनेक सुआरा ॥ ४ ॥
बिबिध भाँति मेवा पकवाना । भोजनसाज न जाइ बषाना ॥ ५ ॥

जिनो जिनो अस्थानो सो आवती बेर बरातिवों के डेरे नृप जनक ने कराए थे तिनों तिनों अस्थानो सो सीध कहिये दाल घृतादिक कच्चा अन्न सो बसह कहिये बैलों पर लाद पठाया पक्वान अरु मेवे आदिक कहारों पास भार दे कर भेजे अरु सुआर पठाये जो सरब प्रकार के भोजन जथाजोग बरताय देवैं पीछे जो दाइज जनकजी ने दीना था सो तो राजा दशरथ नें उहांही बांट दिआ था तिस निमित्त ॥ ५ ॥

तुरग लाष रथ सहसपचीसा । सकल सँवारे नष अरु सीसा ॥ ६ ॥
मत्त सहसदस सिंधुर साजे । जिनहिं देषि दिसिकुंजर लाजे ॥ ७ ॥
कनक बसन मनि भरि भरि जाना । महिषी धेनु बस्तु बिधि नाना ॥ ८ ॥

इहां जान कहिये गाडे अरु ऊंटादिक अपर सपष्ट ॥ ८ ॥

दोहा—दाइज अमित न सकिय कहि, दीन बिदेह बहोरि ।
जो अवलोकत लोकपति, लोकसंपदा थोरि ॥ ३४७ ॥

लोकपालों की संपदा से उह पदारथ अधिक कहने यह अतिस्योक्ति है अपर सुगम ॥ ३४७ ॥

सब समाज एहि भांति बनाई । जनक अवधपुर दीन पठाई ॥ १ ॥

लाख तुरंगादिक जो पदारथ तैयार कीने थे सो राजा ने परोक्ष्य अवधपुरी की ओर पठाइ दिए जातें गृह के लोग भी दायज कों देखैं ॥ १ ॥

चलिहि बरात सुनत सब रानी । बिकल मीनगन जनु लघु पानी ॥ २ ॥
पुनि पुनि सीय गोद करि लेहीं । देइ असीस सिषावन देहीं ॥ ३ ॥
होएहु सतत पियहिँ पियारी । चिरु अहिवात असीस हमारी ॥ ४ ॥

तूं पति के सनेह सहित चिर प्रजंत सुहागिनि होइहु यह हमारी आशिष है अब शिक्षा देतिआं हैं ॥ ४॥

सासु ससुर गुर सेवा करहू । पति रुष लषि आयसु अनुसरहू ॥ ५ ॥

प्रथम तो स्वामी के मस्तकादिकों द्वारा आसा लावकर सभ कारज करनें अरु आज्ञा भंग ना कदाचित न करनी ॥ ५ ॥

अति सनेहबस सषी सयानी । नारिधरम सिषवहिँ मृदुबानी ॥ ६ ॥

जद्यपि सीता को वह परम बुद्धिमती भी जानातिआं हैं तथापि प्रेमबस होएकर जुबतिआं के धरम सिखावतिआं हैं ॥ ६ ॥

सादर सकल कुअरि समुझाई । रानिन बार बार उर लाई ॥ ७ ॥
बहुरि बहुरि भेंटहिं महतारी । कहहिँ बिरंचि रची कत नारी ॥ ८ ॥

दोहा—तेहि अवसर भाइन्ह सहित, राम भानुकुलकेतु ।
चले जनकमंदिर मुदित, बिदा करावन हेतु ॥ ३४८ ॥

सूरजबंस का केतु सम साभा देनेहारे जो श्रीरामचंद्र हैं सो भ्रातों संजुत बिदा होने निमित्त राज भवन मों आए ॥ ३४८ ॥

चारो भाइ सुभाय सुहाये । नगर नारि नर देषन धाये ॥ १ ॥

सुभाय सुहाए कहिये जिन की सुंदरता भूषनो वस्त्रों लगही न होवे जिस प्रकार होवहिं तिसी प्रकार सुंदर भासहिं तिन कों पुरमग मों आया सुन कै सभ लोग दरसन हेतु आए तब ॥ १ ॥

कोउ कह चलन चहत हहिँ आजू । कीन्ह बिदेह बिदा कर साजू ॥ २ ॥

केते लोग बोले आज यह नगर का सैर करने नहीं आए बिदा होने आए हैं इस बात सें लोगों कों संदिग्ध देखकर कहते हैं आगे एते दिन नृप ने बिनै कर राखे थे सो अब तिस ने भी बिदा की तैयारी करी है ॥ २ ॥

लेहु नैन भरि रूप निहारी । प्रिय पाहुने भूपसुत चारी ॥ ३ ॥

अब नारिओं की प्रेममैं उक्ति कहते हैं ।

को जानै केहि सुकृत सयानो । नैन अतिथि कीन्हे बिधि आनो ॥४॥

कौन जान सकता है हे सखी किस पुन्य के बस ते विधाता ने यह हम को नैनगोचर किए थे सो इस भांति थे ॥ ४ ॥

मरनसील जिमि पाव पियूषा । सुरतरु लहै जन्म कर भूषा ॥ ५ ॥
पाव नारकी हरिपद जैसें । इन कर दरसन हम कहँ तैसें ॥६॥

इन तीनो दृष्टांतों का तत्व यह आगे जो बड़े बड़े बली आये अरु चाप किसू ने ना उठाया अरु नृप ने प्रण ना त्यागया तो सीता के अविवाहित रहणे के त्रास में हमलोग गिरे भी जाहते थे काऊ कुरूप तादिक दोसोंवाला छली भी धनुष तोड़े तो भी भलीबात है सो भगवंत ने ऐसी कृपा करी सरब गुनह को निधि स्वामी सीता को मिला अरु ऐसा सुंदर बिवाह भया अरु हम पवित्र भयां ताते हमारे बड़ पुन्य थे ॥ ६ ॥

निरषि रामसोभा उर धरहू । निज मन फनि मूरति मनि करहू ॥७॥

प्रभों की सोभा कहिए जस किंवा सौंदर्ज तिस को रिदे में धारो अरु जैसे सरप मणी को प्रीति संजुत राखता है तैसे अपने मन सो रामचंद्र की मूरति राखो ॥ ७ ॥

एहि बिधि सब लैनन फलदेता । गए कुँअर सब राजनिकेता ॥ ८ ॥

सभों को द्रिगों का फल देना इस भांति जो रथ पर आरूढ होकर सोभ्रता से जाते तो लोकों को दरसन का आनंद कैसे होता सो सनै सनै मारग सों जो निरावरण चले जाते हैं इस कर सभों को नैन फल देता कहे ॥ ८ ॥

दोहा— रूपसिंधु सब बंधु लषि, हरषि उठेउ रनिवासु ।
करहिं निछावर आरती, महा मुदित मन सासु ॥ ३४९ ।

देषि रामछबि अति अनुरागी । प्रेमबिबस पुनि पुनि पद लागी ॥१॥
रही न लाज प्रीति उर छाई । सहज सनेह बरनि किमि जाई ॥२॥

प्रेम करि बिह्वल भयां जो रानिआं हैं तिन को अधिकार को संभार ना रहो ताते पुनः पुनः पग लागिआं अरु अपने अंगों को प्रगट देखावने की भी कुछ लज्जा न रही यह प्रेम की अधिकता के लच्छन हैं ॥ २ ॥

भाइन्ह सहित उबटि अन्हवाए । छरस असन अतिहेतु जेंवाए ॥ ३ ॥

उबट कहिये वटणा मल कर स्नान कराया ॥ ३ ॥

बोले राम सुअवसर जानी । सीलसनेहसकुचमै बानी ॥ ४ ॥

सुअवसर कहिये जब रानिवों ने भोजनादिक कृत कर अपनी प्रसन्नता कर लीनी तब श्रीरामचंद्र सील सनेह कहिये प्रेम के सुभाववाली अरु सकुच मै कहिये संकोचसहित गिरा बोले सो कहते हैं ॥४॥

राउ अवधपुर चहत सिधाए। बिदा होन हम इहां पठाए ॥ ५ ॥

इनो में संकोच यह गमन के प्रसंग मे राजा का नाम लिया अपना नाम न कहा अरु सनेह मे आगे के दो चरण ॥ ५ ॥

मातु मुदित मन आयसु देहू। बालक जानि करब नित नेहू ॥ ६ ॥
सुनत बचन बिलषी रनिवासू। बोलि न सकहिं प्रेमबस सासू ॥ ७ ॥

प्रेम कर कंठ गद गद भए हैं तिन कर बोल्या नहीं जाता किंवा बियोग कों न सहारतिआं हूयां इह नहीं कह सकतिआं तुम जावो किंचा पतिव्रता हैं पति की प्रेम की ओर देख कर रहना नहीं कह सकतिआं जो स्वामी ने इन कों बिदा किआ तातें मौन रहिआं तब ॥ ७ ॥

हृदै लगाइ कुअरि सब लीन्ही। पतिन्ह सौंपि बिनती अति कीन्ही ॥ ८ ॥

छंद—करि बिनै सिय रामहिं समरपी जोरि कर पुनि पुनि कहैं।
बलिजाउँ तात सुजान तुम कहँ बिदित गति सब की अहैं ॥
परिवार पुरजन मोहि राजहिं प्रानप्रिय सिय जानबी।
तुलसी सुसील सनेह लषि निज किंकरी करि मानबी ॥

हम सभों कों प्रानो से भी सीता प्यारी है इसे जानबी कहिये जानकर अरु हमारे शील सनेह की ओर देखकर इस को तुम ने अपनी दासी जानकर मान देना प्रयोजन यह हमारे गृह विषे महासुखी रही है तुम ने भी प्रसन्न राखनी जो प्रभु कहैं सकल गुणों संजुत जो सीता है तिस को हम मान क्यों न देवेंगे तिस पर कहतिआं हैं।

सोरठा—तुम परिपूरनकाम, जानि सिरोमनि भाव प्रिय।
जनगुनगाँहक राम, दोषदलन करुनायतन ॥ ३५० ॥

हे श्रीरामचंद्र तुम ने कुछ सीता के सौंदर्ज पर अथवा हमारे धनदान पर नहीं रीझना जाते परिपूरण काम हो दहुडो राजा सभी जनक को ज्ञानवान जान के इन का सनमान विशेष करते हैं सो तुम ज्ञानवानो के शिरोमनि हो जाते ईश्वर हो तातें हमारे इस गुण कर भी तुम ने नहीं रीझना परंतु एक भरोसा है तुम भाव प्रिय हो अरु जनहुं के नम्रतारूपी गुनहुं के गांहक हो अरु करुणानिधि हौ सो आप ने इनहुं विशेषनो को बिचारकर सीता सो जो कदाचित कोऊ दोष होइ तौ भी खिमा करना ॥ ३५०

अस कहि रही चरन गहि रानी। प्रेमपंक जनु गिरा समानी ॥ १ ॥

इस में उपरांत रानी से बोल्या न गया मानो प्रेमरूपी करदम सों बानी निकस नहीं सकती ॥ १ ॥

सुनि सनेहसानी बर बानी। बहु बिधि राम सासु सनमानी ॥ २ ॥
राम बिदा माँगा कर जोरी। कीन्ह प्रनाम बहोरि बहोरी ॥ ३ ॥

तब प्रभों ने हाथ जोर कर बिदा मांगी अरु बारंबार प्रनाम किया भाव यह लज्याकर मुख में तौन था कहना प्रनाम करणीमाहीं सूच्या जो तुमारा सब कथन प्रमान ॥ ३ ॥

पाइ असीस बहुरि सिर नाई । भाइन सहित चले रघुराई ॥ ४ ॥
मंजु मधुर मूरति उर आनी । भई सनेह सिथिल सब रानी ॥५॥

मंजु कहिये द्रगों को सुंदर मधुर कहिये जिह्वा को मीठो अर्थ यह जिन सों संभाषन रसवंत तिस मूरति कों रिदे मों धारकर रानियों के अंग बियोग के प्रेम सों सिथिल भए ॥ ५ ॥

पुनि धीरज धरि कुअरि हँकारी । बार बार भेंटी महतारी ॥ ६ ॥
पहुंचावहिँ फिरि मिलहिँ बहोरी । बढी परस्पर प्रीति न थोरी ॥ ७ ॥
पुनि पुनि मिलति सखिन बिलगाई । बाल बच्छ जिमि धेनु लवाई ॥ ८ ॥

फेर फेर मिलती हैं सखियों कों पृथक पृथक जैसे बाल बछ लवेरी धेनु कों पुन: पुन: मिलती है इहां द्रष्टांत का एक अंग लेना ॥ ८ ॥

दोहा—प्रेमबिबस नर नारि सब, सखिन सहित रनिवास ।
मानहु कीन्ह बिदेहपुर, करुना बिरहनिवास ॥ ३५१ ॥

करुना बिरह कहिये कातुरता अरु बियोग ने पुरी में निवास किया है सोई कहते हैं ॥ ३५१ ॥

सुक सारिका जानकी ज्याए । कनकपींजरनि राखि पढाए ॥ १ ॥
ब्याकुल कहहिँ कहाँ बैदेही । सुनि धीरज परिहरै न केही ॥ २ ॥
भये बिकल खग मृग एहि भाँती । मनुज दसा कैसे कहि जाती ॥ ३ ॥
बंधु समेत जनक तब आए । प्रेम उमगि लोचन जल छाए ॥ ४ ॥
सीय बिलोकि धीरता भागी । रहे कहावत परम बिरागी ॥ ५ ॥

जद्यपि राजा परम बिरक्त अरु ज्ञानवान भी था तद्यपि सीता महामया है तातें नृप को अधीर किया प्रमान देवी महात्मे । ज्ञानिनामपिचेतांसि देवी भागवती हिसा बलादाकृष्य मोहाय महामाया प्रयच्छति । जद्यपि ज्ञानियों के चित द्रढ हैं तथापि देवी भगवती महामाया बलातकार से तिन कों खैंचकर मोह प्राप्ति कर देती है ॥ ५ ॥

लीन्हि राय उर लाइ जानकी । मिटी महा मरजाद ज्ञान की ॥ ६ ॥

ज्ञान की मरजादा कहिये सोक न होना सो सोक होने कर मरजादा मिटी जैसे आंधी के बलकर सचक्षु हुए के द्रग भी मलीन ह्वै जाते हैं ॥ ६ ॥

समुझावत सब सचिव सयाने । कीन्ह बिचार अनौसर जाने ॥ ७ ॥

अनौसर कहिए अब देर का अवसर नहीं जाते इन के चलने का महूरत समीप है अरु मेरी ओर देखकर और लोग भी सोक करैंगे तब चिरकाल हो जावेगा इस बिचार कर धीरज कीना ॥७॥

बारहिं बार सुता उर लाई। सजि सुंदर पालकी मंगाई ॥ ८ ॥

दोहा—प्रेमबिबस परिवार सब, जानि सुलगन नरेस।
कुअँरि चढाई पालकी, सुमिरे सिद्ध गनेस ॥ ३५२ ॥

जान पद का अन्वै दोनो ओर करना सभ परिवार कौं राजा ने सीता के बियोग कर बिह्वल अरु लगन समीप जान्या ताते रिध सिध सहित गनेस कों सिमर कर कुअरिओं को पालकिओं पर चढाय दिया ॥३५२॥

बहु बिधि भूप सुता समुझाई। नारिधर्म कुलरीति सिषाई ॥ १ ॥
दासी दास दिए बहुतेरे। सुचि सेवक जे प्रिय सिय केरे ॥ २ ॥

सुचि सेवक कहिए जिनों के भले अचार हैं प्रिय सिय केरे कहिये जिनो की सीता जी की सेवा मों अधिक रुचि है सो दासिआं अरु दास संग दीने ॥ २ ॥

सीय चलत व्याकुल पुरबासी। होहिं सगुन सुभ मंगलरासी ॥ ३ ॥
भूसुर सचिव समेत समाजा। संग चले पहुँचावन राजा ॥ ४ ॥

बिप्रों अरु सचिवादिकों के समाज संयुत जो राजा जनक है सो संग पहुंचावन चला बिप्रों का संग जाना लौकिक व्यवहार निमित्त किंवा राजा के निकट सदा रिष मुन रहते हैं तिस हेतु जदवा बिप्र पद इहां चारो बरनों का उपलक्ष्यक जानना जाते आगे महाजनों का फिरना कहना है ॥४॥

समै बिलोकि बाजने बाजे। रथ गज बाजि बरातिन साजे ॥ ५ ॥
दसरथ बिप्र बोलि सब लीन्हे। दान मान परिपूरन कीन्हे ॥ ६ ॥
चरनसरोजधूरि धरि सीसा। मुदित महीपति पाइ असीसा ॥ ७ ॥
सुमिरि गजानन कीन्ह पयाना। मंगलमूल सगुन भए नाना ॥ ८ ॥

गणेश जी को सुमिर कर इहां कहिये पूजन कर प्रस्थान किया अरु सगुनो के नाम पीछे कहिआए हैं तिसकर इहां समुचै कहे ॥ ८ ॥

दोहा—सुरप्रसून बरषहिं हरषि, करहिं अपसरा गान।
चले अवधपति अवधपुर, मुदित बजाइ निसान ॥ ३५३ ॥

राजा को प्रसन्नता होनी अमरों के पुष्प बरषावनादिक मंगल देखकर किंवा पुत्रों के बिवाहकर जदवा अपने गृह की ओर चलने कर ॥ ३५३ ॥

नृप कर बिनै महाजन फेरे। सादर सकल माँगने टेरे ॥ १ ॥

महाजन कहिये नगर के बैसादिक लोग सो बिनै कर के फेरे अरु भिक्षुकों को आदरपूरबक बोलाया ॥ १ ॥

भूषन बसन बाजि गज दीन्हे । प्रेम पोषि ठाढे सब कीन्हे ॥ २ ॥

भूषणादिक दै कै अरु प्रेम पोख कहिए सनमान से पुष्ट कर कै सभों को ठाढा किया ॥ २ ॥

बार बार बिरदावलि भाषी । फिरे सकल रामहिँ उर राषी ॥३॥

अब अतिमान सों नृप का फेरना कहते हैं ॥ ३ ॥

बहुरि बहुरि कोसलपति कहंहीं । जनक प्रेमबस फिरै न चहहीं ॥ ४ ॥

पुनि कह भूपति बचन सुहाए । फिरिय महीस दूरि बडि आए ॥ ५ ॥

जब दशरथ ने जान्या जनक कहे से खडे नहीं होते तब ॥ ५ ॥

राउ बहोरि उतरि भए ठाढे । प्रेमप्रबाह बिलोचन बाढे ॥ ६ ॥

जान से उतर कै हाथ जोर कै राजा दशरथ तहां खडा होइ रहा अरु नृप का बियाग जान कै नैनों से जल प्रबाह चला ॥ ६ ॥

तब बिदेह बोले करजोरी । बचन सनेह सुधा जनु बोरी ॥ ७ ॥

कहौं कवन बिधि बिनै बडाई । महाराज मोहि दीन बडाई ॥ ८ ॥

दोहा—कोसलपति समधी सजन, सनमाने सब भांति ।

मिलन परस्पर बिनै अति, प्रेम न हृदय समाति ॥ ३५४ ॥

मिथलेश कों अति बिनै संजुत देख कै राजे दशरथ ने भी बिदेह का बडा सनमान किआ तब परस्पर मिलन बिनै अरु प्रीति अत्यंत बढी जो रिदै मो समाय न सकी रुदनादिकों द्वारा प्रगट ह्वै परी ॥ ३५४ ॥

मुनिमंडलहि जनक सिर नावा । आसिरबाद सबन सन पावा ॥ १ ॥

सादर पुनि भेटे जामाता । रूपसीलगुननिधि सब भ्राता ॥ २ ॥

जोरि पंकरुह पानि सोहाए । बोले बचन प्रेम जनु जाए ॥ ३ ॥

हस्त कमल जोडकर राजा बचन कहणे लगा कैसे बचन हैं मानो प्रेम में उपजे हैं ॥ ३ ॥

राम करौ केहि भांति प्रसंसा । मुनिमहेसमनमानसहंसा ॥ ४ ॥

हे रामचंद्र मैं तुमारी अस्तुति किस भांति करौं मुनि कहियें मननशील जो शंकरजी का मन है किंवा मुनीश्वरों अरु शंकरजी का मनरूपी जो मानसरोवर है तिसो बिषे हंसोंवत बिचरनेहारे हो प्रयोजन यह संभु भगवान जिन का ध्यान करे मेरे से तिन की अस्तुति कैसे हो सकती हैं ॥ ४ ॥

करहिं जोग जोगी जेहि लागी । कोह मोह ममता मद त्यागी ॥ ५ ॥

जिस स्वरूप की प्राप्ति निमित्त अतिप्यारे जो क्रोध मोहादिक हैं तिन को त्याग कै जोगी अष्टांग जोगादिक उपाव करते हैं ॥ ५ ॥

ब्यापक ब्रह्म अलष अबिनासी । चितानंद निरगुन गुनरासी ॥ ६ ॥

सरबव्यापक हैं जाते ब्रह्म हैं सभों से बडे हैं जाते अलख्य हैं कोऊ उन कों लख नहीं सकता जाते अबिनासी हैं तिन का बिनास इस कर नहीं होता जाते चिदानंद हैं सतचित आनंदरूप इस कर हैं जाते निरगुण हैं तृगुणातीत इस कर हैं जाते सुखरासि हैं अर्थ यह केवल आनंद रूप हैं ॥ ६ ॥

मनसमेत जेहि जान न बानी। तरकि न सकहिँ सकल अनुमानी ॥७॥

जो मन के संकल्प मों अरु बानी के कथन मों नहीं आवता प्रमाण स्रुति। यतोवाचोनिवर्तंतिअप्राप्य मनसासहा। जिस सरूप के कथन से बानी फिर आवती है मन सहित भी जिन को प्राप्ति नहीं हू सकती। अनुमानी कहिये अनुमान प्रमानवाले जो नैयायिक हैं सो जिस को तरक नहीं सकते अर्थ यह हेतु कर के जिस का निरणे नहीं कर सकते जैसे पर्वतो बन्हिमान धूमत्वात धूम के देखण कर जान्या इस परवत मैं अनल है तैसे किसू हेतु कर तुमारा जानना नहीं हो सकता जाते अग्निविकारी हू के धूम रूप भया है अरु तुम निर्विकार हो ॥ ७ ॥

महिमा निगम नेति कह कहई। जो तिहुं काल एकरस अहई ॥ ८ ॥

जिस कों बेद भी इदंता कर के नहीं कह सकते नेत नेत कर कहते हैं जो तीनो कालो में एक रस है प्रयोजन यह जन्मादिक बिकारों से रहित हैं ॥ ८ ॥

दोहा—नैनबिषै मो कहँ भयो, सो समस्त सुषमूल।
सभै सुलभ जगजीव कहुं, भये ईस अनकूल ॥ ३५५ ॥

सो सरब सुखों का मूल परमात्मा मुझ कों दृष्टगोचर भया है हे प्रभो सभी सुख जीव कों ईश्वर की अनकूलता कर होते हैं सो ईश्वर तुम मेरे पर कृपाल होकर सभ सुखदाता हुए हो ॥ ३५५ ॥

सबहिँ भांति मोहि दीन्हि बडाई। निज जन जानि लीन्ह अपनाई ॥ १ ॥

प्रथम तुम बिनु बोलाए मेरे गृह आए पुन: सभा मो मेरे रोष के बचन सहारे बहुरे पिता सम मेरा सनमान राखते हो इत्यादिक सभों भांतों कर मुझे तुम ने बडाई दई है अरु अपना दास जान कर जेती कृपा तुम ने करी है सो मैं एक जिह्वा कर अरु अल्प काल कर क्या कहि सकता हों ॥ १ ॥

होहिँ सहस दस सारद सेषा। करहिं कल्पकोटिक भरि लेषा ॥ २
मोर भाग राउर गुनगाथा। कहि न सिराहिं सुनहु रघुनाथा ॥ ३ ॥

अनेक सारदा अरु शेष अनंतहुं कल्पहु मों कहते हुए भी तुमारी कृपा होवन कर मेरे भागों का अरु तुमारे गुणो का अंत नहीं कह सकते तथापि वह अपनी समरथा कर तुमारे गुन असंख कहते हैं अरु ॥३॥

मैं कछु कहौं एकु बल मोरे। तुम्ह रीझहु सनेह सुठि थोरे ॥ ४ ॥

मैं जो तुमारे गुण कहता हों मेरे बिषे एक तुमारे प्रेम का बल है जाते जो कोऊ प्रेम संजुत थोरा कहे तिस पर भी तुम रीझते हो ॥ ४ ॥

बार बार मागौ कर जोरे। मन परिहरै चरन जिन भोरे ॥ ५ ॥

मैं दोनों हाथ जोर कर यह दान बार बार मांगता हौं जो किसू सुख मो प्रमादी ह्वै कर मेरा मन तुमारे चरणारबिंदों कें रस कों न त्यागे दोनो कर जोडन का भाव अति नम्रता अथवा दोनो कर जोरन सें है भाव लखायें एक तो तुम मुझ को पिता सम जानते हो अरु मैं तुमारा निज भक्त हों तिस बल कर भी यह मांगता हौं ॥ ५ ॥

सुनि बर बचन प्रेम जनु पोषे। पूरनकाम राम परितोषे ॥ ६ ॥

जनक के प्रेम कर पुष्ट हुए जो बचन हैं तिन कों सुन कर पूरन काम कहिये और किसू पदारथ की जिन कों कामना नहीं एक भक्तों कें प्रेम कर ही प्रसन्न होते हैं सो प्रभु प्रसन्न भए ॥ ६ ॥

करि बहु बिनै ससुर सनमाने। पितु कौसिक बसिष्ठ सम जाने ॥ ७ ॥

पिता सम बिश्वामित्र सम बशिष्टजी सम जान के राजा जनक के आगे प्रभों नें अति बिनै करी अरु बहुत मान दिया पितासम इसकर जानें जो धरमशास्त्रों ने ससुर पिता सम कहा है अरु कौशिक सम इस जानें जैसे बिश्वामित्रजो तप को निध हैं तैसे राजा ने पूरब जनम मों अरु अबभी ज्ञान के निमित्त सम दमादिक बडे कठिन साधन किये हैं बशिष्टजी सम इस भांति जानें जैसे बशिष्टजी कों एकरस स्वरूप की अपरोख्यता है तैसे राजा को भी है तब राजा ने ॥ ७ ॥

बिनती बहुत भरत सन कीन्ही। मिलि सप्रेम पुनि आसिष दीन्ही ॥ ८ ॥

दोहा—मिले लषन रिपुसूदनहिं, दीन असीस महीस।
भए परसपर प्रेमबस, पुनि पुनि नावहि सीस ॥ ३५६ ॥

भरत वत ही लख्यमन अरु शत्रुसूदन कों बिनै पूरवक कंठ लगावनादिक किया तब दोनो वोरों मैं ऐसा प्रेम भया अधिकार की ज्ञात ना रहो पुनः पुनः सभी प्रणाम करते हैं ॥ ३५६ ॥

बार बार करि बिनै बडाई। रघुपति चले संग सब भाई ॥ १ ॥
जनक गहे कौसिकपद जाई। चरनरेनु सिर नैनन्ह लाई ॥ २ ॥
सुनु मुनीस बर दरसन तोरे। अगम न कछु प्रतीति मन मोरे ॥ ३ ॥
जो सुष सुयस लोकपति चहहीं। करत मनोरथ सकुचत अहहीं ॥ ४ ॥
सोसुषसुजस सुलभ मोहि स्वामी। सब सिधि तव दरसन अनुगामी ॥ ५ ॥

हे स्वामी जो प्रभों के दरसनादिक सुख इंद्रादिकों कों दुरलभ थे सो तुमारी कृपा कर मुझे सुलभ भए जातें सभ रिधां सिद्धां तुमारे दरसन किआं अनुगामिनिआं कहिए दासिआं हैं ॥ ५ ॥

कीन्ह बिनै पुनि पुनि सिर नाई। फिरे महीस आसिषा पाई ॥ ६ ॥
चली बरात निसान बजाई। मुदित छोट बड सब समुदाई ॥ ७ ॥

नगारे बजाय कर बरात चली है छोटे बडे सब प्रसन्न जाते हैं सुखदाइ पाठ होवे तो कैसी बरात है छोटे बडे जो ग्राम के लोक हैं तिन सभों को सुख देनेहारी है ॥ ७ ॥

रामहि निरषि ग्राम नर नारी। पाइ नैनफल होहिँ सुषारी॥ ८॥

दोहा—बीच बीच वर बास करि, मगलोगन सुष देत।
अवध समीप पुनीत दिन, पहुचो आइ जनेत॥ ३५७॥

बीच बीच कहिये जहां जहां जनक ने भोजनादिक वस्तु एकठिआं करवायांथिआं तहां तहां बरबास कहिये सुखपूरवक निवास करते अरु मारग के वासिवां कां धनादिक सुख देते पुनीत दिन कहिए जिस दिन प्रवेश-का सुभ महूरत था तिस दिन भूपादिक अजोध्या के निकट आइ पहुंचे॥ ३५७॥

हने निसान बाजने बाजे। भेरि संषधुनि है गै गाजे॥ १॥
झांझि बीन डिमडिमो सुहाई। सरस राग बाजहिँ सहनाई॥ २॥

डिमडिमो एक बजंत्र है चरम सों मढिआ होता है इतर सुगम जद्यपि सहनाई की धुनि ऊंची होती है तद्यपि वह बजंत्री ऐसे निपुन हैं उन कों राग के सम बजावते हैं किंवा सरनाई कहिये नफीरिआं सो रसवंत राग बजावतिआं हैं॥ २॥

पुरजन आवत जानि बराता। मुदित सकल पुलकावलिगाता॥३॥
निज निज सुंदर सदन संवारे। हाट बाट चौहट पुरद्वारे॥४॥
गली सकल अरगजा सिचाई। जहँ तहँ चौके चारु पुराई॥५॥

पीछे चौहट जो कहे हैं सो बजारों के चौरसते अरु इहां चौक कहे बीथिवों के तिना में जो द्रव्य धरन उचित थे सो धर कै पूर दीने॥ ५॥

बना बजार न जाइ बषाना। तोरन केतु पताक बिताना॥६॥

तोरण कहिये लाटू के तुपका कहिये लघु दीरघ ध्वजा बितान कहिये चंदोये इत्यादिकों कर बजार अति सुन्दर बना॥ ६॥

सफल पूगफल कदलि रसाला। रोपे बकुल कदंब तमाला॥७॥
लगे सुभग तरु परसत धरनी। मनिमै आलबाल कल करनी॥ ८॥

फलों के सहित सुपारी केले आंब बकुल लमृडे कदम वृक्ष अरु तमालादिक ऐसे सुन्दर इस्थित करे हैं जिनोकिआं सारवां झुक कर प्रिथ्वी पर पडिआं हैं आल बाल कहिये जल पावने के आधार सो तिनो किआं मणियां मैं सुन्दर करणिआं कहिये रुचिर प्रकार बनाए हुये हैं॥ ८॥

दोहा—बिबिध भाँति मंगल कलस, गृह गृह रचे सँवारि।
सुर ब्रह्मादि सिहांहि सब, रघुबरपुरी निहारि॥ ३५८॥

सिहांहिं नाम उस्तुत करणे का इतर सुगम॥ ३५८॥

भूपभवन तेहि अवसर सोहा। रचना देषि मदन मन मोहा॥ १॥

तहां कौतुक देखण अरु बधाई देने निमित्त लोग जो आवते हैं तिन की उतप्रेक्ष्या कर बरनते हैं ॥१॥

मंगल सगुन मनोहरताई। रिधि सिधि सुष संपदा सुहाई ॥२॥
जनु उछाह सब सहज सुहाए। तनु धरि धरि दसरथगृह आए ॥३॥

मंगलाचार की सगुण अरु सुन्दरताई अरु रिद्धि सिद्धि आदिक जो उत्साह हैं सो मानो इस्त्रियों पुरुषों के रूप धार कर राजा के घिह विषे आवते हैं जौं कोऊ कहै वह किस निमित्त आए हैं तिस पर कहते हैं ॥ ३ ॥

देषन हेतु राम बैदेही। कहो लालसा होइ न केही ॥ ४ ॥
जूथ जूथ मिलि चलीं सुआसिनि। निज छबि निदरहिं मदन बिलासिनि ५

सुआसिन कहिए सौभागवतिआं तरुनिआं सो संबूह मिल कर चलिआं हैं जो अपनी छबिकर मदन की बिलासन कहिये रति तिस को भी निरादर करतिआं हैं ॥ ५

सकल सुमंगल सजे आरती। गावहिं जनु बहु बेष भारती ॥ ६ ॥

भारती कहिए सरस्वती अपर सपष्ट ॥ ६ ॥

भूपति भवन कोलाहल होई। जाइ न बरनि समै सुष सोई ॥ ७ ॥
कौसल्यादि राममहँतारी। प्रेमबिबस तनदसा बिसारी ॥ ८ ॥

दोहा—दिए दान ब्रिप्रन्ह बिपुल, पूजि गनेस पुरारि।
प्रमुदित परम दरिद्र जनु, पाइ पदारथ चारि ॥ ३५९ ॥

जैसे परम दरिद्री चारपदारथ पाइ कै महाप्रसन्न होता है तैसे अनेकां रानिवों सो कौशल्या आदिकों के ग्रह इह अवस्था में चार गुनवान कुमार अरु चारों के सरब भांति संपष्ट बिवाह भए देख कर मातन कों आनंद भया ॥ ३५९ ।

मोदप्रमोदबिबस सब माता। चलै न चरन सिथिल भै गाता ॥ ८ ॥

मोद कहिये अल्प आनंद सो अपर संबंधियों के देखण का अरु प्रमोद कहिए परमानंद सो श्रीरामचंद्रजी के दरसन का तिसकर जो जननिआं मगन भयां हैं ताते अंग सिथिल हुै गयां चला नहीं जाता परंतु ॥८॥

रामदरस हित अतिअनुरागी। परिछनसाज सजन सब लागी ॥ २ ॥

रघुनाथजी के दरसन की अति इच्छा जो भई है ताते आरती की त्यारी करण लागिआं ॥ २ ॥

बिबिध बिधान बाजने बाजे। मंगल मुदित सुमित्रा साजे ॥ ३ ॥

सुमित्रा के विशेष मोद कहणे में भाव यह सुमित्रा परम भक्त है किंवा कौशल्या का आनंद पीछे कहा है अरु कैकेई की श्लाघा भविष्यत बिचार कर इनो नहीं करनी अरु और रानिआं गौन हैं तिसकर सुमित्रा का हरख कहा अथवा सुमित्रा कों युगल कुमारों के बिवाह कर प्रसंनता है पुन: रामचंद्रजी

की वोर से भी प्रसन्नता है उहां लक्ष्मन सखा हैं भरत के सुख में सुख है उहां शत्रुघ्न सखा हैं ताते अधिक आनंद कहा आरती हेतु मंगल द्रव्यो के नाम कहते हैं ॥ ३ ॥

हरदि दूब दधि पल्लव फूला। पान पूंगफल मंगलमूला ॥ ४ ॥
अच्छत अंकुर रोचन लाजा। मंजुल मंजरि तुलसि बिराजा ॥ ५ ॥

हलदी खबल घास दूबों के पत्र फूल पान सुपारी चावल जव आदिकों के अंकुर गोरोचन धानों किआं फुलिआं सुन्दर तुलसी किआं मंजरिआं ॥ ५ ॥ टिप्पी—खबल घास = दूब।

छुहे पुरटघट सहज सुहाए। मदन सकुच जनु नीड बनाए ॥ ६ ॥

इनों पदार्थों कर छुहे कहिये पूरे हैं जिन के मुख ऐसे जो सुन्दर कनक कलश हैं सो ऐसे सोभते हैं मानो कामरूपी बिहंग ने अपने नीड कहिये निवास के अस्थान बनाए हैं ॥ ६ ॥

सगुन सुगंध न जाहिं बषानी। मंगल सकल सजहिं सब रानी ॥ ७ ॥

जो मंगलाचार रानिवों ने किए हैं सो इहां सगुन कहिये मंगलादिक द्रव्य अरु सुगंधता बरनन नहीं करी जाती ॥ ७ ॥

रची आरती बहुत बिधाना। मुदित करहिं कल मंगल गाना ॥ ८ ॥

दोहा—कनकथार भरि मंगलन्हि, कमल करन लै मात।
चली मुदित परिछन करन, पुलकप्रफुल्लित गात ॥३६०॥

धूपधूम नभ मेचक भयऊ। सावन घनघमंड जनु ठयऊ ॥ १ ॥

धूपका जो उठ्या है धूम तिस कर आकास विषे ऐसी स्यामता भई मानों सावन की घटा घमंड भया है ॥ १ ॥

सुरतरुसुमनमाल सुर बरषहिँ। मनहुँ बलाक अवलि मन करषहिँ ॥ २ ॥

कल्पवृक्ष के श्वेत पुष्पोंकिआं माला जो देव ते बरसावते हैं सो मानो बगलिआं की पंगतां मन कों रंजन करतिआं हैं ॥ २ ॥

मंजुल मनिमै बंदनवारे। मनहु पाकरिपु चाँप सवारे ॥ ३ ॥

नानारंगहु मणिवों किआं जो सुन्दर बंदनवारां बांधिआं हैं सो मानो बासव चाप हैं ॥ ३ ॥

प्रगटहिँ दुरहिँ अटन पर भामिनि। चारु चपल जनु दमकहिं दामिनि ॥ ४ ॥

जिसवोर श्रीरामचंद्र जाते हैं उसवोर जुवतिआं प्रगट होतिआं हैं दूती वोर से दुरतिआं हैं सो मानों तडिता चमकतिआं हैं ॥ ४ ॥

दुंदुभिधुनि घन गरजहिं घोरा। जाचक चातक दादुर मोरा ॥ ५ ॥

दुंदुभिवों की धुनि बारिद का गरजना है अरु जाचक चातिकादिकों वत बोलते हैं ॥ ५ ॥

सुर सुगंध सुचि बरषहिं बारी। सुषी सकल ससिपुर नर नारी ॥ ६ ॥

सुगंध जल गुलाब आदिक तिन को जो ननिर्मा बूंदा देवता बरषावते हैं सो बरषा है कृषी कहे सब पुर के नरनारी.प्रफुल्लित भए हैं ॥ ६ ॥ टिप्पणी—ननिर्मा = छोटी।

समै जानि गुरु आयसु दीन्हा। पुर प्रबेस रघुकुलमनि कीन्हा ॥ ७ ॥

समौ कहिये प्रवेश का शुभलगन जानकर गुरों ने प्रवेश की आज्ञा दई तब नृप ने पुर में प्रवेश किया ॥ ७ ॥

सुमिरि संभु गिरिजा गनराजा। मुदित महीपति सहित समाजा ॥ ८ ॥

राजा ने प्रवेश समै सभों का कुशल बिचारणा है तातें शंकरजी का गिरजा गणपति सहित सिमरण किया ॥ ८ ॥

दोहा—होहिँ सगुन बरषहिं सुमन, सुर दुंदुभी बजाइ।
बिबुधबधू नाचहिँ मुदित, मंजुल मंगल गाइ ॥ ३६१ ॥

मंजुल कहिए सुंदर अपर सपष्ट ॥ ३६१ ॥

मागध सूत बंदि नट नागर। गावहिं जस तिहुं लोक उजागर ॥ १ ॥

मागध कहिये जो बंशबरनन करै सूत कहिये जो पुराणों अनुसार जश कहैं बंदी कहिये जिस सो राजा की रुचि होइ सो कहैं ते सभी गुण बरनते हैं ॥ १ ॥

जै धुनि बिमल बेदबरबानी। दसदिसि सुनिय सुमंगलसानी ॥ २ ॥
बिपुल बाजने बाजन लागे। नभ सुर नगर लोग अनुरागे ॥ ३ ॥
बने बराती बरनि न जाहीं। महा मुदित मन सुष न समाहीं ॥ ४ ॥
पुरबासिन तब राय जुहारे। देषत रामहिँ भए सुषारे ॥ ५ ॥

पुर के लोगों नें नृप कों प्रणाम करे अरु रघुनाथजू कों देखकर सुखी भये प्रसन्नता का भाव यह चारो भ्रातों को छबि देखो है किंवा परसुराम आदिकों के उपद्रवों से निर्विघ्न श्रीरामचंद्र जै पाइ आए हैं ॥ ५ ॥

करहिँ निछावरि मनिगन चीरा। बारि बिलोचन पुलक सरीरा ॥ ६ ॥

मणियों आदिकों के वारने करते हैं अरु सुंदर रीति सें बिवाहादिकों कर जो भया है हरष तिस कर नैनों मैं अस्रुपात अरु रोमांच भये हैं ॥ ६ ॥

करहिं आरति पुर नर नारी। हरषहिँ निरषि कुँअर बर चारी ॥ ७ ॥
सिबिका सुभग ओहार उघारी। देषि दुलहिनिन होहिं सुषारी ॥ ८ ॥

सिबिका कहिये दुलहिनियों के जान तिन के परदे उठाइ उठाइ के नारियां राजकुमारियों कों देखतियां हैं अरु तिन के रूपादिकों पर प्रसन्न होतियां हैं ॥ ८ ॥

दोहा—एहि बिधि सब कहँ देत सुष, आये राजदुआर ।
मुदित मातु परिछनि करत, बधुन्ह समेत कुमार ॥ ३६२ ॥

इस भांति सभों को सुख देते कहिये जहां किसू ने कहणा तहां कुमारो नें ठाढे होइ कै तिन की मनोहार करनो जहां किसू ने कहना तहां कुमारियों ने तिसै आनंद पूरवक मिलना इस भांति राजद्वार कहिये अपने मंदिर ढिग आये तब प्रसन्न ह्वै कै माता आरती आदिक करण लागियां सोई कहते हैं ॥३६२॥

करहिँ आरती बारहिं बारा । प्रेम प्रमोद कहै को पारा ॥ १ ॥
भूषन मनि पट नाना जाती । करहिनिछावरि अगनित भांती ॥ २ ॥

अगनित भांति कहिये अनेक रंगहुं के ॥ २ ॥

बधुन समेत देषि सुत चारी । परमानंदमगन महंतारी ॥ ३ ॥

परम सुंदर सुत अरु शुभग दुलहिनियां राजकुमारियां देखकर माता परम प्रसन्न भयां ॥ ३ ॥

पुनि पुनि राम सीयछबि देषी । मुदित सफल जगजीवन लेषी ॥ ४ ॥
सषीसीयमुष पुनि पुनिचाहहिं । गान करहिनिज सुकृतसराहहिं ॥ ५ ॥
बरषहिं सुमन छनहिं छन देवा । नाचहिं गावहिं लावहिं सेवा ॥ ६ ॥

चारो भातों को अरु चारो दुलहिनियों कों देखकर लोगहु का मोहित कहना कैतिक बात है ॥ ६ ॥

देषि मनोहर चारो जोरी । सारद उपमा सकल ढढोरी ॥ ७ ॥
देत न बनै निपट लघु लागी । एकटक रही रूपअनुरागी ॥ ८ ॥

जब सारदा को भी उपमा कोऊ न फुरी तब एकटक कहिये दृगों कियां पलकां थांभकर दरसनहीं करन लग गई ॥ ८ ॥

दोहा—निगमनीति कुलरीति करि, अरघ पांवडे देत ।
बधुन सहित सुतपरछि सब, चली लिवाइ निकेत ॥ ३६३ ॥

जिस भांति तहां वेदोक्तक्रिया उचित थी अरु जिमभांति कुलाचार थे तिसी भांति पाद्यारघ पगोंतले बस्त्र बिछावनादिक करण पूरवक पुत्रों अरु सुनुखान (पतोहू) कों पूज कै रानियां मंदिरों मैं लै गयां ॥३६३॥

चारि सिंहासन सहज सुहाए । जनु मनोज निज हाथ बनाए ॥ १ ॥
तिन पर कुंअर कुअंरि बैठारे । सादर पांय पुनीत पषारे ॥ २ ॥
धूप दीप नैवेद्य बेदबिधि । पूजे बरदुलहिनि मंगलनिधि ॥ ३ ॥

बेद बिहित धूप दीपादिक कथन का प्रयोजन यह दूलह अरु दुलहिनी का बिवाह मैं लक्ष्मीनारायणरूप कर पूजन जोग्य है ॥ ३

बारहिँ बार आरती करहीं । ब्यजन चारु चामर सिर ढरहीं ॥ ४ ॥

इहाँ ढरहीं कहिये चमर ढरावतियाँ हैं ॥ ४ ॥

बस्तु अनेक निछावरि होहीं । भरी प्रमोद मातु सब सोहीं ॥ ५ ॥

अब मतन के आनंद को अति अगाधता कहते हैं ॥ ५ ॥

पावा परम तत्व जनु जोगी । अमृत लहि जनु संतत रोगी ॥६॥
जनमरंक जनु पारस पावा । अंधहि लोचन लाभ सुहावा ॥७॥
मूकबदन जनु सारद छाई । मानहुँ समर सूर जै पाई ॥८॥

परमतत्व कहिये तत्वों के सुभावों से परे होवना अर्थ यह जोग का छठवाँ अंग धारणा है तिस मों जल अनलादिकों तत्तों को जोगी जीतता है जो उन का बल जोगी के तन पर नहीं पडता तब प्रसन्न होता है अरु सदा का रोगी अमृत लै कै अरु जनम दरीद्री पारस पाय कर अरु सरमा अनिवों शत्रों को जीत कै जैसे आनंद पावता है ॥ ८ ॥

दोहा—एहि सुष ते सतकोटिगुन, पावहिँ मातु अनंद ।
भाइन सहित बिबाहि घर, आये रघुकुलचंद ॥

इनों सुखों सें अनंत गुण अधिक आनंद मातन कों भया है जाते पुत्र का बिवाह तिस पर सरब पुत्रों का तिस पर भी नृप शिरोमनि जनक के गृह एक काल मों तथापि क्रम पूरवक बर कन्या के अनरूप संजोग तहां भी धनुष भंगादिक जै अरु बिश्व बिजई परशुराम कों जीत कै सुखपूरवक दशरथ जैसे महानुभाव पिता के संमुख श्रीरामचंद्र गृह मों आए हैं ।

लोकरीति जननी करहिं, बर दुलहिनि सकुचाहिँ ।
मोद बिनोद बिलोकि बड, राम मनहिँ मुसुकाहिँ ॥ ३६४ ॥

जैसे जनक के मंदिर मों लौकिक रीति कहि आये हं तिसी भांति इहां भी करी तिस मों दुलहिनिवों का सकुचना नवीन इस्थान जानकर अरु कुमारी कों जननिवों का संकोच है । रामचंद्रजी के मन मों मुसकावन का भाव गंभीरता अथवा रघुनाथजो ऐसे बिचारते हैं हमारी माया संपूरण ब्रह्मांड कों एडी खिलावती है अरु माता जाणतो हैं हम इन कों खिलावती हैं किंबा एक समा ऐसा था जब मनुसतरूपा हमारी उपासना करते थे अरु कहते थे सरब का पर सनातन ब्रह्म हमारा आत्मज होवै अरु अब हम कों औरों बालकों सम जानकर लौकिक रीति करावती हैं ॥ ३६४ ॥

देव पितर पूजे बिधि नीकी । पूजी सकल बासना जी की ॥ १ ॥
सबहि बंदि मागहिँ बरदाना । भाइन सहित रामकल्याना ॥ २ ॥
अंतरहित सुर आसिष देहीं । मुदित मातु अंचल भरि लेहीं ॥ ३ ॥

कई एक इस का अर्थ करते हैं देवता हृष्ट हो कर असीसां देते हैं सो अजोध्यां मैं तो देवता सदा प्रगट हो कर आवते थे ऐसे मंगल के समै गुप्त हो कर क्यों आए अरु जौं परोक्ष्य हो आवना था तो असीसा प्रगट किस निमित्त दीनिआं ताते अर्थ इस का इस प्रकार है अंतरहित कहिये रिदे की प्रीति कर देवता आसीषा देते हैं अथवा पद छेदन करना अंत रहित कहिये अप्रमान जो आशिखां हैं सो अमर देते हैं अथवा अंतरहित होनेकिआं असीसा बिबुध देते हैं जो तुमारे पुत्र अजर अमर होवैं किंवा अंतरहित कहिये असंख्यात जो निखा गन हैं सो असीसा देते हैं किंवा सामान तें सुर संज्ञा तो किंनरादिकों को भो है परंतु अंत रहित कहिये जिन को अमर संज्ञा है सो ऐसे जो विशेष देवता हैं सो आशिखा देते हैं अरु प्रसन्न होकर माता अंचल पसार कर तिनों से आशिखा लेतिआं हैं ॥ ३ ॥

भूपति बोलि बराती लीन्हे। जान बसन मनि भूषन दीन्हे ॥ ४ ॥

बराती कहिये जात संबंधी जो अजोध्या के बासी हैं कै औरों राजसिवों से आए हुए थे तिन को जथा अधिकार बाहनादिक दिये ॥ ४ ॥

आयसु पाइ राषि उर रामहिँ। मुदितगएसबनिजनिजधामहिँ ॥ ५ ॥

राजा को प्रनाम करो अरु रघुनाथजी का ध्यान रिदे मो धारा जाते इन से बिछोडा नहीं बनता तब अपने गृह को गये ॥ ५ ॥

पुर नर नारि सकल पहिराये। घर घर बाजन लगे बधाये ॥ ६ ॥

जाँचक जन जाँचहिँ जोइ जोई। प्रमुदित राउ देहिँ सोइ सोई ॥ ७ ॥

सेवक सकल बजनिआं नाना। पूरन किए दान सनमाना ॥ ८ ॥

बजनिआं नाम बजंती का अपर सुगम ॥ ८ ॥

दोहा—देहि असीस जोहारि सब, गावहिँ गुन गन गाथ।

तब गुरु भूसुर सहित गृह, गवन कीन्ह नरनाथ ॥ ३६५ ॥

जिनो को अंतसपुर मों न था जाना तिन को बिदा कर कै गुरहुं बिप्रहुं कों लेकर भूपति गृह मो प्रविसया अब उहां का व्यवहार कहते हैं ॥ ३६५ ॥

जो बसिष्ट अनुसासन दीन्हो। लोक बेद बिधि सादर कीन्हो ॥ १ ॥

अंतसपुर मों जाय कै लोकिक वैदिक विध को जों बसिष्टजी ने आज्ञा दई सो राजा रानिआं ने प्रीत संजुत करी तदनंतर ॥ १ ॥

भूसुरभीर देषि सब रानी। सादर उठी भाग्य बड जानी ॥ २ ॥

बडे भाग जानन का आसय यह रिषों के चरण हमारे गृह आए ताते भवन पवित्र भए किंवा ऐसे उतसव का दिन हमारे बडे भागों कर भया है ॥ २ ॥

पाय पषारि सकल अन्हवाए। पूजि भली बिधि भूप जेंवाए ॥ ३ ॥

रानियों ने रिषों के पग प्रक्षालन कर कै तिन को स्नान कराए तदनंतर नृप संजुत ह्वै कै तिन की पूजा करी अरु भोजन जेंवाए ॥ ३ ॥

आदर दान प्रेम परिपोषे। देत असीस चले मन तोषे ॥ ४ ॥

सुगम तदनंतर ॥ ४ ॥

बहु बिधि कीन्ह गाधिसुतपूजा। नाथ मोहि सम धन्य न दूजा ॥ ५ ॥

कीन्ह प्रसंसा भूपति भूरी। रानिन्ह सहित लीन्ह पगधूरी ॥ ६ ॥

भीतर भवन दीन्ह बरबासू। मन जोगवत रह नृप रनिवासू ॥ ७ ॥

अंतसपुर में बिश्वामित्र का डेरा कराया राजा अरु रानियां बिश्वामित्रजी के मन की वोर देखती रहती हैं प्रयोजन यह मुनीश्वर कों कुछ कहना न पडे सभ सेवा अपने आप करहीं होवे ॥ ७ ॥

पूजे गुरुपदकमल बहोरी। कीन्हि बिनै उर प्रीति न थोरी ॥ ८ ॥

राजा ने बिनै बहुत कीनी गुरां ने प्रीति अधिक कीनी इतर सपष्ट ॥ ८ ॥

दोहा—बधुन समेत कुमार सब, रानिन्ह सहित महीस।
पुनि पुनि बंदत गुरुचरन, देत असीस मुनीस ॥ ३६६ ॥

बिनै कीन्ह उर अति अनुरागे। सुत संपदा राषि सब आगे ॥ १ ॥

नेग माँगि मुनिनायक लीन्हा। आसिरबाद बहुत बिधि दीन्हा ॥२॥

औरों रिषों के पूजनानंतर नृप ने बिचारिया इस समै गुरां का पूजन भी अवश्य करतव्य है तब प्रथम तो अत्यंत प्रेम कर बिनै करी पुनः सुत आदिक संपदा सकल आगे धरी अरु कहा हे महाराज ए सभ पदारथ तुमारे दिए हुये हैं मैं कौन वस्तु तुम कों देकर रिझावां तिस समै मुनीश्वर ने नेग कहिये लाग जो बिवाह के समै प्रोहित कों लेना उचित है सो लोक मरजादा निमित्त लेकर राजा कों आशीरबाद दिया॥२॥

उर धरि रामहिं सीय समेता। हरषि कीन्ह गुर गवन निकेता ॥३॥

बिप्रबधू सब भूप बोलाई। चैल चारु भूषन पहिराई ॥ ४ ॥

ब्राह्मणियों कों सुंदर बस्त्र भूषण पहिराये ॥ ४ ॥

बहुरि बुलाइ सुआसिनि लीन्ही। रुचि बिचारि पहिरावनि दीन्ही ॥५॥

सुआसिनि कहिये कुल संबंध कियां सौभागवतियां इस्त्रियां जो बिवाह मैं मंगल गावतियां रहियां हैं तिन कों बांछित बस्त्र भूषन दिये ॥ ५ ॥

नेगी नेग जोग सब लेहीं। रुचि अनुरूप भूपमनि देहीं ॥ ६ ॥

नेगी कहिये नाऊ भाटादिक तिन कों भी इच्छा अनुसार राजा धन देता है ॥ ६ ॥

प्रिय पाहुने पूज्य जे जानें । भूपति भली भाँति सनमानें ॥ ७ ॥

जौन से पियारे हैं अरु पाहुने कहिये बिदेशी अरु मान जोग हैं तत्व यह जो माता कौशल्याआदिकों के भाई बंधु आदिक हैं उनों नें तो कछु लेना नहीं तब उनों को बहुत भांतिकर सनमानहीं किया ॥७॥

देव देषि रघुबीरबिबाहू । बरषि प्रसून प्रसंसि उछाहू ॥ ८ ॥

अमरगण श्रीरामचंद्र जू के बिबाह कों देख के पुष्प बरषाय कै उत्साह को सराह कै ॥ ८ ॥

दोहा—चले निसान बजाइ सुर, निज निज पुर सुष पाइ ।
कहत परसपर रामजस, प्रेम न हृदै समाइ ॥ ३६७ ॥

सब बिधि सबहिं समदि नरनाहू । रहा हृदय भरि पूरि उछाहू ॥ १ ॥

सरब प्रकार कहिये दान सनमानादिकों कर राजा ने सरब लोगों कों प्रसन्य किया अरु सभों के रिदै मों उत्साह पूर रहा ता समै ॥ १ ॥

जहँ रनिवास तहाँ पगु धारे । सहित बधूटिन कुँअर निहारे ॥ २॥
लिए गोद करि मोद समेता । को कहि सकै भयो सुषजेता ॥ ३ ॥
बधू सप्रेम गोद बैठारी । बार बार हिय हरषि दुलारी ॥ ४ ॥

जिस समै सुनुषा कों गोद में बैठाया तब वह राजा की कृपा देख कै अति प्रसन्य भयां ॥ ४ ॥

देषि समाज मुदित रनिवासू । सब के उर आनंद किए बासू ॥ ५ ॥
कह्यो भूप जिमि भयो बिबाहू । सुनि सुनि हरष होत सब काहू ॥६॥
जनकराजगुन सील बड़ाई । प्रीति रीति संपदा सुहाई ॥ ७ ॥
बहु बिधि भूप भाट जिमि बरनी । रानी सब प्रमुदित सुनि करनी ॥ ८ ॥

राजा जनक के ज्ञानादिक गुण अरु सौख्य सुभाव अरु गंभीरता नम्रता सनेह अरु लौकिक रीतादिक दशरथ ने बंदिवोंवत बरनन करियां तब तिनकियां करणियां सुन कै रानियां परम प्रसन्य भयां प्रसन्नता का भाव यह हमारे बडे भाग हैं जिन का समधी ऐसा है तौ तिसकियां सुता भी परम स्रेष्ट होहिंगियां ताते गृह की मरजादा स्रेष्ट बनेगी ॥ ८ ॥

दोहा—सुतन समेत नहाइ नृप, बोलि बिप्र गुरुग्यात ।
भोजन कीन्ह अनेक बिधि, घरी पंच गइ राति ॥ ३६८ ॥

पंचघरी रात्री कहने का आसा यह भोजन करना रात्री के प्रथम प्रहर मोंहीं प्रमान है तत्व यह ऐसे ब्यवहार मो भी राजा समै से नहीं चूकता ॥ ३६८ ॥

मंगलगान करहिं बर भामिनि । भइ सुषमूल मनोहर जामिनि ॥ १ ॥

अचै पान सब काहू पाये। स्रगसुगंधभूषित छवि छाये॥ २॥

भोजन करके आचमन किये पुनः तांबूल मिले कैसे तांबूल हैं जो पुष्पमाल अरु सुगंधता कर छबिवान हैं प्रयोजन यह पान खाये पुष्पमाला पहिरियां सुगंधता लगायां॥ २॥

रामहिं देखि रजायसु पाई। निजनिज भवन चले सिर नाई॥ ३॥

रामचंद्र का दरसन कर के अरु रजायसु कहिये आज्ञा किंवा राजा की आज्ञा पाइ कर लोग गृह कों गए इस कथन का भाव यह राज अभिषेक हुए बिना पिता के समीप बैठ पुत्र की आज्ञा लेनी नीति नहीं किंवा श्रीरामचंद्र का ध्यान तो रिदै में राखना है तिन से बिदा कैसे मांगें तातें नृप की आज्ञा लीनी॥३॥

प्रेम प्रमोद बिनोद बडाई। समै समाज मनोहरताई॥ ४॥
कहि न सकै सत सारद सेसू। बेद बिरंचि महेस गनेसू॥ ५॥

तिस समै का प्रेम अरु प्रमोद कहिये आनंद अरु बिनोद कहिए कौतुक अरु पदारथों कर जो बडाई है अरु समाज की जो सुन्दरताई है तिस कों सतों अरु सारदा आदिक नहीं कहि सकत॥ ५॥

सो मैं कहौं कवन बिधिबरनी। भूमिनाग सिर धरै कि धरनी॥ ६॥

जौनसी धरती शेषनाग कों उठावनी कठिन होय तिस कों भूमिनाग कहिये क्षुद्र सरप गंडोआ क्या उठाय सकता है॥६॥ टिप्पणी—भूमिनाग = केंचुओं के शिर पर जैसे धरनी नहीं धारी जासकती है।

नृप सब भाँति सबहिं सनमानी। कहि मृदु बचन बोलाई रानी॥ ७॥

राजा ने सरब प्रकार कहिये दान मान कर अंतहपुर निवासी जो दास दासी थे तिन का सनमान किआ वह भी अपने अस्थानों में जाय सोए तब पुत्रादिकों की सेवा समझावनार्थ कोमल गिरा से रानियां निकट बोलायां जाते उत्तमों की रीत है अपनी जिह्वा सुधारने निमित्त मृदु बोलना किंवा राजा कों तिस से बडा आनंद प्राप्त हुआ था तिस कर सभों को कोमलबानी [illegible] पर सभ कोऊ अधिक प्रसन्न होवें अथवा ऐसे रतन पुत्रां किआं यह जननियां हैं तातें मृदुबानी कर बोलायां वा जो पिता की रीति देखते हैं सोई पुत्र करते हैं सो तिन को शिख्या निमित्त भूपत अपनी वों रानियों को मृदुबानी सों बोलावता है जो कुमार भी अपनी दुलहिनियों कों आदर सों बोलावगे किंवा सकल गुणजुक्त जनक तनुजा सुनुषा जान कर नृप के मन मों कृपा बहुत है तिस निमित्त मानों रानियों कों शिख्या करता है जसे तुम कों कोमलबानी सें बोलावता हों तैसेही तुम ने बधूवों का सनमान करणा सोई कहते हैं॥ ७॥

बधू लरिकिनी परघर आई। राखेहु नैनपलक की नाँई॥ ८॥

यह नवोढा बधू हैं अरु पर कहिये श्रेष्ठ घर तत्व यह जिस मों जनम भर निवास करना है तहां आयी है तुम ने सदा ही इन कों ऐसे राखना जैसे पलकां दृगों की रख्या करतियां हैं प्रमाण मेदनी परश्रेष्ठा रिदूरन्योतरेकलीबंतुकेवलं॥ ८॥

दोहा—लरिका श्रमित उनींदबस, सैन करावहु जाइ।

अस कहि गे बिस्रामगृह, रामचरन चित लाइ॥ ३६९॥

बधुअन के सनमान की वारता राणियों प्रति राजा नें प्रथम कही अरु पुत्रन का आदर पीछे कहा इस का भाव यह सुनषा लरकिनियां हैं अरु नवीन गृह में आई हैं अरु जनक राजा की पुत्री हैं इन के सनमान निमित्त रानियों प्रतिकहणा मुझे अवश्य है अरु कुमार रानियों के मेरे से भी अधिक प्यारे हैं अरु सटा के इसी अवास मै निवास करणेहारे हैं इन का नाम पीछे कहने का दोस नहीं॥ ३६९॥

भूपबचन सुनि सहज सुहाए। जरित कनकमनि पलँग डसाए॥ १॥

सहज सुहाए कहिये जो नृप ने मान दे के कहे हैं किंवा पुत्रों अरु सुनुषा की सेवा कही है सो वाक्य सुन के राणियों ने मणियों कर जटित जो रुकम के पलंग हैं सो बिछाये तिन पर॥ १॥

सुभग सुरभि पय फेनु समाना। कोमल कलित सुपेदी नाना॥ २॥

सुन्दर सुगंधतावान खीर की फेनु समान कोमल अरु सुन्दर अरु श्वेत इत्यादिक अनेक गुणो सहित बिछौने हैं॥ २॥ टिप्पणी—पय = क्षीर, दूध। कलित = नई। सुपेदी = रजाई।

उपबरहन बर बरनि न जाहीं। स्रग सुगंध मनिमंदिर मांहीं॥ ३॥

उपबरहन कहिये सिराने सो परम श्रेष्ट हैं स्रक कहिये पुष्पमाला अरु और सुगंधता भी मणियों मई मंदिरों मों बहुत है॥ ३॥ टिप्पणी—उपबहरण = तकिये। स्रग = माला।

रतन दीप सुठि चारु चंदोवा। कहत न बनै जान जिनि जोवा॥ ४॥

सुचि कहिये पवित्र रतनों के दीप कहे जिन को स्परस किए ते हाथ पखारना ना परे अरु जिन के प्रकाश मो स्यामता न होइ अरु सुन्दर चंदोए हे जिन की सोभा कथन मो नहीं आवती जिनो देखे हैं सो जानते हैं॥ ४॥

सेज रुचिर रचि राम उठाए। प्रेम समेत पलँग पौढाए॥ ५॥

उभियां सुन्दर सेज्जा बनाय के श्रीरामचंद्रजी को कहा तब प्रभु पलंग पर पौढे तदनंतर॥ ५॥

आज्ञा पुनि पुनि भाइन दीन्ही। निज निज सेज सेन तिन्ह कीन्ही॥ ६॥

रघुनाथजी के सैन काल मों तीनों भया सेवा करने लागे तब एक बर प्रभों ने कहा परंतु सेवा मों उन का प्रेम अधिक देख कर पुनि पुनि आज्ञा दीनी किंवा भाई जो बहुत थे इस निमित्त आज्ञा भी पुन: पुन: दीनी तब उनो ने भी सैन किआ॥ ६॥

देषि स्याम मृदु मंजुल गाता। कहहिं सप्रेम बचन सब माता॥ ७॥
मारग जात भयावन भारी। केहि बिधि तात ताडिका मारी॥ ८॥

प्रभों के समीप प्रेम कर जो माता बैठी हैं सो स्याम सुन्दर कोमल तन को देख के कहतियां हैं मारग मो जाती बेर महा भयानक जो ताडका जक्ष्यणी दशसहसगज का बल धारती थी सो तुम ने कैसे मारी थी॥ ८॥

दोहा—घोर निसाचर बिकट भट, समर गनहिं नहिं काहु।

मारे सहित सहाय किमि, खल मारीच सुबाहु ॥ ३७० ॥

घोर निशाचर कहिये जिन के महाभयानक देह बिकट भट कहिय जिन के तन सस्त्रों कर काटे न जाहिं तिस हंकार कर संग्राम मों किसू कों न गिने ऐसे मारीच अरु सुबाहु सेनासहित तुम एकल्यो ने कैसे मारे थे यह सुनकर भी परम गंभीर अरु निद्रित जो प्रभु हैं जब तूष्णी रहे तब गुरु भक्त जो माता हैं सो आपही हेतु निरूपतिआं हैं ॥ ३७० ॥

मुनिप्रसाद बलि तात तुम्हारी । ईस अनेक करवरें टारी ॥ १ ॥

हे पुत्र मैं बलिजाउं मुनि जो बिश्वामित्र हैं तिन के प्रसाद कर ईश्वर ने तुमारी जो अनेक खरवरें कहिए बिघ्न सो निव्रित्त किए ॥ १ ॥

मख रखवारी करि दुहु भाई । गुरुप्रसाद सब विद्या पाई ॥ २ ॥

मुनितिय तरी लगत पगधूरी । कीरति रही भुवन भरि पूरी ॥ ३ ॥

सरब विद्या कहिये सब अस्त्र अरु बला अतिबला है विद्या बिश्वामित्रजी से पाई अरु तिन के जग्य की रख्या तुम नें करी तिस से उपरांत ॥ २ ॥

कमठपीठि पबि कूट कठोरा । नृप समाज महं सिवधनु तोरा ॥ ४ ॥

कूरम के पीठ से बज्र से अरु लोह से अधिगा में कठोर जो शिवधनुषा सो तुम ने राज समाज मों तोरा ॥ ४ ॥ टिप्पणी—कमठ = कछुआ । पबि = बज्र ।

बिस्व बिजै जसजानकि पाई । आए भवन ब्याहि सब भाई ॥ ५ ॥

सरब बिश्व की बिजै संजुत जस के संग सरब भावों कों भी जनककुमारिवों साथ बिवाह कराएकर तुमहीं ल्याए हो प्रयोजन यह भातन पर भी उपकार किआ है ॥ ५ ॥

सकल अमानुष करम तुम्हारे । केवल कौसिककृपा सुधारे ॥ ६ ॥

तुमारे जैसे करम किसू मानुष से नहीं हो सकते यह बिश्वामित्रजी की क्रपा का प्रभाव है इस कथन मों माया का बल भी जानीता है जो माता श्रीरामचंद्र का प्रभाव नहीं समुझतिआं बिश्वामित्र की क्रपाकर सभ कारजों की सुफलता कहतिआं हैं ॥ ६ ॥

आजु सुफल जग जन्म हमारा । देखि तात बिधुबदन तुम्हारा ॥ ७ ॥

हेपुत्र महाउपद्रवों से कुशलपूरवक तुमारा बिजै पूरवक आगमन अरु चंद्रमा सम प्रकाश तव दरशन जो हम ने देखा है ताते आज हमारा जनम अरु जीवन सफल भया है ॥ ७ ॥

जे दिन गए तुम्हहिं बिनु देखे । ते बिरंचि जनि पारहिं लेखे ॥ ८ ॥

जीव की आरजा के सभ दिन गिनती के हैं जों एह बितीत दिवश बिधाता लेखे ना पावेगा तो एते दिन तुमारा दरशन आरजा से अधिक होवैगा ॥ ८ ॥

दोहा—रामप्रतोषी मातु सब, कहि बिनीत बर बैन ।

सुमिरि संभु गुर बिप्र पद, किए नींदबस नैन ॥ ३७१ ॥

रामचंद्र ने माता का परतोष किया बिनीत कहिये नम्रबचन किंवा बिनीत कहिए विशेष नीति पूरवक अरु कोमल बाक कहि कै तिनो वाक्यों का स्वरूप यह है माता गुरों की कृपाकर पिता के धरम कर तुमारे पतिब्रत की सहायता कर हम मे शुभ कारज भए। सैन समै सो शंभु गुर बिप्रपद ध्यान करबे का भाव यह निद्रा काल मों शुभ संकल्प सें जिस का सोवणा होता है सो उत्थान काल में भी उसी संकल्प सें जागता है किंवा शंभु कहिये शिवजो गुर बिप्र बाचिक इहां बशिष्टजी का है तिनो दोनो का पद कहिए निरबिकल्प पद तिस कों सुमरण कर कै नेत्र निंद्रित करे तत्व यह लोक दृष्टि मों निद्रा है वास्तव निरबिकल्पता है ॥ ३७१ ॥

नींदो बदन सोह सुठि लोना। मनहुं सांझ सरसीरुह सोना॥ १ ॥

निद्रा संजुक्त मुख ऐसा सोभता है मानो रात्री में सरसीरुह कहिये सरोज सोया हुआ है अब पुर का व्यवहार कहते हैं ॥ १ ॥

घर घर करहिँ जागरन नारी। देहिं परसपर मंगल गारी॥ २ ॥

पुरी बिराजति राजत रजनी। रानी कहै बिलोकहु सजनी॥ ३ ॥

तिस समै रानी कोशल्या कहती हैं हे सखियो देखो आज की रैन परम शोभा सहित हैं अरु पुरी ने भी दीपमाला आदिकों कर बडी छबि पाई है तदनंतर ॥ ३ ॥

सुंदरबधू सासु लै सोई। फनिकन्ह जनु सिर मनि उरगोई॥ ४ ॥

जैसे शिर की मनि कों छाती साथ लगाइ कर नागकन्या सोवे तैसे सुंदर सुनुषा कों रानियां संग लै सोयां हैं ॥ ४ ॥

प्रातपुनीत काल प्रभु जागे। अरुनचूड बर बोलन लागे॥ ५ ॥

प्रातपुनीत कहिये चार घडियां रात्र रहती प्रभु जागे जिस समै मों कुक्कुट शब्द करते हैं ॥ ५ ॥

बंदि मागधन्हि गुन गन गाए। पुरजन द्वार जोहारन आए॥ ६ ॥

बंदि बिप्र सुर गुर पितु माता। पाइ असीस मुदित सब भ्राता॥ ७ ॥

जननिन्ह सादर बदन निहारे। भूपति संग द्वार पगु धारे॥ ८ ॥

यह चारो चरण आख्येपक भासते हैं जाते अर्थ अति असंगत है जो सभ कारज कर कै नृप के संग दरबार मों आवना प्रथम कहा अरु जल मृतका आदिकों का स्परस पीछे कहा परंतु लिखा देखकर लिख छोडी है ॥ ८ ॥

दोहा—कीन्हि सौच सब सहज सुचि, सरित पुनीत नहाइ।
प्रातक्रिया करि तात पहिँ, आए चारो भाइ॥ ३७२ ॥

सहज पवित्र जो श्रीरामचंद्र हैं सो प्रथमे जल मृतिका सों शौचकर पुनः सरिता मो स्नान कर कै प्रातक्रया कहिये गायत्री संध्यादिक कर कै पिता पास गये ॥ ३७२ ॥

भूप बिलोकि लिए उर लाई। बैठे हरषि रजायसु पाई ॥ १ ॥
देषि राम सब सभा जुडानी। लोचनलाभअवधि अनुमानी ॥ २ ॥

रामचंद्र का दरसन करकै सभा के लोगों के मन सीतल भए अरु लोगों ने नेत्रों के लाभ की अवध मानी।

पुनि बसिष्ठमुनि कौसिक आए। सुभग आसनन्हि मुनि बैठाए ॥ ३ ॥
सुतन्ह समेत पूजि पग लागे। निरषि राम दौ गुर अनुरागे ॥ ४ ॥
कहहिँ बसिष्ठ धरम इतिहासा। सुनहिँ महीस सहित रनिवाँसा ॥ ५ ॥

ननु। बशिष्टजी वक्ता राजा अरु रामचंद्र आदिक स्रोता तहां उपनिषद का उपदेश न कहा। उत्तर। राजा रानियों संयुक्त सुनता था अरु इस्त्रियों को वेद का अधिकार नहीं तातें धरम इतिहास न कहे। किंवा। तत्व का उपदेश प्रथम कर आए हैं विश्वामित्रजी के आगमनकाल मों सो अद्वैत निश्चा तौ एक वेर कहने से ही तिनकों दृढ हुआ था अरु व्यवहार में सदीव वर्तना है तातें व्यवहारों के सोधनिमित्त धरम का उपदेश सदैव करते हैं रानियों के संयुक्त स्रवण करणे सो राजा का भाव यह प्रथम तो जुवती जात सोहीं अविवेकादिक लच्छण प्रधान हैं तिसपर भी यह रानियां हैं जिनकी वृति सदाहार सिंगार सोहीं रहणी तौ इनको सतसंग अरु शास्त्र स्रवण कहां इस कर इसकों भी गुरों के मुख से स्रवण कराए जाते यह भी कृतार्थ होवें ॥ ५ ॥

मुनिमन अगम गाधिसुतकरनी। मुदित बसिष्ठ बिपुल बिधि बरनी ॥ ६ ॥

तन की क्या बात है मुनीश्वरों के मन सों भी आवनिआं कठिन हैं ऐसे तपोक्रियां करणीआं जो विश्वामि जी ने करिआं हैं जिनो कर इसी सरीर में छत्री से ब्राह्मण भए हैं सो प्रसन्न हूं कै बशिष्टजी ने कहिआं गाधसुत कथन का भाव यह है जद्यपि छत्री के पुत्र हैं तद्यपि उत्तम करनी का यह प्रभाव है सब कर पूज्य भए हैं बशिष्टजी के सोदकर कथन का हेतु यह लोगों के रिदे से पूरबकाल के बिरोध की संका निवारनी तिस बशिष्टजी के वचन की पुष्टता निमित्त ॥ ६ ॥

बोले बामदेव सब साँची। कीरति कलित लोक तिहुँ माची ॥ ७ ॥

बामदेवजी ने कहा कौशिक की कीरति त्रिलोकी मों प्रसिद्ध ही है तातें बशिष्टजी के बचनो मों अर्थ बाद न जानना ॥ ७ ॥

सुन सुन अनँद होइ सब काहू। रामलषनउर अतिहि उछाहू ॥ ८ ॥

बिश्वामित्र की कीरति सुनकर लोगों को हरष होता है जो हम को ऐसे महानभावो का दरसन भया है अरु श्रीरामचंद्रादिकों को अति उत्साह भया ऐसे मुनिश्वर की अपने पर परम कृपा देख कर किंबा रघुबीरजी के रिदै मों यह आवती थी बशिष्टजी हमारे गुरू हैं अरु बिश्वामित्रजी सें सस्त्रास्त्र बिद्या ग्रहन कीनी वह भी गुरू अरु इन का कुछ बिरोध सुना हुआ है तातें चित आसंकित था दोनो वोर सेव-कोकैसेनिबहैगी परंतु बशिष्टजी के परम सरलवचन सुनकै सो संकानिवृतभई तातें परमानंद भया ॥ ८ ॥

दोहा—मंगल मोद उछाह नित, जांहि दिवस एहि भांति।
उमगी अवध अनंद भरि, अधिक अधिक अधिकाति ॥ ३७३ ॥

आनंद की पूरणता अजोध्या बिषे अधिक ते अधिक दिनो दिन होती है ॥ ३७३ ॥

सुदिन साधि कलकंकन छोरे। मंगल मोद बिनोद न थोरे ॥ १ ॥
नित नव सुष सुर देषि सिहांहीं। अवध जन्म जाचहिं बिधि पांहीं ॥२॥

सिहांही कहिये सराहना इतर सुगमः ॥ २ ॥

बिस्वामित्र चलन नित चहहीं। राम सनेह बिनैबस रहहीं ॥ ३ ॥
दिन दिन सैगुन भूपतिभाऊ। देषि सराह महामुनिराऊ ॥ ४ ॥
मांगन बिदा कह्यो अनुरागे। सुतन सप्रेम ठाढ भे आगे ॥ ५ ॥

जब मुनीश्वर ने निश्चै कर बिदा मांगन कहे या तब भूपति आदिक अतिअनुरागे अरु पुत्रों समेत हाथ जोड कर ठाढे भए अरु कहन लागे ॥ ५ ॥

नाथ सकल संपदा तुम्हारी। मै सेवक समेत सुत नारी ॥ ६ ॥
करब सदा लरिकन पर छोहू। दरसन देत रहब मुनि मोहू ॥ ७ ॥
अस कहि राउ सहित सुतरानी। परेउ चरन मुष आव न बानी ॥ ८ ॥
दीन्ह असीस बिप्र बहु भांती। चले न प्रीति रीति कहि जाती ॥ ९ ॥
राम सप्रेम संग सब भाई। आयसु पाइ फिरे पहुँचाई ॥१०॥

कदाचित कोऊ कहै मुनीश्वर को कुछ राजा ने दिया न कहा सो यह आसंका न करनी पदारथों की मुनीश्वर कों क्या इच्छा थी अरु जहां पुत्रों इस्त्रिओं सहित राजा करजोर कर आगे खड़े हुए तब धन का देना कब कथन जोग्य था ॥ १० ॥

दोहा—रामरूप भूपतिभगति, ब्याह उछाह अनंद।
जात सराहत मनहिंमन, मुदित गाधिकुलचंद ॥ ३७४ ॥

श्रीरामचंद्र जी का सगुण निरगुण स्वरूप अरु राजा को प्रभोंविषे पुनः संतोविषे भक्ति अरु बिवाह के उत्साह विश्वामित्र जी मनमोंहीं सराहते जाते हैं मनमोंहीं सराहन का भाव यह श्रीरामचंद्र का स्वरूप अरु नृप की प्रीति अरु बिवाह के रसकथन सो नहीं आवते किंवा इस्थान पर इस्थित होवैं तब किसी कों सनमुख बैठाल के सुनावैं सो तो मारग में चले जाते हैं इहां सन्मुख स्रोता होना कठिन है तिस कर मनमोंहीं सराहते हैं गाधिकुलचंद विशेषण देण सो ग्रन्थकार का आसै यह मुनीश्वर विचारते हैं हमारा पिता भी बडा राजा था अरु हम तिस के ज्येष्ठ पुत्र थे तहां भी संतसेवा अरु बिबाहादिक रचना देखिआं थिआं परंतु दशरथकी भक्ति अरु श्रीरामचंद्रका विवाह देखकर हम आश्चर्य हू रहे हैं ॥३७४॥

बामदेव रघुकुलगुरु ग्यानी । बहुरि गाधिसुत कथा बषानी ॥ १ ॥
सुनि सुनि सुजस मनहिं मन राऊ । बरनत आपन पुन्यप्रभाऊ ॥ २ ॥

अपनो सरलता सूचनहेतु विश्वामित्र जी के गमनानंतर पुनः वशिष्टजी ने अरु वामदेवजी ने विश्वामित्रजी के तप की कथा सुनाई तब सुन कर राजा अपने बड़े भाग मानता भया जो ऐसे रिषों का मेरे गृह मों कृपापूरबक आवणा भया है ॥ १ ॥ २ ॥

बहुरे लोग रजायसु भयऊ । सुतन समेत नृपति गृह गयऊ ॥ ३ ॥

बहुरे कहिये फेर घर जाने को लोगों कों राजआज्ञा भई तब सभी लोग अपणे गृहों में प्राप्ति भए अरु राजा भी अपने मंदिरों में पुत्रों समेत विस्राम करत भया ॥ ३ ॥

जँह तँह रामब्याह सब गावा । सुजस पुनीत लोकतिहुँ छावा ॥ ४ ॥
आये ब्याहि राम घर जब तें । बसी अनंद अवध सब तब तें ॥ ५ ॥

जौं कोऊ कहै औरों ग्रंथों में राम के विवाह का उत्साह बड़ा कहा है तिस पर कहते हैं ॥ ५ ॥

प्रभु बिबाह जस भयो उछाहू । सकैं न बरनि गिरा अहिनाहू ॥ ६ ॥

जौं कोऊ कहै शेषनाग अरु सरस्वती नहीं कहि सकते तो तुम ने किस भांति वरनन किआ तिस पर कहते हैं ॥ ६ ॥ टिप्पणी—अहिनाह शेष ।

कबिकुलजीवनपावन जाँनी । रामसीयजस मंगलषानी ॥ ७ ॥
तेहि तें मैं कछु कहा बषानी । करन पुनीत हेतु निज बानी ॥ ८ ॥

कबीश्वरों के जो कुल हैं सो भी रामसुजश कर ही पवित होते हैं अरु मेरी जिह्वा ऊपर भी सरस्वती आन कर बैठी है तिस कर मेरे में रहा नहीं गया अथवा कवि विशेषण अपने विषे लगावना अपने कुल परंपरा को जीवन अरु पुनीत करणहारा श्रीरामचंद्र का जो जश है सो अपना कुल कहिये शरीर.का कुल अथवा गुरों का संप्रदाय भी श्रीरघुनाथजी का ही उपासक था सो विचार कर अपनी बानी पवित्र करणे निमित्त श्रीरामचंद्र का चरित कछुक मैंने भी वरनन किआ है। अब इस कांड की समाप्ति करते हुए श्रीगुसाईंजी अपनी मति को पवित्रता कथनपूर्वक प्रभों के यश का महातम एक छंद अरु एक सोरठे मद्धे कहिते हैं ॥ ७ ॥ ॥ ८ ॥ टिप्पणी । यहां पार्वतीजी का चौथा प्रश्न पूर्ण हुआ ।

छंद—निजगिरापावन करन कारन रामजस तुलसी कह्यो ।
रघुबीर चरित अपार बारिधि पार कबि कवनें लह्यो ॥

अपनी बानी पवित्र करणे निमित्त रंचिक मात्र रघुनाथ जी का जस मैं ने कहा है अरु रामचंद्र के चरित्र रूपी समुद्र का पार तो सौनकादिकों ने नहीं पाया ।

उपवीत ब्याह उछाह मंगल सुनि जे सादर गावहीं ।
बैदेहि रामप्रसाद ते जन सर्बदा सुष पावहीं ॥

उपवीत कहिये जज्ञोपवीतादिक जो प्रभों के मंगल हैं तिनो को जो आदर सों सुनैंगे के गावैंगे तिनकों सदा सुख होहिंगे ॥

सुन गाइ कह्यौ गिरीस कन्या धन्य अधिकारी सही।
नित प्रीति नूतन सुनत हरिगुन भक्ति अनुपम तै लही॥

इस कांड के प्रसंग कों समाप्त करते हुए संकरजी देवी प्रति मान देते हुये कहते हैं हेगिरजे तै धन्य है जैसा परउपकारी अरु सीतल स्वच्छ तेरा पिता है तैसीहीं तूं भी सरबगुण संपन्न है जाते श्रीरामचंद्र के जश कों सुनकर तुझे नित नवीन प्रीत बढती है अब ग्रंथकार अपनी ओर से प्रसंग कों विस्राम देते हुए कहते हैं।

रघुबीर पद अनुराग जल लोभागि बेग बुझावहीं।
एह जान तुलसीदास मन बचकरम हरिगुन गावहीं॥

दोहा—कठिन कालमल ग्रसित मन, साधन कछू न होइ।
एह बिचार बिश्वास कर, हरि सुमरै बुध सोइ॥

कठिन काल कहिये जिस मों पापहुं का महाबल है तिसपर भी मन महामलीन है दोनो प्रकारहुं कर तप जप सम दमादिक साधन कछू नहीं होसकते ऐसे विचार कर रिदै की प्रीति पूरबक जो भगवंत को सुमिरै सोई बुधवान है। यह सर्ब प्रति उपदेश कहा अब अपने मन प्रति कहते हैं।

सोरठा—मन हरिपद अनुरागु, कर त्यागहु नाना कपट।
महामोह निसि जागु, सोवत बीते काल बहु॥

यह एक छंद अरु दोहा अरु सोरठ आख्येपक भासते हैं। अब इस कांड का महातम कहते हैं।

सोरठा—श्रीरघुबीर बिबाह, जे सप्रेम गावहिँ सुनहिँ।
तिन कह सदा उछाह, मंगलायतन रामजस॥ ३७५॥

श्रीरामचंद्र के जनम से लेकर विवाहादिक जो उत्साह है जो रिदै के सनेहपूरबक इनकों गावैं सुनैंगे तिनकों सदा मंगल होवैंगे प्रयोजन यह व्यवहार परमारथ का अविनासी अनंद होवैगा जाते रामचंद्र का जश मंगलहुं का सिंधु है॥ ३७५॥

इति श्रीरामचरित्रे मानसे सकल कलिकलुष विध्वंसने अविरलि हरिभगति संपादने प्रथम सोपानः। हे श्रीरामचंद्रजी सर्ब हरिभक्तहुं का दास संतसिंघ बिनै करता है सरब संतों ने मुझ अलप मति की न्यूनता खिमा करणी हेरामचंद्रपादपूजक गुसांई तुलसीदास जी तुम ने जो अपने रिदै के आसै मेरी जिह्वा सों प्रगट किये हैं सो कहे हैं और भी बल देना तुम कों नमस्कार॥ रावन की दिगविजै आदिक जो प्रसंग लोकहुं ने पीछे डार दीने थे सो जथा लब्ध गुसांई जी की आदि शुद्ध प्रतों देख कर सभ निकास दीने हैं जद्यपि गंगा की जनमकथा भी आख्येपक ही थी परंतु यह प्रसंग सुंदर जानकर चौपायों की कुछेक सिथलता मिटाइ कर राख्या है शुभमस्तु॥